प्रकाशन समाचार

वर्ष : ८
अंक : ५
वार्षिक : ३.००
एक प्रति : ०.३१

सम्पादक : ओंप्रकाश, डायरेक्टर इंचार्ज, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड

प्रकाशन समाचार और इस ८ वर्ष की पत्रिका के प्रकाशक **राजकमल प्रकाशन** इसके पाठकों को नये वर्ष का अभिनन्दन करते हैं। हिन्दी के लिए, हिन्दी के लेखकों, प्रकाशकों और पुस्तक विक्रेताओं के लिए, १९६१ का वर्ष शुभ और मंगलमय सिद्ध हो !

पहली जनवरी १९६१ से **राजकमल** के जीवन में एक नये अध्याय का आरम्भ हो रहा है—**इस प्रकाशन समाचार** के पाठकों को एक महत्वपूर्ण परिवर्तन से हम इस परिपत्र द्वारा अवगत कराने जा रहे हैं। १९४७ में स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद से हिन्दी के प्रकाशित साहित्य के अभ्युदय और प्रगति में **राजकमल** का घनिष्ठतम सहयोग रहा है—**राजकमल द्वारा** उठाया जाने वाला नया कदम भी उसी प्रगति की ओर निर्दिष्ट है।

राजकमल की स्थापना दिल्ली में स्वतन्त्रता-प्राप्ति के चन्द ही माह पहले हुई थी। हिन्दी-प्रकाशन की तब की परिस्थिति से आज की पीढ़ी के लोग खूब परिचित हैं; प्रकाशकीय निष्क्रियता के उन दिनों में अर्वाचीन ढंग और साधनों से प्रकाशन-कार्य के लिए एक बड़ी संस्था का सूत्रपात करना तब साहस की बात थी।

नयी रूपसज्जा लिये हुए और प्रसार-प्रचार के नये तरीकों से विज्ञापित **राजकमल** द्वारा प्रकाशित पुस्तकों को आरम्भ से ही लोकप्रियता मिली, हिन्दी-भाषियों में हिन्दी की पुस्तकों को एक नया सम्मान मिला—उनके लिए एक नयी माँग पैदा हुई। **राजकमल** ने त्रैमासिक **आलोचना**-जैसी पत्रिका की कल्पना की,

'आलोचना' के प्रथम अंक के कवर का चित्र
अक्तूबर, १९५१

जिसका प्रकाशन अक्तूबर १९५१ में आरम्भ हुआ—**प्रकाशन समाचार** की, जिसका पहला अंक सितम्बर १९५३ में निकला और आज तक एक निश्चित तारीख पर प्रति-

मास अबाध गति से प्रकाशित हो रहा है—**पॉकेट बुक्स** की, जिसके बारे में **राजकमल** का पहला विज्ञापन **प्रकाशन समाचार** के सितम्बर १९५८ में प्रकाशित हुआ था।

प्रकाशन समाचार के माध्यम से प्रकाशकों के एक संघ की आवश्यकता पर पहले अंक से ही बल दिया गया था और आज एक सशक्त संघ प्रकाशकों की सामूहिक समस्याओं को सुलझाने में तल्लीन है। **राजकमल** ने इधर हिन्दी की लोकप्रिय पत्रिकाओं के इतिहास को **नई कहानियाँ** का सूत्रपात करके नया मोड़ दिया है—इस पत्रिका का पहला अंक १९६० के बैसाखी के दिन प्रकाशित हुआ और उसने वह सफलता प्राप्त की है जो अन्य पत्रिकाओं ने २० या ३० वर्षों में ही प्राप्त की थी।

राजकमल को अपनी कार्यविधि और उद्देश्यपूर्ति में हिन्दी के उत्कृष्टतम लेखकों का आशीर्वाद सदैव प्राप्त रहा है, प्रकाशकों, पुस्तक-विक्रेताओं और न्यूज़ एजेंटों का अनन्य सहयोग भी, और पुस्तकालयाध्यक्षों की कृपा भी। इस आशीर्वाद, सहयोग और कृपा के मजबूत आधार पर ही **राजकमल** की सफलता का प्रसाद खड़ा हुआ है।

'नई कहानियाँ' के प्रथम अंक के कवर का चित्र
मई, १९६०

राजकमल को पुस्तक-विक्रय के क्षेत्र में भी अतुल सफलता मिली। पुस्तक-विक्रेताओं के माध्यम से हिन्दी की पुस्तकों की बिक्री के प्रायः अभाव को देखकर **राजकमल** ने देश में थोक-वितरण का पहला आयोजन किया। इसके लिए दिसम्बर १९४९ में बम्बई में, मई १९५५ में इलाहाबाद में, अगस्त १९५५ में फ़ैज़ाबाद, दिल्ली में और अक्तूबर १९५६ में पटना में कार्यालय खोले गए। जनवरी १९५७ में सुदूर मद्रास में भी एक कार्यालय स्थापित किया गया, जो प्रायः दो वर्ष बाद कुछेक कारणों से बन्द कर देना पड़ा। इन कार्यालयों द्वारा हिन्दी के केवल उत्कृष्ट साहित्य की पुस्तकें ही बेची जाती थीं—प्रकाशकों की अपनी ही कमीशन की दरों पर। १९६० के अन्त तक गत आठ-नौ वर्षों में प्रकाशित मूल्य पर अन्य प्रकाशकों की **राजकमल** द्वारा लगभग ६५ लाख रुपयों की पुस्तकों की बिक्री की गई है! केवल १९६० में ही हमारे लेखे के अनुसार यह बिक्री लगभग १४ लाख रुपयों की हुई!

राजकमल पॉकेट बुक्स

राजकमल प्रकाशन

का

अभिनव, क्रान्तिकारी प्रयास

पहले ६ उत्कृष्ट प्रकाशन

राजकमल

प्रकाशन प्राइवेट लि.

पॉकेट बुक्स की प्रथम घोषणा का 'प्रकाशन समाचार' में छपा विज्ञापन
सितम्बर, १९५८

काश कि हिन्दी के अच्छे प्रकाशकों की पुस्तकों की थोक बिक्री करते हुए **राजकमल** अपनी सेवाएँ हिन्दी-साहित्य के प्रचार-प्रसार में अर्पित रख सकता! अब तक इस कार्य को आवश्यक दर से कहीं कम कमीशन स्वीकार करके और निजी प्रकाशनों के लाभ में से व्यय करके, निजी प्रकाशनों पर लगने वाले समय और शक्ति में से समय और शक्ति लगाकर ही **राजकमल** ने सम्पन्न किया है। **राजकमल**

(शेष पृष्ठ २३३ पर)
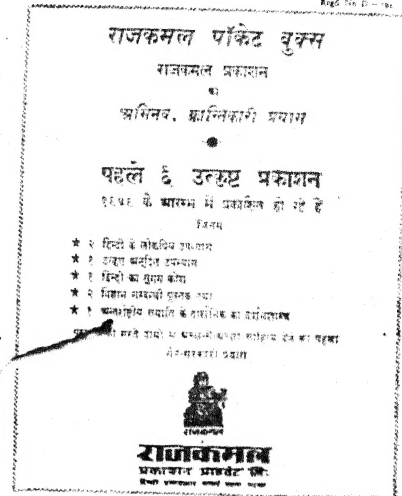
राजस्थान राज्य में शिक्षा का प्रसार

जे० डी० वैश्य

१५ अगस्त १९४७ को भारतवर्ष स्वाधीन हो गया। विदेशी सत्ता देश से हट गई। देश स्वतन्त्र होने पर भी कुछ समस्याएँ ऐसी रह गईं कि उनका हल शीघ्र ही निकलाना देश के लिए अति आवश्यक था। देश के अन्दर स्थान-स्थान पर फैले हुए देशी राज्य एक ऐसी ही समस्या थे।

राजस्थान के अन्दर भी छोटे-छोटे कितने ही राज्य थे। सर्वप्रथम राजस्थान की कुछ रियासतों ने अपने-आपको मिलाकर एक राज्य बनाया। इसकी राजधानी कोटा चुनी गई। यह कार्यरूप में नहीं आया और उदयपुर राज्य ने भी उसके अन्दर मिलने की स्वीकृति दे दी। इसके फलस्वरूप छोटे राजस्थान का जन्म हुआ। इसकी राजधानी उदयपुर चुनी गई। इसके अन्दर निम्नलिखित राज्य शामिल हुए—

(१) उदयपुर राज्य	(२) बांसवाड़ा राज्य
(३) डूँगरपुर ,,	(४) कुशलगढ़ ,,
(५) टोंक ,,	(६) किशनगढ़ ,,
(७) बूँदी ,,	(८) कोटा ,,
(९) झालावाड़ ,,	(१०) प्रतापगढ़
(११) शाहपुरा	

दूसरी ओर मत्स्य राज्य के नाम से अलवर, भरतपुर, धौलपुर और करौली राज्यों ने यह नवीन राज्य स्थापित किया।

सन् १९४९ में एक ओर राजस्थान के अन्य बड़े-बड़े राज्यों ने भी इस छोटे राजस्थान में मिलने का निश्चय किया। दूसरी ओर मत्स्य राज्य ने भी ऐसा ही निर्णय किया। इस प्रकार अब बृहत् राजस्थान में निम्न राज्यों ने अपने-आपको मिला दिया—

(१) उदयपुर राज्य	(२) बांसवाड़ा राज्य
(३) डूँगरपुर ”	(४) कुशलगढ़ ”
(५) टोंक ”	(६) किशनगढ़ ”
(७) कोटा ”	(८) बूँदी ”
(९) झालावाड़ ”	(१०) जयपुर ”
(११) जोधपुर ”	(१२) बीकानेर ”
(१३) जैसलमेर ”	(१४) अलवर ”
(१५) भरतपुर ”	(१६) धौलपुर ”
(१७) करौली ”	(१८) प्रतापगढ़ ”
(१९) शाहपुरा ”	(२०) सिरोही ”

फिर सिरोही का वह भाग, जो बम्बई में मिल गया था, और अजमेर भी इस राजस्थान राज्य में बाद को मिल गये।

सन् १९५०-५१ में शिक्षा

सन् १९४९-५० में राजस्थान के अन्दर शिक्षा के क्षेत्र में न तो विशेष प्रगति ही थी और न कोई चहल-पहल ही थी। उन भिन्न राज्यों में, जिनको मिलाकर राजस्थान का निर्माण हुआ था, जिस प्रकार की और जैसी संस्थाएँ चल रही थीं वही संस्थाएँ १९४९-५० में चलती रहीं।

सन् १९५०-५१ से शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति आरम्भ हुई। पाँच सौ नई प्राथमिक शालाएँ खोली गईं, प्राइमरी से मिडिल स्कूल बनाये गए और कुछ मिडिल स्कूलों का स्तर हाई स्कूलों में परिवर्तित किया गया। इस प्रकार सन् १९५०-५१ के सत्र में राजस्थान में जो शालाएँ काम कर रही थीं उनका विवरण नीचे दिया जा रहा है—

दर्शन-संस्कृति

धर्म और समाज :	डॉ० राधाकृष्णन्	८.००
संस्कृति के चार अध्याय :	दिनकर	१५.००

साहित्य : आलोचना

हिन्दी तथा मलयालम में कृष्ण भक्ति-काव्य :	डॉ० नायर	१०.००
कवियों में सौम्य संत :	डॉ० बच्चन	५.००
विश्व-साहित्य की रूपरेखा :	डॉ० भगवतशरण उपाध्याय	१२.००
हिन्दी नाटक : उद्भव और विकास :	डॉ० दशरथ ओझा	६.००
तुलसीदास : चिन्तन और कला :	डॉ० इन्द्रनाथ मदान	५.००
तुलसी और उनका काव्य :	पं० रामनरेश त्रिपाठी	७.००

जीवनोपयोगी

आत्म-विकास	आनन्दकुमार	५.००
मनुष्य का विराट रूप	,,	४.५०
सफल जीवन	सत्यकाम विद्यालंकार	२.२५
चरित्र-निर्माण	,,	२.५०
वे सफल कैसे हुए		३.००
रेत और झाग	खलील जिब्रान	२.००
जीवन-दर्शन	,,	१.५०
रेणु	रामचन्द्र टण्डन	२.००

विज्ञान

सिगमंड फ्रायड	१०.००
हैवलॉक एलिस	८.००
ब्रह्ममुनि	२.००
सत्यकाम विद्यालंकार	२.२५

राजस्थान शिक्षा-विभाग

द्वारा स्वीकृत उत्तमोत्तम पुस्तकों की सम्पूर्ण सूची पत्र लिखकर मँगा लें।

आर्डर प्राप्त होने पर नियत अवधि में हो पुस्तकों की सप्लाई की पूरी गारंटी

शिक्षा-विभाग द्वारा स्वीकृत कमीशन १२½ प्रतिशत

अपने पूर्ण सन्तोष के लिए अपना आर्डर सप्लाई के लिए हमें भेजें

आपकी सेवा ही हमारा ध्येय

विश्वविद्यालय १
महाविद्यालय १८ (सामान्य)
महाविद्यालय ४ (सामान्य, केवल छात्राओं के लिए)
" " ८ (औद्योगिक)
" " ५ (विशेष)
हाई स्कूल १४८
" " ७ (केवल छात्राओं के लिए)
मिडिल स्कूल ६०२
" " ६२ (केवल छात्राओं के लिए)
प्राइमरी स्कूल ३५६३
" " ३५१ (केवल छात्राओं के लिए)
विशेष शिक्षण विद्यालय ६१०
" " " २२ (केवल छात्राओं के लिए)

प्रथम पंचवर्षीय योजना में शिक्षा की प्रगति

प्रथम योजना के प्रारम्भ होते ही राजस्थान में शिक्षा के क्षेत्र में प्रतिवर्ष उन्नति होनी आरम्भ हो गई। स्थान-स्थान पर स्कूल खुलने लगे, वर्तमान स्कूलों का स्तर बढ़ाया जाने लगा। इसके फलस्वरूप १६५५-५६ में शिक्षण-संस्थाओं की संख्या सन् १६५०-५१ वाली संख्या की दुगुनी हो गई। इसका विवरण नीचे दिया जाता है—

विश्वविद्यालय १
माध्यमिक शिक्षा बोर्ड १
महाविद्यालय ४४ (सामान्य)
" ८ (" केवल छात्राओं के लिए)
" १३ (औद्योगिक)
" १७ (विशेष)
हायर सेकेण्डरी स्कूल २७
" " " २ (केवल छात्राओं के लिए)
हाई स्कूल २२७
" " १८ (केवल छात्राओं के लिए)
बुनियादी मिडिल स्कूल १४
बुनियादी प्राइमरी स्कूल ५७१
" " " ३३ (केवल छात्राओं के लिए)
मिडिल स्कूल ७५२
" " १४० (केवल छात्राओं के लिए)

प्राइमरी स्कूल ७०२८
,, ,, ५५८ (केवल छात्राओं के लिए)
विशेष शिक्षण विद्यालय ११८६
,, ,, ,, २०२ (केवल छात्राओं के लिए)

द्वितीय पंचवर्षीय योजना शिक्षा की प्रगति

द्वितीय पंचवर्षीय योजना में राजस्थान में शिक्षा की प्रगति पहले के मुकाबले अधिक तेजी से हुई। इन पाँच वर्षों में बहुत सी छोटी-छोटी जगहों में भी प्राइमरी स्कूल खुल गए। शिक्षा विभाग ने राजस्थान में मिडिल स्कूलों का जाल-सा फैला दिया। हाई स्कूल और हायर सेकेण्डरी स्कूल छोटी-बड़ी अनेक जगह खुल गए। १९६०-६१ के सत्र में जितनी संस्थाएँ थीं उनकी संख्या इस प्रकार है—

विश्वविद्यालय	१
माध्यमिक शिक्षा बोर्ड	१
महाविद्यालय	४७ (सामान्य)
,,	११(" केवल छात्राओं के लिए)
महाविद्यालय	२० (औद्योगिक)
हायर सेकेण्डरी स्कूल	२७१
,, ,, ,,	२४ (केवल छात्राओं के लिए)
हाई स्कूल	१८७
,, ,,	४३ (केवल छात्राओं के लिए)
बुनियादी मिडिल स्कूल	४८
,, ,, ,,	१० (केवल छात्राओं के लिए)
,, प्राइमरी स्कूल	२००२
,, ,, ,,	६२ (केवल छात्राओं के लिए)
मिडिल स्कूल	११२६
,, ,,	१८१ (केवल छात्राओं के लिए)
प्राइमरी स्कूल	११६०७
,, ,,	४८१ (केवल छात्राओं के लिए)
औद्योगिक शिक्षण विद्यालय	७१
औद्योगिक शिक्षण विद्यालय	६ (केवल छात्राओं के लिए)

कन्या-शिक्षा पर विशेष बल

राजस्थान राज्य शिक्षा के दृष्टिकोण से एक पिछड़े

हुए राज्य के रूप में गठित हुआ। राजस्थान की विभिन्न इकाइयों के अन्दर शिक्षण संस्थाओं और शिक्षा के ऊपर किये जाने वाली राशि में बहुत विषमता थी। सामाजिक परम्पराएँ ऐसी थीं कि शिक्षा के प्रसार को कुण्ठित करती थीं। इन सब बाधाओं का राजस्थान शिक्षा विभाग ने और राजस्थान राज्य ने हिम्मत के साथ मुकाबला किया, जिसके फलस्वरूप स्कूल जाने वाले छात्र और छात्राओं का प्रतिशत, जो स्कूल में पढ़ते हैं, प्रतिवर्ष बढ़ता जा रहा है।

छात्रों का प्रतिशत, जो स्कूल में पढ़ते हैं, बहुत अच्छा है, लेकिन छात्राओं के कम प्रतिशत की वजह से दोनों को मिलाकर जो सामान्य प्रतिशत आता है वह नीचे गिर जाता है। इस कमी को पूरा करने के भी प्रयत्न जारी हैं।

तृतीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत इस दिशा में विशेष आयोजन करने के प्रयत्न चालू हो गए हैं। इसके फलस्वरूप आशा है कि स्कूल में जाने वाली छात्राओं का प्रतिशत सन् १९६५-६६ में निम्नलिखित स्तर तक पहुँच जाएगा—

प्राइमरी शिक्षा	५०%	कुल स्कूल जाने वाली छात्राओं की संख्या का
मिडिल स्कूल शिक्षा	१२.३%	
हाई स्कूल व हायर सेकेण्डरी शिक्षा	५.२%	

सत्र १९५०-५१, १९५५-५६ और १९६०-६१ का प्रतिशत तुलना के लिए नीचे दिया जाता है—

१९५०-५१	
प्राइमरी शिक्षा	३.७%
मिडिल स्कूल शिक्षा	१.६%
हाई स्कूल एवं हायर सेकेण्डरी शिक्षा	०.२%

१९५५-५६	
प्राइमरी शिक्षा	६.२%
मिडिल स्कूल शिक्षा	२.०%
हाई स्कूल एवं हायर सेकेण्डरी शिक्षा	०.४%

१९६०-६१	
प्राइमरी शिक्षा	१६.६%
मिडिल स्कूल शिक्षा	३.८%
हाई स्कूल एवं हायर सेकेण्डरी शिक्षा	१.३%

सन् १९६०-६१ के सत्र के आरम्भ से ही कन्या शिक्षा पर विशेष बल दिया जा रहा है। जून-जुलाई मास में एक विशेष अभियान, जिसका उद्देश्य अधिक-से-अधिक कन्याओं को स्कूल में लाने का था, राजस्थान के दस प्रमुख नगरों में किया गया। इस अभियान के फलस्वरूप काफी संख्या में कन्याएँ स्कूल में प्रविष्ट हुईं।

इसके फलस्वरूप कुछ नये स्कूल खोले गए। कुछ स्कूलों में नये सेक्शन बढ़ाये गए। कुछ स्कूल दो पालियों में लगाने आरम्भ किये गए। इस अभियान की सफलता को देखते हुए ऐसा लगता है कि १९६५-६६ तक जिस प्रतिशत तक शिक्षा-विभाग पहुँचना चाहता है, उसमें कोई बाधा नहीं होगी, बल्कि शायद उससे अधिक प्रतिशत तक पहुँच पाए।

शिक्षा पर व्यय

सन् १९५०-५१ में राजस्थान राज्य में शिक्षा के ऊपर लगभग २ करोड़ रुपये खर्च किये जाते थे। यह धन-राशि बढ़ते-बढ़ते अब लगभग ९ करोड़ रुपये हो गई है। इस समय राजस्थान राज्य में शिक्षा विभाग का ही बजट सारे विभागों के बजटों में सबसे अधिक है। इस समय राज्य की कुल आमदनी का लगभग २४% शिक्षा पर व्यय किया जा रहा है।

सस्ती शिक्षा

आज भारतवर्ष में चारों ओर सब माता-पिता व अभिभावक इस बात की चर्चा करते हैं कि छात्र और छात्राओं की पढ़ाई में जो धन उनको नित्य प्रतिदिन व्यय करना पड़ता है उसकी मात्रा बराबर बढ़ती जा रही है। इस पृष्ठभूमि में यह ध्यान देने योग्य बात है कि राजस्थान राज्य में छात्राओं से प्रथम कक्षा से लेकर एम० ए० तक सरकारी संस्थाओं में किसी प्रकार की ट्यूशन फीस नहीं ली जाती है। छात्रों से भी बहुत मामूली-सी ट्यूशन फीस ली जाती है। जो लोग नहीं दे सकते हैं उनके लिए फीस की दरें और भी कम हैं। इन्कमटैक्स को मापदण्ड मानकर यह तय किया हुआ है कि जिन माता-पिताओं या अभिभावकों की आमदनी इन्कमटैक्स देने वाले स्तर से नीची है उनसे नाम मात्र की ट्यूशन फीस ली जाए। जिनकी आय इन्कमटैक्स के स्तर से ऊपर है उनसे साधारण ट्यूशन फीस ली जाती है—सरकारी स्कूलों में भी और कालेजों में भी।

राजस्थान राज्य ट्यूशन फीस के मामले में दो और सुविधाएँ देता है। वे इस प्रकार हैं—

(१) प्राइमरी कक्षाओं में (कक्षा १ से ५ तक) कोई ट्यूशन फीस नहीं ली जाती।

(२) मिडिल कक्षाओं में (कक्षा ६ से ८ तक) कोई ट्यूशन फीस नहीं ली जाती।

राजस्थान राज्य के दो नये परीक्षण

(१) पायलेट स्कूल

शिक्षण-संस्थाओं एवं छात्रों के गिरते हुए स्तर को रोकने के लिए राजस्थान राज्य में सन् १९५८-५९ से एक नई योजना पायलेट प्रोजेक्ट चालू की गई ताकि पुराने स्कूलों में धन मिल सके।

इस योजना के अंतर्गत प्रत्येक डिप्टी डाइरेक्टोरेट १ हाई स्कूल छात्राओं का और प्रत्येक ज़िले से

१ हाई स्कूल
२ मिडिल स्कूल
४ प्राइमरी स्कूल

चुने जाते हैं।

इन स्कूलों को निम्न दर से सामग्री व साज-सज्जा खरीदने के लिए धन दिया जाता है—

१. हाई स्कूलों को—
- ४००० रु० प्रथम वर्ष में
- ३००० रु० द्वितीय वर्ष में
- २००० रु० तृतीय वर्ष में
- १००० रु० चतुर्थ वर्ष में

२. मिडिल स्कूलों को—
- ५०० रु० प्रथम वर्ष में
- ३०० रु० द्वितीय वर्ष में
- २०० रु० तृतीय वर्ष में

३. प्राइमरी स्कूलों को—
- २५० रु० प्रथम वर्ष में
- १५० रु० द्वितीय वर्ष में
- १०० रु० तृतीय वर्ष में

इन स्कूलों पर प्रत्येक स्तर पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

राज्य-भर के पायलेट हाई स्कूलों का निरीक्षण करके सर्वोत्तम स्कूल को एक शील्ड राजस्थान के मुख्य मन्त्री ने अभी दिसम्बर मास में टोंक में दी है। इस स्कूल का नाम है राजकीय हाई स्कूल सागवाड़ा (ज़िला डूँगरपुर)।

आशा है कि इसके द्वारा शीघ्र ही काफ़ी स्कूलों का स्तर ठीक हो जाएगा।

२. प्राइमरी शिक्षा का विकेन्द्रीकरण

२ अक्तूबर १९५९ से गाँवों के प्राइमरी स्कूलों को पंचायत समितियों को सौंप दिया गया है। प्रबन्धात्मक कार्य सब पंचायत समिति के अधीन होता है, लेकिन शिक्षण-कार्य की देखभाल व सँभाल शिक्षा विभाग के अधीन है। अभी इस योजना को चलते हुए केवल एक वर्ष ही हुआ है। लेकिन पूरी आशा है कि इससे स्कूलों के काम-काज में सहूलियत होगी, शिक्षा का स्तर बढ़ जाएगा और शिक्षा का प्रसार राजस्थान के कोने-कोने में हो सकेगा।

राजस्थान में सर्वसामान्य हिन्दी-पुस्तकों की विक्रय-समस्या

श्रीनाथ मोदी

बीस बरस पहले राजस्थान में सर्वसामान्य पुस्तकों की खपत के दो विशिष्ट बाज़ार थे।

(१) राजा-महाराजा-जागीरदार-ठाकुर तथा उनके सहपाठी लोग, जिनके खास समय बिताने के लिए मनोरंजक पुस्तकों की निरन्तर माँग बनी रहती थी। इस मद में खर्च करने के लिए उनके पास विपुल धनराशि उपलब्ध रहती थी। कई सामंतों के निजी पुस्तकालय थे जो प्रतिमास नई-नई पुस्तकें ख़रीदने को इच्छुक रहते थे।

(२) राजस्थान-प्रवासी सेठ-साहूकार, व्यापारी और उद्योगों में लगे लोग जब लंबे अवकाश में राजस्थान में आते तब राजस्थान में अपने निजी पुस्तकालय के लिए विविध विषय की पुस्तकें खरीदते थे।

शिक्षा का प्रचार बढ़ने से कुछ नवयुवक शिक्षार्थी एवं मध्यम श्रेणी के राजकीय कर्मचारियों में खरीद कर नई-नई पुस्तकें पढ़ने की रुचि बताने लगे। सामाजिक व राजनैतिक कार्यकर्ता भी हिन्दी-पुस्तकों की ख़रीद में हाथ बँटाने लगे और आन्दोलन करके राजकीय एवं कुछ सार्वजनिक संस्थाओं में पुस्तकालय खुलवाने लगे।

थोड़े वर्षों बाद राजकीय पाठशालाओं में पुस्तकालय खुलने लगे और सही अर्थ में राजस्थान में हिन्दी-पुस्तकों के पाठक निरन्तर बढ़ने लगे।

राजस्थान के बाहर के प्रकाशकों के घूमने वाले प्रतिनिधि आकर राजस्थान प्रांत में पुस्तकों का सक्रिय प्रयास करने लगे।

स्थानीय पुस्तक-विक्रेता केवल स्कूल खुलने के महीनों में पाठ्य-पुस्तकें बेचते थे और बाहर से आने वाले घुमक्कड़ पुस्तक प्रकाशकों के प्रतिनिधि इनके द्वारा पुस्तक-विक्रय का काम करने लगे।

राजस्थान के प्रत्येक रजवाड़े के प्रधान नगर में सहसा बड़े पैमाने पर सार्वजनिक पुस्तकालय खुले और वे ही धीरे-धीरे पुस्तक ख़रीदने वाले प्रधान ग्राहक बनने लगे।

जब राज्यों का विघटन हुआ और आजादी के नवीन वातावरण में साक्षरता बढ़ने लगी तो ग्राम-ग्राम में छोटे-छोटे पुस्तकालय खुलने लगे और इस तरह समस्त राजस्थान में गाँव-गाँव नई पुस्तकें पहुँचने लगीं।

पाठशालाओं के पुस्तकालय भी अधिक संख्या में पुस्तकें माँगने लगे। जिस अनुपात में माँग बढ़ी उस अनुपात में नये प्रकाशक नहीं बढ़े, अतः नये पाठकों की माँग की पूर्ति करने में असमर्थ रहे।

राजस्थान में पुस्तकें देने वाले कुछ ही प्रकाशक थे और उनका माल काफ़ी मात्रा में निकलने लगा। यह स्थिति दो-तीन वर्ष बनी रही। राजस्थान की इस नई माँग का पता अन्य बाहरी प्रकाशकों को लगा और वे भी इस क्षेत्र में आने लगे। जिस अनुपात से प्रकाशक एवं उनके प्रकाशनों की वृद्धि हुई, उस अनुपात से राजस्थान की माँग नहीं बढ़ी और नतीजा यह हुआ कि कुछ कम साधन वाले प्रकाशक राजस्थान पुस्तक-बाज़ार को दूषित करने लगे। वे बिल में कम कमीशन दिखाते और पुस्तकालय अध्यक्ष को घूस में नकद रुपए देने लग गए। और बाद में

(शेष पृष्ठ २६० पर)

बच्चे और पुस्तकें

ऐंटनी स्टार

यह लेख "न्यू स्टेट्समैन" लन्दन के १२ नवम्बर, १९६० के अंक से साभार प्रकाशित किया जा रहा है।

दिन-भर वह लड़का खिड़की के पास खड़ा समुद्र की तरफ़ देखता रहा, जिधर से शाहज़ादी आने वाली थी। लेकिन वह कहीं दिखाई नहीं दे रही थी। वह वहाँ खड़ा था कि इतने में सिपाहियों ने आकर उसे पकड़ लिया और उसे पकड़कर उस बड़े-से पीपे के पास ले गए जिसके नीचे आग जल रही थी और जिसमें से खौलता हुआ तारकोल उबल-उबलकर बाहर गिर रहा था। लड़का यह देखकर काँप उठा, लेकिन भाग निकलने का कोई रास्ता नहीं था; इसलिए उसने अपनी आँखें बन्द कर लीं ताकि वह कुछ देख न सके।

यकायक कुछ लोग तेज़ी से भागते हुए दिखाई दिए। भागते-भागते वे चिल्लाते जा रहे थे कि एक बड़ा-सा जहाज़, जिसके पाल हवा में तने हुए थे, सीधा शहर की तरफ़ आ रहा है। किसी को भी नहीं मालूम था कि वह जहाज़ क्या था या कहाँ से आ रहा था; लेकिन राजा ने घोषणा की कि जब तक जहाज़ पहुँच नहीं जाएगा तब तक वह लड़के को नहीं जलाएँगे।

कहानी जब यहाँ पर पहुँची तो पाँच वर्ष की लड़की कहानी सुनते-सुनते फूट-फूटकर रोने लगी। उसकी माँ ने परियों की कहानियों की किताब रख दी और बच्ची को तसल्ली देने लगी।

"रोओ नहीं। उस लड़के को कुछ नहीं हुआ। उसे खौलते हुए तारकोल के पीपे में नहीं फेंका गया। वह बच गया।"

"लेकिन मैं तो चाहती थी कि उसे तारकोल के पीपे में फेंक दिया जाए," बच्ची ने सिसकियाँ लेते हुए कहा। यह निराशा उसके लिए असह्य थी कि वह रोमांचकारी ख़तरा व्यवहार में पूरा नहीं हुआ।

इस सच्ची घटना से यह पता चलता है कि पहले से यह बता सकना हमेशा सम्भव नहीं होता है कि किसी पुस्तक का बच्चे पर क्या प्रभाव पड़ेगा। परन्तु दुर्भाग्य की बात तो यह है कि हमारी सारी जानकारी इस छोटी-सी घटना के ही स्तर की है, और जहाँ तक मुझे मालूम है, जिस तरह हाल ही में टेलिविज़न के बारे में छानबीन की गई थी इस प्रकार की कोई छानबीन बच्चों पर साहित्य के प्रभाव के बारे में नहीं की गई है।

बच्चों के माता-पिता, पुस्तकालयों के अध्यक्ष और शिक्षक बहुधा बच्चों द्वारा पढ़ी जाने वाली चीज़ों के बारे में गहरी चिन्ता प्रकट करते हैं। सबसे पहले तो आमतौर पर उन्हें इस बात की चिन्ता रहती है कि बच्चे को भयभीत या दुखी न किया जाए; दूसरे, समय से पहले ही उसमें काम-चेतना जाग्रत न होने पाए; और तीसरे, उसे आक्रामक प्रवृत्ति अपनाने या कुमार्ग पर चलने का प्रोत्साहन न मिले। बड़े लोगों की इस चिन्ता का आधार आमतौर पर उनके इस विश्वास पर होता है कि बच्चे मासूम, नन्हे प्राणी होते हैं, जिनके दिमाग़ में अरुचिकर विचार नहीं ठूँसे जाने चाहिए। मनोविश्लेषण-सम्बन्धी शोध-कार्य द्वारा इस विश्वास को दूर कर दिया जाना चाहिए था, पर इसे अभी तक दूर नहीं किया जा सका है। जहाँ तक बच्चे को भयभीत न करने का सवाल है, इसके पक्ष में बहुत सी बातें कही

जा सकती हैं, हालाँकि हम सभी को थोड़ा-बहुत भयभीत होना अच्छा लगता है। और यह तो कोई भी नहीं चाहेगा कि बच्चा दुःखी हो, हालाँकि कभी-कभी भावावेग के कारण आँसू बहा लेना सुखद होता है और उससे मन का बोझ हलका हो जाता है। कुछ उदाहरणों में यह सम्भव हो सकता है कि काम-चेतना समय से पहले ही जाग्रत हो जाए और वह उस बच्चे के लिए नई समस्याएँ पैदा कर सकती है, जिसकी अहं-भावना इतनी मज़बूत न हुई हो कि वह उनका सामना कर सके; और दुष्टता के आचरण को तो किसी भी हालत में प्रोत्साहन नहीं देना चाहिए। परन्तु इसमें बहुत सन्देह है कि पुस्तकों से स्वतः कभी भी बच्चों पर वह भयानक प्रभाव पड़ता हो जो चिन्ताग्रस्त प्रौढ़ लोगों की राय में उनसे पड़ता है।

आप लोगों में से बहुतों को याद होगा कि कुछ वर्ष पहले 'हारर कामिक्स' को लेकर कितना तूमार खड़ा किया गया था; और आपमें से कुछ लोगों ने डॉक्टर वर्थम की पुस्तक 'सेडक्शन ऑफ़ द इन्नोसेन्ट' (मासूमों को बहकाना) भी पढ़ी होगी। इस पुस्तक में, जिसमें भावुकता के प्रबल प्रवाह के साथ बहुत लम्बी-चौड़ी बातें कही गई हैं, 'हारर कामिक्स' पढ़ने वाले बच्चों पर उनकी प्रतिक्रिया की अपेक्षा स्वयं डॉ॰ वर्थम पर उनकी प्रतिक्रिया का अधिक उल्लेख किया गया है। यद्यपि उन्होंने इस पुस्तक में दावा यह किया है कि बच्चों में छोटी-छोटी बातों के लिए मचलने से लेकर चोरी करने तक जितने भी मानसिक विकार होते हैं उनकी सारी ज़िम्मेदारी इन्हीं 'हारर कामिक्स' पर है, पर न्होंने अपने इस दावे की पुष्टि में कोई प्रमाण नहीं दिए हैं।

मैं समझता हूँ कि कोई प्रमाण दिए भी नहीं जाएँगे। 'हारर कामिक्स' के सम्बन्ध में बुनियादी आपत्ति यह नहीं है कि उनमें जिन विषयों का चित्रण किया जाता है उनमें कोई दोष है, बल्कि जिस भोंडे और भद्दे तरीके से उन्हें पेश किया जाता है वह तरीका खराब है। इस बात का कोई अकाट्य प्रमाण नहीं मिलता कि 'हारर कामिक्स' पढ़कर बच्चे बिगड़ जाते हैं और उनमें शायद ही कोई ऐसी चीज़ होती हो जो इससे पहले के प्रकाशनों में न मिलती हो। उदाहरण के लिए जैक हार्कवे की साहस की कहानियों में

एक जगह एक लड़की को दहकते हुए पत्थरों से जलाने का विवरण मिलता है और एक जगह एक मनुष्य के धीरे-धीरे खा लिये जाने का वर्णन किया गया है। फिर भी विक्टोरिया-युग के अन्तिम तीस वर्षों में जिस पुस्तक का नायक जैक हार्कवे होता था वे सबसे ज़्यादा बिकती थीं। क्या इससे हम यह निष्कर्ष निकालें कि हमारे बाप-दादा बचपन में पढ़ी हुई किताबों के फलस्वरूप ही ऐसी हरकतों से आनन्द प्राप्त करते थे? विक्टोरिया-युग के लोग यौन-जीवन के दूसरे पहलुओं के बारे में तो ज़्यादा संकोच से काम लेते थे, पर उन्हें दूसरों को पीड़ा पहुँचाकर आनन्द लेने में उतनी परेशानी नहीं होती थी जितनी हमें आज होती है। 'द मिकाडो' और 'द योमेन ऑफ़ द गार्ड' नामक पुस्तकें बच्चों के मनोरंजन के लिए आमतौर पर उपयुक्त समझी जाती हैं, परन्तु दोनों ही में डब्ल्यू० एस० गिलबर्ट ने खुले तौर पर ज्यादातर यातनाएँ देने का ही वर्णन किया है और कॉनन डायल की कुछ कहानियों में भी इसी प्रकार की रुचि का प्रमाण मिलता है। ऐसा लगता है कि जो प्रौढ़ लोग 'कामिक्स' के कारण चिन्तित रहते हैं वे शायद यह समझते हैं कि लिखित अथवा उच्चारित शब्द की तुलना में चित्र अधिक हानिकारक होते हैं।

इसका क्या कारण है कि जिन कहानियों को बच्चे पसन्द करते हैं वे बहुधा भयानक घटनाओं से भरी रहती हैं? हम जानते हैं कि जन्मावस्था से ही बच्चे के मन में एक अद्भुत कल्पना-जगत् होता है और बच्चे के मस्तिष्क की कल्पनाएँ उन सुन्दर कल्पनाओं-जैसी नहीं होतीं जैसी कि हमें मिस ब्लाइटन की अनेकानेक रचनाओं में मिलती हैं। वे अधिक समृद्ध तथा अधिक सीधी-सादी होती हैं और उनके पीछे जो प्रेरक शक्ति क्रियाशील रहती है वह होती है काम-भावना और शक्तिशाली बनने की प्रबल इच्छा और यही वे शक्तियाँ होती हैं जो व्यक्ति को उसका व्यक्तित्व प्रदान करती हैं, क्योंकि विकास की लम्बी प्रक्रिया में परिपक्वता प्राप्त करने के लिए बच्चे को दो मुख्य काम पूरे करने पड़ते हैं। उसे अपनी शक्ति का प्रमाण देना पड़ता है और उसे अपने लिए एक जीवन-संगी ढूँढ़ना पड़ता है: और इस काम को पूरा करने के लिए उसे अपने माता-पिता पर बचपन की निर्भरता और उनके प्रति बाल्यकाल के अपने लगाव की बाधाओं को दूर करना पड़ता है। परियों की कहानियों में साहसिक कार्यों की अपेक्षा प्रेम की भावना कम स्पष्ट होती है। इसका कारण कुछ हद तक तो यह होता है कि इन कहानियों के रचयिता आपत्तिजनक शब्दों का प्रयोग करने से बचना चाहते हैं और कुछ हद तक कारण यह होता है इन कहानियों में सेक्स का तत्व बचकाने रूप में होता है, स्त्री-पुरुष के सम्भोग के रूप में नहीं। परियों की कहानियों के अन्त में शाहज़ादा शाहज़ादी को जीत लेता है, उसी प्रकार जैसे विक्टोरिया-युग के उपन्यासों के अन्त में हीरो और हीरोइन की शादी हो जाती है। इस अवस्था में पहुँचकर प्रौढ़ काम-क्रीड़ा आरम्भ होती है और यही कारण है कि बच्चों को 'लेडी चैटरलीज़ लवर'-जैसी पुस्तकों में, जिनमें प्रौढ़ लोगों के यौन-जीवन का वर्णन होता है, लगभग कोई दिलचस्पी नहीं होती। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि परियों की कहानियों में प्रेम भी होता है और मार-धाड़ भी और न ही इसमें कोई आश्चर्य की बात है कि बच्चों को इन कहानियों में इतना मज़ा क्यों आता है; क्योंकि इन कहानियों में

जिन युगों-पुराने विषयों को लिया जाता है वे बच्चे की मनोदशा को प्रतिबिम्बित करते हैं और परियों की कहानी और बच्चे के कल्पना-जगत् का अचेतन स्रोत एक ही होता है।

जिस चीज़ को पढ़कर जानकारी प्राप्त होने की अपेक्षा भावनाओं पर अधिक प्रभाव पड़ता है, वे मस्तिष्क में कोई नई बात नहीं डालतीं, बल्कि जो चीज़ पहले से वहाँ मौजूद होती है उसे साकार कर देती हैं। यदि ऐसी बात न होती तो किसी पुस्तक को पढ़कर हमारी भावनाओं पर कोई प्रतिक्रिया होती ही नहीं। हमारे अंदर किसी ऐसे ताले का होना आवश्यक है जिसमें उस पुस्तक की कुञ्जी लग जाए और यदि यह कुञ्जी नहीं लगती तो उस पुस्तक का हमारे लिए कोई अर्थ नहीं है। जब हम किसी कलाकार या लेखक की रचना को सराहते हैं तो हम उसकी सृजन-शक्ति की इतनी सराहना नहीं करते जितनी कि इस बात की कि वह स्वयं हमारे मस्तिष्क में पहले से मौजूद चीज़ों को साकार कर देता है; विशेष रूप से उन चीज़ों को जिनका हमें आंशिक रूप से ही आभास रहता है और जो इसीलिए अमूर्त होती हैं। हमें जो रोमांच होता है वह किसी चीज़ को पहचानने का होता है; यदि हम किसी चीज़ को न पहचानें तो कोई रोमांच नहीं होगा, बल्कि वह वैसे ही कोरी प्रशंसा होगी जैसी कि हम किसी ऐसे क्षेत्र में कोई महान् कार्य करने वाले व्यक्ति की करते हैं जिसके बारे में हम कुछ भी नहीं समझते।

यदि बच्चों के दिमाग़ में मार-धाड़ और प्रेम की भावना से सम्बन्ध रखने वाली कल्पनाएँ भरी रहती हैं, और यदि वे परियों की कहानियों में या ऐसी ही दूसरी चीज़ों में इसलिए दिलचस्पी लेते हैं कि उनमें उन्हें किसी चीज़ को पहचान लेने का रोमांच मिलता है तो फिर अपनी इन कल्पनाओं के अनुसार उनका आचरण क्यों नहीं होता और क्या इस बात का खतरा नहीं है कि पुस्तकों से उन्हें ऐसा करने का प्रोत्साहन मिले।

उद्विग्न बालक, जिसमें अपराध करने की प्रवृत्ति पाई जाती है, कभी-कभी अपने अपराध का कारण यह बताता है कि उसे यह बात कोई किताब पढ़कर सूझी थी, जो कि ज़िम्मेदारी से बचने का एक तरीका है। परन्तु जिस बालक

की भावनाओं में विशृङ्खलता होती है वही अपनी कल्पनाओं को क्रियान्वित करने की बात सोचता है। यदि ऐसा न होता तो हम सबने अब तक अपने भाई-बहनों का गला घोंट दिया होता, हर किसी स्त्री के साथ व्यभिचार करने पर उतर आते और अपने माता-पिता को तिलांजलि दे दी होती और जिस किसी ने भी किसी भी प्रकार हमारा विरोध किया है उसे मार-मारकर उसका कचूमर निकाल दिया होता। जैसा कि एक प्रख्यात बाल-मनोविज्ञानवेत्ता ने कहा है, "व्यक्ति सतत इस चेष्टा में लीन रहता है कि वह आंतरिक तथा बाह्य वास्तविकताओं को एक-दूसरे से अलग रखते हुए भी उनमें परस्पर-सम्बन्ध बनाए रखे।" एक सामान्य बालक तो ऐसा कर सकता है, पर मानसिक रूप से उद्विग्न प्रौढ़ व्यक्ति की तरह उद्विग्न बालक भी इन दोनों जगत् को आपस में मिला देता है और फलस्वरूप वह अपनी कल्पनाओं को क्रियान्वित करने लगता है और या तो अपने माँ-बाप को छोड़कर भाग जाता है या उन्हें पहाड़ पर से नीचे ढकेल देता है। परन्तु मुझे दृढ़ विश्वास है कि आज तक किसी भी पुस्तक को पढ़ने की वजह से कोई भी ऐसी पिस्तौल नहीं चलाई गई जिसकी लबलबी पर पहले ही से कोई उँगली काँप नहीं रही थी। अन्त में देखा जाए तो जो चीज़ हमें अपना मानसिक संतुलन ठीक रखने और अपना आचरण सभ्य बनाए रखने में सहायता देती है, वह है दूसरे लोगों के साथ हमारा सम्बन्ध।

बच्चे क्या पढ़ें और क्या न पढ़ें, इस सम्बन्ध में किसी किस्म की रोक-थाम करने की कोशिश करना वांछनीय हो भी, पर बेकार है। यदि सामान्य बच्चे पर साहित्य का असर उतना ही ज्यादा पड़ता हो जितना कि उसके माता-पिता समझते हैं, तो शायद हमें उनके किताबें पढ़ने पर ही पाबंदी लगा देनी होगी। एक आदमी ने मुझे बताया कि बचपन में पिरामिडों के निर्माण के चित्र देखकर उसे दासों में दिलचस्पी पैदा हुई थी और उसे उनकी व्यथा को देखकर आनंद मिलता था। तो क्या इस कारण हम इतिहास की पुस्तकों पर पाबंदी लगा दें? बहुत से लोग बताते हैं कि बचपन में वे यौन-ज्ञान के लिए बाइबिल का का लेविटिकस वाला भाग ढूँढा करते थे और उन्हें ओनान का रहस्यमय पाप एक पहेली मालूम होता था। तो क्या इस कारण बाइबिल को सभी शरीफ घरों से हटवा दिया जाना चाहिए? यह सच है कि ऐसी बातों को पढ़कर प्रौढ़ों की तरह ही बच्चों में भी कामोत्तेजना पैदा हो सकती है, परन्तु केवल उसी दशा में जब उनका विकास इस अवस्था में पहुँच चुका हो कि वे पुस्तक में किसी ऐसी चीज़ को खोजें जो उनके मन में पहले से ही अव्यक्त रूप में विद्यमान किसी इच्छा को प्रतिबिम्बित करती हो। और चाहे जितनी रोक-थाम की जाए पर इस चीज़ को वे कहीं-न-कहीं से ढूँढ ही लेंगे; और यदि वे खोजने में असफल रहेंगे तो वे स्वयं प्रेम-सम्बन्धी रचनाएँ करने लगेंगे।

अधिकांश बच्चों को मार-धाड़ की कहानियाँ पढ़ने में बहुत आनन्द मिलता है। हम सभी को यह जानकर बहुत सुख मिलता है कि किसी दूसरे की भावनाएँ भी हमारी जैसी हैं। हमें इस बात से भी भयभीत नहीं हो जाना चाहिए कि बचपन में पढ़ा जाने वाला साहित्य बच्चे को कुमार्ग पर लगा देगा; क्योंकि, जैसा कि गिब्बन ने कहा है, "शिक्षा का प्रभाव शायद ही कभी बहुत गहरा होता है, अलावा उन सुखद परिस्थितियों के जबकि उसकी कोई आवश्यकता नहीं रह जाती।"

यद्यपि पुस्तकों को इस बात का दोष नहीं दिया जा सकता कि उन्हें पढ़कर बच्चे कुमार्ग पर लग जाते हैं या उनसे मानसिक उद्वेग उत्पन्न होता है, फिर भी हमारी भावनाओं पर उनका प्रभाव पड़ता ही है। यह बात बिलकुल सम्भव है कि बहुत से प्रौढ़ लोग किसी-न-किसी ऐसी पुस्तक या किसी पुस्तक के ऐसे विवरण का उल्लेख अवश्य कर सकते हैं जिसने उन्हें बचपन में विशेष रूप से प्रभावित किया था। इस प्रकार के दृश्य वर्षों तक मानस-पट पर अंकित रहते हैं। मेरा अनुमान यह है कि इस प्रकार के दृश्य किसी-न-किसी रूप में बच्चे की किसी ऐसी मानसिक स्थिति को प्रतिबिम्बित करते हैं जिसका बच्चे को उस समय पूरा आभास नहीं होता।

आप का पत्र

आपकी पत्रिका ही एक साधन है, जिससे आत्मतुष्टि होती है। यह वरदान सदैव सुलभ रहे !

समाज का निर्माण स्वार्थ के सन्तुलन के लिए होता है। हम कानून बनाते हैं, सभा करते हैं, विचार-विमर्श करते हैं, जिससे सबका कल्याण हो। हम भी सुखी रहें, हमारे पड़ोसी-साथी भी सुखी रहें। सभी बातों का पूरा ज्ञान या औचित्य का आभास अकस्मात् या एकाएक ही नहीं होता। और जब भी अनुभूति होती है, पीछे की विषमताएँ भूल जाती हैं, कोई भी प्रतिहिंसा का भाव पैदा ही नहीं होता।

इस पृष्ठभूमि में एक बात विचारणीय है—किसी वस्तु का निर्माण सहयोग से हुआ करता है और जो भी समान योग देता है, समता का अधिकारी होता है। यदि मेरे पास पैसे हैं, पर उनके उपयोग का ज्ञान नहीं है, तो मेरे पैसे का उपयोग सामयिक पथ-प्रदर्शन पर चलता है। इसलिए पथ-प्रदर्शक या सहयोगी ही पर मेरे पैसे का उपयोग निर्भर करता है, उनके दिखलाये मार्ग पर ही चलने से अपना भी लाभ होता है। इसी प्रकार यदि मेरे पास कुछ योजनाएँ हैं, जिनसे कुछ उपलब्धियाँ हो सकती हैं, परन्तु मेरे पास पूँजी ही नहीं है, रुपये का अभाव है, तो मेरा सारा मनसूबा असफल ही रह जाता है। ऐसी स्थिति में अर्थ का योग सारथी होता है। परन्तु किसी भी स्थिति में एक का पूरक दूसरा होता है। दोनों ही अपने स्थान पर समान आदरणीय हैं।

ऐसी स्थिति में एक बात खटकती है। लेखक के पास बुद्धि की उड़ान है, कलम की तेज़ी है, पर पैसे का अभाव है। आदरणीय प्रकाशक बड़े दया-भाव से उनको सार्थक करता है, उनको गति देता है, उनकी कृतियों को रूप देता है, प्रसारित करता है। यह तो प्रकाशक की देन हुई। अब प्रकाशकों की ओर दृष्टिपात करें—प्रकाशक रुपये की थैली लेकर बैठा है, परन्तु स्वयं कोई पुस्तक की रचना करने में असमर्थ है। (मैं केवल उसी श्रेणी के प्रकाशक की बात करता हूँ, जो स्वयं, किसी कारणवश, किताब नहीं लिख सकता।) अब उसकी पूँजी का समुचित इस्तेमाल नहीं है। ऐसी हालत में आदरणीय लेखक ही उसका सहारा होता है, वही उसको प्रतिभा देता है, बल देता है, अर्थात् एक के लिए दूसरा समाज-पूरक का काम करता है।

अब देखना है, साझेदारी में दोनों ने एक पुस्तक निकाली। अब आय के अनुपात पर विचार करें। लेखक को साढ़े बारह प्रतिशत के अनुपात से पुस्तक की आय में हिस्सा दिया जाता है। पुस्तक बेचने वाले को तैंतीस प्रतिशत कमीशन मिलता है, यानी एक पुस्तक में १२½% लेखक, ३३% विक्रेता। किताब लिखकर लेखक दूसरे को मालदार बना दे, परन्तु स्वयं निर्धन ही रहेगा। पढ़ाई की क़द्र में तो प्रचारक ही का पद लाभदायक है। अब रही प्रकाशक की आय। उनको जो बचता है, वे जानें; परन्तु यह तो स्पष्ट बात है कि कितने ही प्रकाशक अच्छे पैसे वाले पाए जाते हैं, परन्तु हिन्दी के लेखक तो शायद ही क़फ़न को पैसा छोड़ जाते हैं। इससे मालूम पड़ता है कि दोनों की आय में कुछ असमानता है।

हमने कुछ व्यवसाय वालों के सम्बन्ध में कानून से मज़दूरी निश्चित होते देखी। पत्रकारों की भी सुरक्षा का साधन देखा। पर जो कानून अब तक न कर सका, हम आपस की समझदारी से ही क्यों न निपटा लें। मालूम होता है, लेखक-प्रकाशक खर्चे से फ़ाजिल रकम में समान बटवारा कर सकें तो अनुचित न होगा। लेखक को भी किसी वस्तु पर मनोयोगपूर्वक लिखने के लिए बड़ी उलझनों, पुस्तकों के अध्ययन तथा मानसिक विश्लेषण का सहारा लेना पड़ता है। हम तो उनकी कृतियों पर लुट जाते हैं, किस अदृश्य एवं वैयक्तिक शक्तियों के सहारे वे क्या-से-क्या पैदा कर देते हैं।

इस समय स्थूलवाद का युग है, रुपये की पूजा है,

(शेष पृष्ठ २७० पर)

राजस्थान में प्रकाशन-व्यवसाय

शेखरचन्द्र सक्सेना

जिन देशी रियासतों के विलीनीकरण से राजस्थान की रचना हुई, वे शिक्षा के क्षेत्र में एकदम पिछड़ी हुई थीं। वहाँ प्रकाशन का तो नामोनिशान भी न था। एकाध स्थान पर कोई चेष्टा होती भी तो सशंकित शासक येनकेन-प्रकारेण उस पर रोक लगा देते। और-तो-और तत्कालीन शासक प्रेस लगने तक को खतरनाक समझते थे। इन हालातों में प्रकाशन का कार्य यहाँ बिलकुल नहीं हुआ।

इधर आज़ादी आई तो युग-युग के बन्धन कट गए। उन्मुक्त रूप से सर्जना के कार्य हाथों में लिये गए। प्रकाशन का कार्य जहाँ कुछेक प्रकाशकों ने बड़े स्तर पर आरम्भ किया वहाँ फुटकर रूप से सैकड़ों पुस्तकों का प्रकाशन भी हुआ, जिनमें काफी प्रकाशन उच्च कोटि के थे और जिन्होंने राष्ट्रीय ख्याति भी अर्जित की। रानी लक्ष्मी कुमारी चूंडावत, श्री शम्भूदयाल सक्सेना, श्री मेघराज मुकुल, श्री कन्हैयालाल सेठिया, श्री यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र', श्री नरोत्तम दास स्वामी, श्री अगरचन्द नाहटा, श्री मुरलीधर व्यास, डॉ० सुधीन्द्र, श्री पुरुषोत्तम मेनारिया, श्री मनोहर प्रभाकर, श्री लक्ष्मीचन्द्र मिश्र, श्री नानूराम संस्कर्ता और श्री अमरनाथ 'चंचल' आदि की काफ़ी पुस्तकें धड़ाधड़ प्रकाश में आईं। यह एक नई जागृति की सूचना थी। यह एक अनहोनी घटना थी। अनहोनी इसलिए कि यहाँ पाठकों की संख्या दो प्रतिशत भी मुश्किल से थी। अतएव यह बड़े साहस की बात थी कि यहाँ प्रकाशन की ओर इतनी रुचि ली गई। रुचि थी इसलिए पुस्तकें प्रकाशित तो हो गईं पर बिक्री के लिए बाज़ार न था, पाठक न थे। कुछ लेखकों ने अपनी-अपनी पुस्तकें अपने-आप प्रकाशित की थीं, कुछ ने प्रकाशकों से करवाई थीं। जिन लेखकों ने स्वयं प्रकाशित करवाई वे तो एक-एक, दो-दो पुस्तकों में पूँजी को फँसाकर ही पछताने लगे। जिन प्रकाशकों ने किन्हीं लेखकों की पुस्तकें छापीं उनका भी हाल बड़ा घाटे का रहा। इस सबसे आज़ादी के बाद आई जोशीली लहर काफी ठंडी पड़ गई। उत्साह एकदम फीका पड़ने लगा। लेखकों की प्रतिभा भी कुंठित होने लगी कि तभी पंचवर्षीय योजना-काल का आरम्भ हो गया। योजनाओं की राशि सरकारी शिक्षण-संस्थाओं के पास पुस्तकों की खरीद के लिए आने लगी। यह राशि इतनी अधिक थी कि बुकसेलरों की दुकानों से ढेरों पुस्तकें बिकने लगीं। कभी-कभी तो राशि इतनी अधिक होती कि पुस्तकें अच्छी-बुरी सब ले ली जातीं और राशि फिर भी बाकी रह जाती। यह स्थिति अधिक दिन न रही। इस स्थिति की ओर उन कतिपय व्यक्तियों का ध्यान गया जो पुस्तक खरीद के लिए शिक्षण-संस्थाओं को दी जाने वाली राशि के उद्गम-स्थल से परिचित थे। वे यह जानते थे कि राज्य की समस्त संस्थाएँ कुल कितनी रकम की पुस्तकें इस वर्ष खरीदेंगी। वे यह भी देख रहे थे कि पुस्तकों पर कीमत प्रकाशक अपनी इच्छा के अनुसार ही छापता है। ऐसे लोग प्रकाशन-व्यवसाय में पड़े हुए लोग न थे। वे थे राजनीति के खिलाड़ी और शिक्षा-विभाग के ही व्यक्ति। उन्होंने स्थिति को समझते हुए प्रकाशन के कार्य में हाथ डाल दिया और मनमानी कीमतों की रद्दी-सद्दी पुस्तकें प्रकाशित करनी आरम्भ कर दीं। एक-एक पुस्तक की बड़ी-बड़ी संख्या में प्रतियाँ खरीदी जाने लगीं। इससे स्वस्थ रूप से प्रकाशन-व्यवसाय में लगे व्यक्तियों को बड़ी हानि पहुँची।

खरीद की संख्या में बढ़ोतरी ने शिक्षा-विभाग का

ध्यान यहा तक आकर्षित किया कि विभाग ने पुस्तकों की खरीद पर काफी बन्धन लगा दिए। ऐसी कोई भी पुस्तक नहीं ख़रीदी जाय जो विभाग द्वारा स्वीकृत न हो, ऐसे निर्देश जारी कर दिये गए।

इधर पुस्तकों की स्वीकृति के लिए समाज-शिक्षा-विभाग को काम सौंप दिया गया। इस विभाग ने जब से कार्य हाथ में लिया तब से आज तक कोई नीति निर्धारित नहीं की। कभी एक-एक पुस्तक की सात-सात प्रतियाँ ली जाती रहीं, कभी चार-चार। ये प्रतियाँ लेकर भी कभी ऐसा हुआ होता कि किसी निश्चित समय पर यह बता दिया जाता कि अमुक पुस्तक स्वीकृत की गई है अमुक नहीं, तो भी ठीक था। पर यह तो अवसरशाही राज है। यहाँ ऐसा नहीं हुआ। यहाँ जैसी चाही वैसी सूची प्रकाशित की गई। उन सूचियों में जी चाही पुस्तकें शामिल कर ली गईं। जिनमें ज़्यादा रुचि रही उन्हें दस-दस बार सूची में सम्मिलित किया गया। वे सूचियाँ इतनी निकृष्ट हैं कि उनमें पुस्तकों के नाम गलत हैं, प्रकाशकों के नाम गलत हैं, लेखकों के नाम गलत हैं और इसी प्रकार मूल्यों में भी भयंकर भूलें हैं। यह गत चार-पाँच वर्ष से होता आ रहा है और बावजूद कड़े विरोध के भी आज हालत वही-की-वही है।

आज जो प्रकाशक अपने नये प्रकाशनों को स्वीकृति के लिए इस समाज-शिक्षा-विभाग को भेजते हैं वे इतने अधिक परेशान हो गए हैं कि उन्होंने अपनी पुस्तकें स्वीकृति के लिए भेजना बन्द-सा कर दिया है। प्रथम तो नवीन प्रकाशनों को स्वीकृत करने की कोई निश्चितता नहीं है, द्वितीय यदि थोड़ी-बहुत है भी तो उसे भाई-भतीजावाद की खंदक ले डूबती है।

राजस्थान में पुस्तक-विक्रेताओं के पास जनरल पुस्तकों के लिए काउन्टर सेल मार्केट नहीं है, इसी से प्रकाशक और पुस्तक-विक्रेता अधिकतर सरकारी ख़रीद में रुचि लेते हैं। इधर सरकारी ख़रीद में मापदंड अच्छे प्रकाशनों का न होकर स्वीकृत पुस्तक का है।

इस प्रकार राजस्थान में प्रकाशन-व्यवसाय समाप्त हो रहा है। पाठ्य-पुस्तकों का राज्य सरकार पहले ही राष्ट्रीयकरण कर चुकी है। यूनिवर्सिटी की पाठ्य-पुस्तकों पर भी नियन्त्रण-प्रणाली लागू है। बची-खुची साहित्यिक पुस्तकों के प्रकाशन की भी भ्रूण-हत्या हो रही है।

(पृष्ठ २१४ का शेष)

के अन्य कार्यालय मुख्यतया बाहरी प्रकाशनों की बिक्री में संलग्न रहे हैं। इनमें से बम्बई और इलाहाबाद के कार्यालय इसलिए पहली जनवरी से बन्द किये जा रहे हैं।

वैसे यह सिद्धान्ततः ठीक भी है कि एक ही संस्था को प्रकाशक और पुस्तक-विक्रेता नहीं होना चाहिए। प्रकाशन और पुस्तक-विक्रय के कार्य पुस्तक-व्यवसाय के दो महत्त्वपूर्ण लेकिन पृथक् और विभिन्न पक्ष हैं। इसकी माँग भी देश के पुस्तक-विक्रेताओं द्वारा यदाकदा होती रही है—उन्हें **राजकमल** के इस निर्णय से प्रसन्नता होगी।

नये वर्ष से **राजकमल** अपनी प्रकाशकीय सक्रियताओं में पहले से कहीं अधिक प्रगति लाएगा—**राजकमल** के सामने प्रकाशन की अनेकानेक योजनाएँ कार्यान्वित करने को पड़ी हैं—हिन्दी में अनेकानेक ऐसे विषय और योजनाएँ अछूती पड़ी हैं, जिन्हें प्रकाशित कर हिन्दी के भंडार को भरना सजग प्रकाशकों का कर्तव्य है। आगामी वर्षों में **राजकमल** इस प्रकाशकीय कर्तव्य को निभाने के लिए अटूट निष्ठा से रत रहेगा।

इस ओर अधिक सक्रियता लाने के लिए **राजकमल** ने अपनी पूँजी में भी पर्याप्त वृद्धि की है। अंग्रेजी पुस्तकों की बिक्री में अग्रणी संस्था एलाइड पब्लिशर्स प्रा० लि० ने **राजकमल** की अपूर्व सफलता को देखते हुए इस संस्था की आर्थिक क्षमता को प्रायः दुगुना करने में सहायता दी है।

हिन्दी के पाठकों, लेखकों, प्रकाशकों, पुस्तक-विक्रेताओं, पुस्तकालयाध्यक्षों और पुस्तक-प्रेमियों से प्रार्थना है कि वे **राजकमल** को अपना वही स्नेह और वही आशीर्वाद देते रहें जैसा कि वे आज तक देते रहे हैं और जिसके लिए उनका अनुग्रह सदैव रहेगा।

राजकमल से सम्बद्ध सब स्नेहियों से प्रार्थना है कि आगे से सभी पत्र-व्यवहार वे **राजकमल** के दिल्ली के पते ही से करें—**राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०, ८ फ़ैज़ बाज़ार, दिल्ली-६।**

एक उपेक्षित वरदान

दयानन्द वर्मा

यह लेख 'ज्ञानोदय', कलकत्ता के दिसम्बर अंक से साभार उद्धृत किया जा रहा है।

मिल्टन ने कहा है—"एक अच्छी किताब को नष्ट करना उतना ही बुरा है जितना एक इन्सान की हत्या करना। जो इन्सान की हत्या करता है वह एक विवेकशील प्राणी की हत्या करता है; लेकिन जो एक अच्छी किताब को नष्ट करता है वह तो साक्षात् विवेक की ही हत्या करता है।"

विवाह-पार्टी। उपहारों का ढेर। कैमरे, साड़ियाँ, तस्वीरें तथा अन्य सौन्दर्य-प्रसाधनों की भेंट स्वीकार करते हुए आतिथेय के हाथ थक गए। उसके होंठों पर स्वाभाविक मुस्कराहट थी जो एक नवागन्तुक के हाथ में छोटा-सा पैकेट देखकर कुछ क्षणों के लिए विलीन हो गई। पैकेट में पुस्तक के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकता था।

"इस शुभ अवसर पर मेरी ओर से यह तुच्छ भेंट।" कहते हुए नवागन्तुक ने पैकेट आतिथेय के हाथ पर रख दिया।

"ओह! धन्यवाद।" कहते हुए स्वीकारकर्ता ने मुस्कराना आवश्यक समझा, लेकिन 'तुच्छ' शब्द की तरदीद करना ज़रूरी न समझा गया।

इस विवाह-पार्टी से मीलों दूर एक और व्यक्ति को यह चिन्ता खाए जा रही थी कि उसके पास बेकार पुस्तकों का एक निरर्थक-सा 'ढेर' पड़ा हुआ है। निरर्थक इसलिए कि वह उन्हें पढ़ चुका है। यदि कोई उसे खरीद ले तो आधे मूल्य में बेच डाले और यदि आधे में भी कोई न खरीदे तो रद्दी के भाव बेचकर जगह खाली कर ले।

एक और उदाहरण।

मेरी गली में रहने वाले एक स्कूल टीचर। जब कभी वह मुझे रास्ते में मिलते, पूछते—

"क्या आप कोई परीक्षा दे रहे हैं?"

"नहीं।" एक दिन मैंने उत्तर दिया।

"फिर आप हर समय ये पुस्तकें बगल में दबाए क्यों घूमते हैं?"

"इसलिए कि मुझे पढ़ने का शौक है।" मैंने उत्तर दिया और मेरी ओर उन्होंने यों देखा जैसे उन्हें मेरे दिमाग़ की किसी चूल के ढीले होने पर सन्देह होने लगा हो। उनके लिए यही बात अचरज की थी कि निर्धारित पाठ्य-पुस्तकों के अतिरिक्त भी किन्हीं पुस्तकों को अध्ययन के लिए पढ़ा जा सकता है।

ज़रा सोचिए, पुस्तकों के प्रति यह उदासीनता क्यों?—उन पुस्तकों के प्रति, जो आदिकाल से होने वाले मानव-जाति के सतत प्रयत्नों के बाद अस्तित्व में आईं; मानव का महानतम् आविष्कार जो अन्य सभी आविष्कारों का कारण बना।

बहुत रोचक है पुस्तकों की उत्पत्ति की कहानी भी। संक्षेप में यूँ कि मनुष्य बोला, भाषा का जन्म हुआ। बोले गए विचारों को स्थायी बनाने के लिए लिपि का आविष्कार हुआ। लिपि ने मानव के अनुभवों के निष्कर्ष-रूप में प्राप्त ज्ञान को सुरक्षित किया। उस सुरक्षित ज्ञान के यत्र-तत्र बिखरे ताड़ या भोजपत्रों को इकट्ठा बाँधकर जब ग्रंथि लगा दी गई तो वह विशालकाय पत्र-समूह 'ग्रंथ' कहलाने लगा। इसी ग्रंथ के ही एक रूप का नाम है 'पुस्तक'।

पुस्तकों ने मानव-जाति के विकास में महत्त्वपूर्ण योग

दिया है। अब हर नई पौध को पिछले संरक्षित ज्ञान की मौजूदगी में उससे आगे सोचना था। न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण-शक्ति की खोज की। उस खोज को उसने लिखित रूप देकर स्थायी बना दिया। अगली पीढ़ी ने उससे आगे सोचा तो उस शक्ति से मुक्ति प्राप्त करने वाले यन्त्र 'राकेट' का निर्माण कर डाला।

बाद में अपना ज्ञान दूसरों तक पहुँचाने वाले अनेक साधनों का आविष्कार हुआ, किन्तु पुस्तक-सरीखा उत्कृष्ट, सर्वसुलभ, स्थायी और सस्ता कोई न बन पाया। यही एक साधन था जिसके द्वारा कोई भी व्यक्ति जब जी चाहे जेब से पुस्तक निकालकर, उस व्यक्ति के विचार और अनुभव जान सकता था जिसने दो शताब्दी पूर्व उससे दो हज़ार मील दूर जन्म लिया था।

इन्हीं पुस्तकों की बदौलत आज हम कुछ ही घण्टों में संसार के किसी भी भाग की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं जो पुस्तकों के अभाव में वर्षों की धूल छानने के बाद भी प्राप्त न हो सकती।

पुस्तकों को इतना महत्वशाली समझते हुए संसार-

भर के धर्मों ने इनका पठन अनिवार्य घोषित किया, किन्तु उनके धर्मावलम्बियों ने पुस्तक-विशेष को पूजा की वस्तु बना डाला। एक ही पुस्तक को पढ़ते-पढ़ते आँखों में मोतियाबिन्द उतर आया तो सुनना आरम्भ कर दिया। जलाल में आ गए तो पुस्तक की तनिक-सी मान-हानि पर अन्य धर्मावलम्बियों की हत्या तक कर डाली। यह ज्ञान-पिपासा नहीं थी, ज्ञान की व्यर्थ की चौकीदारी थी, (उपहास था) और यह उपहास आज भी किया जाता है।

रैस्तरां में जाकर बेयरे को आठ आने टिप देते हुए हमारे देश के युवकों का जी ज़रा भी नहीं दुखता, किन्तु पढ़ने के नाम पर खर्च करते हुए वह सोचना शुरू कर देते हैं बल्कि कोशिश करते हैं कि अखबार भी माँगकर पढ़ लिया जाए।

आरम्भ में दिये गए उदाहरण एक बार फिर सामने लाएँ और देखें कि पुस्तक की भेंट मेज़बान को क्यों तुच्छ लगी? क्या इसलिए कि वह मूल्यवान नहीं थी? यदि मूल्यवान पुस्तक दे दी जाती तो? पर इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। वास्तविकता यह है कि न उसे पुस्तक के महत्व का पता है, न ही उसकी पढ़ने में रुचि है। वह सोचता है कि भेंटकर्ता उसकी बजाय यदि नींबू निचोड़ने वाला खटका ही दे जाता तो अच्छा था। किसी काम तो आता।

दूसरे उदाहरण के व्यक्ति की तो पुस्तकों में रुचि है, फिर क्यों अपने सामने पुस्तकों का ढेर देखकर उसे वहशत होने लगती है? वह उन्हें क्यों बेचना चाहता है? क्या उसके घर रात का खाना नहीं है? नहीं, बल्कि वह पुस्तकें बेचकर दीवार पर लटकाए जाने वाले परिन्दे लाना चाहता है और भविष्य के लिए उसने सोच लिया है कि पुस्तकों पर पैसे बरबाद करने की बजाय वह अपना शौक या तो किसी लायब्रेरी में जाकर पूरा करेगा या एक आना रोज़ किराया देकर किसी हॉकर से नई पत्रिका लेकर पढ़ लेगा।

तीसरे में मेरे पड़ोसी स्कूल-टीचर को मेरे दिमाग़ की किसी चूल के ढीले होने पर सन्देह हुआ। शायद इसलिए कि उसे अपनी कक्षा में पढ़ने वाला एक भी छात्र ऐसा नहीं मिला जो बिना दण्ड और भय के पुस्तक पढ़ता हो। छात्र तो छात्र, उसने स्वयं भी स्वेच्छा से कभी कोई

पुस्तक नहीं पढ़ी। फिर क्यों न वह उस व्यक्ति को अचरज-भरी दृष्टि से देखे जो बिना परीक्षा के पुस्तकों में शौक रखता है।

कहा जाता है—भारत निर्धन देश है। यहाँ जीने के अन्य साधनों की दुर्लभता के कारण लोग पुस्तकों पर पैसा नहीं खरचना चाहते।

यदि ऐसा हो तो सिनेमा हॉल के बाहर टिकट प्राप्त करने के लिए आये हुए दर्शकों की लाईन की व्यवस्था करने के लिए पुलिस को हस्तक्षेप न करना पड़े। न ही महँगे रेस्तराओं में टेबल खाली होने के लिए कभी-कभी नवागन्तुकों को इन्तज़ार करना पड़े।

कुछ व्यक्ति पुस्तकें न पढ़ सकने का कारण अपनी व्यस्तता बताते हैं। उनके लिए मेरे पास अपने एक ऐसे मित्र का उदाहरण मौजूद है जो दिन-भर काम करता है और रात को लैम्प-पोस्ट के नीचे बैठकर पढ़ता है। हर समय कुछ-न-कुछ पाठ्य-सामग्री उसके साथ रहती है—जाने कब, कहाँ कुछ क्षण मिल ही जाए।

बहरहाल 'व्यस्तता' न पढ़ने का बहाना हो सकता है, वास्तविक कारण नहीं।

फिर वास्तव में क्या कारण है?

उत्तर पाने के लिए हमें पूर्व-वर्णित स्कूल-टीचर की कक्षा में जाना होगा।

हम नित्यप्रति देखते हैं कि पाठ्य-पुस्तकों की नीरसता बच्चों को स्कूलों से भागने पर विवश करती है। यदि बच्चे के हाथ कभी कोई कहानी की पुस्तक लग भी जाए तो वह यह कहकर उससे छीन ली जाती है—"ये पुस्तकें तुम्हें पार नहीं लगा देंगी। जाओ, गणित पढ़ो, इतिहास पढ़ो, भूगोल पढ़ो।" छीनने वाला नहीं जानता कि बच्चे पर इस क्रिया की प्रतिक्रिया भी हो सकती है। वह प्रतिशोध लेता है—पाठ्य-पुस्तकों के प्रति उदासीनता दिखाकर।

यदि बच्चे को उसकी इच्छा की पुस्तक पढ़ने के लिए दे दी जाए तो बाद में वह हमारी पसन्द की पुस्तक भी पढ़ लेगा। मुख्य काम है पुस्तक के प्रति उसके मन में घृणा पैदा न हो। वह कहानी पढ़े, उपन्यास पढ़े, कुछ भी पढ़े, अतिरिक्त अध्ययन के तौर पर कुछ-न-कुछ पढ़े ज़रूर।

हम समझते हैं—कहानी पढ़कर बच्चा अपना समय

नष्ट कर रहा है। पहेलियाँ बूझकर अपना दिमाग़ व्यर्थ गँवा रहा है, जबकि वास्तविकता यह है कि हर पुस्तक से वह कुछ-न-कुछ ग्रहण करता है। चीन की राजकुमारी की कहानी पढ़ते समय उसके मन में चीन की भौगोलिक स्थिति जानने की इच्छा पैदा होती है। पहेलियाँ बूझकर वह अपनी सोचने की शक्ति बढ़ा रहा है।

पश्चिमी देशों में पठन का शौक न रखने वाले व्यक्ति को भी पुस्तकों का शैल्फ रखना पड़ता है। उन देशों में प्रायः पुस्तकों के साधारण तथा बढ़िया दो प्रकार के संस्करण निकलते हैं। साधन-सम्पन्न व्यक्ति पढ़ने का शौक चाहे रखता हो या नहीं, किन्तु अपनी हैसियत को देखते हुए बढ़िया संस्करण रखना ज़रूर पसन्द करेगा। अपनी छोटी-सी लायब्रेरी में सस्ता संस्करण भरते हुए उसे बिलकुल वैसी ही अनुभूति होती है जैसे निचले दरजे के कम्पार्टमैण्ट में यात्रा करने से, घटिया क्रॉकरी खरीदने से या सस्ते मूल्य का कैमरा लटकाने से।

यहाँ का एक सामान्य व्यक्ति जब किसी दूसरे व्यक्ति के घर जाता है तो उसकी निगाह पड़ती है—अच्छे फर्नीचर पर, सुन्दर कालीनों पर, तस्वीरों और गुलदस्तों पर। अपने यहाँ ऐसी वस्तुएँ न देखकर वह हीनता की भावना महसूस करता है। इस हीनता को श्रेष्ठता का रूप देने के लिए पहली दफे पैसे हाथ में आते ही वह उन देखी गई वस्तुओं में से कोई एक लेने के लिए लपकता है।

पुस्तकें पढ़ने का शौक रखकर उन्हें बेचने का विचार रखने वाले व्यक्ति को पुस्तकें घर में रखने से श्रेष्ठ भावना की अनुभूति नहीं होती। जब वह कहीं मिलने के लिए जाता है तो उसे कहीं भी पुस्तकों की अलमारी दिखाई नहीं देती। उसके किसी भी मित्र को पढ़ने का शौक नहीं है, बल्कि वह इस भय से अपना शौक भी उन पर प्रकट नहीं करता कि कहीं उसके मित्र यह न कहने लगें—"अमां यार, तुम तो किताबी कीड़े हो।"

'किताबी-कीड़ा' पद का यदि विश्लेषण किया जाए तो उसमें से ईर्ष्या-सूचक ध्वनि निकलती है। पढ़ने का शौक न रखने वाला वर्ग, जो कि संख्या के अनुपात से बहुत अधिक है, मन से तो यह मानता ही है कि पढ़ने का 'व्यसन' एक अच्छा व्यसन है। चूँकि वह स्वयं नहीं पढ़ सकता इसलिए वह नहीं चाहता कि कोई दूसरा भी पढ़े। अपने मन में छिपी हुई इस जलन को वह 'किताबी-कीड़ा' कहकर बाहर निकालता है।

इसी वर्ग की अधिकता के कारण वह वहशत-ज़दा आदमी पुस्तकें बेच डालना चाहता है। वह सोच ही नहीं सकता कि पुस्तक सजावट की वस्तु भी बन सकती है, जबकि पश्चिमी देश का एक नागरिक इस आशंका से बचने के लिए भी एक शैल्फ रख लेता है कि कहीं आने वाला मेहमान यह न समझे कि उसमें पढ़ने का कतई शौक नहीं। पढ़ने का शौक न रखना वह अपने लिए शर्म की बात समझता है।

अपने यहाँ भी यह भावना पैदा हो सकती है—तब, जबकि अधिक लोग पढ़ने के शौकीन होंगे और उन्हें इस बात का गर्व भी होगा कि वे पढ़ते हैं। इस गर्व के प्रमाण-स्वरूप वे अपने घर में पुस्तकों का एक कोना सजाएँगे। इसके लिए आने वाली पीढ़ी में पढ़ने की रुचि पैदा करनी होगी।

पश्चिमी देशों में पुस्तकों के प्रति इस क़दर प्रेम किसी चमत्कार के रूप में प्रकट नहीं हुआ, अपितु यह वहाँ की सरकारों, प्रकाशन-संस्थाओं और विद्वानों के सामुदायिक सहयोग के फलस्वरूप आया है।

जहाँ उधर के प्रकाशक साहित्य को ऊँचा और आकर्षक बनाने का प्रयत्न करते हैं, वहाँ पुस्तकों का शौक पैदा करने के लिए 'पुस्तक सप्ताह' भी मनाए जाते हैं।

किन्तु यदि हम भारत की ओर दृष्टिपात करें तो यहाँ इस आयोजन के साथ ऐसा कुछ नहीं होता। पाठकों की कमी सिवाय प्रकाशकों और लेखनी-जीवियों के, किसी को नहीं खलती। हालाँकि यह केवल प्रकाशकों या लेखकों का मामला नहीं, देश की तात्कालिक समस्या है। तात्कालिक समस्या यूँ कि पाठकों की कमी के कारण पुस्तकें या पत्रिकाएँ कम छपती हैं। कम छपने के कारण लेखकों को पारिश्रमिक कम मिलता है। लेखनी-मात्र के कारण जीविका न चल सकने के कारण लेखक अपनी प्रतिभा को पूर्ण रूप से उजागर नहीं कर पाते। फलस्वरूप मौलिक साहित्य की कमी और अनुवादों की भरमार होने लगती है। अच्छी पत्रिकाएँ दम तोड़ने लगती हैं। और इसका परिणाम निकलता है—देश की बौद्धिक कंगाली।

हिन्दी-प्रकाशन में राष्ट्रीय मानक की आवश्यकता

कृष्णाचार्य

इस लेख के विद्वान् लेखक नेशनल लाइब्रेरी, कलकत्ता के हिन्दी-विभाग के प्रमुख कार्यकर्ता हैं। उनका यह लेख प्रकाशकों द्वारा दिलचस्पी से पढ़ा जाएगा।

भारतीय भाषाओं में सर्वाधिक उत्तरदायित्व हिन्दी भाषा का है, इसलिए नहीं कि हिन्दी बोलने वालों की संख्या सबसे बड़ी है, इसलिए भी नहीं कि भारतीय भाषाओं में हिन्दी के माध्यम से सबसे अधिक कागज़, क्या व्यक्तिगत रूप में, क्या सरकारी रूप में, काला किया जाता है। यहाँ हिन्दी के राजकीय स्वरूप को भी महत्त्व देने का स्थान नहीं है। यह वह भाषा है जो लगभग पिछले दो सौ वर्षों से क्या पढ़े-लिखे पण्डित और निरक्षर-जनसमुदाय के बीच अन्तर-प्रान्तीय आदान-प्रदान का काम करती रही है। यह तथ्यात्मक सत्य है कि नागरी लिपि के माध्यम से हिन्दी-भाषा ही विशेष रूप से बहुजनहिताय सिद्धान्त के निकट रही है।

स्पष्ट है कि मुद्रित-प्रकाशित रूप में भी हिन्दी भाषा का वह स्वरूप सबके सामने आना चाहिए जिसे देखकर राष्ट्रीय मानक की झाँकी मिल सके। राष्ट्रीय ग्रन्थालय, कलकत्ता द्वारा प्रकाशित केरी प्रदर्शनी और पूर्व-मुद्रण पुस्तिका में इंडियन टाइपोग्राफी लेख के अन्तर्गत श्री नार्मन ए० एलिस महोदय लिखते हैं कि "The typographical expression of a country's ownself can only be made by a country's own sons and daughters. इसी लेख में लेखक ने मुद्रण की राष्ट्रीय शैली की आवश्यकता पर जोर दिया है। हम मुद्रक और प्रकाशक, इन दोनों की दृष्टि से राष्ट्रीय शैली के विकास पर जोर देना चाहते हैं। हिमालय से लेकर कन्याकुमारी और द्वारिका से लेकर पुरी तक फैले हुए हिन्दी-प्रकाशक इस समस्या पर विचार करें तो बहुत उत्तम हो। आप लोग अपनी प्रकाशन संस्थाओं द्वारा पुस्तक के रूप में ऐसे सांस्कृतिक वातावरण की सृष्टि करते हैं जो प्रत्येक मनुष्य के दैनिक जीवन में काम आती है। ऐसी स्थिति में हमारे जन-जीवन के बीच प्रकाशन का वह रूप विकसित होना चाहिए जो उपयोगी तो हो ही, साथ ही उससे राष्ट्रीय रुचि पल्लवित हो और उसे देखकर यह धारणा बने कि हिन्दी का यह प्रकाशन हमारी भारतीय शैली में है।

इस प्रकार के प्रयत्न में टाइप, कागज़, शीर्षक पृष्ठ का मेक-अप और शीर्षक की न्यूनतम आवश्यकता, पुस्तक का मूल भाग, अन्तिम भाग, परिशिष्ठ, विषय, लेखक आदि का अनुक्रमण-जैसे विषयों पर विचार करना आवश्यक होगा। लेखक के नाम, उसके छद्म या गुप्त नाम आदि की निश्चित प्रणाली अपनानी होगी।

पहली समस्या टाइप की है। केन्द्रीय शासन ने नागरी के टाइप का रूप निश्चित कर यह समस्या बहुत-कुछ हल कर दी है। अब करना यही है कि प्रकाशक यही रूप व्यवहार में लाएँ। इस क्षेत्र में अन्य व्यावहारिक कठिनाइयाँ प्रकाशक और मुद्रक सहकारिता के आधार पर आसानी से हल कर सकते हैं।

लेखक के नाम की समस्या का हल आसान नहीं है। यह समस्या सूचीकरण से सम्बन्ध रखती है। एक ही लेखक अनेक नामों से लिखता है और छद्म नाम से भी लिखता है। उदाहरणार्थ सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन और अज्ञेय एक ही लेखक के दो नाम हैं। दोनों नामों से पुस्तकें

छपती हैं। क्या इनका सूचीकरण दो नामों से किया जाय ? पुस्तकालय तो अपने नियम के अनुसार लेखक के वास्तविक नाम में प्रविष्ट कर लेता है। किन्तु पाठक वास्तविकता को बहुधा नहीं जान पाते। सूचीकरण में, कहना चाहिए कि वर्गीकरण कार्य में, लेखक के जन्म-वर्ष की आवश्यकता पड़ती है, विशेषकर साहित्यिक कृतियों में। यह जन्म-वर्ष आलोचकों के काम का तो है ही, इसके अन्य उपयोग भी हैं। जानकारी के अभाव में क्या पाठ्य-पुस्तक और क्या अन्य ग्रन्थ में लेखक का जन्म-वर्ष कहीं-कहीं गलत पाया जाता है। इस समस्या को शीर्षक पृष्ठ की पीठ पर किसी उपयुक्त स्थान में टाँककर हल किया जा सकता है।

अनुवाद-ग्रंथों में विशेष रूप की गड़बड़ी पायी जाती है। मूल लेखक का नाम प्रायः रहता है, किन्तु मूल शीर्षक का उल्लेख प्रायः नहीं रहता है। पाठक की कठिनाई यह है कि लेखक के किस ग्रंथ का अनुवाद प्रकाशक ने दिया है और सूचीकरण में भी मूलसूत्र इधर-उधर टटोलना पड़ता है। कहीं-कहीं तो ऐसा भी होता है कि लेखक के स्थान पर अनुवादक ही स्थान जमा लेते हैं। इस प्रकार की असावधानी से राष्ट्रीय श्रम की हानि तो होती ही है, पाठक भी, विशेषकर कम पढ़ा-लिखा पाठक, गलत रास्ते पर चला जाता है। अच्छा हो, यदि यूरोपीय लेखकों के नाम और टाइटिल शीर्षक पृष्ठ की पीठ पर रोमन लिपि में अंकित रहें। इस प्रकार की व्यवस्था सभी दृष्टि से आवश्यक है।

प्रकाशक के नाम की समस्या नहीं के बराबर है। किन्तु, जहाँ प्रकाशक अपनी शाखाओं का उल्लेख करता है, वहाँ कठिनाई होती है। प्रधान कार्यालय या प्रकाशन-स्थान का स्पष्ट उल्लेख आवश्यक है। प्रकाशन-तिथि न देना तो, क्षमा करें, राष्ट्रीय अपराध के समान है। क्यों ? यह प्रकाशक से छिपा नहीं। भविष्य में इन पुस्तकों को टटोलने वाले जिज्ञासु पाठक तो इन अतिथि-पुस्तकों से परेशान होते ही हैं, सामयिक पाठक या पुस्तकालयों में काम करने वालों को भी कठिनाई होती है। कृपया इस अतिथि की समस्या हल करें।

पृष्ठ-संख्या निर्धारण भी आसान काम नहीं है। अंग्रेजी प्रकाशनों में रोमन और अरबी संख्याओं से भूमिका-

भाग और मूल भाग का पार्थक्य समझ लिया जाता है। निवेदन है कि हिन्दी के प्रकाशक पृथक्करण की कोई नीति अपनाएँ। नम्र सुझाव है कि पुस्तक के भूमिका-भाग में अरबी या रोमन अंक, मूल पुस्तक में हिन्दी अंक और परिशिष्ट आदि में कोई और उपयोगी प्रणाली अपनानी चाहिए। इस प्रकार स्वायत्तीकरण की प्रवृत्ति से हम अनुदारता के लांछन से बच सकते हैं और पुस्तक के सब भागों को अलग भी कर सकते हैं। विवरणात्मक अनुक्रमी में इस प्रकार की सुनिश्चित नीति बहुत सहायक होती है। यह मात्र मुद्रण-रुचि तक ही सीमित बात नहीं।

प्रायः देखा जाता है कि परिश्रम से लिखे वैज्ञानिक या खोजपूर्ण ग्रंथों में भी कभी-कभी शब्द, नाम, विषय आदि से अपेक्षित अनुक्रमणिकाओं का अभाव ही रहता है। खोज करने वाले गम्भीर पाठकों के लिए इस प्रकार का साधन बहुत उपयोगी सिद्ध होता है, और समय की बचत होती है।

दूसरा महत्त्वपूर्ण साधन पुस्तकानुक्रमी (Bibliography) है। वैज्ञानिक या खोजपूर्ण प्रकाशनों में मूल और आधारिक पुस्तकों की सूची की अनिवार्य आवश्यकता है। उदाहरण के लिए, यदि नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित विश्वकोश की प्रत्येक प्रविष्टि में आधारिक पुस्तकों के संदर्भ नहीं हैं तो पुस्तक का मूल्य बहुत घट जाता है। इस संदर्भों से ही विशेष अध्ययन करने वाले पाठक आगे बढ़ते हैं। यह सत्य है कि अब जागरूक प्रकाशक और लेखक भी प्रकाशन-कला के इस अंग की उपेक्षा नहीं करते, फिर भी इस क्षेत्र में विकास और मानक अवस्था प्राप्त नहीं हुई है।

और समस्याएँ भी हैं जिन्हें आप अच्छी तरह जानते हैं; और कुछ ऐसी समस्याएँ भी हैं जिन्हें ग्रंथालयों में काम करने वाले विशेषज्ञ जानते हैं। आज आवश्यकता इस बात की है कि हिन्दी-प्रकाशन ऐसी मानक स्थिति प्राप्त करे जिससे पाठकों, विद्वानों, पुस्तकालयों और प्रकाशकों को भी अपनी ऊँची रुचि और न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति का ध्यान रहे। इस प्रकार की सावधानी से ही हम न केवल अपने प्रकाशन प्रामाणिक बना सकेंगे, वरन् हम पाठक-जगत् में सुरुचि का प्रवेश कर सकेंगे। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए यह आवश्यक है कि प्रकाशकों, मुद्रकों, ग्रंथाध्यक्षों और मानक-संस्था के सहयोग से एक ऐसी समिति संगठित की जाए जो हिन्दी-प्रकाशन कोड का निर्माण कर सके। प्रकाशक ही सहकारिता के आधार पर हिन्दी-प्रकाशन जगत् में समरूपता और गौरव ला सकते हैं जिसे हम राष्ट्रीय शैली नाम से अभिनन्दित कर सकें। यूरोप में भी मुद्रण-प्रकाशन के कलात्मक और व्यावहारिक विकास में प्रकाशकों का ही हाथ रहा है। ग्रंथालय-सूची और पुस्तकानुक्रमी के क्षेत्र में वहाँ प्रकाशक पथ-प्रदर्शक रहे हैं। क्यों न आप भी इस परम्परा के भागी बनें। यह काम ग्रंथालय नहीं कर सकते, केवल पाठक ही अपनी आवश्यकता संकेत कर सकते हैं। लेखक, पण्डितों से भी आप समरूपता लाने के क्षेत्र में विशेष आशा नहीं कर सकते। वे प्रायः अपने मत के अकेलेपन में ही अधिक विश्वास करते हैं।

यहाँ केवल विषय की गुरुता का संकेत ही किया गया है। यह आपका काम है कि इसे आप व्यापक या सीमित रूप में संगठित करें और जिस रूप से भी चाहें, क्रियान्वित करें। आपको ऐसा लग सकता है कि यह सुझाव प्रत्यक्ष रूप से आर्थिक विकास से, विक्रय-संगठन आदि से सम्बद्ध नहीं। किन्तु निवेदन है कि फिलहाल निष्काम लगने वाली यह समस्या प्रकाशन-क्षेत्र की सबसे महत्व की, प्राथमिक अनिवार्यता की समस्या है। आप मानें या न मानें, प्रकाशन-कार्य सबसे पहले सांस्कृतिक कार्य है। यह वह उद्योग है जो पीढ़ियों तक चलने वाली अक्षय निधि देता है, यह वह धन है जो अर्थकरी दुनिया से प्राप्त करना सम्भव नहीं। इस प्रयत्न में आपका जाएगा कुछ नहीं, किन्तु प्राप्त ऐसा कुछ होगा जो प्रतिक्षण आपको अपने व्यवसाय में आत्मतुष्टि देगा, वह आत्मविश्वास देगा जो प्रत्येक अच्छे धन्धे की पहली शर्त है।

लेखकीय मञ्च

मध्य प्रदेश शासन साहित्य परिषद् ने प्रयाग के डॉ० रामकुमार वर्मा को उनके काव्य "विजय पर्व" पर २५०० रुपयों का 'महाकवि कालिदास पुरस्कार' दिया है। २१०० रुपयों का देव-पुरस्कार 'हिमालय के आँसू' पर श्री आनन्द मिश्र को दिया गया है। सात-सात सौ रुपयों के पुरस्कार देने की घोषणा निम्नलिखित लेखकों के लिए हुई है:

डॉ० बलदेव प्रसाद मिश्र (श्याम शतक), श्री सुयोगी (शायद तुमने याद किया), श्री के० एस० मेहता (संग्राम और शान्ति), डॉ० बी० डी० शर्मा (हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन), डॉ० के० एल० हंस (निमाड़ी का लोक साहित्य), श्री भगवानदास खरे तथा श्री भगवानदास श्रीसास्तव (बुन्देलों का इतिहास), श्री मदनमोहन मदारिया (गुदड़ी के लाल)।

पाँच-पाँच सौ रुपयों के पुरस्कार निम्नलिखित लेखकों को दिए गए हैं:

श्री कुलभूषण (मुन्नू के मित्र), श्री पन्नालाल जैन (जीवनधर चम्पू), श्री महेन्द्र भटनागर (देश-देश की कहानियाँ), श्री पी० एल० जैन (दिव्य ध्वनि), श्री आई० के० जैन (बेकारी समस्या), श्री लक्ष्मीप्रसाद प्रशान्त (झरना), श्री जयसिंह (सात स्वर एक आवाज)।

* * *

श्री मदनमोहन मदारिया को उनके बालोपयोगी उपन्यास 'गुदड़ी का लाल' की पाण्डुलिपि पर मध्य प्रदेश शासन साहित्य परिषद् ने इस वर्ष ७००.०० रुपए का 'पद्माकर पुरस्कार' घोषित किया है।

* * *

श्री शत्रुघ्न मिश्र 'दिवाकर' मकान नं० १५९ जगन्नाथपुर-गोरखपुर से सूचना देते हैं कि 'प्रवासी सुभाष' नाम से एक प्रबन्ध-काव्य की पाण्डुलिपि उनके पास प्रकाशनार्थ प्रस्तुत है। प्रकाशक सम्पर्क स्थापित करें।

* * *

श्री नारायणलाल शर्मा के पास तीन अनूदित तथा एक बालोपयोगी मौलिक पाण्डुलिपि प्रकाशनार्थ तैयार हैं। प्रकाशक महोदय निम्न पते पर सम्पर्क स्थापित करें: द्वारा पर्दा बाग़, दरियागंज, दिल्ली।

प्रो० दीनानाथ शरण, देवघर कॉलेज, देवघर (सं० प्र०) 'कौन बाँधेगा समुन्दर की लहर' (उपन्यास) तथा 'कॉलेज की लड़कियाँ' (कहानी-संग्रह) के प्रकाशनार्थ पॉकेट बुक्स छापने वाले प्रकाशकों से उनकी शर्तों के उल्लेख-सहित पत्र के अभिलाषी हैं। इनके अतिरिक्त वे अपनी आगामी पांडुलिपि 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में उल्लेख करने के लिए सभी तरुण कवियों व साहित्यकारों से अनुरोध करते हैं कि वे अपनी प्रकाशित कृतियों के नाम-सहित अपना परिचय-विवरण उपरोक्त पते पर भेजें।

* * *

भारतीय दस्यु-जीवन पर लिखित ठाकुर घनश्याम नारायण सिंह सेण्ट्रल ब्रेल प्रेस, देहरादून की लेखमाला जो धारावाहिक रूप से 'धर्मयुग' में प्रकाशित हो रही है, उसका अनुवाद दक्षिण भारत के सुप्रसिद्ध मलयालम साप्ताहिक 'मातृभूमि' द्वारा किया जा रहा है।

* * *

'संस्मरणांजलि' शीर्षक एक संस्मरण संग्रह के लिए प्रकाशक की आवश्यकता है। प्रकाशनेच्छुक सज्जन निम्न पते पर पत्र व्यवहार करें: पंकज साहित्य निकेतन, मीरगंज, मथुरा।

श्री सुनीलनाथ चक्रवर्त्ती, ३-कमच्छा, शान्ति कुण्ड, वाराणसी से सूचित करते हैं कि उनके पास एक सामाजिक उपन्यास तथा 'प्यार' नाम से एक कहानी-संग्रह की पाण्डुलिपि प्रकाशनार्थ तैयार है। संग्रह की सभी कहानियाँ सुप्रसिद्ध पत्रिकाओं में पूर्व प्रकाशित हैं। इनके प्रकाशन में दिलचस्पी लेने वाले प्रकाशक उपर्युक्त पते पर सम्पर्क स्थापित करें।

राजस्थान का हिन्दी-साहित्य और उसका प्रकाशन

श्री सरदारमल थानवी

हिन्दी-साहित्य के इतिहास के विद्यार्थी इस तथ्य से इन्कार नहीं कर सकते कि हिन्दी का वर्तमान स्वरूप राजस्थानी को लेकर ही बना है, अतः यह सर्व-सम्मति से माना जा चुका है कि राजस्थानी साहित्य हिन्दी का ही एक अंगमात्र है। राजस्थान प्रान्त में या बाहर भी राजस्थानी भाइयों द्वारा हिन्दी-साहित्य का जो निर्माण-कार्य किया गया है वह हिन्दी-साहित्य का एक महत्वपूर्ण अंग है।

'पृथ्वीराजरासो' से लेकर आज तक राजस्थानी भाषा यानी हिन्दी के अनेक बड़े-बड़े काव्य-ग्रन्थों का यहाँ सृजन हुआ है 'वीरभाण', 'प्रवीणसागर', 'जसवन्तजसोभूषण' आदि भीमकाय ग्रंथ एवं 'वीरविनोद', 'रसिकविनोद', 'उमर-काव्य', 'पाण्डवजशेन्दुचन्द्रिका' आदि अनेक ग्रंथों का प्रकाशन इस प्रान्त में हो चुका है जो हिन्दी के साहित्य-भण्डार को भरने में अपना अद्वितीय स्थान रखता है।

इसी प्रकार मीरा-साहित्य, कबीर-साहित्य, व अन्य अनेक राजस्थानी संतों का साहित्य, जिसमें दादूपंथी, रामसनेही आदि भी शामिल हैं, अनेक ग्रंथों की रचना व प्रकाशन का कार्य कर चुके हैं। इसके अलावा लोकगीतों व राजस्थानी खेल-तमाशों का प्रकाशन भी एक महत्त्वपूर्ण अंग है, जिसके कुछ नगण्य-से अंश, जो कुछ हद तक अश्लील की गणना में आ सकता है, के कारण सारे साहित्य की उपेक्षा नहीं की जा सकती।

राजस्थान प्रान्त हिन्दी-साहित्य के सृजन में किसी कदर पीछे नहीं है, यह मानना पड़ेगा ही। बल्कि मैं तो यहाँ तक कह सकता हूँ कि इस प्रान्त के साहित्य, इतिहास एवं कला से हिन्दी को हर प्रकार से प्रेरणा मिली है और इसने अनेक हिन्दी-साहित्य के उदीयमान कवि व लेखक पैदा किये हैं जो इस प्रान्त के निवासी न भी हैं।

हिन्दी-मुद्रण-यंत्र पहले-पहल कलकत्ता में आया और फिर बम्बई आदि भारत के बड़े शहरों में। और इसी कारण मुद्रण-काल से बहुत पहले सृजन किया गया राजस्थान का हिन्दी-साहित्य प्रकाशित ही नहीं हो सका और उसके रेगिस्तान या गिरिकन्दराओं की झोंपड़ियों में ही पड़ा रहा और अब भी पड़ा नष्ट हो रहा है, या हो गया है। फिर भी ऐसा नहीं कहा जा सकता कि राजस्थानी प्रकाशन-कार्य से अनभिज्ञ रहे। भारत में हिन्दी मुद्रणालयों में वेंकटेश्वर प्रेस, हरिप्रसाद भागीरथ, श्रीधर शिवलाल के बम्बई के प्रेस, अजमेर का राजस्थान प्रेस व वैदिक यन्त्रालय और राजस्थानी विभिन्न रजवाड़ों के रियासती प्रेसों ने यहाँ के साहित्य का मुद्रण किया, परन्तु यह अवश्य मानना पड़ेगा कि सामुदायिक रूप से या सामूहिक रूप से यहाँ ऐसा कोई प्रकाशन-कार्य नहीं किया गया जिसे व्यावसायिक प्रकाशन संस्थान के नाम से पुकारा जा सके।

व्यावसायिक उन्नत प्रकाशन-संस्थान की कमी ने राजस्थानी हिंदी-साहित्य की प्रगति को बहुत ज़बरदस्त बाधा पहुँचाई है और अब भी पहुँचा रहा है। इस कार्य में भारत के सम्माननीय प्रकाशकों ने भी जैसा चाहिए उतना सहयोग देकर यहाँ के प्रान्तीय, प्राचीन एवं अर्वाचीन साहित्य के प्रकाशन में प्रोत्साहन नहीं दिया है। इसमें राजस्थानियों की संगठनहीनता ही मुख्य कारण है और राजस्थान के हिन्दी-सेवकों ने एक निजी संगठन न कर अपनी-अपनी डफली अपना-अपना राग अलापने की नीति अपनाकर अपने स्वार्थ की सिद्धि में लगे रहना ही इसके ह्रास का मुख्य कारण है।

किसी ने डिंगल का अलग राग अलापा तो किसी ने राजस्थानी भाषा हिन्दी से पृथक् भाषा होनी चाहिये, कह-कर अपनी शक्ति का सदुपयोग नहीं किया। फिर भी आज

(शेष पृष्ठ २७० पर)

राजस्थान सरकार शिक्षा-विभाग द्वारा समय-समय पर स्वीकृत राजकमल प्रकाशन की पुस्तकों की सूची

उपन्यास

खण्ड	पृष्ठ	क्रम	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	मूल्य
	६४		जय सोमनाथ	क० मा० मुन्शी	५.५०
	६४		भगवान् परशुराम	,, ,,	७.००
	६४		लोमहर्षिणी	,, ,,	५.००
अ	६	१२	लोपामुद्रा	,, ,,	५.५०
अ	१२	२५६	मैला आँचल	फणीश्वरनाथ रेणु	६.५०
अ	१२	२५७	परती परिकथा	,, ,,	७.५०
अ	१७	३८५	जहाज़ का पंछी	इलाचन्द्र जोशी	७.५०
अ	६	१५३	दुखमोचन	नागार्जुन	३.००
	३८		बाबा बटेसरनाथ	,,	२.००
अ	६	१५५	बुढ़िया की गाय	मुल्कराज आनन्द	५.५०
अ	६	१५९	नदी और नारी	हुमायूँ कबीर	४.५०
	३८		बहती गंगा	शिवप्रसाद मिश्र 'रुद्र'	२.५०
अ	६	१५२	दूधगाछ	देवेन्द्र सत्यार्थी	६.००
अ	६	१५६	विशाख	प्रकाशचन्द्र गुप्त	१.५०
	३७		जीवनदान	श्रीराम शर्मा 'राम'	३.००
	३७		आदमी और सिक्के	महेन्द्रनाथ	२.००
	३८		गंगा मैया	भैरवप्रसाद गुप्त	२.००
	३८		चन्दा	इन्द्र वसावड़ा	२.००
	३८		बाहर-भीतर	डॉ० देवराज	२.२५
अ	८	६७	उबाल	रांगेय राघव	१.७५
	३८		सनसनाते सपने	राधाकृष्ण	२.००
	३८		स्वप्नमयी	विष्णु प्रभाकर	२.००
अ	६	१५१	दूर के ढोल	ए० रमेश चौधरी 'आरिगपूडि'	४.००
अ	१२	२५८	उखड़े हुए लोग	राजेन्द्र यादव	७.५०
अ	१७	३८६	टूटे हुए पर	खलील जिब्रान	२.००
	३८		बेद वृक्षों की छाया में	शिहयेन	१.२५
	३७		हेसा	राजेन्द्र शर्मा	३.००

खण्ड	पृष्ठ	क्रम	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	मूल्य
अ	१२		ब्रह्मपुत्र	देवेन्द्र सत्यार्थी	७·००
अ	६	१४६	एक नीड़ दो पंछी	उदयशंकर भट्ट	८·५०
अ	६	१५०	सागर लहरें और मनुष्य	,, ,,	५·००
कहानी					
अ	६	१५४	तुम बड़ी पागल हो	मालती परुलकर	२·५०
अ	१०	१४०	कहानी : नई-पुरानी	डॉ० रघुवीरसिंह	२·००
नाटक					
अ	६	१५८	लाल कनेर	रवीन्द्रनाथ ठाकुर	
				अनुवादक हजारीप्रसाद द्विवेदी	२·००
		९७	विद्रोहिणी अम्बा	उदयशंकर भट्ट	२·००
		९७	सगर विजय	,, ,,	२·००
			शक विजय	,, ,,	२·२५
			युगछाया	शिवदानसिंह चौहान	२.५०
			नया समाज	उदयशंकर भट्ट	२.००
कविता					
		१२५	पल्लव	सुमित्रानन्दन पन्त	४.००
		२४५	क्वासि	बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'	४·००
अ	१६	३३२	पर आँखें नहीं भरीं	डॉ० शिवमंगलसिंह 'सुमन'	४.००
अ	२७	७२	धरती और स्वर्ग	डॉ० देवराज	३·५०
भारतीय अमर-साहित्य					
अ	१६	३३३	मेघदूत	डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल	४.५०
अ	३३	१९	सेतुबन्ध	प्रवर सेन	४·५०
लोक-साहित्य					
	२२०		भारतीय लोक-साहित्य	श्याम परमार	४.००
आलोचनात्मक-साहित्य					
ब	३३	१८	हिन्दी गद्य-काव्य	डा० पद्मसिंह शर्मा कमलेश	७·००
ब	३३	२०	कवि प्रसाद	डॉ० भोलानाथ तिवारी	४·००
अ	२७	७३	हिन्दी-निबन्ध	प्रभाकर माचवे	२·५०
अ	२४	८०	हिन्दी प्रेमाख्यान की परम्परा	परशुराम चतुर्वेदी	४·००
अ	२७	७४	हिन्दी रीति साहित्य	भगीरथ मिश्र	४·००
अ	२४	६७	हिन्दी-गद्य-साहित्य	शिवदानसिंह चौहान	२·७५
ब	३३	१७	उर्दू साहित्य का इतिहास	एजाज़ हुसैन	६·००

खण्ड	पृष्ठ	क्रम	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	मूल्य
अ	२७	७१	हिन्दी-भाषा तथा साहित्य	उदयनारायण तिवारी	३·२५
अ	२६	४७	उर्दू और उसका साहित्य	गोपीनाथ 'अमन'	२·२५
अ	२६	४८	तमिल और उसका साहित्य	पूर्ण सोमसुन्दरम्	२·२५
अ	२६	४९	तेलुगु और उसका साहित्य	हनुमच्छास्त्री अयाचित	२·२५

आलोचनात्मक साहित्य

खण्ड	पृष्ठ	क्रम	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	मूल्य
अ	२६	५०	मालवी और उसका साहित्य	श्याम परमार	२·२५
अ	२६	५१	बंगला और उसका साहित्य	हंसकुमार तिवारी	२·२५
अ	२६	५२	मराठी और उसका साहित्य	प्रभाकर माचवे	२·२५
	२२६		अवधी और उसका साहित्य	डॉ० त्रिलोकीनारायण दीक्षित	२·२५
	३३	२३	संस्कृत और उसका साहित्य	शा० नानूराम व्यास	२·२५
	३३	२२	हिन्दी और प्रादेशिक भाषाओं का वैज्ञानिक इतिहास	शमशेरसिंह नरूला	४.००
	३३	२१	हिन्दी भाषा का सरल व्याकरण	डॉ० भोलानाथ तिवारी	३·५०
	२३२		निबन्धिनी	गंगाप्रसाद पाण्डेय	४·००
	२३४		सिद्धान्त और समीक्षा	सन्तराम विचित्र	२·५०
	२२६		हिन्दी-काव्य की प्रवृत्तियाँ		२·२५
	२२६		हिन्दी आलोचना की अर्वाचीन प्रवृत्तियाँ		२·२५
	२२६		हिन्दी के गौरव-ग्रन्थ		२·२५

धार्मिक

खण्ड	पृष्ठ	क्रम	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	मूल्य
	१७४		धर्म-वर्णन	आनन्दशंकर बापूभाई ध्रुव	२·७५

संस्कृति, दर्शन, इतिहास

खण्ड	पृष्ठ	क्रम	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	मूल्य
स	६६	११	भारतीय संस्कृति	शिवदत्त ज्ञानी	५·५०
ब	५२	७१	भगवान् बुद्ध	धर्मानन्द कोसम्बी	५·००
	३६	१७	प्राचीन भारतीय विचार और विभूतियाँ	डॉ० राधाकुमुद मुकर्जी	३·५०
	१७४		वैष्णव धर्म	परशुराम चतुर्वेदी	३·५०
	३६	१८	भारतीय समाज विन्यास	डॉ० राधाकमल मुकर्जी	२.००
	१६९		भारतीय तत्त्व चिन्तन	डॉ० जगदीशचन्द्र जैन	६·५०
	१७६		सागर-सेतु	राजेन्द्र शर्मा	५·००

अर्थशास्त्र-राजनीति

खण्ड	पृष्ठ	क्रम	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	मूल्य
	३६	१६	राजनीतिसार	ए० अप्पादोराय	८·५०

शिक्षा, मनोविज्ञान

खण्ड	पृष्ठ	क्रम	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	मूल्य
स	६१	४७	बच्चा मेरा शिक्षक	केरोलिन प्रैट	१·५०
	१३		सरल मनोविज्ञान	हंसराज भाटिया	४·००

मनोविज्ञान-माला

खण्ड	पृष्ठ	क्रम	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	मूल्य
	१३		बचपन के पहले पाँच साल		१·२५
	१३		हीनभाव		१·२५
	१३		बचपन ५ से १० साल		१·२५
	१३		हमारे जीवन का अर्थ, भाग १		१·२५

खण्ड	पृष्ठ	क्रम	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	मूल्य
	१३		प्रेम और विवाह		१·२५
	१३		हमारे जीवन का अर्थ, भाग २		१·२५
	१३		व्यक्तित्व		१·२५
	१३		स्मरण-शक्ति		१·२५
	१३		मित्र बनाने की कला		१·२५
	१३		हमारे जीवन का अर्थ, भाग ३		१·२५
	१३		अध्ययन कैसे करें		१·२५
	१३		हमारे जीवन का अर्थ, भाग ४		१·२५
	१३		चिन्ता		१·२५
	१३		हमारे जीवन का अर्थ, भाग ५		१·२५
	१३		माता-पिता की समस्या		१·२५
	१३		हमारे जीवन का अर्थ, भाग ६		१·२५
स्त्रियोपयोगी प्रकाशन					
ह	१५४		नारी का रूप-शृङ्गार		६·००
सेक्स					
	१३		सन्तति-नियमन	डॉ० मेरी स्टोप्स	२·००
	१३		स्थायी प्रेम	,, ,,	३·००
किशोरोपयोगी, प्रौढ़ोपयोगी					
	१६२		इन्सान की कहानी	मुल्कराज आनन्द	३·००
	१६१		हिन्दुस्तान की कहानी	,, ,,	२·५०
	२७		ग्राम-पंचायत (नाटक)	राजेन्द्र शर्मा	२·००
	२७		देश की जानकारी		०·५०
	२७		गाँव की बातें		०·५०
	२७		सहकारी आन्दोलन		०·५०
	२७		सफ़ाई		०·५०
	२७		खेती-बारी		०·५०
	२७		पशु-पालन		०·५०
	२७		साम्प्रदायिकता		०·५०
	२७		स्वतन्त्र देश के नागरिक		०.५०
	२०		हमारा विधान		०.५०
	२७		भारत के तीर्थस्थान		०·५०
	२७		स्वास्थ्य-रक्षा		०.५०
	२७		हमारे त्योहार		०·५०
	२७		भारत-निर्माता		०·५०
	२७		नगर-व्यवस्था		०·५०
बाल-साहित्य					
	२७		पंचतन्त्र की कहानियाँ, भाग १	शकुन्तला देवी	१·२५
	२७		,, ,, ,, ,, २	,, ,,	१·२५
	२७		,, ,, ,, ,, ३	,, ,,	१·२५
अ	६	१५७	परिस्तान	अनु० रघुपतिसहाय फिराक	४.५०
	२७		पीली बत्तक	चीन की कहानियाँ	१·००

खण्ड	पृष्ठ	क्रम	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	मूल्य
	८४		बरफीले देश में	रूसी कहानियाँ	१.००
	८५		पहला शिकार	रूसी कहानियाँ	१.००
	८४		बचपन की कहानियाँ	शरत्‌चन्द्र चटर्जी	१.५०
	८४		धुएँ की फाँसी	एस० ए० ताहिर	१.५०
	८४		चम-चम चमके चन्दा मामा	बाबूराम पालीवाल	१.००
	८४		एक कदम आगे	मनरोलीफ	२.००
	८४		हमारे बापू	इन्द्रनाथ मदान	१.००
	८४		हमारे नेहरू	,, ,,	१.००
	८४		हमारे गुरुदेव	,, ,,	१.००
	८४		मुन्शी प्रेमचन्द	,, ,,	१.००
	८४		लेनिन	,, ,,	१.००
	८४		अब्राहम लिंकन	,, ,,	१.००

माध्यमिक और प्राथमिक शालाओं के पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत पुस्तकों की सूची

खण्ड	पृष्ठ	क्रम	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	मूल्य
अ	१	१४	हमारे बापू	डॉ० इन्द्रनाथ मदान	१.००
अ	६	१२३	परिस्तान	अनु० रघुपतिसहाय फिराक	४.५०
अ	१३	२४७	लोपामुद्रा	,, कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी	५.५०
अ	१४	२६	देश की जानकारी		०.५०
ब	२८	८	हमारे त्योहार		०.५०
	३०	६	सफाई		०.५०
ब	३०	७	स्वास्थ्य-रक्षा		०.५०
ब	३०	२८	स्वतन्त्र देश के नागरिक		०.५०
ब	३०	२६	हमारा विधान		०.५०
ब	३०	३०	नगर व्यवस्था		०.५०
ब	३३	२	पंचतन्त्र की कहानियाँ (तीन भाग)	शकुन्तला देवी (प्रत्येक)	१.२५
ब	३७	१६०	सच्ची नागरिकता	मनरो लीफ	२.००
ब	४७	४६०	सोने का नीबू	किरण	१.२५
ब	४७	४६१	जंगल में शेर	कुदसिया जैदी	१.२५
ब	३१	३५	ग्राम पंचायत	राजेन्द्र शर्मा	२.००
ब	४७	४६२	रामायण के गीत	विश्वनाथ राघव	१.००
ब	४७	४६३	चचा छक्कन के ड्रामे (भाग १)		१.००
ब	४७	४६४	चचा छक्कन के ड्रामे (भाग २)		१.००
ब	४८	५१७	पीली बत्तक		१.००
ब	४८	५१८	तीरन्दाज 'ई'		१.००
ब	४८	५१६	बरफीले देश में		१.००
ब	४८	५२०	पहला शिकार		१.००
ब	४८	५२७	एक कदम आगे	मनरो लीफ	२.००
ब	४८	५२४	चम चम चमके चन्दा मामा	बाबूराम पालीवाल	१.००
ब	४८	५२३	बचपन की कहानियाँ	शरत्‌चन्द्र	१.५०
ब	४८	५२५	धुएँ की फाँसी	एस० ए० ताहिर	१.५०
ब	५२	६४६	लम्बे दिन जलती रातें	डॉ० स० प्र० संगर	२.२५
ब	५७	५	भारत के तीर्थ स्थान		०.५०

खण्ड	पृष्ठ	क्रम	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	मूल्य
ब	५९	१	भारत निर्माता		०.५०
ब	६३	१२९	हमारे नेहरू	डॉ० इन्द्रनाथ मदान	१.००
ब	६३	१३०	हमारे गुरुदेव	,,	१.००
ब	६३	१३१	मुन्शी प्रेमचन्द	,,	१.००
ब	६३	१३२	लेनिन	,,	१.००
ब	६३	१३३	अब्राहम लिंकन	,,	१.००
ब	६५	१०	खेती-बाड़ी		०.५०
ब	६५	११	पशुपालन		०.५०
स	२८	५५	पक्षियों का जीवन	अली सफदर	०.६०

माध्यमिक महाविद्यालयों, बहु-उद्देशीय, उच्चतर तथा उच्च विद्यालयों के लिए

खण्ड	पृष्ठ	क्रम	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	मूल्य
क	१	२	भारतीय भोजन विज्ञान	सावित्री देवी वर्मा	७.००
ख	१३	३७	अक्षरों का आरम्भ और भाषा विज्ञान	आगा हैदर हुसैन	२.००
	१३	३९	उर्दू साहित्य का इतिहास	डॉ० एजाज़ हुसैन	२.००
	१३	३९	हिन्दी गद्य काव्य	डॉ० पद्मसिंह शर्मा कमलेश	७.००
	१३	४०	सेतुबन्ध	प्रवरसेन	४.५०
	१३	४१	कवि प्रसाद	डॉ० भोलानाथ तिवारी	४.००
	१३	४३	हिन्दी और प्रादेशिक भाषाओं का वैज्ञानिक इतिहास	शमशेरसिंह नरूला	४.००
	१३	४२	हिन्दी भाषा का सरल व्याकरण	डॉ० भोलानाथ तिवारी	३.५०
	१६	१४	प्राचीन भारतीय विचार और विभूतियाँ	डॉ० राधाकुमुद मुकर्जी	३.५०
	१६	१३	भारतीय समाज विन्यास	डॉ० राधाकमल मुकर्जी	२.००
	१६	१५	राजनीतिसार	डॉ० अप्पादोराय	८.५०
छ	६	४५	रोड़े और पत्थर	डॉ० देवराज	२.२५

ज़िला पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत पुस्तकें

खण्ड	पृष्ठ	क्रम	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	मूल्य
	४९	३२	हिन्दी गद्य काव्य	डॉ० पद्मसिंह शर्मा कमलेश	७.००
	४९	३३	कवि प्रसाद	डॉ० भोलानाथ तिवारी	४.००
	४९	३४	हिन्दी भाषा का सरल व्याकरण	,,	३.५०
	४९	३५	संस्कृत और उसका साहित्य	नातूराम व्यास	२.२५
	५३	१७	राजनीतिसार	डॉ० ए० अप्पादोराय	८.५०
	५३	१८	प्राचीन भारतीय विचार और विभूतियाँ	डॉ० राधाकुमुद मुकर्जी	३.५०
	५३	१९	भारतीय समाज विन्यास	डॉ० राधाकमल मुकर्जी	२.००
	१२	७९	भारतीय तत्व चिन्तन	डॉ० जगदीशचन्द्र जैन	६.५०
	१४	१५४	बचपन के पहले पाँच साल		१.२५
	१४	१५५	व्यक्तित्व		१.२५
	१४	१५६	स्मरण-शक्ति		१.२५
	१४	१५७	बच्चा मेरा शिक्षक	केरोलिन प्रेट	१.५०
	१४	१५८	हीन भाव		१.२५
	१५	१७०	प्रेम और विवाह		१.२५
	२२	४	इन्सान की कहानी	डॉ० मुलकराज आनन्द	३.००
	२३	३६	लोपामुद्रा	के० एम० मुंशी	५.५०

खण्ड	पृष्ठ	क्रम	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	मूल्य
	२३	३७	टूटे हुए पर	खलील जिब्रान	२.००
	२३	३८	भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा	परशुराम चतुर्वेदी	४.००
	२५	१०६	भारतीय लोक-साहित्य	श्याम परमार	३.५०
	२६	१०७	अध्ययन कैसे करें		१.२५
महिलोपयोगी					
	२७	११	बचपन के पहले पाँच साल		१.२५
	२७	१२	बचपन पाँच से दस साल		१.२५
	२७	१३	स्थायी प्रेम	डॉ० मेरी स्टोप्स	३.००
	२७	२१	प्रेम और विवाह		१.२५
	२७	२२	मित्र बनाने की कला		१.२५
	२७	२३	माता-पिता की समस्या		१.२५
	३०	३०	जय सोमनाथ	के० एम० मुन्शी	५.५०
	३१	३५	लोमहर्षिणी	,,	५.००
	३१	३८	लोपामुद्रा	,,	५.५०
	४१	४००	बहती गंगा	शिवप्रसाद मिश्र 'रुद्र'	२.५०
	४५	५१२	हेमा	राजेन्द्र शर्मा	३.५०
	४५	५१४	जीवनदान	श्रीराम शर्मा 'राम'	३.००
	४५	५१५	आदमी और सिक्के	महेन्द्रनाथ	२.००
	४५	५१७	गंगा मैया	भैरवप्रसाद गुप्त	२.००
	४५	५१८	चन्दा	इन्द्र वसावड़ा	२.००
	४५	५१९	बाबा बटेसरनाथ	नागार्जुन	२.००
	४५	५२०	सनसनाते सपने	राधाकृष्ण	२.००
	४५	५२४	कहानी : नई पुरानी	डॉ० रघुबीरसिंह	२.००
	४५	५२५	टूटे हुए पर	खलील जिब्रान	२.००
	४५	५२६	बेद वृक्षों की छाया में	शिह येन	१.२५
	६१	७४	विद्रोहिणी अम्बा	उदयशंकर भट्ट	२.००
	६१	७६	सगर-विजय	,, ,,	२.००
	६९	१३७	क्वासि	बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'	४.००
	७४	२०	हिन्दी गद्य की प्रवृत्तियां		२.२५
	७४	२१	हिन्दी आलोचना की अर्वाचीन प्रवृत्तियाँ		२.२५
	७४	२२	हिन्दी के गौरव ग्रन्थ		२.२५
	७४	२३	उर्दू और उसका साहित्य	गोपीनाथ 'अमन'	२.२५
	७४	२४	मालवी और उसका साहित्य	श्याम परमार	२.२५
	७४	२५	बंगला और उसका साहित्य	हंसकुमार तिवारी	२.२५
	७५	५२	पृथ्वीराजरासो में कथानक रूढ़ियाँ	व्रजविलास श्रीवास्तव	३.५०
	७४	५४	हिन्दी रीति साहित्य	भगीरथ मिश्र	४.००
	७५	५५	सिद्धांत और समीक्षा	सन्तराम विचित्र	२.५०
	७६	६२	भोजपुरी और उसका साहित्य	डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय	२.२५
	७६	८६	शेष स्मृतियाँ	डॉ० रघुबीरसिंह	४.००
	७७	११	हिन्दुस्तान की कहानी	डॉ० मुल्कराज आनन्द	२.५०
	७८	५८	उर्दू साहित्य का इतिहास	एजाज़ हुसैन	६.००

(इन पुस्तकों में से अनेक कई बार स्वीकृत हुई हैं किन्तु उनका नम्बर, पृष्ठ क्रम आदि केवल एक बार ही उद्धृत किया गया है।)

पुस्तक-परिचय

साहित्य

हिन्दी साहित्य और बिहार नामक ग्रंथ का प्रकाशन **बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना** की ओर से हुआ है और इसका सम्पादन किया है आचार्य शिवपूजनसहाय ने। इस ग्रंथ में सातवीं शती से अठारहवीं शती तक के बिहार के हिन्दी साहित्य की प्रगति का विवरण संकलित किया गया है। यह ग्रंथ परिषद् की उस योजना के अधीन प्रकाशित हुआ है, जिसमें बिहार के साहित्यिक इतिहास का विवरण प्रस्तुत करने का विचार किया गया था। यह उक्त योजना का प्रथम ग्रंथ है। रायल साइज़ के २६२ पृष्ठ के इस सजिल्द ग्रंथ का मूल्य साढ़े पाँच रुपये है।

* * *

शिवपूजन-रचनावली में **बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना** के-आदि संचालक आचार्य शिवपूजनसहाय द्वारा लिखित जीवनियों, संस्मरणों और सम्पादकीय लेखों का सम्पूर्ण संकलन प्रस्तुत किया गया है। इसका प्रकाशन भी परिषद् ने अपनी उस योजना के अधीन किया है, जिसमें आचार्य सहाय के सम्पूर्ण साहित्य को कई भागों में प्रकाशित करने का निश्चय किया गया था। यह ग्रंथ उक्त रचनावली का चौथा और अन्तिम खण्ड है। तीन खण्ड पहले प्रकाशित किये जा चुके हैं। रायल साइज़ के ६५६ पृष्ठ का यह ग्रंथ आठ रुपये पचास नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

पंचदश लोकभाषा निबन्धावली में **बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना** ने मैथिली, मगही, भोजपुरी, अंगिका, नागपुरी, संथाली, उराँव, हो, अवधी, बैसवारी, ब्रज, राजस्थानी, निमाड़ी, छत्तीसगढ़ी और नैपाली आदि १५ प्रादेशिक भाषाओं का परिचय देने वाले उन निबन्धों का संकलन प्रस्तुत किया है, जो समय-समय पर परिषद् के वार्षिक अधिवेशनों पर इन भाषाओं के साहित्य के अधिकारी विद्वानों द्वारा पढ़े जा चुके हैं। इन निबन्धों के लेखक क्रमशः डॉ० उमेश मिश्र, स्व० कृष्णदेव प्रसाद, गणेश चौबे, डॉ० महेश्वरीसिंह, 'महेश', कुसरीकुमार सिंह, डोमन साहू 'समीर', जगदीश त्रिगुणायत, जगदेव दास 'अभिनव', रामाज्ञा द्विवेदी 'समीर', डॉ० त्रिलोकीनारायण दीक्षित, जवाहरलाल चतुर्वेदी, बदरीदत्त शास्त्री, डॉ० कृष्णलाल 'हंस', डॉक्टर सावित्री शुक्ल और सरदार रुद्रराज पाण्डेय आदि सभी अपने-अपने विषय के अधिकारी विद्वान् हैं। रायल साइज़ के ३०४ पृष्ठ का यह ग्रंथ प्रत्येक हिन्दी-प्रेमी के लिए सर्वथा उपादेय है और चार रुपये पचास नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण नामक इस ग्रंथ का तीसरा और चौथा खण्ड **बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्** द्वारा हमें प्राप्त हुआ है। इसका प्रकाशन भी उसने अपनी निश्चित योजना के अन्तर्गत किया है। दो खण्ड पहले ही प्रकाशित हो चुके हैं। तीसरे और चौथे खण्ड का संपादन भी आचार्य नलिन विलोचन शर्मा ने किया है। तीसरे खण्ड में तीस ग्रंथकारों के पचास ग्रंथों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है और चौथे खण्ड में ४१६ हिन्दी-ग्रंथों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया गया है। दोनों ही ग्रंथ रायल साइज़ के क्रमशः ८४ और ७८ पृष्ठ के हैं और इन्हें एक रुपया पच्चीस नये पैसे और एक रुपये में प्राप्त किया जा सकता है।

* * *

विचार और समीक्षा में प्रो० प्रतापसिंह चौहान के भिन्न-भिन्न समयों पर लिखे गए प्रतिभा, परिश्रम तथा काव्य, आलोचना का दार्शनिक स्वरूप, यौवन, प्रसादजी की 'लहर', कामायनी की महत्ता, अजातशत्रु : एक विवेचन, महाकवि निराला का काव्य-वैभव और 'गीतका', निरालाजी का 'कुकुरमुत्ता', पन्त के काव्य में मानवतावाद तथा अरविन्द-दर्शन, पन्तजी का उत्तरवर्ती काव्य और अरविन्द-

राजस्थान शिक्षा विभाग द्वारा स्वीकृत हमारे प्रकाशन

विकास खंड, समाज शिक्षा केन्द्र और चल पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत पुस्तकों की सूची

वर्ष : १९५८-५९

क्रम सं०	पृष्ठ सं०	पुस्तक का नाम	लेखक	मूल्य
३८	१५	प्राचीन लोकोत्सव	श्री मन्मथराय	२.५०
१३८	२३	हिन्दी कहानियाँ	डॉ० श्रीकृष्णलाल	२.५०
१४०	२३	उपनिषदों की कहानियाँ	श्री रामप्रताप त्रिपाठी	५.००
१४१	२३	मेरा देश	श्री अहमद नदीम कासिमी	२.००
१४२	२३	मन की मौज	श्री राजेन्द्रसिंह गौड़	२.५०
१६६	२४	ऋतम्भरा	श्री सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या	३.५०
३००	२८	शिवाजी	डॉ० रामकुमार वर्मा	१.००
३०१	२८	चार ऐतिहासिक एकांकी	डॉ० रामकुमार वर्मा	२.००
३३८	२९	ग्रामीण हिन्दी	डॉ० धीरेन्द्र वर्मा	१.५०
३	२९	संक्षिप्त पृथ्वीराजरासो	डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी	५.००
१३४	३३	महाबली हनुमान	श्री राजबल्लभ ओझा	१.२५
२	३८	कन्याओं की पोथी	श्री रामदास गौड़	१.५०
१३	३८	गार्हस्थ्य जीवन और ग्राम-सेवा	श्री परशुराम चतुर्वेदी	१.००
२१	३८	गृह-विज्ञान, भाग १-२	श्री सत्यव्रत	१.८८
५१	३९	सौन्दर्य-शास्त्र	डॉ० हरद्वारीलाल शर्मा	३.००

माध्यमिक और प्राथमिक, पारस्परिक और बुनियादी, शालाओं के पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत पुस्तकों की सूची, वर्ष १९५७-५८, खण्ड (अ)

क्रम सं०	पृष्ठ सं०	पुस्तक का नाम	लेखक	मूल्य
३२	६	बिगुल	पं० सोहनलाल द्विवेदी	१.५०
३३	७	बापू का सपना	श्री नर्मदेश्वर चतुर्वेदी	१.००
३५	७	दिमागी दण्ड बैठक	श्रीमती दुलारी	०.५०

खण्ड (ब)

क्रम सं०	पृष्ठ सं०	पुस्तक का नाम	लेखक	मूल्य
६७	३५	बिगुल	पं० सोहनलाल द्विवेदी	१.५०
६९	३५	गड़बड़झाला	श्री राजेन्द्रसिंह गौड़	०.५०
७०	३५	म्याऊँ की दावत	श्री राजेन्द्रसिंह गौड़	०.५०

राजकीय ज़िला एवं तहसील पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत पुस्तकों की सूची

वर्ष १९५७-५८

क्रम सं०	पृष्ठ सं०	पुस्तक का नाम	लेखक	मूल्य
८५	१२	आत्मविद्या	श्री माधवराम सप्रे	४.००
२	१९	शिल्प कथा	श्री नन्दलाल बसु	१.२५
१८	१९	सौन्दर्य-शास्त्र	डॉ० हरद्वारीलाल	३.००
२८	२३	संस्कृति संगम	आचार्य क्षितिमोहन सेन	३.००
२६	२७	गार्हस्थ्य जीवन और ग्राम-सेवा	श्री परशुराम चतुर्वेदी	१.००
३६	२८	पाक विज्ञान	श्री ज्योतिर्मयी ठाकुर	३.००
३८	२८	गृह-विज्ञान, भाग १-२	श्री सत्यव्रत	१.८८
३९९	४१	शबनम	श्रीमती दिनेशनन्दिनी	१.५०
४१०	४२	दिल की बात	श्री गुरुदयाल मलिक	३.००

४३४	४२	निर्झर और पाषाण	श्री तेजनारायण काक	१.५०
४८४	४४	मरुप्रदीप	श्री रामेश्वर शुक्ल अंचल	४.००
५२६	४५	अनबुझी प्यास	श्री दुर्गाशंकर मेहता	७.५०
५३२	४५	चाँदनी के खण्डहर	श्री गिरधर गोपाल	२.००
५३४	४५	हिन्दी-कहानियाँ	डॉ० श्रीकृष्णलाल	२.५०
५३६	४५	उपनिषदों की कहानियाँ	श्री रामप्रताप त्रिपाठी	५.००
५३७	४५	प्रायश्चित	श्री सत्यजीवन वर्मा	२.००
५३८	४५	छायातप	डॉ० रघुवंश	२.५०
५३९	४५	आँसू और पसीना	डॉ० रामप्रताप बहादुर	२.००
५४०	४५	पूँजीपति	श्री गोपीकृष्ण गोपेश	२.००
५४१	४५	मेरा देश	श्री अहमद नजीम कादमी	२.००
५४२	४५	मन की मौज	श्री राजेन्द्रसिंह गौड़	२.५०
८६	६१	शिवाजी	डॉ० रामकुमार वर्मा	१.००
८७	६१	चार ऐतिहासिक एकांकी	डॉ० रामकुमार वर्मा	२.००
८८	६१	कौमुदी महोत्सव	डॉ० रामकुमार वर्मा	१.५०
५	६५	अंजलि	डॉ० रामकुमार वर्मा	१.२५
२६	६५	संक्षिप्त पृथ्वीराजरासो	डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी	५.००
६८	६६	प्रभाती	पं० सोहनलाल द्विवेदी	३.००
१६७	६९	वर्षान्त के बादल	श्री अंचल	३.००
२	६९	सं० सन्त कबीर	डॉ० रामकुमार वर्मा	३.००
१६	७४	महाकवि भूषण	डॉ० भगीरथ प्रसाद दीक्षित	२.५०
६८	७६	ग्रामीण हिन्दी	डॉ० धीरेन्द्र वर्मा	१.५०
५०	८२	श्रीमती क्यूरी	श्री लालबहादुर शास्त्री	३.५०

माध्यमिक महाविद्यालयों, बहु-उद्देशीय उच्च विद्यालयों एवं एस० टी० सी० प्रशिक्षण संस्थाओं के पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत पुस्तकों की सूची, वर्ष : १९५७-५८

७२	२१	मरुप्रदीप	श्री रामेश्वर शुक्ल अंचल	४.००
७	२२	सं० सन्त कबीर	डॉ० रामकुमार वर्मा	३.००
३३	२३	महाकवि भूषण	श्री भगीरथ प्रसाद दीक्षित	२.५०
४	२५	निबन्ध संग्रह	डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी	५.००
१५२	४३	बहता पानी	श्री मन्मथनाथ गुप्त	३.२५
४	४६	अंजलि	डॉ० रामकुमार वर्मा	१.२५
१७	६६	प्राचीन लोकोत्सव	श्री मन्मथ राय	२.५०
१९	६६	भारतवर्ष में जातिभेद	आचार्य क्षितिमोहन सेन	२.००
८	६८	सौन्दर्य शास्त्र	डॉ० हरद्वारीलाल शर्मा	३.००
१०	६८	पाक विज्ञान	श्रीमती ज्योतिर्मयी ठाकुर	३.००
१२	६८	गृह-विज्ञान प्रथम, द्वितीय	श्री सत्यव्रत	१.८८
५६	७७	शिवाजी	डॉ० रामकुमार वर्मा	१.००
५७	७७	चार ऐतिहासिक एकांकी	डॉ० रामकुमार वर्मा	२.००
५८	७७	कौमुदी महोत्सव	डॉ० रामकुमार वर्मा	१.५०

दर्शन, श्रीमती सुमित्राकुमारी सिनहा का काव्य-सौन्दर्य, डॉक्टर रामविलास शर्मा की कविता, अवधी के जनकवि 'रमई काका' और उनका काव्य, कविताएँ १९५४, हिन्दी की नई कविता, हिन्दी की उपयोगवादी कविता, नया साहित्य : नये प्रश्न, वर्णनात्मक कहानी, शुक्लोत्तर समीक्षा-प्रवृत्तियाँ, हिन्दी उपन्यास के विकास में डॉक्टर वृन्दावनलाल वर्मा का योगदान, स्थायी साहित्य के प्रतिमान शीर्षक २१ समीक्षात्मक निबन्धों का संकलन प्रस्तुत किया गया है। डिमाई साइज़ के १९० पृष्ठ की यह पुस्तक **भण्डार ग्रंथागार, लखनऊ** से प्रकाशित हुई है और पाँच रुपये पचहत्तर नये पैसे में मिल सकती है।

* * *

कविता में प्रयोगवाद की परम्परा नामक पुस्तक भी प्रो० प्रतापसिंह चौहान की समीक्षा-कृति है। इसमें लेखक ने नई प्रयोगवादी कविता के विभिन्न पक्षों की सर्वांगीण समीक्षा प्रस्तुत की है। इसकी भूमिका आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने लिखी है। क्राउन साइज़ के ८८ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक पठनीय है और दो रुपये में मिलती है।

* * *

हिन्दी उपन्यासों का मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन नामक इस पुस्तक में श्री ब्रह्मनारायण शर्मा 'विकल' ने सर्वश्री प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद, वृन्दावनलाल वर्मा, यशपाल, इलाचन्द्र जोशी, जैनेन्द्रकुमार, अज्ञेय, भगवतीचरण वर्मा, भगवतीप्रसाद वाजपेयी, उपेन्द्रनाथ 'अश्क' और पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' आदि उल्लेखनीय लेखकों के उपन्यासों का मूल्यांकन मनोवैज्ञानिक आधार पर करने का प्रयास किया है। यथाप्रसंग अन्य उपन्यासकारों और उनकी रचनाओं की चर्चा भी इस पुस्तक में हो गई है। क्राउन साइज़ के २१६ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक चार रुपये पच्चीस नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

हिन्दी का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन नामक पुस्तक के पहले भाग में इसके लेखक श्री ऋषिगोपाल ने भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन, भाषा : उसकी विशेषताएँ, भाषा की उत्पत्ति, भाषा-परिवर्तन का मूल कारण, भाषा के विभिन्न स्वरूप, ध्वनि-विज्ञान, ध्वनि-यंत्र, ध्वनियों का वर्गीकरण,

ध्वनियों का गुण, संयुक्त ध्वनियाँ और अक्षर, ध्वनि-परिवर्तन, ध्वनि-नियम, रूप-विज्ञान, वाक्य-विज्ञान, अर्थ-विज्ञान, अर्थ-परिवर्तन के कारण, बौद्धिक नियम, भाषा का वर्गीकरण शीर्षक १६ अध्यायों में भाषा-विज्ञान के विभिन्न रूपों पर प्रकाश डालकर दूसरे भाग में हिन्दी-भाषा के क्रमिक विकास की रूपरेखा प्रस्तुत की है। पुस्तक छात्रों तथा अध्यापकों, दोनों के लिए उपादेय है। क्राउन साइज़ के ४८० पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक छः रुपये पचास नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

उपन्यास

पथ की खोज में : श्री महेन्द्र कुमार पगारे का नवीन क्रांतिकारी सामाजिक उपन्यास है। इस उपन्यास में लेखक ने गाँवों का सजीव चित्रण प्रस्तुत करके उनको उन्नति के पथ पर अग्रसर करने का मार्ग निर्दिष्ट किया है। उपन्यास की भाषा बहुत सरल, सरस, रोचक तथा ग्राम्य-जीवन में ओजस्विता प्रदान करने वाली है। लेखक ने इसमें सामाजिक बन्धनों को तोड़ फेंकने के लिए समाज के प्राणियों को प्रेरित किया है। क्राउन साइज़ के २७६ पृष्ठ का यह सुमुद्रित सजिल्द उपन्यास **सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली** ने प्रकाशित किया है और पाँच रुपये पचास नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

सुलगती परछाइयाँ : श्री रमेश भारती द्वारा लिखित उन का नवीनतम मौलिक प्रथम उपन्यास है। विचार की नई शृङ्खला, भावनाओं का नूतन गुम्फन इस उपन्यास की प्रमुख विशेषता है। साधारण स्तर से उठाकर जीवन का संघर्षपूर्ण रूप से चित्रण करना ही इस उपन्यास की मात्र विशेषता है। इस उपन्यास के लेखक श्री रमेशचन्द्र एक नए कलाकार हैं, परन्तु इतना होते हुए भी उनकी इस कृति में उनकी विकसित प्रतिभा और आन्तरिक गाम्भीर्य का आभास हो जाता है। क्राउन साइज़ के २२४ पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास **सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली** ने प्रकाशित किया है और चार रुपये पचास नये पैसे में मिल सकता है।

* * *

दूर के दीप : श्री शुकदेवसिंह 'सौरभ' का नवीनतम सामाजिक उपन्यास है। इस उपन्यास में लेखक ने ग्रामीण समाज की जिस समस्या को अपनी कथा का आधार बनाया है, वह उन-जैसे कलाकार का ही काम है। आज के उपन्यासकारों में ऐसे बहुत कम हैं जो ग्रामीण समस्याओं को अपनी कृतियों का आधार बनाते हैं। लेखक ने इस उपन्यास में ग्रामीण समस्याओं और उसमें बसने वाली जनता के सुधार के लिए कई योजनाएँ निर्दिष्ट की हैं। क्राउन साइज़ के ४२४ पृष्ठ का यह सुमुद्रित तथा सजिल्द उपन्यास **सन्मार्ग प्रकाशन**, **दिल्ली** ने प्रकाशित किया है और आठ रुपये पचास नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

विवाह की मंज़िलें नामक उपन्यास श्री जीवन प्रकाश जोशी की नवीनतम कृति है। इससे पूर्व भी उनके एक-दो उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। इस उपन्यास में लेखक ने 'विवाह जीवन का एक महत्त्वपूर्ण बन्धन है' इस समस्या को आधार बनाकर अपनी कथा का गुम्फन किया है। वर्तमान समाज में विवाह की आधारभूत मान्यताओं का महत्त्व दिन-प्रतिदिन कम होता जा रहा है। इस उपन्यास के माध्यम से लेखक ने विवाह की समस्याओं पर व्यापक रूप से प्रकाश डाला है। लेखक के मत में यह उपन्यास समय काटने का पिटारा नहीं, जीवन बिताने का महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। क्राउन साइज़ के २६० पृष्ठ का यह उपन्यास **सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली** ने प्रकाशित किया है और यह पाँच रुपये पचास नये पैसे में मिल सकता है।

* * *

चट्टानें : प्रोफ़ेसर श्यामसुन्दर का नवीनतम उपन्यास है। इसमें लेखक ने एक सुशिक्षिता कमाऊ पत्नी और उसके वकालत पास निकम्मे पति को आधार बनाकर कहानी का गुम्फन किया है। इस उपन्यास का नायक कृपा शंकर साम्यवादी विचारक बनकर 'महान्' हो जाता है। कमाऊ पत्नी पर अनुशासन रखने के लिए वह सनातनी भारतीय पति की हैसियत से भी महान् हो जाता है। ऐसे निकम्मे कुण्ठाग्रस्त महात्त्वाकांक्षी पति हमारे समाज में प्रायः देखने को मिलते हैं। कृपाशंकर के माध्यम से लेखक ने इस उपन्यास में ऐसे युवकों का चित्रण किया

(पृष्ठ २२२ का शेष)

यह रोग राजस्थान-भर में फैल गया और उचित पुस्तकों के बदले घटिया स्तर की पुस्तकें अधिक तादाद में पुस्तकालयों में पहुँचने लगीं।

पुस्तक ख़रीद की इस कुप्रवृत्ति का संबंधित राज्य-अधिकारियों को पता लगा और उन्होंने पुस्तक खरीदने के नियंत्रण का ज़िम्मा अपने ऊपर लिया। ज्यों-ज्यों ख़रीद के राजकीय नियन्त्रण बढ़ने लगे, स्थिति बद से बदतर होती गई। यही कहावत चरितार्थ हुई कि ज्यों-ज्यों दवा की, मर्ज़ बढ़ता ही गया।

वर्तमान में पुस्तकों के चयन की जो विधि है उसमें पुस्तकालय के अधिकारी के हाथ बँधे हुए हैं।

यदि कोई चाहता हो कि राजस्थान में पुस्तक-ख़रीद की सही परंपरा पुनः स्थापित हो तो उसका एकमात्र उपाय यही है कि पुस्तकालय चलाने वाला व्यक्ति पुस्तकालय शास्त्र का ज्ञाता हो और ट्रेण्ड लाइब्रेरियन को पुस्तक खरीदने की पूर्ण स्वतन्त्रता हो।

है जो आज प्रायः हमें दिखाई देते हैं। **नवयुग ग्रंथागार, लखनऊ** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज़ के २०० पृष्ठों का यह सजिल्द उपन्यास पाँच रुपये पचहत्तर नये पैसे में मिलता है।

* * *

प्रचारक पाकेट बुक्स की कुछ पुस्तकें

कादम्बरी का प्रकाशन **हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी** ने अपनी प्रचारक पाकेट बुक्स के अंतर्गत किया है। संस्कृत की अमर कथा-कृति का यह हिन्दी रूपान्तर प्रोफेसर राजनाथ पांडेय ने प्रस्तुत किया है। इस कृति के प्रणेता महाकवि बाणभट्ट एक आदर्श सौन्दर्य-स्रष्टा थे। इस उपन्यास में उन्होंने जिस प्रतिभा का परिचय दिया है, वह उन-जैसे कलाकार की प्रतिभा का ही काम है। प्रत्येक हिन्दी-प्रेमी के लिए पठनीय तथा मननीय, मूल्य एक रुपया मात्र।

* * *

भाग्यवती का प्रकाशन भी उक्त प्रकाशक की ओर से उसकी इसी पाकेट बुक के अन्तर्गत हुआ है। यह हिन्दी के आदि-लेखकों में अग्रणी पण्डित श्रद्धाराम फिल्लौरी द्वारा लिखित उनका सर्वप्रथम सामाजिक उपन्यास है। इससे पाठकों को उस समय के समाज का वास्तविक चित्र देखने को मिलेगा। मूल्य एक रुपया मात्र।

* * *

काले कारनामे : हिन्दी के क्रांतिकारी कवि श्री निराला का नवीनतम मौलिक उपन्यास है। इसमें लेखक ने स्वाधीनता-प्राप्ति से पूर्व के ग्रामीण-समाज का चित्रण किया है। इसमें ज़मींदारों के घात-प्रतिघातों की झाँकी पाठकों को देखने को मिलेगी।

* * *

मेंडेलीन : हिन्दी के तरुण कथाकार श्री मुद्राराक्षस का नवीनतम उपन्यास है। इसमें लेखक ने ऐसी आधुनिक नारी का चित्र अंकित किया है जो नाचते समय अपने साथ नाचने वाले को अपने दिल पर दबता हुआ महसूस करना चाहती है, अपनी कमर, अपने पेड़ू पर नहीं।

* * *

वनमाला : श्री सरस्वती सरन 'कैफ' द्वारा लिखित छोटा-सा

उपन्यास है। इसमें उन्होंने ऐसी नारी का चित्रण किया है, जिसे अपने ऊपर 'ओवर कान्फीडेंस' है। अपने पति का सम्पूर्ण प्यार पा लेने के बावजूद भी उससे 'काम्प्लैक्सेज़' दूर नहीं हो पाते, इसी का वर्णन पाठक इस उपन्यास में पढ़ सकते हैं।

* * *

पवित्र पापी : पञ्जाबी साहित्य के प्रख्यात कथाकार श्री नानकसिंह के अत्यंत प्रसिद्ध उपन्यास का पाकेट एडीशन है। इसमें लेखक ने एक घड़ीसाज़ के अनूठे प्रेम और त्याग का मार्मिक चित्रण किया है।

* * *

नारी एक पहेली : विश्व के ख्याति-प्राप्त कथाकार मोपासाँ की प्रसिद्ध कृति का हिन्दी अनुवाद है। इसके अनुवादक श्री जगदीश ने इसमें मूल पुस्तक के लालित्य को संजो दिया है। पुस्तक में नाम के अनुरूप ही नारी-मन का ऐसा विशद चित्रण किया है, जो दूसरी कृतियों में देखने को नहीं मिलता।

* * *

कस्तूरी में इसके लेखक श्री शानी ने बस्तर और उड़ीसा के एक सीमावर्ती गाँव के अत्यन्त सीधे-सादे लोगों की कहानी अत्यन्त आकर्षक ढंग से प्रस्तुत की है। इसे एक बार पढ़ना आरम्भ करके फिर आपसे छोड़ते न बनेगा।

* * *

लाल पञ्जा : श्री दुर्गाप्रसाद खत्री का प्रख्यात जासूसी उपन्यास है। यह उसका 'पाकेट एडीशन' है। रहस्य-रोमांच से परिपूर्ण यह उपन्यास भी उनके अन्य उपन्यासों की भाँति पठनीय तथा संग्रहणीय है।

* * *

पंकज : प्रख्यात उपन्यासकार श्री गुरुदत्त द्वारा लिखित नवीनतम समस्या-मूलक सामाजिक उपन्यास है। इसमें लेखक ने यह सिद्ध किया है कि मनुष्य के कर्म उसके जीवन-निर्माण में प्रमुख हाथ रखते हैं।

* * *

समर्पण : विश्व-ख्याति के अमर कथाकार तुर्गनेव द्वारा लिखित एक प्रेम-कहानी है, जिसमें प्रेम की समस्या को उसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में बड़ी ही सुन्दरता से रखा

उपन्यास

डॉक्टर देव : अमृता प्रीतम
छलना : गोर्की
एक लड़की : दो रूप : रजनी पनिकर
ग़द्दार : कृश्न चन्दर
अँधेरा उजाला : ख्वाजा अहमद अब्बास
आनन्द मठ : बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय
बड़ी-बड़ी आँखें : उपेन्द्रनाथ 'अश्क'
दायरे : रांगेय राघव
कुलटा : राजेन्द्र यादव
बीते दिन : जैनेन्द्रकुमार
बर्फ़ का दर्द : उपेन्द्रनाथ 'अश्क'
अधूरा सपना : अनन्तगोपाल शेवड़े
एक गधे की आत्मकथा : कृश्नचन्दर
देवदास : शरत्चन्द्र
ज्वारभाटा : मन्मथनाथ गुप्त
प्यार की जिन्दगी : टाल्सटॉय
आभा : आचार्य चतुरसेन
मुक्ता : सत्यकाम विद्यालंकार
छोटी-सी बात : रांगेय राघव
एक स्वप्न, एक सत्य : यज्ञदत्त
संकल्प : हंसराज 'रहबर'
संघर्ष : चेखव
इन्सान या शैतान : स्टीवेन्सन
भूल : गुरुदत्त
कलाकार का प्रेम : राजबहादुर सिंह
पहला प्यार : तुर्गनेव
एक सवाल : अमृता प्रीतम
आरती : ताराशंकर वंद्योपाध्याय
सागर और मनुष्य : अर्नेस्ट हेमिंग्वे

कहानी

पतिता : आचार्य चतुरसेन
संसार की सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ : बालकृष्ण एम० ए०
रहस्य की कहानियाँ : एडगर ऐलन पो

काव्य : शायरी

गीतांजलि : रवीन्द्रनाथ ठाकुर
आज की उर्दू शायरी : प्रकाश पंडित
उमर खैयाम की रुबाइयाँ : 'बच्चन'
दीवान-ए-ग़ालिब : ग़ालिब

जीवनोपयोगी

सफल कैसे हों : स्वेट मार्डेन
सफलता के आठ साधन : जेम्स ऐलन
जैसा चाहो वैसा बनो : स्वेट मार्डेन

विविध

गांधीजी की सूक्तियाँ : ठा० राजबहादुर सिंह
बर्थ कंट्रोल : डॉ० लक्ष्मीनारायण शर्मा
पत्र लिखने की कला : प्रो० विराज एम० ए०
ठीक खाओ स्वस्थ रहो : शुकदेवप्रसाद सिंह
आपका शरीर : आनन्दकुमार
हस्त-रेखाएँ : प्रकाश दीक्षित
अमर-वाणी : 'मानसहंस'

सामाजिक विचारक

Selections from
An Introduction to the History of Sociology

हैरी एल्मर बार्न्ज़

पृ० ३४४, डि० — विद्यार्थी संस्करण, रु० १२.००
रेक्सीन जिल्द — पुस्तकालय संस्करण, रु० १५.००

उक्त गोष्ठी में अन्तर्राष्ट्रीय अधिकारी विद्वानों ने ऑगस्त कोंत, हरबर्ट स्पेंसर, लेस्टर वार्ड, गुम्पलोविक्ज, एल० टी० हाबहाउस, ऑर्नल्ड टॉयनबी, फर्डीनेंड टॉनीज, मैक्स वेबर, एमील दुरखाइम, विल्फ्रेडो परेटो, हेनरी गिडिंग्स, चार्ल्स कूले और पीत्रिम सोरोकिन के समाज-शास्त्र और समाज-दर्शन की संतुलित और श्रेष्ठतम समालोचना प्रस्तुत की है।

मार्क्स से गांधी तक

सामाजिक चिंतन का विकास

सम्पादक : डॉ० रघुराज गुप्त

पृष्ठ २२४, डि०, रेक्सीन जिल्द — रु० ८.००

इसमें अन्तर्राष्ट्रीय अधिकारी विद्वानों ने आधुनिक युग के छ: महान् विचारकों **कार्ल मार्क्स, थॉर्स्टाइन वेबलन, कार्ल मानहाइम, चार्ल्स मैकाइवर, टैल्कॉट पारसंस** और **महात्मा गांधी** के सामाजिक दर्शन और सिद्धान्तों का समाजशास्त्रीय मूल्यांकन प्रस्तुत किया है।

मनुष्य का धर्म

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

अनुवादक : **डॉ० रघुराज गुप्त** — रु० ३.००

"मानुषेर धर्म का अनुवाद मुझे बहुत पसन्द आया।"
—सुमित्रानन्दन पंत

सांस्कृतिक मानवशास्त्र

Cultural Anthropology

मैलविल जे० हर्सकोवित्स

पृ० ६४८, डि०, ६० रेखाचित्र, ३५ प्लेट
विद्यार्थी संस्करण, मूल्य रु० १६.००
रेक्सीन जिल्द, पुस्तकालय संस्करण, रु० २०.००

Dr. Gupta is an experienced and well-known author in social sciences in Hindi. He deserves to be congratulated for his great attempt in translating Barnes' *An Introduction to the History of Sociology* and Herskovits' *Cultural Anthropology*. The translations are authentic and the literary style is highly lucid. In translating these books Dr. Gupta has rendered a distinct service to all those interested in Sociology. I am sure that these two books will be warmly hailed by all the students and prove to be of immense value in their studies. **R. N. Saksena,** M. A., Ph. D., D. Litt
Director, Institute of Social Sciences
Agra University

★

भारतीय नस्लें और जनजातियाँ

प्रो० हरिदत्त

अध्यक्ष, इतिहास विभाग, गुरुकुल विश्वविद्यालय
पृ० २५४, मूल्य ४.००

हिन्दू परिवार मीमांसा के प्रख्यात लेखक, भारतीय संस्कृति के परम विद्वान और अनेक समाजशास्त्रीय तथा ऐतिहासिक ग्रन्थों के प्रणेता प्रो० हरिदत्त ने उक्त पुस्तक में भारत की नस्लों (Races), भारतीय संस्कृति के विकास, उसकी एकता और विविधता, हिन्दू वर्णाश्रम और जाति व्यवस्था, सामाजिक संस्थाओं की संरचना, परिवार, धर्म और जनजातीय (Tribal) जीवन का प्रामाणिक और वैज्ञानिक विवरण और विवेचन किया है।

भारतीय नस्लें और जनजातियाँ प्रत्येक पुस्तकालय के लिए संग्रहणीय एवं समाजशास्त्र के विद्यार्थियों के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

प्रकाशक : **भारती बुक सोसाइटी,** ११, रतलज रोड, लखनऊ

प्रमुख वितरक : **यूनिवर्सल बुक स्टाल,** कानपुर ★ **भारती भवन,** पुराना नाला, देहरादून
शिवलाल अग्रवाल एण्ड कं० प्राइवेट लि०, आगरा, दिल्ली, जयपुर
सर्वोदय साहित्य सदन, गोविन्द मित्रा रोड, पटना
आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली ★ **राजपाल एण्ड सन्ज़,** दिल्ली
राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लि०, दिल्ली, बम्बई, इलाहाबाद, पटना

कमीशन : पुस्तकालय और सामान्य संस्करण पर २५% तथा विद्यार्थी संस्करण पर २०%, तेरह प्रतियों पर ५% एक्स्ट्रा।

गया है।

* * *

क्लीयो पेट्रा में उपन्यास के माध्यम से प्राचीन मिस्र की महारानी का रहस्य और रोमांच से परिपूर्ण जीवन-चरित्र प्रस्तुत किया गया है। इसकी कथा को पढ़कर पाठक यह सहज में ही जान जाएँगे कि सीजर और मार्क एण्टोनी के साथ उसके प्रेम ने तत्कालीन इतिहास की धारा को किस प्रकार मोड़ दिया था।

* * *

गवर्नेसा : श्री हर्षनाथ का नया छोटा-सा उपन्यास है। इसमें लेखक ने एक अध्यापिका के त्याग और तपस्यामय जीवन की कहानी अत्यन्त ही सजीव शैली और रोचक भाषा में प्रस्तुत की है। इस उपन्यास से पाठकों को यह भी विदित हो जाएगा कि इसकी नायिका ने अपने को तिल-तिल गलाकर किस प्रकार अपने चरित्र की रक्षा की।

* * *

एक सड़क सत्तावन गलियाँ : श्री कमलेश्वर का नवीनतम उपन्यास है। इस उपन्यास के माध्यम से लेखक ने यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि अब मज़हबपरस्ती के छिलके उतर चुके हैं और इन्सान अपनी असली लड़ाई पहचान चुका है।

* * *

काठ के तोबूत और जिन्दा लाशें में श्री प्रकाश दीक्षित ने हमारे शिक्षित समाज के शेखचिल्लियों की मान्यताओं पर करारा प्रहार किया है। नई शैली, नई भाषा और नया कथानक। हिन्दी में इस प्रकार का उपन्यास शायद कोई नहीं।

* * *

बिखरे काँटे : सुश्री लीला अवस्थी का ऐसा नया उपन्यास है, जिसमें लेखिका ने समाज की जर्जर मान्यताओं पर प्रहार किया है एवं नए दृष्टिकोण से समस्या का समाधान प्रस्तुत किया है।

* * *

नटराज पुस्तकमला की पाँच पुस्तकें

बीती बात : श्री गुरुदत्त द्वारा लिखित उपन्यास है। इसमें लेखक ने भारत में कम्युनिज़्म किस प्रकार आया, इसका

वर्णन कहानी के माध्यम से प्रस्तुत किया है। सन् १६२४-३२ की घटनाओं को आधार बनाकर लेखक ने इस उपन्यास की रचना की है। **नटराज प्रकाशन, शक्ति नगर** से प्रकाशित इस पाकेट बुक सीरीज़ की सभी पुस्तकें एक रुपए में प्राप्य हैं।

* * *

संस्कार संसद में सव्यसाची ने आधुनिक और प्राचीन समाज की मान्यताओं के माध्यम से यह सिद्ध किया है कि भारत को पुराने संस्कारों के प्रति प्रेम न रखकर अपनी वर्तमान समस्याओं में कोई नया मार्ग ढूँढ़ना चाहिए।

* * *

कमल-कुलिश : डॉक्टर रमानाथ त्रिपाठी द्वारा लिखित उनका नया उपन्यास है। इस उपन्यास में लेखक ने जिस समस्या का चित्रण कथा के आवरण में किया है, वह हमारी-आपकी सबकी समस्या है।

* * *

पंकज और पानी : श्री यायावर का नया उपन्यास है। इस उपन्यास में लेखक ने संसार के न्याय से पाप-पङ्क में डूबी रेणु की कहानी प्रस्तुत की है, जो वेश्या होकर भी लेखक की दृष्टि में देवी है। लेखक की मान्यता से परिचित होने के लिए यह उपन्यास अवश्य ही पढ़ें।

* * *

विद्यादान : श्री गुरुदत्त का नया छोटा-सा उपन्यास है। इस उपन्यास में लेखक ने ऐसी समस्या को उठाया है, जो आज सबके सामने प्रश्न-चिह्न बनी हुई है। लेखक के मत में आज की शिक्षा से समाज का निर्माण होने की अपेक्षा विनाश अधिक होता दिखाई दे रहा है।

* * *

नया स्वर में हिन्दी के प्रख्यात कथाकार श्री मोहनसिंह सेंगर की बारह कहानियाँ संकलित की गई हैं। इस संग्रह की कहानियों में यदि जीवन की विविधता पाठकों को देखने को मिलेगी तो जीवन के प्रति उसके नवीन और स्वस्थ दृष्टिकोण की झाँकी वे पा सकेंगे। **हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी** की ओर से उसकी 'पाकेट बुक्स' सीरीज़ के अंतर्गत प्रकाशित यह पुस्तक एक रुपए में प्राप्य है।

* * *

मेरा धर्म में **नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद** ने आठ भागों में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के धर्म-सम्बन्धी उन विचारों का संग्रह उपस्थित किया है, जो समय-समय पर उनके भाषणों और लेखों में प्रकट किये गए थे। इसका संपादन श्री भारतन कुमारप्पा ने किया है और अनुवाद किया है श्री रामनारायण चौधरी ने। पुस्तक कुल आठ अध्यायों में विभक्त की गई है, जिनके शीर्षक इस प्रकार हैं—धर्म से मेरा क्या अभिप्राय है, मेरे धर्म के स्रोत, सब धर्मों का सम्मान, मेरी ईश्वर-निष्ठा, मेरे धर्म का व्यावहारिक रूप, मेरे धर्म-पालन के सहायक साधन, मेरे धर्म के लक्ष्य, मेरा हिन्दू-धर्म आदि। क्राउन साइज़ के २०४ पृष्ठ की यह पुस्तक दो रुपये में प्राप्य है।

* * *

मोहन माला में महात्मा गांधी के लेखों और भाषणों से वर्ष के प्रतिदिन के मनन के लिए चुने हुए सुविचारों का संकलन प्रस्तुत किया गया है। इनके संग्रहक हैं श्री आर० के० प्रभु और अनुवाद किया है श्री खीमेश्वर पुरोहित ने और पुस्तक को कुल ३६६ विचार-मोतियों की माला के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इनका क्रम इस दृष्टि से रखा गया है कि पाठक यदि चाहें तो प्रत्येक सुविचार का दैनिक मनन के लिए लाभ उठा सकते हैं। क्राउन साइज़ के १२८ पृष्ठ की यह पुस्तक एक रुपया पच्चीस नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

जय सोमनाथ का यह पाकेट संस्करण **राजकमल प्रकाशन, दिल्ली** ने अपनी पाकेट बुक के अन्तर्गत किया है। 'जय सोमनाथ' के नाम से हिन्दी के पाठक पूरी तरह परिचित हैं। यह पुस्तक भारत के प्रसिद्ध शिक्षा-शास्त्री और गुजराती के प्रमुखतम उपन्यासकार श्री कन्हैयालाल मणिकलाल मुन्शी के अत्यन्त ख्याति-प्राप्त उपन्यास का सस्ता संस्करण है। इस उपन्यास में ग्यारहवीं शती में विदेशियों के आक्रमण के मुकाबले भारतीय प्रतिरोध की रोमांचकारी अमर गाथा अंकित की गई है। हिन्दी में इस उपन्यास के अभी तक पाँच संस्करण हो चुके हैं। यही इसकी लोकप्रियता का सबसे बड़ा प्रमाण है। दो रुपये में प्राप्य।

* * *

सो क्या जाने पीर पराई : श्रीमती मीरा महादेवन का नवीनतम और कदाचित् सबसे पहला उपन्यास है। इसका प्रकाशन भी **राजकमल प्रकाशन, दिल्ली** ने अपनी 'पॉकेट बुक्स' सीरीज़ के अंतर्गत किया है। इस छोटे-से उपन्यास में लेखिका ने स्वयं जीविका-उपार्जन करने वाली लड़कियों के संघर्ष और जीवन के ऊँच-नीच का सहानुभूति पूर्ण वर्णन किया है। लेखिका ने इस प्रकार के जीवन को करीब से देखा है। दफ्तरों में काम करने वाली लड़कियों को सभ्य-समाज में क्या-क्या मूल्य चुकाना पड़ता है, उन्हें किन-किन परिस्थितियों में से होकर गुज़रना पड़ता है, लेखिका ने इस उपन्यास की नायिका माधवी के माध्यम से यही चित्रित किया है। माधवी के जीवन की विवशता, भूल, संघर्ष, आशा और निराशा की यह करुण कहानी आपके मन को छू लेगी। एक रुपये में प्राप्य।

* * *

पतन : नोबल पुरस्कार-विजेता आल्बेयर कामू की विख्यात कृति का हिन्दी-रूपान्तर है और इसको हिन्दी में श्रीमती उमाराव ने रूपांतरित किया है। इस कृति में विख्यात लेखक ने मानवीय दुर्बलताओं पर चढ़ी हुई परत को हटाकर मनुष्य को नंगा कर दिया है। दुनिया में हरेक आदमी झूठा नकाब पहने है, लेकिन इस झूठ को स्वीकार किए बिना कोई कैसे मर सकता है ? आज के समाज की सही झाँकी इस उपन्यास में देखिए। **राजकमल प्रकाशन, दिल्ली** की 'पॉकेट बुक्स' के अन्तर्गत प्रकाशित और एक रुपये में प्राप्य।

* * *

जैनेन्द्र की श्रेष्ठ कहानियाँ नामक इस पुस्तक का प्रकाशन **राजकमल प्रकाशन** ने अपनी 'पाकेट बुक्स' सीरीज़ के अंतर्गत ही किया है और इसमें हिन्दी के प्रख्यात कथाकार श्री जैनेन्द्र कुमार की ग्यारह रोचक कहानियों का संकलन प्रस्तुत किया गया है। लेखक ने इन कहानियों के माध्यम से मानव के अंतरतम मानस की गहराइयों में निहित भावनाओं का चित्रण अत्यन्त सुलभ भाषा और सरल शैली में किया है। प्रत्येक कहानी रोचक और प्रभावपूर्ण है। इस संग्रह में प्रकाशित कहानियाँ इतना प्राणमय स्पन्दन लिये हुए हैं कि पाठक उनके रस में सराबोर होकर एक नए आह्लाद का अनुभव करेंगे। एक रुपये में प्राप्य।

* * *

धर्म : संस्कृति

बौद्ध धर्म और बिहार नामक इस ग्रंथ का प्रकाशन **बिहार-राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना** द्वारा हुआ है। इसमें इसके लेखक श्री हवलदार त्रिपाठी 'सहृदय' ने बौद्ध-धर्म की विशिष्टताओं का सर्वांगीण वर्णन करके उसकी बिहार को देन पर व्यापक रूप से प्रकाश डाला है। इसके बुद्ध-पूर्व तथा बुद्ध-काल का विहार, बुद्धत्व की प्राप्ति में योगदान, बिहार की नारियाँ और बौद्ध-धर्म, बुद्ध के पश्चात् और मौर्यों के पूर्व, मौर्य-काल में बौद्ध धर्म का विकास, मौर्यकाल और गुप्तकाल के बीच, बौद्ध-धर्म के विकास का स्वर्णिम-काल, गुप्तकाल के प्रचार-कार्य, पाल-काल में बौद्ध-धर्म, बौद्ध-धर्म का अंधकार-युग, मुस्लिम-काल, अंग्रेज़ी शासन-काल के कार्य, स्वराज के बाद आदि ग्यारह अध्यायों के ये शीर्षक इस बात के साक्षी हैं कि लेखक ने रायल साइज़ के ३८० पृष्ठों के इस सजिल्द ग्रंथ में 'बौद्ध धर्म और बिहार' के सम्बन्ध में कितनी प्रामाणिक सामग्री प्रस्तुत की है। ग्रंथ के अंत में लेखक ने बौद्ध-धर्म की भाषा और साहित्य की देन, बौद्ध स्थापत्य और शिल्प-कला के क्षेत्र में, विहार से सम्बन्धित बौद्ध-रचनाओं की तालिका और अशोक के अभिलेखों का मूल-पाठ और हिन्दी-रूपांतर शीर्षक चार परिशिष्ट भी दे दिए हैं, जिनसे पाठकों को तत्सम्बंधी व्यापक जानकारी प्राप्त हो जाएगी। मूल्य आठ रुपये।

* * *

वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति नामक इस ग्रंथ के लेखक महामहोपाध्याय पण्डित गिरधर शर्मा चतुर्वेदी भारतीय साहित्य और और संस्कृति के पारंगत विख्यात पण्डित हैं। इस ग्रंथ में उनके उन भाषणों का संग्रह प्रकाशित किया गया है, जो उन्होंने (१५ जनवरी, १९५८ से १९ जनवरी १९५८ तक) पटना में दिये थे। इन भाषणों का आयोजन, **बिहार-राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना** के तत्त्वावधान में किया गया था। ग्रंथ के प्रारम्भ में वैदिक साहित्य के गम्भीर अध्येता डॉक्टर वासुदेवशरण अग्रवाल द्वारा

लिखित भूमिका भी प्रकाशित की गई है, जिससे इस ग्रंथ की उपादेयता सर्वथा असंदिग्ध हो गई है। रायल साइज़ के २६६ पृष्ठ के इस सजिल्द ग्रंथ का मूल्य पाँच रुपये है।

* * *

सत्यकाम सोक्रातेज अनुवेदन एवं बलिदान नामक पुस्तक का प्रकाशन **नटराज पुस्तकमाला** के अंतर्गत उसकी पाकेट बुक सीरीज़ में हुआ है। इस सुकरात-जैसे सन्त की विचार-धारा की व्यापक जानकारी प्रस्तुत करके उसकी कुछ कृतियाँ भी उद्धृत की गई हैं। इस कृति का अनुवाद सीताराम गोयल ने किया है और यह डेढ़ रुपये में प्राप्य है।

* * *

कविता

अतीत के पंखों पर नामक पुस्तक में श्री अवधनारायण शर्मा की २४ कविताओं का संकलन प्रस्तुत किया गया है। हिन्दी के मूर्धन्य राष्ट्र-कवि मैथिलीशरण गुप्त ने भी कवि के प्रति शुभकामना व्यक्त की है। डिमाई साइज़ के ९२ पृष्ठ की इस कृति का प्रकाशन **कैलाश प्रकाशन, रामगढ़, प्रतापगढ़ (उत्तर प्रदेश)** से हुआ है और यह दो रुपये में प्राप्य है।

* * *

इकबाल की शायरी में श्री हीरालाल चोपड़ा ने उर्दू के मशहूर शायर इकबाल की चुनी हुई कविताएँ संकलित की हैं। इस पुस्तक का प्रकाशन भी **हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी** की पाकेट बुक्स के अन्तर्गत हुआ है और यह एक रुपए में प्राप्य है।

* * *

स्त्रियोपयोगी

व्यंजन वीथिका नामक पुस्तक का प्रकाशन भी **हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी** द्वारा प्रकाशित उसकी पाकेट बुक्स के अंतर्गत ही हुआ है। इसमें श्रीमती कुसुम कटारा ने सरल और सीधे ढंग से विवि व्यंजनों के बनाने की विधि प्रस्तुत की है। प्रत्येक परिवार के लिए यह पुस्तक संग्रहणीय है। मूल्य एक रुपया।

* * *

काम-मनोविज्ञान

काम मनोविज्ञान तथा यौन व्याधियाँ नामक पुस्तक में इसके लेखक श्री द्वारकाप्रसाद ने काम-विज्ञान-जैसे कठिन विषय को सरल एवं सुबोध भाषा में प्रस्तुत करके एक प्रशंसनीय कार्य किया है। प्रत्येक विवाहित दम्पति के लिए यह पुस्तक अवश्य संग्राह्य है। हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी की पाकेट बुक्स में प्रकाशित होने के कारण यह एक रुपये में प्राप्त हो सकती है।

* * *

विज्ञान

सूरज चाँद सितारे का प्रकाशन भी **राजकमल प्रकाशन, दिल्ली** की 'पाकेट बुक्स' सीरीज़ में हुआ है। इसमें इसके लेखक श्री गुणाकर मुले ने सरल शैली और रोचक भाषा में सूरज, चाँद और सितारों की वैज्ञानिक कहानी इस प्रकार प्रस्तुत की है कि वह दिलचस्पी से पढ़ी जाएगी। आज मनुष्य लपककर इन ग्रहों और उपग्रहों तक पहुँच जाने की इच्छा रखता है। इस पुस्तक में इन्हीं ग्रहों और उपग्रहों का मनोरंजक वर्णन आपको पढ़ने को मिलेगा। एक रुपये में प्राप्य।

* * *

मनोरंजन

हँसिए और हँसाइए नामक इस पुस्तक का प्रकाशन अपनी 'पाकेट बुक्स सीरीज़' में करके **राजकमल प्रकाशन, दिल्ली** ने एक प्रशंसनीय कार्य किया है। इसमें घर-गृहस्थी, निर्दोषों की दुनिया, सरकार और सरकारी, कानूनी और अदालती, नीम हकीम खतरे जान, साहित्य संगीत और कला, देश अनेक : आदमी एक आदि सात अध्यायों के अंतर्गत हँसने और हँसाने की वह सामग्री प्रस्तुत की गई है जिसे पढ़कर हम ज़िन्दगी की पथरीली राह हँसते-हँसते गुज़ार

सकते हैं। जीवन में हँसते रहना ही वह चुनौती है जो हमें स्वीकार करनी चाहिए। यह पुस्तक इस दिशा में काफी सहायता देगी। वास्तव में यह किताब नहीं, मौज और हँसी का फव्वारा है। मन की जलन को इस फव्वारे की शीतल, सुखद फुहारों से मिटाइए; हँसिए और हँसाइए। प्रकाशन की दूसरी पुस्तकों के समान यह भी एक रुपये में प्राप्य है।

* * *

बालोपयोगी

मीठे गीत में श्री देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त' की १८ बालोपयोगी सचित्र कविताएँ संकलित हैं। कविताओं की भाषा विषय के अनुरूप सरल और बोधगम्य होने के कारण यह पुस्तक प्रत्येक बच्चे के लिए पठनीय है। **आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित कापी साइज़ के ५२ पृष्ठ की यह पुस्तक १ रुपया ५० नये पैसे में मिल सकती है।

* * *

किरण जादू के देश में नामक इस पुस्तक में श्री देवराज दिनेश द्वारा लिखित 'किरण जादू के देश में', 'बुद्धि और भाग्य' तथा 'नमक जैसे प्यारे' नामक तीन बालोपयोगी कहानियाँ संग्रहीत हैं। प्रत्येक कहानी सचित्र है। **नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित कापी साइज़ के ३६ पृष्ठ की यह पुस्तक १ रुपया २५ नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

रसखान और **बिहारी** नामक इन दोनों पुस्तकों का प्रकाशन **नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली** ने अपनी 'हमारे महान् कवि' नामक बालोपयोगी जीवनी-माला के अन्तर्गत किया है। इन दोनों पुस्तकों में कवियों की जीवनी सरल भाषा में देकर अन्त में उनकी चुनी हुई रचनाएँ संकलित की हैं। इन दोनों पुस्तकों के लेखक श्री बालकृष्ण एम० ए० हैं। डिमाई साइज़ के ४०-४० पृष्ठ की दोनों पुस्तकें १-१ रुपये में प्राप्य हैं।

* * *

विश्व के अनूठे आदर्श नामक पुस्तक में श्री गिरीशमोहन ने बालोपयोगी भाषा में देश-विदेश के कुछ महापुरुषों के जीवन-चरित्र प्रस्तुत किए हैं। **हिन्दी साहित्य-भवन, लखनऊ** द्वारा प्रकाशित यह पुस्तक पचहत्तर नये पैसे में प्राप्य है।

(पृष्ठ २३० का शेष)

परन्तु यह टिकने वाला नहीं है। सदा ही भाव को प्रधान माना गया है, भाव ही प्रधान रहेगा। यह दो दिन की चाँदनी है। बिना सोच के स्थूलवाद का ह्रास ही नहीं हो सकता। इस दृष्टि से भी विचार को गतिशील रखना आवश्यक है। स्थूलवाद का नाश विचार की शिथिलता के कारण ही अवश्यम्भावी है। समाज की रक्षा विचारकों ने की, शासक पद के मद में बड़ी-बड़ी भूलें कर देता है।

मैं आपका बड़ा ही आभारी हूँगा, यदि आपने इस विचारधारा को, अपनी सुविख्यात पत्रिका में स्थान देकर प्रश्रय दिया या विचार-विमर्श का सूत्रपात किया। लेखक की रक्षा जनकल्याण के लिए उपयोगी है।

श्रीनाथप्रसाद श्रीवास्तव

ता० २६-१०-६० मौला बाग, महावीर स्थान
आरा

(पृष्ठ २४७ का शेष)

हम देख रहे हैं कि इसके सेवक सुस्त नहीं बैठे हैं और परम्परा प्रकाशन जोधपुर, राजस्थानी रिसर्च संस्थान, बीकानेर, राजस्थान साहित्य अकादमी, जयपुर, प्रेरणा प्रकाशन, जोधपुर एवं चौपासनी शोध संस्थान, जोधपुर आदि के रूप में प्रकाशन-कार्य में नव-शक्ति ला रहे हैं। क्या ही अच्छा होता, यदि हिन्दी सृजन व प्रकाशन की अखिल भारतीय संस्थाओं का संगठन सुदृढ़ बने और उसके अंग-स्वरूप अन्य प्रान्तों में भी उसकी शाखाएँ हों जो अपने क्षेत्र में हिन्दी की सृजनात्मक व प्रकाशनात्मक सेवा का भार ग्रहण कर सकें।

राजस्थान में हिन्दी-प्रकाशन का बहुत कार्य हुआ है और यहाँ यह मानना ही पड़ेगा कि यह बहुत बड़ा क्षेत्र है जहाँ हिन्दी-साहित्य का अभी भी कार्य हो सकता है, परन्तु यहाँ के निवासी प्रकाशकों का सहयोग लेकर प्रकाशन-कार्य करें और प्रचार में सहयोग दें तब। अब तो अखिल भारतीय सहकारी प्रकाशन का संगठन-कार्य प्रारम्भ हो चुका है, अतः इसमें और भी सुगमता प्राप्त हो सकती है।

हिन्दी-साहित्य के प्रकाशन-कार्य में राजस्थान कितना व कैसा सहयोग दे सकता है, इस सम्बन्ध में अपने योजनाबद्ध विचार फिर कभी व्यक्त करने का प्रयास करूँगा।

आगामी मास के प्रकाशन

आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली

—**गदर पार्टी का इतिहास**, श्री प्रीतमसिंह 'पंछी'

—**धरती की बेटी**, श्री सोमा वीरा, कहानी-संग्रह

—**आंधी की नींवें**, डॉ० रांगेय राघव, उपन्यास

—**पत्ते गिर पड़े**, श्री शिवसागर मिश्र, उपन्यास

—**मछली जाल**, श्री कृष्णचन्द्र, कहानी-संग्रह

—**मेरे दोस्त का बेटा**, श्री कृष्णचन्द्र, कहानी-संग्रह

—**पथ के गीत**, मुनिश्री मोहनलाल शार्दूल, काव्य

—**विश्व-शान्ति और अणुव्रत**, श्री अनन्त मिश्र

—**श्रमण संस्कृति के अंचल में**, मुनिश्री बुद्धमल

—**श्री कालू-उपदेश-वाटिका**, आचार्य श्री तुलसी

—**बिहार की लोक-कथाएँ—२**, श्री शिवमूर्ति वत्स

—**गढ़वाल की लोक-कथाएँ—२**, डॉ० गोविन्द चातक

—**महाराष्ट्र की लोक-कथाएँ—२**, डॉ० प्रभाकर माचवे

आदर्श पुस्तक भण्डार, कलकत्ता

—**गुलिमर की यात्रा**, श्री सिंहासनराय 'सिद्धेश'

किताब महल, इलाहाबाद

—**हिन्दी के गौरव-ग्रंथ**, पु० मु०, श्री विश्वम्भर 'मानव'

—**उजड़े घर**, श्री विश्वम्भर 'मानव', उपन्यास

—**पर्दे के पीछे**, श्री किशोर साहू, उपन्यास

—**चाँद इतना हँसा**, श्री शकुन्तला सिरोठिया, कविता

—**भारतीय नृत्य कला**, श्री केशवचन्द्र वर्मा

—**नवीन भारतीय चित्रकला-शिक्षण पद्धति**, प्रो० रामचन्द्र शुक्ल

—**पगडण्डी और परछाइयाँ**, श्री कुलभूषण, कहानी-संग्रह

—**शिशु शिक्षा**, कुमारी लीला जोशी

—**इंगलैंड का राज-दर्शन**, हेराल्ड लॉस्की

—**बैताल पचीसी**, श्री रामेश्वर प्रसाद मेहरोत्रा

नागरी प्रकाशन प्राइवेट लि०, पटना

—**सर्वोदय अर्थशास्त्र और अर्थ-व्यवस्था**, श्री व्योहार राजेन्द्र प्रसाद सिंह

—**दक्खिनी का प्रारम्भिक गद्य**, श्री राजकिशोर पांडे

—**सात समुन्दर पार**, श्री ब्रजकिशोर नारायण, यात्रा

राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली

—**कल्पना**, डॉ० रांगेय राघव, उपन्यास

—**पहला नास्तिक**, श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार, कहानी-संग्रह

—**धरती और आसमान**, आचार्य चतुरसेन, कहानी-संग्रह

—**उर्दू गुलिस्तां की बुलबुलें**, श्री रामनाथ सुमन, उर्दू शायरी

राष्ट्रीय प्रकाशन मण्डल, पटना

—**सा० के संस्मरण**, श्री नागार्जुन

—**चौपट चाचा**, श्री विजयानन्द दूबे, बाल-उपन्यास

रूपकमल प्रकाशन, दिल्ली

—**शरत् ग्रंथावली**, अनु० श्री हंसकुमार तिवारी

—**गीत सो गए**, श्री जयप्रकाश शर्मा, उपन्यास

—**अजी मैंने कहा**, श्री मोहन कत्याल, हास्य-विनोद

—**सुखद निद्रा**,

—**इच्छा-शक्ति**, पु० मु०, जॉन कनैडी

सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली
—आधुनिक सहकारिता, श्री विद्यासागर शर्मा
—बँगला साहित्य दर्शन, श्री मन्मथनाथ गुप्त
—कर भला होगा भला, श्री भगवानचन्द्र विनोद, मैथिली लोक-कथाएँ
—खंडित पूजा, श्री विष्णु प्रभाकर
—बरगद की छाया, श्री देवराज दिनेश, एकांकी संग्रह
—पुष्पोद्यान, श्री शंकरराव जोशी
—स्वाधीनता-संग्राम का इतिहास, श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति
—नवीन चिकित्सा, श्री महावीरप्रसाद पोद्दार

हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी
—बीसलदेवरासो, डॉ० तारकनाथ अग्रवाल
—साहित्य परीक्षा प्रबोध, श्री अनन्त राम दुबे 'प्रभात'

दिसम्बर मास के प्रकाशन

आलोचना

कृष्णदेव उपाध्याय, डॉ०, **भोजपुरी लोक साहित्य अध्ययन**, ४५२, डि०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी १०.००
गणपतिचन्द्र गुप्त, **हिन्दी साहित्य-समस्याएँ और समाधान**, क्रा०, ३०२, अशोक प्रकाशन, दिल्ली ५.००
जगन्नाथप्रसाद शर्मा, डॉ०, **कहानी का रचना-विधान**, पु० मु०, क्रा०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी ५.००
जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन, डॉ०, **हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास**, पु० मु०, डि०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी ६.००
पांडुरंग राव, **आंध्र हिन्दी रूपक**, २४६, रायल, नागरी प्रकाशन प्रा० लि०, पटना ७.५०
बच्चनसिंह, डॉ०, **बिहारी का नया मूल्यांकन**, १३६, डि०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी ३.५०
बैजनाथ राय, आचार्य, **प्रबन्ध पराग**, ५२२, क्रा०, आदर्श पुस्तक भण्डार, कलकत्ता ५.००
भोलानाथ तिवारी, डॉ०, **भाषा विज्ञान**, पु० मु०, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ७.५०
महेन्द्र भटनागर, डॉ०, **समस्यामूलक उपन्यासकार प्रेमचन्द**, पु० मु०, डि०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी ५.००
विश्वम्भर 'मानव', **प्रेमचन्द**, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद ३.००
शिवकुमार एम० ए०, **हिन्दी साहित्य-युग और प्रवृत्तियाँ**, डिमाई, ५६०, अशोक प्रकाशन, दिल्ली १०.००
शिवप्रसादसिंह, डॉ०, **विद्यापति**, पु० मु०, डि०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी ५.००
त्रिभुवनसिंह, डॉ०, **महाकवि मतिराम और मध्यकालीन हिन्दी कविता में अलंकरण वृत्ति**, २६६, रायल, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी १०.००
त्रिभुवनसिंह, डॉ०, **हिन्दी उपन्यास में यथार्थवाद**, पु० मु०, डि०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी ८.००

उपन्यास

अमृता प्रीतम, **डाक्टर देव**, १४०, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली १.००
आल्बेयर कामू, अनु० उमाराव, **पतन**, ११६, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, इलाहाबाद, बम्बई, पटना १.००
कन्हैयालाल मुन्शी, **जय सोमनाथ**, ३०९, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, इलाहाबाद, बम्बई, पटना २.००
कन्हैयालाल मुन्शी, **पृथ्वीवल्लभ**, पु० मु०, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद ३.००
गोर्की, अनु० भैरवप्रसाद गुप्त, **छलना**, १२८, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली १.००

गोविन्दसिंह, **रात का बाज़ार**, १४०, क्रा०, नवरंग प्रकाशन, कानपुर	३.००
चतुरसेन आचार्य, **बगुला के पंख**, पु० मु०, २६८, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली	४.७५
चतुरसेन आचार्य, **सोना और खून**, डि०, किताब महल, इलाहाबाद	७.५०
मामा बरेरकर, **अछूता प्यार**, २६४, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली	४.००
मीरा महादेवन, **सो क्या जाने पीर पराई**, १५६, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, इलाहाबाद, बम्बई, पटना	१.००
राजेन्द्र यादव, **सारा आकाश**, २४०, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, इलाहाबाद, बम्बई, पटना	१.५०
राहुल सांकृत्यायन, **सिंह सेनापति**, पु० मु०, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद	४.००
शिवसागर मिश्र, **राजतिलक**, ३०४, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली	५.५०
सत्यनारायण कस्तूरिया, **सम्राट् हर्षवर्द्धन**, पु० मु०, क्रा०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी	४.००

एकांकी-नाटक

उदयशंकर भट्ट, **कालिदास**, १३०, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली	२.००
कणाद ऋषि भटनागर, **सफर के साथी**, १०४, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली	२.००
जयकुमार मिश्र, **अस्थिदान**, १२४, क्रा०, नागरी प्रकाशन प्रा० लि०, पटना	२.५०
'बच्चन', अनु०, **मैकबेथ**, पु० मु०, १३२, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली	३.००
सन्तराम 'विचित्र', **आदर्श एकांकी**, २०४, क्रा०, हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली	३.५०
हरिकृष्ण प्रेमी, **ममता**, पु० मु०, ११६, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली	२.५०

कविता

उदयशंकर भट्ट, **मानसी**, ६६, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली	२.००
बच्चन, डॉ०, **मधुबाला**, पु० मु०, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली	२.००
हरिकृष्ण प्रेमी, **माखनलाल चतुर्वेदी**, १२०, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली	२.००

कहानी

कृष्णचन्द्र, **अन्नदाता**, पु० मु०, १५६, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली	३.००
कृष्णचन्द्र, **पूरे चाँद की रात**, पु० मु०, १७६, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली	३.००
चतुरसेन आचार्य, **दुखवा मैं कासे कहूँ**, २५६, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली	४.००
चतुरसेन आचार्य, **पतिता**, १२८, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली	१.००
चतुरसेन आचार्य, **बाहर भीतर**, २६०, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली	४.००
जैनेन्द्रकुमार, **जैनेन्द्र की श्रेष्ठ कहानियाँ**, १२६, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, इलाहाबाद, बम्बई, पटना	१.००
श्री कृष्ण, मनमोहन सरल, अरुण, **प्रतिनिधि ऐतिहासिक कहानियाँ**, ३३६, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली	८.००

बाल साहित्य—प्रौढ़ साहित्य

अतहर परवेज, **नकली चाँद**, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद	०.७५
अरविन्द गुर्टू, **कहाँ आ गए**, ११२, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली	२.००

अरविन्द गुट्टू, **जापान की लोक-कथाएँ (२)**, ५६, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली १.५०
आनन्द प्रकाश जैन, **भारतीय गौरव की लोक कथाएँ, (३)**, ४८, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली १.२५
आनन्दकुमार, **लोक कथाएँ**, पु० मु०, ६४, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली १.२५
कमला मेहरोत्रा, **बीरबल का अजब तमाशा**, ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५
कमला मेहरोत्रा, **बीरबल का न्याय**, ४८, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५
कमला मेहरोत्रा, **बीरबल का स्वर्गारोहण**, ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५
कमला मेहरोत्रा, **बीरबल का हवाई महल**, ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५
कमला मेहरोत्रा, **बीरबल की खिचड़ी**, ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५
कमला मेहरोत्रा, **बीरबल की फाँसी**, ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५
केशव सागर, अनु०, **सितारों की कहानी**, पु० मु०, १३७, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली २.००
ग्रिम बन्धु, अनु०, डॉ० विष्णु स्वरूप, **ग्रिम की कहानियाँ**, ५०२, २२ × ३२, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी २.५०
चन्द्रभाल ओझा, **बाल एकांकी**, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५
चन्द्रभाल ओझा, **ये खट्टे मीठे बेर**, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५
चन्द्रशेखर शास्त्री, आचार्य, **कुँअर निहाल दे**, ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५
नवीन दवे, मृदुल, **रूपमती**, ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५
प्रकाश पण्डित, **चाँद का सफर**, पु० मु०, २७, कापी, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली ०.७५
प्रकाश पण्डित, **चिड़ियाघर**, पु० मु०, ३२, कापी, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली ०.७५
भीमसेन विद्यालंकार, **शिवाजी**, पु० मु०, १४७, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली २.००
माधवी, कुमारी, **माधवानन्द काम-कन्दला**, ५६, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५
रमेशचन्द्र 'प्रेम', **असम की लोक कथाएँ**—२, ६४, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली १.५०
रमेशचन्द्र 'प्रेम', **आयरलैंड की लोक कथाएँ**, ६०, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली १.५०
रामेश्वर प्रसाद मेहरोत्रा, **गुल सनोवर** ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५
व्यथित हृदय, **देश देश के किसान**, कापी, किताब महल, इलाहाबाद १.५०
व्यथित हृदय, **नीति कथाएँ**, कापी, किताब महल, इलाहाबाद १.५०
व्यथित हृदय, **सपूतों की लोक कथाएँ**, ७२, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली १.७५
शकुन्तला सिरोठिया, **नन्हीं चिड़िया**, कापी, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५
शकुन्तला सिरोठिया, **सारंगा सदाबृज**, ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५
शिवानन्द शर्मा, **भैरवानन्द**, ५६, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५
श्रीकान्त व्यास, अनु०, **कैदी की करामात**, पु० मु०, ८३, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली १.५०
श्रीकान्त व्यास, अनु०, **डेविड कॉपर फील्ड**, पु० मु०, ६५, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली १.५०
श्रीकृष्ण, रमेश माहेश्वरी, **अफ्रीका की लोक कथाएँ**, ४४, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली १.२५
श्रीकृष्ण, रमेश माहेश्वरी, **यूक्रेन की लोक कथाएँ**, ४२, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली १.२५
सत्यकाम विद्यालंकार, **हमारे राष्ट्र निर्माता**, पु० मु०, १४४, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली १.५०
सविता जाजोदिया, **इण्डोनेशिया की लोक कथाएँ**, ६४, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली १.५०

विविध

केदारनाथ गुप्त, **स्वास्थ्य और जल चिकित्सा**, पु० मु०, क्रा०, छात्र हितकारी पुस्तकमाला, इलाहाबाद २.५०

गुणाकर मुले, **सूरज चाँद सितारे**, १४४, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, इलाहाबाद, बम्बई, पटना १.००

गुरुमुख निहालसिंह, **महानगर तथा उनका प्रशासन**, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद १.७५

गुलाम अहमद फुरकत, **मुसकराहटें**, ११२, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली २.००

जगपति चतुर्वेदी, **मौन की अजेय शक्ति**, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५

जवाहरलाल नेहरू, **कुछ पुरानी चिट्ठियाँ**, ७००, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली १०.००

जे० डी० वैश्य व एस० डी० अग्रवाल, **घरेलू हुनर**, ६६, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, इलाहाबाद, बम्बई, पटना १.००

जेम्स एलेन, अनु० केदारनाथ गुप्त, **विजय के आठ स्तम्भ**, पु० मु०, पॉकेट, छात्र हितकारी पुस्तकमाला, इलाहाबाद १.२५

जेम्स एलेन, अनु० राधेश्याम श्रीवास्तव, **मनुष्य ही भाग्य का निर्माता है**, पु० मु०, पॉकेट, छात्र हितकारी पुस्तक-माला, इलाहाबाद ०.६२

टण्डन और त्रिपाठी, **शिक्षालय संगठन के सिद्धांत**, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ५.००

ठाकुर राजबहादुरसिंह, **गांधीजी की सूक्तियाँ**, १४४, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली १.००

डी० पी० गुप्त, डॉ०, **हमारी माध्यमिक शिक्षा, भाग १**, पु० मु०, ३०२, डि०, नागरी प्रकाशन प्रा० लि०, पटना ६.५०

द्वारकाप्रसाद शास्त्री, **पुस्तकालय में संदर्भ सेवा**, १४६, डि०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी ५.००

रमाकान्त उपाध्याय, **सन् सत्तावन के अमर सेनानी**, पु० मु०, १४०, क्रा०, आदर्श पुस्तक भण्डार, कलकत्ता २.००

राजेश्वरप्रसाद नारायण सिंह, **हमारे वन्य पशु**, १४४, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली २.५०

राम अभिलाष उपाध्याय, **संयुक्त राष्ट्र संघ**, ५५, क्रा०, आदर्श पुस्तक भण्डार, कलकत्ता १.२५

रामसागर राय, **शाक कृषि दर्शन**, ५२०, डि०, नागरी प्रकाशन, प्रा० लि०, पटना ६.२५

लक्ष्मीनारायण शर्मा, **बर्थ कन्ट्रोल**, १४०, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली १.००

विराज, **पत्र लिखने की कला**, १२८, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली १.००

स्वामी शिवानन्द, **ब्रह्मचर्य ही जीवन है**, पु० मु०, क्रा०, छात्रहितकारी पुस्तक माला, इलाहाबाद १.७५

सम्पादित, **हँसिए और हँसाइए**, १२६, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, इलाहाबाद, बम्बई, पटना १.००

सूरजभान, **शिक्षा में नए प्रयोग**, पु० मु०, १५०, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली ४.००

प्रकाशन समाचार

वर्ष : ८
अंक : ६
वार्षिक : ३.००
एक प्रति : ०.३१

सम्पादक : ओंप्रकाश, डायरेक्टर इंचार्ज, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के दौरान में उत्तर प्रदेश की सरकार प्रतिवर्ष राज्य की शिक्षा-संस्थाओं को पुस्तकें खरीदने के लिए लाखों रुपयों का अनुदान देती आई है। राज्य के लगभग ३६,००० स्कूलों के लिए पुस्तकों के निर्वाचन का दायित्व शिक्षा-निरीक्षकों पर पड़ता आया है। यह निर्वाचन पुस्तकों की एक स्वीकृत सूची में से होता था जिसे राज्य के शिक्षा-अधिकारी तैयार किया करते थे।

कुल अनुदान में से कुछ पुस्तकों का चुनाव जिला शिक्षा-अधिकारियों पर न छोड़कर राज्य के केन्द्रीय शिक्षा-विभाग में ही हो जाया करता था। एक विचार-विशेष या लेखक-अथवा प्रकाशक-विशेष की पुस्तकों की इस प्रकार की एकाधिकारी खरीद के विरुद्ध काफ़ी असन्तोष पिछले वर्षों में प्रकट किया जाता रहा है। अनेक स्थानीय शिक्षा-अधिकारी यद्यपि स्पष्ट रूप से इस असन्तोष को समर्थन दे सकने की स्थिति में नहीं थे, वे इस हस्तक्षेप को अपनी स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति में बाधा मानते थे, यह हमें विश्वस्त रूप से ज्ञात है। सदैव माँग की जाती रही है कि पुस्तकों की खरीद के अनुदान की रकम का खर्च लखनऊ में ही न होकर विभिन्न ज़िले में हो ताकि स्थानीय पुस्तकालयों में स्थानीय रुचि और आवश्यकता की पुस्तकों की खरीद की जा सके।

सुनने में आया है कि इस बार अनुदान की समूची रकम का व्यय केवल उन्हीं पुस्तकों का होगा जिसकी सूची उत्तर प्रदेश का केन्द्रीय शिक्षा-विभाग तैयार कर चुका है। यदि यह बात सत्य है तो इसका विरोध न केवल प्रकाशकों और पुस्तक-विक्रेताओं द्वारा होगा जिनके हितों पर यह सरकारी कदम कुठाराघात करेगा वरन् पुस्तकों के चुनाव में स्वतन्त्रता के पक्षपात के समर्थक लेखकों, शिक्षाविदों और पुस्तकालयाध्यक्षों द्वारा भी। सार्वजनिक धन का इस प्रकार का एकाधिकारी व्यय उचित नहीं कहा जा सकता। आज उत्तर प्रदेश की कांग्रेस की सरकार इस दिशा में वह कुछ करने जा रही है जो अन्य राज्यों ने कभी का करना छोड़ दिया हुआ है। बिहार और राजस्थान की सरकारों का उदाहरण हमारे सामने हैं—यहाँ अब स्वीकृत सूचियों में से स्थानीय शिक्षा-अधिकारी अथवा। एवं शिक्षा-संस्थाओं के प्राध्यापक अपनी पसन्द की पुस्तकें स्वयं खरीद सकते हैं और इससे किन्हीं व्यावसायिक हितों पर भी चोट नहीं पहुँचती।

उत्तर प्रदेश की सरकार के मुख्य मन्त्री श्री चन्द्रभानु गुप्त और शिक्षा-मंत्री आचार्य जुगलकिशोर से हमारा अनुरोध है कि वह अपने राज्य के शिक्षा-विभाग के निर्णय को अविलम्ब बदलें और पुस्तकें खरीदने का दायित्व ज़िला-स्तर पर, सम्भव हो तो स्कूल-स्तर पर, छोड़ दें। पुस्तकों की पसन्द और खरीद में उस स्वतन्त्रता का होना परम आवश्यक है जिसका नारा बुलन्द करके हम एक जनतन्त्री समाज की स्थापना करने में प्रवृत्त हैं।

झाड़ में जाएँ लेखक !

श्री जे० बी० प्रीस्टले

यह शीर्षक पढ़कर हमारे लेखक चौंकें नहीं । यह लेखकों के खिलाफ़ प्रकाशकों का प्रहार नहीं, बल्कि लेखकों के पक्ष में प्रख्यात अंग्रेज लेखक **जे० बी० प्रीस्टले** का लेख है, जो इंगलैंड के लोकप्रिय साप्ताहिक 'न्यू स्टेट्स्मैन' के ६ जनवरी, १९६१ के अंक से साभार प्रकाशित किया जा रहा है।—**सम्पादक**

मेरे कुछ साथी लेखक, जिनका नेतृत्व बड़े शानदार ढंग से सर एलन हर्बर्ट कर रहे हैं, इस बात की कोशिश में लगे हुए हैं कि पुस्तकालयों से लेखकों की जो पुस्तकें पढ़ने के लिए ली जाती हैं उनके लिए उन्हें कुछ पैसा दिया जाया करे। जब ब्रिटेन की पार्लियामेंट में यह बिल पेश किया गया, तो लेबर पार्टी के एक सदस्य ने, जो स्वयं किसी व्यवसाय से अपनी जीविका कमाते हैं, बातों में उसे उड़ा दिया। उन्होंने कहा कि आजकल के अंग्रेज लेखकों को और ज्यादा पैसा मिलने की कोई जरूरत नहीं है, उनमें से बहुतों को इतना पैसा मिल रहा है जितना शेक्सपियर या सर वाल्टर स्काट को अपनी उम्र में कभी भी नहीं मिला था। अगर हम समझदारी के साथ मुद्रा की क्रय-शक्ति और टैक्सों को ध्यान में रखें तो उनकी यह घोषणा सरासर गलत है।

इन बातों की गुंजाइश रखते हुए मैं कहता हूँ कि आजकल के किसी भी अंग्रेज नाटककार की आमदनी उतनी नहीं है जितनी शेक्सपियर की थी, ठीक उसी प्रकार जैसे आज हमारे किसी भी थिएटर के पास उतना पैसा नहीं है जितना, उदाहरण के लिए, शेक्सपियर के समय के ग्लोब थिएटर के पास था। जहाँ तक स्काट का सवाल है, मैं कह सकता हूँ कि अगर लेखक संघ की काउंसिल के सारे सदस्य अपनी आमदनी एक जगह इकट्ठा करें तब भी वे एबट्सफर्ड-जैसी हवेली न बनवा सकेंगे और न उसके रख-रखाव और उतने कर्मचारियों का खर्चा ही पूरा कर सकेंगे। इसके अलावा सिर्फ इतनी ही बात नहीं है कि आजकल के लेखक की हालत मध्य-विक्टोरियन युग के लेखक की हालत से बुरी है, बल्कि उन ४० वर्षों में जब से मैंने लेखनी को अपनी जीविका का साधन बनाया है, लेखक की धनोपार्जन की क्षमता भी कम होती गई है। उदाहरण के लिए अब से ३० वर्ष पहले मुझे अपने उपन्यासों की हर प्रति पर २ शिलिंग ७½ पैंस रायल्टी मिलती थी, और आज ३ शिलिंग मिलती है। यदि लेबर पार्टी के उपरोक्त सदस्य मुझे यह समझा दें कि आज के ३ शिलिंग अब से ३० वर्ष पहले के २ शिलिंग ७½ पैंस के बराबर कैसे हुए तो मैं यह आरोप वापस लेने को तैयार हूँ कि वह दुष्टतापूर्ण बकवास कर रहे थे।

परन्तु जो बात मुझे महत्वपूर्ण मालूम हुई, इसका कारण मैं अपनी फरियाद में आगे चलकर बताऊँगा, वह था सर एलन और उनके साथियों द्वारा प्रस्तावित योजना के विरोध में पुस्तकालयाध्यक्षों का बात कहने का अजीब ढंग। उसमें इतनी कटुता थी, उसमें इतना ज़हर घुला हुआ था कि ऐसा लगता था कि ये पुस्तकालयाध्यक्ष बरसों से लेखकों से घृणा करते आए थे। उदाहरण के लिए उनकी इसी बात को लीजिए कि अगर इतने बहुत से लेखकों को आजकल पर्याप्त जीविका कमाने में कठिनाई होती है तो बेहतर है कि ये कमबख्त कलम घिसने वाले अपनी जीविका का कोई दूसरा साधन ढूंढने की कोशिश करें। जब से मैं एक लेखक के रूप में अपनी जीविका कमा

रहा हूँ, तब से मैंने कितनी ही बार खुले आम यह घोषणा की है कि इस देश में पुस्तकालयाध्यक्षों को बेहद कम वेतन मिलता है। लेकिन मैंने कभी तिरस्कार के साथ कन्धे बिचकाकर यह नहीं कहा कि उनके लिए बेहतर यह होगा कि वे किताबों के बीच काम करना छोड़कर किसी साइ-किल के कारखाने में काम करने लगें। फिर आखिर इन पुस्तकालयाध्यक्षों का रवैया ऐसा क्यों है, जोकि अपनी जीविका के लिए पुस्तकों और उनके लेखकों पर निर्भर रहते हैं ?

मुझे तो डर यह है कि सच पूछा जाए तो इन लोगों का रवैया भी पूरे समाज के रवैये के कारण दूषित हो गया है। और हालाँकि ये बहुत साहसी लोग नहीं होते पर यह मौका पाते ही उन्होंने महसूस किया कि वे बेधड़क जो चाहे कह सकते हैं क्योंकि उन्हें सर्वसाधारण के बीच व्यापक समर्थन का आश्वासन था। ऐसा लगता है कि अंग्रेजी बोलने वाले लोगों को, केवल अंग्रेजों को ही नहीं, बल्कि अमरीका, कनाडा और आस्ट्रेलिया के लोगों को भी अब लेखकों से अरुचि हो गई है। यह बड़ी अजीब-सी बात है क्योंकि अंग्रेजी बोलने वाली जातियों को अपने साहित्य के कारण दूर-दूर तक ख्याति और सम्मान प्राप्त हुआ है। डॉ० जॉन्सन-जैसा आदमी भी, जो आसानी से जोश में आकर कोई बात कहने का आदी नहीं था, यह लिख सकता था : "हर जाति को उसका मुख्य गौरव उसके लेखकों से प्राप्त होता है।" हम जानते हैं कि अच्छा खाना खाने के बाद और अच्छी शराबें पीने के बाद हमारे राजनीतिज्ञ भी 'अंग्रेजी साहित्य की गौरवशाली परम्पराओं' के बारे में प्रशंसा के कुछ शब्दों का प्रयोग करते हैं। ऐसा लगता है कि शायद उन्हें यह नहीं मालूम कि इस साहित्य के रच-यिता भी कभी जीवित थे और वे भी लेखक ही थे।

अमरीका में यह पता लगाने की कोशिश की गई है कि विभिन्न व्यवसायों और पेशों को कितनी प्रतिष्ठा प्राप्त है। इस सूची में लेखकों का नाम इतना नीचे आता है कि बस ऐसा लगता है कि वे बाल-बाल बच गए नहीं तो उनका कहीं उल्लेख भी न होता। अपने स्थान से ज़रा भी नीचे हटने पर वे प्रतिष्ठा के इस सोपान में लफंगों और गुण्डों के स्तर पर पहुँच जाते। फिर भी मैं आशा करता हूँ

क अब चूंकि एक पढ़ा-लिखा आदमी अमरीका का प्रेसीडेंट हो गया है, इसलिए लेखकों की ओर उससे कुछ अधिक ध्यान दिया जाएगा जितना कि इंगलैंड में दिया जाता है। अमरीका में कांग्रेस की लाइब्रेरी अमरीकी कवियों के अस्तित्व को स्वीकार करती है। हमारी पार्लियामेंट के अधिकांश सदस्य यह समझते हैं कि सारे अंग्रेज कवि बरसों पहले मर चुके हैं। और अच्छा ही होता कि वे मर जाते! एक ही बार मैं एक बूढ़े कवि के लिए सरकारी पैंशन मन्जूर कराने में सफल हुआ, और सो भी साल में केवल १०० पौंड। काश, वह राकेट का कोई पुरज़ा या घुड़दौड़ का घोड़ा ही होता!

लेखक की हैसियत के बारे में सरकारी रवैया युद्ध के दौरान में स्पष्ट हो गया। कई बहुत ही समझदार, प्रतिभाशाली, अनुभवी और देशभक्ति की भावना से प्रेरित लेखकों ने सरकार को अपनी सेवाएं अर्पित कीं। मुझे तो नहीं मालूम कि उनमें में किसी को भी सचमुच कोई महत्त्वपूर्ण काम सौंपा गया हो। सूचना मन्त्रालय में उन्हें वकीलों, प्रोफेसरों, विज्ञापन क्षेत्र के लोगों के संचालन में निचले पदों पर नियुक्त किया गया पर कभी भी किसी लेखक के अधीन नहीं। पहले महायुद्ध की तुलना में तथा दूसरे महायुद्ध के दौरान में लेखकों के प्रति अविश्वास और अरुचि का भावना और भी स्पष्ट हो गई। इस मामले में ब्रिटेन और दूसरे देशों के बीच, विशेष रूप से ब्रिटेन और फ्रांस के बीच जो अन्तर था वह और भी उभरकर सामने आया। कोई भी अंग्रेज लेखक अगर किसी दूसरे देश में चला जाए तो वह फौरन यह महसूस करेगा कि उसकी हैसियत ऊंची हो गई है।

मुझे किसी से इस बात की शिकायत नहीं है कि कोई भी मुझ-जैसे मतवाले हाथी को किसी समिति में या किसी मण्डल में रखने को तैयार नहीं होता—हालांकि मैंने भी अपने जमाने में काफी अच्छी सेवा की है। परन्तु सर्व-साधारण मेरे मित्रों और साथियों के प्रति जैसी उपेक्षा दिखाते हैं, उस पर मुझे क्रोध आता है। मैं कई ऐसे पुराने लेखकों को जानता हूँ जो ऊँचे और विश्वास के पद सँभालने के लिए आवश्यक योग्यता और अनुभव रखते हैं, फिर भी उनके हाथ कुछ नहीं लगता। जब किसी बोर्ड

आफ गवर्नर्स, संचालक-मण्डल, कार्यकारिणी समिति या ट्रस्टियों का चुनाव होता है तो किसी भी ऐरे-गैरे राजनीतिज्ञ, वकील, साहूकार या झूठी शान बघारने वाले आदमी को लेखक के मुकाबले में ज्यादा पसन्द किया जाता है। जब सम्मान की पदवियाँ बाँटी जाती हैं तब भी यही होता है। हर सूची में खिलाड़ियों का नाम रहता है पर नाटककारों का नहीं। आनरेरी डिग्रियों का भी यही हाल है। मैं शर्त लगाकर कह सकता हूँ कि इंगलैंड की नई और पुरानी यूनिवर्सिटियों में लेखकों को जितनी कम आनरेरी डिग्रियाँ दी जाती हैं उतनी संसार के किसी और देश में नहीं। इसके अतिरिक्त अमरीका के विश्वविद्यालय लेखकों को साल-दो साल के लिए अपने यहाँ बुलाते हैं; मुझे मालूम नहीं कि इंगलैंड में ऐसा होता है, अगर होता है तो इस बात को बहुत ही गुप्त रखा जाता है।

ऐसे देश भी हैं, जहाँ लेखकों को यथोचित विशेषाधिकार रखने वाले नागरिक माना जाता है। (मैं एक बार एक विदेशी लेखक से मिला था जिसे यह जानकर बेहद आश्चर्य हुआ कि मुझे टैक्स भी देने पड़ते हैं।) लेकिन हमारे यहाँ जब टैक्स का सवाल आता है तो लेखकों के साथ दूसरों-जैसा बरताव भी नहीं किया जाता। मैं टैक्स जमा करने वालों को दोष नहीं देता, वे तो काफी इंसाफ से काम लेते हैं; पर व्यवस्था ही ऐसी है, जो जान निकाल लेती है। उदाहरण के लिए, मान लीजिए कोई नौजवान नाटककार किसी गन्दे तहखाने में एक कोठरी लेकर रहता है और बरसों तक मछली, आलू के चिप्स और बासी डबलरोटी खाकर अपना पेट भरता है और एक सफल नाटक लिखने की कोशिश करता है; सहसा उसका नाटक चल निकलता है और उसे बहुत-सा पैसा मिलता है। उस पर टैक्स ऐसे लगाया जाता है जैसे वह आधे मेफेयर का मालिक हो। यह भी हो सकता है कि तीन-चार साल बाद वह फिर अपनी उसी पुरानी कोठरी में पहुँच जाए। और यदि नौजवान लेखक की सफलता की कमाई सरकारी टैक्सों में छिन जाने से उसकी यह दुर्दशा हो सकती है तो ऐसी हालत में बूढ़े लेखकों की हालत तो और भी बदतर होगी।

उसका प्रकाशक टैक्स-मुक्त मोटी-सी रकम लेकर

ग्रपना कारोबार बेच सकता है; उसका एजेण्ट भी यही कर सकता है, पर लेखक को, जिसकी रचनाओं पर ये कारोबार खड़े हुए थे, टैक्सों की चक्की में उस समय तक पिसना पड़ता है जब तक वह मर न जाए। (हमारे बहादुर दोस्त सर काम्पटन मैकेंजी का मुकदमा लड़ते-लड़ते यही हाल हुआ।) लेकिन जैसे ही लेखक में प्राण निकलते हैं, तो उसकी ग्रामदनी थी वह पूँजी बन जाती है और उस र मृत्यु-कर लगा दिया जाता है। और यह मृत्यु-कर उसके कापीराइट, फ़िल्म बनाने के अधिकार की कल्पित बिक्री और भगवान् जाने किन-किन चीजों के अनुमानित मूल्य पर लगाया जाता है। लेखक मरते वक्त यह सोचता है कि वह अपनी थोड़ी-बहुत बचत के रूप में अपने बीवी-बच्चों के लिए उचित प्रबन्ध करके मर रहा है, पर वास्तव में यह भी हो सकता है कि उन लोगों को एक दमड़ी भी न मिले क्योंकि उसकी जायदाद पर मृत्यु-कर लगाया जाता है और ऐसे धन पर लगाया जाता है जो न उसे कभी मिला था और शायद न कभी आगे चलकर मिलेगा।

मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि टैक्स के अफसर जान-बूझकर कोई बदी नहीं करते पर वे इस बात के पारखी होने का दावा नहीं कर सकते कि आगे चलकर किस प्रकार का साहित्य पसन्द किया जाएगा और किस प्रकार का नहीं और इसलिए यह सम्भव है कि वे कापीराइट का मूल्य बहुत बढ़ा-चढ़ाकर आँकें। मैं एक लड़की को जानता हूँ जिसके पास अपने पिता की मृत्यु के समय एक फूटी कौड़ी भी नहीं थी और उसका पिता एक सुविख्यात लेखक था: केवल यही नहीं था कि उस लड़की के पास एक फूटी कौड़ी नहीं थी बल्कि सरकारी टैक्सों का कर्ज चुकाने के लिए उसके सारे कपड़े-लत्ते उससे छीनकर नीलाम कर दिए गए। और यह सब-कुछ एक ऐसे देश में होता है जहाँ लोगों को तरह-तरह की समाज-विरोधी हेरा-फेरी में अकूत धन कमाने की खुली छूट है, ऐसा धन जिस पर कोई टैक्स भी नहीं लिया जाता। और हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि अपने शासन-काल में लेबर पार्टी को पाँच साल का समय मिला था, जब वह इन सब बातों को ठीक कर सकती थी पर उसने कुछ भी नहीं किया।

राजनीतिज्ञ हमारी रत्ती-भर भी परवाह नहीं करते

क्योंकि हमारे वोट बहुत थोड़े हैं और हमारी कोई मजबूत यूनियन नहीं है। लेकिन बात केवल इतनी ही नहीं है। राजनीतिज्ञ इस बात को जानते हैं कि अगर वे कुछ अन्यायों को दूर करने और लेखकों का बोझ कुछ हल्का करने की कोशिश करेंगे तो देश में उन्हें कोई प्रशंसा नहीं प्राप्त होगी। सारे अखबार वाले (एक-दो को छोड़कर) और आम पब्लिक उनका विरोध करेगी। और वे खुद भी तो बहुत बड़ी हद तक लेखकों के प्रति इसी द्वेष की भावना का शिकार हैं। पुस्तकालयाध्यक्षों ने जब सर एलन और उनके साथियों के खिलाफ ज़हर उगला और उन्हें धिक्कारा तो इस विश्वास के साथ कि इसमें उनके लिए कोई खतरा नहीं है। और हमें यह याद रखना चाहिए कि लेखकों के प्रति यह द्वेष उनके लेखक होने के कारण ही है, वे चाहे बहुत ऊँचे पाये के लेखक हों या निचले दरजे के, सफल हों या असफल, बूढ़े हों या जवान।

हमें अपने-आपसे यह प्रश्न पूछना चाहिए कि अंग्रेज़ी बोलने वाली जातियों में, जिनकी साहित्यिक परम्पराएँ इतनी शानदार हैं, अब लेखकों के प्रति यह अरुचि क्यों पैदा हो गई है, जो बहुधा घृणा की हद तक पहुँच जाती है। यह रवैया हमारे जमाने में ही पैदा हुआ है। यह बात अब से १०० वर्ष पहले नहीं थी क्योंकि चार्ल्स डिकेन्स के दौरे बहुत सफल रहते थे और लोग टेनिसन की एक झलक देखने के लिए ह्वाइट द्वीप की तीर्थयात्रा किया करते थे। यह सच है कि जन-प्रचार के साधनों ने बहुसंख्यक जन-साधारण के सामने नयी मूर्तियाँ प्रस्तुत की हैं जिनकी वे उपासना करते हैं; परन्तु यह उदासीनता का तो कारण हो सकता है पर उस द्वेष का नहीं, जो सड़कों और बाज़ारों से आरम्भ होकर अखबारों के ज़रिए सरकार के वित्त विभाग और हाउस आफ कामन्स तक पहुँच गया है। और हमें इसी बात का कारण ढूंढ़ना है। क्या वजह है कि हमारी उन रचनाओं के गुण-दोषों पर विचार किये बिना ही, जो हम पाठकों को देते हैं, हमारे अस्तित्व से ही इतने विभिन्न प्रकार के लोगों में द्वेष उत्पन्न होता है?

इतना सब-कुछ कह चुकने के बाद अब मैं असली बात कहने में संकोच नहीं करूंगा। मेरी राय में अब लेखक इसलिए लोकप्रिय नहीं रह गए हैं कि ज़्यादातर लोग उसे उसे स्वतन्त्रता का प्रतीक समझते हैं जिसके छिन जाने का इन्हें पूरा आभास है। उसे देखकर लोगों को किसी ऐसी चीज़ की याद आती है जो उनसे छिन गई है और उन्हें इस पर झुँझलाहट होती है, भले ही यह सब-कुछ अचेतन स्तर पर होता हो। उसे देखकर उन्हें ऐसा लगता है जैसे पिंजरों में बन्द जानवरों के अजायबघर के पास कोई जंगली जानवर मँडला रहा हो। वह एक पुरानी परम्परा के अन्तिम अवशेषों में से है। वह विभिन्न राजनीतिक तथा सामाजिक मानदण्डों की सीमाओं से अभी तक मुक्त है। वह 'गैर-जिम्मेदार' है क्योंकि वह अब भी अपनी जिम्मेदारियाँ स्वयं तय करता है, और वास्तव में हर संजीदा लेखक अपना बहुत काफी समय और विचार इन्हीं जिम्मेदारियों को तय करने में लगाता है। उसकी स्वतन्त्रता को कुचला नहीं जा सकता, विशेष रूप से अंग्रेज़ी बोलने वाले देशों में।

कम्युनिस्ट देशों में लेखकों को बहुत से विशेषाधिकार मिले हुए हैं पर उनसे यह बुनियादी अधिकार छीन लिया गया है कि वे अपने उन्मुक्त विचारों के अनुकूल पुस्तकें लिख सकें। जब भी कम्युनिस्टों की आलोचना की जाती है तब इस अधिकार के छीन लिए जाने का उल्लेख हमेशा किया जाता है। परन्तु सच तो यह है कि अपने यहाँ के लेखकों को यह अधिकार देकर, यह स्वतन्त्रता देकर जिसकी हम इतनी डींग मारते हैं, हमने लेखक को एक ऐसा अजूबा बना दिया है जो अपने युग से मेल नहीं खाता, जिसे देखकर लोगों को झुँझलाहट होती है और जिसे हर तरफ से द्वेष की भावना से देखा जाता है। अगर इस जानवर को पकड़कर पिंजड़े में बन्द कर देने का कोई तरीका हो तो वह ज़रूर आजमाया जाएगा और जन-साधारण की ओर से इसका कोई विरोध भी नहीं किया जाएगा। और उस समय तक खबरदार जो किसी ने विशेषाधिकारों की बात यहाँ की! फिर भी अगर वह लेखक बना रहना चाहता है, इस झूठी स्वतन्त्रता का दावा करना चाहता है तो उसे मुसीबतें झेलकर ही ऐसा करना होगा—सरकारी वित्त विभाग और हाउस आफ कामन्स का यही फतवा है।

●

प्रकाशकीय मञ्च

अखिल भारतीय प्रकाशक संघ ने हिन्दी की वर्तनी और अक्षरी में समानता लाने के लिए गत वर्ष एक उपसमिति को मनोनीत करके एक महत्त्वपूर्ण कदम उठाया था। इस उपसमिति के संयोजक श्री देवराज ने वर्तनी की समानता सम्बन्धी प्रस्ताव का मसविदा प्रचारित कर दिया था। उस मसविदे पर अनेक साहित्यिकों, शिक्षाविदों, और विश्वविद्यालयों के प्राध्यापकों की सम्मतियाँ छप चुकी हैं।

भारत सरकार के शिक्षा-विभाग ने इस कार्य को अपना सहयोग हिन्दी वर्तनी में समानता लाने के लिए एक समिति बनाकर किया है। संघ की ओर से श्री देवराज इस समिति के सदस्य मनोनीत हुए हैं। समिति की पहली बैठक केन्द्रीय शिक्षा-मन्त्रालय में २८ जनवरी ६१ को ११ बजे प्रातः हुई।

* * *

भारत सरकार के शिक्षा-विभाग ने हिन्दी के साधारण पाठकों के लिए विभिन्न विषयों की पुस्तकें तैयार करवाने, अनुवाद करवाने तथा उन्हें प्रकाशित करवाने का एक कार्यक्रम बनाया है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत विशिष्ट विषयों की सुप्रसिद्ध पुस्तकों को सस्ते संस्करण में प्रकाशित किया जाएगा। प्रारम्भ में शिक्षा-विभाग ने साइंस, टैकनोलोजी तथा सोशल साइंस की पुस्तकों को प्रकाशनार्थ चुना है। विज्ञान-सीरीज में पच्चीस से ऊपर पुस्तकों का चुनाव अनुवाद तथा प्रकाशन के लिए किया जा चुका है।

इस योजना द्वारा जहाँ हिन्दी-साहित्य की अभिवृद्धि होगी वहाँ इससे भारत सरकार को स्व-निर्मित पारिभाषिक-शब्दावली के प्रचार में भी सहायता मिलेगी। प्रकाशन-कार्य में राष्ट्रपति के २७ अप्रैल, १९६० के आदेश का पूर्णतया पालन किया जाएगा तथा संख्याओं में केवल अन्तर्राष्ट्रीय संख्याओं का ही प्रयोग किया जाएगा।

इस योजना के अन्तर्गत नियुक्त प्रकाशक अनुवाद के प्रकाशनाधिकार स्वयं प्राप्त करेंगे तथा ऐसे योग्य व्यक्तियों द्वारा अनुवाद-कार्य कराएँगे जो सरकारी पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग कर सकें।

अनुवादों के नमूने तथा अनूदित पांडुलिपियाँ केन्द्रीय सरकार के शिक्षा-विभाग द्वारा किसी विद्वान् अथवा किसी विद्वत्समिति से पास कराए जाने के बाद प्रकाशक सरकारी देखरेख में स्वीकृत पुस्तकों का प्रकाशन करेंगे।

प्रथम संस्करण ३००० प्रतियों से कम नहीं होगा, जिनमें से केन्द्रीय सरकार एक-तिहाई प्रतियाँ ही खरीदेगी। विज्ञान-सीरीज की लगभग पच्चीस पुस्तकों के अनुवाद तथा प्रकाशन-कार्य के लिए भारत सरकार प्रतिष्ठित प्रकाशकों से टेण्डर आमन्त्रित करेगी।

टेण्डर का फार्म, अन्य नियमादि तथा तत्सम्बन्धी सभी सूचनाएँ डाइरेक्टर, सेण्ट्रल हिन्दी-डाइरेक्टरेट, शिक्षा-विभाग भारत सरकार, १५/१६ फैज बाजार, दरियागंज, दिल्ली से प्राप्त की जा सकती हैं।

* * *

उत्तर प्रदेश की सरकार ने पाठ्यपुस्तकों में सुधार आदि पर विचार करने के लिए एक हाई पॉवर कमेटी को नियुक्त किया है। जो लोग अपने सुझाव अथवा शिकायतों की ओर इस कमेटी का ध्यान आकर्षित करना चाहते हों, वे इन्हें श्री एस० एन० शर्मा, सेक्रेटरी, हाई पॉवर कमेटी (टैक्स्ट बुक्स) एवं सेक्रेटरी, बोर्ड ऑफ़ हाई स्कूल एण्ड इंटरमीडिएट एजुकेशन, इलाहाबाद को भेज दें। यदि इन सुझावों और शिकायतों को गोपनीय रखना अभीष्ट हो तो लिफ़ाफ़े पर "कॉनफ़िडेन्शियल" लिखा रहना जरूरी है।

* * *

नागपुर के प्रकाशकों ने "विदर्भ पाठ्य-पुस्तक प्रकाशक संघ" के नाम से एक संस्था की स्थापना ६ जनवरी ६१ को की है। इस संस्था ने निश्चय किया कि विदर्भ क्षेत्र के सभी प्रकाशकों का एक सम्मेलन शीघ्र ही बुलाया जाए।

* * *

महाराष्ट्र की सरकार ने पाँच व्यक्तियों की एक समिति को राज्य के विश्वविद्यालयों में हिन्दी और मराठी को

[शेष पृष्ठ २८९ पर]

पुस्तकालय-आन्दोलन और इसके कार्यकर्ता

श्री परमानन्द दोषी, एम० ए०, सी० एल० एस-सी०

किसी अभियान को व्यापक पैमाने पर जब हम छेड़ते हैं, तो उसे हम आन्दोलन की संज्ञा देते हैं। वस्तुतः आन्दोलन है भी बड़ी ही व्यापक और विस्तृत वस्तु। छुट-पुट ढंग से वैयक्तिक प्रयासों के बल पर किये जाने वाले कार्यों को हम आन्दोलन की संज्ञा से अभिहित नहीं कर सकते। वैसे, कोई आन्दोलन अपनी प्रारम्भिक अवस्था में छोटा-सा प्रतीत हो सकता है, पर कालक्रम से उसका आयाम उत्तरोत्तर विकसित और विस्तृत होता चला जाता है। जिस अभियान के क्षितिज का उत्तरोत्तर विकास नहीं हो, समझना चाहिए कि या तो वह अभियान आन्दोलन है ही नहीं, और यदि है भी, तो उसका प्रारम्भ उचित रीति से नहीं हुआ है।

पुस्तकालय खोलने, चलाने और खोल-चलाकर मानव-समुदाय की इनके द्वारा अधिकाधिक सेवा और सहायता करना सचमुच एक बड़ा हेतु (Cause) है। फलतः इनकी दिशा में उठाये गए कदम को भी आन्दोलन कहने में कोई हिचक नहीं होनी चाहिए। तो, पुस्तकालयों के संस्थापन और प्रसार-कार्य की दिशा में जो काम किया जाता है, वह आन्दोलन का अंग है। और आज हम पुस्तकालयों के उत्थान और उन्नयन की दिशा में बहुतेरे कार्य कर रहे हैं और इन कार्यों से सम्बन्धित अभियान को हम पुस्तकालय-आन्दोलन कहा करते हैं।

पुस्तकालय-आन्दोलन केवल हमारे देश में ही चल रहा है, ऐसी बात नहीं है। जो देश शिक्षा, संस्कृति और धन-वैभव की दिशा में जितना आगे है, वहाँ के पुस्तकालय-आन्दोलन की गति भी उतनी ही मुखरित है। आज सभ्य, सम्पन्न सुशिक्षित और संस्कृत सभी देश पुस्तकालय-आन्दोलन को अपनी-अपनी शक्ति, रुचि, क्षमता और साधन के बल पर आगे बढ़ा रहे हैं। सद्यः स्वतन्त्रता-प्राप्त अपना भारत भी इस दिशा में अभूतपूर्व लगन और उत्साह से प्रवृत्त है।

पर जैसे अन्य आन्दोलनों को बहुतेरी समस्याओं, कठिनाइयों और बाधाओं का सामना करना पड़ता है, उसी भाँति हमारे पुस्तकालय-आन्दोलन को भी उनका सामना अनिवार्यतः करना पड़ता है। सिद्ध हुआ कि पुस्तकालय-आन्दोलन की भी अपनी समस्याएँ हैं, जिनके समाधान पर ही इसकी अपेक्षित प्रगति अवलम्बित है।

सच पूछिए तो पुस्तकालय-आन्दोलन की सबसे जटिल समस्या इसके लिए अपेक्षित योग्यता और लगन वाले कार्यकर्ताओं की कमी की है। यहाँ हम पुस्तकालय-आन्दोलन के कार्यकर्ता के सम्बन्ध में ही तो दो-चार बातें संक्षेप में निवेदित करेंगे।

पुस्तकालक-आन्दोलन के लिए सर्वप्रथम पर्याप्त संख्या में सामान्य कार्यकर्ताओं का अभाव है। जितनी संख्या में हमें कार्यकर्ता चाहिए, उतनी संख्या में दुर्भाग्यवश ये हमें उपलब्ध नहीं हैं। ज्यादा-से-ज्यादा कार्यकर्ता हमारे आन्दोलन को मिलें, इसके लिए देश में पुस्तकालयमय वातावरण पैदा करना होगा। सामान्य जन पहले पुस्तकालय-रुचित स्वयं होंगे, तब ही वे अन्य लोगों में पुस्तकालय के महत्वों को फैलाने में समर्थ होंगे। लोग पुस्तकालय-रुचित कैसे हों? अब यह प्रश्न उपस्थित हुआ। इसके लिए पठन-पाठन, अध्ययन-अध्यापन की महिमा का प्रचार

करना होगा। मानव-जीवन की सार्थकता ज्ञानवान होने में ही है। जो व्यक्ति जितना अधिक ज्ञानवान होगा, उसका जीवन उतना ही सफल होगा, यह भावना का आविर्भाव लोगों के हृदय में होना चाहिए। न केवल व्यक्तिगत जीवन के लिए बल्कि पारिवारिक, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन के लिए शिक्षा की अनिवार्यता को लोग समझ सकें, ऐसा वातावरण पैदा होना चाहिए। शिक्षा प्राप्त कर ज्ञानवान बनने में पुस्तकालय सर्वाधिक सहयोग किसी व्यक्ति को दे सकता है, इसका भी अहसास लोगों को हो, ऐसा प्रयत्न होना चाहिए। जितनी शिक्षा : उतना ज्ञान, जितना अध्ययन : उतनी शिक्षा, जितना पुस्तकालय : उतना अध्ययन—इस प्रकार के छोटे-छोटे सूत्रों का समाज में प्रचलन कराकर लोगों को पुस्तकालयों की ओर आकृष्ट किया जा सकता है। अपने देश के अतीतकालीन गौरव तथा विदेशों के वर्तमानकालीन वैभव की तह में शिक्षा का ही प्रमुख हाथ रहा है, इस बात का विश्वास लोगों में उत्पन्न करके उनमें अध्ययन का अनुराग पैदा किया जा सकता है। इस सम्बन्ध में भारतीय संविधान के निर्देशक सिद्धान्तों के अनुसार निःशुल्क आवश्यक प्राइमरी शिक्षा तथा समाज शिक्षा का व्यापक प्रचलन हमारा काफी सहायक हो सकता है। पुस्तकालय-उपयोग की पात्रता प्राप्त करने के लिए साधारण साक्षरता आवश्यक है, और उपर्युक्त प्रावधानों के द्वारा आबाल-वृद्ध-वनिता सबमें उपर्युक्त पात्रता लाने में सफलता प्राप्त की जा सकती है। पुस्तकों के अध्ययन से व्यक्ति-विशेष के व्यावहारिक जीवन में होने वाले तात्कालिक लाभ से भी पुस्तकों की ओर जन-सामान्य के आकृष्ट करने में कामयाबी हासिल की जा सकती है।

तो सर्वप्रथम पुस्तक से लाभ, शिक्षित होने के हित-साधन की बात पर बल देकर जन-सामान्य में इस धारणा को घर करवाना होगा, तब ही अधिकाधिक लोग पुस्तकों और पुस्तकालयों की ओर झुकेंगे। और जहाँ जन-सामान्य पुस्तकालय की ओर मुखातिब हुआ कि उसमें से ही अपने नैसर्गिक नेतृत्व के गुण के कारण कार्यकर्ता और नेता उत्पन्न होने लगेंगे। कार्यकर्ताओं के अभाव की समस्या का समाधान ज्यादा-से-ज्यादा लोगों को पुस्तकालयों की ओर आकृष्ट कर देने से ही हो जाएगा।

यह तो हुई सामान्य रूप से कार्यकर्ताओं की कमी की बात। वर्तमान समय में थोड़े-से जो भी कार्यकर्ता हैं, वे भी इस आन्दोलन में पूर्ण समय देने वाले नहीं हैं। सच पूछिए तो आज सर्वत्र हमें कार्यकर्ताओं के गिने-गिनाए सेट ही दृष्टिगोचर होते हैं, जो एक प्रकार के व्यावसायिक कार्यकर्ता-से हैं। गिने-चुने ये ही कार्यकर्ता सभी आन्दोलनों में व्यापे रहते हैं। सर्वत्र इनका ही प्रतिनिधित्व रहता है, चाहे सहकारिता-आन्दोलन हो या पंचायत-आन्दोलन, पुस्तकालय-आन्दोलन हो या भारत-सेवक समाज का संगठन। सभी संगठनों में एक ही सेट के कार्यकर्ता दिखलाई पड़ेंगे। कम-से-कम बिहार राज्य में तो यह स्थिति है ही। इसका दुष्परिणाम होता है कि ये लोग कहीं भी ठीक से अपनी सेवा प्रदान नहीं कर पाते, कोई भी संगठन इनकी सेवाओं का समुचित सदुपयोग नहीं कर पाता। सभी संगठनों में ये भरती के सदस्य के रूप में रहा करते हैं। किसी कारणवश इनके हट जाने से अथवा संन्यास ग्रहण कर लेने से कहीं भी कोई रिक्तता अथवा

कमी नहीं महसूस की जाती। यह बड़ी ही चिन्त्य बात है। इसके समाधान का एक ही रास्ता है कि अन्यान्य आन्दोलनों एवं संगठनों की भाँति हमारा पुस्तकालय-आन्दोलन भी ऐसे पेशेवर कार्यकर्ताओं को अपने यहाँ प्रश्रय नहीं दे। दर्जनों संस्थाओं में किसी व्यक्ति-विशेष के होने की बात की प्रशंसा नहीं, भर्त्सना होनी चाहिए और ऐसी भ्रमरी प्रवृत्ति को प्रोत्साहन नहीं मिलना चाहिए। हमारे आन्दोलन में थोड़े ही कार्यकर्ता हों, पर जो हों, ठोस हों। एक छोटी अवधि के लिए भी उनकी अनुपस्थिति हमारे संगठन के लिए खलने वाली हो, ऐसे कार्यकर्ताओं की हमें कदर करनी होगी।

पुस्तकालय-आन्दोलन के लिए विशिष्ट गुणसम्पन्न कार्यकर्ता मिल सकें, इसमें हमारी दरिद्रता भी कम बाधा उत्पन्न नहीं करती। मुट्ठी-भर साधन-सम्पन्न लोगों को छोड़कर हमारे अधिकांश कार्यकर्ता ऐसे परिवार और समाज से आते हैं, जिनकी परवरिश का भार इन्हीं के दुर्बल कन्धों पर रहा करता है। अपने परिवार को भूखों मारकर सार्वजनिक कार्य करने वाले कार्यकर्ताओं के उदाहरण अपवाद-स्वरूप ही मिल सकते हैं। पुस्तकालय-आन्दोलन अपने ऐसे अवैतनिक कार्यकर्ताओं को पत्र-पुष्प के रूप में कुछ सम्मानिक देने की स्थिति में नहीं है। वह इस स्थिति में यदि किसी प्रकार आ जाय, तो अच्छे-अच्छे कार्यकर्ता इसे उपलब्ध हो सकते हैं।

निस्वार्थ भाव से अदम्य उत्साह, अपूर्ण कर्मठता और अथक समाज-सेवा की भावना से निरन्तर कार्य करने वाले ईमानदार कार्यकर्ताओं की हमारे पुस्तकालय-आन्दोलन को बड़ी ही प्रबल आवश्यकता है। यद्यपि वर्तमान समय में भी ऐसे थोड़े कार्यकर्ता इसे अवश्य ही मिले हुए हैं, फिर भी इनकी संख्या में असीम वृद्धि की आवश्यकता है। जब तक सर्वगुण सम्पन्न कार्यकर्ता पर्याप्त परिमाण में पुस्तकालय-आन्दोलन को नहीं प्राप्त हो जाते, तब तक क्यों नहीं हम छोटे-मोटे कार्यकर्ता जो मैदान में उतरे हुए हैं, अपने क्षुद्र स्वार्थों का परित्याग कर पुस्तकालय-आन्दोलन को एक पुनीत सांस्कृतिक आन्दोलन समझकर अपनी सेवा की महत्त्वपूर्ण देन द्वारा सफल बनाने का व्रत लें।

●

[पृष्ठ २८६ का शेष]

शिक्षा के माध्यम के रूप में प्रचलित करने के प्रश्न पर विचार करने के लिए मनोनीत किया है।

* * *

पता चला है कि पंजाब सरकार ने राष्ट्रीयकृत २२ पाठ्य-पुस्तकों में से ११ के राष्ट्रीयकरण को हटा दिया है। यदि यह परीक्षण सफल हुआ तो आशा की जाती है कि पुस्तकों के राष्ट्रीयकरण के सिद्धान्त को त्याग दिया जाएगा।

* * *

केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय ने धार्मिक और नैतिक शिक्षा सम्बन्धी समिति को आदेश दिया है कि प्राइमरी से यूनिवर्सिटी-स्तर की शिक्षा के लिए उपयुक्त साहित्य तैयार किया जाय।

इस समिति ने प्रकाशकों से प्रार्थना की है कि वे पाठ्य-पुस्तकों के रूप में विचारार्थ उपयुक्त पुस्तकों के नमूने भेजें।

* * *

सर्वश्री गयाप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा के अध्यक्ष श्री जगदीशप्रसाद अग्रवाल मई मास में रोटरी क्लब के इंटर-नेशनल कन्वेंशन में भाग लेने के लिए जापान जा रहे हैं। वे वहाँ आगरा की रोटरी क्लब के प्रेसीडेण्ट होने के नाते आगरा के प्रतिनिधि के रूप में भाग लेंगे। कन्वेंशन में सम्मिलित होने के साथ-साथ वे वहाँ पुस्तकों का व्यवसाय भी करना चाहते हैं इसलिए उन्होंने जापान जाते हुए मार्ग में रंगून, बैंकाक, सैगोन, वियतनाम, कुलालम्पूर, मलाया, सिंगापुर, मनीला, हांगकांग, फारमोसा आदि स्थानों पर ठहरने का निश्चय किया है। विदेशों में हिन्दी का प्रचार बढ़ाने तथा वहाँ अधिक मात्रा में हिन्दी पुस्तकों का निर्यात करने के सम्बन्ध में वे विभिन्न देशों के शिक्षा-मन्त्रालयों से सम्पर्क स्थापित कर रहे हैं।

यदि कोई प्रकाशक अपने प्रकाशनों के निर्यात के इच्छुक हों तो उनसे सम्पर्क स्थापित करें। आर्डर लेकर सम्बन्धित प्रकाशक को वे भिजवा देंगे।

* * *

हिन्दी में दर्शन सम्बन्धी संदर्भ-ग्रन्थ : एक योजना

प्रो० राजवंश सहाय 'हीरा'

हिन्दी में विविध विषयोपयोगी संदर्भ-ग्रन्थों का अभी अभाव है। यह अभाव हिन्दी-भाषियों के लिए एक महान् चुनौती है, उसमें भी दर्शन सम्बन्धी संदर्भ-ग्रन्थों का अभाव हमारी मानसिक अप्रौढ़ि का द्योतक है। विश्व का धर्म-गुरु भारत, जो जन्मजात दार्शनिक हो, और उसकी राष्ट्रभाषा में दर्शन के उपजीव्य ग्रन्थों का अभाव रहे, यह स्थिति चिन्तनीय है। आज हिन्दी ऐसी स्थिति से गुजर रही है, जबकि उसमें उच्च स्तर के साहित्य की नितान्त आवश्यकता है। हमें हिन्दी के माध्यम से विश्व के समस्त ज्ञान-विज्ञान को भारत के जन-जन तक पहुँचाना है। अतः हम हिन्दी-भाषी अपने उत्तरदायित्व को नहीं सँभाल सके, इस महत्त्वपूर्ण कार्य को सम्पन्न करने के लिए समय पर नहीं जुट सके, तो अपने देश, भाषा एवं भावी सन्तान के लिए भार सिद्ध होंगे। अतः हमें अपनी समस्त शक्ति को लगाकर यह कार्य सम्पादित करना है—देर से अथवा सवेर ही सही।

संदर्भ-ग्रन्थों के प्रणयन एवं प्रकाशन का कार्य जटिल ही नहीं पर्याप्त द्रव्य एवं श्रमसाध्य होता है। यह कार्य व्यक्तिगत स्तर पर पूर्ण नहीं हो सकता, इसको पूर्ण करने के लिए लेखकों की एक बहुत बड़ी संख्या, समय एवं धैर्य की आवश्यकता होती है। अतः इसे कोई उत्साही प्रकाशक या सरकारी अथवा गैरसरकारी संस्थाएँ ही कर सकती हैं। चूंकि इस निबन्ध का सम्बन्ध दर्शन से है, अतः अखिल भारतीय दर्शन-परिषद् चाहे तो यह कार्य सुगमतापूर्वक सम्पन्न हो सकता है।

हिन्दी दिनानुदिन भारतीय जीवन में प्रवेश करती जा रही है। अतः हिन्दी के माध्यम से हम भारतीय मनीषा को विकसित करने में सचेष्ट हो जाएँ तो देश का महान् उपकार होगा। कोई भी देश विदेशी भाषा के माध्यम से मौलिक एवं सुदृढ़ विचारधारा से पुष्ट साहित्य का सृजन नहीं कर सकता और न चिन्तन के क्षेत्र में मौलिक देन ही दे सकता है।

यह हमारे देश का दुर्भाग्य रहा है कि जिसकी चिन्तन-पद्धति के पीछे एक सुदृढ़ एवं स्वस्थ परम्परा रही हो वह दर्शन के क्षेत्र में एक भी मौलिक चिन्तक नहीं उत्पन्न करे। इसका मूल कारण है विदेशी भाषा के माध्यम से हमारी शिक्षा का होना। लगभग डेढ़-दो वर्षों से हमारे देश में अंग्रेजी के माध्यम से ही ज्ञान-विज्ञान का प्रसार हो रहा है, किन्तु इस अवधि में कोई ऐसा दार्शनिक उत्पन्न नहीं हो सका जो शंकर एवं कुमारिल आदि की परम्परा को आगे बढ़ा सके। जिन्हें हम आज के महान् भारतीय दार्शनिक कहते हैं वे भी मात्र अनुवादक या टीकाकार ही हैं जिन्होंने अंग्रेजी के माध्यम से अपने विचारों को अभिव्यक्त किया है। आज के ये दार्शनिक भारतीय दर्शन पर लिखते समय पग-पग पर मैकडोनल एवं मैक्समूलर के ही मुखापेक्षी हैं। मूल ग्रन्थों को देखने की न तो इनमें क्षमता ही है, और न समय ही। कुछ लोगों ने यदि मूल ग्रन्थों के आधार पर थोड़ा-बहुत कार्य किया भी है तो वह भारतीय भाषाओं में होने के कारण सर्वग्राह्य नहीं हो सका है। बीसवीं शताब्दी के जिस भारतीय दार्शनिक ने भारतीय दर्शन के क्षेत्र में महान् योगदान कर अपनी मूक साधना अर्पित की है, और वस्तुतः जो भारतीय दर्शन की प्रगति में एक नई कड़ी जोड़ने वाला है, उसे आज भारतीय

दार्शनिकों में परिगणित नहीं किया जाता। चूँकि उसके ग्रन्थ संस्कृत में हैं, अतः उसका महत्त्व आज की दृष्टि में नहीं है। जिसे उसने प्राचीन सूत्र एवं वार्तिक की पद्धति पर लिखा है। अंग्रेजी में उसकी उपपत्तियाँ नहीं हैं, अतएव वह आज के दार्शनिकों की पंक्ति से खारिज हो गया है। मेरा स्पष्ट अभिप्राय है म० म० स्व० रामावतार शर्माजी से। अतः हमारा परम कर्तव्य है कि हम उनके परमार्थ दर्शन को शीघ्र ही विश्व के सम्मुख उपस्थित करें। यह प्रसन्नता का विषय है कि पं० हरिमोहन झा जी ने परमार्थ दर्शन का हिन्दी भाष्य प्रारम्भ कर दिया है। वे शीघ्र ही इसके हिन्दी एवं अंग्रेजी भाष्यों को प्रकाशित करें।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हमारी चिन्तन की गति धीमी पड़ने का मुख्य कारण है विदेशी भाषा के माध्यम से शिक्षा ग्रहण करने की प्रणाली का होना। यदि हम हिन्दी या भारतीय भाषाओं के माध्यम से शिक्षा ग्रहण करते तो निःसंदेह ही अपने देश की मौलिक चिन्ता-धारा में नवीन योगदान हुआ होता और अपने यहाँ मौलिक विचारकों का अभाव भी नहीं रहता। अतः हमें शीघ्राति-शीघ्र संदर्भ-ग्रन्थों के प्रणयन में लग जाना चाहिए और सामूहिक सहयोग के द्वारा उसे पूर्ण करना चाहिए।

अखिल भारतीय दर्शन-परिषद् के माध्यम से यह कार्य प्रारम्भ किया जाए तो इसके पूर्ण होने में कोई सन्देह नहीं रह जाएगा। परिषद् की वार्षिक गोष्ठी के अवसर पर इसकी चर्चा होनी चाहिए और 'दार्शनिक त्रैमासिक' में संदर्भ-ग्रन्थों के पूर्ण-विवरण प्रस्तुत कर देश-भर के विद्वानों का सहयोग प्राप्त किया जाए। सम्प्रति हिन्दी में दर्शन पर लिखने वाले व्यक्तियों की कमी नहीं है। शताधिक व्यक्ति दार्शनिक विषयों पर लिख रहे हैं। हमारा कर्तव्य है कि हम इनकी प्रतिभा के प्रकाश से हिन्दी को प्रकाशपूर्ण बना दें। किन्तु यदि हम दर्शन सम्बन्धी विविध प्रकार के संदर्भ-ग्रन्थों के निर्माण में लग जाएँ तो हमें देश के समस्त लेखकों से सम्पर्क स्थापित करना होगा और उनके सहयोग से इस कार्य को आगे बढ़ाना होगा। विभिन्न विषयों के विशेषज्ञों से तत्तत् विषयों पर निबन्ध, टिप्पणियाँ एवं भाष्य लिखवाना पड़ेगा और अधिकारी विद्वानों द्वारा उनका हिन्दी अनुवाद करवाना पड़ेगा। सर्वप्रथम हमें देशव्यापी दार्शनिकों एवं विद्वानों से सम्पर्क स्थापित कर उनसे विचार विमर्श-करना है, तदनन्तर इस महान् आयोजन को कार्यान्वित करना है।

यहाँ हम आज की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए संदर्भ-ग्रन्थों के स्वरूप एवं विवरण पर विचार प्रस्तुत करेंगे। मेरे जानते इस समय निम्न श्रेणी के संदर्भ-ग्रन्थों की अत्यन्त आवश्यकता है :

(१) दर्शन कोश, (२) धर्म एवं दर्शन का विश्व-कोश; (३) भारतीय दर्शन के मूल स्रोत; (४) पाश्चात्य दर्शन के मूल स्रोत (५) विश्व-दर्शन का बृहत् इतिहास ४ खंडों में—

१. **दर्शन कोश**—यह ग्रन्थ अंग्रेजी में प्रकाशित दर्शन-कोश से उच्च स्तर का एवं प्रत्येक विषय के पृथक् विश्व-कोश के समान होगा। इसमें विश्व के दार्शनिकों, विचार-धाराओं एवं दार्शनिक ग्रन्थों का प्रामाणिक विवरण रहना चाहिए। ग्रन्थ रॉयल आकार में लगभग एक हजार पृष्ठों में पूर्ण हो। इसके तीन विभाग किए जाएँ—(१) विचारक, (२) विचारधारा एवं ग्रन्थ। प्रथम भाग में विश्व-विश्रुत दार्शनिकों का प्रामाणिक जीवन-वृत्त, ग्रन्थ एवं उनकी मान्यताओं का विवरण रहे। विचारकों के नाम अकारादि क्रम से रहें। इसी प्रकार दूसरे भाग में विश्व-दर्शन की विविध विचारधाराओं का अकारादि क्रम से प्रामाणिक विवरण प्रस्तुत किया जाए। तीसरे भाग में विश्व-दर्शन में योग देने वाली महत्त्वपूर्ण दार्शनिक कृतियों का विवरण एवं विवेचन उपस्थित किया जाए। इस कार्य को प्रारम्भ करने के पूर्व हमें सभी विषयों की तालिकाएँ तैयार करनी होंगी, तत्पश्चात् विशेषज्ञों से उन विषयों पर टिप्पणियाँ एवं निबन्ध लिखवाने होंगे।

अन्य भाषाविद् विशेषज्ञों के निबन्धों का हिन्दी अनुवाद करा लिया जाए। इस कार्य को सुचारु रूप से सम्पादित करने के लिए एक प्रधान सम्पादक एवं अन्य ५ सहकारी सम्पादकों की नियुक्ति करनी पड़ेगी और इसी प्रकार लगभग एक सौ लेखकों की भी संख्या होगी। बहुत सम्भव है कि हमें सभी विषयों के लेखक हिन्दी में ही मिल जाएँ किन्तु हमें इस महान् कार्य के लिए अन्य भारतीय भाषाभाषियों से भी सहयोग प्राप्त कर उनकी प्रतिभा से

राष्ट्रभाषा को समृद्ध करना होगा तभी यह महान् कार्य सुन्दर ढंग से सम्पन्न हो सकेगा। यदि हम लगन एवं तत्परता से इसमें लग जाएँ तो लगभग दो या ढाई वर्षों के भीतर 'दर्शन कोश' को प्रकाशित कर दे सकते हैं।

कोश प्रारम्भ करने के पूर्व सम्पादक-मण्डल की एक बैठक करानी होगी और उसमें कोश सम्बन्धी सारी मान्यताओं, विशेषताओं एवं विषय-निरूपण से सम्बन्धित विचारों पर एक सामान्य नियम निर्धारित करना होगा तथा बिना किसी पूर्वाग्रह के तटस्थ होकर विश्व-दर्शन की विशाल परम्परा का पर्यालोचन करना होगा। कोश के समस्त विषयों की सूची अन्य भाषाओं के संदर्भ-ग्रन्थों एवं भारतीय दर्शन के पारिभाषिक शब्दों को मूल ग्रन्थों एवं संस्कृत-कोशों के आधार पर तैयार करनी होगी। भारतेतर दर्शनों के पारिभाषिक शब्दों के हिन्दी अनुवाद करने होंगे। हिन्दी अनुवाद करते समय भाषा की सरलता पर ध्यान देना होगा। साथ ही यह भी विचार करना होगा कि हिन्दी में वे शब्द भी ग्रहण कर लिए जाएँ जो अभी तक विभिन्न हिन्दी ग्रन्थों में प्रयुक्त होकर प्रचलित हो चुके हैं। यदि अन्य भारतीय भाषाओं में सुगम एवं सरल शब्द उपलब्ध हो जाएँ तो उन्हें लेने में उदारता बरतनी होगी। संस्कृत में विविध दर्शनों के कोश विद्यमान हैं—जैसे मीमांसा-कोश, न्याय कोश आदि हमें ऐसे कोशों से सहायता लेनी पड़ेगी। साथ ही टिप्पणी एवं निबन्धों की भाषा सम्बन्धी नीति भी पूर्ण निर्धारित करनी होगी। यथासम्भव भाषा की सरलता को ही हमें प्रधानता देनी पड़ेगी। यों जटिल विषय होने के कारण अन्य विषयों की अपेक्षा दर्शन की भाषा में सामान्य स्तर से कुछ अधिक कठिनाई का होना आवश्यक भी है। एक छोटी-सी पुस्तिका में शब्दों की सूची (अंग्रेजी एवं अन्य भाषाओं के साथ हिन्दी रूपान्तर) के सम्मुख टिप्पणी एवं निबन्ध के लिए पृष्ठों एवं आकार के निर्देश छपे रहेंगे। सूचीपत्र की भूमिका में कोश सम्बन्धी सामान्य नीति का विवरण रहेगा और उसे लेखकों के पास भेज देना होगा। लेखकों को टिप्पणी एवं निबन्ध के अन्त में आधार एवं सहायक ग्रन्थों की अद्यतन (up-to-date) सूची देनी होगी। इस प्रकार यह 'दर्शन कोश' हमारे लिए नवीन प्रकाश-स्तम्भ सिद्ध होगा।

२. धर्म एवं दर्शन का विश्वकोश—यह कार्य 'दर्शन-कोश' की अपेक्षा विस्तृत पृष्ठाधार पर प्रारम्भ होगा। एक बड़े पैमाने पर इसकी रूपरेखा तैयार करनी होगी। विश्व-कोश निर्माण का कार्य अत्यन्त श्रमसाध्य एवं जटिल होता है, फिर भी असम्भव नहीं। इसके लिए पर्याप्त धन की आवश्यकता पड़ती है तथा अधिक समय एवं धैर्य की अपेक्षा होती है। अब तक के किये गए कार्यों के आधार पर हम कह सकते हैं कि बिना 'विश्वकोश' के हमारा काम नहीं चल सकता है। दर्शन के सभी विभागों पर इस समय हिन्दी में उत्तम ग्रन्थ विद्यमान हैं। अब हम विश्वकोश के निर्माण की स्थिति में आ चुके हैं। कई वर्षों से हिन्दी में अध्यापन होने के कारण हमारी भाषा मँज चुकी है और विभिन्न विषयों पर उच्च स्तर के ग्रन्थ भी लिखे जा चुके हैं। अतः ऐसी स्थिति में हम विश्वकोश का निर्माण करने में लग जाएँ तो हमारे समक्ष लेखन-सम्बन्धी किसी प्रकार की बाधा नहीं आ सकेगी। इसके लिए सबसे बड़ी कठिनाई पर्याप्त धन प्राप्त करने की है किन्तु धन के लिए भी हमारा काम नहीं रुक सकता है। केन्द्रीय सरकार एवं

सुप्रसिद्ध समालोचक प्रो० दीनानाथ 'शरण' एम० ए०, जिन्होंने साहित्य द्वारा विश्व-शांति का नया क्षितिज उद्घाटित किया है। हिन्दी साहित्य के इतिहास पर विद्वान् आलोचक का अत्यन्त प्रामाणिक व क्रांतिकारी ग्रंथ शीघ्र प्रकाशित होने जा रहा है।

हिन्दीभाषी राज्य सरकारें इस कार्य के लिए हमें अनुदान दे सकती हैं। इस प्रकार के कई कार्य सरकारी अनुदान से हिन्दी में प्रारम्भ भी हो चुके हैं—जैसे 'हिन्दी विश्व-कोश' एवं 'हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास' आदि। यदि प्रयत्न किया जाए तो यह कार्य भी सम्पन्न होकर ही रहेगा। यह महाग्रन्थ दस खंडों का होगा और प्रत्येक खंड दर्शनकोश के समकक्ष होगा। इसमें उसी आकार के लगभग दस हज़ार पृष्ठ होंगे तथा ५ या ६ वर्षों का समय लगेगा। इसमें सम्पादकों एवं लेखकों की संख्या हजारों तक पहुँच सकती है। दर्शन के प्रत्येक विभाग का पृथक्-पृथक् सम्पादक होगा और सबके ऊपर एक प्रधान सम्पादक। इसी प्रकार बहुत से लेखक होंगे। इसमें विषय का विस्तार एवं विवेचन का ढंग प्रौढ़ता लिये होगा तथा विश्व के समस्त धर्मों, नीतिशास्त्र, ज्ञानमीमांसा, तर्कशास्त्र, तत्त्वज्ञान, सौन्दर्यशास्त्र, समाज-दर्शन, राजनीति दर्शन, मनोविज्ञान आदि का विस्तारपूर्वक प्रामाणिक विवेचन प्रस्तुत करना होगा। इसके अतिरिक्त सारी बातें 'दर्शनकोश' के ही समान होंगी। इसमें एक बात पर ध्यान रखना होगा कि हमें विशेषज्ञों के सम्बन्ध में विश्व के प्रधान दर्शनशास्त्रियों का भी सहयोग प्राप्त करना पड़ेगा।

संसार-व्यापी सहयोग से यह कार्य अधिक प्रामाणिक हो सकता है, किन्तु यदि ऐसा नहीं भी हो सके, तो कम-से-कम विश्व के जीवित दार्शनिकों की विचारधारा को उन्हींसे लिखवाया जाए एवं उनके हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किए जाएँ विषयों का विभाजन, सम्पादन की एक सामान्य नीति आदि सारी बातें 'दर्शनकोश' के ही समान होंगी।

३. भारतीय दर्शन के मूल स्रोत—दर्शन का ज्ञान तब तक अधूरा रहता है जब तक मूल ग्रन्थों का अध्ययन नहीं किया जाए। दार्शनिकों के मूल ग्रन्थों के अध्ययन के बिना प्राप्त ज्ञान पल्लवग्राही पाण्डित्य का द्योतक है, किन्तु ऐसे कम लोग हैं जो मूल ग्रन्थों में पैठकर उसके सार तत्त्व को ग्रहण कर सकते हैं। अतः सामान्य जनों के अतिरिक्त विद्वानों के लिए भी यह आवश्यक हो जाता है कि अधिकारी विद्वानों एवं अनुवादकों के द्वारा मूल ग्रन्थों का सटिप्पण अनुवाद कराकर उसे सर्वसाधारण के उपयुक्त

बनाया जाए। यों तो भारतीय दर्शनों के प्राय सभी प्रमुख ग्रन्थों के हिन्दी अनुवाद उपलब्ध हैं, फिर भी वे पर्याप्त नहीं हैं। हमें नए ढंग से पाद-टिप्पणियों के साथ उनके अनुवाद एवं भाष्य कराने होंगे। षड्दर्शनों के मूल सूत्रों, वार्तिकों एवं प्रमुख भाष्यों के अतिरिक्त, दार्शनिक विचार से पूर्ण वेद-मन्त्रों, उपनिषदों, गीता, जैन, बौद्ध, चार्वाक, तन्त्रों, शैव-सिद्धान्त, वैष्णव दर्शनों एवं व्याकरण-दर्शन के हिन्दी भाष्य हमें प्रकाशित करने हैं। इनमें से कुछ पर तो व्यक्तिगत रूप से अथवा संस्थाओं के द्वारा भाष्य प्रकाशित भी हो चुके हैं। किन्तु हमें एक ऐसे ग्रन्थ की आवश्यकता होगी जिसमें अद्यावधिक सभी भारतीय दार्शनिक सम्प्रदायों का परिचय देते हुए उनके मूल विचारों को एक स्थान पर हिन्दी में उतारना होगा। इस प्रकार के संकलन के समय यह ध्यान देना पड़ेगा कि हम षड्-दर्शनों के सभी सूत्रों का भाष्य एक स्थान पर एकत्र कर दें एवं अन्य दर्शनों के ऐसे ग्रन्थों का अनुवाद प्रस्तुत कर दिया जाए जिससे उन दार्शनिकों के विचारों की मूल बातें आ जाएँ। यह ग्रन्थ चार खंडों में विभाजित हो—प्रथम खंड में—वैदिक मंत्र, गीता एवं उपनिषदों का समावेश हो। द्वितीय खंड में षड्दर्शनों एवं वैष्णव-तन्त्रों का समावेश किया जाए। तीसरे खंड में चार्वाक, जैन, बौद्ध, शैव एवं व्याकरण-दर्शनों का संग्रह हो और चतुर्थ खंड में आधुनिक भारतीय दार्शनिकों के मूल विचारों का परिचय देते हुए उनके अनुवाद प्रस्तुत किए जाएँ। आधुनिक दार्शनिकों में—रामकृष्ण परमहंस, स्वामी दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द, तिलक, म० म० रामावतार शर्मा, म० गांधी, डॉ० रा० द० रानडे, डॉ० सुरेन्द्रनाथ दास गुप्त, डॉ० राधा, महर्षि अरविंद, एम० एन० राय, डॉ० भगवानदास, के० सी० भट्टाचार्य, सुभाषचन्द्र बसु, डॉ० राधाकृष्णन, विनोबा भावे एवं पं० जवाहरलाल नेहरू, जयप्रकाश नारायण के मूल ग्रन्थों के प्रमुख अंशों के अनुवाद प्रस्तुत किए जाएँ। संकलन के समय प्रत्येक व्यक्ति का जीवन-वृत्त, कृतियों एवं विचारधारा का परिचय देना आवश्यक है। इस प्रकार ये ग्रन्थ भारतीय दर्शन की मूल धाराओं को समझने में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होंगे और तभी अपने देश में मौलिक चिंतकों का भी अभाव नहीं रहेगा।

राजकमल

अपनी खबर

श्री पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' के आत्मकथात्मक संस्मरण उपन्यास से भी अधिक रोचक । शैली 'उग्र' की अपनी ही चिरपरिचित ! मूल्य ४ रुपये ५० नये पैसे

आगामी प्रकाशन

तपस्विनी

(प्रथम खण्ड)

गुजराती के विख्यात कथाकार "जय सोमनाथ" और "भगवान परशुराम" आदि अनेक लोकप्रिय उपन्यासों के रचयिता **श्री कन्हैयालाल मुन्शी** की नवीनतम सामाजिक कृति का पहला खण्ड ।

हिन्दी उपन्यास की प्रवृत्तियाँ

लेखिका : डॉ० सुषमा

आज के उपन्यासों की प्रवृत्तियों का निरपेक्ष और विशद मूल्यांकन । इस कृति पर लेखिका को डॉक्टरेट की उपाधि से सम्मानित किया गया है । हिन्दी उपन्यास के अध्ययन और आलोचन के लिए महत्वपूर्ण प्रकाशन ।

हमारे नये प्रकाशन

ये कोठेवालियाँ

आज के भारतीय वेश्या-जीवन का **श्री अमृतलाल ना**[गर] द्वारा दिग्दर्शन और विश्लेषण ! एकाधिक नगरों [की] वेश्याओं से भेंट और उनकी ज़बानी उनके दृष्टि[कोण] का वर्णन ! औपन्यासिक आकर्षण के साथ-साथ पुस्तक एक अतीव महत्वपूर्ण समाजशास्त्रीय अध्ययन [सिद्ध] होगी । मूल्य ४ रुपये ५० नये पैसे

कुछ और कविताएँ

अनन्य संवेदनशील कवि **श्री शमशेर बहादुर** की कविताओं का संग्रह—युगचेतना की अद्यतन धारा में स्नात सुसंस्कृत और सहज कवि की वाणी इस संग्रह की कविताओं में मुखरित हो उठी है ।

बँगला काव्य की भूमिका

प्रो० हुमायूँ कबीर द्वारा बंगाल के काव्य-चेतना [का] परिचयात्मक अध्ययन । रवीन्द्र शती के अवसर पर [इस] गम्भीर प्रकाशन की उपयोगिता स्पष्ट है ।

४. पाश्चात्य दर्शन के मूल स्रोत—भारतीय दर्शन की भाँति पाश्चात्य दर्शनों के भी मूल स्रोतों का अध्ययन हमारे लिए आवश्यक है। पाश्चात्य दर्शन के मूल स्रोतों को भी हमें भारतीय दर्शनों के मूल स्रोतों के समान संकलित करना होगा। इन्हें हम पाँच भागों में विभक्त कर दार्शनिकों के प्रतिनिधि ग्रन्थों के उन अंशों के हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत करें जिनमें उनका मूल विचार आ जाए। प्रथम खंड में ग्रीक दार्शनिकों के ग्रन्थों का सटिप्पण हिन्दी अनुवाद दिया जाए, साथ ही उन दार्शनिकों की जीवनी, कृतियों एवं विचारधारा का भी संक्षिप्त किन्तु प्रामाणिक विवरण रहे। दूसरे भाग में मध्यकालीन दार्शनिकों के मूल ग्रन्थों का सपरिचय हिन्दी रूपान्तर प्रस्तुत किया जाए। तीसरे खंड में आधुनिक दार्शनिकों—देकार्त से हीगल तक—का तथा चतुर्थ खंड में हीगलोत्तर दार्शनिकों के मूल विचार रहें। प्रयत्न यह करना होगा कि वर्तमान पाश्चात्य दर्शन की सभी प्रवृत्तियों का समावेश हो जाए। पाँचवें खंड में सूफी, मुस्लिम, पारसी एवं चीनी-जापानी दार्शनिकों के मूल विचारों का सानुवाद अध्ययन प्रस्तुत किया जाए। इन ग्रन्थों के अतिरिक्त हमें यह भी प्रयत्न करना चाहिए कि हम शीघ्र ही सभी पश्चिमी दार्शनिकों के मूल ग्रन्थों से अनुवाद प्रकाशित कर दें। इस कार्य को करने वाले हमारे बीच बहुतेरे ऐसे विद्वान् हैं जो ग्रीक, जर्मन, फ्रेंच, रूसी, अरबी, फारसी आदि का सफलतापूर्वक हिन्दी अनुवाद कर सकते हैं। इन्होंने कुछ के सुन्दर नमूने भी दे दिए हैं। हमें ऐसे लोगों के ज्ञान से लाभान्वित होना है।

५. विश्व-दर्शन का बृहद् इतिहास—अभी तक हिन्दी में विश्व-दर्शन के इतिहास से सम्बन्ध रखने वाले जो ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं वे मात्र परिचय देने वाले हैं। इनका प्रणयन आज से दस-बारह वर्ष पूर्व हुआ था तथा उस समय की परिस्थिति के अनुकूल इनका उपयोग भी था। आज की परिस्थिति बदल गई है। इस बदली हुई परिस्थिति में इनके द्वारा हमारा काम नहीं चल सकता। हमें शीघ्र ही विशेषज्ञों के सम्मिलित सहयोग से विश्व-दर्शन का प्रामाणिक इतिहास तैयार करना होगा। यह इतिहास तीन खंडों में विभाजित होगा और इसके प्रत्येक खंड के सम्पादक पृथक-पृथक होंगे। सम्पादन के समय यह देख लिया जाए कि सम्पादक ने अब तक हिन्दी के माध्यम से विशिष्ट दर्शन पर क्या लिखा है। इस प्रकार प्रत्येक खंड के सम्पादक का चुनाव हो जाने पर अन्य लेखकों की सूची अपने खंड के सम्पादकगण ही तैयार करें और उनके पास पूर्ण विवरण भेज दिया जाए। इतिहास प्रस्तुत करते समय प्रत्येक दार्शनिक का प्रामाणिक जीवन-वृत्त, उसके सभी ग्रन्थों का विवरण एवं उनकी चिंतन-पद्धति का मूल्यांकन किया जाए, साथ ही उससे सम्बन्धित आधार-ग्रन्थों की अद्यतन सूची दी जाए। दार्शनिक प्रवृत्तियों का विवरण एवं मीमांसन करते समय उसके सम्बन्ध में पक्ष तथा विपक्ष दोनों प्रकार की युक्तियाँ दी जाएँ। पाश्चात्यदर्शन का इतिहास तैयार करते समय प्रवृत्तिगत दार्शनिक धारा का भी विवरण दिया जाए। मूल्यांकन प्रस्तुत करते समय विचारों की पुष्टि में विशिष्ट दार्शनिक के मूल विचारों के ही अनुवाद दिए जाएँ किसी आलोचक के विचार नहीं। इसके प्रथम खंड में भारतीय दर्शन, दूसरे में पश्चिमी दर्शन एवं तीसरे मुस्लिम, मंगोलियन एवं पारसी दर्शनों का समावेश हो। इस प्रकार इन ग्रन्थों के प्रकाशित हो जाने से हिन्दी में उच्चस्तर के मौलिक ग्रन्थों के लेखन की सम्भावना हो जाएगी।

इन विषयों की ओर देश के दार्शनिकों का ध्यान जाना आवश्यक है। केन्द्रीय सरकार की हिन्दी-समिति के तत्त्वावधान में विविध विषयों के पारिभाषिक शब्दों का निर्माण-कार्य प्रारम्भ हो चुका है। अतः हमें इस ओर उक्त समिति का ध्यान आकृष्ट करना चाहिए। प्रयत्न करने पर हिन्दी-भाषी सरकारों तथा साहित्य अकादमी से भी आर्थिक अनुदान प्राप्त किया जा सकता है। इसी प्रकार उत्तर प्रदेश की हिन्दी समिति, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् एवं राजस्थान की साहित्य अकादमी के अधिकारियों से मिलकर इस कार्य के लिए हम अग्रसर हो सकते हैं। प्रयत्न करने पर साधनों का अभाव नहीं रहेगा।

भारतीय हिन्दी परिषद्

वर्तनी की एकरूपता के लिए प्रस्तावित नियमों का प्रारूप

प्रस्तावना—अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ ने लेखन-मुद्रण में एकरूपता के लिए वर्तनी सम्बन्धी नियमों का एक प्रारूप प्रचारित किया है। भारतीय हिन्दी परिषद् का ध्यान भाषा की एकरूपता तथा स्थिरीकरण की व्यापक समस्या पर आज से दस वर्ष पहले ही गया था। उसके पटना अधिवेशन में इस विषय की विभिन्न समस्याओं पर विस्तार से विचार भी किया गया था। हिन्दी अनुशीलन का भाषा-अंक भाषा और लेखन-शैली के स्थिरीकरण के उद्देश्य से ही निकाला गया था। परन्तु इस विषय में भारतीय हिन्दी परिषद् ने अब तक अपना कोई निश्चय नहीं प्रकट किया है। प्रकाशक-संघ के उपर्युक्त प्रारूप के प्रचारित होने पर परिषद् की कार्यकारिणी का ध्यान इस ओर विशेष रूप से गया कि कम-से-कम उन समस्याओं पर भारतीय हिन्दी परिषद् को अपना मत निर्धारित कर ही लेना चाहिए जिनके बारे में प्रकाशक संघ निर्णय कर लेना चाहता है। और इस उद्देश्य से उसने एक प्रारूप तैयार करने का कार्य एक समिति को सौंपा जिसके सदस्य डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, डॉ० माताप्रसाद गुप्त, डॉ० हरदेव बाहरी और डॉ० रघुवंश (संयोजक) रखे गए। समिति ने कुछ बैठकें कर निम्नलिखित प्रारूप परिषद् के विचारार्थ निर्मित किया है।

उद्देश्य—वस्तुतः वर्तनी के प्रश्न पर केवल यांत्रिक सुविधा तथा उपयोगिता की दृष्टियों से विचार करना उचित नहीं माना जा सकता। वर्तनी भाषा से घनिष्ट रूपसे सम्बद्ध होती है और भाषा की शैली तथा प्रवाह पर भी उसका प्रभाव पड़ता है। वर्तनी के नियमों का निर्धारण करने में इस कारण भाषा की मौलिक प्रकृति को ध्यान में रखना अत्यन्त आवश्यक है। इधर कुछ साहित्यिक प्रकाशन संस्थाएँ छपाई की सुविधा के नाम पर वर्तनी की जिस पद्धति का अनुसरण कर रही हैं, वह भाषा की प्रकृति के सर्वथा अनुकूल नहीं है और उससे भाषा की शैली बोझिल होती है तथा गति रुद्ध होती है। लेखन-शैली अथवा वर्तनी में संशोधन करने का एक मात्र उद्देश्य यह होना चाहिए कि वह भाषा की मूल प्रकृति को अक्षरों तथा अंकों के माध्यम से व्यक्त करने में अधिक-से-अधिक सहायक हो सके।

नियमों का आधार—भाषा की मूल प्रकृति की रक्षा करते हुए इस सम्बन्ध में नियमों का निर्धारण १—भाषा वैज्ञानिक प्रमाण २—स्पष्टता : वर्तनी के साथ अर्थ की ३—परम्परा तथा ४—सुविधा के आधार पर किया जाना अपेक्षित है। यहाँ यह ध्यान रखने की बात है कि भाषा का मूल रूप उसके प्रयोग करने वाले लेखकों, विचारकों, साहित्यिकों के द्वारा निरूपित होता है, नियमों को बनाने वाले वैयाकरणों से नहीं, वे उनके निरूपक मात्र होते हैं। ऐसी स्थिति में उपर्युक्त आधारों का निरूपण भाषा का प्रयोग करने वालों की दृष्टि से ही होना चाहिए।

नियमावली

१. वियुक्त शब्द, संयुक्त शब्द या हाइफ़न का प्रयोग

१—हिन्दी की मूल प्रकृति विश्लेषणात्मक है, संस्कृत के समान संश्लिष्ट नहीं। समास-युक्त शब्दों का प्रयोग भी संस्कृत की शैली है, हिन्दी की नहीं। हिन्दी में संज्ञा शब्दों का विशेषण रूपमें प्रयोग सर्व प्रचलित है, इस कारण संस्कृत

के समान दो संज्ञा शब्दों में विभक्ति चिह्नों का प्रयोग हुए बिना भी उनका समासयुक्त होना उसमें आवश्यक नहीं है। ऐसी स्थिति में इस सम्बन्ध में हिन्दी में प्रयोग के आधार पर संस्कृत से भिन्न नियमों का अनुसरण आवश्यक है।

(क) हिन्दी की परम्परा कर्मधारय समास में शब्दों को पृथक्-पृथक् रखने की है। जैसे कृष्ण सर्प, गम्भीर पुरुष, शुद्ध जल। यह हिन्दी की विश्लेषणात्मक प्रकृति के अनुकूल है, साथ ही विशेषण तथा विशेष्य की स्पष्ट अलग स्थिति को भी व्यक्त करती है। अतः इसे ही मान्य माना जाय।

(ख) हिन्दी की इसी प्रकृति के अनुसार द्वन्द्व समास की स्थिति में भी शब्दों को अलग-अलग (कामा देकर) रखना उचित है, जैसे राम, कृष्ण, बुद्ध आदि।

(ग) तत्पुरुष समास की वर्तनी प्रयोग के अनुसार विविध रहनी चाहिए, यथा

(अ) दो छोटे-छोटे शब्दों को जोड़ देना अपेक्षित होगा—जैसे, भूदेव, नरपति आदि।

(आ) पहला तत्त्व यदि विकृत है या अपने मूल रूप में है तो भी दोनों शब्दों को जोड़कर लिखना उचित है—जैसे, वाक्कलह, द्विजार्थ, राजपुरुष, पितृसम आदि। वास्तव में ऐसे शब्द संस्कृत के नियमानुसार ही सिद्ध हैं, अतः इनका प्रयोग उसी रूप में करना चाहिए।

(इ) दो बड़े-बड़े शब्दों को अलग रखना ही उचित होगा—जैसे, साहित्य समारोह, शब्द चमत्कार आदि। उन्हें मिलाकर लिखने से भाषा बोझिल होगी। (कर्मधारय)

(ई) दो से अधिक शब्दों के समासयुक्त शब्द पृथक् ही रखे जाएँ—जैसे, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, नागरी प्रचारिणी सभा।

(घ) द्विगु समास जोड़कर लिखना उचित होगा—जैसे, पंचजन्य, त्रिभुवन आदि। ये शब्द भी संस्कृत से ही सिद्ध हैं, हिन्दी में भी इस प्रकार समास जुड़कर एक शब्द बन गए हैं, जैसे दुचिता चौराहा, छपेटी सतनजा आदि।

(ङ) बहुव्रीहि समास तो वास्तव में संस्कृत में भी अर्थ की दृष्टि से एक ही शब्द हो जाता है, हिन्दी में तो वह इस रूप में माना ही जाना चाहिए—जैसे, मेघनाद, महाबाहु, जलजात, अपुत्र, सपत्नीय आदि।

(च) अव्ययीभाव समास की स्थिति में भी शब्दों को जुड़ा ही रखना चाहिए—जैसे, यथास्थान, यथासम्भव आदि।

२—(क) हिन्दी के अपने शब्दों में इस प्रकार का समास करना उसकी अपनी प्रकृति के विरुद्ध होगा। हिन्दी में ऐसे शब्द अलग-अलग रहेंगे अथवा हाइफ़न से जोड़े जाएँगे, जैसे सिगरेट-केस, देख-भाल।

(ख) प्रति (अलग)—प्रति दिन, हर रोज

वाला (अलग)—बाँसुरी वाला, दौड़ने वाला

अपवाद—किन्तु जब 'वाला' लगाकर एक वस्तु या व्यक्ति का अर्थ घोषित होता हो, तो उसे मिलाकर लिखना चाहिए जैसे झुन-झुनवाला, शोरेवाला, अगरवाला।

(ग) 'जी' का प्रयोग अलग होना चाहिए, जैसे हिन्दी में 'श्री' का हो रहा है।

३—(क) परसर्ग अलग रहने चाहिए। वास्तव में इनको विभक्ति कहना ग़लत है। हिन्दी में कारकों को गलत ढंग से कहा जाता रहा है। वस्तुतः ये अन्य परसर्गों के समान ही हैं। अन्य परसर्गों को अलग रखने के बारे में कोई समस्या नहीं है—जैसे, समान, नीचे, ऊपर, तले, भर आदि। अतः ने, को, से, के लिए, का, की, के, में, पर आदि को संज्ञा और सर्वनाम दोनों में अलग रखा जाना चाहिए।

(ख) पूर्वकालिक क्रियाओं का 'कर' अलग रहना चाहिए। ऐसा करने से अधिक स्पष्टता रहेगी, क्योंकि इस प्रकार के अन्य शब्द भी बनते हैं जिनमें भ्रम हो सकता है। साथ ही, उच्चारण में आघात का अन्तर पड़ता है। पूर्वकालिक क्रियाओं के रूप में 'कर' का उच्चारण क्रिया के अंश के बाद अलग, स्वतन्त्र हो जाता है—जैसे, सी कर और सीकर के उच्चारण में अन्तर है, यहाँ अर्थ में भी अन्तर है। मिला देने से उच्चारण स्पष्ट नहीं होगा। मिला देने से 'कर' के 'क' का उच्चारण हिन्दी की प्रकृति के अनुसार स्वरहीन हो जायगा और यहाँ 'कर' का स्पष्ट उच्चारण आवश्यक है—जैसे जा कर, खा कर, पी कर, सो कर।

नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी के कुछ अलभ्य ग्रन्थ

जिनकी अत्यन्त सीमित संख्या उपलब्ध है, संस्थाओं और पुस्तकालयों के लिए संरक्षणीय हैं

पृथ्वीराज रासो : सम्पादक—श्री श्यामसुन्दरदास, मूल्य प्रति सं० २.७५। पूरी पुस्तक २२ संख्याओं में प्रकाशित हुई है। इस समय इनमें से संख्या २, ३, ५, ६, ८ और ९ अप्राप्य हैं।

हिन्दी शब्दसागर : सम्पादक—श्री श्यामसुन्दरदास। हिन्दी का सबसे बड़ा कोश ८ खण्डों में प्रकाशित हुआ है। संप्रति खण्ड १, २, ५ प्राप्य हैं। दाम प्राप्य खण्डों का ३३.००।

संक्षिप्त हिन्दी शब्दसागर : सम्पादक—श्री रामचन्द्र वर्मा, मूल्य १८.००। उक्त बृहत् हिन्दी शब्दसागर के संक्षिप्त संस्करण की छठी आवृत्ति है जो बिलकुल अद्यतन रूप में प्रकाशित की गई है।

श्री सम्पूर्णानन्द अभिनन्दन ग्रंथ : सम्पादक—आचार्य नरेन्द्रदेव। श्री कृष्णदेवप्रसाद गौड़, मूल्य १५.००। विविध विषयों पर अधिकारी विद्वानों के चुने लेखों का ऐसा संग्रह अत्यन्त दुर्लभ है।

हीरक जयन्ती ग्रंथ : सम्पादक—डॉ० श्रीकृष्णलाल व श्री करुणापति त्रिपाठी, मूल्य १२.५०, नागरी प्रचारिणी सभा के हीरक जयन्ती के अवसर पर यह बहुमूल्य ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है। इसमें विविध विषयों पर गवेषणात्मक लेखों का सम्पादन हुआ है। साथ ही भारत की विविध भाषाओं और साहित्यिक विगत वर्षों का सिंहावलोकन भी दिया गया है।

अर्द्धशती इतिहास : सम्पादक—श्री वेदव्रत शास्त्री, मूल्य ३.००।

मुगल दरबार : चार भागों में। अनुवादक—श्री ब्रजरत्नदास, मूल्य २२.००। मुगल दरबार के प्रधान सामन्तों और प्रमुख व्यक्तियों का ऐतिहासिक विवेचन है।

अकबरी दरबार : तीन भागों में। अनुवादक श्री रामचन्द्र वर्मा, मूल्य १२.००। आईने-अकबरी का यह हिन्दी अनुवाद है। इसमें अकबर बादशाह के दरबारियों का जीवनचरित दिया हुआ है।

बीसलदेव रासो : सम्पादक—श्री सत्यजीवन वर्मा, मूल्य २.५०। इसमें बीसलदेव (विग्रहराज चतुर्थ) के जीवन की मुख्य घटनाओं और युद्धों का वर्णन है।

बाँकीदास ग्रंथावली : तीन भागों में। सम्पादक—रामनारायण दूगड़, मूल्य प्रति भाग १.५०। डिंगल भाषा के महाकवि बाँकीदासजी की समस्त कृतियों का संग्रह है। पाद-टिप्पणी और विस्तृत भूमिका भी दी गई है।

ब्रजनिधि ग्रंथावली : सम्पादक—पुरोहित हरिनारायण शर्मा, मूल्य ३.७५।

शिखर वंशोत्पत्ति : सम्पादक—पुरोहित हरिनारायण शर्मा, मूल्य १.००। कविवर गोपालजी द्वारा रचित सीकर राज्य का छंदोबद्ध इतिहास है।

रघुनाथरूपक गीतारो : सम्पादक—श्री महताबचन्द खारेड़, मूल्य २.५०। डिंगल भाषा के महाकवि मंछ (मनसाराम) का प्रसिद्ध ग्रन्थ है। इसमें रामचन्द्र की कथा का वर्णन है।

राजरूपक : सम्पादक—श्री पं० रामकर्णजी, मूल्य ६.२५। वीरतापूर्ण ऐतिहासिक काव्य-ग्रन्थ है।

ढोलामारूरा दूहा : सम्पादक—श्री रामसिंह, श्री सूर्यकरण पारीक, मूल्य ८.००। राजस्थानी भाषा की एक प्रेम-कहानी जो काव्य-रूप में लिखी गई है।

(ग) संयुक्त क्रियाओं में दोनों क्रियाएँ अलग होती हैं, उनको अलग रखना चाहिए। वस्तुतः ऐसा ही होता है, यहाँ कोई समस्या नहीं है।

२. या, ये, अथवा आ, ए, ई अन्त्य ध्वनियों के रखने की समस्या

इस विषय में पहले हिन्दी में लगभग सर्वमान्य मत था कि इनका वर्तनी में प्रयोग उच्चारण के अनुसार किया जाय। अर्थात् बिना इस बात को ध्यान दिए शब्द संज्ञा, विशेषण अथवा भूतकालिक कृदन्त आदि का पुंलिंग या एकवचन रूप केवल स्वर में अन्त होता है अथवा 'य' के साथ, इसकी बहुवचन तथा स्त्रीलिंग की वर्तनी में उच्चारण के अनुसार स्वर का ही प्रयोग किया जाता था—अर्थात्, गाय-गाएँ, नया-नई, गया-गए। इधर वर्तनी की एकरूपता की दृष्टि से यह नियम प्रतिपादित किया गया कि जो शब्द पुंलिंग एकवचन में केवल स्वरांत हों वे बहुवचन और स्त्रीलिंग रूपों में भी स्वरांत रहने चाहिए, किन्तु जिनके पुंलिंग एकवचन रूप में अंत में-'य' अथवा 'या' आता हो उनके बहुवचन और स्त्रीलिंग रूपों में 'ये'-'यी' होना चाहिए। यह नियम अपनी स्पष्टता के कारण इधर कुछ स्वीकृति भी पा रहा है।

परन्तु ध्वनियों के नियम तथा उच्चारण की स्पष्टता की दृष्टि से उच्चारण के अनुसार वर्तनी में अन्त्य स्वरों का ही प्रयोग अधिक संगत जान पड़ता है। अन्ततः यह नियम ही अधिक सुगम सिद्ध होगा, क्योंकि वर्तनी का सम्बन्ध उच्चारण से भी मानना पड़ेगा वर्तनी के आधार में सुविधा हो यह भी एक विचारणीय बात है। साथ ही -य-या के स्थान पर -ई,-ए का परिवर्तन समझना भी कठिन नहीं है। क्योंकि अर्ध स्वर 'य' और स्वर 'इ' में निकटता का सम्बन्ध है।

(इस सम्बन्ध में अखिल भारतीय प्रकाशक संघ के प्रस्ताव तो और भी अधिक भ्रम उत्पन्न करने वाले हैं)

३. हिन्दी में प्रयुक्त संस्कृत शब्दों का प्रयोग

१—हिन्दी में संस्कृत मूल के तद्भव शब्दों का प्रयोग होना तो स्वाभाविक ही है, और इस प्रवृत्ति पर बल देना चाहिए।

२—संस्कृत तत्सम रूपों का प्रयोग शुद्ध रूप में ही होना चाहिए। इससे शब्द-रूपों को भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से समझने में आसानी होगी, सम्पूर्ण भारतीय भाषाओं में प्रयुक्त तत्सम शब्दों में एकरूपता रहेगी तथा शब्दों की व्याख्या करना आसान होगा—यथा

महत्+त्व,, प्रत्यय=महत्त्व, न कि महत्व
उत्+ज्वल प्रत्यय=उज्ज्वल न कि उज्वल
तत्+त्व =तत्त्व, न कि तत्व

३—हलन्त शब्दों में हलन्त रखना भी उपर्युक्त दृष्टि से आवश्यक होगा। यथा, विद्वान्, महान् आदि।

४. विदेशी ध्वनियों की समस्या

१—फ़ारसी-अरबी की कुछ ध्वनियाँ हिन्दी में आ गई हैं। विशेषकर उत्तर भारत के पच्छिमी क्षेत्रों में उनका प्रयोग बहुत होता है। यों फ़ारसी-अरबी की सारी ध्वनियाँ उर्दू में भी तद्वत् नहीं रही हैं। जैसे 'क़' ध्वनि का उच्चारण उर्दू में भी शुद्धतावादी ही बोलते हैं। ऐसी स्थिति में ख़, ज़, ग़, फ़, ध्वनियों को हिन्दी में स्वीकार कर लेना चाहिए। इनके विरोधी जोड़े भी हिन्दी में हैं। ज़, फ़, अंग्रेज़ी से भी प्राप्त हैं। अतः शुद्धता के नाते इन ध्वनियों को हिन्दी में रखना चाहिए।

२—अन्य भाषाओं के अनेक शब्द जिनके उच्चारण में बीच के अक्षर की अर्ध-ध्वनि और पूर्ण-ध्वनि सन्देहास्पद हों, उन्हें पूरे अक्षर से ही लिखना चाहिए—जैसे, गरमी, सरदी, शरम, बरफ़, गरदन, बरतन, फ़ुरसत।

३—शुद्धता की दृष्टि से अंग्रेजी शब्दों के उच्चारण की आवश्यकता के अनुसार वर्तनी में अर्धचन्द्र का प्रयोग करना अपेक्षित है—जैसे, डॉक्टर, नॉर्मल, ऑपरेशन आदि।

५. अनुस्वार और चन्द्रबिन्दु

१—संस्कृत में अनुस्वार तथा पंचम वर्ण का विकल्प से प्रयोग होता है। हिन्दी में भी यही पद्धति प्रचलित है। परन्तु लेखन तथा छपाई में अनुस्वार की बिन्दी के छूट जाने, मिट जाने तथा गिर जाने की बहुत सम्भावना रहती है। हिन्दी में अनुनासिक ध्वनियों के प्रयोग की वैसे भी बहुत प्रवृत्ति है, इस कारण भी यदि वर्तनी में बिन्दुओं का प्रयोग कम किया जा सके तो सुविधाजनक होगा।

[शेष पृष्ठ ३१६ पर]

पुस्तक-परिचय

उपन्यास

हौलदार श्री शैलेश भटियानी का तीसरा उपन्यास है। इसकी शैली भी लेखक के 'बोरीवली से बोरीबन्दर तक' तथा 'कबूतरखाना' नामक दोनों उपन्यासों की भाँति ही रोचक और आकर्षक है। इस उपन्यास में श्री भटियानी ने कुमायूँ के एक ऐसे व्यक्ति के चरित्र का चित्रण किया है, जो अपने घर से इस आन पर निकलकर पलटन में भरती होने गया था कि वह 'हौलदार' बनकर ही वहाँ लौटेगा, किन्तु दुर्भाग्यवश वहाँ पर राइफल की बुलट-चोट से उसकी बाईं टाँग निकम्मी हो गई। उसी डूँगरासिंह नामक लँगड़े हौलदार की करुणा और कुण्ठाओं का मर्मवेधी चित्रण इस उपन्यास में किया गया है। आँचलिक पृष्ठभूमि पर आधारित यह उपन्यास पाठकों को अत्यंत भाएगा, ऐसी आशा है। क्राउन साइज़ के ३६२ पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास **आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली** ने प्रकाशित किया है और छः रुपए में प्राप्य है।

*   *   *

ठग गुजराती भाषा के प्रख्यात उपन्यासकार श्री रमणलाल देसाई के उपन्यास का हिन्दी-अनुवाद है। इसका अनुवाद किया है श्री चन्दुलाल परीख ने। इस उपन्यास में लेखक ने अंग्रेजी शासन-काल के प्रारम्भिक दिनों में व्याप्त ठगी के आंदोलनों का ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में चित्रण किया है। साहस, निडरता और देश-भक्ति ऐसे ठगों का अनिवार्य गुण होता था। ऐसे ठग जहाँ धनिकों द्वारा किए जाने वाले निरीह जनता के शोषण का अन्त करने के लिए कृत-संकल्प रहते थे। वहाँ वे नारियों का पूरा-पूरा आदर करते थे। इस उपन्यास से पाठकों को जहाँ मनोरंजन होगा, वहाँ वे ठगों के इस समुदाय से सम्बंधित सभी तथ्यों से भी भली-भाँति अवगत हो सकेंगे। क्राउन साइज़ के १३० पृष्ठ का यह उपन्यास **वोरा एण्ड कम्पनी, बम्बई** ने प्रकाशित किया है और दो रुपए में प्राप्य है।

*   *   *

महाराणा उदयसिंह नामक उपन्यास भी गुजराती के अनन्य उपन्यासकार श्री रमणलाल देसाई की अनुपम कृति है। इसमें उनके 'पहाड़ के फूल' नामक उपन्यास का उत्तरवर्ती अंश दिया गया है और यह राजस्थान के इतिहास से संबंधित है। इस उपन्यास में पाठकों को उदयसिंह के चरित्र के अतिरिक्त जगमल और पन्ना-जैसे असंख्य क्षत्रिय वीरों की अपूर्व वीरता और बलिदान की गौरव-गाथा पढ़ने को मिलेगी। इस उपन्यास से पाठकों को इस बात का भी समुचित उत्तर मिल जाएगा कि मध्य-युग में मुगलों के निरन्तर आक्रमण होते रहने पर भी 'कायर' और 'विलासी' उदयसिंह किस प्रकार मेवाड़ पर निष्कण्टक राज्य कर सका। क्राउन साइज़ के ३०८ पृष्ठ का श्री श्यामलाल मेड़ द्वारा अनूदित और **वोरा एण्ड कम्पनी, बम्बई** द्वारा प्रकाशित यह सजिल्द उपन्यास पाँच रुपए पचास नए पैसे में प्राप्तव्य है।

*   *   *

राजकन्या गुजराती के लब्धप्रतिष्ठ कथाकार श्री धूमकेतु के उपन्यास का हिन्दी अनुवाद है। इसकी अनुवादक हैं: श्रीमती चन्द्रानी किशोरीरमण टण्डन और प्रकाशक हैं **वोरा एंड कम्पनी, बम्बई**। इस उपन्यास में भारतीय इतिहास के गौरवशाली युग 'चालुक्य-काल' के स्वर्ण-पृष्ठों के प्रसंगों के आधार पर मीनलदेवी नामक ऐसी राजकन्या का चरित्र-चित्रण किया गया है, जिसका गुजरात के प्रति सहज आकर्षण है और जो भगवान् सोमनाथ के प्रति अपने हृदय में असीम भक्ति और श्रद्धा रखकर एक महा शक्तिशाली और चक्रवर्ती राज्य स्थापित करने का स्वप्न अपने मानस में सँजोये हुए है। क्राउन साइज़ के ३०० पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास पाँच रुपये पचास नए पैसे में मिल सकता है।

*   *   *

प्रेम-संगीत नामक यह उपन्यास पञ्जाबी के सुप्रसिद्ध उपन्यासकार श्री नानकसिंह के एक सामाजिक उपन्यास का हिंदी अनुवाद है। अनुवाद श्री प्रेमसिंह ने किया है और प्रकाशक हैं **लोक-साहित्य प्रकाशन, अमृतसर**। इसमें लेखक ने समाज के जिस वर्ग की कहानी हमारे सामने रखी है, वह वास्तव में पठनीय और मननीय है। क्राउन साइज के १६४ पृष्ठ का यह उपन्यास दो रुपए पचास नए पैसे में प्राप्य है।

* * *

आहत हिन्दी के प्रख्यात ऐतिहासिक उपन्यासकार श्री वृन्दावनलाल वर्मा का नवीनतम सामाजिक उपन्यास है। इस उपन्यास में कुछ ऐसी घटनाओं को आधार बनाया गया है जो बाल-मनोविज्ञान से सम्बंध रखती हैं। प्रस्तुत उपन्यास के माध्यम से लेखक ने बातें अपने पाठकों को समझाने का प्रयास किया है, जिनकी जानकारी उनके लिए अत्यंत आवश्यक है। कभी-कभी हम अपने छोटे बच्चों के प्रति अपने अज्ञान के कारण ऐसा रुख अपना बैठते हैं, जो उनमें समाज के प्रति एक विद्रोह उत्पन्न कर देता है। इस उपन्यास को पढ़कर हमारे पाठक इसका समाधान प्राप्त कर सकेंगे। क्राउन साइज के २४० पृष्ठ का यह उपन्यास **मयूर प्रकाशन, झांसी** ने प्रकाशित किया है और यह तीन रुपए में मिल सकता है।

* * *

उदय किरण श्री वृन्दावनलाल वर्मा का सहकारी आंदोलन से सम्बंधित नवीनतम सामाजिक उपन्यास है। इस उपन्यास के माध्यम से लेखक ने सामाजिक परिस्थितियों में सहकारिता की उपयोगिता पर प्रकाश डाला है। आज जबकि हमारी सरकार सहकारी-आंदोलन को हर दिशा में अपना रही है, तब इस पृष्ठभूमि को अपनाकर ऐसे उपन्यास का सृजन करना निश्चय ही स्वागत के योग्य है। वर्माजी स्वयं इस विषय के विशेषज्ञ हैं, अतः उनकी लेखनी द्वारा प्रसूत यह उपन्यास निश्चय ही हमारे लिए एक नवीन दिशा का निर्देश करता है। क्राउन साइज के १६२ पृष्ठ का यह उपन्यास **मयूर प्रकाशन, झांसी** ने प्रकाशित किया है और दो रुपए में प्राप्य है।

* * *

डॉक्टर देव पंजाबी की प्रमुख कवयित्री श्रीमती अमृता-प्रीतम का **हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली-शाहदरा** की ओर से प्रकाशित उपन्यास है। इसमें लेखिका ने विवाह की समस्या का समाधान एक नारी के दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया है। रोमांटिक और कोमल भावनाओं से भरपूर यह उपन्यास एक रुपये में प्राप्य है।

* * *

पतिता हिंदी के प्रख्यात उपन्यासकार आचार्य चतुरसेन शास्त्री द्वारा लिखित **हिन्द पॉकेट बुक्स, शाहदरा-दिल्ली** द्वारा प्रकाशित आठ कहानियों का संकलन है। इसमें आचार्यजी की पतिता, दुखवा मैं कासे कहूँ मोरी सजनी, प्यार, दे खुदा की राह पर, पुरुषत्व, मास्टर साहब, नवाब ननकू और खूनी शीर्षक कहानियाँ समाविष्ट हैं। आचार्य-जी की सशक्त शैली, अपूर्व-वातावरण-सृष्टि और पात्रों का जीवंत चित्रण पाठक इन कहानियों में देखेंगे। एक रुपये में प्राप्य।

* * *

छलना में विश्व-ख्याति के कलाकार मैक्सिम गोर्की का एक लघु उपन्यास 'मालवा' (छलना) और दो कहानियाँ: 'छब्बीस युवक और एक युवती' तथा 'एक इन्सान का जन्म' संकलित हैं। इनका अनुवाद श्री भैरवप्रसाद गुप्त ने किया है और प्रकाशन किया है **हिन्द पॉकेट बुक्स, शाहदरा-दिल्ली** ने। एक रुपये में प्राप्य है।

* * *

वेदना में श्री करतारसिंह सूरी की 'वेदना', 'रमज़ान', 'चित्री', 'चँदोआ', 'मास्टर मामूला', 'पुराना पिंजरा', 'दूधिया ग्राम', 'भगवान् मँहगा है', 'यही तो भेद है' और 'दौरा' शीर्षक दस कहानियाँ संकलित हैं। श्री सूरी की ये कहानियाँ मूलतः पंजाबी में लिखी गई थीं। **लोक साहित्य प्रकाशन, अमृतसर** द्वारा प्रकाशित यह सजिल्द पुस्तक दो रुपये पचास नए पैसे में प्राप्य है।

* * *

रश्मि समूह में हिंदी के प्रख्यात कथाकार श्री वृन्दावनलाल वर्मा द्वारा लिखित बाईस ऐसी कहानियों का संकलन प्रस्तुत किया गया है, जिन्हें पढ़कर हमारे युवक-युवतियाँ और सामान्यतः सभी देश-वासी एक नई प्रेरणा, उत्साह

और स्फूर्ति ग्रहण कर सकते हैं। प्रायः सारी ही कहानियाँ सचित्र होने के कारण और भी उपादेय हो गई हैं। **मयूर प्रकाशन, झाँसी** द्वारा प्रकाशित यह प्रेरक पुस्तक एक रुपया पच्चीस नए पैसे में मिल सकती है।

* * *

नाटक

आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली द्वारा प्रकाशित और श्री उदयशंकर भट्ट द्वारा लिखित **कालिदास, मुक्तिदूत** और **क्रांतिकारी** नामक नाटकों के पुनर्मुद्रित नये संस्करण हैं। 'कालिदास' में लेखक के 'कालिदास', 'मेघदूत' और 'विक्रमोर्वशी' नामक ध्वनि-रूपक संकलित हैं, 'मुक्तिदूत' और 'क्रांतिकारी' पूरे नाटक हैं। ये सभी पुस्तकें पठनीय और संग्रहाव्य हैं। तीनों नाटक दो-दो रुपये में मिल सकते हैं।

* * *

बिना बुलाए पंच में श्री देवराज 'दिनेश' के किस्मत का खेल, शीर्षक की खोज, बटुए, प्रवंचक, भगवान् बचाए ऐसे मित्रों से, बुरे फँसे मेहमान बनकर, कविता के चक्कर में, प्रभु की माया, गाड़ी का सफर, खलीफाजी बनाम लतीफाजी, पिकनिक, गुरु बनकर बुरे फँसे और बिना बुलाए पंच शीर्षक तेरह हास्य एकांकियों का संग्रह प्रस्तुत किया गया है। प्रायः सभी एकांकी रोचक शैली और सरल भाषा में लिखे हुए होने के कारण पठनीय बन पड़े हैं। साथ में दिये गए चित्रों से उनकी उपादेयता और भी बढ़ गई है। **आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज़ के १४८ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक तीन रुपए में मिल सकती है।

* * *

सफर के साथी नामक इस पुस्तक में श्री कणाद ऋषि भटनागर के 'सफर के साथी', 'बोनस', 'ऊन की लच्छी', 'सबूत' और 'लाटरी' नामक पाँच हास्य एकांकियों का संकलन है। प्रायः सभी एकांकी अभिनीत हो चुके हैं। दृश्य और श्रव्य दोनों ही दृष्टियों से इस संग्रह के एकांकी उपादेय हैं। **आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज़ के ९६ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक दो रुपये में प्राप्य है।

* * *

कविता

सड़कों पे ढले साए में श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क' की सन् १९५३ से १९६० तक की अवधि में लिखी गई कविताओं का संकलन प्रस्तुत किया गया है। इसमें संकलित कविताएँ आधुनिक हिंदीकाव्य-धारा का पूरा प्रतिनिधित्व करते हुए भी न तो बहुत बौद्धिक हैं, और न जटिलता के कारण दुरूह ही। अपने उपन्यासों, कहानियों और नाटकों की भाँति ही श्री अश्क की सरल भाषा, रोचक शैली इन कविताओं का आकर्षण है। 'प्रात प्रदीप', 'ऊर्मियाँ', 'दीप जलेगा', 'बरगद की बेटी' तथा 'चाँदनी रात और अजगर' नामक पाँच काव्य-ग्रन्थों के बाद अश्कजी की यह नवीन कृति भी उसी ताजगी और प्रौढ़ता की सुगंध से सराबोर है। **नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद** की ओर से प्रकाशित डिमाई साइज़ के ११२ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक पाँच रुपये में प्राप्य है।

* * *

आंध्र के हिन्दी-कवि नामक इस पुस्तक में इसके सम्पादक **डॉ० राजकिशोर पांडेय** ने आंध्र प्रदेश के नये-पुराने लगभग ४३ कवियों की रचनाओं का संकलन प्रस्तुत किया है। रचनाओं के साथ प्रत्येक कवि का सचित्र परिचय भी दिया गया है। केवल श्री बलवीरसहाय का चित्र इसमें नहीं दिया गया, जो अखरता है। श्री वंशीधर विद्यालंकार की रचनाओं का न होना भी इस संकलन की उपादेयता कम करता है। फिर भी यह प्रयत्न सर्वथा प्रशंसनीय और स्वागत के योग्य है। अहिंदी-भाषी प्रदेश से ऐसे संकलन का प्रकाशन करना बड़े साहस का कार्य है। इसके लिए इसकी प्रकाशिका **सहकारी जन-साहित्य प्रकाशन समिति, हैदराबाद** धन्यवाद की पात्री है। डिमाई साइज़ के १७४ पृष्ठ की यह पुस्तक दो रुपये पचास नए पैसे में प्राप्य है।

*

आगामी मास के प्रकाशन

आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली

—**प्रतिनिधि हास्य एकांकी**, सर्वश्री कृष्ण, मनमोहन सरल, अरुण

—**जंगल की ओर**, श्री सुरेश वैद्य

—**खेतों की गोद में**, श्री पीताम्बर पटेल, उपन्यास

—**दिमाग का बीमा**, श्री न० र० टण्डन, एकांकी संग्रह

—**परदा उठने से पहले**, श्री राजेन्द्रकुमार शर्मा, एकांकी संग्रह

—**विश्व के त्यौहार**, श्री रमेशकुमार माहेश्वरी

—**दुनिया के आश्चर्य**, श्री धर्मपाल शास्त्री

—**देश-विदेश की विचित्र प्रथाएँ**, श्री रमेशचन्द्र प्रेम

गयाप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा

—**राष्ट्रीयता** डॉ० गुलाबराय

—**भाग्य-निर्माता**, डॉ० राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी

—**सोवियत संघ का आर्थिक विकास**, श्री देराश्री व शास्त्री

—**आर्थिक और वाणिज्य भूगोल**, (द्वितीय संस्करण डॉ० मामोरिया

—**गणित शिक्षण**, श्री डी० एस० रावत

—**विद्यालयों में मापन एवं मूल्यांकन**, श्री डी० एस० रावत

—**व्यावहारिक मनोविज्ञान**, श्री आर० आर० त्रिपाठी

—**हमारे पड़ोसी देश**, श्री एल० जी० नेने

—**हमारा इतिहास**, श्री एल० जी० नेने

—**पूज्य बापू और उनके शिष्य**, श्री एल० जी० नेने

प्रगतिशील प्रकाशन, दिल्ली

—**आजादी के बाद की सर्वश्रेष्ठ उर्दू कहानियाँ**, सम्पा० श्री कृश्नचन्द्र

—**प्रसिद्ध व्यक्तियों के प्रेम-पत्र**, सम्पा० श्री विजयचन्द

—**उर्दू की बेहतरीन रुबाइयाँ और कते**, सम्पा० श्री प्रकाश पण्डित

—**वेश्या**, श्री विजयचन्द

—**हीर**, श्री वेदप्रकाश, उपन्यास

—**सिन्दूरी ग्रह की यात्रा**, श्री रमेश वर्मा

बंसल एण्ड कं०, दिल्ली

—**विद्यापति एक तुलनात्मक समीक्षा**, श्री जयनाथ नलिन

—**राधिकारमणप्रसाद सिंह : व्यक्तित्व और कृतित्व**, डॉ० पद्मसिंह शर्मा कमलेश

बालसदन, नई दिल्ली

—**दो भाई**, 'प्रशान्त', बाल-उपन्यास

—**रूस की लोककथाएँ**, श्री सत्यभूषण वर्मा

राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली

—**स्वास्तिका**, श्री ब्रजकिशोर 'नारायण', उपन्यास

—**हिन्दी के लोकप्रिय कवि नीरज**, सम्पा० श्री क्षेमचन्द्र 'सुमन'

—**जीने की कला**, श्री सन्तराम

—**सोया हुआ शहर**, आचार्य चतुरसेन, कहानी संग्रह

—**त्रिभंगिमा**, श्री 'बच्चन', कविता

—**पाप के परे**, श्री राजेन्द्र अवस्थी 'तृषित', उपन्यास

रूपकमल प्रकाशन, दिल्ली
—**शरत-ग्रंथावली**, श्री हंसकुमार तिवारी
—**गीत सो गए**, श्री जयप्रकाश शर्मा, उपन्यास
—**सुखद निद्रा**, श्री शामजी कपूर, मनोविज्ञान
—**शंबर कन्या**, श्री के० एम० मुन्शी, नाटक
लोकचेतना प्रकाशन, जबलपुर
—**गीतांजलि**, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, अनु० डॉ० भवानीप्रसाद तिवारी
—**पंचपात्र**, श्री मामा वरेरकर, अनु० श्री र० र० सर्वटे, एकांकी
—**अमर बलिदान**, श्री नरेन्द्र राव, नाटक
—**सात लाख में एक**, श्री मामा वरेरकर, अनु० श्री र० र० सर्वटे, उपन्यास
—**कलावे**, श्री जयसिंह, उपन्यास
शिवलाल अग्रवाल एण्ड कं० प्रा० लि०, आगरा
—**मराठों का नवीन इतिहास भाग २**, श्री जी० एस० सरदेसाई
—**मुगल शासन का पतन भाग १**, श्री जदुनाथ सरकार
—**कस्तूरबा**, डॉ० सुशीला नैयर
सरस्वती पुस्तक सदन, आगरा
—**तुलसी मानस रत्नाकर**, डॉ० भाग्यवतीसिंह
साहित्य संस्थान, मथुरा
—**साहित्य लहरी**, श्री प्रभुदयाल मीतल
हिन्दिया प्रकाशन, दिल्ली
—**चम्बल के किनारे** श्री सुमेरसिंह दइया, उपन्यास
—**बरफ की समाधि**, श्री यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र', कहानी-संग्रह
—**विनीता**, श्री बसन्तकुमार माथुर, उपन्यास
हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली
कविवर प्रसाद, आचार्य राजेन्द्र मोहन
—**हिन्दी साहित्य और उसकी प्रमुख प्रवृत्तियाँ**, डॉ० गोविन्दराम शर्मा
—**जायसी की काव्य-साधना**, पु० मु०, श्री दानबहादुर पाठक

जनवरी मास के प्रकाशन

आलोचना-निबन्ध

कृष्णचन्द्र वर्मा, सं०, **चन्द्रावली नाटिका**, १२८, क्रा०, सरस्वती पुस्तक सदन, आगरा — १.५०

पद्मसिंह शर्मा कमलेश, **हिन्दी गद्य विधाएँ और विकास**, क्रा०, बंसल एण्ड कम्पनी, दिल्ली — २.००

प्रतापचन्द, **हिन्दी के प्रमुख कवि और उनकी शैलियाँ**, ८०, क्रा०, सरस्वती पुस्तक सदन, आगरा — १.००

प्रतापचन्द, **हिन्दी के प्रमुख गद्यकार और उनकी शैलियाँ**, १२८, क्रा०, सरस्वती पुस्तक सदन, आगरा — १.००

ब्रजवासीलाल श्रीवास्तव, डॉ०, **करुण रस : मध्ययुगीन हिन्दी रामकाव्य के परिवेश में**, ३५६, डि०, हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली — १२.५०

श्रीनारायण अग्निहोत्री, **हिन्दी उपन्यास साहित्य का शास्त्रीय विवेचन**, ४००, डि०, सरस्वती पुस्तक सदन, आगरा — ८.००

संसारचन्द्र डॉ०, **सटक सीताराम**, पु० मु०, १७०, क्रा०, ओरिएण्टल बुक डिपो, दिल्ली — ३.००

सरनामसिंह शर्मा डॉ०, **पालि साहित्य और समीक्षा**, १८८, क्रा०, हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली — ३.१२

उपन्यास

कमल शुक्ल, **कब तक पंथ निहारू**, १४४, क्रा०, हिन्दिया प्रकाशन, दिल्ली — ३.००

गुरुदत्त, **लुढ़कते पत्थर**, पु० मु०, ३२८, क्रा०, ओरिएण्टल बुक डिपो, दिल्ली — ६.००

द्वारकानाथ माधवराव, **उल्कापात**, १४४, क्रा०, हिन्दिया प्रकाशन, दिल्ली — ३.००

र० प्र० चन्द्र, **जलता जीवन बहते आँसू**, १४२, क्रा०, हिन्दिया प्रकाशन, दिल्ली — २.५०

लिन युताङ, अनु०, आशतोष, **प्रेमिका**, ११२, पाकेट, हिन्द पाकेट बुक्स, प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली — १.००

श्रीराम शर्मा 'राम', **उत्सर्ग**, १६२, क्रा०, हिन्दिया प्रकाशन, दिल्ली — ३.७५

सत्यपाल विद्यालंकार, **अजगर बाघ और देवता**, १५२, पाकेट, हिन्द पाकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली — १.००

एकांकी

उदयशंकर भट्ट, **जवानी और छः एकांकी**, १६०, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — ३.००

कविता-शायरी

बच्चन, डॉ०, **मधुबाला**, पु० मु०, १२६, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली — २.००

मोहनलाल शार्दूल, **पथ के गीत**, ६२, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — २.५०

श्री रामनाथ 'सुमन', **जिगर की शायरी**, १२८, पाकेट, हिन्द पाकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली — १.००

कहानी

आचार्य चतुरसेन, **धरती और आसमान**, २५४, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली — ४.००

चन्द्रगुप्त विद्यालंकार, **पहला नास्तिक**, १८४, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली — ३.००

धर्मपुत्र, २०४, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली — ३.००

प्रकाश पण्डित, सम्पा०, **उर्दू की सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ**, १४०, पाकेट, हिन्द पाकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली — १.००

मोहन कल्याल, **अजी मैंने कहा**, ९६, क्रा०, रूपकमल प्रकाशन, दिल्ली — २.००

रांगेय राघव, डॉ०, **कल्पना**, १४०, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली — २.५०

राधेश्याम पुरोहित, सम्पा०, **बंगला की सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ**, १२८, पाकेट, हिन्द पाकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली — १.००

बाल-साहित्य—प्रौढ़-साहित्य

अनन्त मिश्र, **विश्वशान्ति और अणुव्रत**, ६४, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — १.००

आचार्य श्री तुलसी, **नैतिक संजीवन**, १९२, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — ३.००

आनन्द मेहरा, **आकाश पर चढ़ाई**, १६, क्रा०, हिन्दिया प्रकाशन, दिल्ली — ०.५०

कमला रत्नम्, **अक्षर गीत**, ३६, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली — २.००

प्रशान्त, **नटखट पिंकू**, पु० मु०, २४, कापी, ओरिएण्टल बुक डिपो, दिल्ली — ०.७५

प्रशान्त, **पोम्पू गुड्डा**, ९६, पाकेट, बाल सदन, नई दिल्ली — १.२५

प्राणनाथ वानप्रस्थी, **अच्छे बच्चे**, ४८, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली — ०.५०

प्राणनाथ वानप्रस्थी, **साहसी बालक**, ५२, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली — ०.५०

प्राणनाथ सेठ, **हमारा भारत**, पु० मु०, ५२, डि०, बंसल एण्ड कम्पनी, दिल्ली — १.२२

भगतसिंह, **ईसप की कहानियाँ**, २४, क्रा०, हेमकुण्ठ प्रेस, नई दिल्ली — १.२५

मुनि बुद्धमल, **श्रमण संस्कृति के अंचल में**, १४४, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — २.५०

यशपाल जैन, **एक थी चिड़िया**, ३२, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली — १.००

शर्मा तथा माथुर, **इण्डोनेशिया**, पु० मु०, ३६, डि०, ओरिएण्टल बुक डिपो, दिल्ली — ०.७५

शिवमूर्ति सिंह वत्स, **बिहार की लोककथाएँ**—२, ६४, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — १.५०

शिवमूर्ति सिंह वत्स, **भोजपुर की लोककथाएँ**—२, ५६, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — १.५०

शिवमूर्ति सिंह वत्स, **मिथिला की लोककथाएँ**—२, ६४, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — १.५०

सत्यभूषण वर्मा, **चीन की लोककथाएँ**, ४०, क्रा०, बाल सदन, नई दिल्ली — १.२५

सत्यभूषण वर्मा, **जापान की लोककथाएँ**, ४०, क्रा०, बाल सदन, नई दिल्ली — १.२५

सन्त गोकुलचन्द्र, **पर्दे के खेल**, ५५, क्रा०, ओरिएण्टल बुक डिपो, दिल्ली — ०.७५

सावित्री देवी वर्मा, **गजरा**, ४४, क्रा०, हेमकुण्ठ प्रेस, नई दिल्ली — १.२५

हरिकृष्ण प्रेमी, **हम आजाद हुए**, पु० मु०, ४८, डि०, बंसल एण्ड कम्पनी, दिल्ली १.२५

विविध

अनन्त कवि, **चम्पू भारत**, ३२, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली ०.३७

कृश्नचन्दर, **घूंघट में गोरी जले**, १२८, पाकेट, हिन्द पाकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली १.००

गांधीजी, **आत्मकथा (सम्पूर्ण)**, पु० मु०, ६००, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली २.५०

गांधीजी, **गीता माता**, पु० मु०, ५२०, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली ४.००

गांधीजी, **मेरे समकालीन**, पु० मु०, ६५०, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली ५.००

जॉन केनेडी, **इच्छा शक्ति**, पु० मु०, ६४, क्रा०, रूपकमल प्रकाशन, दिल्ली १.५०

नन्दलाल, **जड़ जगत की कहानी**, ८८, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली २.००

मनु बहन गांधी, **बापू के संस्मरण**, ४१, क्रा०, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी प्रा० लि०, आगरा ०.५०

मो० क० गांधी, **आत्मकथा संक्षिप्त**, पु० मु०, २२४, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली १.००

राजगोपालाचार्य, अनु०, पूर्ण सोमसुन्दरम्, **महाभारत कथा**, पु० मु०, ४८०, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली ५.००

●

[पृष्ठ ३०३ का शेष]

(क) पंचवर्गीय व्यंजनों की अनुनासिक ध्वनियों में ङ तथा ञ का यों भी ह्रास हो चुका है, ऐसी स्थिति में इनके स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग किया जाना चाहिए—जैसे, अकिंचन, पंगु आदि।

(ख) अन्य पंचवर्गीय व्यंजनों की अनुनासिक ध्वनियों का ण, न तथा म का प्रयोग इसी रूप (पंचम वर्ण) में किया जाना चाहिए—जैसे, सम्बन्ध, अन्त, गुण्ठन।

(ग) अन्यत्र (ऊष्म तथा अन्तस्थ व्यंजनों के पूर्व) अनुस्वार के रूप में अनुनासिक ध्वनि का प्रयोग होना चाहिए-जैसे, सम्बन्धी, संयम, संरक्षण आदि।

(घ) अंग्रेजी तथा अन्य विदेशी शब्दों में उच्चारण के अनुसार वर्गों के पंचम वर्ण का प्रयोग किया जा सकता है—जैसे, सेन्ट, पेन्टर आदि।

२—अनुस्वार तथा चन्द्रविन्दु का अन्तर उच्चारण के कारण है और वह रहना चाहिए। अर्थ की स्पष्टता की दृष्टि से भी आवश्यक है-जैसे, सवार-सँवार हंस-हँस आदि।

परन्तु सुविधा की दृष्टि से स्वरों में अ, आ, उ, ऊ, के साथ, जिनकी मात्राएँ ऊपर नहीं लगती हैं, चन्द्रविन्दु आना चाहिए, परन्तु अन्य स्वरों में विन्दु से चन्द्रविन्दु का काम लिया जा सकता है। स्वरों में अनुनासिकता की समस्या हिन्दी की अपनी है, इस कारण इस विषय में भ्रम की गुंजाइश नहीं होगी—जैसे, हँस, काँस, कुँअर, सूँस, जाएँगी, नहीं, साईं आदि।

●

प्रकाशन समाचार

वर्ष : ८
अंक : ७
वार्षिक : ३.००
एक प्रति : ०.३१

सम्पादक : ओंप्रकाश, डायरेक्टर इंचार्ज, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड

१६ और १७ अप्रैल '६१ को **अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ** का वार्षिक सम्मेलन पटना में होने जा रहा है। विचार-विनिमय के लिए इस सम्मेलन के सम्मुख महत्त्वपूर्ण प्रश्न प्रस्तुत होंगे, और उन पर गम्भीरता से किये गए विचार और निर्णयों पर संघ और हिन्दी-पुस्तक-व्यवसाय का भविष्य बनेगा। जल्दी में या तुरन्त लाभ की दृष्टि से लिये गए निर्णयों से संघ अब तक जो सफलता प्राप्त कर चुका है, उसे गहरी क्षति पहुँच सकती है।

"सबसे गम्भीर प्रश्न संघ द्वारा प्रचारित 'नेट बुक' अनुबन्ध से सम्बन्धित होगा। यह सब मानते हैं कि सतही तौर पर इससे कुल पुस्तक-व्यवसायियों को लाभ पहुँचा है लेकिन इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि इस अनुबन्ध का परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप में उल्लंघन काफ़ी विस्तृत पैमाने पर हो रहा है। जो पुस्तक-व्यवसायी खरीदारों, पुस्तकालयों अथवा सरकारी विभागों को नियम तोड़कर अधिक कमीशन देते हैं वे केवल अपना ही नुकसान नहीं करते, वरन् अपने भविष्य को भी खोखला करते हैं। हानि उन पुस्तक-विक्रेताओं और प्रकाशकों की होती है जो ईमानदारी से इन नियमों का पालन कर रहे हैं। अन्ततः हितहानि तो पाठक या खरीदार की होगी क्योंकि उसे पुस्तक-व्यवसाय से अपेक्षित सेवाएँ नहीं मिल सकेंगी। पुस्तक-व्यवसाय को इतना लाभ तो मिलना ही चाहिए कि वह उचित व्यावसायिक सेवाएँ प्रस्तुत कर सके और इन सेवाओं का स्तर उत्तरोत्तर ऊँचा कर सके। लेकिन 'नेट बुक' अनुबन्ध के सिद्धान्त और नीति पर बहस करने की गुंजाइश नहीं है, आवश्यकता है उसके कार्यान्वयन की व्यवस्था को कसने की, और जो नियमों का उल्लंघन करते हैं उनके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही करने की।

संघ का कार्यक्षेत्र इतना विस्तृत हो गया है कि अब उसे अपना अलग का कार्यालय और पदाधिकारियों की सहायता के लिए वैतनिक कार्यालय-मन्त्री आदि चाहिएँ। पटना-सम्मेलन को इस आवश्यकता पर विचार करके समुचित वित्तीय व्यवस्था करनी चाहिए।

पुस्तकों के थोक वितरण की व्यवस्था के लिए किसी सहकारी आधार की आवश्यकता पर गत वर्ष दिल्ली में हुए एक सेमिनार में विचार हुआ था। सम्मेलन को इस ओर ध्यान देने की जरूरत है ताकि पुस्तकों के प्रचार-प्रसार में सहकारी व्यवस्था से सहायता ली जा सके।

इस बात का प्रयत्न अभी से होना चाहिए कि व्यवसाय से सम्बन्धित अनेक प्रश्नों पर सामूहिक विचार करने के लिए प्रकाशक और पुस्तक-विक्रेता अधिक-से-अधिक संख्या में १६ और १७ अप्रैल को पटना में रहें। हिन्दी-प्रकाशक अभी प्रगति के प्रारम्भिक प्रश्नों में ही उलझे हुए हैं जबकि संसार में प्रकाशन का दायित्वपूर्ण व्यवसाय अत्यधिक उन्नति कर चुका है और सभ्य जगत् में उसे विशेष आदर प्राप्त है।

सस्ती पुस्तक-योजनाएँ

मुरलीधर श्रीवास्तव 'टोखट'

प्रजातन्त्र की स्थापना से ही जनकल्याण नहीं हो सकता। यदि किसी देश की जनता अशिक्षित है तो इस ज्ञान-विज्ञान के युग में भी वह अपना मानव-जीवन सार्थक नहीं बना सकता। भले ही किसी को मताधिकार प्राप्त हो गया हो, पर उसे जीवनाधिकार प्राप्त नहीं है और वह विद्या और ज्ञान के साधनों से लाभ उठाने में असमर्थ है तो उसके लिए प्रजातन्त्र से क्या लाभ? अतः जन-मन को ज्ञानालोक से प्रकाशित करने के लिए प्रयत्न करना प्रत्येक कल्याण-राज्य और कल्याण-समाज का कर्तव्य है। पुस्तकों के प्रचार से साहित्य का प्रचार बढ़ता है, प्रसिद्ध विचारकों के विचार और सन्देश से समाज परिचित होता है। यदि हमें अपने धर्मग्रन्थ सुलभ मूल्य में प्राप्त न हों, प्रसिद्ध लेखकों की रचनाएँ सुलभ न हों, तो किसी देश के पास श्रेष्ठ साहित्य होते हुए भी उससे देशवासियों का अधिकांश लाभ नहीं हो सकेगा। इसके लिए सरकार को भी प्रयत्न करना चाहिए, समाज के हित से प्रेम करने वाले सभी प्रकाशकों का ध्यान इस दिशा में जाना उचित है। सस्ते दाम पर पुस्तकें निकालने से सत्साहित्य का अधिक प्रचार होता है। संसार के सबसे बड़े निरक्षर और गरीब देश में यह समस्या कितनी महत्त्वपूर्ण है यह हमें खूब समझ लेना चाहिए। जिस देश में लगभग ८५ प्रतिशत को ही अक्षर-ज्ञान हो, वहाँ साक्षरता बढ़ने पर पुस्तकों की बिक्री कितनी बढ़ सकती है, यह सोचा जा सकता है। हिन्दी-पुस्तकों का भविष्य व्यापार-दृष्टि से अति उज्ज्वल है। आगामी बीस वर्षों में भी यदि आप सारे देश को साक्षर बना सके तो यह अनुमान किया जा सकता है कि उसके बाद कई करोड़ हिन्दी पाठक बढ़ जाएँगे। जिस दिन भारतीय संघ के सभी राज्यों में हिन्दी एक अनिवार्य भाषा हो जाएगी और प्राथमिक शिक्षा से हिन्दी सिखलाई जाने लगेगी उसके बाद आनेवाली तरुण पीढ़ी हिन्दी से परिचित होगी और हिन्दी की पुस्तकों की माँग आज से दस गुनी से भी बढ़ सकती है। ऐसा अनुमान किया जा सकता है कि १९८० तक हिन्दी के कई करोड़ नये पाठक पैदा हो जाएँगे। इसलिए इस बड़े पाठक-वर्ग को सस्ते मूल्य पर श्रेष्ठ साहित्य सुलभ हो, इस पर ध्यान जाना आवश्यक है।

सस्ती पुस्तकों के निकलने के बाद पुस्तकों की बिक्री में आश्चर्यजनक वृद्धि हुई है। गत बीस-पच्चीस वर्षों के आँकड़ों को देखकर पश्चिम के प्रकाशकों ने इस सत्य का अनुभव किया कि पाठकों की कमी नहीं है, पर अबतक पुस्तकों का दाम अधिक रखा जाता था, जिसके कारण लाखों पाठक पुस्तकें खरीद नहीं पाते थे। जिन लेखकों की पुस्तकें अच्छे प्रकाशक भी साल में एक हज़ार भी नहीं बेच पाते थे वहाँ वे अब लाखों की संख्या में बिकने लगी हैं। बड़े पैमाने पर पुस्तकों के मुद्रण के कारण सस्ते दाम पर पुस्तकों का देना सम्भव हुआ और सस्ते दाम पर मिलने के कारण ही बिक्री बढ़ी। यदि साक्षरता बढ़ने पर पाठक-संख्या बढ़ती है तो यह तो स्वाभाविक ही है। पर विद्यमान साक्षरों में पुस्तकों की अधिक बिक्री इस बात का प्रमाण है कि देश में लाखों पाठक पहले से विद्यमान थे, पर पुस्तकें उनकी पहुँच के बाहर इसलिए हो गई थीं, चूँकि वे सस्ती नहीं थीं।

हिन्दी में सस्ती पुस्तकें निकालने के लिए दो संगठित प्रकाशन-संस्थाएँ तब बनी थीं, जब हिन्दुस्तान में अंग्रेज़ी की पॉकेट-बुकों का आना आरम्भ नहीं हुआ था। पॉकेट-बुक का आरम्भ १९३५ ई० के बाद हुआ, जबसे इंगलैंड की पेनगुइन और पेलिकन पुस्तकें आने लगीं। इस माला की पुस्तकों का जिस तीव्र गति से प्रचार हुआ, उसे देखकर इंगलैंड के बड़े-बड़े प्रकाशक भी इस दिशा में सोचने लगे और कदम उठाने की योजना बनाने लगे। पर १९३९ में लड़ाई आ गई तथा युद्धकाल में कागज़ की कमी पड़ गई। इस काल में प्रचारात्मक युद्ध-साहित्य छपने लगा, इससे बड़े पैमाने पर छापने के अनुभव प्राप्त हुए। लड़ाई बाद, गत पन्द्रह वर्षों में ब्रिटेन से भी अधिक अमेरिका ने पॉकेट-बुक के प्रकाशन में दिलचस्पी दिखलाई। वहाँ की पॉकेट-बुकों ने इंगलैंड के प्रयत्नों को दबा दिया और अब अमेरिका से ही अधिक ऐसी पुस्तकें निकलती हैं। इंगलैंड-अमेरिका आदि की सस्ती पुस्तकों की खपत भारत में जिस तेज़ी से बढ़ रही है वह देखकर ऐसा कोई भी विदेशी कह सकता है कि भारत में स्वराज्य के बाद अंग्रेज़ी साहित्य का प्रेम बढ़ा है। आजकल इन पुस्तकों के प्रचार का परिणाम हुआ है कि अंग्रेज़ी साहित्य को पढ़ने में थोड़ी रुचि रखने वाला भारतीय पाठक भी अंग्रेज़ी के उच्च साहित्य को देख सकता है। १९३९ के बाद सस्ती पुस्तकों के प्रकाशन पर अमेरिकनों का ध्यान गया और वे आज इंगलैंड को पीछे छोड़कर कहीं आगे बढ़ गए हैं। केवल १९५१ में 'कागज़ी जिल्द' की चमकदार पुस्तकें वहाँ २३ करोड़ छपी थीं। इसमें पहले ९० प्रतिशत ऐसी पुस्तकें थीं, जो पहले तीन डालर से अधिक दाम में मिलती थीं। जब वे २५ सेंट और ५० सेंट में मिलने लगीं तो उनकी बिक्री में जो आशातीत वृद्धि हुई उससे यह तथ्य तो प्रकट हो गया कि प्रकाशकों ने जो यह प्रचार कर रखा था कि पुस्तक पढ़ने की रुचि कम लोगों में होती है, सर्वथा गलत है। जहाँ पहले से शत-प्रतिशत साक्षरता रही हो, वहाँ पाठकों की संख्या में वृद्धि इस बात का प्रमाण है कि पढ़ने की रुचि रखते हुए भी लाखों लोग पुस्तकें खरीदने और रखने के सुख से वंचित रह जाते हैं। लेखकों को भी बड़ा पाठक-समुदाय प्राप्त होने से परितोष प्राप्त हुआ है, वे

अपने विचारों, भावों, कल्पनाओं और सपनों को लाखों लोगों तक पहुँचाने में समर्थ हुए हैं। जहाँ किसी लेखक को एक लाख पाठक पाने में दस वर्ष लग सकते थे वहाँ अब उसे एक लाख पाठक साल-भर में मिल जाते हैं। लेखकों की आय पर भी इसका अच्छा प्रभाव पड़ा है। जैसे बड़े पैमाने के व्यवसाय या उद्योग से ही पूँजीपति निकलते हैं वैसे ही लाखों की संख्या में पुस्तकें बिकने पर ही लेखक सम्पन्न होता है। अमेरिका में अब इन पुस्तकों की पत्रिकाओं की तरह लाखों प्रतियाँ छपती हैं और वे केवल पुस्तक-विक्रेताओं से ही प्राप्य नहीं हैं, ये जेबी पुस्तकें, स्टेशनरी, परचून की दूकानों पर भी बिकती हैं, सड़क पर, बुक-स्टालों पर, ठेलों पर बिकती हैं। अखबार बेचने वालों द्वारा पत्रिकाओं के समान ऐसी पुस्तकें घर-घर पहुँचाई जाती हैं। अमेरिका से कुछ पुस्तकें दस सेंट की भी निकली हैं। २५ सेंट, ३५ सेंट और ५० सेंट की पुस्तकमालाओं में उत्तमोत्तम पुस्तकें निकाली गई हैं। यदि अमेरिका के आर्थिक जीवन में १० सेंट या २५ सेंट का क्या मूल्य है तो यह जानकर आपको आश्चर्य होगा कि वहाँ पॉकेट-बुक की कीमत, सैलून के एक 'शेव' (दाढ़ी-बनाई) और सिनेमा के सस्ते टिकट से कम है। जब एक पुस्तक का दाम वही है जो एक पैकेट सिगरेट का, तब पुस्तकों का प्रचार क्यों न हो! यदि हम एक डालर की क्रय-शक्ति एक रुपये के बराबर ही मान लें तो हम यह कह सकते हैं कि अमेरिकन पॉकेट-बुक के समकक्ष प्रकाशनों को २० से २५ नये पैसे में मिलना चाहिए। भारत में एक रुपए की क्रय-शक्ति इस मँहगी में भी अधिक है। इस दृष्टि से हमें हिन्दी में सस्ती पुस्तकों के दाम पर विचार करना होगा। जहाँ ऐसे ग्राहकों ने पुस्तकें खरीदी हैं, जो पहले पुस्तकें खरीदने का कभी साहस नहीं करते थे, जिन्हें पुस्तकालयों और बुक-क्लबों के सहारे ही अपनी ज्ञान-पिपासा शांत करने का अवसर मिलता था। पहले लोगों को सन्देह था कि इतनी सस्ती पुस्तकें छापकर लाभ पर बेची जा सकती हैं या नहीं; क्योंकि विज्ञापन की आमदनी के बल पर पत्रिकाएँ कम दाम पर निकलती थीं। पर प्रकाशकों को नया अनुभव हुआ कि बिना विज्ञापन के भी, पुस्तकें लाखों की संख्या में छपने पर दी जा सकती हैं। एक पैकेट सिगरेट के दाम पर

किसी अच्छी पुस्तक का मिलना, कम आय वाले वर्ग के लिए एक ऐसा लाभ है कि आप इसे एक वरदान ही कह सकते हैं।

भारत में हिन्दी-क्षेत्र में सस्ती पुस्तकों को निकालने के लिए संगठित प्रयासों में धार्मिक साहित्य के प्रचारक गीता प्रेस और राजनैतिक चेतना की पुस्तकें छापने वाले सस्ता साहित्य मण्डल अग्रणी थे। आज भी वे अपने अनुसार आदर्श और इष्ट साहित्य को छाप रहे हैं। गीता प्रेस ने सस्ते दाम पर गीता, रामायण, महाभारत, भागवत आदि ग्रन्थों को सुलभ कर हिन्दी पाठकों की जो सेवा की वह महत्त्वपूर्ण है। इस संस्था को न विज्ञापन का बल था, न सरकारी पोषण का। गीता प्रेस ने केवल पाठकों के बल पर अपना कार्य बढ़ाया और अब भी सस्ते दाम पर पुस्तकें देकर करोड़ों लोगों को अपने प्राचीन धार्मिक साहित्य से परिचित कराता है। चूँकि हिन्दी के भक्त और सन्त-कवि महाकवि भी हैं, इसलिए धार्मिक साहित्य के प्रचार को ही इष्ट मान चलते हुए भी गीता प्रेस ने सूरदास, तुलसीदास आदि के साहित्य का प्रचार किया

है। सस्ता साहित्य मण्डल राष्ट्रीय और गांधीवादी सर्वोदय साहित्य का प्रमुख प्रकाशक है और उसे नेताओं का और अब सरकार का भी आश्रय प्राप्त है, पर वह अब सस्ती पुस्तकें कम ही निकालता है। राष्ट्रपति, प्रधान मन्त्री, गांधी और विनोबा के साहित्य का प्रकाशक मण्डल ही है। पर यह दाम साधारण रखता है और गीता प्रेस के समान सस्ती पुस्तकें देने में समर्थ नहीं है।

इधर भारत सरकार ने एक नेशनल बुक-ट्रस्ट स्थापित किया है, जिसके द्वारा भी सस्ती पुस्तकें निकालने की योजना कार्यान्वित होगी। अभी सरकारी पुस्तकें नहीं आई हैं। हिन्दी में 'पॉकेट-बुक' नाम से कई पुस्तक-मालाएँ चालू हुई हैं और पाठकों की वृद्धि हो रही है। अभी तो इस तरह की पुस्तकों का यहाँ आरम्भ ही हुआ है और आगे बहुत-कुछ उन्नति होगी। यूरोप-अमेरिका के पॉकेट-बुक के प्रकाशक वहाँ सैकड़ों एजेण्टों की नियुक्ति और विज्ञापनबाज़ी पर बहुत अधिक पड़ते हुए खर्च से बच गए हैं। बुकसेलरों को यद्यपि कमीशन कम मिलता है पर बिक्री बढ़ जाने के कारण उनके लाभ की रकम बढ़ी है। लेखकों की रॉयल्टी में भी वृद्धि हुई है। हिन्दी में पॉकेट-बुक का स्तर उठाने के लिए पुस्तकों को चुनने में सावधानी आवश्यक है। पश्चिम में पहले प्रकाशकों ने वैसी पुस्तकों को भी काफ़ी संख्या में छापा जिन पर कॉपीराइट उठ गया था और जिन पर लेखक को रॉयल्टी देने का सवाल ही न था। इसलिए पुस्तक पर उत्पादन-व्यय कम पड़ता था और उन पर प्रकाशक को लाभांश अधिक मिलता था। हिन्दी में पॉकेट-बुक के प्रकाशक प्राचीन साहित्य को स्थान नहीं देते हैं, प्रसिद्ध पुस्तकों को सुलभ करने पर कम ध्यान है, नये लेखकों और नई पुस्तकों द्वारा व्यवसाय बढ़ाना चाहते हैं। इस योजना के अन्तर्गत प्राचीन साहित्य के बहुमूल्य रत्नों को स्थान देना आवश्यक है। शायद हमारे प्रकाशक यह सोचते हैं कि हिन्दी का प्राचीन साहित्य ब्रजभाषा या अवधी है जिसके पाठक कम मिलेंगे। हिन्दी के प्रकाशकों ने अब तक सस्ती पुस्तकों के पीछे जो भाव था, उसे ठीक से समझा नहीं। नये लेखकों की छोटी और नई पुस्तकों को इस योजना में कम स्थान होगा। प्राचीन साहित्य के बहुमूल्य रत्नों को

ग्रौर ग्राधुनिक में भी क्लासिक के समान बहु-प्रशंसित पुस्तकों को स्थान देने से ऐसी पुस्तकमालाग्रों का गौरव बढ़ता है। उपन्यासों की लोकप्रियता देखकर उसी पर दृष्टि रखना ठीक नहीं। ज्ञान-विज्ञान-विषयक पुस्तकों का प्रकाशन बढ़ना चाहिए। जिस देश में पुस्तक-विक्रेता प्राय: सबडिवीज़नों में भी नहीं हैं, वहाँ डाक की सुविधा-बल पर ही पुस्तक-व्यवसाय बढ़ सकता है। पुस्तक की रजिस्ट्री ग्रौर वी० पी० खर्च कम होना चाहिए, नहीं तो गाँवों के पाठक डाक से मनचाही पुस्तकें नहीं पा सकते। डाक-खर्च ग्रधिक पड़ने का ग्रर्थ है कि सरकार साक्षरों पर ही कर लगाकर उन्हें पुस्तकों से वंचित करती है। विदेशों से हमें इस सम्बन्ध में बहुत-कुछ सीखना बाकी है। साक्षरता बढ़ाने से लाभ क्या, जब उन्हें पुस्तकें सुलभ न हों। देश के उन्नायकों का ध्यान इसकी ग्रोर खींचना ग्रावश्यक है। पुस्तकों की बिक्री पर सेल टैक्स लगाना, नमक-कर लगाने से कम दोषपूर्ण नहीं है।

पॉकेट-बुक योजना को सफल बनाने के लिए यह भी ज़रूरी है कि बुकसेलरों को कमीशन कम दिया जाए। जब दस प्रतिशत लाभ के लिए व्यापारी ग्रनेक प्रकार के उद्योग करने को तैयार होते हैं तो पुस्तक-विक्रेता ही इतने ग्रधिक कमीशन की ग्राशा क्यों करे? लेखक की रॉयल्टी के रेट से बुकसेलर के कमीशन का रेट ग्रधिक होना लेखक का ग्रपमान है। एक का पेट काटकर दूसरे का पेट भरा जाता है। जो कर्त्ता है वह कम पावे ग्रौर वितरक लाभांश का ग्रधिक ग्रंश पावे, यह कहाँ तक उचित है? ये सब विचारणीय प्रश्न हैं। हमें सस्ती पुस्तकों की माला ही नहीं चाहिए, ग्रच्छी पुस्तकों की ज़रूरत है। ग्राज सस्ती पुस्तकों के रूप में सस्ता साहित्य ग्राने का खतरा दिखाई दे रहा है।

प्रकाशकीय मंच

अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ का वार्षिक सम्मेलन पटना में १६ और १७ अप्रैल ६१, तदनुसार शनिवार और रविवार को होगा। बिहार के पुस्तक-व्यवसायियों की पटना में १४ फरवरी को हुई एक मीटिंग में एक स्वागत-समिति का निर्वाचन हुआ और पारिजात प्रकाशन, पटना के श्री शंकर दयालु सिंह इसके मन्त्री चुने गये।

* * *

दक्षिण भारत की बुक इंडस्ट्री कौंसिल की ओर से १६ फरवरी से १ मार्च ६१ तक पुस्तकों की बिक्री की शिक्षा का एक कोर्स सम्पन्न किया गया—यह कोर्स 'यूनेस्को' की संरक्षकता में हुआ। इसमें विभिन्न पुस्तक-विक्रेताओं के ३० सहायकों ने भाग लिया।

* * *

राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली के भागीदार श्री दीनानाथ मलहोत्रा को 'यूनेस्को', पेरिस की ओर से एक स्कॉलरशिप प्राप्त हुई है जिसके अनुसार वह लगभग १५ मार्च से जुलाई ६१ के अन्त तक देश से बाहर प्रकाशन-व्यवसाय का अध्ययन करने के लिए जाएँगे; १५ दिन लन्दन, ३ मास अमेरिका और १ मास जापान। दीनानाथजी की आयु लगभग ३६ वर्ष है; उन्होंने १९४४ में पंजाब विश्वविद्यालय से राजनीतिशास्त्र में एम० ए० की उपाधि प्राप्त की थी। राजपाल के अलावा हिन्द पॉकेट बुक्स, प्रा० लि० के भी वह मैनेजिंग डायरेक्टर हैं, और अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ के उप-प्रधान।

आशा है कि उनके लौटने पर हिन्दी के पुस्तक-व्यवसाय को इस विदेश-भ्रमण के परिणामस्वरूप लाभ पहुँच सकेगा।

* * *

अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ की कार्यसमिति के इस प्रस्ताव के कार्यान्वियन को सभापति श्री रामलाल पुरी ने अपने आदेश से स्थगित कर दिया है कि जनवरी से मार्च तक संघ के नये सदस्य पंजीबुद्ध न किये जाएँ।

* * *

राजकमल प्रकाशन प्रा० लि० के डायरेक्टर महोदय सूचित करते हैं कि १९६१ के आरम्भ से उन्होंने अपने प्रकाशनों की बिक्री से सम्बद्ध नियमों में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन किये हैं। पुस्तक-विक्रेता पत्र लिखकर (८ फ़ैज़ बाजार, दिल्ली—६ से) नये नियमों की एक प्रति मँगवा सकते हैं।
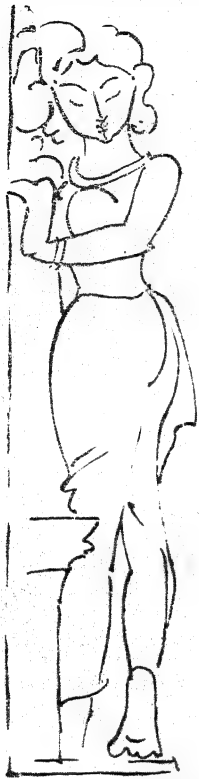
* * *

केरल की लेखक सहकारी समिति

सी० के० मणि

यह लेख नयी दिल्ली से प्रकाशित 'लिटरेरी न्यूज़ बुलेटिन' के १ फरवरी, १९६१ के अंक से साभार प्रकाशित किया जा रहा है।

कोट्टयम की साहित्य-प्रवर्त्तक को-आपरेटिव सोसायटी लि०, जो केरल के लेखकों की सहकारी संस्था है, साहित्य और सहकारिता के क्षेत्र में एक अनोखा प्रयोग है।

यह स्वयं एक बड़े साहस की बात है कि मलयालम् लेखकों ने अब से १५ वर्ष पहले प्रकाशन के क्षेत्र में अपनी समस्याओं को हल करने के लिए सहकारिता का मार्ग अपनाने का प्रयत्न किया था। कुल १२ सदस्यों और १२० रु० की पूँजी से आरम्भ करके पहले चार वर्षों में वे बहुत ही थोड़ा काम कर सके थे, फिर भी उन्होंने एक पुस्तक प्रकाशित की और उसकी बिक्री से वे अपने सदस्यों को सहकारी समिति अधिनियम के अनुसार अधिकतम मुनाफ़ा देने योग्य हो सके।

१९४७ में जब साहित्य-प्रवर्त्तक सहकारी समिति ने नेशनल बुक-स्टॉल को खरीद लिया तो काम तेज़ी से चल निकला। सोसायटी के सदस्यों की संख्या बढ़ने लगी और अधिक पूँजी आने लगी। जिन लोगों ने कम-से-कम १०० रु० के शेयर लिये थे उन्हें सोसायटी द्वारा प्रकाशित कम-से-कम २० रु० की पुस्तकों के रूप में विशेष बोनस देने का आयोजन किया गया। यह बोनस उस मुनाफ़े के अतिरिक्त है जो सदस्यों के बीच हर साल बाँटा जाता है और जो कानून द्वारा निर्धारित अधिकतम सीमा से कम कभी भी नहीं होता।

अब सोसायटी यह विशेष बोनस केवल उन लोगों को दे रही है जिनके पास १००० रु० से ज़्यादा के शेयर हैं। परन्तु जिन १३ सदस्यों ने ५००० रु० के शेयर ले रखे हैं (कानून के अनुसार इससे ज़्यादा के शेयर किसी एक आदमी के हाथ नहीं बेचे जा सकते) उन्हें वर्ष के मुनाफ़े में से अपने हिस्से के अतिरिक्त सोसायटी द्वारा उस वर्ष के दौरान में प्रकाशित हर पुस्तक भी दी जाती है। साहित्य-प्रवर्त्तक को-आपरेटिव सोसायटी प्रतिवर्ष औसत से ३०० रु० मूल्य की १५० पुस्तकें प्रकाशित करती है। इस समय सोसायटी की पूँजी लगभग २ लाख रुपए और इसके सदस्यों की संख्या ४०० है।

इस सोसायटी ने यह बात स्पष्ट रूप से साबित कर दी है कि प्रकाशन के क्षेत्र में से बीच में मुनाफ़ा कमाने वालों को बिलकुल हटाया जा सकता है और इस प्रकार लेखक को और पुस्तक-प्रेमी को, जो अन्त में जाकर उपभोक्ता होता है, लाभ हो सकता है। जिस समय लेखक अपनी पाण्डुलिपि तैयार कर लेता है उस समय से लेकर पुस्तक खरीदने वाले के हाथ में पहुँचने तक प्रकाशन और वितरण का सारा काम सोसायटी स्वयं करती है। इसमें सबसे अधिक लाभ लेखक को होता है, क्योंकि सोसायटी का अस्तित्व ही उसके लिए है। सोसायटी के लेखक-सदस्य को मुनाफ़े में से अपने हिस्से के अतिरिक्त अपनी किताब पर ३० % रायल्टी मिलती है। कुछ लोग लेखक न होते हुए भी, केवल साहित्य-प्रेमी होने के नाते और लेखकों को सहायता देने के उद्देश्य से इस सोसायटी के सदस्य बने हैं। कुल सदस्यों में ऐसे लोगों की संख्या ४० % से भी कम है और उन्हें ७½ % की बँधी दर से मुनाफ़े में हिस्सा मिलता है।

साहित्य-प्रवर्त्तक को-आपरेटिव सोसायटी का प्रबन्ध एक संचालक-मण्डल के हाथ में है जिसमें १२ निर्वाचित

और ३ मनोनीत सदस्य होते हैं जो तीन साल तक मण्डल के सदस्य रहते हैं। मनोनीत सदस्यों की व्यवस्था इसलिए रखी गई है कि हर प्रदेश आदि का प्रतिनिधित्व हो सके, क्योंकि इस सोसायटी का काम पूरे केरल राज्य में फैला हुआ है। एक-तिहाई संचालक हर साल रिटायर हो जाते हैं और उनके स्थान पर निर्वाचित अथवा मनोनीत सदस्य यथानुसार ले लिये जाते हैं। पाँच संचालकों की एक कार्यकारिणी समिति भी चुनी जाती है जिसमें अध्यक्ष और उपाध्यक्ष भी शामिल होते हैं—इनका चुनाव हर साल होता है। एक मन्त्री भी होता है जो मुख्य कार्यकारी अधिकारी होता है।

साहित्य-प्रवर्त्तक सोसायटी अपने काम के तीन मुख्य विभागों में एक सन्तुलन स्थापित करके काम करती है—प्रकाशन, मुद्रण और बिक्री। प्रकाशन-विभाग का सम्पादक-मण्डल प्रतिवर्ष सोसायटी के पास आने वाली १००० से ऊपर पाण्डुलिपियों की जाँच-पड़ताल करता है। फिर कार्यकारिणी समिति इस बात का फैसला करती है कि इनमें से किनको प्रकाशन के लिए स्वीकार किया जाए और किस क्रम से उनका प्रकाशन किया जाए। इन बातों का फैसला करते समय सोसायटी सभी पहलुओं पर उचित ध्यान देती है। सोसायटी का प्रोडक्शन-विभाग पुस्तक के प्रकाशन से सम्बन्धित विभिन्न कामों को सँभालता है—आवरण-पृष्ठ, छपाई, जिल्दसाजी इत्यादि। १९५३ से सोसायटी का अपना छापाखाना भी है—इंडिया प्रेस, जिसमें आधुनिक मशीनें लगी हुई हैं।

सोसायटी के बिक्री-विभाग—नेशनल बुक-स्टॉल—ने उसके लक्ष्य को पूरा करने में सबसे अधिक योग दिया है। अन्य भाषाओं के क्षेत्रों की भाँति मलयालम के सामने भी पुस्तकों की बिक्री की समस्या थी। पहले किसी पुस्तक का १,००० प्रतियों का संस्करण बेचने में ६ से ८ वर्ष तक का समय लग जाता था। अब मुख्यतः नेशनल बुक-स्टॉल की कोशिशों से परिस्थिति बदल गई है। सदस्यों ने देखा कि जिस पुस्तक की १००० प्रतियाँ बेचने में दूसरे प्रकाशकों को ६ वर्ष या इससे भी अधिक लग जाते थे उन्हीं पुस्तकों को दुबारा छापकर सोसायटी ने इससे आधे से भी कम समय में बेच लिया। इस प्रकार पुस्तकें ज्यादा

पटना में संघ का सम्मेलन

१५ फरवरी को पटना के प्रमुख प्रकाशकों और पुस्तक-विक्रेताओं की एक बैठक श्री मदनमोहन पाण्डेयजी की अध्यक्षता में हुई जिसमें उत्साह और सौहार्द्र के वातावरण में यह निश्चय हुआ कि अप्रैल में पटना में होने वाला अ० भा० हि० प्र० संघ का छठवाँ अधिवेशन अत्यन्त संजीदगी और शानदार तरीके से हो जिससे अतीत की स्मृति ताजी हो सके और भविष्य में दिशा-संकेत मिल सके। अधिवेशन में यह भी निश्चय हुआ कि एक अखिल भारतीय पैमाने पर पुस्तक-प्रदर्शनी का आयोजन किया जाए, सोविनियर का प्रकाशन हो।

अधिवेशन की सफलता के लिए सर्वसम्मति से स्वागत-समिति का गठन हुआ जिसके क्रमशः सर्वश्री मदनमोहन पाण्डेय अध्यक्ष, जयनाथ मिश्र उपाध्यक्ष, देवकुमार मिश्र कोषाध्यक्ष तथा शंकर दयालसिंह मन्त्री चुने गए।

कार्यकारिणी का गठन किया गया और पुस्तक-प्रदर्शनी तथा सोविनियर के प्रकाशन के लिए समितियों का गठन हुआ।

उक्त बैठक में पटने के निम्नलिखित प्रकाशकों ने भाग लिया—सर्वश्री मदनमोहन पाण्डेय ज्ञानपीठ, जयनाथ मिश्र अजन्ता प्रेस, मैथिलीशरणसिंह पुस्तक भण्डार, देवकुमार मिश्र, ग्रन्थमाला कार्यालय, मानस कुमार राय, मगध राजधानी प्रकाशन, करमसिंह दिल्ली पुस्तक सदन, सत्येन्द्र बिहार ग्रन्थ कुटीर, रामसरनजी हिन्दी पुस्तक एजेन्सी, अखिलेश्वर पाण्डेय बुक्स एण्ड बुक्स, दीवानचन्द्र मोतीलाल बनारसीदास, शंकरदयाल सिंह पारिजात प्रकाशन, रामसेवकसिंह उदयाचल प्रकाशन, मोहित मोहन बोस भारती भवन तथा तारानाथ झा नोवेल्टी एण्ड कं०।

सर्वसम्मति से कार्यकारिणी का गठन हुआ जिसमें श्री मदनमोहन पांडेय, जयनाथ मिश्र, देवकुमार मिश्र, मोहित मोहन बोस, भीमसेन तथा शंकरदयालसिंह चुने गए।

बैठक में यह भी निश्चय हुआ कि स्वागत-समिति का कार्यालय पारिजात प्रकाशन, डाकबंगला रोड, पटना–१ में रहे और शंकर दयालसिंहजी पर कार्यालय का कार्य-भार रहे।

जल्दी बिक जाने से लेखक को और अधिक लाभ होता है।

नेशनल बुकस्टॉल की चार प्रमुख केन्द्रों में चार शाखाएँ हैं। नेशनल बुकस्टॉल की एक मुख्य विशेषता यह है कि वह केवल सोसायटी द्वारा प्रकाशित पुस्तकें ही नहीं, बल्कि मलयालम में प्रकाशित होने वाली अन्य पुस्तकें भी बेचता है। उसकी सब शाखाओं में भी मलयालम की ६,००० से अधिक पुस्तकें हैं। पिछले वर्ष के दौरान में नेशनल बुकस्टॉल ने लगभग ७ लाख रुपए की पुस्तकें बेचीं।

साहित्य-प्रवर्त्तक सोसायटी मलयालम साहित्य की बड़ी सेवा कर रही है और पुस्तकों की बिक्री बढ़ाने की अपनी विभिन्न योजनाओं द्वारा वह पूरे पुस्तक-व्यवसाय को बहुत लाभ पहुँचा रही है। 'घर-घर पुस्तकालय' का लक्ष्य सामने रखकर किश्तों पर पुस्तकों की योजना आरंभ की गई। इस योजना के अन्तर्गत १८ महीने तक ५-५ रु० देने के बाद अन्त में १०० रु० की पुस्तकें ली जा सकती हैं। बहुत से लोगों ने इस योजना का फ़ायदा उठाया। कुछ समय पहले पुस्तक-मास का आयोजन भी बहुत सफल रहा। प्रतिमाह प्रकाशित होने वाला नेशनल बुकस्टॉल बुलेटिन, नेशनल बुकस्टॉल के सूचीपत्र और समय-समय पर होने वाली पुस्तक-प्रदर्शनियाँ पुस्तकों की बिक्री बढ़ाने की दिशा में बहुत उपयोगी योजनाएँ सिद्ध हुई हैं।

अपने सदस्यों की लिखी हुई पुस्तकें प्रकाशित करने के अतिरिक्त सोसायटी ऐसी पुस्तकें भी प्रकाशित करती है जो मलयालम भाषा तथा साहित्य के विकास के लिए आवश्यक हैं। इनमें विश्व-साहित्य के अनुवाद, अमर ग्रन्थ, कोष और सन्दर्भ-पुस्तकें शामिल हैं। प्रतिवर्ष दो सर्वश्रेष्ठ पुस्तकों को पुरस्कार भी दिये जाते हैं। साहित्य-प्रवर्त्तक सोसायटी की ओर से वृद्ध अथवा बीमार लेखकों तथा उनके परिवार वालों को सहायता देने के लिए एक 'लेखक-सहायता निधि' की भी व्यवस्था है।

इस वर्ष सोसायटी ने अपनी इमारत बनवाने के लिए दो लाख रुपए की एक ज़मीन खरीदी है। सोसायटी अब तक जो कुछ भी कर सकी है वह सब सोसायटी के सदस्यों और शुभचिन्तकों के सहयोग और सद्भावना की बदौलत ही है। सरकार से सोसायटी को किसी प्रकार की सहायता नहीं मिली है।

पेंग्विन बुक्स—हमारे लिए एक आदर्श

कुल भूषण

गत वर्ष ब्रिटेन में पॉकेट-बुक्स के जन्मदाता पेंग्विन बुक्स के जीवन में दो महत्वपूर्ण घटनाएँ हुईं; एक तो यह कि पेंग्विन बुक्स के डायरेक्टर सर एलेन लेन पर अक्तूबर में इस अभियोग पर मुकद्दमा चलाया गया कि उन्होंने डी० एच० लारेंस की प्रख्यात पुस्तक 'लेडी चैटरलीज़ लवर' की तथाकथित अश्लील अंशों सहित २,५०,००० प्रतियाँ छापीं। दूसरी यह कि पेंग्विन बुक्स ने अपने जीवन के २५ वर्ष पूरे किये—जिन २५ वर्षों में उसने उत्कृष्ट साहित्य अच्छे ढंग से और ईमानदारी के साथ प्रकाशित करने के मामले में विलक्षण ख्याति प्राप्त की है। यहाँ तक कि आज 'पेंग्विन' शब्द लगभग 'अच्छे साहित्य' का पर्यायवाची बन गया है।

आज से २५ वर्ष पहले १९३५ में पॉकेट-बुक्स की योजना कोई नयी नहीं थी। कई प्रकाशक १८५० से इसे आजमा चुके थे—उन्होंने सस्ता कथा-साहित्य एक जैसे आकार के संस्करणों में प्रकाशित किया था। परन्तु सर एलेन लेन ने 'पेंग्विन बुक्स' की जो योजना बनायी थी, वह पुरानी योजनाओं का नया रूप नहीं था। वह योजना इस दृष्टि से बिल्कुल नयी थी उसमें पाठकों की सच्ची सेवा का लक्ष्य सामने रखा गया था—अच्छा, रोचक तथा उपयोगी साहित्य कम दामों पर उपलब्ध करने की सेवा। पेंग्विन का पहला कार्यालय एक गिरजाघर की छोटी-सी कोठरी में था जहाँ से पुस्तकें बाँधकर विभिन्न स्थानों को भेजी जाती थीं। इस छोटी-सी कोठरी से बढ़कर आज मिडलसेक्स में उसका जो विशाल कार्यालय है वह महान् प्रगति का प्रमाण है। और इतनी बड़ी सफलता प्राप्त करने का श्रेय पूरे संगठन की लगन और मेहनत तथा संस्था के संचालकों के उत्साह को है। इस संस्था की सफलता की कहानी परियों की कहानी-जैसी रोचक है। पेंग्विन बुक्स की संस्था केवल १००१ पौंड की पूंजी से एक प्राइवेट कम्पनी के रूप में आरम्भ की गयी थी।

पेंग्विन की प्रथम पुस्तकों के २०,००० प्रतियों के ही संस्करण प्रकाशित किये गए थे और उस समय के विशेषज्ञों की राय में इतने संस्करण भी बहुत थे। आज यह नियम-सा हो गया है कि पहला संस्करण २,५०,००० प्रतियों का छापा जाता है। कोई ऐसी पुस्तक जिसके मूल संस्करण की लगभग १००० प्रतियाँ एक महीने में न बिकी हों, पेंग्विन बुक्स में नहीं छापी जाती।

हालाँकि पेंग्विन की पुस्तकें बहुत सस्ती बिकती हैं, फिर भी यह बहुत बड़ा कारोबार है। यह कारोबार कितना बड़ा है इसका अनुमान बड़ी आसानी से इस बात से लगाया जा सकता है कि पेंग्विन वाले प्रति वर्ष २५० पुस्तकें प्रकाशित करते हैं। आज तक पेंग्विन ने ३,५०० पुस्तकें प्रकाशित की हैं, हर समय कम-से-कम १,००० पुस्तकों की प्रतियाँ स्टॉक में रहती हैं। प्रतिवर्ष अकेले इंगलैंड में पेंग्विन की पुस्तकों की ५० लाख प्रतियाँ और विदेशों में ५० लाख प्रतियाँ बिकती हैं।

यह समझना स्वाभाविक ही है कि इतने बड़े कारोबार में मुनाफ़ा भी बेहद होता होगा, पर पेंग्विन वाले बहुत मुनाफ़ा नहीं कमाते। वास्तव में आम तौर पर १०% से अधिक मुनाफ़ा होता नहीं और जो मुनाफ़ा होता है वह नये स्टॉक के रूप में कम्पनी की पूंजी का अंग बन जाता है। शायद यही बात और इसके संस्थापकों का उत्साह पेंग्विन की पुस्तकों की इस तीव्र उन्नति का कारण है; इनके अतिरिक्त तो और भी बहुत-से कारण हैं।

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है पेंग्विन बुक्स के पीछे एक योजना थी। इस योजना को पहले ऐसी 'सुरक्षित पुस्तकों' से आरम्भ किया गया जो पक्की जिल्द वाले

संस्करणों में बहुत बिक चुकी थीं और इसलिए उन्हें छापने में नुकसान का खतरा कम था; फिर धीरे-धीरे 'शिक्षाप्रद पुस्तकें' छापी गयीं, जो उस विषय के विशेषज्ञों के लिए नहीं बल्कि दूसरे क्षेत्रों से सम्बन्ध रखने वाले लोगों के लिए लिखी गयी थीं। यही कारण है कि पेलिकन पुस्तकें (पेंग्विन की संस्था से निकलने वाली शिक्षाप्रद पुस्तकें) लगातार इतनी सफल रही हैं। इससे यह भी पता चलता है कि कठिन विषयों को किस प्रकार साधारण पाठक के लिए सुबोध बनाया जा सकता है और वह अपनी जानकारी बढ़ाने के लिए इस प्रकार की पुस्तकों का सहारा लेने में संकोच नहीं करता।

पेंग्विन पुस्तकों के पीछे जो कल्पना थी वह आज सारी दुनिया में फैल गयी है। अमरीका में बहुत-से प्रकाशक कच्ची जिल्द की पुस्तकें निकालते हैं, जैसे पॉकेट-बुक्स, ए-वन बुक्स, डेल बुक्स इत्यादि। योरप में भी हर देश में इस प्रकार की अपनी पुस्तक-मालाएँ हैं—हालैंड में प्रिज़्मा, जर्मनी में रो-रो-रो इत्यादि।

और अब यह विचार एशिया में भी फैल रहा है। उदाहरण के लिए आज भारत के प्रकाशकों में प्रकाशन की इस शाखा के प्रति जितनी सजगता है उतनी अब से पहले कभी नहीं थी। मद्रास में सदर्न लैंग्वेजेज बुक-ट्रस्ट तमिल, तेलुगु, मलयालम और कन्नड़ में पॉकेट-बुक्स प्रकाशित करने की निरंतर कोशिश करता रहा है। यद्यपि उसे अपने इन प्रयासों में कोई आशातीत सफलता नहीं मिली है फिर भी एक ऐसी बुनियाद पड़ गयी है जो निकट भविष्य में बहुत बड़ी संख्या में पाठकों की आवश्यकता को पूरा कर सकेगी।

मराठी, उर्दू और पंजाबी में भी छोटे पैमाने पर पॉकेट-बुक्स का प्रकाशन आरंम्भ हुआ है।

पॉकेट-बुक्स प्रकाशित करने का प्रयास सही माने में हिन्दी के प्रकाशकों ने आरम्भ किया है। पिछले एक-डेढ़ वर्ष में ही आधे दर्जन से अधिक नामों से पॉकेट-बुक्स निकलना शुरू हुई हैं, जैसे हिन्द पॉकेट-बुक्स, राजकमल पॉकेट-बुक्स, प्रचारक पॉकेट-बुक्स, अशोक पॉकेट-बुक्स इत्यादि। ये पुस्तकें बहुत बड़ी संख्या में पाठकों के पास तक पहुँची हैं परन्तु अन्त में इन प्रयासों की सफलता कई बातों पर निर्भर होगी।

भारत में पॉकेट-बुक्स की सफलता के लिए जो सबसे पहली बुनियादी ज़रूरत है वह यह है कि सस्ता कागज़ मिल सके। इस समय भारत में कागज़ की बहुत तंगी है—हम अपनी आधे से भी कम ज़रूरत का कागज़ बनाते हैं और विदेशों से जितना कागज़ आता है उससे सारी कमी पूरी नहीं होती। जब तक पॉकेट-बुक्स के प्रकाशकों की आवश्यकताओं की ओर अधिकारीगण विशेष ध्यान नहीं देंगे और अच्छा सफ़ेद न्यूज़प्रिंट विदेशों से मँगाने के लिए लोगों को लाइसेंस नहीं दिये जाएँगे, तब तक इस बात का खतरा रहेगा।

दूसरी बुनियादी ज़रूरत यह है कि इस प्रकार की पुस्तकों की जिल्द बाँधने का कोई सस्ता तरीका होना चाहिए। एक सस्ती सी जर्मन मशीन है—एहलरमैन क्विच थ्रो, इसकी कीमत केवल ६,००० रु० है और इससे एक पुस्तक की जिल्द बाँधने की लागत २ न० पै० आती है—जिल्द सचमुच बहुत सस्ती और मज़बूत होती है, जिस प्रकार की जिल्दबन्दी हमारे प्रकाशकों को आज उपलब्ध नहीं है। उन्हें आज जिल्दसाज़ी पर ज्यादा पैसा खर्च करना पड़ता है जिसकी वजह से कुल लागत बढ़ जाती है—इसलिए उन्हें बहुत बड़ा संस्करण छापना पड़ता है तब जाकर उनका घाटा पूरा होता है। भारत में इस प्रकार की मशीनें मँगाने का कोई उपाय करना होगा।

तीसरी बुनियादी ज़रूरत है, बिक्री की व्यवस्था। जब तक सारे देश में १०,००० प्रतियों का संस्करण न बेचा जाए और बिक्री के योग्य केन्द्रों में इन पुस्तकों की ओर ग्राहकों का ध्यान आकर्षित करने का व्यवस्था न की जाए, तब तक इन पुस्तकों की बिक्री आवश्यक हद तक नहीं बढ़ाई जा सकती। एक बार बिक्री का प्रवाह रुक जाने पर, या पुस्तकों का वितरण सभी क्षेत्रों में सन्तुलित न होने पर कितना ही विज्ञापन करने पर भी इन पुस्तकों को बेचना असम्भव हो जाता है। इसलिए यह आवश्यक है कि विभिन्न प्रकाशक मिलकर इन पुस्तकों की बिक्री के लिए एक ऐसा संगठन बनाएँ ताकि वितरण पर आने वाली कुल लागत को कम किया जा सके।

(शेष पृष्ठ ३४२ पर)

पुस्तक-परिचय

उपन्यास

पाणिग्रहण श्री गुरुदत्त का नवीनतम उपन्यास है। इसमें लेखक ने विवाह की समस्या का समाधान विशुद्ध भारतीय संस्कृति के आधार पर सुझाने का प्रयत्न किया है। जो लोग आजकल की सभ्यता की चकाचौंध में विवाह के आध्यात्मिक और सामाजिक महत्व को भूल गए हैं, उन्हें यह उपन्यास अवश्य पढ़ना चाहिए। क्राउन साइज़ के ३८४ पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास **भारतीय साहित्य सदन, नई दिल्ली** ने प्रकाशित किया है और छः रुपये में प्राप्य है।

* * *

पथभ्रष्ट श्री सीताराम गोयल का एक राजनीतिक विचार-धारा का उपन्यास है, जिसमें उन्होंने एक ऐसे युवक की कहानी प्रस्तुत की है, जो अनवरत परिश्रम करने के उपरांत मार्क्सवाद के मिथ्यात्व का पर्दा फाश करके कर्मक्षेत्र पर अग्रसर होता है। इस उपन्यास के प्रकाशन की कहानी जानने के लिए पाठक लेखक का वक्तव्य अवश्य पढ़ लें। इससे वे इसकी मूल भावभूमि से भलीभांति परिचित हो सकेंगे। क्राउन साइज़ के ३६० पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास **भारतीय साहित्य सदन, नई दिल्ली** ने प्रकाशित किया है और छः रुपये में मिल सकता है।

* * *

ये कोठे वालियाँ श्री अमृतलाल नागर का वह नवीनतम उपन्यास है, जिसकी चर्चा पिछले एक वर्ष से निरन्तर होती आई है। जिन हिन्दी पाठकों ने उसे 'नई कहानियाँ' में पढ़ा है, वे उसकी रोचकता और वस्तु-शिल्प से सर्वथा परिचित हैं। इस उपन्यास में लेखक ने वेश्या-जीवन की विवशताओं का वर्णन अत्यन्त संवेदनशील शैली और तटस्थ-भाव से किया है। लेखक ने प्रारम्भ में अपने वक्तव्य में वेश्या-वृत्ति की विभीषिकाओं, विवशताओं का विशद वर्णन प्रस्तुत करके उसका सन्तुलित समाधान भी प्रस्तुत किया है, जो हिन्दी के पाठकों के लिए सर्वथा नई चीज़ है। पात्रों के चरित्र-चित्रण में लेखक ने अत्यन्त सतर्कता और जागरूकता से काम लिया है। नागरजी-जैसे सिद्धहस्त लेखक की लेखनी से लिखा गया यह उपन्यास निश्चय ही हिन्दी के कथा-साहित्य की अभिवृद्धि की दिशा में एक नया कदम है। क्राउन साइज़ के २६० पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास **राजकमल प्रकाशन, दिल्ली** ने प्रकाशित किया है और चार रुपये पचास नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

राजतिलक श्री शिवसागर मिश्र का ऐतिहासिक उपन्यास है। इसमें लेखक ने आज से लगभग ढाई हज़ार वर्ष पहले की कथा को आधार बनाया है। इस उपन्यास में छठी शताब्दी पूर्व के मगध का वर्णन किया गया है। उस समय के रीति-रिवाज, आचार-विचार और रहन-सहन की पूरी जानकारी देने का प्रयत्न लेखक ने इस उपन्यास में किया है। भारतवर्ष के और बौद्ध, जैन तथा भागवत धर्म के अभ्युदय की कहानी इस उपन्यास में प्रस्तुत की गई है। पात्रों के चरित्र-चित्रण, भाषा और कथानक आदि सभी दृष्टि से उपन्यास उल्लेखनीय हैं। **आत्माराम एंड सन्स, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज़ के २८८ पृष्ठ का यह उपन्यास पाँच रुपये पचास नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

भगवान् एकलिंग श्री सय्याह सुनामी का ऐतिहासिक उपन्यास है। इसमें उन्होंने ऐतिहासिक कथा को आधार बनाकर कथा के आवरण में दो संस्कृतियों के संघर्ष की गाथा प्रस्तुत करके बाप्पा रावल और हारीत मुनि-जैसे सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक व्यक्तियों के जीवन को चित्रित किया है। प्राणीमात्र में प्रेम की भावना की प्रतिष्ठापना करना ही उपन्यासकार का परम लक्ष्य है। **सौरभ प्रकाशन, दिल्ली** से प्रकाशित क्राउन साइज़ के २६० पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास चार रुपये पच्चीस नये पैसे में मिल सकता है।

* * *

कहानी

प्रतिनिधि ऐतिहासिक कहानियाँ का प्रकाशन **आत्माराम एंड सन्स, दिल्ली** की ओर से प्रकाशित होने वाली 'प्रतिनिधि साहित्यमाला' के अन्तर्गत किया गया है। इनका सम्पादन सर्वश्री श्रीकृष्ण, मनमोहन सरल और अरुण ने किया है। इस पुस्तक में हिन्दी के श्रेष्ठ कथा-शिल्पियों की उच्च कोटि की ऐतिहासिक कहानियों को संकलित किया गया है। भारतीय इतिहास के प्रेमी पाठकों के लिए ये कहानियाँ अभूतपूर्व प्रेरणा और ज्ञान-सामग्री प्रदान करेंगी। प्रत्येक कहानी के प्रारम्भ में लेखक का परिचय भी दे दिया है, इससे इनकी उपादेयता और भी बढ़ गई है। डिमाई साइज़ के ३२४ पृष्ठ का यह संग्रह आठ रुपये में मिलता है।

* * *

तेलुगु की उत्कृष्ट कहानियाँ इसका प्रकाशन **राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा** की ओर से हुआ है और इसमें तेलुगु भाषा के लगभग १७ उत्कृष्ट कहानीकारों की कहानियों का हिन्दी-अनुवाद प्रस्तुत किया गया है। अनुवादक हैं श्री बालशौरि रेड्डी। प्रत्येक कहानी से पूर्व लेखक का परिचय भी दिया गया है और प्रारम्भ में अनुवादक ने 'तेलुगु के कथा-साहित्य' पर प्रकाश डालने वाला 'तेलुगु कहानी का परिचय' शीर्षक का वक्तव्य भी दिया है प्रत्येक हिन्दी-प्रेमी इस पुस्तक का स्वागत करेगा। क्राउन साइज़ के १७४ पृष्ठ की यह पुस्तक दो रुपये पचास नये पैसे में सुलभ हो सकती है।

* * *

फूलदान में उर्दू के प्रख्यात कथाकार श्री कृशनचन्दर की बारह कहानियों का हिन्दी-अनुवाद प्रस्तुत किया गया है और इनका प्रकाशन किया है **बोरा एण्ड कम्पनी, बम्बई** ने। कृशनचन्दर ने अपनी विशिष्ट व्यंग्यप्रधान शैली में वर्तमान समाज के जीवन के ऐसे पहलुओं को उजागर किया है, जो हम साधारण जनों से छिपे रहते हैं। शैली-चमत्कार और भाषा-गठन की दृष्टि से कृशनचन्दर अपनी विशिष्टता रखते हैं। क्राउन साइज़ के १८२ पृष्ठ की यह सुमुद्रित और सजिल्द पुस्तक तीन रुपये में प्राप्य है।

* * *

मुस्कराहट में उर्दू के प्रख्यात हास्य-लेखक श्री गुलाम अहमद 'फुरकत' की दस ऐसी हास्य-कहानियाँ प्रस्तुत की गई हैं, जिनमें अधिकांश भाषा और शैली की दृष्टि से पठनीय हैं। शब्द-चित्र बनाने में लेखक को जो अभूतपूर्व सफलता मिली है, वह उनकी प्रतिभा की परिचायक है। आशा है हिन्दी में भी लेखक की ये कहानियाँ उर्दू की भाँति ही लोकप्रिय होंगी। क्राउन साइज़ के १०४ पृष्ठ की इस सजिल्द पुस्तक का प्रकाशन **आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली** द्वारा हुआ है और यह दो रुपये में उपलब्ध हो सकती है।

* * *

नाटक

धरती जागी में श्री चन्द्रशेखर भट्ट के दस ऐसे एकांकियों का संकलन प्रस्तुत किया गया है, जो अधिकांशतः स्कूलों, ग्रामों और कम्युनिटी सैण्टरों के मंच पर खेले जा सकते हैं। लेखक क्योंकि स्वयं भी अरसे से इस क्षेत्र में कार्य कर

रहे हैं, अतः उनकी लेखनी से लिखे गए ये नाटक नव-साक्षर, प्रौढ़ों, बच्चों और ग्रामीणों की समस्याओं का पूर्णतः समाधान प्रस्तुत करते हैं। **राजकमल प्रकाशन, दिल्ली** की ओर से प्रकाशित क्राउन साइज़ के १०४ पृष्ठों की यह सजिल्द पुस्तक दो रुपये पच्चीस नये पैसे में प्राप्त हो सकती है।

* * *

धूम-रेखा गुजराती साहित्य के प्रख्यात नाटककार सर्वश्री गुलाबदास ब्रोकर और धनसुखलाल मेहता का एक सामाजिक एकांकी नाटक है। इसमें लेखकों ने बंग-भाषा के राष्ट्रीय आन्दोलन को आधार बनाकर अपने अभीष्ट का प्रतिपादन किया है। प्रेरणा की दृष्टि से यह नाटक पठनीय और मननीय है। **राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा** द्वारा प्रकाशित और श्री गौरीशंकर जोशी द्वारा अनूदित क्राउन साइज़ के ७० पृष्ठों का यह नाटक एक रुपया पच्चीस नये पैसे में मिल सकता है।

* * *

नव प्रभात श्री विजयशंकर राय का एक ऐसा नाटक है, जिसमें लेखक ने सर्वोदय की विचार-धारा को आधार बनाकर सम्पूर्ण ग्राम-राज्य का मनोहारी विवरण प्रस्तुत किया है। आज के नागरिकों को विनोबा और उनके सर्वोदय की विचार-धारा का सन्देश देने के पावन उद्देश्य से प्रेरित होकर इस नाटक की सर्जना की गई है। **अ० भा० सर्व सेवा संघ, वाराणसी** द्वारा प्रकाशित १२४ पृष्ठों का यह नाटक एक रुपये में मिलता है।

* * *

एक सहारा : **अ० भा० सर्व सेवा संघ, वाराणसी** द्वारा प्रकाशित और श्री रामचन्द्र वर्मा द्वारा लिखित एक छोटा-सा ४८ पृष्ठ का नाटक है। इसमें लेखक ने अम्बर चरखे के सहारे पर जीवन-यापन करने वाले परिवारों की समस्याओं का चित्रण किया है। हरिजन और निःसहाय लोगों की वास्तविक परिस्थिति का दर्शन पाठक इसमें कर सकेंगे। पैंतीस नये पैसे में प्राप्य।

* * *

स्वामित्व-विसर्जन में श्री भोलानाथसिंह ने 'ज़र और ज़मीन' की मालिकी का वर्णन करके यह सिद्ध किया है कि यह सब अनर्थों की जड़ है। **अ० भा० सर्व सेवा संघ, वाराणसी** की ओर से प्रकाशित ४८ पृष्ठों का यह नाटक ३५ नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

आवाज़ तेरी है श्री राजेन्द्र यादव की कविताओं का संग्रह है। इसमें उनकी किशोर-गीतों से लेकर नवीनतम कविताएँ संकलित हैं। इन रचनाओं का समय लगभग बारह-तेरह वर्ष है। इसमें उनके कवि के विभिन्न रूप पाठक देख सकेंगे। भाव-मुग्ध गीतों के प्रेमियों को इसमें जहाँ पर्याप्त रस-सामग्री उपलब्ध होगी, वहाँ नई कविता के प्रेमी भी इससे आशान्वित हो सकेंगे। डिमाई साइज़ के ९६ पृष्ठ का यह सजिल्द संकलन **भारतीय ज्ञानपीठ, काशी** ने प्रकाशित किया है और तीन रुपये में प्राप्य है।

* * *

मधु की रात और जिन्दगी में कवि चिरंजीत की नई-पुरानी ४४ कविताएँ संकलित हैं। इनका रचना-काल २० वर्ष है। स्वयं कवि ने अपने 'मेरे ये गीत बीस बहारों के' शीर्षक वक्तव्य में यही बात कही है। चिरंजीत की प्रतिभा बहुमुखी है। इस संग्रह में उनके गीत पढ़कर हिन्दी-पाठक रस-मुग्ध तो होंगे ही, उन्हें इनसे पर्याप्त प्रेरणा भी मिलेगी। क्राउन साइज़ के ८४ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक **आत्माराम एंड सन्स, दिल्ली** ने प्रकाशित की है और दो रुपये में मिल सकती है।

* * *

मानसी श्री उदयशंकर भट्ट द्वारा लिखित काव्य का **आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित पुनर्मुद्रित संस्करण है। इसका पहला संस्करण बहुत दिन पूर्व सन् १९३८-३९ के लगभग इण्डियन प्रेस, प्रयाग ने किया था। अप्राप्य पुस्तक को प्राप्य बनाने के लिए लेखक और प्रकाशक बधाई के पात्र हैं। एक नई बात इस संस्करण में अवश्य देखने में आई कि अंत में लेखक का एक नया गीत भी इसमें संलग्न कर दिया गया है। पता नहीं क्यों? क्राउन साइज़ के ८८ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक दो रुपए में प्राप्य है।

* * *

नामघोषा का प्रकाशन **असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गौहाटी** की ओर से हुआ है। इसमें असमिया भाषा के प्रसिद्ध भक्त और वैष्णव कवि श्री माधवदेव की अनमोल कृति 'नामघोषा' का हिन्दी-अनुवाद प्रस्तुत किया गया है। इसके अनुवादक श्री सुरेन्द्रनाथ साहु और सम्पादक डॉक्टर महेश्वर नेओग हैं। 'नामघोषा' में कवि के लगभग एक हज़ार घोषाओं (भजनों) का हिन्दी-अनुवाद है। इनमें से बहुत से भजन ऐसे हैं जिनकी छाया हमारे पाठकों ने रामायण, महाभारत, भगवद्गीता, बृहन्नारदीय पुराण, पद्म पुराण, ब्रह्म पुराण, स्कन्द पुराण, ब्रह्मांड पुराण, विष्णु पुराण, वामन पुराण आदि के श्लोकों में देखी होगी। भक्ति-साहित्य के प्रेमियों के लिए यह ग्रंथ पठनीय है। क्राउन साइज़ के १५८ पृष्ठ की यह पुस्तक तीन रुपए छः नए पैसे में प्राप्य है।

* * *

आलोचना, निबन्ध

उपन्यासकार 'अश्क' नामक इस ग्रंथ में इसके प्रस्तुतकर्ता डॉक्टर इन्द्रनाथ मदान ने अश्क के मूल्यांकन के सम्बंध में न केवल उन आलोचनात्मक लेखों का संकलन किया है, जो उनके उपन्यासों के पक्ष अथवा विपक्ष में यथासमय लिखे गए हैं, वरन् उन लेखों में व्यक्त विचारों का अपनी विशिष्ट दृष्टि से साधिकार और सप्रमाण विवेचन भी किया है। इस पुस्तक को पढ़कर अश्क के उपन्यास-साहित्य के सम्बंध में प्रचलित भ्रांतियों का परिहार आसानी से हो जाएगा। इस ग्रंथ में प्रस्तुतकर्ता और स्वयं अश्क के अतिरिक्त सर्वश्री शिवनारायण श्रीवास्तव, राजवल्लभ ओझा, ओंकार शरद्, शिवदानसिंह चौहान, नलिन विलोचन शर्मा, शमशेर बहादुर सिंह, देवराज उपाध्याय, धर्मवीर भारती, भगवत्शरण उपाध्याय, राजेन्द्र यादव, अमृतलाल नागर, सुरेन्द्रपाल, छविनाथ पांडेय, लक्ष्मीकांत वर्मा, सतीशचन्द्र श्रीवास्तव, भैरवप्रसाद गुप्त, विजयशंकर मल्ल, ब्रजमोहन गुप्त, हनुमान वर्मा, गुलाबराय, उषादेवी मित्रा, नन्ददुलारे वाजपेयी, बच्चनसिंह, प्रकाशचन्द्र गुप्त, नेमिचंद्र जैन, सुमित्रानन्दन पंत, राजीव सक्सेना, प्रतापनारायण टंडन और सुश्री गीता वन्द्योपाध्याय आदि प्रख्यात लेखकों, कवियों, आलोचकों, पत्रकारों और कथाकारों के अश्कजी की कृतियों के सम्बन्ध में विस्तृत लेख और टिप्पणियाँ संकलित हैं। क्राउन साइज़ के २८० पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक **नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद** ने प्रकाशित की है और पाँच रुपए में प्राप्य है।

* * *

बिहार का गौरव नामक पुस्तक में 'इतिहास', 'साहित्य', 'जीवनी', 'ललित-कला', 'यात्रा', 'विज्ञान', 'लोक-साहित्य' और 'भाषा-विज्ञान', इन आठ विषयों पर लिखे गए पच्चीस निबंध संकलित हैं। लेखों की भाषा सरल और प्रांजल है।

पुस्तक के नाम से उसकी अंतर्वस्तु का सही ज्ञान नहीं होता। पच्चीस निबन्धों में से आधे से कम का ही सम्बन्ध बिहार से है। अतः इसके 'बिहार का गौरव' नाम उपयुक्त

हिन्दी-भवन के प्रमुख प्रकाशन

नहीं प्रतीत होता । इसके लिए कोई वैसा नाम ठीक होता जिससे इसके विविध विषयों की सूचना मिलती । पुस्तक के लेखक हैं श्री राजेश्वर नारायण प्रसाद सिंह तथा प्रकाशक हैं **आत्माराम एंड संस, दिल्ली** । १५६ पृष्ठ की इस पुस्तक का मूल्य चार रुपए है ।

* * *

माता भूमि में श्री जयशंकरप्रसाद त्रिपाठी के कुछ ऐसे निबंध संकलित किये गए हैं,'जो ग्राम्य-जीवन और धरती की सुषमा के शब्द-चित्र कहे जा सकते हैं । विषय की दृष्टि से निबंध के क्षेत्र में यह अभिनव प्रयास है, यह श्री लक्ष्मीनारायण मिश्र ने ठीक ही कहा है । हिन्दी-निबंध में नई शैली के प्रवर्त्तन की दृष्टि से ये निबन्ध अवश्य ही स्वागत योग्य हैं । क्राउन साइज़ के १२० पृष्ठ की यह पुस्तक **कौशाम्बी प्रकाशन, प्रयाग** द्वारा वितरित है और इसके प्रकाशन के लिए उत्तर प्रदेश-सरकार ने चार सौ रुपए दिए हैं । यह दो रुपए में प्राप्य है ।

* * *

करुण रस : मध्ययुगीन हिन्दी राम-काव्य के परिवेश में नामक ग्रन्थ डॉक्टर ब्रजवासीलाल द्वारा आगरा विश्व-विद्यालय की पी-एच० डी० उपाधि के लिए लिखित और स्वीकृत शोध-प्रबन्ध है । इसमें विद्वान् लेखक ने करुण रस की मनोविज्ञानाश्रित शास्त्रीय समीक्षा करके 'मध्य-युगीन हिन्दी राम-काव्य की पूर्व पीठिका', 'मध्ययुगीन हिन्दी राम-काव्य में जीवन-दर्शन', 'लोक-गीतों में करुण रस', 'सूर की राम-कथा में करुण रस', 'तुलसी की मानस तथा गीतावली', 'केशव की राम-कथा में करुण रस' और 'मध्ययुगीन हिन्दी-राम-कथा में करुण रस' आदि विभिन्न अध्यायों में करुण रस के सर्वांगीण रूप को प्रस्तुत किया है । डिमाई साइज़ के ३५६ पृष्ठ का यह सजिल्द ग्रन्थ **हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली** ने प्रकाशित किया है और साढ़े पाँच रुपये में प्राप्य है ।

* * *

पालि-साहित्य और समीक्षा नामक पुस्तक में इसके लेखक डॉक्टर सरनामसिंह शर्मा ने एम० ए० की परीक्षा में बैठने वाले छात्रों की उपयोगिता की दृष्टि से पालि-भाषा और उसके साहित्य का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया है ।

अन्त में लेखक ने आधुनिक भारतीय-भाषाओं और उनके साहित्य पर पालि-साहित्य के प्रभाव का वर्णन भी विस्तार से कर दिया है। इसमें जहाँ पालि-भाषा की शिक्षा और उसके सिद्धान्तों की चर्चा की गई है, वहाँ पालि-व्याकरण के सभी पक्षों पर भी व्यापक विवरण प्रस्तुत किया गया है। **हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज के १८० पृष्ठ की यह पुस्तक तीन रुपए बारह नए पैसे में उपलब्ध हो सकती है।

* * *

गुजराती साहित्य का संक्षिप्त इतिहास में डॉक्टर बरसानेलाल चतुर्वेदी ने गुजराती भाषा और उसके साहित्य का परिचय प्रस्तुत किया है। 'साहित्य रत्न' तथा अन्य उच्च कक्षाओं में गुजराती का अध्ययन करने वाले छात्रों के लिए यह पुस्तक पठनीय और संग्रहणीय है। **हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज के १३० पृष्ठ की यह पुस्तक दो रुपये में सुलभ हो सकती है।

* * *

सूरदास का प्रकाशन इसके प्रकाशक **हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली** ने अपनी प्रश्नोत्तर-रूप में आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करने वाली पुस्तकमाला के अन्तर्गत किया है। इसके लेखक प्रोफेसर दामोदरदास गुप्त ने इसमें महाकवि सूरदास के व्यक्तित्व और कृतित्व का विशद अध्ययन प्रश्नोत्तर रूप में प्रस्तुत किया है। एम० ए० तथा साहित्य-रत्न-जैसी परीक्षाओं में बैठने वाले छात्र इससे लाभान्वित हो सकेंगे, ऐसी आशा है। क्राउन साइज के २४८ पृष्ठ की यह पुस्तक दो रुपये पचास नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

चिन्तामणि-चिन्तन का प्रकाशन भी इसके प्रकाशक **हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली** ने अपनी उक्त पुस्तकमाला के अंतर्गत ही किया है। इसके लेखक श्री ओमप्रकाश सिंहल ने आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और उनके 'चिन्तामणि' नामक ग्रन्थ का समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है। क्राउन साइज के १४० पृष्ठों की यह पुस्तक भी दो रुपये पचास नये पैसे में ही मिलती है।

* * *

भारत भारती नाम से **राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा** ने

एक पुस्तकमाला प्रकाशित की है। इस पुस्तकमाला के अन्तर्गत प्रकाशित पुस्तकों में **उड़िया, मराठी, गुजराती** और **असमिया** भाषा-सम्बन्धी पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। इन पुस्तकों का प्रकाशन इसलिए किया गया है, जिससे हिन्दी-भाषी जनता हिन्दी के माध्यम से अन्य भाषाओं का ज्ञान प्राप्त कर सके। इन भाषाओं का प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त करने की दृष्टि से ये पुस्तकें सर्वथा उपयोगी हैं। प्रत्येक पुस्तक क्राउन साइज़ के लगभग ६०-६० पृष्ठों की है और सवा-सवा रुपये में प्राप्त की जा सकती है।

* * *

जीवनी

अपनी खबर हिन्दी के ख्यातनामा साहित्यकार और उत्कृष्ट भाषा शिल्पी पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' द्वारा लिखित उनकी अपनी जीवन-कहानी है। इसमें उन्होंने अत्यन्त ईमानदारी से अपने पारिवारिक जीवन की झाँकी प्रस्तुत करके अपने साहित्यिक-विकास के प्रारम्भिक चरण की कहानी कही है। शैली की ताज़गी, भाषा की विशिष्टता और अभिव्यक्ति की स्पष्टता की दृष्टि से 'अपनी खबर' प्रत्येक हिंदी-प्रेमी के लिए पठनीय है। इसमें पाठकों को जहाँ 'उग्र'जी के जीवन और साहित्य की संक्षिप्त झलक मिलेगी वहाँ वे उनके कुछ समकालीन साथियों, साहित्यकारों, सुधारकों और सहकर्मियों के विषय में भी उपयोगी जानकारी प्राप्त कर सकेंगे। पुस्तक में समाविष्ट कुछ अलभ्य चित्रों ने तो इसकी उपादेयता को और भी बढ़ा दिया है। **राजकमल प्रकाशन, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित डिमाई साइज़ के १३८ पृष्ठों की यह सुमुद्रित पुस्तक चार रुपये पचास नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

मिरजा ग़ालिब : जीवनी और साहित्य में इसके लेखक श्री रसूल अहमद 'अबोध' ने १. जन्म, बाल्यकाल और शिक्षा-दीक्षा, २. साहित्य-रचना और ३. स्वभाव तथा रहन-सहन शीर्षक तीन अध्यायों में उर्दू के विख्यात शायर मिर्जा ग़ालिब की जीवनी और उसके साहित्य की झाँकी प्रस्तुत की है। **राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज़ के ६८ पृष्ठ की यह पुस्तक एक रुपया पच्चीस नये पैसे में उपलब्ध हो सकती है।

* * *

बापू के संस्मरण में श्रीमती मनु बहन गांधी ने 'प्रभावती बहन', 'व्रत का पालन', 'बा का पत्र', 'बापू का रोष', 'बापू और ब्रह्मचर्य', 'सूक्ष्म विज्ञान', 'बापू, लालटेन और मैं', 'स्टेशन-मास्टर का कर्तव्य' और 'मैं सेवक हूँ—बापू' शीर्षक ६ अध्यायों के अंतर्गत बापू के जीवन से सम्बन्धित अनेक संस्करण प्रस्तुत किए हैं। क्राउन साइज़ के ३६ पृष्ठ की यह सुमुद्रित पुस्तक **शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी (प्रा०) लिमिटेड, आगरा** ने प्रकाशित की है और पचास नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

राजनीति

गांधी और विश्व-शान्ति में श्री देवीदत्त शर्मा ने महात्मा गांधी द्वारा बताये गए विश्व-शान्ति के मार्ग का वर्णन अपने अनुभवों के आधार पर किया है। इसके 'आधुनिक विश्व की पृष्ठभूमि', 'युग और युगपुरुष', 'गांधी-सिद्धान्त और उनका प्रयोग', 'समस्याएँ और उनका समाधान', 'नवीन समाज रचना' और 'उपसंहार' आदि अध्याय पुस्तक की उपादेयता पर प्रकाश डालने के लिए पर्याप्त हैं। **अ० भा० सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी** द्वारा प्रकाशित १०० पृष्ठ की यह पुस्तक ६० नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

कार्यकर्ता क्या करें नामक इस छोटी-सी पुस्तक में आचार्य विनोबा के १४ ऐसे भाषणों का संग्रह प्रस्तुत किया गया है, जो उन्होंने उत्तर प्रदेश की यात्रा के दौरान दिये थे। प्रत्येक रचनात्मक कार्यकर्ता इन्हें चाव से पढ़ेगा। **अ० भा० सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी** द्वारा प्रकाशित यह पुस्तक ७५ नये पैसे में मिल सकती है।

* * *

सूतांजलि में श्री ति० न० आत्रेय ने 'सूतांजलि' सम्बन्धी अपने कार्यक्रम की विस्तृत रूपरेखा प्रस्तुत की है। इसमें

'स्मृति-रक्षा', 'सूतांजलि की प्रेरणा', 'कर्ममय उपासना', 'अहिंसक समाज-स्थापना का संकेत', 'सूत्रकूट पर्वत' आदि विभिन्न अध्यायों के शीर्षक इसकी उपयोगिता प्रकट करने के लिए पर्याप्त हैं। **अ० भा० सर्वसेवा संघ** द्वारा प्रकाशित २८ पृष्ठों की यह पुस्तक बीस नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

शुचिता में आत्म-दर्शन नामक पुस्तक का प्रकाशन भी **अ० भा० सर्वसेवा संघ, वाराणसी** ने किया है और इसमें श्री विनोबा के वे भाषण संकलित हैं, जो उन्होंने इन्दौर में दिये थे। क्राउन साइज के ५६ पृष्ठों की इस पुस्तक में 'स्वांग-जुगुप्सा', 'परैः असंसर्गः', 'सत्त्वशुद्धि', 'सौमनस्य', 'ऐकाग्रय', 'इन्द्रिय-जय' और 'आत्म-दर्शन' शीर्षक सात अध्यायों में बड़ी उपयोगी सामग्री प्रस्तुत की गई है। क्राउन साइज़ की ५६ पृष्ठ की यह पुस्तक ४० नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

विवेक और साधना नामक इस पुस्तक का प्रकाशन **नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद** ने किया है। इसमें महाराष्ट्र के एक सन्त श्री केदारनाथ के आध्यात्मिक विचारों का संकलन प्रस्तुत किया गया है। सारी पुस्तक को सम्पादकों ने 'विवेक-दर्शन', 'साधन-विचार' (चित्त का अभ्यास), 'धर्म्य व्यवहार' और 'गुण-दर्शन' शीर्षक चार अध्यायों में विभक्त किया है। पुस्तक सर्वथा उपयोगी और पठनीय है। प्रारम्भ में इसके सम्पादक श्री किशोरलाल घ० मशरूवाला का वक्तव्य दिया गया है, जिससे श्री केदारनाथ की विचारधारा पर व्यापक प्रकाश पड़ता है। इसका अनुवाद श्री रामनारायण चौधरी ने किया है। क्राउन साइज के ३४६ पृष्ठ की इस पुस्तक का मूल्य चार रुपये है।

* * *

अभिधम्मत्थ संगहो : बौद्ध धर्म के आचार्य अनुरुद्ध महास्थविर के इसी नाम के ग्रन्थ का हिन्दी-अनुवाद है। अनुवादक हैं भदन्त आनन्द कौसल्यायन। बौद्ध-धर्म के प्रेमी पाठकों के लिए यह ग्रन्थ पठनीय है। **बुद्ध विहार, लखनऊ** की ओर से प्रकाशित क्राउन साइज के ११२ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक तीन रुपये में प्राप्य है।

* * *

बाल तथा प्रौढ़-साहित्य

प्यारे भूले भाइयो नाम से ५ भागों में श्री कृष्णदत्त भट्ट ने विनोबा की विचारधारा पर प्रकाश डालने वाले गूढ़ विषयों को रोचक और सरल कहानियों के माध्यम से प्रस्तुत किया है। इन पाँचों भागों के नाम क्रमशः ये हैं—'बयरु न कर काहू सन कोई', 'डरने की क्या बात है', 'मक्खन बनाओ अपना दिल', 'डाकू भी साधु बनते हैं' तथा 'आओ सही राह पर'। ये पुस्तकें बालकों और प्रौढ़ों सभी के लिए समान रूप से उपयोगी हैं। **अ० भा० सर्वसेवा संघ, वाराणसी** द्वारा प्रकाशित ४८-४८ पृष्ठ की ये सभी पुस्तकें ३०-३० नये पैसे में उपलब्ध हो सकती हैं।

* * *

बिल्ली की कहानी नामक यह पुस्तक **अ० भा० सर्वसेवा संघ, वाराणसी** ने तीन भागों में प्रकाशित की है। इन सभी पुस्तकों में बाल-साहित्य के सफल लेखक श्री महात्मा भगवानदीन की बालोपयोगी कहानियाँ प्रस्तुत की गई हैं। प्रत्येक कहानी दुरंगे-तिरंगे चित्रों से विभूषित होने के कारण बच्चों के लिए पठनीय सामग्री को और भी उपयोगी बनाने वाली है। प्रत्येक पुस्तक ७५-७५ नये पैसे में मिल सकती है।

* * *

राष्ट्रपति-भवन की डायरी : राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद के भूतपूर्व निजी सचिव श्री वाल्मीकि चौधरी की नवीनतम कृति है। इसमें लेखक ने जनवरी १९५० से अप्रैल १९५२ तक की उन सभी घटनाओं का समावेश डायरी के रूप में किया है, जिनका सम्बन्ध किसी-न-किसी रूप में राष्ट्रपति-भवन से रहा है। इस पुस्तक से पाठक यह भली-भाँति जान जाएँगे कि राष्ट्रपति-पद के प्रभाव ने राजेन्द्र बाबू के व्यक्तित्व पर कैसी छाप डाली है। राष्ट्रीय शान-शौकत की चकाचौंध में इस राष्ट्रपति का वैधानिक महत्त्व न भुला बैठें। उनके निर्वाचन, शपथ-ग्रहण तथा कार्यभार-ग्रहण करने की क्या-क्या रीतियाँ हैं। समय-समय पर वे कौन-

१ मार्च, १९६१ का प्रकाशन

हिन्दी को हमारी अद्वितीय देन

दूसरे विश्व-युद्ध की सच्ची कहानियाँ
(प्रथम भाग)

आधुनिक युद्ध की समस्याओं, विभीषिकाओं के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालने वाली सच्ची आपबीतियाँ। जंगी जहाजों व पनडुब्बियों के युद्ध; बम-वर्षकों व छाता-सैनिकों के कारनामे; जंगलों व मैदानों की मुठ-भेड़ें; बन्दी शिविरों से भागने व गुप्तचरों की कारस्तानियों आदि की रोमांचकारी कथाएँ।

सम्पादक : वरदाचारी पंडित मूल्य : तीन रुपए

परिचित प्रश्न : नई समीक्षा

साहित्य के विद्यार्थियों, एम० ए०, साहित्यरत्न आदि कक्षाओं के छात्रों के लिए सैद्धांतिक, कृति तथा कृतिकार-विषयक उच्चकोटि के समालोचनात्मक निबन्ध।

लेखक : प्रो० सत्यपाल चुघ एम० ए०, सा० रत्न

पृष्ठ-संख्या : ४४० मूल्य : साढ़े पाँच रुपए

अफ्रीका के जंगलों में

विश्व-विख्यात शिकारी जॉन हंटर-कृत 'हंटर' का हिन्दी-अनुवाद। शेर, हाथी, गैंडा आदि हिंसक पशुओं के जोखिम-भरे शिकार के सच्चे वर्णन।

अनुवादक : महेन्द्रपाल भाटिया; मूल्य : तीन रुपए

रूसी एजेण्ट

अन्तरराष्ट्रीय गुप्तचरों द्वारा भेद प्राप्त करने के तरीकों, माइक्रोफिल्म, वायरलैस, कूट-भाषा द्वारा गुप्त जानकारी स्वदेश भेजने की विधि का ज्ञान कराने वाली एकमात्र हिन्दी-पुस्तक। भूतपूर्व रूसी गुप्तचर की सच्ची आपबीती। हिन्दी को हमारी सामयिक देन।

अनुवादक : वरदाचारी पंडित; मूल्य : रु० ३.८७ न. पै.

निशियाम प्रकाशन

१९ एल०, लाजपतनगर-३

नई दिल्ली-१४

इनसे भी प्राप्य—

१. इंडियन पब्लिशिंग हाउस, नई सड़क, दिल्ली

२. राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली

कौन से परिधान धारण करते हैं तथा किस ढंग से विभिन्न वर्गों के राजकीय कर्मचारियों एवं देश के नेताओं, समाज-सेवियों, स्वयंसेवकों, विद्वानों, दार्शनिकों आदि से किस रूप में और कैसे मिलते है, आदि बातों का वर्णन भी इस पुस्तक में पाठकों को यथाप्रसंग विस्तार से मिलेगा। डायरी के रूप में यह ग्रन्थ हिन्दी-साहित्य की श्रीवृद्धि में सहायक होगा, ऐसी आशा है। डिमाई साइज के ३३४ पृष्ठ का यह सजिल्द ग्रन्थ **आत्माराम एंड संस, दिल्ली ने** प्रकाशित किया है और सात रुपए चौरानवे नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

(पृष्ठ ३३० का शेष)

चौथी बुनियादी जरूरत यह है कि उचित स्तर की काफ़ी पाण्डुलिपियाँ उपलब्ध हों। हिन्दी में बहुत से प्रकाशक पुरानी पुस्तकों को ही दुबारा छापने पर सारा ध्यान केन्द्रित कर रहे हैं। यह तो अच्छी बात है, परन्तु लेखकों से ऐसे विषयों पर मौलिक पुस्तकें लिखवाने की दिशा में भी क़दम उठाए जाने चाहिए जो शिक्षा तथा संस्कृति की दृष्टि से वांछनीय हों। यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें हम पेंग्विन के उदाहरण से प्रेरणा प्राप्त कर सकते हैं। जब तक साधारण पाठकों के लिए विज्ञान-सम्बन्धी विषयों पर लेखकों से मौलिक पुस्तकें नहीं लिखवायी जाएँगी तब तक पाठकों में विज्ञान के प्रति रुचि नहीं पैदा की जा सकेगी। मनोरंजन एक अच्छी चीज है, आवश्यक चीज है—परन्तु उसकी भी अति हो सकती है, जैसा कि शायद हिन्दी में पॉकेट-बुक्स के क्षेत्र में आज हो रहा है।

पेंग्विन की योजना आज परिपक्वता प्राप्त कर चुकी है। हम आशा करते हैं कि हिन्दी के प्रकाशक पेंग्विन पुस्तकों के वास्तविक ध्येय को अंगीकार करेंगे और अपने अन्दर वैसी ही लगन पैदा करेंगे और ज्ञान के भूखे और निर्धन पाठकों तक उचित प्रकार की पाठ्य-सामग्री पहुँचाने के सराहनीय ध्येय को पूरा करने की दिशा में आवश्यक क़दम उठाएँगे।

आगामी मास के प्रकाशन

आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली

—**खेतों की गोद में**, श्री पीताम्बर पटेल, उपन्यास

—**दिमाग़ का बीमा**, श्री न० र० टण्डन, एकांकी-संग्रह

—**मेरी पैंतीस कहानियाँ**, श्री शैलेश मटियानी, कहानी-संग्रह

—**जंगल की सैर**, श्री सुरेश वैद्य, अरण्य-परिचय

—**नटखट टम्मा**, श्री दयाशंकर मिश्र 'दद्दा', बाल-नाटक

—**आँवला, अंजीर, सर्पगन्धा, सौंठ**, श्री रामेश बेदी, द्रव्य-गुण-विज्ञान (चार पृथक् पुस्तकें)

—**साहित्य के स्वर**, श्री उदयशंकर भट्ट, निबंध-संग्रह

—**दुनिया के आश्चर्य**, श्री धर्मपाल शास्त्री, ज्ञान-विज्ञान

—**वस्त्र-विज्ञान** (सचित्र), सुश्री आशारानी वोहरा, महिलोपयोगी

राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

—**तपस्विनी**, श्री कन्हैयालाल मुंशी के नवीनतम उपन्यास के प्रथम खण्ड का अनुवाद

—**शिल्पी**, कविवर श्री सुमित्रानन्दन पन्त के काव्य-रूपकों का संग्रह (पु० मु०)

—**हिन्दी उपन्यास**, पंजाब यूनिवर्सिटी से पी-एच० डी० के लिए स्वीकृत शोध-प्रबंध, लेखिका डॉक्टर सुषमा-धवन।

—**कथा कहो उर्वशी**, श्री देवेन्द्र सत्यार्थी का नवीनतम उपन्यास।

राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली

—**पाप के परे**, श्री राजेन्द्र अवस्थी, उपन्यास

—**स्वस्तिका**, श्री व्रजकिशोर नारायण, उपन्यास

—**बड़ा आदमी**, श्री यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र', उपन्यास

—**सोना और खून**, श्री चतुरसेन शास्त्री, उपन्यास

—**मोती**, श्री चतुरसेन शास्त्री, उपन्यास

—**सोया हुआ शहर**, श्री चतुरसेन शास्त्री, कहानी-संग्रह

—**त्रिभंगिमा**, श्री बच्चन, कविता-संग्रह

—**नीरज**, श्री क्षेमचन्द्र 'सुमन', जीवन और संकलन

लक्ष्मीनारायण एण्ड सन्स, आगरा

—**बुनियादी शिक्षा में कताई-बुनाई**, श्री श्यामसुन्दरलाल त्रिपाठी

—**शिक्षा में सांख्यिकी के सिद्धांत**, प्रो० एम० पी० सिंह (पुनर्मुद्रण)

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर, बम्बई

—**छत्तीसगगढ़ी-हलबी-भतरी**, डॉ० भालचन्द्र राव तैलंग, भाषा-विज्ञान

—**मीराँबाई**, डॉ० प्रभात, आलोचनात्मक अध्ययन

—**भारत-रमणी**, श्री डी० एल० राय, नाटक

—**भीमपलासी**, श्री बनफूल, उपन्यास

फरवरी मास के प्रकाशन

आलोचना-निबन्ध

रवीन्द्रनाथ टैगोर, **रवीन्द्र कथा-कुञ्ज**, १६५, क्रा०, हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर, बम्बई
वासुदेवशरण अग्रवाल, **वेद-विद्या**, ३०४, क्रा०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा
वासुदेवशरण अग्रवाल, **पृथ्वी-पुत्र**, ३६०, क्रा०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा
हजारीप्रसाद द्विवेदी, **बाणभट्ट की आत्मकथा**, ३६५, क्रा०, हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर, बम्बई
हजारीप्रसाद द्विवेदी, **सूर-साहित्य**, २१०, क्रा०, हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर, बम्बई

उपन्यास

इन्दिरा नूपुर, **बिषपान**, क्रा०, चन्द्रलोक प्रकाशन, इलाहाबाद
भगवत्शरण चतुर्वेदी, **श्रम चमकेगा**, डि०, राजस्थान प्रकाशन, जयपुर
मन्मथनाथ गुप्त, **रैन-अँधेरी**, ३२४, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली
यज्ञदत्त शर्मा, **मंगलू की माँ**, २३२, क्रा०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा
विभूतिभूषण, **पथेर-पांचाली**, ३१५, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली
शैलेश मटियानी, **किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई**, ३७०, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली

एकांकी नाटक

अविनाश, **काँटा भी महक उठे**, १४२, क्रा०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा
आनन्दकुमार, **जातक कथाएँ**, १०६, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली
कृष्णकिशोर श्रीवास्तव, **रास्ते, मोड़ और पगडंडियाँ**, ७४, क्रा०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा
छैलबिहारी गुप्त, **बजी बाँसुरी धीरे-धीरे**, ६२, क्रा०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा
डी० एल० राय, **अहिल्या**, १४०, क्रा०, हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर, बम्बई
देवराज 'दिनेश', **झूठ का दान**, ४८, क्रा०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा
देवराज 'दिनेश', **समस्या सुलझ गई**, १६५, क्रा०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा
मनमोहन सरल, अरुण, **प्रतिनिधि हास्य-एकांकी**, ३७०, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली
यशोविमलानन्द, **सुबह का भूला**, डि०, राजस्थान प्रकाशन, जयपुर
रत्नाकर पांडेय, **विश्वास बड़ा है सपने से**, १६४, क्रा०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा
राजेन्द्रकुमार शर्मा, **परदा उठने से पहले**, १२८, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली
सुदर्शन, **सुदर्शन-सुमन**, २२६, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली

कविता-शायरी

उदयशंकर भट्ट, **अमृत और विष**, ११२, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली
बच्चन, **आकुल अन्तर**, ११६, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली

शाह नसीर फरीदी, **उर्दू की प्रसिद्ध हिन्दू कवयित्रियाँ**, १६०, क्रा०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, दिल्ली — २.००

हरीश भारती, **अधूरे गीत**, ८०, क्रा०, राजस्थान पुस्तक-गृह, बीकानेर — ३.००

ज्ञान-विज्ञान

एन० एल० कुलश्रेष्ठ, **भारत में सहकारी खेती**, ४८, डि०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा — ०.६०

बलदेवबिहारी अग्रवाल, **भौतिकी**, १७२, क्रा०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा — २.००

रमेशचन्द्र वर्मा, अनु०, **ज्वालामुखी और भूचाल की कहानी**, १३२, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली — २.००

स० द० श्रीवास्तव, **वैज्ञानिक उद्यान-शास्त्र**, २२५, क्रा०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा — ४.००

जीवनी, संस्मरण, पत्रव्यवहार

प्रकाश पंडित, **मजाज**, १००, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली — १.५०

प्रकाश पंडित, **फैज अहमद 'फैज'**, ६५, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली — १.५०

शरच्चन्द्र, **शरत्-पत्रावली**, १६०, क्रा०, हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर, बम्बई — १.५०

जोसेफ ए० शुम्पीटर, **दस महान् अर्थशास्त्री**, २१४, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — ६.५०

बाल-साहित्य—प्रौढ़ साहित्य

आनन्दप्रकाश जैन, **तेलंगाना की लोक-कथाएँ**, २ भा०, ४०, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — १.२५

बालगोविन्द तिवारी, **गणराज्य**, ४४, का०, राजस्थान पुस्तक-गृह, बीकानेर — ००.५०

बालगोविन्द तिवारी, **आगे बढ़ो**, ३२, का०, राजस्थान पुस्तक-गृह, बीकानेर — ००.५०

यज्ञदत्त शर्मा, **बच्चों के बीच**, ३६, का०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा — १.२५

यज्ञदत्त शर्मा, **बच्चों के बीच**, ३३, का०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा — १.२५

यादवेन्द्र शर्मा, **मोम का बादशाह**, ३२, का०, राजस्थान पुस्तक-गृह, बीकानेर — १.०६

यादवेन्द्र शर्मा, **पद्मा का सूरज**, ३२, का०, राजस्थान पुस्तक-गृह, बीकानेर — १.००

रमेशकुमार माहेश्वरी, **विश्व के त्योहार**, ११२, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — २.५०

शिवमूर्तिसिंह 'वत्स', **बिहार की लोक-कथाएँ**, २ भा०, ६४, का०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — १.५०

शिवमूर्तिसिंह 'वत्स', **मिथिला की लोक-कथाएँ**, ६४, का०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — १.५०

श्रीकृष्ण, रमेश माहेश्वरी, **यूक्रेन की लोक-कथाएँ**, ४०, का०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — १.२५

सरस्वतीकुमार 'दीपक', **चुन्नू-मुन्नू**, ६०, का०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — २.००

संजीवकुमार मुकर्जी, **सपना**, १६, क्रा०, राजस्थान पुस्तक-गृह, बीकानेर — ००.५०

संजीवकुमार मुकर्जी, **देखते रहो**, २४, क्रा०, राजस्थान पुस्तक-गृह, बीकानेर

विविध

उमाशंकर पाराशर, **नवीन व्यापार-प्रणाली**, पु० मु०, ५५०, क्रा०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा — ३.५०

गिरिराज प्रसाद गुप्त, **राजस्व के सिद्धान्त एवं वित्त-व्यवस्था**, ३५०, डि०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा — ५.५०

गिरजा प्रसाद गुप्त, **हमारी आर्थिक समस्याएँ**, पु० मु०, ३६०, डि०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा — ५.५०

गैंड एण्ड शर्मा, **माध्यमिक शिक्षालय-व्यवस्था**, ४४०, डि०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा — ६.२५

चन्दभानु गुप्त, **आय-कर विधान एवं हिसाब-लेखे**, पु० मु०, २४० डि०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा — ६.५०

जी० डी० आर० भण्डारी तथा एस० पी० जौहरी, **भारत में आर्थिक नियोजन**, पु० मु०, ३२६, डि० लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा — ६.००

एन० एल० कुलश्रेष्ठ, संसार का आर्थिक भूगोल, २२४, डि०, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा ४.००

पी० एल० गोलवलकर, सेक्रेटेरियल प्रैक्टिस एवं प्रमण्डल अधिनियम, पु० मु०, ४२०, क्रा०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा ६.२५

पी० एल० गोलवलकर, मुद्रा-विनिमय तथा अधिकोषण, पु० मु०, ८००, डि०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा ८.००

बाबूलाल शर्मा, बुनियादी शिक्षा-सिद्धान्त, क्रा०, राजस्थान प्रकाशन, जयपुर ३.५०

बाबूलाल शर्मा, शिक्षा-मनोविज्ञान के बुनियादी तत्त्व, क्रा०, राजस्थान प्रकाशन, जयपुर ४.००

बाबूलाल शर्मा, बुनियादी शिक्षा और समाज-रचना, राजस्थान प्रकाशन, जयपुर ३.५०

भगवतशरण उपाध्याय, भारतीय मूर्ति-कला की कहानी, ८०, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली १.२५

भगवतशरण उपाध्याय, हमारे पड़ोसी, ६६, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली ०.६६

राजेन्द्रकुमार, हमारा गाँव, क्रा०, राजस्थान प्रकाशन, जयपुर १.००

वोहरा व वनमाली, विक्रय-कला, विक्रय-संगठन तथा विज्ञापन, पु० मु०, ३५०, क्रा० रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा ४.५०

श्रीमती किरण, यह मुँह मसूर की दाल, ३६, का०, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा १.२५

सत्यदेव देराश्री, भारतीय अर्थ-शास्त्र, ६६४, डि०, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा ११.००

सत्यदेव देराश्री, उच्चत्तर माध्यमिक अर्थ-शास्त्र, पु० मु०, ७७१, डि०, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा ७.५०

सत्यपाल रुहेला, बुनियादी शिक्षा की सामान्य तथा विशिष्ट शिक्षण-विधियाँ, डि०, राजस्थान प्रकाशन, जयपुर ६.००

सत्यपाल रुहेला, पाठशाला-प्रबन्ध, क्रा०, राजस्थान प्रकाशन, जयपुर ४.५०

PRAKASHAN SAMACHAR

Announcement under clause 19 D of the Press and Registration of Books Act, 1867 as modified in 1956.

FORM IV

1. Place of Publication.......Delhi
2. Periodicity of its publication.......Monthly
3. Printer's Name.......Shri Gopinath Seth
   Nationality.......Indian
   Address.......Navin Press, 6 Faiz Bazar, Delhi
4. Publisher's Name.......Shri Dev Raj
   Nationality.......Indian
   Address.......Rajkamal Prakashan Private Ltd., 8 Faiz Bazar, Delhi
5. Editor's Name.......Shri Om Prakash
   Nationality.......Indian
   Address.......C/o Rajkamal Prakashan Private Ltd. 8 Faiz Bazar, Delhi
6. Names and addresses of individuals who own the newspaper and partners or shareholders holding more than one per cent of the total capital. — **Rajkamal Prakashan Private Ltd.**

I. Dev Raj, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

Date 1-3-61

Sd. DEVRAJ
Publisher

प्रकाशन समाचार

वर्ष : ८
अंक : ८
वार्षिक : ३.००
एक प्रति : ०.३१

सम्पादक : ओंप्रकाश, डायरेक्टर इंचार्ज, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड

अखिल भारतीय हिन्दी प्रचारक संघ के पटना-सम्मेलन के सम्मुख, जो कि १६ और १७ अप्रैल को होने जा रहा है, कार्य-समिति द्वारा प्रस्तुत इस महत्वपूर्ण प्रस्ताव पर विचार भी होगा :

"कार्यसमिति इस बात पर अत्यन्त खेद प्रकट करती है कि संघ द्वारा पंजीकृत प्रकाशकों और पुस्तक-विक्रेताओं द्वारा प्रचारित बिक्री के नियमों का उल्लंघन बड़े परिमाण में और खुलेआम हो रहा है। कार्यसमिति पटना में होने वाले संघ के आगामी वार्षिक सम्मेलन में प्रस्तावित करती है कि इस स्थिति का यदि कोई प्रतिकार सम्भव नहीं है तो वह पंजीकरण की व्यवस्था और बिक्री-सम्बन्धी सब नियमों को स्थगित कर दे और तदनुसार विधान में संशोधन करे।"

इस प्रस्ताव को कार्यसमिति ने बड़े खेद और विचार के साथ अपनी १५ मार्च, ६१ की बैठक में स्वीकृत किया था। स्पष्ट है कि संघ ने अब तक जो मान-प्रतिष्ठा और पुस्तक-व्यवसाय के हित में नियमितता-अनुशासन लाने का सफल प्रयास किया है, उस सब पर इस एक प्रस्ताव के संघ के खुले अधिवेशन में स्वीकृत हो जाने पर पानी फिर जायगा। भारत की विभिन्न भाषाओं के प्रकाशन-क्षेत्रों में ही नहीं, वरन् एशिया के सभी देशों के प्रकाशन-क्षेत्रों में पुस्तकों को उनके प्रकाशित मूल्यों पर बेचने का यह पहला अनुबन्ध था। इस अनुबन्ध से हिन्दी-प्रकाशन-व्यवसाय की धाक बढ़ी और पुस्तक-व्यवसायियों को अपनी सेवाओं को बेहतर बनाने के लिए एक उपयुक्त साधन मिल गया था। आज इस सब सफलता और एक सत्प्रयास को ढहते देखकर बहुत दुःख होता है।

सरकारी क्षेत्रों में जो पुस्तकें खरीदी जाती हैं, वहाँ १२½% और २०% के प्रचारित नियम प्रायः मान्य हो चुके हैं। दिल्ली, राजस्थान, बिहार, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश आदि में शिक्षा-विभाग अथवा उनके अधीनस्थ उप-विभाग कमीशन की इन्हीं दरों पर पुस्तकें खरीदने लगे हैं। कठिनाई मुख्यतः पुस्तकालयों को बेची जाने वाली पुस्तकों की है। क्योंकि अनेक राज्यों के पुस्तकालय अभी भी पुस्तकें खरीदने से पहले टेण्डरों द्वारा कमीशन की दरों आदि की पूछताछ करते हैं।

सम्मेलन में भाग लेने वाले प्रकाशकों से अपील है कि वे इस प्रस्ताव को स्वीकार करने से पहले एक बार अच्छी तरह सोच-विचार कर लें। काफ़ी हद तक सफलता प्राप्त की जा चुकी है और नियमों का पालन भी काफी

हद तक होता है। क्या नियमों का उल्लंघन करने वालों के प्रति अधिक कड़ाई बरतने से सामूहिक हित की इस लाभप्रद व्यवस्था को बचाया नहीं जा सकता !

बिक्री-सम्बन्धी अनुशासन में जो ढिलाई उपस्थित हो गई है और जिनके कारण कार्यसमिति को उपर्युक्त प्रस्ताव उपस्थित करना पड़ा है, संक्षेप में उसके कारणों पर नज़र डाल लेना उचित होगा : (१) हिन्दी के प्रमुख प्रकाशकों ने प्रचारित नियमों का पालन कड़ाई से नहीं किया है। बहुतों ने इन नियमों को तोड़ने के वैध बहाने भी यदा-कदा अपनाए हैं, अपने पल्ले से पाँच रुपये भर के और अनुबन्ध पर हस्ताक्षर करवाके पुस्तकें पंजीकृत पुस्तक-विक्रेताओं को भेजी जाती रही हैं, और अब तो अनेक बड़े प्रकाशक खुलेआम भी अधिक कमीशन देने की बात करने लगे हैं। (२) हिन्दी की अनेक बड़ी प्रकाशन-संस्थाओं ने इन नियमों में अपने को बाँधना स्वीकार नहीं किया। (३) प्रचारित नियमों में पाठ्य-पुस्तकों की बिक्री पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं लगाया जा सका। (४) अनेक ऐसे धोखे के नामों का पंजीबंधन कर लिया गया है जोकि वास्तव में पुस्तक-विक्रेता नहीं हैं। नियमों को तोड़ने वाले पुस्तक-विक्रेताओं को इनके माध्यम से पुस्तकें मिल जाती हैं। (५) अनुशासन-समिति अथवा संघ इधर बड़े प्रकाशकों और पुस्तक-विक्रेताओं के विरुद्ध किसी प्रकार की अनुशासनात्मक कार्यवाही करने में हिच-किचाने लगा है।

संघ पुस्तक-व्यवसायियों की संस्था है; अनुशासन की इस प्रकार की व्यवस्था के पीछे सामूहिक लाभ के अति-रिक्त और कोई बल नहीं होता। यदि पुस्तक-व्यवसायियों की अधिक संख्या को बिक्री-सम्बन्धी इन नियमों में कोई लाभ दिखाई नहीं पड़ता तो उन्हें जारी रखने में कोई तुक नहीं है; लेकिन एक बार ऐसा निर्णय कर लेने से पहले वे भले-बुरे की बात भली-भाँति सोच लें। दोबारा कुछ वर्षों के भीतर ऐसी व्यवस्था फिर आयोजित न हो सकेगी।

भारत में एकरूप पुस्तक मूल्य

एस० एच० प्रिमलानी

भारत में अंग्रेज़ी पुस्तकों के मूल्य में एकरूपता का होना सारे राष्ट्र के लिए ही--उसके कोई एक अंग, पुस्तक-व्यवसाय के लिए ही नहीं—एक आवश्यक चीज़ है; मूल्य में एकरूपता न होने का अर्थ एक बड़े पैमाने पर राष्ट्रीय अपव्यय है।

मैं एक मिसाल देता हूँ। एक सरकारी संस्था को १३०० पुस्तकें—अलग-अलग शीर्षकों की चाहिए थीं। ये शीर्षक फुलस्केप कागज के ४० पन्नों पर टाइप किये गए, सूची के १०० सेट तैयार किये गए। जिसमें ४००० पन्ने लगे। और फिर कई पुस्तक-विक्रेताओं से प्रत्येक शीर्षक के लिए मूल्य-कथन (क्वोटेशन) माँगे गए।

आप मान लीजिए कि २० पुस्तक-विक्रेताओं ने मूल्य-कथन दिये। हर शीर्षक के लिए पुस्तक-विक्रेता को प्रकाशक द्वारा निर्धारित नूतनतम मूल्य जानने के लिए पाँच भिन्न-भिन्न मूल्य-सूचियाँ देखनी पड़ीं। संस्था को खुद एक-एक मद करके, हर मद का न्यूनतम कथित मूल्य जानने के लिए सभी मूल्य-कथनों को देखना पड़ा। इसका मतलब यह हुआ कि संस्था के कार्यालय में तथा २० पुस्तक-विक्रेताओं में से प्रत्येक के कार्यालय में जबरदस्त काम करना पड़ा होगा—औपचारिक कॉस्टिंग से आसानी से देखा जा सकता है कि इस काम का कुल मूल्य संस्था द्वारा प्राप्त पुस्तकों के मूल्य का ६ प्रतिशत बैठेगा। इस बात का भी ध्यान रखना होगा कि कम-से-कम ३०० पुस्तकें तो इसलिए बिलकुल ही न मिल पाईं कि वे मुद्रित नहीं थीं, या छप रही थीं या उनके प्रकाशकों का पता न लग पाया। सिर्फ यह जानने के लिए कि कौन-सा मूल्य-कथन सबसे नीचा है, इस ६ प्रतिशत को खर्च करना क्या महँगा नहीं है? अगर मूल्य एकरूप होते, तो यह सब रकम राष्ट्र के लिए बचाई जा सकती थी।

साल-दर-साल

साल-दर-साल इस फिज़ूलखर्ची के होते रहने के दो कारण हैं। पहली बात तो यह है कि जिन मामलों में संविदा लाखों रुपए का हो और माँगी वस्तु की तादाद सैकड़ों-हजारों में जाती हो, मूल्य-कथन की प्रणाली उचित ही है। तथापि पुस्तकों के मामले में रकम कम होती है और आमतौर पर हर शीर्षक की केवल एक प्रति ही माँगी जाती है। यह संविदा-प्रणाली की पुस्तकों पर आँख मींच-कर लागू करने का ही नतीजा है कि ६ प्रतिशत का राष्ट्रीय अपव्यय होता है।

दूसरी बात यह है कि जब हिसाब ५०० या ५००० रुपए की हानि प्रकट करता है, तो लेखा-परीक्षण विभाग फौरन उस हानि को पकड़कर शोर मचा सकता है। एक सरकारी दफ्तर या २० पुस्तक-विक्रेताओं के दफ्तरों में बेकार काम के कारण, हुई हानि, जिस पर किसी की निगाह नहीं जाती, के मुकाबले ये ठोस, दृश्य हानियाँ हैं। अगर किसी भले अधिकारी की इस पर निगाह चली भी गई, तो भी वह इसकी परवाह न करेगा। उसे दरों में होनेवाली २-३ प्रतिशत की दृश्य-हानि की अधिक चिंता है, जिनकी ताक में पैनी जाँच करने के लिए लेखा-परीक्षक तुला बैठा है।

चुभती टिप्पणी

आइए, एक ऐसे परेशान अधिकारी की स्थिति पर

विचार करें, जिसे पता चलता है कि अमुक किताब-विक्रेता अ २१ रुपए की, विक्रेता ब २० रुपए की और विक्रेता स १६ रुपए की बेच रहा है। वह शायद यह न जानते हुए कि पुस्तक १६ रुपए में स से मिल सकती है, अ को छोड़ दे और किताब ब से २० रुपए में ले ले। उसे लेखा-परीक्षण विभाग से सार्वजनिक कोष के एक रुपए के अपव्यय के लिए चुभती टिप्पणी मिल सकती है। और मामला यहीं खतम नहीं हो जाता। कहीं किसी जगह एक अज्ञात विक्रेता द भी निकल आ सकता है, जो वही पुस्तक १८ रु० रुपए के विशेष मूल्य पर बेच रहा है, ताकि अपने स्टॉक को खतम कर सके। लेकिन किसी और किताब के लिए यह भी हो सकता है कि द उसे सबसे महँगे दामों पर बेच रहा हो। बेचारे अधिकारी को सबसे नीचे मूल्यों का पता चलाने के लिए काफी समय नष्ट करना पड़ता है, जबकि पुस्तकों के मूल्यों में एकरूपता होने पर उसकी सारी परेशानी और कीमती वक्त की बरबादी बचाई जा सकती थी।

अगर अलग-अलग शीर्षकों के बजाय विक्रय-दरों के मूल्य-कथन माँगे जाते, तो स्थिति काफी सुधर सकती थी। लेकिन इसमें भी कुछ खामियाँ हैं। निम्नतम दरों को आसानी से निर्धारित तथा स्वीकार किया जा सकता है, लेकिन इसमें भी हानि के कुछ ऐसे स्रोत हो सकते हैं, जिनकी बारीकी से जाँच करने की जरूरत है।

निम्नतम टेंडर

सबसे पहले १०० ऐसी किताबों को लीजिए, जिनका आर्डर उस विक्रेता को देना है, जिसका मूल्य-कथन सबसे नीचा है। हो सकता है कि इनमें से वह सिर्फ ६० पुस्तकें ही सप्लाई करे, जिन पर उसे कमीशन ज्यादा मिल रहा है और शेष ४० को, जिन पर कमीशन कम है या मुश्किल से मिलती हो, वह छोड़ ही दे। हो सकता है कि संस्था को सामयिक-आर्थिक प्रश्नों तथा वैज्ञानिक और प्राविधिक अनुसंधान पर महत्वपूर्ण पुस्तकें जनवरी के बजाय कहीं फरवरी या अप्रैल तक में जाकर मिलें। जो पुस्तकें और विक्रेताओं से फौरन मिल सकती हैं, टेंडरवाला शायद उन्हें ३-४ महीने में जाकर दे पाए।

फिर जब संस्था को मौके पर उपलब्ध स्टॉक से ही किताबें चुननी पड़ें, तो हो यह भी सकता है कि टेंडर भरने वाले का स्टॉक थोड़ी और रद्दी किताबों का ही हो। मुझे एक ऐसा मामला मालूम है जिसमें एक अधिकारी को वित्तीय वर्ष के अन्त में निम्नतम दरें देनेवाली एक दुकान से ११०० रुपए की वनस्पतिशास्त्र की पुस्तकें खरीदने का आदेश दिया गया। उसने कोई ३०० रुपए की वनस्पतिशास्त्र की घटिया दरजे की किताबें खरीदीं और बाकी रुपए से उसे राजनीतिशास्त्र, इतिहास आदि विषयों की किताबें लेनी पड़ीं। निम्नतम दर की सनक इस हद तक ले जा सकती है।

अदृश्य हानियाँ

इन हानियों को मैं अदृश्य हानियाँ कहूँगा, क्योंकि इनमें कोई प्रत्यक्ष आर्थिक हानि नहीं होती। जहाँ लेखा-परीक्षक के लिए ३ प्रतिशत की हानि भी बहुत बड़ी होती है, वहाँ ये हानियाँ १५ प्रतिशत भी जा सकती हैं, और फिर भी ये उसका ध्यान नहीं आकर्षित करतीं।

वास्तव में इन हानियों की विशेषता ही यह है कि उनके बारे में कोई किसी तरह के प्रश्न नहीं उठाता। खरीदने वाले अधिकारी का ध्यान इनकी तरफ़ जा सकता है, लेकिन उसे उस ३ प्रतिशत की अधिक चिन्ता रहती है, जिस पर लेखा-परीक्षक का ध्यान जा सकता है और जिस पर वह हफ्तों और महीनों तक समाधान की माँग करेगा। अधिकारी जानता है कि इन हानियों से बचा जा सकता है—निम्नतम टेंडर से बचकर, लेकिन तब वह लेखा-परीक्षक की टक्कर में आ जाएगा। इसलिए आखिर में नुकसान की तरफ किसका ध्यान जाएगा ? किसी का नहीं !

इस सिलसिले में मैं भारत सरकार द्वारा नियुक्त 'पुस्तकालय परामर्शदात्री समिति' के प्रतिवेदन का उल्लेख कर सकता हूँ। अदृश्य हानियों के बारे में उसमें यह टिप्पणी है :

"देश के कई भागों में पुस्तकालय 'टेंडर-प्रणाली' से पुस्तकें प्राप्त करते हैं। पुस्तक चयन-समिति द्वारा अनुमोदित पुस्तकों की एक सूची बना ली जाती है और

पुस्तक-विक्रेताओं को भेज दी जाती है। वे अपना मूल्य-कथन दे देते हैं, फिर निम्नतम टेंडर देने वाले विक्रेता से पुस्तकें सप्लाई करने के लिए कहा जाता है। पुस्तकें प्राप्त करने का यह तरीका दोनों तरह से खराब है। टेंडरों की माँग करना एक समय नष्ट करनेवाली प्रक्रिया है। इसलिए यह कोई अचम्भे की बात नहीं कि कई पुस्तकालय साल में केवल एक बार ही पुस्तकें ले पाते हैं। फिर, हो सकता है, और ऐसा होता भी है, कि जिन पुस्तकों पर उसे अच्छा कमीशन न मिले, उन्हें पुस्तक-विक्रेता सप्लाई ही न करे। आमतौर पर ऐसी ही किताबें ज्यादा उपयोगी होती हैं। इससे पुस्तकालय की पुस्तकों का स्तर गिरता है और पुस्तकों के लिए नियोजित बहुमूल्य कोष बेकार जाता है।"

पुस्तकालय में इस घटिया स्तर की किताबों के रखने के कारण होनेवाली हानि कितनी है? मैं इसे १५ प्रतिशत तक तो आसानी से ही रख दूँगा। हमारे अज्ञानी लेखा-परीक्षण विभाग के दबाव से यह नुकसान साल-दर-साल होता रहता है।

साथ ही मैं इस बात पर भी जोर देना चाहता हूँ कि मैंने जिन अदृश्य हानियों का वर्णन किया है, वे गौण और बदलते तत्व हैं और उन्हें आसानी से नहीं निर्धारित किया जा सकता। उनका सही-सही अनुमान करने के लिए खासा अनुभव चाहिए। केवल कुछ अनुभवी पुस्त-कालयाध्यक्ष ही उनका क्रमिक आकलन कर सकते हैं।

बेईमानी पैदा होती है

अलाभकर दर का मूल्य-कथन देने और उसकी स्वीकृति से केवल ये हानियाँ ही नहीं होतीं, प्रत्युत बिल बनाने में बेईमानी का भी यह एक प्रमुख कारण है। पुस्तकों के कई-कई तरह के संस्करण प्रकाशित किये जाते हैं। टेंडर देनेवाला बिल बनाते समय किसी मद के सबसे महँगे संस्करण के दाम लगा सकता है। वह उसका बीजक और मूल्य-सूची तक पेश कर सकता है, जबकि हो यह भी सकता है कि वास्तव में उसने सस्ता संस्करण ही सप्लाई किया हो। कुछ पुस्तकालयाध्यक्ष तो इस बेईमानी को पकड़ सकते हैं, पर सामान्यतः कई मामले नहीं पकड़ में आते। कुछ भी हो, कम मूल्य-कथन देने वाले बेईमान विक्रेताओं के बिलों की जाँच में ही बहुत समय नष्ट हो जाता है। इस समय का दफ्तर में ज्यादा उपयोगी कार्य के लिए उपयोग किया जा सकता था।

इस परिस्थिति का सामना करने के लिए हमें (१) दरों का एकरूप स्तर कायम करना चाहिए, जिसमें अच्छी सर्विस का न्यूनतम प्रमाप भी होना चाहिए, और (२) हमें अच्छी सर्विस का एक प्रमाप करना चाहिए, जो इन अदृश्य हानियों को रोकेगी।

अनुप्रेरणा खतम नहीं होती

यह कहा जा सकता है कि निश्चित एकरूप दरों के होने से पुस्तक-व्यवसाय से होड़ और अनुप्रेरणा जाती रहेगी। यह एक गलत विचार है। होड़—बल्कि सख्त होड़—तो फिर भी रहेगी ही। मूल्यों की होड़ की जगह ज्यादा अच्छी सर्विस देने की होड़ होगी। दिल्ली राज्य की मिसाल ली जा सकती है, जहाँ गत १० वर्ष से कोई मूल्य-स्पर्द्धा नहीं है। मगर आर्डर पाने के लिए सर्विस की जबरदस्त होड़ है। दिल्ली के पुस्तक-विक्रेता अपने महत्व-पूर्ण—और महत्वपूर्ण ही क्यों, कम महत्वपूर्ण भी—ग्राहकों को नूतनतम पुस्तकें पहुँचाने में पहले होने के लिए मोटरों पर सवार होकर, यह कहिए कि, दौड़ ही लगाते हैं। दिल्ली के दो प्रतिस्पर्द्धी पुस्तक-विक्रेताओं की तुलना अदालत में दो विरोधी वकीलों से की जा सकती है, जो रेस्तराँ में बैठे-बैठे आपस में हँसी-मजाक करते हैं और जज के सामने अपने मुवक्किलों के हितों में एक-दूसरे की खिल्ली उड़ा सकते हैं और एक-दूसरे पर गरज भी सकते हैं। दिल्ली के पुस्तक-विक्रेताओं में, जहाँ तक मूल्यों का सवाल है, सन्धि है, मगर इसके अलावा हर चीज में होड़ के चिह्न देखे जा सकते हैं। इस होड़ के बिना दिल्ली का पुस्तक-विक्रेता व्यापार न कर सकेगा—बशर्ते कि उस पर अहसान करने वाला कोई उसका चाचा ही न बैठा हो।

मुख्य आवश्यकता

भारत में सिर्फ मूल्य कम करने के लिए ही जोर देना मूर्खता है। हमें जिस चीज की सबसे ज्यादा जरूरत है, वह है ज्यादा अच्छी सर्विस। मैं समझता हूँ कि लेखा-परीक्षकों पर बड़ा नैतिक दायित्व है; मूल्य-कथन पर ही

अधिक ज़ोर दे-देकर उन्होंने इन अदृश्य हानियों को जन्म दे दिया है और पुस्तकालयों के लिए अलाभकर काम पैदा कर दिया है। अब वक्त आ गया है कि लेखा-परीक्षण विभाग पुस्तक-क्रय की समस्या का, उचित दरों तथा उचित सर्विस का ख़याल रखते हुए विधिवत् अध्ययन करें।

प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता संघों की फेडरेशन को तथा क्षेत्रीय संगठनों को इस समस्या का साहसपूर्वक सामना करना चाहिए। उन्हें इस बात की प्रतीक्षा में नहीं बैठना चाहिए कि लेखा-परीक्षण विभाग कोई अगुआई करेगा। उन्हें मूल्यों और अच्छी सर्विस के उचित प्रमान स्थापित करने चाहिए और इन प्रमानों का मूल्यांकन जनता पर छोड़ देना चाहिए।

कुछ लोगों का ख्याल है कि अगर इस योजना को पूरे पुस्तक-व्यवसाय का समर्थन न मिला, तो इसका अर्थ योजना की असफलता होगा। यह गलत है; अगर किसी क्षेत्र में १०० पुस्तक-विक्रेता हों तो योजना को सफल बनाने के लिए केवल २० प्रमुख विक्रेताओं का समर्थन काफी है, शेष ८० में से अधिकांश उनका अनुगमन करेंगे।

प्रकाशकों का समर्थन

इसके बराबर ही पुस्तक-जगत् में यह खयाल है कि किसी विशेष दर-प्रणाली को सफलतापूर्वक लागू करने के लिए प्रकाशकों का समर्थन आवश्यक है। यह बिलकुल सच है कि उनका समर्थन बहुत सहायक होगा; किन्तु अकेले उसीसे योजना की सफलता सुनिश्चित नहीं हो जावेगी। मूलतः यह पुस्तक-विक्रेताओं पर है कि वे अपने को संगठित करें। मैने इस मुद्दे पर कई प्रमुख प्रकाशकों से विचार-विनिमय किया है, और उन्होंने यह दलील उचित ही दी है कि जब तक ८०-८५ प्रतिशत पुस्तक-विक्रेता एक दर-प्रणाली का समर्थन न करने लगें, उनके लिए उसके समर्थन में सक्रिय कदम उठाना अव्यावहारिक रहेगा। फिर भी उनका नैतिक समर्थन तो है ही, और मुझे विश्वास है कि वह समय भी आएगा कि जब हम उनका सक्रिय सहयोग माँग सकेंगे। स्थिर मूल्य और स्थिर पुस्तक-व्यवसाय में प्रकाशक निश्चय ही दिलचस्पी रखते हैं।

मैं भारतीय पुस्तक-व्यवसाय तथा जनता के आगे एक व्यावहारिक सुझाव रखता हूँ। अंग्रेज़ी पुस्तकों के लिए मैं इस दर-प्रणाली तथा पुस्तकालय-डिसकाउंट का सुझाव देता हूँ (१३.३० रुपए=१ पौंड, ६८ नये पैसे=१ शिलिंग):

१. (अ) एक शिलिंग ७५ नये पैसे पर, (ब) एक डालर ५.२५ रुपए पर, (स) भारतीय प्रकाशन प्रकाशित मूल्य से ५ प्रतिशत काटकर।

२. (अ) तथा (ब) पर नियमित पुस्तक ख़रीद करने वाले पुस्तकालयों को १० प्रतिशत डिसकाउंट।

३. वित्तीय वर्ष (अप्रैल से मार्च) के लिए जिन पुस्तकालयों का केवल पुस्तक-अनुदान ५०,००० रुपए या उससे ऊपर हो, उन्हें (अ) तथा (ब) पर १५ प्रतिशत डिसकाउंट दिया जाएगा।

नमूना

यह एक टेढ़ी समस्या लग सकती है कि अनुदान का आकार कैसे और कौन निर्धारित करे। मैं यहाँ यह बताना चाहूँगा कि इंग्लैंड में गत २५ साल से इस समस्या का सन्तोषजनक समाधान हो रहा है। इसके लिए प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता-संघों की फेडरेशन तथा पुस्तकालयाध्यक्ष संघ के ५ से ८ प्रतिनिधियों की एक समिति बनाई जा सकती है। इस समिति का काम यह होगा कि आवश्यक पूछताछ करके यह डिसकाउंट को बढ़ाकर १५ प्रतिशत करने का प्रमाण-पत्र दे।

कम कमीशन या बिना कमीशन की किताबों पर विक्रेता बन्दरगाह पर उतरने पर पड़ने वाले मूल्य पर १२½ प्रतिशत चार्ज करेंगे।

४. इन शर्तों को पूरी करने वाली खरीदों पर डिसकाउंट बढ़ाकर १५ प्रतिशत कर दिया जाएगा: (अ) एक बिल में ही खरीद का मूल्य ५,००० रुपए या अधिक होगा; (ब) खरीदी पुस्तकों की डिलीवरी तीन मास तक ही सीमित होगी; (स) हर पुस्तक की कम-से-कम १० प्रतियाँ ली जाएँगी। ये दरें बन्दरगाहों पर की बिक्री पर लागू होंगे। अतिरिक्त केन्द्रों पर बिक्री की दरें ऊँची होंगी।

मुझे पूरी आशा है कि मेरे इन सुझावों की व्यवसायी बन्धु तथा जनता खरी परीक्षा करेंगे।

•

लेखकों का प्रशिक्षण

मुश्ताक़ अहमद

लोकतंत्र को शासन की प्रणाली के रूप में स्वीकार करने का मतलब ही यह है कि जनता राज्य के मामलों में बुद्धिमत्तापूर्वक भाग ले, जबतक किसी देश के निवासी अशिक्षित या अपूर्णतः शिक्षित रहें, वे ऐसा नहीं कर सकते, इसलिए क्रियात्मक साक्षरता भारत में विकास-योजनाओं का एक मुख्य लक्ष्य बनती जा रही है।

जैसे-जैसे साक्षरता के प्रयास रूप लेते हैं, नये पाठकों का एक नया वर्ग पैदा होता जाता है। नये पाठकों के इस वर्ग को अनेक नाम दिये गए हैं—'नव साक्षर', 'नव शिक्षित लोग,' 'सीमित पठन तथा लेखन की योग्यता रखनेवाले लोग,' 'क्रियात्मक साक्षर' हर शब्द का अर्थ कुछ-कुछ भिन्न है, किन्तु 'नये पाठकों' में ये सभी आते हैं।

साक्षरता-प्रयास की प्रकृति के अनुसार इन लोगों की पढ़ने और लिखने की योग्यता में खासा अन्तर होता है; उनमें एक भारी बहुमत उन लोगों का होता है, जो बहुत ही सरल लिखाई, करीब-करीब शब्द-शब्द करके ही पढ़ पाते हैं और अपने पढ़े के ५० प्रतिशत को भी मुश्किल से ही समझ पाते हैं। उनमें ऐसे लोग भी होते हैं, जिनका पठन-कौशल प्राथमिक शाला-पास बच्चों के बराबर होता है। फिर भी इस समय जो नये पाठक हैं, उनमें कोई ९० प्रतिशत ऐसे हैं, जो प्रमाणित साहित्य को या कॉलेज के अलावा हाईस्कूल के स्तर पर भी लिखी चीजों को, न पढ़ सकते हैं और न समझ सकते हैं। इसलिए नये पाठकों के लिए एक विशेष प्रकार के साहित्य की आवश्यकता है—ऐसे साहित्य की, कि जो उनकी वर्तमान पठन-क्षमता और प्रामाणिक साहित्य के बीच की खाई को पाट सके।

इस विशेष प्रकार के साहित्य की तैयारी में, जैसा कि इस क्षेत्र में प्रवेश करने के इच्छुक प्रकाशक और लेखक सामान्यतः समझते हैं, केवल सरल शब्दों के उपयोग और मोटे टाइप की छपाई का ही समावेश नहीं है। इस समस्या को जो पहलू जटिल बनाते हैं, उनमें से कुछ निम्नलिखित हैं :—१. नये पाठकों की योग्यता और निपुणता में भेद होता है। इसलिए वर्गीकृत साहित्य की आवश्यकता पड़ती है और इसका अधिकांश प्रारम्भिक वर्ग का होना चाहिए।

२. नये पाठकों की वाचन-रुचियाँ निर्धारित करने के लिए बहुत कम अध्ययन किया गया है। चूंकि उन्होंने अभी तक पढ़ने की आदत नहीं डाली है, इसलिए वे किसी चीज को महज़ इसलिए नहीं पढ़ेंगे कि वह प्राप्य है। आमतौर पर वे उन लोक-गीतों या वीर-गाथाओं को पढ़ते हैं, जिनके बारे में वे सुन चुके हैं। लेकिन साक्षरता का उद्देश्य तब तक पूरा न होगा कि जब तक वे आधुनिक विचारों और आधुनिक युग के बारे में पढ़ने की आदत न डालें। इसके लिए पठन-सामग्री का रोचक होना जरूरी है।

३. लेखक को अपने पाठकों की भलीभाँति जानकारी होनी चाहिए। लेकिन आमतौर पर नये पाठकों के लिए साहित्य के लेखक नवपाठी जनता के वाचन-नैपुण्य तथा समस्याओं के बारे में बहुत ही कम जानते हैं।

४. लेखक आमतौर पर अपनी पाण्डुलिपियों की 'पूर्व-परीक्षण' या 'जाँच' की तकनीक नहीं जानते, न ही पाण्डुलिपियों का बाद में ही मूल्यांकन किया जाता है, और न रचनाओं की अच्छी आलोचना ही होती है; इसलिए साहित्य की मात्रा तो बढ़ रही है, पर बाहरी रूप-सज्जा को छोड़कर गुण में कोई बढ़ती नहीं हो रही है।

इसका उपाय क्या है? सम्भवतः सबसे अच्छा उपाय भावी लेखकों को सरल तथा पठनीय लेखन और नये पाठकों को 'नये भारत' का संदेश देने की तकनीकों में

प्रशिक्षित करना ही है। आधुनिक भारत को ऐसे आदमियों की जरूरत है, जो जन-साधारण के साथ प्रभावपूर्ण तरीके से संपर्क एकत्रित कर सकें और उन्हें नये भारत का संदेश दे सकें। पंचवर्षीय योजनाओं तथा विभिन्न विकास-कार्यक्रमों में पूरी तरह भाग लेने के लिए लोगों का इन परियोजनाओं के लक्ष्यों, सामान्य रूप-रेखा तथा क्रियाकलाप को समझना आवश्यक है। ग्रामों की तीन बुनियादी संस्थाओं—पंचायत, सहकारी समाज और विद्यालय—के जरिये मिलने वाली नई और बढ़ती जिम्मेदारियों को वहन करने के लिए उन्हें ज्ञान और प्रशिक्षण की आवश्यकता है। सामाजिक व्यवस्था के नये मूल्यों को जनता द्वारा स्वीकार कराने के लिए सबसे बड़ी जरूरत इस बात की है कि जनता के कुछ दृष्टिकोणों तथा आचरणों को बदला जाए। इसकी सिद्धि के लिए जनता—विशेषकर निम्न पठन योग्यता की—तक विचारों तथा सूचना का प्रसार एक आवश्यक कदम माना जाता है। इसके लिए जन-संचार माध्यमों की प्रणालियों तथा तकनीकों में नैपुण्य प्राप्त करने की आवश्यकता है।

उपरोक्त आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए 'फोर्ड फाउंडेशन' की वित्तीय सहायता से 'साकारता निकेतन' ने '५८ में 'सामाजिक लेखन तथा जन-संचार विद्यालय' नामक प्रशिक्षण-केन्द्र स्थापित किया। विद्यालय, पठनीय लेखन तथा जन-संचार की कला का तीन महीने का प्रशिक्षण पाठ्यक्रम संगठित करता है। कार्य द्वारा सीखने के विचार पर ज़ोर देने के लिए पाठ्यक्रम को 'कार्यशाला' (वर्कशाप) कहा जाता है। अब तक ७ कार्यशालाओं का आयोजन हुआ है और कोई ८० लेखकों को प्रशिक्षित किया गया है। प्रशिक्षण के बाद अधिकांश भूतपूर्व लेखकों ने लेखन जारी रखा है और उनमें से चार ने अपनी पांडुलिपियों पर राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त किए हैं। इन भाषाओं के लेखकों को प्रशिक्षण दिया गया है—हिन्दी, उर्दू, बंगला, मराठी, तमिल, तेलुगु, मलयालम, उड़िया, कन्नड़, बरमी तथा नेपाली। साल में दो पाठ्यक्रम आयोजित किए जाते हैं; एक मोटे तौर पर १ अगस्त से ३० अक्तूबर तक और दूसरा १ दिसम्बर से २० फ़रवरी तक। प्रशिक्षण केवल लेखन-पठन सामग्री ही में नहीं, वरन् साधारण दृश्य-श्रवण साधनों के उपयोग में भी दिया जाता है। इन पाठ्यक्रमों का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है :—

१. जन-संचार के निम्न माध्यमों की तैयारी तथा उपयोग में प्रशिक्षण दिया जाता है—
   (अ) पुस्तकें, पत्रिकाएँ, विज्ञापन।
   (आ) पोस्टर तथा दीवाल-अखबार।
   (इ) कठपुतली नाटक—कथा।
   (ई) चलचित्र—कथा।
   (उ) खद्दरग्राफ—कथा।
   (ऊ) रेडियो—कथा।

२. हर भाग लेनेवाले से उपर्युक्त माध्यमों में से एक या अधिक के तैयार करने की अपेक्षा की जाती है।

३. प्रशिक्षण-कार्यक्रम की एक झाँकी—
   क. संविधान, पंचवर्षीय योजनाओं तथा विकास-कार्यक्रमों द्वारा प्रतिबिम्बित होनेवाली राष्ट्रीय आकांक्षाएँ।
   ख. योजना द्वारा निरूपित समाज का समाजवादी ढाँचा।
   ग. मूल्यायोजन।
      (अ) आनेवाली सामाजिक व्यवस्था, सामाजिक न्याय तथा समता के नये मूल्य।
      (आ) पुराने तथा नये मूल्यों में टकराव।
      (इ) मूल्यों के निर्माताओं के रूप में व्यक्ति तथा राज्य।
      (ई) उभरती नई सामाजिक व्यवस्था तथा उसमें लेखकों का भाग।
   घ. पठनीय लेखन की कला—
      (अ) पठनीयता क्या है?
      (आ) भाषा को कठिन क्या चीज़ बनाती है?
      (इ) सरल लेखन की तकनीकें।
      (ई) शब्दावली-नियन्त्रण, वाक्य की लम्बाई, पैराग्राफ, सारांशीकरण।
      (उ) शीर्षक का प्रभाव।
   ङ. अपने पाठक को जानिए।
   च. अपने विचारों का संचार करने के लिए ठीक सामग्री का चयन कैसे किया जाए?

भारत सेवक पॉकेट बुक्स

१.	महल और मकान	यज्ञदत्त शर्मा	१४४	नव्वे नये पैसे
२.	भुनिया की शादी	यज्ञदत्त शर्मा	१४४	नव्वे नये पैसे
३.	मधु	यज्ञदत्त शर्मा	१४४	नव्वे नये पैसे
४.	इन्साफ़	यज्ञदत्त शर्मा	१४४	नव्वे नये पैसे
५.	बदलती राहें	यज्ञदत्त शर्मा	१४४	नव्वे नये पैसे
६.	माँ का स्वर्ग	जयन्त वाचस्पति	१४४	नव्वे नये पैसे
७.	बसंती बुआ जी	यज्ञदत्त शर्मा	२२४	एक रुपया चालीस नये पैसे
८.	बाप-बेटी	यज्ञदत्त शर्मा	२२४	एक रुपया चालीस नये पैसे
९.	सबका साथी	यज्ञदत्त शर्मा	२२४	एक रुपया चालीस नये पैसे
१०.	परिवार	यज्ञदत्त शर्मा	२८८	एक रुपया चालीस नये पैसे

एजेण्ट तथा पुस्तक-विक्रेता पत्र-व्यवहार करें—

केन्द्रीय भारत सेवक समाज, जन-जागरण विभाग
नई दिल्ली

छ. लघुकथाओं, नाटकों, एकांकियों, शब्दचित्रों, वार्तालापों, सरल वर्णनों तथा घटना-अध्ययनों के मूल-तत्व ।

ज. चित्र तथा आकार ।

झ. पाण्डुलिपियों या पुस्तकों के वर्गीकरण सूत्रों, प्रणालियों या पूर्व-परीक्षण अथवा पश्चात्-परीक्षण का परिचय ।

ञ. मुद्रण तथा मूल्यनिर्धारण का परिचय ।

ट. संचार—परिभाषा, मूलतत्व, सफलता की शर्तें ।

ठ. जन-संचार—इसका महत्व, कुछ श्रव्य-दृश्य साधनों, यथा पोस्टर, खद्दरग्राफ, फ्लैशकार्ड, फिल्मस्ट्रिप, कठपुतली आदि का वर्णन तथा उपयोग ।

ड. आँखों-देखा वर्णन करना तथा सामूहिक बहस शुरू करना ।

ढ. शिक्षण-यात्राएँ—

(अ) संस्थाओं के विकास तथा अनुसन्धान-विभागों की ।

(आ) भावी पाठकों को जानने तथा पाण्डुलिपियों की जाँच के लिए गाँवों की ।

४. आवेदन कौन भेज सकता है ?

सरल लेखन का अनुभव तथा जन-संचार की तकनीकें सीखने की इच्छा रखनेवाला कोई भी वयस्क आवेदन भेज सकता है । महिलाएँ भी आवेदन कर सकती हैं । प्राथमिकता उन्हें दी जाती है, जिनकी पाण्डुलिपियाँ मान्यता-प्राप्त पत्रों अथवा पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं और जो अंग्रेजी अच्छी तरह समझ सकते हैं । आवेदन-पत्र केवल निर्दिष्ट प्रार्थना-पत्रों पर ही स्वीकार किए जाते हैं ।

५. भोजन तथा निवास—

भाग लेनेवालों को कैंपों में ही रहना होगा, जहाँ उपयुक्त आवास प्रदान किया जाता है । जाति अथवा विचार के आधार पर कोई विभेद नहीं किया जा सकता । भाग लेने वालों को अपना मेस 'साक्षरता निकेतन' द्वारा ही चलवाना होगा ।

६. व्यय—

पंजीयन	रु० १०.००
मेस-खर्च	१.००
पुस्तकालय सुरक्षा-धन, जो पाठ्यक्रम की समाप्ति पर लौटा दिया जाएगा	२५.००
शिक्षण-शुल्क (५०.०० प्रतिमास)	१५०.००
फील्ड-कार्य के लिए यात्रा-व्यय (रु० १०.०० प्रतिमास)	३०.००
कमरा (दो व्यक्तियों का), रोशनी तथा पानी (रु० ६.०० प्रतिमास)	१८.००
भोजन (शाकाहारी अथवा मांसाहारी) रु० ४५.०० प्रतिमास	१३५.००
जोड़—	३६९.००

७. भत्ता—

कार्यशाला के पूरे व्यय की पूर्ति के लिए सीमित संख्या में भत्ते दिए जाते हैं ।

अनुगमन-कार्यक्रम—

हाल ही में 'लेखक' नामक एक साइक्लोस्टाइल की हुई त्रैमासिक पत्रिका आरम्भ की गई है । इसका मुख्य उद्देश्य विद्यालय के भूतपूर्व लेखकों की सेवा है । इसके उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

भूतपूर्व लेखकों, नये लेखकों तथा प्रकाशकों की सहायता के लिए ये कार्य करना—

१. भूतपूर्व लेखकों तथा प्रकाशकों को मिलाना ।
२. पठनीय लेखन की तकनीकों पर लेख प्रकाशित करना ।
३. नये पाठकों की दिलचस्पी के विषय बताना ।
४. भूतपूर्व लेखकों के लिए 'संभावनाएँ' बताना ।
५. पठन-सामग्री की आलोचना करना तथा उस पर विस्तृत राय देना ।
६. पठनीयता तथा विक्रय-अनुसंधान के परिणाम बताना ।

यह आशा की जाती है कि विद्यालय केवल भारत ही नहीं, अपितु दक्षिण-पूर्व एशिया के अन्य देशों में भी नये पाठकों के लिए रचित साहित्य का स्तर उठाने और पठनीय सामग्री उपलब्ध करने में सहायक होगा ।

हंगरी में पुस्तक-समारोह सप्ताह

लीलावती जैन 'प्रभाकर'

अभी भारत में पुस्तकों का उतना महत्त्व नहीं है जितना होना चाहिए। शिक्षितों की बढ़ती हुई संख्या, ज्ञानार्जन की पिपासा और स्वतन्त्र भारत का वातावरण पुस्तकों, समाचार-पत्रों आदि को लोकप्रिय बना रहा है। यह प्रवृत्ति पहले से तो ज्यादा है पर अन्य देशों की तुलना में नगण्य है। हमें इस क्षेत्र में कितना आगे बढ़ना है उसका अनुमान पाठकों को इस लेख से होगा। हंगरी एक करोड़ की जनसंख्या वाला पूर्वी योरोप का एक देश है। वह भी भारत की भाँति १५ वर्ष पहले स्वतन्त्र हुआ है। परन्तु पुस्तक-प्रकाशन, पुस्तकों की बिक्री, उनकी लोकप्रियता आदि क्षेत्र में वहाँ गजब का काम हुआ है। भारतीय प्रकाशक, पुस्तक-प्रेमी, भारतीय व प्रादेशिक सरकारें तथा जनता के लिए हंगरी में पुस्तक-समारोह-सप्ताह की लोकप्रियता और कार्यक्रम एक ऐसा उदाहरण उपस्थित करता है जिससे हम सभी बहुत कुछ सीख सकते हैं।

पुस्तक-समारोह सप्ताह का रिवाज हंगरी में काफी पुराना है; पर इधर के १४-१५ वर्षों में इसने विभिन्न क्षेत्रों में इतनी जबरदस्त प्रगति की है कि वह भारत-जैसे पिछड़े हुए देशों के लिए अनुकरणीय बन गया है।

इसका प्रारम्भ छोटे पैमाने पर हुआ था। कुछ पुस्तक-प्रकाशक, पुस्तक-विक्रेता और लेखक जो अपनी पुस्तकों का प्रचार बढ़ाना चाहते थे, आगे आये। हंगरी की राजधानी बुडापेस्ट की प्रमुख सड़कों पर कुछ किताबों के स्टाल खड़े किये गए, कुछ परचे बाँटे गए और इस दिन पुस्तकों के खरीदारों को मूल्य में कमी की रियायत दी गई।

चलती-फिरती दुकानें—विगत वर्षों में स्थिति इतनी बदल गई है कि अब पुस्तकें देश के सभी भागों में पहुँच गई हैं। दूर-दूर के छोटे-छोटे गाँवों और खेतों में बने मकानों तक में खास तौर पर बसों पर बनाई गई चलती-फिरती दुकानों में भरी पुस्तकें पहुँच जाती हैं।

पुस्तक-समारोह सप्ताह अब केवल प्रकाशकों, विक्रेताओं और लेखकों की दिलचस्पी का विषय नहीं रहा है, वरन् राष्ट्रीय रूप धारण कर चुका है जिसमें पुस्तकालय, सांस्कृतिक गृह और थियेटर तक सहर्ष भाग लेते हैं। पुस्तक-दिवस के स्थान पर अब यह पुस्तक-सप्ताह बन गया है। केवल व्यापारिक कार्य न रहकर अब यह हंगरी के साहित्य के विकास की वार्षिक रिपोर्ट के रूप में आ गया है जो जनता के सामने आती है। इस अवसर पर सांस्कृतिक प्रगति बताने का भी कार्य होने लगा है।

उपयोगिता—१९५९ में पुस्तक-समारोह-सप्ताह के लिए ८२ पुस्तकें ७,८१,८६० की संख्या में प्रकाशित की गई थीं। इनमें ६३ पुस्तकें (संख्या ६,३६,२६०) साहित्यिक और युवकों के वास्ते थीं। अब बिना कीमत कम किए ही आशातीत संख्या में पुस्तकें बिकने लगी हैं और इन सप्ताहों में भारी बिक्री होती है।

इस अवसर पर पाठकों और लेखकों के सम्मेलन भी होते हैं। सन् ५९ में २२३ सभाओं में ६५ लेखकों ने भाग लिया था। इनमें ३०० से लगाकर ५०० तक की उपस्थिति होती और इनकी कार्यवाही ५-६ घण्टे तक चलती। देश के सभी भागों में, जिनमें गाँव भी शामिल हैं, ये सम्मेलन होते। पाठक लेखकों की कृतियों और गतिविधियों को जानने को उत्सुक रहते और लेखकों से खूब प्रश्न पूछते। लेखकों की रचनाओं की आलोचनाएँ भी होतीं और उनके दोष बताये जाते।

लोकप्रियता—किताबों की नुमाइशें और वाद-विवाद

(शेष पृष्ठ ३७४ पर)

प्रकाशकीय मञ्च

पंजाब की मैट्रिक की हिन्दी तथा पंजाबी परीक्षा के पर्चे में १५-१६ वर्ष की आयु के छात्र-छात्राओं से एक प्रश्न में कहा गया कि वे अपने प्रेमी-प्रेमिकाओं को पत्र लिखें कि उनके माता-पिता उनके विवाह के लिए राजी नहीं हैं। इस कच्ची उम्र के विद्यार्थियों में विवाह की बात चलाना हिमाकत की बात है और शिक्षा-क्षेत्र से कोई अछूता अध्यापक ही हल करने के लिए ऐसा प्रश्न पूछ सकता था।

* * *

साहित्य अकादेमी ने १९५७ से १९५९ में प्रकाशित भारत की विभिन्न भाषाओं की सर्वश्रेष्ठ पुस्तकों के लेखकों को ५-५ हजार रुपये का पुरस्कार प्रदान किया है। हिन्दी में यह पुरस्कार 'कला और बूढ़ा चाँद' नाम की कलाकृति पर श्री सुमित्रानन्दन पन्त को दिया गया; पुस्तक का प्रकाशन राजकमल प्रकाशन ने किया है।

* * *

अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ की कार्य-समिति की एक बैठक १५ मार्च, ६१ के सायं ५ बजे राजकमल प्रकाशन प्रा० लि० के दिल्ली-कार्यालय में आरम्भ होनी थी। सर्वश्री रामलाल पुरी : आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली। कृष्णचन्द्र बेरी : हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी। वाचस्पति पाठक : भारती भण्डार, प्रयाग। रमेश सन्त : ओरियण्टल बुक डिपो, दिल्ली एवं ओंप्रकाश : राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०, दिल्ली; उपस्थित थे। कोरम पूरा न होने के कारण बैठक स्थगित कर दी गई।

कार्यसमिति की बैठक ६ बजे फिर प्रारम्भ हुई, निम्नलिखित सज्जन उपस्थित थे :

श्री रामलाल पुरी
श्री कृष्णचन्द्र बेरी
श्री वाचस्पति पाठक
श्री रमेश सन्त
श्री ओंप्रकाश

श्री कन्हैयालाल मलिक : इण्डियन पब्लिशिंग हाउस दिल्ली।

श्री रामकुमार कपूर : अत्तरचन्द्र कपूर एण्ड सन्स दिल्ली।

उत्तर प्रदेश की सरकार के शिक्षा-विभाग ने बिना दूसरे प्रकाशकों को अवसर दिए वाराणसी के एक प्रकाशक की ही १९६०-६१ के वित्तीय वर्ष में अपने सर्कुलर नम्बर बेसिक (२) ५६२५।३४-७ (५४) ६०-६१, ता० २ मार्च ६१ के अनुसार, लगभग साढ़े तीन लाख रुपयों की पुस्तकें खरीद ली हैं। जिस ग्राण्ट के अन्तर्गत ये पुस्तकें खरीदी जाएँगी, उसमें लिखा है कि स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार और जिला इन्स्पेक्टर आफ स्कूल्स की स्वीकृति से खरीदी जाने वाली पुस्तकों का चुनाव होगा; लेकिन स्वयं ही पुस्तकों का चुनाव करके शिक्षा-विभाग ने इस नीति का उल्लंघन किया है। सार्वजनिक कोश में से एक ही प्रकाशक की पुस्तकों पर इतना अधिक व्यय करना, अन्य प्रकाशकों को किसी प्रकार का अवसर न देना, एक ही विचारधारा की पुस्तकों को प्रश्रय देना देश में जनतन्त्री परम्परा को चोट पहुँचाना है। उत्तर प्रदेश के शिक्षा-अधिकारियों से अपील है कि अपने इस निर्णय को स्थगित करके परम्पराओं की स्थापना करें।

* * *

भारत सरकार के शिक्षा-मन्त्रालय ने विज्ञान और तकनीक की २५ पुस्तकों का हिन्दी-प्रकाशकों के सहयोग से अनुवाद कराने की योजना बनाई थी, उसके टेण्डर भरने की अंतिम तारीख २० मार्च, ६१ थी। एक सरकारी विज्ञप्ति के अनुसार टेण्डर भरने की तारीख १ मई, ६१ तक बढ़ा दी गई हैं। टेण्डर में जो सूचनाएँ भरनी होंगी उनमें कुछ परिवर्तन किया गया है और उसके सम्बन्ध में पूछताछ डायरेक्टर, सेण्ट्रल हिन्दी डायरेक्टरेट, १५।१६ फैज बाजार, दरियागंज, दिल्ली से की जा सकती है।

* * *

लेखकीय मञ्च

श्री रामचन्द्र शर्मा 'किशोर', द्वारा जनसम्पर्क विभाग, बिहार हटना से सूचित करते हैं कि उनके पास दो सामाजिक उपन्यासों 'बैरिन रात रुलाए' व 'दूब के फूल' की पाण्डुलिपियाँ प्रकाशन के लिए तैयार है। कृपया इच्छुक प्रकाशक उपर्युक्त पते पर पत्रव्यवहार करें।

* * *

श्री कृष्ण मापूख ६६३, कूँचा पाती राम दिल्ली से सूचित करते हैं कि उनके पास सूनी नगरी, उजड़ा देश की पांडुलिपि प्रकाशनार्थ तैयार हैं। इच्छुक प्रकाशक सम्पर्क स्थापित करें।

* * *

श्री सुरेन्द्र प्रसाद जमुआर, लोक साहित्य परिषद्, सहाय भवन, दुजरा, पटना से सूचित करते हैं कि उनके पास तीन पाण्डुलिपियाँ प्रकाशनार्थ तैयार है। प्रकाशक उक्त पते पर पत्राचार करें। 'स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कविता : एक परिशीलन' नामक अपने शोध ग्रन्थ के लिए वे कृपालु लेखकों और कवियों से अपनी प्रकाशित काव्य-कृतियों की एक-एक प्रति उक्त पते पर भेजने का निवेदन करते हैं।

* * *

श्री श्यामलाल : एस० चाँद एण्ड कम्पनी, दिल्ली।

कार्यसमिति ने इस बात पर अत्यन्त खेद प्रकट किया कि संघ द्वारा पंजीकृत प्रकाशकों और पुस्तक-विक्रेताओं द्वारा प्रचारित बिक्री के नियमों का उल्लंघन बड़े परिमाण में और खुलेआम हो रहा है। कार्यसमिति पटना में होनेवाले संघ के आगामी वार्षिक सम्मेलन से प्रस्तावित करती है कि इस स्थिति का यदि कोई प्रतिकार सम्भव नहीं है तो वह पंजीकरण की व्यवस्था और बिक्री-सम्बन्धी सब नियमों को स्थगित कर दे और तदनुरूप विधान में संशोधन करे।

कार्यसमिति की पिछली बैठक के बाद तथा उसकी बैठकों के न हो सकने की परिस्थिति में संघ के अध्यक्ष श्री रामलाल पुरी के दो आदेशों की कार्यसमिति की यह बैठक सम्पुष्टि करती है :

(अ) भारत सरकार के शिक्षा-मन्त्रालय द्वारा मनोनीत हिन्दी अक्षरी और वर्तनी में एकरूपता लाने के सम्बन्ध में विचार करने वाली समिति में संघ की ओर से राजकमल प्रकाशन प्रा० लि० के श्री देवराज की प्रतिनिधि के रूप में नियुक्ति, एवं

(आ) १ जनवरी से ३१ मार्च, ६१ तक पुस्तक-विक्रेताओं के संघ द्वारा पंजीकरण के विरुद्ध कार्यसमिति के प्रस्ताव का स्थगन।

कार्यसमिति की यह बैठक निश्चय करती है कि इस वर्ष भारतवर्ष में जो अफ्रीकी-एशियाई प्रकाशकों का सम्मेलन होने वाला था, उसे स्थगित किया जाय; क्योंकि इजरायल के आयोजन-समिति का सदस्य होने के कारण जो राजनीतिक परिस्थितियाँ पैदा हो गई हैं, उन्हें देखते हुए इसे सफलतापूर्वक नहीं किया जा सकता।

संघ की कार्यसमिति पुनर्विचार करके यह निश्चय करती है कि संघ के लिए अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशक कांग्रेस का सदस्य रहने का कोई अर्थ नहीं है और संघ इस सम्बन्ध के पहले निर्णय को सम्पुष्ट करता है। इसके साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशन कांग्रेस की कार्रवाइयों को एक्सपोज करने के उद्देश्य से कार्यसमिति श्री रामलाल पुरी, श्री कृष्णचन्द्र बेरी एवं श्री कन्हैयालाल मलिक की उपसमिति को उससे पत्र-व्यवहार करने की अनुमति देती है।

पुस्तक-परिचय

उपन्यास

अछूता प्यार : मराठी के विख्यात उपन्यासकार मामा वरेरकर के उपन्यास का हिन्दी-अनुवाद है। इसके अनुवादक हैं श्री रामचन्द्र रघुनाथ सर्वटे। इस उपन्यास में दो प्रेमियों के प्रणय की एक असाधारण कहानी को इतने मार्मिक और सजीव ढंग से चित्रित किया है कि ऐसा लगता है कि मानो जीवन का यथार्थ साकार हो उठा हो। प्रेमियों के विरह-उच्छ्वासों के चित्रण के साथ-साथ कथा में ऐसी पकड़ है कि पाठक उसमें रमे बिना नहीं रह सकता। कथावस्तु के समान पात्रों का चरित्र-चित्रण भी ऐसा हुआ है कि उससे इस उपन्यास की ताजगी बढ़ गई है। **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज के २६४ पृष्ठ का यह उपन्यास चार रुपए में मिलता है।

* * *

धर्मपुत्र : आचार्य चतुरसेन का यह उपन्यास है और यह उसका नवीनतम द्वितीय संस्करण है। इसमें लेखक ने समाज, धर्म और राजनीति के विश्लेषण के माध्यम से अपने पात्रों के चरित्र को इस कुशलता से अंकित किया है कि पाठक उसमें आकण्ठ डूब जाता है। हमारे समाज में प्रचलित साम्प्रदायिकता और पूर्वाग्रहों पर लेखक ने जबरदस्त चोट की है। क्राउन साइज के २०२ पृष्ठों का यह सजिल्द उपन्यास तीन रुपए में प्राप्य है। प्रकाशक : **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली।**

* * *

कल्पना : श्री रांगेय राघव का नवीनतम उपन्यास है। इस उपन्यास की विशेषता यह है कि लेखक ने पाठकों को इसके माध्यम से अतीत के साहित्यों की झाँकी दिलाने का प्रयत्न किया है। इसके पात्र-पात्रियों के माध्यम से लेखक ने ऐतिहासिक आवरण में जीवन की मार्मिकताओं को उभारकर सामने रख दिया है। संवेदना और प्रतिभा का इतना सुन्दर समन्वय दूसरी कृतियों में ढूंढ़ने पर कदाचित् ही मिले। क्राउन साइज के १४० पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास २ रुपए ५० नए पैसे में मिलता है। प्रकाशक **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली।**

* * *

पाप के परे : श्री राजेन्द्र अवस्थी 'तृषित' का नया उपन्यास है। इसमें श्री 'तृषित' ने पुरुष के अन्तःकरण पर पड़े हुए कुहासे के आवरण को हटाकर नारी के प्रेम का स्पर्श कराने का सफल प्रयत्न किया है। नारी और पुरुष के जीवन की सफलता मात्र जीवन में प्रेम और सौन्दर्य की अर्चना करना ही है। पुरुष के व्यक्तित्व के अन्तरतम की गूढ़ समस्याओं का समाधान नारी ही कर सकती है और उसीमें पुरुष को नया जीवन देने की क्षमता है। उपन्यास में यही सिद्ध किया गया है कि नारी पुरुष के मन के सपनों को पूरा करने के लिए अपना समग्र जीवन हँसते-हँसते बिता देती है। क्राउन साइज के १४८ पृष्ठ के इस सजिल्द उपन्यास का मूल्य २ रुपए ५० नए पैसे है। प्रकाशक : **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली।**

* * *

स्वस्तिका : श्री ब्रजकिशोर 'नारायण' का नया उपन्यास है। विदेश-यात्रा के वातावरण में लिखे गए इस उपन्यास की कथा अबाध गति से इस प्रकार आगे-आगे बढ़ती है कि पाठक उसमें सहज ही डूब जाता है। अनुपम और स्वस्तिका के रूप में लेखक ने दो ऐसे पात्रों की सृष्टि इस उपन्यास में की है कि जो विभिन्न संस्कृतियों में पले हुए होने के कारण भी प्रेम-मार्ग पर सहज रूप से अग्रसर हैं। क्राउन साइज के ९६ पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास दो रुपए में मिल सकता है। **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित।

* * *

बुक्काराय : मूल लेखक गुणवन्त राय आचार्य। अनुवादक श्यामू संन्यासी। यह दक्षिणापथ में तुर्कों की पराजय और विजयनगर राज्य के अभ्युदय की कहानी है। तीन सौ

चार पृष्ठों के इस उपन्यास में लेखक ने कई-कई सजीव चरित्रों के माध्यम से एक ऐतिहासिक परिस्थिति को साकार किया है और इसमें आज के जीवन के लिए एक सन्देश भी दिया है। पुस्तक राष्ट्रीय भावना से अनुप्राणित है। कहानी का गठन बहुत स्वाभाविक है; यद्यपि कुछ स्थलों पर घटनाएँ चरित्रों की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण हो गई हैं। अनुवाद की भाषा बहुत सहज है जिसने पुस्तक को हिन्दी में भी काफी पठनीय बना दिया है। पुस्तक के प्रकाशक हैं **वोरा एण्ड कम्पनी, बम्बई २** और इसका मूल्य है पाँच रुपए पचास नए पैसे।

* * *

क्षितिज : रमणलाल देसाई का लिखा हुआ उपन्यास है जिसका अनुवाद श्यामलाल मेढ़ ने किया है। इसे 'नाग और आर्य-संस्कृति के संघर्ष और समन्वय की कहानी' कहा गया है। पुस्तक का रूप, ऐतिहासिक होते हुए भी इसकी कहानी काल्पनिक है और सब चरित्र भी लेखक की कल्पना की ही उपज हैं। लेखक ने पर्याप्त मात्रा में रहस्य-रोमांच का आश्रय लेकर उस काल के भोगवाद का चित्र प्रस्तुत करते हुए उस सम्बन्ध में अपना एक दृष्टिकोण भी दिया है। कथावस्तु को दृष्टि में रखते हुए इसे रूमानी उपन्यासों की श्रेणी में ही रखा जा सकता है। पाँच रुपए मूल्य में यह दो सौ अट्ठासी पृष्ठों का उपन्यास **वोरा एण्ड कम्पनी, बम्बई २** ने प्रकाशित किया है।

* * *

महारानी कुमारदेवी : यह गुप्तकालीन उपन्यासमाला के अन्तर्गत धूमकेतु का 'राज्यक्रान्ति' के बाद का उपन्यास है। इसमें कुमारदेवी और चन्द्रगुप्त के प्रेम-सम्बन्ध की कहानी है। एक नारी का प्रेम एक पुरुष से कितने बड़े-बड़े कार्य करा सकता है, यही इस उपन्यास का मूल विषय है। धूमकेतु अपने उपन्यासों में मनोरंजन को ही मुख्य उद्देश्य मानते हैं और इस दृष्टि से यह रचना काफ़ी सफल है। गुप्तकालीन जीवन को उपन्यास के माध्यम से जिस कुशलता से वे पहले अंकित करते आए हैं, उस कुशलता का परिचय इस उपन्यास में भी मिलता है। उस काल के वातावरण की सृष्टि करने में लेखक को पर्याप्त सफलता मिली है। श्यामू संन्यासी का अनुवाद काफ़ी प्रभावपूर्ण है।

वोरा एण्ड कम्पनी, बम्बई २ द्वारा प्रकाशित इस उपन्यास का मूल्य है पाँच रुपए और पृष्ठसंख्या है तीन सौ ग्यारह।

* * *

तीर्थयात्रा : सुप्रसिद्ध कहानीकार सुदर्शन की कहानियों का संग्रह है। पुस्तक में चौदह कहानियों के अतिरिक्त लेखक का एक नाटक भी सम्मिलित है। यद्यपि आरम्भिक रूप में यह पुस्तक आज से पैंतीस-छत्तीस वर्ष पहले प्रकाशित हुई थी, फिर भी आज का पाठक भी इसे रुचि के साथ पढ़ सकता है। श्री सुदर्शन की कहानी लिखने की अपनी एक खास शैली है। 'आशीर्वाद', 'संसार की सबसे बड़ी कहानी' तथा 'भग्नहृदय' इस संग्रह की पठनीय कहानियों में से हैं। **वोरा एण्ड कम्पनी, बम्बई २** द्वारा प्रकाशित इस पुस्तक का मूल्य चार रुपये है।

* * *

बाहर भीतर; दुखवा मैं कासे कहूँ; धरती और आसमान तथा **सोया हुआ शहर :** ये चारों पुस्तकें **राजपाल एण्ड सन्ज दिल्ली,** द्वारा प्रकाशित आचार्य चतुरसेन के सम्पूर्ण कहानी-साहित्य के चार भाग हैं। आचार्य चतुरसेन अपनी पीढ़ी के मूर्द्धन्य कथाकारों में से थे और उनके निधन के बाद उनके सम्पूर्ण कहानी-साहित्य को इस रूप में सामने लाने का यह प्रयत्न प्रशंसनीय है। जो लेखक साहित्यिक इतिहास के अन्तर्गत अध्ययन का विषय बन जाते हैं, उनकी रचनाओं के इस तरह के संस्करण एक अभाव की पूर्ति करते हैं। हिन्दी-कहानी के विकासक्रम में रुचि रखने वाले पाठकों की दृष्टि से भी ये संग्रह उपयोगी हैं और एक साधारण पाठक की दृष्टि से भी, क्योंकि बरसों पहले लिखी होने पर भी आचार्य चतुरसेन की कहानियाँ साधारण पाठक का आज भी पर्याप्त मनोरंजन कर सकती हैं। लेखक की बहुत-सी प्रसिद्ध कहानियों के अतिरिक्त कई-एक ऐसी कहानियाँ भी इन संग्रहों में मिल जाएँगी जिन्हें पहले उतनी ख्याति या प्रकाश नहीं मिल सका।

कहानियों के ऊपर दी गयी टिप्पणियाँ पाठकों की दृष्टि से तो नहीं, हाँ, संग्रहकर्ताओं की दृष्टि से अवश्य उपयोगी हो सकती हैं। पुस्तक के प्रत्येक भाग की पृष्ठसंख्या २५४ से दो सौ साठ तक है और प्रत्येक का मूल्य है चार रुपए।

* * *

पहला नास्तिक : में श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार की नई-पुरानी १५ कहानियों का संकलन प्रस्तुत किया गया है। प्रारम्भ में लेखक ने बड़ी ईमानदारी से अपनी कहानियों की पृष्ठभूमि और उनके वातावरण-निर्माण के सम्बन्ध में उपयोगी जानकारी दी है। प्रायः सभी कहानियों में लेखक ने अपनी कला और प्रतिभा का परिचय दिया है। विषय, शैली और शिल्प सभी दृष्टि से ये कहानियाँ अपना विशिष्ट स्थान रखती हैं। क्राउन साइज के १८४ पृष्ठों की यह सजिल्द पुस्तक तीन रुपए में सुलभ है। **राजपाल एण्ड सन्स**, **दिल्ली** द्वारा प्रकाशित।

* * *

उर्दू गुलिस्ताँ की बुलबुलें : नामक इस पुस्तक में इसके लेखक श्री रामनाथ 'सुमन' उर्दू की प्रमुख कवयित्रियों के परिचय और उनकी शायरी के उत्कृष्टतम नमूने प्रस्तुत किए हैं। इस पुस्तक के लेखक की यह पुस्तक भी उसकी गालिब, मीर और जिगर की भाँति काफी लोकप्रिय होगी, ऐसी आशा है। हिन्दी में इस प्रकार की यह पहली पुस्तक है, अतः सर्वथा अभिनन्दनीय है। क्राउन साइज के २१६ पृष्ठ की यह पुस्तक **राजपाल एण्ड सन्स**, **दिल्ली** ने प्रकाशित की है और चार रुपए में प्राप्य है।

* * *

माखनलाल चतुर्वेदी : का प्रकाशन **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली** द्वारा उसकी 'आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि' नामक पुस्तकमाला के अन्तर्गत हुआ है। इसके लेखक श्री हरीकृष्ण प्रेमी स्वयं अच्छे साहित्यकार और कवि होने के साथ चतुर्वेदीजी के अनन्य सहयोगी रह चुके हैं। अतः उनकी लेखनी से लिखी गई यह पुस्तक हिन्दी के पाठकों को चतुर्वेदीजी के जीवन और काव्य के सम्बन्ध में उपयोगी जानकारी प्रदान करेगी, ऐसी आशा है। **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज के १२० पृष्ठों की यह पुस्तक दो रुपए में प्राप्य है।

* * *

पथ के गीत : मुनिश्री मोहनलालजी 'शार्दूल' की नवीनतम काव्य-कृति है। इसमें उनकी ७५ नई रचनाओं का संकलन प्रस्तुत किया गया है। प्रायः सभी कविताएँ, जीवन के कर्ममय पथ पर आगे बढ़ने का सन्देश देने की दृष्टि से ही लिखी गई हैं, अतः इस संग्रह का नाम अत्यन्त सार्थक हुआ है। डिमाई साइज के सुन्दर आकार और सुमुद्रित साज-सज्जा वाली यह कृति **आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित हुई है और २ रुपए ५० नए पैसे में प्राप्य है।

* * *

मधुबाला : कवि बच्चन का सुप्रसिद्ध कविता-संग्रह है जिसका पहले-पहल प्रकाशन जनवरी सन् छत्तीस में हुआ था। **राजपाल एण्ड सन्ज, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित यह उस पुस्तक का नवाँ संस्करण है। आठवें संस्करण के लिए लेखक ने जो भूमिका लिखी थी, वह भी इसमें सम्मिलित है। हिन्दी में अंगूरी-काव्य की अवतारणा कवि बच्चन के साथ ही हुई थी और उस काव्य-परम्परा में उनकी रचना 'मधुबाला' अपना विशेष स्थान रखती है। एंटिक कागज पर छपी एक सौ पच्चीस पृष्ठों की यह लोकप्रिय पुस्तक दो रुपए में प्राप्य है।

* * *

त्रिभंगिमा : कवि बच्चन की सन् १९५८-६० में लिखी कविताओं का संग्रह है। इधर कवि बच्चन ने उत्तरप्रदेश की लोकधुनों पर आधारित जो कविताएँ लिखी हैं, उनमें से कई-एक कविताएँ प्रस्तुत संग्रह में दी गई हैं। उनके अतिरिक्त बहुत-सी दूसरी कविताएँ भी हैं। 'मधुशाला' से लेकर अब तक कवि बच्चन की काव्यधारा में कई मोड़ आये हैं, परन्तु उसकी सहजता और कोमलता में अन्तर नहीं आया। त्रिभंगिमा की कविताएँ इसका प्रमाण हैं। संग्रह में कुछ ऐसी कविताएँ भी हैं जो कुछ विशेष अवसरों के लिए लिखी गई थीं। कुछ रचनाएँ मुक्त छन्द में भी

भारतीय ग्रन्थ-सूची

(इण्डियन नेशनल बिबलियोग्राफ़ी)

भारतीय ग्रन्थ-सूची सामयिक भारतीय प्रकाशनों का एक अधिकृत रिकार्ड है।

इतिहास में पहली बार सभी भारतीय प्रकाशनों का अंग्रेजी भाषा और रोमन लिपि में निम्नलिखित भाषाओं में ठीक-ठीक और विस्तृत रेकार्ड तैयार किया गया है।

असमिया, बंगला, गुजराती, हिन्दी, कन्नड़, मलयालम, मराठी, उड़िया, पंजाबी, संस्कृत, तमिल, तेलुगू और उर्दू।

पंचवर्षीय योजनाओं की अवधि में सरकार ने कई महत्वपूर्ण प्रकाशन प्रकाशित किए हैं। अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र और समाजशास्त्र के विद्यार्थियों के लिए ये आधारभूत सामग्री प्रदान करते हैं। ये सभी प्रकाशन इस ग्रन्थ-सूची में सम्मिलित कर लिये गए हैं।

आकार : डिमाई क्वार्टो $8\frac{3}{4}'' \times 11\frac{1}{4}''$, मुद्रित क्षेत्र : $6\frac{1}{2}'' \times 9''$।

प्रकाशन-अवधि : एक कलेण्डर वर्ष में ४ त्रैमासिक अंक और एक वार्षिक अंक।

कीमत : वार्षिक अंक की : ५०.०० रुपए प्रत्येक, डाक-खर्च अलग से।
त्रैमासिक अंक की : १५.५० रुपए प्रत्येक, डाक-खर्च अलग से।

छूट : कम-से-कम प्रत्येक त्रैमासिक अंक की ६ प्रतियाँ और वार्षिक अंक की ३ प्रतियाँ एक साथ खरीदने पर १५%
उपलब्धता : प्रथम अंक अक्तूबर-दिसम्बर, '५७ में प्रकाशित। सभी पिछले अंक निर्धारित कीमत पर उपलब्ध हैं।
प्राप्ति-स्थान : भारत सरकार, सेण्ट्रल रेफ़रेन्स लाइब्रेरी, मारफत नेशनल लाइब्रेरी, बेलवेडियर, कलकत्ता-२७।

—कुछ सम्मतियाँ—

'भारतीय ग्रन्थ-सूची स्वतन्त्र भारत द्वारा ग्रन्थ-सूची की दुनिया में दिया गया पहला महत्वपूर्ण योगदान है।'

—प्रो० हुमायूँ कबीर,
९ जुलाई, १९५८

'भारतीय ग्रन्थ-सूची के लिए हार्दिक बधाई! यह एक अनूठी उपलब्धि है, जिस पर आपको गर्व होना चाहिए।'

—एफ० सी फ्रांसिस, सी० बी०,
डाइरेक्टर, ब्रिटिश म्यूज़ियम, २६ अगस्त १९५८ ई०।

'अहा, यह आपने कितना विलक्षण कार्य किया है! यह विशाल काम करने में जिन लोगों ने परिश्रम किया है और जिनके विचारों के कारण यह सुन्दर परिणाम निकला है, उन सभी को बधाई!'

—ए० जे० वेल्स, जनरल एडीटर
ब्रिटिश नेशनल बिबलियोग्राफी, ८ अक्तूबर, १९५८

'भारतीय ग्रन्थ-सूची, सर्वश्रेष्ठ राष्ट्रीय ग्रन्थ-सूचियों की श्रेणी में अपना उचित स्थान प्राप्त कर लेगी।'

—पी० एम० योगाइचेव, डाइरेक्टर,
लेनिन स्टेट लाइब्रेरी, मास्को सेण्टर, सोवियत रूस,
६ नवम्बर, १९५८।

'यह जो काम किया गया है, स्वतन्त्र रूप से विशाल है। यह एक अनुकरणीय ढंग से सम्पन्न किया गया है। यह वह ग्रन्थ है, जिसमें १२ भाषाओं की पुस्तकों का विवरण दिया गया है और इसने सभी विद्वानों को इसके संकलकों का ऋणी बना दिया है।' **—स्टेट्समैन, कलकत्ता,**
२४ अगस्त १९५८

'भारतीय ग्रन्थ-सूची समिति और इसके प्रमुख सम्पादक एक महत्त्वपूर्ण, मूल्यवान् और विकट काम को सफलतापूर्वक शुरू करने के लिए हमारी कृतज्ञता के अधिकारी हैं।'

—एम० सी० सटन,
जनरल ऑफ डाकूमेण्टेशन, वौल्यूम १५, संख्या ३
सितम्बर, १९५९

'भारतीय ग्रन्थ-सूची का प्रकाशन मुझे ग्रन्थ-सूची-विषयक एक महान् उपलब्धि लगता है। १४ भाषाओं में से लिप्यन्तरण, संग्रहण और संकलन की समस्याएँ काफी बड़ी थीं। पर उन सभी को सफलतापूर्वक हल कर लिया गया है। अन्य देश जो राष्ट्रीय पुस्तकालय संगठन की समस्याओं पर काम शुरू कर रहे हों, उनके लिए कलकत्ता में प्राप्त अनुभवों का अध्ययन काफी उपयोगी सिद्ध होगा।'

—फ्रैंक एम० गार्डनर,
पुस्तकालयों के लिए यूनेस्को बुलेटिन,
वौल्यूम १४, संख्या ४, जुलाई-अगस्त, १९६०

हैं परन्तु वे नई कविता की काव्यशैली के अन्तर्गत नहीं आतीं। दो सौ बयालीस पृष्ठों का यह कविता-संग्रह **राजपाल एण्ड सन्ज़**, दिल्ली द्वारा प्रकाशित है और इसका मूल्य है चार रुपए।

* * *

नाटक

जवानी और छः एकांकी : नामक पुस्तक में हिन्दी के ख्यातनामा साहित्यकार, नाटककार, कवि और उपन्यास-कार श्री उदयशंकर भट्ट के 'जवानी' नामक एकांकी के अतिरिक्त धूमशिखा, मन का रहस्य, दुर्गा, वर-निर्वाचन, प्रथम विवाह और कुमारसम्भव शीर्षक छः और एकांकी समाविष्ट हैं। प्रायः सभी एकांकी कला तथा नाटकीयता के गुणों से भरपूर हैं। क्राउन साइज के १४६ पृष्ठों की यह पुस्तक **आत्माराम एण्ड सन्स**, दिल्ली से प्रकाशित हुई है और यह २ रुपये ५० नए पैसे में उपलब्ध हो सकती है।

* * *

राजनीति

विश्व शांति और अणुव्रत : नामक इस छोटी-सी पुस्तिका में इसके लेखक श्री अनन्त मिश्र ने देश-विदेश की ऐसी अनेक घटनाओं और परिस्थितियों का चित्रण किया है, जिन्हें प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में जानता और अनुभव करता है। विश्व-शान्ति, सद्बोधता और मैत्री के प्रसार में यह पुस्तिका भारी सहायता प्रदान करेगी, ऐसी आशा है। **आत्माराम एण्ड सन्स**, दिल्ली द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज के ६० पृष्ठों की यह पुस्तिका एक रुपए में उपलब्ध हो सकती है।

* * *

कांग्रेस और उसका भविष्य : नामक इस पुस्तिका का प्रकाशन **नवजीवन प्रकाशन मन्दिर**, अहमदाबाद ने किया है और इसमें महात्मा गांधी के भाषणों का आकलन प्रस्तुत किया गया है। प्रायः सभी भाषण पठनीय और मननीय

हैं। क्राउन साइज के ५२ पृष्ठों की इस पुस्तिका का मूल्य ४० नए पैसे है।

* * *

बाल-साहित्य

कहाँ आ गए: आत्माराम एन्ड संस, दिल्ली द्वारा प्रकाशित श्री अरविंद गुर्टू का नवीनतम बालोपयोगी सचित्र उपन्यास है। यह उपन्यास पहले 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में धारावाहिक रूप से भी प्रकाशित हो चुका है। क्राउन साइज़ के १०२ पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास दो रुपए में मिल सकता है।

* * *

सांस्कृतिक

उत्तर ध्रुव से गंगा: नामक ग्रन्थ श्री परमानन्द पटेल की नवीनतम शोधपूर्ण कृति है। इसमें विद्वान् लेखक ने आर्यों का आदि देश, अविभक्त आर्यों की संस्कृति, सप्त-सिन्धु से गंगा: मनु से राम, राम से परीक्षित, महाभारत-युद्धकाल-निर्धारण, वैदिक आर्यों की संस्कृति और सभ्यता, आर्यों के आचार-विचार, आर्यों की शिक्षा-पद्धति, आर्यों की विवाह-संस्था, आर्यों की अर्थ-व्यवस्था, आर्यों की राज्य-व्यवस्था, वैदिक धर्म तथा हिन्दू धर्म, भारतीय दर्शन, ईश्वर की कल्पना और उसका विकास, भारत और ईरान, भारत और यूनान, आर्यों के धार्मिक आख्यान, निर्धारित काल-सूची आदि विभिन्न अध्यायों में भारतीय संस्कृति और समाज के अनेक सांस्कृतिक और सामाजिक पक्षों पर उपयोगी तथा व्यापक ढंग से प्रकाश डाला है। भारतीय संस्कृति और इतिहास के प्रेमी पाठक इस पुस्तक का खूब पारायण करेंगे, ऐसी आशा है। डिमाई साइज़ के १६० पृष्ठों की यह सजिल्द पुस्तक **राजकमल प्रकाशन**, दिल्ली ने प्रकाशित की है और यह आठ रुपए में प्राप्य है। पुस्तक की उपादेयता का एक प्रमाण यह भी है कि इसकी रचना करने में लेखक ने अनेक ग्रन्थों की सहायता ली है। पुस्तक के अन्त में प्रकाशित सन्दर्भ-ग्रन्थों की तालिका, इसकी ज्वलन्त साक्षी है।

* * *

आगामी मास के प्रकाशन

आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली

—**चिट्ठी रसैन**, श्री शैलेश मटियानी, उपन्यास

—**वैशाली की दत्तक पुत्री**, शिवकुमार कौशिक, उपन्यास

—**साहित्य के स्वर**, श्री उदयशंकर भट्ट

—**अँधेरा छूट गया**, श्री गंगाधर शुक्ल, कहानी-संग्रह

—**जवानी का नशा**, श्री जयनाथ नलिन, हास्य-स्केच

—**लोक-प्रशासन**, श्री वेदप्रकाश सिंह

—**वस्त्रविज्ञान**, श्री आशारानी वोहरा

—**गदर-पार्टी का इतिहास**, श्री प्रीतमसिंह पंछी, सम्पा० श्री बनारसीदास चतुर्वेदी

किताब महल, इलाहाबाद

—**सोने की ढाल**, पु० मु०, श्री राहुल सांकृत्यायन

—**भागो नहीं बदलो**, पु० मु०, श्री राहुल सांकृत्यायन

—**नदी प्यासी थी**, पु० मु०, डॉ० धर्मवीर भारती

—**चतुरी चमार**, पु० मु०, श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

—**धरती माता**, पु० मु०, श्री सूरज, विज्ञान

—**नवीन चित्रकला शिक्षण पद्धति**, श्री रामचन्द्र शुक्ल

—**भारतीय नृत्यकला**, श्री केशवचन्द्र वर्मा

—**कुँअर निहालदे**, श्री चन्द्रशेखर शास्त्री

नवयुग पुस्तक भण्डार, लखनऊ

—**खिली कली, मुस्काया भँवरा**, श्री धर्मनारायण पाण्डेय 'धर्मेश'

—**बेला फूले आधी रात**, श्री शंकर सुलतानपुरी

नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली

—**नाट्यकला**, डॉ० रघुवंश

साहित्य समालोचन, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी

—**वीणापाणि के कम्पाउण्ड में**, श्री केशवचन्द्र वर्मा, कविता

—**पलासी का युद्ध**, श्री कणिका विश्वास, उपन्यास

—**नग़मए-हरम**, श्री अयोध्याप्रसाद गोयलीय, उर्दू-शायरी

—**लो कहानी सुनो**, श्री अयोध्याप्रसाद गोयलीय

राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

—**हिन्दी उपन्यास**, डॉ० सुषमा धवन

—**कथा कहो उर्वशी**, श्री देवेन्द्र सत्यार्थी, उपन्यास

—**कुछ और कविताएँ**, श्री शमशेर बहादुरसिंह

—**पहाड़ी प्रदेशों की कहानियाँ**, श्री सन्तराम

—**भारतीय शिक्षा तथा आधुनिक विचारधाराएँ**, श्रीमती विद्यावती मलैया

—**वाह रे मैं वाह**, पु० मु०, श्री कन्हैयालाल मुंशी

—**बुनियादी शिक्षण तथा सिद्धान्त**, श्री के० सी० मलैया व श्री तनखीवाला

राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली

—**जगन्नाथ 'आजाद'**, श्री प्रकाश पण्डित, उर्दू-शायरी

—**'रामावतार त्यागी'**, श्री क्षेमचन्द्र 'सुमन', हिन्दी कवि-सीरीज़

—**इन्कलाब**, श्री ख्वाजा अहमद अब्बास, उपन्यास

—**सच्ची कहानियाँ**, श्री रामनारायण तिवारी व के० डी० ठक्कर

(शेष पृष्ठ ३७४ पर)

(पृष्ठ ३६० का शेष)

जो पुस्तकालय और साहित्यिक संस्थाओं की ओर से इन दिनों आयोजित किए जाते उनमें हजारों स्त्री-पुरुष भाग और देश-भर में इन दिनों इसी से सम्बन्धित कार्य होते। अनेक गाँवों और छोटे शहरों में बुकवाल उत्सव मनाये जाते जिनका रूप-रंग विभिन्न स्थानों में अलग-अलग ढंग का होता। कुछ गाँवों में इनमें आने के लिए प्रवेश-फीस एक किताब खरीदनी होती, कुछ में प्रवेश-फीस की आमदनी से स्थानीय पुस्तकालयों के लिए पुस्तकें खरीद ली जातीं। कुछ में इस आमदनी से पुस्तकें इनमें बाँट दी जातीं। इनकी विशेषता यह है कि पिछले कुछ वर्षों में यह अपने-आप देश के विभिन्न भागों में स्वतन्त्र रूप से आयोजित की जाने लगी हैं और अब शायद ही कोई गाँव ऐसा हो जहाँ पुस्तक-समारोह-सप्ताह के दिनों में इनमें कोई-न-कोई कार्यक्रम न हो।

कुछ स्थानों में पुस्तकालयों या सांस्कृतिक गृहों का ओर से साहित्यिक पहेलियाँ आयोजित की जाती हैं और उनमें जीतने वालों को मूल्यवान् पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेंट की जाती हैं। सन् ५९ में इस सप्ताह से एक कविता-दिवस भी रखा गया है। इस दिन कविता-प्रतियोगिता कराई गई और विभिन्न समाचार-पत्रों ने कविताएँ प्रकाशित कीं। लोकप्रिय पुस्तकों की दुकानों पर प्रसिद्ध कवियों ने हंगरी की प्रसिद्ध कविताएँ सुनाईं। बड़े शहरों में साहित्यिक थियेटरों ने सन्ध्याकालीन कवि-गोष्ठियाँ आयोजित कीं। सन् ५८ में विद्यार्थियों, अध्यापकों और मजदूरों ने तीस विभिन्न स्थानों पर नाटक-प्रदर्शन किये। इस सप्ताह के दिनों में एक थियेटर ने चार शहरों में प्रदर्शन किया।

पाठक विक्रेता के रूप में—इन दिनों में पाठकों ने भी पुस्तकों की बिक्री में खूब सहयोग दिया। किताबों की दुकानों के अतिरिक्त आठ हजार अन्य स्थानों पर गाँवों, कल-कारखानों, कार्यालयों, स्कूलों और सहकारी समितियों में पुस्तकें बेची गईं। इनमें पुस्तकों की बिक्री की व्यवस्था पाठकों ने अपने-आप की। उदाहरणार्थ डेवकसेर में १०० बच्चों ने घर-घर जाकर १०,००० फोरिन्ट (हंगेरियन सिक्का) की पुस्तकें बेचीं। पुष्पा कलेडानी नामक गाँव में सामाजिक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं ने ६,००० फोरिन्ट की किताबें एक रविवार को बेच डालीं। कितने ही स्थानों में ट्रेड यूनियनों के कार्यकर्ताओं ने अपने-आप तम्बू तानकर किताबों की दुकानें लगाकर बेचीं। पुस्तक-विक्रेताओं के अतिरिक्त जिन लोगों ने पुस्तकें बेची हैं उनकी संख्या १५,००० के करीब अनुमानित की गई है। इस सप्ताह में करीब पौने दो करोड़ फोरिन्ट की पुस्तकें बिक गईं। जिन गाँवों में १५ वर्ष पूर्व एक भी पुस्तक नहीं बिकती थी उनमें अब हजारों फोरिन्ट की पुस्तकें एक सप्ताह में बिक जाती हैं और पाठक आमन्त्रित लेखकों की रचनाओं की युक्ति-युक्त आलोचना डटकर करते हैं। देशव्यापी जोश-खरोश का एक लाभ यह भी हुआ कि पुस्तकों के हजारों ऐसे नये पाठक मिल गए जो पहले इनकी उपेक्षा करते थे।

अगर हम भारत में इस कार्यक्रम को अपना सकें तो देश की विचारधारा ही बदल जाय और साथ में पुस्तक-व्यवसाय से सम्बन्धित लेखकों, विक्रेताओं, प्रकाशकों, मुद्रकों आदि का भी भारी लाभ हो।

●

(पृष्ठ ३७३ का शेष)

साहित्य भवन प्रा० लि०, इलाहाबाद

—**रीति काव्य संग्रह**, डॉ० जगदीश गुप्त

—**उड़ीसा में अवशिष्ट बौद्धधर्म**, श्री नर्मदेश्वर चतुर्वेदी

—**नाभाकृत भक्तमाल का अध्ययन**, श्री प्रकाशनारायण दीक्षित

—**विचार-वितर्क**, पु० मु०, डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी

—**संक्षिप्त पृथ्वीराज रासो**, डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी

—**तुलसी रसायन**, पु० मु०, डॉ० भगीरथ मिश्र

—**पुराणों की अमर कहानियाँ**, पु० मु०, डॉ० प्रतापसिंह त्रिपाठी

—**हमारे लेखक**, पु० मु०, श्री राजेन्द्रसिंह गौड़

—**प्रभाती**, पु० मु०, श्री सोहनलाल द्विवेदी

—**चाँदनी चूनर**, श्रीमती शकुन्त माथुर, काव्य

—**शिला पंख चमकीले**, श्री गिरिजा कुमार माथुर, काव्य

—**मध्यकालीन शृङ्गारिक प्रवृत्तियाँ**, श्री परशुराम चतुर्वेदी

—**साहित्य-पथ**, श्री परशुराम चतुर्वेदी

मार्च मास के प्रकाशन

आलोचना

प्रभुदयाल मीतल, **साहित्य लहरी**, ३४०, डि०, साहित्य संस्थान, मथुरा ६.००

आलोचना—निबन्ध

परमलाल गुप्त, **रामचरितमानस और साकेत**, २०६, डि०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ५.००

राहुल सांकृत्यायन, **साहित्य निबन्धावली**, पु० मु०, किताब महल, इलाहाबाद ५.००

विजयकुमार, **अशोक निबन्ध सागर**, पु० मु०, ६२४, क्रा०, अशोक प्रकाशन, दिल्ली

विश्वम्भर मानव, **खड़ी बोली के गौरव-ग्रन्थ**, १६८, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद ३.००

विश्वम्भर मानव, **प्रेमचन्द**, १६८, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद ३.००

उपन्यास

कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी, **तपस्विनी**, २४८, क्रा०, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली ५.५०

कमला टण्डन, **बिखरते स्वप्न**, २५६, क्रा०, नवयुग पुस्तक भण्डार, लखनऊ ५.००

कृष्णचन्द्र, **रेत का महल**, पु० मु०, २०४, क्रा०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ४.००

किशोर साहू, **परदे के पीछे**, ३००, डि०, किताब महल, इलाहाबाद १२.००

चतुरसेन शास्त्री, **मोती**, ११०, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली २.००

चिरंजीलाल पाराशर, **दूसरा रास्ता**, ३३६, क्रा०, राकेश प्रकाशन, गाजियाबाद ५.५०

दान बहादुर पाठक, **पूजा और प्यार**, २४४, क्रा०, नवयुग पुस्तक भण्डार, लखनऊ ५.००

देवेन्द्र सत्यार्थी, **कथा कहो उर्वशी**, ४००, क्रा०, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली ७.००

पीताम्बर पटेल, **खेतों की गोद में**, २७२, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली ४.५०

महेशचन्द्र शर्मा, **घाटियाँ और घुमाव**, २३०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ४.००

यादवेन्द्र शर्मा चन्द्र, **बड़ा आदमी**, २१८, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली ४.००

विश्वम्भर मानव, **उजड़े घर**, २६८, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद ५.००

शंकर सुलतानपुरी, **इन्सानियत इन्साफ़ माँगती है,** २३६, का०, नवयुग पुस्तक भण्डार, लखनऊ	५.००
शंकर सुलतानपुरी, **उसके भी आत्मा थी,** १२०, का०, नवयुग पुस्तक भण्डार, लखनऊ	२.७५
शंकर सुलतानपुरी, **बुझा चिराग सुलगती बाती,** १६४, का०, नवयुग पुस्तक भण्डार, लखनऊ	४.००
शैलेश मटियानी, **किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई,** ११२, का०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली	२.५०
सूर्यकुमार जोशी, **सत्यानाशी के फूल,** १००, का०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली	२.००

एकांकी—नाटक

कृष्णचन्द्र, **नए गुलाम,** पु० मु०, १६८, का०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली	३.००
राजेन्द्र कुमार शर्मा, **परदा उठने से पहले,** १२०, का०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली	२.५०
रेवतीसरन शर्मा, **पत्थर और आँसू,** पु० मु०, २३२, का०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली	४.००
लक्ष्मी नारायण लाल, डॉ०, **नाटक बहुरंगी,** २८८, का०, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी	४.५०
श्रीकृष्ण व अन्य, सम्पा०, **प्रतिनिधि हास्य एकांकी,** ३७०, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली	१०.००
सूरजनारायण अग्रवाल, **माँ,** ७६, का०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली	१.२५

कविता

उदयशंकर भट्ट, **अमृत और विष,** ८८, का०, आत्माराम एण्ड सन्स दिल्ली	२.००
विराज, **कार्तिकेय,** ८८, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली	१.५०
शकुन्तला सिरोठिया, **चाँद इतना हँसा,** १२०, डि०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली	२.००
सुमित्रानन्दन पन्त, **शिल्पी,** १११, डि०, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	४.००
क्षेमचन्द्र सुमन, **हिन्दी के लोकप्रिय कवि नीरज,** १३६, का०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली	२.००

कहानी

कुलभूषण, **पगडंडी और परछाइयाँ,** पु० मु०, १२०, का०, किताब महल, इलाहाबाद	३.००
चतुरसेन, **कहानी खत्म हो गई,** २५०, का०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली	४.००
चिरंजीलाल पाराशर, **स्वर्ग की दीवार,** ६२०, का०, राकेश प्रकाशन, गाजियाबाद	५.५०
वरदाचारी पण्डित सम्पा०, **दूसरे विश्वयुद्ध की सच्ची कहानियाँ,** १२०, का०, निशियाम प्रकाशन, नई दिल्ली	३ ००

बालोपयोगी—प्रौढ़ोपयोगी

आनन्दप्रकाश जैन, **तेलंगाना की लोक कथाएँ ३,** ४०, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली	१.२५
आनन्दप्रकाश जैन, **तेलंगाना की लोक कथाएँ ४,** ४०, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली	१.२५
एस० ए० ताहिर, **कुँआरे का घर,** ६६, कापी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	१.५०
कमला मेहरोत्रा, **बीरबल का अजीब तमाशा,** ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद	०.७५
कमला मेहरोत्रा, **बीरबल का न्याय,** ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद	०.७५
कमला मेहरोत्रा, **बीरबल का स्वर्गारोहण,** ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद	०.७५
कमला मेहरोत्रा, **बीरबल का हवाई महल,** ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद	० ७५
कमला मेहरोत्रा, **बीरबल की खिचड़ी,** ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद	०.७५

कमला मेहरोत्रा, **बीरबल की फाँसी,** ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५

कुमारी माधवी, **माधावनल कामकन्दला,** ४८, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५

धर्मपाल शास्त्री, **दुनिया के आश्चर्य,** ११२, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली २.५०

प० अ० बारान्निकोव, **सोवियत संघ की लोक-कथाएँ,** १०८, क्रा०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली २.००

प्रभाकर माचवे, **महाराष्ट्र की लोक-कथाएँ (२),** ६४, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली १.५०

बालकृष्ण, **आदर्श विद्यार्थी,** पु० मु०, ६८, क्रा०, नेशनल पब्लिसिंग हाउस, दिल्ली १.००

महेन्द्र मित्तल, **झुन-झुन झटका,** ६४, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली १.५०

यादवेन्द्र शर्मा चन्द्र, **टेसीटोरी,** ३२, क्रा०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ०.५०

यादवेद शर्मा चन्द्र, **झूठी आन,** ३६, क्रा०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ०.६०

रमेशकुमार माहेश्वरी, **विश्व के त्यौहार,** ६६, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली २.५०

रामेश्वरप्रसाद मेहरोत्रा, **गुलसनोवर,** ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५

रामेश्वर मेहरोत्रा, **बैताल पचीसी,** ४०, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५

शकुन्तला सिरोठिया, **सारंगा सदावृज,** ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५

सरस्वतीकुमार, **'दीपक', चुन्नू-मुन्नू,** ४८, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली २.००

यात्रा विवरण व संस्मरण

अज्ञेय, **एक बूँद सहसा उछली,** क्रा०, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी ७.००

पूर्णचन्द्र सनक, **चन्द्रशेखर 'आजाद',** १०८, क्रा०, नेशनल, पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली २.००

रघुवंश डॉ०, **रही घाटी,** ३०६, क्रा०, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी ४.५०

विविध

जगपति चतुर्वेदी, **खुरवाले जानवर,** पु० मु०, १४४, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद २.००

जगपति चतुर्वेदी, **समुद्री जीव-जन्तु,** पु० मु०, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद २.००

जोसेफ़ ए० शुम्पीटर, **दस महान् अर्थशास्त्री,** २१४, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली २.००

परमानन्द पटेल, **उत्तर ध्रुव से गंगा,** १६०, डि०, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली ८.००

भूपेन्द्रनाथ सान्याल, **आदिम मानव समाज,** २१६, क्रा०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ४.००

सन्तराम, **जीने की कला,** २०८, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली ३.५०

सिद्धनाथ कुमार, **रेडियो वार्ता-शिल्प,** १३४, क्रा०, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी २.००

सुरेश वैद्य, **जंगल की ओर,** २२४, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली ६.००

सोमदत्त गालवीय, **आइए हिन्दी पढ़ें,** ८०, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली २.५०

●

प्रकाशन समाचार

वर्ष : ८
अंक : ६
वार्षिक : ३.००
एक प्रति : ०.३१

सम्पादक : ओमप्रकाश, डायरेक्टर इंचार्ज, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड

अखिल भारतीय हिन्दी-प्रकाशक सम्मेलन के पटना में १६ और १७ अप्रैल को हुए छठे अधिवेशन ने गत वर्ष की कार्य-समिति के पुस्तकों की बिक्री से सम्बद्ध सुझाव के इस अंश को मान लिया कि प्रकाशकों और पुस्तक-विक्रेताओं द्वारा नियमों के पालन में ढिलाई देखने में आती है। इस परि-स्थिति का प्रतिकार अधिवेशन ने सर्वसम्मति से स्वीकृत एक प्रस्ताव द्वारा करना चाहा है, जिसमें प्रकाशकों और पुस्तक-विक्रेताओं से अनुरोध किया गया है कि वे इसी ढिलाई की रोकथाम करते हुए नियमों का पालन करें। इसी प्रस्ताव में यह भी कहा गया है कि प्रकाशक और पुस्तक-विक्रेता किसी अन्य प्रकाशक और पुस्तक-विक्रेता की पुस्तकें न बेचें जो इन नियमों के पालन में अनुबद्ध न हों; यह भी कि इन नियमों के उल्लंघन के अपराध में संबंधित प्रकाशकों और पुस्तक-विक्रेताओं के विरुद्ध कड़ी अनुशासनात्मक कार्य-वाही की जाए।

यह प्रस्ताव आसानी से कार्यान्वित नहीं किया जा सकता। संघ के पदाधिकारियों और कार्यसमिति पर इससे विशेष उत्तरादायित्व आ पड़ा है, विशेषतः संघ के वर्तमान अध्यक्ष श्रीकृष्णचन्द्र बेरी पर, जिन्होंने इस प्रस्ताव के समर्थन में अपना यह आश्वासन प्रकाशकों और पुस्तक-विक्रेताओं को दिया कि वह बिक्री-सम्बन्धी नियमों के कार्या-न्वयन के लिए देश के उन प्रमुख नगरों का दौरा करेंगे जहां कि हिन्दी-पुस्तक-व्यवसाय केन्द्रित है और प्रकाशकों एवं पुस्तक-विक्रेताओं को इन नियमों के महत्त्व और आवश्यकता से अवगत करेंगे।

नयी कार्यसमिति की घोषणा अध्यक्ष महोदय ने कर दी है—अब इसकी बैठक अधिवेशन द्वारा स्वीकृत प्रस्तावों के कार्यान्वियन की ओर कदम उठाने के उद्देश्य से शीघ्र ही होनी चाहिए। इस कार्यसमिति को संघ के विधान की सम्बन्धित धारा और प्रस्तुत प्रस्ताव की रक्षा के लिए उन प्रकाशकों से संघ को अपना समर्थन देने का अनुरोध करना है जो अब तक इससे बाहर रहे हैं या हो गए हैं, पुस्तक-विक्रेताओं को यह आदेश देना है कि वे बिक्री-सम्बन्धी नियमों का पालन न करने वाले प्रकाशकों की पुस्तकों की खरीद व बिक्री न करें तथा नियमों की सुरक्षा के लिए एक सतर्क अनुशासन समिति को अपनी सम्पूर्ण मान्यता देनी है।

अधिवेशन में एक बात यह देखने में आई कि पुस्तक-विक्रेता बिक्री-सम्बन्धी नियमों को बरकरार बनाए रखना चाहते हैं, चाहे उनका विश्वास उनमें इतना अटूट न हो कि वे आये ग्राहक को नियमों द्वारा मान्य से अधिक कमी-शन न देते हुए हाथ से चले जाने दें। बिक्री-सम्बन्धी नियमों ने एक सीमा कायम कर दी है और पुस्तक-विक्रेताओं को पहले जितना ज्यादा कमीशन नहीं देना पड़ता। लेकिन यही परिस्थिति उन प्रकाशकों और पुस्तक-विक्रेताओं के लिए बहुत आपत्तिजनक और क्षतिग्रस्त है जो अपने को नियमों के पालन में कड़ाई से बाँधे रखते हैं।
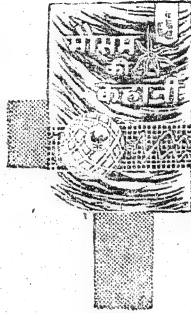
इस सीरीज़ में वैज्ञानिक विषयों पर सुगम भाषा और रोचक शैली में प्रत्येक विषय की पूरी जानकारी दी गई है। पुस्तकें सुन्दर, स्पष्ट बड़े मोनो टाइप में छपी हैं। प्रत्येक पुस्तक सजिल्द है और उसमें अनेक चित्र हैं।

प्रत्येक का मूल्य : २.००

टेलीफोन की कहानी
एटम की कहानी
वायुयान की कहानी
रसायन की कहानी
समुद्र की कहानी
उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों की कहानी
ज्वालामुखी और भूचाल की कहानी
मौसम की कहानी
सितारों की कहानी
कोलम्बस की कहानी
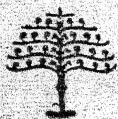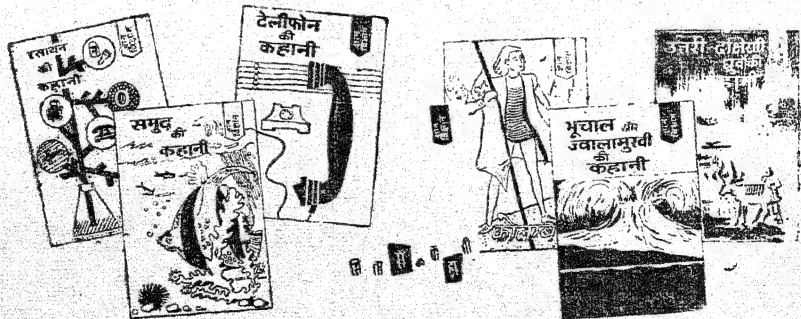
राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली-६ द्वारा प्रकाशित

संघ की विगत कार्य समिति के

पटना बैठक में स्वीकृत प्रस्ताव

अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ की कार्य-समिति की एक बैठक राजकमल प्रकाशन के पटना-स्थित कार्यालय में १६ अप्रैल, १९६१ को १२ बजकर ३० मिनट पर आरंभ हुई। निम्नलिखित उपस्थित थे :

श्री रामलाल पुरी, आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली
,, कृष्णचन्द्र बेरी, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी
,, देव नारायण द्विवेदी, ज्ञान मण्डल, वाराणसी
,, जयनाथ मिश्र, अजन्ता प्रेस, पटना
,, लक्ष्मीचन्द्र जैन, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी
,, कन्हैयालाल मलिक, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली
,, मदनमोहन पांडेय, ज्ञानपीठ प्रा० लि०, पटना
,, गोकुलदास धूत, नवयुग साहित्य सदन, इन्दौर
,, रामसकलसिंह, अशोक पुस्तक मन्दिर, कलकत्ता
,, श्यामलाल, एस० चन्द एण्ड कम्पनी, दिल्ली
,, कृष्ण गोपाल केडिया, हिन्दी पुस्तक एजेंसी, कलकत्ता
,, बलदेवदास अग्रवाल, कलकत्ता
,, शंकरदयालसिंह, पटना
,, पुरुषोत्तमदास मोदी, गोरखपुर

अनेक अन्य प्रकाशक विशेष निमंत्रण से उपस्थित थे।

पिछली कार्यवाही पढ़ी गई और सम्पुष्ट हुई।

नई दिल्ली की चार्टर्ड एकाउण्टेंट्स की संस्था एम० पाल एण्ड कम्पनी द्वारा १९६० के हिसाब-किताब की रिपोर्ट को प्रस्तुत किया गया और उसे इस संशोधन के साथ स्वीकार कर लिया गया कि आय की जो विभिन्न मदें बैलेंस शीट में दिखलायी गई हैं, उन्हें अब संचित कोष नामके नये खातेमें जमा-खर्च कर लिया जाय। एम० पाल एण्ड कम्पनी की हिसाब के निरीक्षण की रु० ५०-०० की फीस भी स्वीकृत की गई।

१ जनवरी '६१ से ३१ मार्च '६१ तक के हिसाब का ब्यौरा भी प्रस्तुत किया गया और उसे स्वीकार किया गया।

प्रकाशकों और पुस्तक-विक्रेताओं से संघ के खुले अधिवेशन के लिए प्राप्त प्रस्तावों पर विचार किया गया। निश्चय किया गया कि विभिन्न निम्न व्यक्तियों से प्राप्त प्रस्तावों को फाइल किया जाए—श्री सूर्यबली सिंह (वाराणसी) सदस्य नहीं हैं; श्री चम्पालाल रांका (जयपुर) कार्य-समिति ने प्रस्ताव को अनुचित ठहराया और इसे फाइल करने का निश्चय किया; श्री पुरुषोत्तमदास मोदी (गोरखपुर) विधान में परिवर्तन समय पर कार्यालय को नहीं भेजे गए।

निश्चय हुआ कि निम्नलिखित सदस्यों से प्राप्त प्रस्तावों को संघ के खुले अधिवेशन के सम्मुख विचारार्थ प्रस्तुत किया जाए—श्री श्यामलाल (दिल्ली) पुस्तकों के निर्यात से सम्बद्ध प्रस्ताव; श्री गोकुलदास धूत (इन्दौर) टेंडर प्रथा के विरुद्ध; श्री रामसकलसिंह (कलकत्ता) वार्षिक सदस्यता का शुल्क कम करने के बारे में; श्री पुरुषोत्तमदास मोदी (गोरखपुर) संघ के मुखपत्र के सम्बन्ध में; श्री राजकिशोर अग्रवाल (आगरा) खरीद और पाठ्यक्रम के लिए विचारार्थ भेजी जाने वाली पुस्तकों की अधिक प्रतियों की माँग के विरुद्ध।

कार्य समिति ने अपने गत अधिवेशन में संघ द्वारा प्रचारित नियमों के पालन की ढिलाई से सम्बद्ध जो प्रस्ताव स्वीकृत किया था, उस पर विस्तार से विचार हुआ और फिर से निश्चय हुआ कि उसे अधिवेशन के सामने विचार और निर्णय के लिए रखा जाए।

संघ के अध्यक्ष श्री रामलाल पुरी के प्रति गत वर्ष कार्य-समिति की बैठकों की सफल अध्यक्षता के लिए धन्यवाद के प्रस्ताव के साथ बैठक समाप्त हुई।

संघ के छठे अधिवेशन के स्वागताध्यक्ष

श्री मदन मोहन पांडेय का भाषण

यह भाषण १६ अप्रैल '६१ को पटना में पढ़ा गया।

हमारे मनोनीत आदरणीय सभापति, सम्मानित अतिथिगण तथा सहकर्मी भाइयो !

आज राष्ट्रभाषा हिन्दी की पुस्तकों से प्रेम रखने वाले संभ्रांत सज्जनों तथा इन्हें प्रकाश में लाकर कोटि-कोटि जन-समूह के हाथों में पहुँचाने की टेक रखनेवाले प्रतिनिधि-प्रकाशकों का अपने राज्य की राजधानी में स्वागत-सत्कार करते हुए हमें अपार आनन्द अनुभव हो रहा है। सच पूछिए, तो राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रकाशन-उद्योग की नींव इसी नगर में सन् १८८२-८३ में प्रतिष्ठापित खड्गविलास प्रेस के द्वारा डाली गई थी, जिसे स्व० भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, स्व० राधाकृष्ण दास, स्व० अयोध्याप्रसाद सिंह उपाध्याय आदि आधुनिक हिन्दी के साधकों की कृतियों को प्रकाश में लाने का गौरव प्राप्त है। तभी तो, आज इस उद्योग के देशव्यापी विकसित स्वरूप की समस्याओं को सुलझाने के लिए जिन लोगों ने यहाँ पधारने का कष्ट किया है, उनके स्वागत-सत्कार का सौभाग्य प्राप्त कर हम अपने को धन्य समझ रहे हैं।

जब लिपि और वर्णमाला का आविष्कार हुआ, तब चेतना-चर्चित मस्तिष्क के अधिकारी मानव के प्रबुद्ध हृदय में अपने मनोगत भावों तथा विचारों को लिपिबद्ध करा, उन्हें स्थायी रूप से प्रकाश में लाने की प्रवृत्ति या प्रेरणा प्रस्फुटित हुई, और तभी से मानव ने आध्यात्म, साहित्य, कला, विज्ञान, समाज-नीति आदि ज्ञान-विज्ञान-सम्बन्धी अपनी मौलिक धारणाओं तथा अनुभूत अभिज्ञताओं से समाज को लाभान्वित कराने के साथ-साथ उन्हें मानव-संस्कृति के चिरंतन प्रतीक-रूप में अपनी भावी संतति के लिए भी सुरक्षित रखने की सत्प्रेरणा से (या कुछ दूर तक स्वान्तःसुखाय की आकांक्षा से भी) ज्ञान और विज्ञान या विद्या और अविद्या के प्रकाशन की परिपाटी चलाई।

हाँ, मानव-संस्कृति की शैशवकालीन सभ्यता के प्रातःकालीन प्रांगण में, लिपि और वर्णमाला के आविष्कार के साथ-साथ जब मानव-मन में धार्मिक, नैतिक तथा सामाजिक विधि-विधान-सम्बन्धी अपने भावों या विचारों को स्थायित्व प्रदान करने की सत्प्रेरणा सजग हुई, तब, कहते हैं, कि सर्वप्रथम बावेरु सभ्यता के पलने पर, उन्हें मिट्टी की गीली पटियों पर अक्षरों में अंकित किया जाता था और उन पटियों को आग में पकाकर, ग्रन्थ के खुले पन्नों के रूप में सुरक्षित रखा जाता था। हमारे देश में भी, कागज़ के आविष्कार से पहले संत, कवि, नीति-उपदेशक तथा समर्थ, सक्षम और प्रतिभा-सम्पन्न व्यक्ति अपने-अपने अभिज्ञान से समाज को लाभान्वित करने के साथ-साथ अपनी मान्यताओं और धारणाओं को सुप्रतिष्ठित करने की सद्भावना से उन्हें सुघड़ शिलाओं, भोजपत्रों तथा तालपत्रों पर संकलित करते-कराते थे। तालपत्र और भोजपत्र पर स्याही से लिखने की सूझ ने ही हमारे आदि-ग्रन्थ वेदत्रयी तथा स्मृतियों के श्रुति-स्मृति-रूप को ग्रन्थ का स्वरूप प्रदान किया। और, कागज़ की उपलब्धि हो जाने पर ग्रन्थकार या तो स्वयं अपने ग्रन्थ लिपिबद्ध करने लगे, या सुन्दर तथा सुस्पष्ट लिखने वालों से उन्हें लिपिबद्ध कराने लगे। अतएव, मुद्रण-कला-सम्बन्धी यन्त्रों के प्रचलन के पूर्व तक सुघड़ लिपिकारों का वर्ग ग्रन्थकारों के ग्रन्थों को अथ से इति तक कलापूर्ण ढंग से लिपिबद्ध करते थे और अपने श्रम का पारिश्रमिक प्राप्त कर जीवन-निर्वाह करते थे। कहते हैं कि गोस्वामी तुलसीदास की रचनाओं के प्रकाश-प्रचार का बहुत-कुछ श्रेय उन विधवा ब्राह्मणियों को है, जो अपनी जीविका की मर्यादा का निर्वाह करने के लिए उन कृतियों को लिख-लिखकर उनके लिए पारिश्रमिक पाती थीं। स्पष्ट है कि उस समय, सही माने में, प्रकाशक का काम ऐसे

लेखक ही करते थे, जो लेखन-कला में कुशल होते थे और अपनी लेखनी के सहारे ग्रन्थकारों के भाव-समूह को लिपिबद्ध कर ग्रन्थ का रूप प्रदान करते थे और उनके व्यापक प्रचार में सहायक होते थे। इसके अतिरिक्त समाज में बन्दी, सूत, कथावाचक, पौराणिक आदि भी होते थे, जो ग्रन्थकारों की कृतियों को प्रकाश में लाने में सहायक थे। बन्दी, भाट आदि राज-दरबारों या ऐसे स्थानों में कवियों की रचनाएँ सुनाया करते थे, जहाँ उन्हें कुछ मिल जाने की आशा रहती थी। सूत, कथावाचक, पौराणिक आदि भी समाज में 'व्यासवादी' जमा कर कथा बाँचते थे, पुराण सुनाते थे, रामायण की व्याख्या करते थे और निस्तार के दिन समाज से यथोचित दान भी पाते थे। लेकिन, इस तरह के प्रचार या प्रकाशन ने, सही मानी में, उद्योग या व्यवसाय का रूप धारण नहीं किया था।

लेकिन, मुद्रण-सामग्री तथा मुद्रण-यन्त्र की सहज उपलब्धियों के साथ-साथ लोक-शिक्षा के व्यापक प्रचार और विस्तार ने आज पुस्तकों के प्रकाशन को एक उद्योग का रूप दे दिया है और जो लोग इस उद्योग की ओर अग्रसर हुए, वे ही प्रकाशक कहलाए। इस प्रकार, सर्वप्रथम ग्रन्थकारों की अपनी सूझ-बूझ और युग की पुकार ने, पश्चात् लेखक-प्रकाशक की स्वाभाविक साँठ-गाँठ ने ही इस उद्योग को समाज में सुप्रतिष्ठित किया। संक्षेप में, कागज तथा मुद्रण-यन्त्रों की सहज उपलब्धियों तथा व्यापक प्रसार की पृष्ठभूमि पर ही पुस्तक-प्रकाशन के वास्तविक व्यावसायिक स्वरूप की प्रतिष्ठा सम्भव हुई।

समाज में पुस्तकों के प्रचार से दो प्रमुख प्रयोजन प्रतिपादित होते हैं—जनसाधारण में ज्ञान तथा शिक्षा का प्रसार तथा समाज के भावी नागरिकों में शिक्षा का प्रसार—यानी, प्रौढ़ या वयस्क शिक्षा तथा बाल-शिक्षा। अंग्रेजी शासन-काल के प्रारम्भ में ही बालकों की शिक्षा की व्यवस्था सरकार ने, चाहे जो भी उद्देश्य रहा हो, अपने हाथ में ले ली, लेकिन वयस्क-शिक्षा या समाज-शिक्षा को राम-भरोसे छोड़ दिया। इस क्षेत्र को विकसित करने का भार साहित्य-स्रष्टाओं तथा समाज-सेवियों पर ही रहने दिया। लेकिन, चाहे लोक-सामान्य-शिक्षा का क्षेत्र हो या शिक्षा की आधार-शिला पर भावी नागरिकों के निर्माण का क्षेत्र हो, चाहे सार्वजनिक पुस्तकालय हो या विद्यालय—ग्रन्थ या पुस्तकें शिक्षा-साधनों के मेरुदण्ड के रूप में तो उसी समय प्रतिष्ठित हो चुकी थीं, जब कि श्रुतियों तथा स्मृतियों ने लिपिबद्ध होकर ग्रन्थ का रूप धारण किया था। और, जब अच्छे कागज पर, पर्याप्त संख्या में मुद्रित-प्रकाशित होने का सुयोग इन ग्रन्थों को मिलने लगा, तब अपनी सहज उपलब्धि के बल पर इन्होंने शिक्षा को मानव-जीवन के अनिवार्य अंग के रूप में मान्यता देने के लिए समाज को बाध्य कर दिया। फलस्वरूप, सामान्य स्तर पर भी ज्ञान-प्राप्ति की पिपासा जाग्रत हुई, पुस्तकों की माँग बढ़ी और पुस्तक-प्रकाशन ने क्रम-क्रम से व्यावसायिक रूप ग्रहण कर लिया।

और जब लोक-शिक्षा का क्षेत्र उपर्युक्त दो भागों में विभाजित हो गया, तब स्वभावतः पुस्तकों के भी औद्योगिक दृष्टि से दो वर्ग हो गए, दो विभिन्न बाज़ार देखे जाने लगे। समाज-शिक्षा क्षेत्र में जो पुस्तकें चलाई जाने लगीं, वे सामान्य पुस्तकें, और विद्यालयों में व्यवस्थित रूप से शिक्षा पाने वाले छात्रों के लिए जो पुस्तकें निर्धारित की जाने लगीं, वे पाठ्य-पुस्तकें कहलाने लगीं। यों तो सामान्य-वर्गीय पुस्तकों के रूप में 'रामायण','महाभारत','सुखसागर' आदि ग्रन्थों के साथ-साथ महात्माओं के प्रवचनों, साधु-सन्तों की वाणियों, प्राचीन-अर्वाचीन कवियों की कविताओं तथा लोकगीतों और 'सिंहासनबत्तीसी', 'बैतालपचीसी', 'किस्सा तोता-मैना' आदि कहानियों के प्रकाशनों ने ही सर्वप्रथम हिन्दी-पुस्तकों के प्रकाशन-उद्योग को स्वरूप प्रदान किया; फिर भी इसे सर्वतोभावेन पल्लवित-पुष्पित कर फलदायक बनाने का श्रेय पाठ्य-पुस्तकों को ही मिलेगा; क्योंकि विद्यालयों में विद्यार्थियों की संख्यावृद्धि के साथ-साथ इनकी माँग और खपत सामान्य ग्रन्थों से कहीं अधिक होने लगी।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अन्य ज्ञान-पिपासु प्रगतिशील देशों की नाईं हमारे देश में भी हिन्दी तथा अन्य प्रचलित भाषाओं में पुस्तकें प्रकाशित कर-उनका व्यवसाय चलाने वालों का एक नया आर्थिक वर्ग प्रकाशक के नाम से प्रतिष्ठित हो गया। लेकिन, हिन्दी-भाषा के ग्रन्थों के प्रकाशन का श्रीगणेश, सच पूछिए तो, व्यावसायिक

बुद्धि रखने वालों द्वारा व्यावसायिक दृष्टिकोण से नहीं, बल्कि राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी-भाषा तथा साहित्य के व्यापक विकास तथा प्रसार के पुनीत उद्देश्य की पृष्ठभूमि पर कुछ हिन्दी-हितैषी विद्वान् लेखकों द्वारा ही हुआ। तभी तो, किसी व्यक्ति-विशेष द्वारा नहीं, बल्कि काशी नागरी-प्रचारिणी सभा-जैसी साहित्यिक संस्थाओं द्वारा धनी-मानी तथा उदार-चेताओं के दान के भरोसे ही प्रकाशक-संस्थान चलाये जाने लगे। और, जब उस ज़माने की अंग्रेज़ी सरकार ने उत्तर प्रदेश तथा बिहार में हिन्दी के माध्यम से बालकों को प्राथमिक शिक्षा देने का निर्णय किया, विद्यालयों के लिए पाठ्य-पुस्तकों को लिखने वाले शिक्षा-विभागीय हिन्दी-प्रेमी पदाधिकारियों के प्रोत्साहन और सहयोग के सहारे खड्गविलास प्रेस आदि प्रकाशन-संस्थानों की प्रतिष्ठा हुई। लेकिन, उनका भी प्रधान लक्ष्य साहित्य-सेवा तथा विद्या का प्रचार ही रहा। हाँ, ऐसे संस्थानों का गौण लक्ष्य व्यवसाय ज़रूर रहा। कालान्तर में पाठ्य-पुस्तकों के बाज़ार का विस्तार होते देखकर व्यावसायिक मनोवृत्ति के लोगों का ध्यान भी इस ओर आकृष्ट हुआ। और, सच पूछिए तो, इन्हीं पाठ्य-पुस्तकों ने हिन्दी-पुस्तकों के प्रकाशन को सही मानी में व्यवसाय के रूप में प्रतिष्ठित किया; यद्यपि गोस्वामी तुलसीदास के 'श्रीरामचरितमानस' तथा लल्लूलालजी के 'प्रेम-सागर के साथ-साथ 'सिंहासन-बत्तीसी', 'बैताल-पचीसी', 'हितोपदेश की कहानियाँ', 'किस्सा तोता-मैना' आदि-जैसी दिलचस्प पुस्तकोंको भी इसके प्रतिष्ठापन का बहुत-कुछ श्रेय दिया जा सकता है।

यहाँ पर हमें यह कहते हुए गौरव तथा प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है कि हिन्दी-जगत् में प्रकाशन-उद्योग की यथार्थ नींव हमारे ही बिहार राज्य की राजधानी इसी पटना की गौरवमयी भूमि पर स्वर्गीय कुमार रामदीनसिंह द्वारा प्रतिष्ठापित खड्गविलास प्रेस ही द्वारा पड़ी थी। सम्भवतः सन् १८८२-८३ ई० में बाँकीपुर में खड्गविलास प्रेस की प्रतिष्ठा, पाठ्य-पुस्तकों के प्रकाशन-व्यवसाय को चलाने के उद्देश्य से ही, की गई; मगर वर्षों तक इस नींव के पत्थर-रूप प्रकाशक-प्रतिष्ठान ने जहाँ एक ओर पाठ्य-पुस्तकों के व्यवसाय से अपनी आर्थिक भीत्ति को सुदृढ़ करने में सफलता पाई, वहीं दूसरी ओर उसके लाभांश से उस काल के स्व० भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र, स्व० पं० अयोध्याप्रसादसिंह उपाध्याय, स्व० प० अम्बिकादत्त व्यास-जैसे प्रायः सभी लब्ध-प्रतिष्ठ साहित्य-स्रष्टाओं की कुल रचनाओं को प्रकाश में लाकर हिन्दी भाषा और साहित्य की प्रशंसनीय सेवा भी की, और बदले में पर्याप्त यश भी अर्जित किया। हाँ, साहित्यिक तथा सामान्य ज्ञान-विज्ञान की पुस्तकों का बाज़ार उस समय तक इतना संकुचित तथा सीमित था कि मात्र ऐसी पुस्तकों के व्यवसाय के भरोसे कोई प्रकाशन-प्रतिष्ठान टिक नहीं सकता था। आपको यह जानकर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ेगा कि भारतेन्दु की समग्र कृतियों के रूप में 'हरिश्चन्द्र-कला' जैसे ग्रन्थ के कुल बारह ग्राहक ही हो सके थे उस समय। भला, उस भारी-भरकम ग्रन्थ के प्रकाशन से क्या लाभ मिला होगा प्रकाशक को ? हिन्दी का प्रकाशन-उद्योग खड्गविलास प्रेस की साधना को कभी भूल नहीं सकता, हमें सदा उसके आभार को मानने को प्रस्तुत रहना चाहिए।

स्पष्ट है कि हिन्दी-संसार में पाठ्य-पुस्तकों के प्रकाशन की पृष्ठभूमि पर ही अधिकांशतः प्रकाशन-उद्योगों को पनपने का सुअवसर मिला। वस्तुतः देश के स्वतन्त्र होने के पूर्व तक कोई भी प्रकाशन-संस्थान मात्र साहित्यिक तथा सामान्य ज्ञान-विज्ञान की पुस्तकों के प्रकाशन के भरोसे अपने पैरों पर खड़ा होने का साहस भी कम ही करता था। लेकिन, स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् इस उद्योग ने भी करवट बदली; इस दिशा में भी प्रगतिशीलता के लक्षण दृष्टिगोचर होने लगे। फलतः पाठ्य-पुस्तकों के प्रकाशकों की प्रेरणा तो सजग हुई ही; साथ ही, नये-नये व्यावसायिक बुद्धि रखने वाले लोग भी बड़े उत्साह से इस मैदान में उतरे। जब अपना राज्य हो गया, तब अपनी सरकार से राष्ट्रभाषा की पुस्तकों के प्रकाशन-व्यवसाय को प्रोत्साहन मिलेगा ही—यह आशा भी इस प्रेरणा को जगाने में सहायक सिद्ध हुई। इधर हमारी केन्द्रीय सरकार तथा राज्य-सरकारों ने भी लोक-शिक्षा के क्षेत्र का विस्तार कर स्वस्थ तथा संयत वातावरण की सृष्टि करने की मंगल-कामना से शिक्षा-संस्थाओं तथा सार्वजनिक पुस्तकालयों को सामान्य ज्ञान की साहित्य पुस्तकें प्रदान करने के निमित्त प्रति वर्ष प्रत्येक राज्य के लिए एक मोटी रकम

का अनुदान देते रहने के निश्चय ने इस आशा को फलवती होने का भी सुअवसर प्रदान किया। फलतः आज हम हिंदी प्रकाशन-उद्योग को इस रूप में विकसित होते देख रहे हैं। और, इसी विकास-क्रम का यह फल है कि हिन्दी-प्रकाशकों का यह अखिल भारतीय संगठन अपनी कठिनाइयों तथा समस्याओं का हल निकालने की स्थिति में आज अपने को सर्वथा समर्थ पा रहा है।

लेकिन, हम देखते हैं कि, चूँकि अब हिन्दी-पुस्तकों के प्रकाशन-उद्योग में लगा प्रकाशक वर्ग भी देश की आर्थिक व्यवस्था से थोड़ा-बहुत, मगर व्यापक रूप से सम्बद्ध होता जा रहा है, इसलिए इसमें भी व्यावसायिक क्षेत्रों की पेचीदगी, दाव-पेच, छल-प्रपंच आदि अवगुण भी धड़ल्ले से समाने लगे हैं। अब तो ज्ञान के प्रचार के पवित्र उद्देश्य की आधार-शिला पर प्रतिष्ठित यह व्यवसाय भी लोकहित के उद्देश्यों को बहुत पीछे ढकेलकर स्वार्थ के बिरवों से लहलहाते एक ऐसे सब्ज़ बाग का रूप ले रहा है, जहाँ दाँव-पेंच खेलने वाले नित्य नये-नये खिलाड़ी मैदान में उतरने लगे हैं, यहाँ तक कि सरकार भी इस सब्ज़ बाग के व्यामोह में फँसने का लोभ संवरण नहीं कर सकी। दिल्ली का लड्डू हो गया है यह व्यवसाय—जिसने खाया, वह भी पछताया और जिसने नहीं खाया, वह भी पछता रहा है और इसका स्वाद चखने के अवसर की ताक में लगा रहता है। हमारे बिहार राज्य में तो यह स्पष्ट देखने को मिल रहा है कि पाठ्य-पुस्तकों के अधिकांशतः व्यवसाय का राज्यकरण हो जाने से यहाँ के प्रकाशन-क्षेत्र में अनैतिकता तथा अराजकता को भयंकर रूप से प्रोत्साहन मिल रहा है। व्यावसायिक बुद्धि के अभाव में, राज्यकृत पाठ्य-पुस्तकों के व्यवसाय में मुश्किल से पच्चीस प्रतिशत मुनाफा भी सरकार को नहीं मिल रहा है, जब कि पचहत्तर प्रतिशत मुनाफा मार रहा है जुआ-चोरी को प्रश्रय देने वाले अज्ञातनामा प्रकाशकों का वह वर्ग, जो सरकारी पाठ्य-पुस्तकों को ही चुपके-चोरी प्रकाशित कर संगठित रूप से चोर-बाज़ारी को आबाद करने में पिल पड़ा है। और, जब प्रकाशक पाठ्य-पुस्तकों के व्यवसाय का द्वार अपने लिए बन्द पाते हैं, तो सरकारी आदेश की भी अवहेलना कर पाठ्य-पुस्तकों के ही स्तर पर छपने वाली सहायक पाठ्य-पुस्तकों के—जिन्हें हैंडबुक्स कहा जाता है—व्यवसाय को अपनाते हैं, बुनियादी विद्यालयों में चलाने के लिए बुनियादी पाठ्य-पुस्तकों का प्रकाशन करने लगते हैं और शिक्षा-विभाग के राज्य-व्यापी निरीक्षक-वर्ग से लेकर शिक्षक-संघों को भी इस व्यवसाय के व्यामोह में फँसाकर तथा चार आने की लागत की पुस्तकों की कीमत रुपये-डेढ़ रुपये तक रखकर एक ऐसा बीभत्स व्यवसाय चलाने को उतारू हो जाते हैं, जिसमें शोषण किया जाता है छात्रों के अभिभावकों का, पुस्तकों का बेशुमार बोझ लाद दिया जाता है सुकुमार-मति छात्रों पर और भ्रष्टाचार के गर्त्त में गिरा दिया जाता है शिक्षा-विभाग के निरीक्षकों तथा शिक्षक-संघों को। और, शिक्षा-विभाग के सत्ताधारी इस अनीति की ओर से, इस प्रकार के व्यापक भ्रष्टाचार की ओर से, देख-सुनकर भी आँखें मूंद लेते हैं।

इधर सामान्य साहित्यिक पुस्तकों के व्यवसाय के क्षेत्र में भी कम अराजकता और अनैतिकता नहीं देखी जाती। और, इसका भी कारण हमारी सरकार के ही लोग हैं। राज्य-भर के सार्वजनिक पुस्तकालयों, विकास-प्रखण्डों तथा विद्यालयों के पुस्तकालयों में प्रतिवर्ष सरकार की ओर से ही पुस्तकें खरीदकर प्रदान की जाती हैं। फलस्वरूप सामान्य पुस्तकों का भी सबसे बड़ा खरीदार सरकार ही हो जाती है। सार्वजनिक पुस्तकालयों में तो सरकार प्रकाशकों तथा पुस्तक-विक्रेताओं के अधिकरणों से, जिला-स्तर पर पुस्तकों का वितरण कर देती है, मगर प्राथमिक तथा निम्न माध्यमिक विद्यालयों के लिए जो पुस्तकें अनुदान की रकम से ली जाती हैं, जिला-स्तर पर ही स्थानीय अधिकारियों के माध्यम से उन्हें खरीदा जाता है। फलतः प्रकाशकों को इन अधिकारियों को प्रभावित करने के लिए बाध्य हो जाना पड़ता है और सरकार को बीस प्रतिशत मुनाफा देने के साथ-साथ इन्हें तीस-पैंतीस प्रतिशत प्रचार पैरवी के पनाले में प्रवाहित कर देना पड़ता है। स्वाभाविक है कि ग्राहक को रुपये-आठ आने की पुस्तकें दो-ढाई रुपये तक में मोल लेने को बाध्य होना पड़ता है। इतना ही नहीं, शिक्षा-विभाग के स्थानीय पदाधिकारियों पर प्रभाव जमाने की कला जानने वाले शिक्षा-सचिवालय या स्थानीय कार्यालयों के मनचले कुशल कर्मचारी भी भाई-भतीजे के नाम

से नाम-लेवा प्रकाशन-संस्थान की स्थापना कर कुछ थर्ड क्लास की पुस्तकें जैसे-तैसे प्रकाशित कर लेते हैं, चौगुनी-पँचगुनी तक उनकी कीमत बिठा देते हैं और इस प्रकार सामान्य साहित्यिक पुस्तकों के व्यवसाय की पवित्रता को नष्ट करने में पिल पड़ते हैं। निश्चय ही ऐसे गैर-जबावदेह प्रकाशकों की पहचान यही है कि उनकी पुस्तकें कहीं खुले बाजार में नहीं मिलतीं, मात्र सरकारी माँग की पूर्ति के निमित्त ही होती हैं।

सामान्य साहित्यिक पुस्तकों का एक दूसरा बाज़ार सामुदायिक विकास-योजनाओं के अन्तर्गत संचालित होने वाला विकास-प्रखण्ड भी है, जहाँ प्रतिवर्ष हज़ारों-हज़ार की संख्या में ग्रामोपयोगी पुस्तकें सरकार द्वारा खरीदी जाती हैं। लेकिन, विकास-प्रखण्डों ने तो इस व्यापार में शिक्षा-विभाग को भी मात कर रखा है। ये विकास-प्रखण्ड वाले तो ऐसी-ऐसी रद्दी की टोकरी में फेंकने वाली पुस्तकों का ही चुनाव करते हैं, जिन पर उन्हें साठ-सत्तर प्रतिशत मुनाफा मिलने की उम्मीद रहती है। निश्चय ही, सरकार को दस प्रतिशत से ज्यादा नहीं मिल पाता। इनकी न कोई योजना रहती है, न कोई सिलसिला। अतएव, सुव्यवस्थित रूप से, सही मानी में प्रकाशन-उद्योग चलाने-वालों की इस धींगा-मुश्ती में कम ही दाल गल पाती है। वहाँ भी नये-नये लगुए-भगुए प्रकाशकों की तूती बोलती है।

इस प्रकार ज्ञान का प्रचार करने जैसे महान् उत्तर-दायित्व को लेकर प्रकाशन-उद्योग चलाने वाले प्रकाशकों के मोटे तौर पर तीन वर्ग हमें देखने को मिलते हैं। एक वर्ग में ऐसे प्रकाशक आते हैं, जो दिल से तो इस व्यवसाय की पवित्रता को नष्ट करना नहीं चाहते; लेकिन अन्य दो कर्त्तव्य-भ्रष्ट वर्गों के साथ अस्वस्थ प्रतियोगिता में उतरने के लिए बाध्य हो जाते हैं। दूसरे वर्ग में वे प्रकाशक आते हैं, जो पाठ्य-पुस्तकों का द्वार बन्द पाकर हैंडबुक्स तथा नोटों के प्रकाशन-व्यवसाय की दलदल में फँस जाते हैं। और, तीसरा वर्ग ऐसे यथाकथित प्रकाशकों का है, जो शिक्षा-विभाग से सम्बद्ध हैं और भाई-भतीजे के नाम पर प्रकाशन-प्रतिष्ठानों की स्थापना कर अपने प्रभाव, धाक, पैरवी तथा राजनीतिक दाव-पेच के सहारे भ्रष्टाचार को प्रश्रय देने में ही अपनी सफलता आँकते हैं। और, ये तीनों वर्ग एक सामान्य तथा परिष्कृत स्तर पर तब तक नहीं मिल सकते जब तक कि अपने महान् उत्तरदायित्व को समझकर तदनुरूप कर्त्तव्य-पथ को प्रशस्त नहीं करते। हम मानते हैं कि जब तक राज्यों की सरकारें अपने-अपने राज्य में पुस्तक-प्रकाशन के व्यवसाय के महत्त्व को समझकर राज्य द्वारा पुस्तकों की खरीद में दिन-दहाड़े चलने वाली व्यापक धाँधलियों को नहीं रोकेंगी; जब तक वे सरकारी अधिकारी, जिन्हें जनता तथा छात्रों के बीच सही ज्ञान का प्रसार करने के लिए पुस्तकों को खरीदने तथा स्वीकृत करने का भार सौंपा गया है, अपने उत्तरदायित्व का अनुभव नहीं करेंगे; जब तक सरकारी कर्मचारियों का गुट इस व्यवसाय में पड़ने का लोभ संवरण नहीं करेगा; जब तक पुस्तकों की सरकारी खरीद के सिलसिले में सरकार एक सुनियोजित योजना बनाकर हिन्दी प्रकाशन-व्यवसाय को विशेष रूप से प्रोत्साहन नहीं देगी; तब तक हिन्दी-पुस्तकों के प्रकाशन-उद्योग का भविष्य हमें तो उज्ज्वल नहीं दीखता। इसके साथ-साथ हम यह भी मानते हैं कि जब तक स्वयं

प्रकाशक भी तिकड़म, जुगाड़, पैरवी आदि का भरोसा छोड़कर, एक का चार बनाने की प्रवृत्ति का त्याग कर, युग की पुकार पर स्वस्थ तथा संयत प्रतियोगिता के सहारे प्रगति की ओर अग्रसर होने की हिम्मत नहीं दिखलाएँगे, तब तक सरकार से भी प्रोत्साहन पाने के अपने अधिकार का वे उपभोग नहीं कर सकते।

यही चन्द समस्याएँ हैं, जिन्हें सुलझाने से ही प्रकाशन-व्यवसाय प्रगति के पथ पर अग्रसर हो सकता है। और, इन्हें सुलझाने के लिए इस क्षेत्र में भी हमें निम्नलिखित पंचशील की प्रतिष्ठा करनी पड़ेगी —

१. सह-अस्तित्व : सर्वप्रथम हमें सह-अस्तित्व के सिद्धान्त को अपनाना होगा। हमारे संगठन के अन्तर्गत जो भी छोटे-बड़े प्रकाशक प्रविष्ट हो चुके हैं, या होना चाहते हैं, उन सबको हमें साथ लेकर चलना पड़ेगा। स्वस्थ प्रतियोगिता के सहारे एक को पीछे ढकेलकर दूसरे आगे बढ़ें—इस मनोवृत्ति से हमारा कदापि कल्याण नहीं है। हम भी जियें और हमारे साथी भी जियें—इसी प्रवृत्ति को प्रश्रय देना होगा।

२. सहयोग : यह तो मानी हुई बात है कि कोई प्रकाशक अकेले इस उद्योग को न तो प्रतिष्ठित कर सकता है, न इसका समुचित विकास ही कर सकता है। सर्वप्रथम लेखक पुस्तकें लिखकर प्रस्तुत करते हैं; प्रूफरीडर उनके मुद्रण-काल में उनकी अशुद्धियों का संशोधन-परिमार्जन करते हैं; पुस्तकें छप जाने पर एजेंट उनके लिए बाजार को मुहैया करते हैं और पुस्तक-विक्रेता उन्हें बेचते हैं। स्पष्ट है कि इन पाँचों के पारस्परिक विश्वास के ही सहारे स्वस्थ तथा संयत प्रकाशन-व्यवसाय अपने उद्देश्य की पूर्ति कर सकता है, अन्यथा धींगा-मुश्ती चलती ही रहेगी।

३. संगठन : और, संगठन तो किसी भी उद्योग के स्वस्थ विकास का मेरुदण्ड ही माना जाता है। प्रसन्नता की बात है कि इस दिशा में हम बहुत आगे बढ़ चुके हैं। गत सात वर्षों में ही हमने देशव्यापी संगठन कर लिया है। अब आवश्यकता इस बात की है कि अपने संगठन के सहारे हम प्रकाशन-उद्योग के विकास में गति प्रदान करते रहें। हमारे सामने जितनी समस्याएँ उठ खड़ी हों, उन्हें अपने संगठन के ही द्वारा सुलझाने का प्रयास करें। अकेला चना भाड़ को फोड़ नहीं सकता, यह कहावत सभी जानते हैं।

४. सहकारिता : आधुनिक युग में सहकारिता के सहारे चलाने से ही कोई व्यवसाय फल-फूल सकता है, यहाँ तक कि सरकार कृषि-कार्य को भी सहकारिता द्वारा सम्पन्न कराने पर बल देने लगी है। प्रकाशन-उद्योग के माल को खपाने में सहकारिता का सहारा लेने से माल की खपत में अस्वस्थ प्रतियोगिता का भी दरवाज़ा बन्द हो जाता है। यदि हमारा संगठन प्रति-वर्ष हिन्दी में प्रकाशित सौ-दो सौ श्रेष्ठ पुस्तकों को लेकर उन्हें सहकारिता के सहारे चलाने का प्रयास करे, तो निश्चय ही प्रभावोत्पादक फल की प्राप्ति होगी। प्रयोगात्मक रूप से इस कार्य को प्रारम्भ किया जा सकता है।

५. सर्वहित-साधना : पुस्तकों द्वारा साहित्य, कला तथा ज्ञान-विज्ञान का जन-समूह में प्रसार होता है। अतएव, पुस्तक-प्रकाशन का सर्वप्रधान लक्ष्य है सर्वहित-साधना। लेकिन यदि हम अपने स्वार्थ-साधन के कुचक्र में पड़कर अश्लील या भ्रष्ट साहित्य के प्रकाशन की ओर झुकते हैं, तो हम अपने कर्त्तव्य से च्युत हो जाते हैं। हमें इस लक्ष्य की ओर जाने के लिए सतत् प्रयत्नशील रहना चाहिए; अच्छे कागज़ पर साफ-सुथरी छपाई के अन्तर्गत शुद्ध तथा सुबोध भाषा में सुरुचि-वर्द्धक तथा समुपयुक्त पुस्तकें प्रकाशित करने की प्रवृत्ति को ही सदैव प्रश्रय देना चाहिए।

इन्हीं कतिपय सुझावों के साथ अपने सम्मानित अतिथियों, संगठन की मंगल-कामना लेकर दूर-दूर से आये हुए प्रतिनिधियों तथा संगठन के शुभेच्छुओं का हम हृदय से स्वागत करते हैं।

●

अखिल भारतीय हिन्दी-प्रकाशक संघ के छठे (पटना) अधिवेशन के कुछ चित्र

←श्री कृष्णचन्द्र बेरी अध्यक्ष पद से अपना भाषण देते हुए।
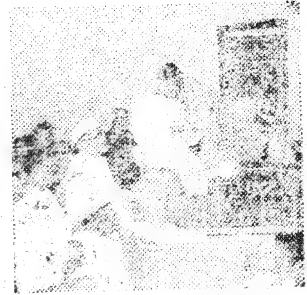
←स्वागताध्यक्ष श्री मदन-मोहन पांडेय अपना भाषण पढ़ते हुए।
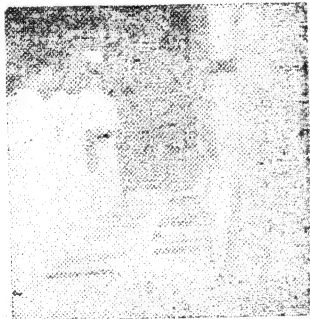
↑बिहार के राज्यपाल श्री जाकिर हुसेन साहब अधिवेशन का उद्घाटन करते हुए।
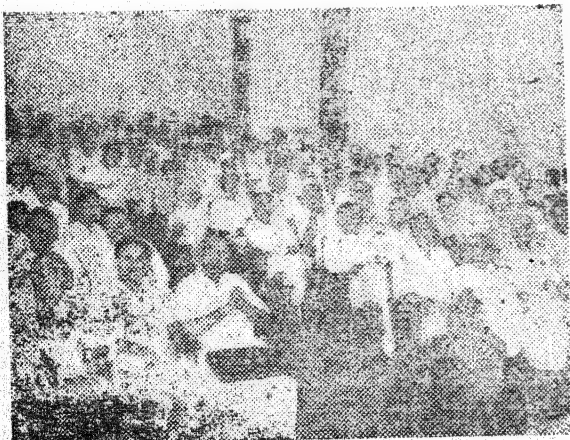
←साहू जैन हॉल में प्रकाशकों व पुस्तक-विक्रेताओं की भीड़।

संघ के छठे (पटना) अधिवेशन में

प्रधान मंत्री का वक्तव्य

श्री ओंप्रकाश द्वारा १६ अप्रैल '६१ को अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ में पढ़ा गया वक्तव्य

अध्यक्ष महोदय, बन्धुओ और साथी पुस्तक-व्यवसायियो,

अखिल भारतीय हिन्दी-प्रकाशक संघ के इस छठे खुले अधिवेशन में आप सबका स्वागत करते हुए मुझे हर्ष हो रहा है। १९५४ के मई मास में संघ के सूत्रपात के लिए प्रथम सम्मेलन दिल्ली में हुआ था और तब से संघ द्वारा किए जाने वाले कार्य-कलाप हिन्दी-पुस्तक-व्यवसाय के सामूहिक हितों को सम्पन्न करने की ओर निर्दिष्ट रहे हैं। प्रसन्नता की बात है कि वर्ष-भर के लेखे-जोखे पर विचार करने के लिए हम सब एक बार मिल लेते हैं और अगले वर्ष के कार्य की रूपरेखा भी तैयार कर लेते हैं। यह न केवल कार्य की प्रगति के लिए आवश्यक है, वरन् इससे हमें आपस में मिलने-जुलने का सुअवसर भी मिलता है, जिसका महत्त्व किसी कदर कम नहीं है।

गत वर्ष के कार्य का लेखा प्रस्तुत करने से पहले मैं संघ के कलकत्ता में हुए अधिवेशन के प्रस्तावों की तरफ आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। अपने हितों के संरक्षण के उत्साह में प्रतिवर्ष हम कुछ ऐसे प्रस्ताव स्वीकार कर लेते हैं जिन्हें कार्यान्वित करना हमारे बूते की बात नहीं होती—कुछ प्रस्ताव तो सरकार के आगे ऐसी माँगों को पेश करते हैं जिन्हें कि पूरा करना कठिन-साध्य या असाध्य होता है। प्रस्तावों को स्वीकृत करते वक्त हम यदि इस पक्ष पर भी ग़ौर कर लिया करें, तो बेहतर हो। ९ और १० जनवरी, १९६० के गत अधिवेशन में भी ऐसे एकाधिक प्रस्ताव स्वीकृत किये गए थे—जैसे कि नेशनल बुक ट्रस्ट में प्रकाशक संघ के प्रतिनिधि की नियुक्ति की भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय से माँग। उत्तर में सरकार ने बतलाया कि बुक ट्रस्ट पर उनका कोई स्वत्वाधिकार नहीं है, क्योंकि ट्रस्ट स्वयं एक स्वायत्त संस्था है। डाक विभाग से पुस्तकों के पैकेटों से रजिस्ट्री का खर्च हटाने का प्रस्ताव भी गत अधिवेशन में स्वीकृत किया गया था। हमारे देश की सरकार सब प्रकार के उपायों और साधनों से पंचवर्षीय योजनाओं की पूर्ति के लिए धन संचित करने में संलग्न है—हमारे इस प्रकार से शीघ्रता में प्रस्तावित और अनुमोदित सुझावों पर कौन विचार करेगा? एक अन्य प्रस्ताव द्वारा संघ ने भारत में एक एशियाई-अफ्रीकी प्रकाशक काँग्रेस के आयोजन की तैयारियों की स्वीकृति दी थी। इस एशियाई-अफ्रीकी काँग्रेस के बारे में प्रथम चर्चा कार्यसमिति को २५ अक्तूबर '५९ की बैठक में श्रीकृष्णचन्द्र बेरी ने की थी और बतलाया था कि इस सम्बन्ध में उनके १५-१६ लेख यत्र-तत्र तब तक प्रकाशित भी हो चुके थे। श्री बेरी संघ की ओर से एशियाई-अफ्रीकी प्रकाशक काँग्रेस के १९६१ में भारत में आयोजन की बात अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशक काँग्रेस के दिनों विदेश में भी कर आए थे। कार्य समिति की सम्बन्धित रिपोर्ट में यह भी उल्लिखित है कि संघ के सभापति श्री रामलाल पुरी ने कहा कि ऐसा कोई निश्चयात्मक आश्वासन संघ के प्रतिनिधियों ने वहाँ नहीं दिया था। एशियाई-अफ्रीकी प्रकाशक काँग्रेस के बारे में कार्य समिति ने अपनी ६ फरवरी '६० की बैठक में फिर विचार किया और दिल्ली में एक स्थानीय संयोजक को मनोनीत कर दिया। अन्ततः कार्य-समिति ने अपनी १५ मार्च '६१ की बैठक में एशियाई-अफ्रीकी प्रकाशक काँग्रेस के आयोजन का विचार एक प्रस्ताव द्वारा स्थगित कर दिया, यह कहकर कि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक परिस्थितियाँ इसमें बाधा बन रही हैं। अक्तूबर १९५९ से मार्च १९६१ तक अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक परिस्थितियों में कौनसा ऐसा मौलिक परिवर्तन आया है कि इस एशियाई-अफ्रीकी काँग्रेस को स्थगित करना पड़ा! शायद इसे प्रस्तावित करते वक्त ही इस कार्यक्रम को दूरदृष्टि और

अधिक सतर्कता की आवश्यकता थी ताकि बाद में उसे हलकेपन से टाल न देना पड़ता ।

इसी प्रकार रेलवे स्टेशनों की पुस्तकों की दुकानों के सम्बन्ध में भी हम प्रस्ताव स्वीकृत करते रहे हैं और गत वर्ष कहा गया कि वहाँ के एकाधिपत्य को तोड़ दिया जाए और सहकारी आधार पर संगठित संस्थाओं को उन दुकानों का दायित्व सौंप दिया जाए । इस प्रस्ताव को भी स्वीकृत करते वक्त हमने अपनी माँग के निहितार्थ पर ध्यान नहीं दिया। सहकारी आधार पर बनी क्या कोई ऐसी संस्था है जिस पर पुस्तकों की इन दुकानों का भार डाला जा सकता था ? यदि नहीं है तो ऐसी संस्था का आयोजन कब और कौन करेगा ? ऐसी माँगें स्वयं ही उपेक्षित सिद्ध हो जाती हैं जिनके पूर्वापर के विषय में विचार किये बिना हम उन्हें पेश कर देते हैं ।

अब हम पिछले १५ मास में संघ की कुछ मुख्य कार्यवाहियों पर रोशनी डालते हैं—

संघ की ओर से देश-भर में १ से १४ नवम्बर '६० तक 'राष्ट्रीय पुस्तक उत्सव' मनाया गया । अनेक नगरों में, जिनमें दिल्ली, अजमेर, कच्छ, जोधपुर और आगरा प्रमुख हैं, हिन्दी-पुस्तकों की प्रदर्शनियाँ आयोजित की गईं। दिल्ली की पुस्तक-प्रदर्शनी का, जो कि दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी में आयोजित की गई थी, उद्घाटन शिक्षा संचालक श्री बी० डी० भट्ट ने किया और कई हज़ार लोगों ने प्रदर्शनी में रखी गई पुस्तकों को देखा । इस पखवाड़े में हिन्दी-पुस्तकों की दुकानें सजायी गई और अनेक नगरों में कपड़े के बैनर्स लहराये गए, जिनके द्वारा लोगों को अधिक पुस्तकें पढ़ने, खरीदने और भेंट करने के लिए प्रोत्साहित किया गया । इसी आशय के विज्ञापन भी देश के प्रमुख हिन्दी तथा अंग्रेज़ी के समाचार-पत्रों में दिये गए । आशा है कि प्रधान मन्त्री श्री नेहरू के जन्मदिवस पर समाप्त होने वाले पक्ष में सांस्कृतिक दृष्टि से और पुस्तक-व्यवसाय के लिए अन्यथा भी महत्त्व का यह उत्सव देश-भर में अब प्रतिवर्ष मनाये जाने वाला एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण उत्सव हो जाएगा ।

१७ नवम्बर से १९ नवम्बर १९६० तक दिल्ली में सहकारी आधार पर पुस्तकों के प्रचार और बिक्री के प्रश्न पर विचार-विनिमय करने के लिए संघ की ओर से एक सेमिनार आयोजित किया गया । समूचे पुस्तक-व्यवसाय की उन्नति की दृष्टि से इस प्रश्न की विशेष गम्भीरता थी । संघ ने और इसकी कार्यसमिति ने अनेक बार, सबसे पूर्व १२ अप्रेल, १९५५ को अपनी बैठक में, विशेष रूप से अपनी २५ अक्तूबर १९५९ की बैठक में, हिन्दी के प्रकाशनों की बिक्री को बढ़ाने की योजनाएँ बनाने की आवश्यकता पर बल दिया था। लेकिन खेद की बात है कि जब इस प्रश्न के सैद्धान्तिक और व्यावहारिक पक्षों पर विस्तार से विचार करने के लिए संघ की ओर से सेमिनार आयोजित हुआ तो देश के कुल २४ प्रकाशक और पुस्तक-विक्रेता ही उसमें भाग लेने के लिए उपस्थित हो सके, जिनमें से १४ स्थानीय थे । संघ के अनेक प्रमुख नेता और कार्यकर्ता इस सेमिनार से अपनी व्यक्तिगत व्यस्तताओं के कारण उन्मुख रहे । इस सेमिनार में भाग न ले सकने की उनकी असमर्थता और विवशता ने संघ के सामूहिक सोच-विचार करने के इस साधन और अवसर को निरर्थक-प्राय-सा कर दिया, और परिणाम सबके सामने है । पुस्तकों को उनके प्रकाशित मूल्य पर बेचने की योजना का एक उद्देश्य यह रहा है कि अगला कदम विभिन्न नगरों में पुस्तकों की सफल दुकानें खोलने का होगा जोकि परस्पर की गलाकाट प्रतियोगिता के दिनों में सम्भव न था । इस सेमिनार में पाँच सुविचारित निबन्ध पढ़े गए, अच्छे स्तर का विचार-विमर्श भी हुआ, लेकिन बड़े-बड़े प्रकाशकों की दिलचस्पी के अभवा में कोई स्थायी परिणाम न निकला, जैसा कि आशा थी ।

भारत सरकार के शिक्षा-मन्त्रालय ने इस सेमिनार की उपयोगिता को देखते हुए इसके व्ययादि के लिए ६९०) की आर्थिक सहायता दी, जिसके लिए संघ आभार प्रदर्शित करता है । सेमिनार का उद्घाटन भी शिक्षा-मन्त्रालय के सचिव श्री प्रेमकृपाल ने ही किया ।

आगरा में हुए चतुर्थ वार्षिक सम्मेलन के समय से हिन्दी अक्षरी और वर्तनी में एकरूपता लाने की आवश्यकता पर संघ और इसकी कार्यसमिति का ध्यान बराबर जाता रहा है । इसके लिए एक विशेष समिति नियोजित कर दी गई थी, जिसकी ओर से इसके संयोजक, राजकमल प्रकाशन के

देवराज ने सुझावों का एक प्रारूप जुलाई १६६० में प्रचारित कर दिया था। हिन्दी वर्तनी और अक्षरी के इस प्रारूप पर देश के प्रमुख साहित्यिकों और साहित्यिक संस्थाओं का ध्यान गया, जिनमें दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष डॉ० नगेन्द्र, विभिन्न विश्व-विद्यालयों के हिन्दी-विभागों की प्रयाग-स्थित संस्था भारतीय हिन्दी परिषद् एवं बिहार की सरकार-समर्थित संस्था बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् हैं। १६६० के अन्तिम दिनों में भारत सरकार के शिक्षा-मन्त्रालय का ध्यान भी इस एकरूपता को लाने के लिए संघ द्वारा किये जाने वाले प्रयत्नों की ओर गया और मन्त्रालय ने इसी उद्देश्य से एक विशेष समिति को मनोनीत किया, जिसमें संघ के प्रतिनिधि के रूप में श्री देवराज को ले लिया गया। इस समिति में भारत सरकार के शिक्षा-मन्त्रालय, विधि-मन्त्रालय, सूचना तथा प्रसारण-मन्त्रालय, नागरी प्रचारिणी सभा, भारतीय हिन्दी परिषद् तथा दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के प्रतिनिधि सम्मिलित हैं। इस समिति की पहली बैठक २८ जनवरी १६६१ को हुई। इस समिति का कार्य जारी है और इसके विचारादि के समाप्त होने तक हमारा इस दिशा में आगे का अपना काम रुका रहेगा।

हिन्दी मुद्रण में वर्तनी और अक्षरी के प्रचलन में मतैक्य न होने के कारण जो धाँधली मची हुई थी, उसकी रोक-थाम की जरूरत पर संघ देश के साहित्यिकों, प्राध्यापकों और शिक्षा-मन्त्रालय का ध्यान बँटा सका है, यह कम गौरव की बात नहीं है।

फरवरी '६१ के आरम्भ में भारत सरकार के वाणिज्य और उद्योग एवं शिक्षा मन्त्रालयों की ओर से हमें कहा गया कि हम 'ईकाफे' के दिल्ली में होने वाले अधिवेशन के दिनों में चुनी हुई हिन्दी-पुस्तकों की एक छोटी-सी प्रदर्शनी करें। इसका उद्देश्य हिन्दी-पुस्तकों के निर्यात से सम्बद्ध था। भारत सरकार अन्य भारतीय वस्तुओं के निर्यात के साथ-साथ पुस्तकों के निर्यात को भी बढ़ाना चाहती है और 'ईकाफे' का अधिवेशन इसी उद्देश्य के साधन के लिए हिन्दुस्तान में बुलाया गया था। दिल्ली के मथुरा ग्राउण्ड्स में हुई बड़ी प्रदर्शनी में संघ द्वारा आयोजित दूकान लगभग एक महीना तक लगी रही। इसे लगाने और इसकी देख-रेख करने में ज्ञान प्रकाशन, दिल्ली के श्री दिग्दर्शन चरण जैन ने अपना अमूल्य समय दिया, जिसके लिए संघ उनके प्रति अनुगृहीत है। इस दूकान पर दिल्ली के पुस्तक-विक्रेताओं से प्राप्त की गई देश-भर के प्रकाशन की उत्कृष्ट पुस्तकें रखी गई थीं।

गत अधिवेशन के समय संघ के तत्कालीन प्रधान मन्त्री श्री दीनानाथ मलहोत्रा ने बताया था कि भारत सरकार से संघ के प्रतिनिधियों की बातचीत इस सम्बन्ध में, कि किस प्रकार महत्व के विदेशी साहित्य को हिन्दी में लाया जा सके, होती रही है। अपनी २८ जून १६५६ की बैठक में संघ की कार्य-समिति ने एक उपसमिति को केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय से हिन्दी में उच्चतर विदेशी साहित्य के अनुवादों के प्रकाशन के प्रयास में सरकारी सहायता की आवश्यकता पर बातचीत करने के लिए निर्वाचित किया। इस उप-समिति के सदस्यों और केन्द्रीय शिक्षा अधिकारियों की एकाधिक बार सम्मिलित गोष्ठियाँ हुई। संघ की ओर से अन्ततः जो सुझाव रखे गए उनमें से मुख्य तीन इस प्रकार थे—(क) सरकारी सहायता से जो पुस्तकें प्रकाशित की जाएँ, केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय उनकी एक-तिहाई प्रतियाँ पच्चीस प्रतिशत कमीशन पर खरीद लिया करे, (ख) ऐसी पुस्तकों का मूल्य लागत मूल्य से ढाई-तीन गुना तक रखा जाए, तथा (ग) अनुवाद की शुद्धता की स्वीकृति सरकार द्वारा नियुक्त कोई अधिकारी सम्पूर्ण पुस्तक के छप जाने से पहले कर लिया करें। प्रसन्नता की बात है कि भारत सरकार ने इन तीनों सुझावों को ही स्वीकार कर लिया और अब इस योजना को कार्यान्वित करने की ओर पहला कदम उठा भी लिया है। तृतीय पंच-वर्षीय योजना में इस मद में २५ लाख रुपए सुरक्षित किए गए हैं जिनसे कई सौ वैज्ञानिक पुस्तकों के प्रामाणिक हिन्दी अनुवाद प्रकाशित हो सकेंगे। चालू वर्ष में २५ पुस्तकों के अनुवाद प्रकाशित करने की बात है।

अपनी १७ सितम्बर १६६० की बैठक में कार्य समिति ने निर्णय किया कि संघ की अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशक काँग्रेस की सदस्यता को जारी न रखा जाए। इस प्रश्न पर १५ मार्च १६६१ की बैठक में एक बार फिर विचार किया गया और अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशक काँग्रेस से सम्बन्ध-विच्छेद की

नीति को फिर से मान्य ठहराया गया। अपनी ११ सितम्बर १६५५ की बैठक में कार्य समिति ने इस अन्तर्राष्ट्रीय संस्था में सम्मिलित होने का निर्णय किया था और अपनी २७ अप्रैल १६५६ की बैठक में अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशक काँग्रेस के फ्लोरेन्स में हो रहे सम्मेलन में संघ की ओर से भाग लेने के लिए श्री दीनानाथ मलहोत्रा को प्रतिनिधि नियुक्त किया था। इसी संस्था के अगले वीएना में होने वाले अधिवेशन में भाग लेने के लिए श्री रामलाल पुरी और श्री कृष्णचन्द्र बेरी मनोनीत किये गए थे।

६ अप्रैल १६५६ की अपनी बैठक में कार्य-समिति इस नतीजे पर पहुँची कि हिन्दी पुस्तक-व्यवसाय को अथवा संघ को सामूहिक रूप से इस सदस्यता से कोई लाभ नहीं पहुँचा है और इस सदस्यता के लिए दिये जाने वाले छः सौ रुपयों के वार्षिक शुल्क की रकम को अन्य आवश्यक व्ययों के लिए बचाना चाहिए।

अन्त में मुझे बहुत खेदपूर्वक यह सूचना भी इस अधिवेशन के सामने प्रस्तुत करनी है कि पुस्तकों की बिक्री के बारे में संघ द्वारा समय-समय पर जो नियम प्रचारित किये गए, गत वर्ष उनकी अवहेलना अधिक हुई, पालन कम। अपनी रिपोर्ट में श्री दीनानाथ ने ६ जनवरी १६६० को कलकत्ता में कहा था कि १६५६ में संघ की सबसे बड़ी सफलता प्रकाशक-व्यवसाय में कमीशन-सम्बन्धी अनियमितता को हटाना था। तब स्थिति यह थी कि प्रकाशक इन नियमों के स्वयं पालन करने तथा दूसरों से पालन करवाने पर तुल गए थे और पुस्तक-विक्रेता भी अपना हित और लाभ उनके पालन और सुरक्षा में देखने लगे थे। धीरे-धीरे इन नियमों के पालन में ढिलाई आई और स्थायी लाभ की अपेक्षा क्षणिक लाभ पर ज्यादा जोर दिया जाने लगा। अस्वस्थ प्रतियोगिता और होड़ की इस हीन मनोवृत्ति की रोकथाम शायद सम्भव हो पाती, यदि खुद बड़े-बड़े प्रकाशक सिद्धान्त और व्यवहार से बिक्री-सम्बन्धी इस व्यवस्था में विश्वास रखते और अडिग रहते। लेकिन ऐसा नहीं था, इसके अनेक प्रमाण सामने रखे जा सकते हैं। श्री मलहोत्रा ने गत वर्ष प्रकाशकों की 'तपस्या और त्याग' की बात का उल्लेख किया था, और आज उन शब्दों को पढ़कर हँसी आती है, दुःख भी होता है। आज की परिस्थिति को देखकर तो ऐसा लगता है कि 'तपस्या और त्याग' और ऐसे ही कुछ अन्य शब्दों के नारों की हमने, अपने तुरन्त के स्वार्थों की पूर्ति के लिए, चाहे सामूहिक और स्थायी हितों की कितनी ही क्षति हो, आड़ बना रखी है। एक ओर तो संघ को सफलता इस सीमा तक मिली कि दिल्ली की पब्लिक लाइब्रेरी और केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय के पुस्तकालयाध्यक्ष तथा दिल्ली के शिक्षा संचालक महोदय ने, उत्तर प्रदेश के विकास आयुक्त और शिक्षा प्रसाराधिकारी महोदय ने, बिहार के पुस्तकालय अधीक्षक और जिला शिक्षा अधिकारियों ने, राजस्थान के शिक्षा संचालक महोदय ने और मध्य प्रदेश के समाज-शिक्षा संचालक महोदय ने संघ द्वारा बिक्री के नियमों को स्वीकार कर लिया और दूसरी ओर हमारे प्रकाशक और पुस्तक-विक्रेता-बन्धुओं ने इन नियमों की छीछालेदर करने में किसी प्रकार की भी कोर-कसर नहीं छोड़ी। गलत और झूठे नाम व पतों को पुस्तक-विक्रेता के रूप में पंजीबद्धकरवाया गया, अपंजीबद्ध पुस्तक-विक्रेताओं को पुस्तकें बेची गई, दान और अनेक अन्य रूपों में स्थिर से अधिक कमीशन दिया गया, छद्मवेश से पंजीबद्ध पुस्तक-विक्रेताओंको, यह जानते हुए भी कि वे खुले आम संघ का विरोध करते हैं और उसके नियमों को चुनौती देते हैं, बड़े परिमाण में पुस्तकें सप्लाई की गई। जो पुस्तक-विक्रेता इन नियमों पर अडिग रहे, उन्हें लगातार हानि पहुँची है। इस परिस्थिति की गम्भीरता को देखकर कार्य समिति ने अपनी १५ मार्च १६६१ की बैठक में इस सुझाव को इस सम्मेलन के सामने रखने का प्रस्ताव किया कि यदि किसी प्रकार इस स्थिति का प्रतिकार सम्भव नहीं है तो बिक्री-सम्बन्धी कुल नियमन और व्यवस्था को भंग कर दिया जाए। अब इसका फैसला आप सबको इसी अधिवेशन के दौरान में करना है और आपके इस फैसले पर संघ का भविष्य काफी हद तक आश्रित है।

इस समय संघ प्रकाशकों और पुस्तक-विक्रेताओं दोनों की सम्मिलित संस्था है और पुस्तक-विक्रेताओं के प्रतिनिधि इसकी कार्य समिति के सदस्य निर्वाचित किए जाते हैं। लेकिन पुस्तकों को उनके प्रकाशित मूल्य पर बेचने के नियमन का लाभ प्रकाशकों की अपेक्षा पुस्तक-विक्रेताओं को अधिक था—प्रकाशक अपनी पुस्तकों पर स्वभावतः सदैव

(शेष पृष्ठ ४२४ पर)

३१ दिसम्बर, १९६० के दिन की बैलेंस शीट

कैपिटल एण्ड लायबिलिटीज़	—	—	—	—
संड्री क्रेडिटर्स	—	—	—	—
संलग्न लिस्ट के अनुसार	—	—	७५९	११
सेमिनार व्यय के लिए इकट्ठा किया कर्ज़	—	—	—	—
गत वर्ष से लाया गया बैलेंस	—	—	१५५६	००
सेमिनार एकाउण्ट	—	—	—	—
शिक्षा-विभाग से प्राप्त ग्राण्ट	१५००	००	—	—
जमा भाग लेने वालों से प्राप्त शुल्क	४७५	००	—	—
	१९७५	००	—	—
व्यय	१०८१	४८	—	—
शेष रकम अगले साल में जमा की गई	—	—	८९३	५२
जनरल फण्ड	—	—	—	—
पिछली बैलेंस शीट के अनुसार बैलेंस	६०४	३८	—	—
जमा चुकता न होने वाली रकमें	१८५	००	—	—
	७८९	३८	—	—
जमा साल में व्यय से अधिक आय	२३५८	३७	३१४७	७५
कुल योग			६३५६	३८
प्रोपरटी एण्ड एसेट्स	—	—	—	—
संड्री डैटर्ज़	—	—	—	—
श्री दीनानाथ मल्होत्रा	—	—	३	८४
कैश एण्ड बैंक बैलेंसेज़	—	—	—	—
हाथ में नकद	३९८३	६४	—	—
पंजाब नेशनल बैंक लि०,	—	—	—	—
कश्मीरी गेट, दिल्ली में	२३६८	९०	६३५२	५४
योग			६३५६	३८

ऑडिटर की रिपोर्ट

हमें दी गई हिसाब की किताबों के अनुसार यह लेखा-जोखा जाँचा और ठीक पाया गया है।

सील हस्ताक्षर.........................

चार्टर्ड एकाउंटेंट्स

२१, लक्ष्मी इंश्योरेंस बिल्डिंग,
आसफ अली रोड, नई दिल्ली
तारीख ११ अप्रैल, १९६१

३१ दिसम्बर, १९६० को समाप्त होने वाले
आय और व्यय का वार्षिक हिसाब

व्यय	—	—	—	—
वेतन	—	—	३६५	५५
पोस्टेज	—	—	१४७०	४४
स्टेशनरी	—	—	७१०	४०
पब्लिसिटी व्यय	—	—	—	—
विज्ञापन	—	—	१४१६	६२
मुद्रण व्यय	—	—	११५९	६०
डिज़ाइन व्यय	—	—	१११	८२
काग़ज़ व्यय	—	—	८५	५०
ब्लाक व्यय	—	—	—	—
जिल्दबन्दी व्यय	—	—	४०	२५
मिसलेनियस व्यय	—	—	५०३	६८
अनुवाद व्यय	—	—	५४	००
रजिस्ट्रेशन फी	—	—	५०	००
टाइपिंग चार्जेज़	—	—	३२	१२
भाड़ा व किराया	—	—	२७	१४
ऑडिट फ़ी	—	—	५०	००
बैंक चार्जेज़	—	—	२०	२५
किराया	—	—	२६	६१
खर्च से अधिक आय जो अगले वर्ष के बैलेंस शीट में	—	—	—	—
ले जाई गई	—	—	२३५८	३७
कुल योग			८४८२	३५
आय	—	—	—	—
सदस्यता शुल्क द्वारा	—	—	१७०१	००
संयुक्त हिन्दी प्रकाशक की सदस्यता का शुल्क	—	—	५०	१५
पुस्तक-विक्रेताओं के रजिस्ट्रेशन का शुल्क	—	—	५५१३	००
पुस्तक-प्रदर्शनी में भाग लेने का शुल्क	—	—	३५५	००
बृहद् सूची	—	—	—	—
विज्ञापन आय	—	—	८६३	२०
योग			८४८२	३५
ऑडिटर की रिपोर्ट	—	—	—	—
बैलेंस शीट के साथ संलग्न	—	—	—	—

हस्ताक्षर **चार्टर्ड एकाउंटेंट्स**.......................

२१, लक्ष्मी इंश्योरेंस बिल्डिंग, आसफ़ अली रोड, नई दिल्ली

तारीख ११ अप्रैल, १९६१

संड्री क्रेडिटर्स की सूची, ३१ दिसम्बर, १९६०

एल० एफ०	नाम	रकम
८४.	नवीन प्रेस, दिल्ली	३०६.७२
८६.	इलाहाबाद ब्लाक वर्क्स प्रा० लि०, इलाहाबाद	३७.३१
१४२.	राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०, दिल्ली	३६५.०८
	एम० पाल एण्ड कम्पनी	५०.००
	योग	७५[illegible].११

संघ के छठे अधिवेशन के अध्यक्ष

श्री कृष्णाचन्द्र बेरी का भाषण

यह भाषण पटना में १७ अप्रैल, १९६१ को दिया गया।

महामहिम राज्यपालजी, स्वागताध्यक्षजी, महानुभावो और देवियो !

अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ के छठे वार्षिक सम्मेलन का, जो आज प्राचीन मगध की राजधानी पाटलिपुत्र में अनुष्ठित होने जा रहा है, सभापतित्व करने का मुझे जो अवसर दिया गया है, उसके लिए मैं संघ का आभारी हूँ। यह दायित्वपूर्ण भार इस विश्वास के आधार पर ग्रहण कर रहा हूँ कि बड़ों का आशीर्वाद और समवयस्कों का स्नेह मुझे निरन्तर प्राप्त होता रहेगा और उनके निर्देश का प्रकाश मेरे पथ को बराबर आलोकित रखेगा।

शिक्षा के क्षेत्र में बिहार का वैशिष्ट्य हमारे गौरवपूर्ण इतिहास की प्रेरणामयी गाथा का उज्ज्वल अंश है। वैशाली और नालन्दा-जैसे प्राचीन विद्यापीठों का इतिहास बिहार की गौरवगाथा को सारे भारत में ही नहीं, प्रत्युत विश्व में मुखरित कर रहा है। बिहार ने प्रकाशन-कार्य में जो महत्त्वपूर्ण भाग लिया है, वह अपनी जगह एक ही है। आचार्य महामहोपाध्याय रामावतार शर्मा, पंडित सकलनारायण शर्मा आदि विभूतियाँ आज भी हमें हिन्दी के गौरव का स्मरण दिलाती हैं। हिन्दी-प्रचार के क्षेत्र में बिहार केशरी स्व० डॉ० श्रीकृष्णसिंह तथा डॉ० अनुग्रहनारायणसिंह की हिन्दी-सेवाएँ चिरस्मरणीय रहेंगी। आचार्य शिवपूजन सहाय, राष्ट्रकवि दिनकर, रामवृक्षजी बेनीपुरी आदि विद्वान् भारतीय साहित्य के जाज्वल्यमान नक्षत्र माने जाते हैं। प्रकाशन-क्षेत्र में खड्गविलास प्रेस, आचार्य रामलोचनशरण का पुस्तक भण्डार, स्व० पं० रामदहिन मिश्र की बाल शिक्षासमिति, अजन्ता प्रेस, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, ज्ञानपीठ प्राइवेट लि०, अशोक प्रेस आदि प्रकाशन-संस्थाओं ने हिन्दी की जो सेवा की है, वह भारतीय प्रकाशन के इतिहास में अविस्मरणीय रहेगी।

जनता और साहित्यकार के बीच की कड़ी

पुस्तक-प्रकाशन एवं तत्सम्बन्धी समस्याओं पर कुछ कहने के पूर्व मैं प्रकाशकों के सम्बन्ध में दो शब्द निवेदन करना चाहता हूँ, क्योंकि मैं अनुभव करता हूँ कि प्रकाशकों के त्याग की कहानी संभवतः देश भूल चुका है। मेरी आँखों के सामने आज भी वह दृश्य नाच रहा है जब मैं देखता था कि कलकत्ता के चौराहों पर राष्ट्रीय पम्फलेट छापते तथा बेचते हुए वे प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता पुलिस द्वारा बेरहमी से पीटे जाते थे और उनके प्रेस तथा कार्यालय गोरी सरकार की चेरी पुलिस उठा ले जाती थी। राष्ट्रीय आन्दोलनों के दिनों में इन्हीं प्रकाशकों ने साहित्य के दीप को अपनी साहित्य-सेवा से दीप्त रखा। स्मरण कीजिये, राष्ट्रीय जनान्दोलनों के दिनों में देश के इन्हीं प्रकाशकों ने बापू के आह्वान पर ब्रिटिश जुल्मों के बावजूद राष्ट्रीय भावना जागृत करने वाले साहित्य का प्रकाशन किया और जनजीवन को बल दिया। मुझे यह देखकर दुःख होता है कि आज प्रकाशन का कार्य करने वाले इस वर्ग का उतना समादर नहीं है जितना कि होना चाहिए। मुझे आपसे कहना है कि प्रकाशक जनता और साहित्यकार के बीच एक कड़ी है। साहित्यकारों के साहित्य को जनता तक पहुँचाने के उद्देश्य की पूर्ति के लिए इस कड़ी को बनाये रखना आवश्यक है।

पुस्तक-प्रकाशन समाज-सेवा है

पुस्तकों की वह भूमिका, जब कि उन्हें आध्यात्मिक या बौद्धिक विचारों की अभिव्यक्ति का एकमात्र साधन माना जाता था, समाप्त हो चुकी है। रेडियो और टेलीविजन को लोग अब शिक्षा का माध्यम मानने लगे हैं। प्रकाशकों को इन्हीं परिस्थितियों में अपने कर्तव्य का निर्वाह करना

पड़ रहा है। सन् १९१४ से पूर्व जिस तरह जनता की रुचि पुस्तकों की ओर रही, वह आज जनसंख्या के अनुपात से नगण्य है। आज समस्त विश्व का ढाँचा बदल चुका है। लोग यह समझने लगे हैं कि जब तक हम मोटर गाड़ियों, दवाइयों, सौन्दर्य-प्रसाधक सामग्रियों, साज-सजावट के सामानों का उपयोग नहीं करेंगे, तब तक समाज में हमारा सम्मान नहीं होगा। आर्थिक विभीषिका के इस युग में मानव का ध्यान फैशन की होड़ में उसे मानसिक शान्ति नहीं देता। मानसिक शान्ति के अभाव में चिन्तन की ओर बहुत ही कम ध्यान जाता है और चिन्तन के अभाव में मनुष्य को अपने कर्त्तव्याकर्त्तव्य को स्थिर करने का अवसर ही नहीं मिलता। चिन्तन पठन का दूसरा रूप है। जब चिन्तन नहीं तो पठन भी नहीं। पठन की प्रवृत्ति होना ही पुस्तकों की ओर झुकाव है। आज लोग पुस्तकें पढ़ने की अपेक्षा वैज्ञानिक आविष्कारों द्वारा प्रस्तुत रेडियो, चलचित्रों एवं टेलीविजनों आदि में ही खाली समय बिताना अधिक पसन्द कर रहे हैं। लोग प्राकृतिक आनन्द को छोड़कर अप्राकृतिक जीवन को अपनाते जा रहे हैं। यही कारण है, उन्हें प्राकृतिक आनन्दों से वंचित रहना पड़ता है और वे पुस्तकों के नैसर्गिक आनन्द को भूल जाते हैं। आज जनता की रुचि पुस्तकों की ओर उतनी नहीं है, जितनी कि १९वीं शताब्दी में रही है। मेरे कहने का तात्पर्य यह नहीं कि पहले की अपेक्षा आज पुस्तकें कम बिक रही हैं। मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि जनसंख्या के अनुपात से पुस्तकें आज कम बिक रही हैं। भारत में जनता की रुचि पुस्तकों की ओर वैसे ही कम है। पश्चिम का एक उदाहरण प्रस्तुत कर रहा हूँ। १८९० में मध्य योरुप में सवा छः करोड़ आबादी वाले जर्मनी में जर्मन भाषा में १९००० नये प्रकाशन हुए, अर्थात् प्रत्येक एक लाख आबादी के पीछे ३० नये प्रकाशन। आज जब कि पश्चिम में शिक्षा के क्षेत्र में पहले से अत्यधिक प्रगति हुई है, तब भी एक लाख जनता के पीछे जर्मनी में केवल ३४ नये प्रकाशन हुए हैं। जनता की रुचि पुस्तकों की ओर बढ़ाने के लिए प्रकाशकों को चाहिए कि वे इस भार को अपने सबल कन्धों पर उठाएँ और जनता में पठन-रुचि पैदा करने के लिए स्वस्थ, सुमुद्रित, रुचिकर साहित्य प्रस्तुत करें। हमें इस बात की खोजबीन करनी है कि क्या कारण है कि आज ४४ करोड़ की आबादी वाले भारत देश में पुस्तकों की ओर जनता की रुचि कम है। हमें ऐसी स्थिति उत्पन्न करनी है कि सामान्य जनता का ध्यान साहित्य की ओर आकृष्ट हो। यह कार्य तभी संभव है, जब प्रकाशक यह समझें कि पुस्तक-प्रकाशन का कार्य व्यवसाय नहीं, समाज-सेवा है। समाज-सेवा की दृष्टि से उन्हें इस व्यवसाय में आना चाहिए। जो लोग इस व्यवसाय से अन्धाधुन्ध धनोपार्जन करना चाहेंगे, उनसे मैं हाथ जोड़कर कहूँगा कि वे अन्य धंधों की ओर जाएँ, क्योंकि ऐसे लोगों के हाथों से साहित्य का मंगल व कल्याण नहीं हो सकता।

साहित्येतर प्रकाशन

हिन्दी के राष्ट्रभाषा हो जाने के बाद हिन्दी-प्रकाशकों का दायित्व बहुत-कुछ बढ़ा है। आवश्यक है कि हिन्दी में विज्ञान, गणित और तकनीक सम्बन्धी साहित्य काफी संख्या में प्रकाशित किया जाए। हिन्दी में कोश-ग्रंथों का अभी भी अभाव है, हालांकि इस क्षेत्र में प्रकाशकों तथा सरकार के उद्योग से काफी प्रगति हुई है। केन्द्रीय सरकार ने अभी हाल में ही विज्ञान-सम्बन्धी पुस्तकें छापने के लिए प्रकाशकों को आमन्त्रित किया है, परन्तु उसके नियम-उपनियम ऐसे विचित्र हैं कि प्रकाशक उन्हें स्वीकार नहीं कर सकते। यदि सरकार को विज्ञान और तकनीक-सम्बन्धी प्रकाशकों को बढ़ावा देना ही है तो उसे प्रकाशकों को उदारतापूर्वक ऐसी सुविधाएँ देनी चाहिए जिनसे उन्हें प्रोत्साहन मिले। हिन्दी में इस तरह की पुस्तकों का प्रकाशन सरकारी तथा गैर-सरकारी स्तर पर थोड़ा-बहुत हो रहा है, परन्तु सरकारी पक्ष की ओर से इस पर बहुत ही रुपया व्यय किया जा रहा है। यदि यह कार्य उससे आधे रुपयों से प्रकाशकों द्वारा कराया जाए तो बहुत ही अच्छा होगा, क्योंकि यह स्पष्ट है कि सरकारी प्रकाशनों की बिक्री की वह व्यवस्था नहीं हो सकती जो प्रकाशकगण अपने प्रकाशकों के वितरणार्थ करते हैं। यहाँ यह बता देना भी समीचीन होगा कि कभी-कभी सरकारी प्रकाशन अनुदान पाने वाली लाइब्रेरियों को खरीद के लिए अनिवार्य किये जाने पर भी उतने बिक नहीं पाते,

जितना कि सामान्य प्रकाशक अपने प्रकाशनों को बेच लेते हैं। ऐसी स्थिति में मैं सरकार से अनुरोध करूँगा कि वह प्रकाशक संघ के सहयोग से अच्छे प्रकाशकों को आर्थिक सुविधाएँ दे, ताकि वैज्ञानिक साहित्य के प्रकाशन में हम विशेष रूप से दिलचस्पी ले सकें।

प्रतिनिधित्व का प्रश्न

आज भारत का स्थान प्रकाशनों की संख्या की दृष्टि से विश्व में तृतीय अवश्य है, परन्तु इससे प्रकाशन-स्तर को ऊँचा नहीं कहा जा सकता। निस्सन्देह जो स्थिति प्रकाशन-स्तर की १९४७ तक रही, वह आज ६१ में नहीं है। पहले की अपेक्षा मुद्रण का स्तर बहुत ऊँचा हो गया है, परन्तु यह बात सभी प्रकाशन-संस्थाओं के लिए लागू नहीं है। इने-गिने प्रेस ही अच्छी छपाई कर पाते हैं। केन्द्रीय गवेषणा और संस्कृति मन्त्रालय ने देश में चार प्रिंटिंग टेक-नालॉजी स्कूल प्रान्तीय सरकारों के सहयोग से स्थापित किये हैं। ये स्कूल इलाहाबाद, मद्रास, बम्बई तथा कलकत्ता में स्थित हैं, परन्तु बड़े आश्चर्य की बात है कि केन्द्रीय गवेषणा मन्त्रालय या राज्य सरकारों ने अभी तक प्रकाशक संघ को इन स्कूलों के कार्य में दिलचस्पी लेने के लिए आमन्त्रित नहीं किया। देश में कुछ ऐसी संस्थाएँ भी हैं, जैसे भारतीय मानक संस्था, नेशनल प्रोडक्टिविटी कौंसिल, नेशनल बुक ट्रस्ट आदि, जिनमें प्रकाशक संघ को समुचित स्थान मिलना चाहिए। मुद्रक संघ को तो आमन्त्रित किया गया है, परन्तु यह कभी सोचने की स्थिति ही नहीं आई कि पुस्तक-प्रकाशन के लिए प्रकाशक-वर्ग को भी प्रशिक्षित करना नितान्त आवश्यक है। मैंने इन स्कूलों का निरीक्षण किया है। इन स्कूलों द्वारा प्रकाशन संस्थाएँ अपने कार्य-कर्त्ताओं को पुस्तक-प्रकाशन-सम्बन्धी ट्रेनिंग दिला सकती हैं, परन्तु ये स्कूल इतने पर्याप्त नहीं हैं कि इनसे प्रत्येक प्रकाशन संस्था का एक-एक प्रतिनिध भी शिक्षित हो सके। सरकार को चाहिए कि वह पंचवर्षीय योजना में इस तरह की सुविधाओं की और अधिक व्यवस्था करे और इन स्कूलों के संचालन में प्रकाशन संघ का सहयोग प्राप्त करे।

साहित्य आध्यात्मिक तथा नैतिक चेष्टा को बल देने के लिए लिखा जाता है

मैंने पहले ही कहा है कि देश में पुस्तिका, रेडियो, टेलीविज़नों और चलचित्रों के कारण पुस्तकों के पठन की ओर रुचि घट रही है, परन्तु आपको मैं और बतलाऊँ कि पुस्तकों की बिक्री घटने का कुछ दायित्व प्रकाशकों और लेखकों पर भी है। आज का लेखक न तो यह सोचता है कि वह जनता को किस तरह का साहित्य दे और न तो प्रकाशक परखने की चेष्टा करता है कि जनता के लिए वह किस तरह का साहित्य प्रकाशित कर रहा है। गन्दी अश्लील पुस्तकों की यथार्थवाद के नाम पर बाजार में भीड़-सी लग गई है। अच्छे प्रकाशक भी थोथी दलीलों में आकर ऐसा गन्दा साहित्य भूल से छाप बैठते हैं। मुझे उस समय दुःख होता है जब मेरे टेबल पर लाकर आलोचक ऐसी पुस्तकें रखते हैं जिनमें सामाजिक मर्यादा का अस्वाभाविक चित्रण रहता है। मैं सोचता हूँ, यदि हम ऐसे ही प्रकाशन करते रहे तो हिन्दी-साहित्य का भविष्य क्या होगा, आनेवाली पीढ़ियाँ क्या बनेंगी और देश के चरित्र-निर्माण का क्या होगा? हिन्दी के किसी भी युग में इतनी अधिक संख्या में असंस्कृत लेखक और प्रकाशक नहीं हुए,

निर्भीक व सशक्त समालोचक प्रो० दीनानाथ 'शरण' एम० ए०, टी० एन० बी० कॉलेज, भागलपुर, जिन्होंने हिन्दी-साहित्य के इतिहास का नया ही क्षितिज उद्घाटित किया है। विभिन्न कालों के नये नामकरण, प्राचीन कवियों का मौलिक मूल्यांकन, ख्यात समीक्षकों की निर्भीक आलोचना और वर्तमान पीढ़ी के नये-से-नये कवि का उल्लेख और आकलन।

जितने कि हम आज देख रहे हैं। मैं ऐसे प्रकाशकों को प्रकाशक नहीं मानता और ऐसे लेखकों को लेखक, जो साहित्य के नाम पर व्यभिचार बेचना चाहते हैं। हम संभवतः भूल जाते हैं कि साहित्य आध्यात्मिक और नैतिक चेष्टा को बल देने के लिए लिखा जाता है, उसके मूल को नष्ट करने के लिए नहीं। मेरे उपरोक्त शब्द व्यभिचार बेचने वाले उन लेखकों व प्रकाशकों के प्रति चेतावनी हैं जो इस तरह का साहित्य प्रकाशित कर रहे हैं। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि प्रकाशक संघ ऐसे साहित्य के प्रकाशन को हरगिज़ बरदाश्त नहीं करेगा और अपने सदस्यों से कहेगा कि ऐसे साहित्य का प्रकाशन भूल से भी न करें, जिससे जनता की रुचि चरित्र-निर्माण और देश-सेवा से हटकर गन्दी ओर जाती है।

अशुद्ध पुस्तकें छपने-छपाने का कलंक

आजकल हिन्दी-प्रकाशकों में सबसे खटकानेवाली चीज़ दिखायी देती है प्रूफ़ रीडिंग की असावधानी। अधिकतर पुस्तकें अशुद्धियों से भरी हुई हैं। शुद्ध पुस्तकें प्रकाशित करने के दायित्व को प्रकाशक समझें। विशेषतः जब विज्ञान और गणित की पुस्तकों में प्रूफ रीडिंग में भूलें रह जाती हैं तो सर्वनाश समझिए। यदि कोई कोश-ग्रन्थ अशुद्ध छपा तो आप ही सोचिए कि उसका क्या महत्त्व रह गया? आवश्यक है कि प्रकाशक पाण्डुलिपियों की तैयारी, सम्पादन और प्रूफ़ रीडिंग में विशेष रूप से दिलचस्पी लें, जिससे शुद्ध पुस्तकों का प्रकाशन हो और अशुद्ध पुस्तकें छपने-छपाने का कलंक उन पर न लगे। पुस्तकों को सुसंस्कृत रूप में प्रकाशित करना प्रकाशकों का नैतिक कर्त्तव्य है।

राष्ट्रीय पुस्तक समारोह

यह ठीक है कि पुस्तकों की बिक्री नहीं हो रही है, परन्तु कारण क्या और क्यों हैं, यह हमें देखना होगा। यदि हम सचेष्ट होकर पुस्तकों के प्रचार-प्रसार की वैज्ञानिक प्रणाली को अपने देश में लागू करें और जनता को नये प्रकाशनों की सूचना दे सकें तो निश्चय ही पुस्तकों की बिक्री बढ़ सकती है। हिन्दी के प्रकाशकों ने इस दिशा में देश का नेतृत्व किया है। कई पत्रिकाएँ, यथा 'प्रकाशन समाचार', 'हिन्दी प्रचारक', 'पुस्तक-जगत', 'नया साहित्य' आदि, इसलिए प्रकाशित की जाती हैं कि जनता को नई पुस्तकों की सूचना मिलती रहे। इसी दिशा में प्रकाशक संघ ने गत वर्ष राष्ट्रीय पुस्तक समारोह का आयोजन किया था। आवश्यकता इस बात की है कि देश में आगामी वर्ष से राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह विदेशों की तरह धूमधाम से मनाया जाए। इस समारोह को राष्ट्रीय पर्व का रूप दिया जाना चाहिए। पुस्तकों का प्रचार शिक्षा का प्रचार है। शिक्षा का प्रचार देश के निर्माण की ओर बढ़ता हुआ कदम है। इस तरह का समारोह करने का दायित्व यदि प्रकाशकों पर है तो उसमें कन्धा देने का दायित्व जनता और सरकार पर भी है। प्रकाशक संघ की योजना है कि आगामी वर्ष राष्ट्रनायकों, राजनीतिक पार्टियों, सांस्कृतिक संस्थाओं, केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों, लेखकों, पत्रकारों, आकाशवाणी आदि के सहयोग से राष्ट्रीय पुस्तक समारोह धूमधाम से मनाया जाए। आशा है कि हमें सबका सहयोग राष्ट्र-निर्माण के इस रचनात्मक कार्य में मिलेगा। समारोह की यह पद्धति यदि हमारे देश में आशानुकूल रूप में प्रचलित हो जाए तो शिक्षा के क्षेत्र में वह कार्य हो जाएगा जो हमारी पंचवर्षीय योजनाएँ अब तक नहीं कर सकीं। पंचवर्षीय योजनाएँ तो सरकारी सीमा तक सीमित रह जाती हैं, परन्तु राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह यदि जनता को आकर्षित कर सका तो यह एक नयी क्रान्ति होगी और शिक्षा की ओर जनता का ध्यान आकर्षित होगा जो हमारी पंचवर्षीय योजना का एक लक्ष्य है। पिछले दिनों मैं प्रकाशक संघ की ओर से अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशक संघ की वियेना कांग्रेस में सम्मिलित हुआ था। मुझे वहाँ विभिन्न देशों से आये हुए प्रतिनिधियों से मिलने का अवसर प्राप्त हुआ। मैंने देखा प्रत्येक पश्चिमी देश में राष्ट्रीय पुस्तक समारोह मनाया जाता है और सारा राष्ट्र तन-मन-धन से उसमें जुट जाता है। प्रकाशक उन समारोहों के अवसर पर सारे देश में पुस्तक-प्रदर्शनियाँ करते हैं। पुस्तकों से सम्बन्धित चलचित्रों का प्रदर्शन उन दिनों देश के सिनेमाघरों में होता है। कलाकार नाटकों द्वारा वर्ष की प्रसिद्ध कृतियों का अभिनय करते हैं। लेखक स्थान-स्थान पर भाषण देकर पुस्तकों की महत्ता समझाते हैं। राष्ट्रनायक आकाशवाणी द्वारा अपने भाषणों में पुस्तकें पढ़ने के लिए जनता से अपील करते हैं। वे पाठक पुरस्कृत किए जाते हैं जो वष

नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी

नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी ने अपने हिंदी भाषा और नागरी प्रचार के कार्यों के साथ हिन्दी के उत्तमोत्तम अलभ्य ग्रन्थों का प्रकाशन भी किया है। कम दामों में ठोस और प्रामाणिक ग्रन्थों का प्रणयन सभा के इस कार्य की विशेषता है।

हिन्दी का सबसे बड़ा व्याकरण, सबसे बड़ा कोश, साहित्य का सबसे प्रामाणिक और बृहद् इतिहास, वैज्ञानिक शब्दकोश, कचहरी शब्दकोश, पृथ्वीराज रासो तथा अनेक प्राचीन और नवीन कवियों की ग्रन्थावलियाँ आदि सभा के उद्योग से हिन्दी-जगत् को उपलब्ध हो सकीं। सभा ने जहाँ इतने विशिष्ट ग्रन्थों का प्रकाशन किया वहाँ उसने सार्वजनिक रुचि पर भी ध्यान दिया। फलतः अनेक शिक्षाप्रद उपन्यास, जीवनी, बालोपयोगी साहित्य, कहानी आदि प्रकाश में आईं। इस प्रकार की पुस्तकों की नामावली नीचे दी जा रही है।

बाल-साहित्य

बालोपदेश	ले० श्री रामनारायण मिश्र	॥)
भारतीय शिष्टाचार	" " "	।)
बिगुल	सं० श्री कृष्णदेवप्रसाद गौड़	१)
कहानी से मनोरंजक सच्ची घटनाएँ	ले० श्री शंकर	१॥)
जीवों की कहानी	ले० श्री कुँवर सुरेशसिंहजी	४)
परिचर्या-प्रणाली	ले० श्री डॉ० अचलबिहारी सेठ	१)
गुरु गोविन्दसिंह	ले० श्री वेणीप्रसाद	२)
भीष्म पितामह	ले० श्री द्वारकाप्रसाद चतुर्वेदी	२)
राणा जंगबहादुर	सं० श्री श्यामसुन्दरदास	२)
महादेव गोविन्द रानाडे	ले० श्री रामनारायण मिश्र	२)
ग्वीसेप मेजनी का जीवनचरित्र	ले० श्री केशवप्रसादसिंह	१)
हुमायूँ नामा	अनु० श्री ब्रजरत्नदास	३)
शाही दृश्य	ले० श्री माखनलाल गुप्त गर्ग	२)

नाटक

भट्ट नाटकावली	ले० श्री बालकृष्ण भट्ट	२।)
महाराणा प्रताप नाटक	ले० श्री राधाकृष्णदास	।॥)
सत्य हरिश्चन्द्र नाटक	सं० श्री ब्रजरत्नदास	।॥)
नहुष नाटक	" "	१।॥)

उपन्यास

करुणा (श्री रा० वा० वंद्योपाध्याय)	अनु० श्री रामचन्द्र वर्मा	४॥)
शशांक " "	" श्री रामचन्द्र शुक्ल	४॥)
असीम " "	" श्री शम्भुनाथ वाजपेयी	५)
पाषाण कथा " "	" " " "	३)
श्यामा स्वप्न	सं० डॉ० कृष्णलाल	२।॥)

विज्ञान उपयोगी कला

बालमनोविज्ञान	ले० श्री लालजीराम शुक्ल	२॥)
धातु विज्ञान	ले० डॉ० दयास्वरूप	७॥)
औद्योगिक इंधन	" "	१०)
रेडियो	ले० श्री रा० र० खाडिलकर	१)
खाद विज्ञान	ले० श्री गुप्तनाथसिंह	१॥)
चन्द्रसारिणी	ले० डॉ० गोरखप्रसाद	२॥)
सूर्य सारिणी	" "	॥)
काशी का मानमन्दिर	ले० श्री चण्डीप्रसाद	॥)
हिन्दी टाइप राइटिंग	ले० श्री गोवर्द्धनदास गुप्त	२)

में सबसे अधिक पुस्तकें पढ़ लेते हैं। कई देशों में तो सिनेमा-घरों में टिकट के साथ-साथ उस समारोह के अवसर पर पुस्तकें भी खरीदनी पड़ती हैं। आपको आश्चर्य होगा जब मैं आपसे कहूँगा कि हेग और फ्रैंकफुर्ट के पुस्तक मेलों की टिकटें आकर्षक कार्यक्रमों के कारण एक वर्ष पहले ही बिक जाती हैं। मैं सरकार, प्रकाशक, लेखक और पुस्तक-प्रेमियों से अनुरोध करूँगा कि वे भारत की संस्कृति और शिक्षा की गौरव-वृद्धि के लिए तत्पर हों और आने वाले समारोह में प्रकाशक संघ को अपना सहयोग दें।

उपयुक्त पुस्तक-सूचियों तथा ठोस साहित्य का अभाव

पुस्तकों की बिक्री में कमी का एक और कारण है। इतना समय बीत गया फिर भी किसी जिज्ञासु पाठक को विषय-विशेष पर पुस्तक-सूचियाँ प्राप्त नहीं होतीं। यदि कोई व्यक्ति यह जानना चाहे कि हिन्दी में इतिहास के कितने ग्रन्थ छपे हैं और विज्ञान के कितने, तो उसके लिए एक समस्या खड़ी हो जाती है और वह विभिन्न प्रकाशकों से सूचियाँ एकत्र करते थक-सा जाता है। ऐसी स्थिति में प्रकाशकों का यह दायित्व हो जाता है कि वे जनता के लिए प्रकाशक संघ के माध्यम से विषय-क्रमानुसार पुस्तक-सूचियाँ प्रस्तुत करें। प्रायः देखने में आता है कि माँग हिन्दी-पुस्तकों की होती है, लेकिन निश्चित सूचना के अभाव में हिन्दी पुस्तकों के समय पर न मिलने के कारण पुस्तकालय अंग्रेजी की पुस्तकें ही खरीद लेते हैं, चाहे सामान्य जनता उन पुस्तकों का उपयोग भले ही न कर सके। हिन्दी-पुस्तकों की बिक्री की कमी इसलिए भी है कि हिन्दी में ठोस साहित्य के प्रणयन का अभाव है। पुस्तकें ख़रीदकर पढ़ने का मर्ज़ हमारे देश में वैसे ही नहीं है और यदि पढ़े-लिखे लोग कभी पुस्तकें खरीदते भी हैं तो देखने में आता है कि उनकी रुचि अंग्रेज़ी में प्रकाशित पुस्तकों की ओर ही रहती है। इसका कुछ दोष हिन्दी के साहित्यकारों और प्रकाशकों को दिया जा सकता है। रचनाओं और प्रकाशनों में कुछ कमी है, जिनके कारण जनता का ध्यान अब तक उतना आकृष्ट नहीं हो पाया जितना होना चाहिए था। यदि लोगों को मालूम हो जाए कि हिन्दी की अमुक रचना कोई नयी विचारधारा की प्रवर्तक या सर्वथा मौलिक है तो निश्चय ही पाठक हिन्दी की पुस्तकें पढ़ने में पूर्वापेक्षा अधिक दिलचस्पी ले सकते हैं।

सहकारिता का प्रश्न

पुस्तकों की बिक्री बढ़ाने के लिए प्रकाशक संघ की ओर से पिछले दिनों 'सहकारिता के आधार पर पुस्तक-विक्रय' विषय पर एक विचार-गोष्ठी दिल्ली में आयोजित हुई थी। गोष्ठी ने एक निष्कर्ष यह भी निकाला था कि प्रकाशक संघ के माध्यम से एक ऐसे सहकार की स्थापना की जाए जो प्रचार-सामग्री संयुक्त रूप से प्रकाशित करके प्रकाशकों तथा विक्रेताओं को दे। गोष्ठी का मत था कि इससे हिन्दी-पुस्तकों का प्रचार-प्रसार उचित रीति से हो सकता है। यह नहीं है कि हिन्दी में ठोस प्रकाशन कतई नहीं हो रहे हैं, परन्तु वास्तविकता यह है कि जो प्रकाशन हो भी रहे हैं, उनकी सूचना जनता तक समुचित रूप से नहीं पहुँच पा रही है। ४४ करोड़ आदमियों का देश हो गया है। प्रकाशक-वर्ग इतना समृद्ध नहीं है कि वर्तमान वैज्ञानिक विज्ञापन प्रणाली पर धनराशि व्यय कर सके। ऐसी स्थिति में सहकारिता ही एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा प्रकाशक वर्ग अपनी समस्या का हल खोज सकता है। पाठ्य-पुस्तकें तो अपने-आप बिकती हैं, परन्तु हमें साहित्यिक प्रकाशनों की बिक्री की व्यवस्था की ओर ध्यान देना है। मैं पाठ्य-पुस्तक प्रकाशकों से अनुरोध करूंगा कि वे जो रुपये पाठ्य-पुस्तकों से कमाते हैं, उसका कुछ अंश साहित्यिक प्रकाशनों में लगाएँ और साहित्यिक प्रकाशनों के प्रचार-प्रसार में योग दें। जनहित की दृष्टि से यह भी आवश्यक है कि प्रकाशित होने वाली पाठ्य-पुस्तकों का मुद्रण तथा विषय-स्तर हम ऊँचा उठायें, ताकि आगे आने वाली हमारी पीढ़ी उचित रूप से शिक्षा प्राप्त कर सके और उसकी रुचि साहित्य की ओर बढ़े।

समाचार-पत्र सम्पादकों तथा व्यवस्थापकों से

दो शब्द मुझे समाचार-पत्रों के सम्पादकों तथा व्यवस्थापकों से भी कहने हैं। आज के युग में समाज में पत्र-पत्रिकाओं का महत्त्वपूर्ण स्थान है। साहित्य के प्रचार के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि प्रत्येक समाचार-पत्र में पुस्तकों की समालोचना के लिए स्तम्भ रहे और पुस्तकों के विज्ञापन की निर्धारित दरों में पचास फीसदी कमी की

जाए। मुझे यह बताते हुए प्रसन्नता होती है कि भारत के कई समाचार-पत्रों ने अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ के अनुरोध पर समालोचना के लिए स्तम्भ की स्थापना की है और अपने विज्ञापन की दरों में काफी कमी भी की है। मैं अन्य समाचार-पत्रों के व्यवस्थापकों तथा सम्पादकों से अनुरोध करूँगा कि वे इस दिशा में प्रकाशक संघ की सहायता करें।

पुस्तकों पर टेण्डर-प्रणाली क्यों ?

इस युग में जब कि दुनिया के किसी भी प्रबुद्ध देश में पुस्तकों पर टेण्डर प्रणाली नहीं है, भारत में प्रकाशक संघ के अनवरत प्रयत्नों के बावजूद भी यह प्रणाली पुस्तकों के लिए लागू है। गुड़ गोवर एक ही भाव में तौला जाए तो चल नहीं सकता। साहित्य, साहित्य है। इसमें मोल-भाव बहुत ही बुरी चीज है। प्रकाशक संघ ने इस मोल को खत्म करने के लिए 'नेट बुक एग्रीमेण्ट' कायम किया है जो कि बहुत ही सफल हुआ। आज सारे भारत में हिन्दी की पुस्तकों को आप कहीं भी जाइये एक ही कीमत पर प्राप्त कर सकेंगे। यदि टेण्डर प्रणाली खत्म हो जाय तो निश्चय है कि सत्साहित्य के प्रकाशन को प्रोत्साहन मिल सकेगा और अच्छे साहित्य के प्रकाशन करने की ओर प्रकाशकों का और अधिक झुकाव होगा।

पंचवर्षीय योजनाएँ और प्रकाशक

देश में पंचवर्षीय योजनाएँ चल रही हैं। द्वितीय पंचवर्षीय योजना समाप्त हो चुकी है, तृतीय का चरण पड़ चुका है, परन्तु हमें दुःख है कि इन पंचवर्षीय योजनाओं से सहयोग करने के लिए प्रकाशकों को कभी भी आमन्त्रित नहीं किया गया। मेरा अपना खयाल है कि जिस तरह सरकार ने समाचार-पत्रों का महत्त्व समझा है, यदि उसी तरह से उसने प्रकाशकों का सहयोग प्राप्त किया होता तो योजनाओं के प्रचार-प्रसार में काफ़ी गति आ सकती थी। मैं प्रकाशकों की ओर से सरकार को यह विश्वास दिला सकता हूँ कि इन योजनाओं की सफलता में हमारा सहयोग माँगा गया तो वह सहर्ष दिया जाएगा।

इनरटाइटिलों में अंग्रेज़ी नामों का प्रयोग

पिछले वर्ष जब मैं यूनेस्को द्वारा आयोजित दक्षिण-पूर्वी एशिया के प्रकाशकों की विचार-गोष्ठी में सम्मिलित होने गया था तो मुझे इस बात की आवश्यकता प्रतीत हुई कि हिन्दी-प्रकाशनों का परिचय हमारे पड़ोसी देशों को प्राप्त होना चाहिए। लोगों का सुझाव था कि भारतीय भाषाओं के प्रकाशनों के इनरटाइटिल में यदि हम लोग पुस्तकों का विषय तथा नाम अंग्रेज़ी में छाप दिया करें तो लोगों को यह जानने की सुविधा होगी कि अमुक विषय पर अमुक पुस्तक प्रकाशित हुई है। मेरा खयाल है कि यह एक साधारण-सी बात है और प्रकाशक वर्ग इस सुझाव को स्वीकार करेगा।

उन्नत लेखक-प्रकाशक सम्बन्ध

लेखक-प्रकाशक सम्बन्ध प्रकाशक संघ की स्थापना के बाद काफ़ी उन्नत और सुदृढ़ हुआ है। मैं प्रकाशकों और लेखकों से अनुरोध करूँगा कि वे आपसी सम्बन्ध बहुत ही सद्भावपूर्ण रखें। प्रकाशकों का यह इतिकर्त्तव्य है कि वे लेखकों को समुचित पारिश्रमिक दें और लेखकों को इस बात के लिए सचेष्ट रहना चाहिए कि वे जो सामग्री जनता के लिए प्रस्तुत करें, वह ठोस हो और वस्तुतः उपादेय भी। चूँकि मैं लेखक भी रह चुका हूँ इसलिए कह सकता हूँ कि जो सुविधाएँ पहले प्रकाशक लेखकों को दिया करते थे, भारत की स्वतन्त्रता के बाद उसमें महान् क्रान्ति हुई है और आज का प्रकाशक यह समझने लगा है कि पुस्तक-प्रकाशन में लेखक और प्रकाशक दोनों का ही समान योग है। मुझे आशा है, दिनोत्तर हमारा सम्बन्ध और दृढ़तर होगा और संयुक्त रूप से हम साहित्य की सेवा करते रहेंगे।

मुद्रण-मशीनरी का आयात

मैंने ऊपर जिक्र किया है कि सुमुद्रित पुस्तकों की नितान्त आवश्यकता है। देश में अच्छी पुस्तकें प्रकाशित करने के लिए अभी मशीनरी की कमी है। सरकार को चाहिए कि वह वास्तविक उपभोक्ता प्रकाशकों को मशीनें आयात करने के लिए लाइसेंस बिना किसी रोक-टोक के दे। इस तरह की मशीनरी से हमारे विदेशी मुद्रा-कोश में कोई विशेष कमी नहीं होगी, क्योंकि ये मशीनें बहुत अधिक मूल्य की नहीं होतीं।

(शेष पृष्ठ ४१५ पर)

अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ के

छठे अधिवेशन में स्वीकृत प्रस्ताव

निम्नलिखित सात प्रस्ताव संघ के पटना में हुए अधिवेशन में १७ अप्रैल १९६१ को स्वीकृत किये गए।

१. नेट बुक समझौता

अध्यक्ष श्री कृष्णचन्द्र बेरी द्वारा प्रस्तुत अधिवेशन का मुख्य प्रस्ताव जो सर्व-सम्मति से स्वीकृत हुआ।

"अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ का यह छठा अधिवेशन संघ द्वारा प्रचारित बिक्री के नियमों और व्यवस्था में आज की व्यापक ढिलाई के लिए, जिसकी ओर कार्य-समिति ने अपने एक प्रस्ताव द्वारा अधिवेशन का ध्यान आकृष्ट किया है, खेद प्रकट करता है और इसकी अविलम्ब रोक-थाम के लिए हिन्दी के प्रकाशकों और पुस्तक-विक्रेताओं से अपील करता है। संघ का यह विश्वास और निर्णय भी है कि पुस्तकों की बिक्री में समुचित व्यवस्था के लिए ऐसे विक्रेताओं का पंजीबन्धन हटा दिया जाए जो कि वास्तव में पुस्तक-विक्रेता नहीं हैं। जो प्रकाशक अभी तक संघ से सम्बद्ध नहीं हुए हैं और बिक्री-सम्बन्धी व्यवस्था में बँधने को तैयार नहीं हैं उन्हें संघ से सम्बद्ध करने के प्रयत्न किए जाएँ और संघ से असम्बद्ध प्रकाशकों से संघ के सदस्य और पंजीबद्ध पुस्तक-विक्रेता व्यापार-व्यवहार न रखें, तथा जो प्रकाशक और पुस्तक-विक्रेता नियमों का उल्लंघन करें उनके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही की जाए। यह अधिवेशन कार्य-समिति को इस प्रस्ताव के कार्यान्वियन का आदेश देता है।

इसके साथ ही अब तक जिन संस्थाओं के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही हुई है, संघ उनसे नियमों के पालन की आशा करता है। उनके पुनः सदस्य बनने के आवेदन पर संघ की कार्य-समिति सहर्ष विचार करेगी।"

२. टेण्डर-प्रथा

अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ का यह छठा अधिवेशन भारत की केन्द्रीय और प्रादेशिक सरकारों से साग्रह अनुरोध करता है कि शासन के शिक्षा, पंचायत, पुस्तकालय आदि विभिन्न विभागों द्वारा खरीद की जाने वाली पुस्तकों के लिए टेण्डर-प्रथा समाप्त कर दी जाए। व्यवसाय और समाज के सम्मिलित हितों को ध्यान में रखते हुए संघ ने बिक्री-सम्बन्धी जो नियम प्रचारित किए हैं, ये विभाग उनके अनुसार पुस्तकों की खरीद का आदेश जारी करें और अपने अधीन अन्य उप-विभागों को भी इसकी सूचना दें।

"इस अधिवेशन का यह अनुरोध भी है कि हिन्दी-पुस्तकों की थोक और खुदरा खरीद संघ द्वारा नियत कमीशन तथा सुविधाओं पर संघ से पंजीबद्ध स्थानीय पुस्तक-विक्रेताओं से की जाए। स्थानीय विक्रेताओं से पूर्ति न हो सकने की स्थिति में ही आर्डर बाहर के विक्रेताओं अथवा प्रकाशकों को भेजे जाया करें।"

प्रस्तावक : गोकुलदास धूत, इन्दौर
समर्थक : श्री सम्पूर्णानन्द, वाराणसी

३. विधान संशोधन

"अखिल भारतीय हिन्दी-प्रकाशक संघ का यह छठा अधिवेशन निश्चय करता है कि विधान की सम्बन्धित धाराओं का संशोधन करते हुए संघ के प्रकाशक-सदस्यों की वार्षिक सदस्यता का शुल्क रु० ५०.०० से घटाकर रु० २०.०० कर दिया जाए तथा प्रवेश-शुल्क को

रु० २५.०० से घटाकर रु० १०.०० कर दिया जाए।"

प्रस्तावक : श्री रामसकलसिंह, कलकत्ता
समर्थक : श्री बलदेवदास अग्रवाल, कलकत्ता

४. संघ के मुख-पत्र का प्रकाशन

"अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ का यह अधिवेशन निश्चय करता है कि संघ के मुखपत्र को प्रकाशित करने के इसके पहले प्रस्ताव को कार्यान्वित किया जाए। अब यह पत्र, जिसका नाम 'हिन्दी प्रकाशक' हो, श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन के सम्पादकत्व में कलकत्ता से प्रकाशित किया जाए।"

प्रस्तावक : श्री पुरुषोत्तमदास मोदी, गोरखपुर
समर्थक : श्री सम्पूर्णानन्द, वाराणसी

५. पाठ्यक्रमों के लिए पुस्तकों की माँग

"अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ का यह अधिवेशन पाठ्यक्रमों को नियत करने वाले एवं पुस्तकों को खरीदने अथवा खरीद के लिए स्वीकृत करने वाले केन्द्रीय अथवा प्रादेशिक अधिकारियों से अनुरोध करता है कि वे पुस्तकों की इस दृष्टि से आवश्यक कम-से-कम प्रतियों की माँग किया करें। संघ का विचार है कि इन अधिकारियों को प्रकाशकों से प्राप्त प्रतियों को अपने सदस्यों और समितियों में घुमा-फिरा लेना चाहिए, न कि प्रत्येक सदस्य के लिए अलग-अलग प्रति लेनी चाहिए जिससे प्रकाशकों पर अत्यधिक बोझ पड़ता है।

प्रस्तावक : श्री राजकिशोर अग्रवाल, आगरा
समर्थक : श्री रामकृष्ण शर्मा, दिल्ली

संघ के अध्यक्ष श्री कृष्णचन्द्र बेरी द्वारा प्रस्तुत निम्न प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ।

६. राष्ट्रीय पुस्तक समारोह

अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ का यह अधिवेशन संघ द्वारा आयोजित विगत वर्ष के राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह की पद्धति को देश में शिक्षा तथा साहित्य के प्रचार के लिए परमोपयोगी समझता है। अधिवेशन का मत है कि आगामी वर्ष इस समारोह को और भी अधिक धूमधाम से व्यापक रूप में सारे देश में मनाने का आयोजन किया जाए और इस सम्बन्ध में देश की विभिन्न प्रकाशन-संस्थाओं, साहित्यकारों, पत्रकारों, सांस्कृतिक-संस्थाओं, केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों आदि का सहयोग प्राप्त करने का उद्योग किया जाए। अधिवेशन इस सम्बन्ध में श्री रामलालजी पुरी, श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन, श्री ए० के० बोस, श्री वाचस्पति पाठक, श्री मार्तण्डजी उपाध्याय, श्री ओंप्रकाश, पं० जयनाथजी मिश्र, श्री तेजनारायण टण्डन तथा श्री गोकुलदासजी धूत की एक उपसमिति नियुक्त करता है जो राष्ट्रीय पुस्तक समारोह का आयोजन करे। श्री रामलालजी पुरी इस समिति के अध्यक्ष होंगे और श्री ए० के० बोस मन्त्री।

७. निर्यात-व्यवस्था

अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ का यह अधिवेशन भारत सरकार के वाणिज्य मन्त्रालय से अनुरोध करता है कि वह देश से बाहर पुस्तकों के निर्यात को और विदेशी मुद्रा अर्जित करने को प्रोत्साहन देने की योजना में केवल धार्मिक ही नहीं, सभी प्रकार की पुस्तकों के निर्यात का लेखा स्वीकार किया करें।

प्रस्तावक : श्री रामलालजी, दिल्ली
समर्थक : श्री कन्हैयालाल मलिक, दिल्ली

पटना अधिवेशन के निर्देशानुसार, जिसमें संघ के अध्यक्ष को अधिकार दिया गया था कि वह अपनी कार्यकारिणी स्वयं घोषित करे, अध्यक्ष ने निम्न व्यक्तियों को आगामी वर्ष १९६१-६२ के लिए पदाधिकारी व सदस्य घोषित किया है—

अध्यक्ष : श्री कृष्णचन्द्र बेरी (हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी)

उपाध्यक्ष : श्री वाचस्पति पाठक (भारती भण्डार, इलाहाबाद)

" " लक्ष्मीचन्द जैन (भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी)

" " देवनारायण द्विवेदी (ज्ञानमण्डल लि०, वाराणसी)

" " ओंप्रकाश (राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०, दिल्ली)

" " मदनमोहन पांडेय (ज्ञानपीठ प्रा० लि०, पटना)

प्रधान मन्त्री श्री रामलालजी पुरी (आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली)

संयुक्त मन्त्री श्री पुरुषोत्तम मोदी (विश्वविद्यालय प्रकाशन, गोरखपुर)

" " जयनाथ मिश्र (अजन्ता प्रेस लि०, पटना)

" " कन्हैयालाल मलिक (इण्डियन पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली)

कोषाध्यक्ष " श्यामलालजी (एस० चाँद कं०, दिल्ली)

कार्यकारिणी के सदस्य :

श्री दीनानाथ मल्होत्रा (राजपाल एण्ड संस, दिल्ली)
" योगेन्द्रदत्त (भारती साहित्य सदन, दिल्ली)
" बलराज सहगल (नारायणदत्त सहगल एण्ड संस, दिल्ली)
" रामसकल सिंह (अशोक पुस्तक मन्दिर, कलकत्ता)
" कृष्णगोपाल केड़िया (हिन्दी पुस्तक एजेंसी, कलकत्ता)
" गोकुलदास धूत (नवयुग साहित्य सदन, इन्दौर)
" राजकिशोर अग्रवाल (विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा)
श्री रामदत्त सानवी (किताबघर, जोधपुर)
" मैथिलीशरण सिंह (पुस्तक भण्डार, पटना)
" कैलाशनाथ भार्गव (नन्दकिशोर एण्ड संस, वाराणसी)
" उमाशंकर दीक्षित (राष्ट्रीय प्रकाशन मन्दिर, लखनऊ)
" यशोधर मोदी (हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय, बम्बई)

पंजीबद्ध पुस्तक-विक्रेताओं के प्रतिनिधि

श्री रामतीर्थ भाटिया (राजधानी प्रकाशन, दिल्ली)
" चम्पालाल रांका (किताब महल, जयपुर)
" पद्मनाभन (दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास)
" हरिहरनाथ अग्रवाल (रामप्रसाद एण्ड संस, आगरा)
" तेजनारायण टण्डन (हिन्दी साहित्य भण्डार, लखनऊ)
" बलदेवदास अग्रवाल (बम्बई बुकडिपो, कलकत्ता)
" सौभाग्यमल जैन (सुषमा साहित्य मंदिर, जबलपुर)
" बजरंगबली गुप्त (साहित्य सेवक कार्यालय, वाराणसी)

कार्यसमिति के दो रिक्त स्थानों की घोषणा बाद में की जाएगी।

* * *

यहाँ उन प्रकाशकों और पुस्तक-विक्रेताओं की सूची दी जा रही है जिन्होंने अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ के छठे अधिवेशन में उपस्थित रहकर भाग लिया :

श्री लक्ष्मीचन्द जैन, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी।
श्री बैजनाथसिंह 'विनोद', भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी।
श्री देवनारायण द्विवेदी, ज्ञानमण्डल लि०, वाराणसी।
श्री ओमप्रकाश बेरी, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी।
श्री कैलाशनाथ भार्गव, नन्दकिशोर एण्ड सन्स, वाराणसी।
श्री सम्पूर्णानन्द, आनन्द पुस्तक भवन, वाराणसी।
श्री कमलाप्रसाद खत्री, लहरी बुकडिपो, वाराणसी।
श्री कल्याणदास, कल्याणदास ब्रदर्स, वाराणसी।
श्री बद्रीप्रसाद कपूर, साहित्य रत्नमाला कार्यालय, वाराणसी।

श्री बजरंगबली गुप्त, साहित्य सेवक कार्यालय, वाराणसी।
श्री सूर्यबलीसिंह, काशी पुस्तक भण्डार, वाराणसी।
श्री त्रिलोकीनाथ भार्गव, नन्दकिशोर एण्ड ब्रदर्स, वाराणसी।
श्री मोहनदासजी चौखम्भा, विद्याभवन, वाराणसी।
श्री जवाहरलाल, सुभाष पुस्तक मन्दिर, वाराणसी।
श्री उमाशंकर दीक्षित, राष्ट्रीय प्रकाशन मन्दिर, लखनऊ।
श्री तेजनारायण टण्डन, हिन्दी साहित्य भण्डार, लखनऊ।
श्री रामदास मिश्र, हिन्दी प्रचारक मण्डल, लखनऊ।
श्री रामेश्वर तिवारी, नवयुग ग्रन्थागार, लखनऊ।
श्री शिवमूर्तसिंह, अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशन, लखनऊ।
पं० वाचस्पति पाठक, भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद।
श्री गिरधर शुक्ल, आदर्श हिन्दी पुस्तकालय, इलाहाबाद।
श्री सरजू प्रसाद पाण्डेय, छात्र हितकारी पुस्तक माला, इलाहाबाद।
श्री जगदीश शर्मा, किताब महल, इलाहाबाद।
श्री रामलाल, हिन्दी प्रकाशन मन्दिर, इलाहाबाद।
श्री रामलालपुरी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली।
श्री योगेन्द्रदत्त, भारती साहित्य सदन, दिल्ली।
श्री श्यामलालजी, एस० चाँद एण्ड कम्पनी, दिल्ली।
श्री ब्रह्मानन्दजी, सस्ता साहित्य मण्डल, दिल्ली।
श्री ओंप्रकाश, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
श्री कन्हैयालाल मलिक, इण्डियन पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।
श्री बलराज सहगल, नारायणदास सहगल एण्ड सन्स, दिल्ली।
श्री बलदेव साहनी, नवयुग प्रकाशन, दिल्ली।
श्री प्रेमनाथ, सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली।
श्री प्रतापसिंह, रूपकमल प्रकाशन, दिल्ली।
श्री रामतीर्थ भाटिया, राजधानी ग्रन्थागार, दिल्ली।
श्री रामसकलसिंह, अशोक पुस्तक मन्दिर, कलकत्ता।
श्री कृष्णगोपाल केड़िया, हिन्दी पुस्तक एजेन्सी, कलकत्ता।
श्री राधारमण पाण्डेय, भारती पुस्तक मन्दिर, कलकत्ता।
श्री दीनानाथ कश्यप, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, कलकत्ता।
श्री बलदेवदास अग्रवाल, बम्बई बुकडिपो, कलकत्ता।
श्री रामदत्त थानवी, किताबघर, जोधपुर।
श्री पुरुषोत्तम मोदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, गोरखपुर।
श्री गोकुलदास धूत, नवयुग साहित्य सदन, इन्दौर।
श्री के० पी० जैन, वोरा एण्ड कं०, बम्बई।
श्री राजकिशोर अग्रवाल, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
पं० मदनमोहन पाण्डेय, ज्ञानपीठ प्रा० लि०, पटना।
पं० जयनाथ मिश्र, अजन्ता प्रेस प्रा० लि०, पटना।
श्री देवकुमार मिश्र, ग्रन्थमाला कार्यालय, पटना।
श्री मैथिलीशरणसिंह, पुस्तक भण्डार, पटना।
श्री ताराचन्द झा, नोवेल्टी एण्ड कं०, पटना।
श्री भीमसेन, राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०, पटना।
श्री रामशरण यादव, हिन्दी पुस्तक एजेन्सी, पटना।
श्री मथुरा ठाकुर, पटना विश्वविद्यालय प्रकाशन, पटना।
श्री मोहित मोहन बोस, भारती भवन, पटना।
श्री देवेन्द्रकुमार बेनीपुरी, मलयज, पटना।
श्री राजकुमार भार्गव, राष्ट्रीय प्रकाशन मण्डल, पटना।
श्री अखिलेश्वर पाण्डेय, पराग प्रकाशन, पटना।
श्री जगदीश नारायण, युगान्तर प्रकाशन, पटना।
श्री करमसिंह, दिल्ली पुस्तक सदन, पटना।
श्री अशोककुमार, युनाइटेड प्रेस लि०, पटना।
श्री वीरेन्द्रकुमारसिंह, यूनिवर्सिटी बुकडिपो, पटना।
श्री भगतजी, साइण्टिफिक बुक कं०, पटना।
श्री सत्येन्द्र, बिहार ग्रन्थ कुटीर, पटना।
श्री मोतीलाल अग्रवाल, साहित्य निकुञ्ज, डाल्टनगंज, पलामू।
श्री जगन्नाथलाल, विद्यार्थी बुक स्टोर, बेतिया, चम्पारन।
श्री रामानन्द शर्मा, कन्याकुमारी प्रकाशन, दुमका।
श्री विनोदकुमार, पुस्तक महल, आरा।
पं० शीतलप्रसाद मिश्र, एस० पी० मिश्रा एण्ड कं०, आरा।
श्री मुनिराम गुप्त, गुप्ता बुक डिपो, हजारीबाग।
श्री देवीचरन, विद्यार्थी पुस्तक भवन, लहेरिया सराय, दरभंगा।
श्री मधुसूदन दास अग्रवाल, कन्हैयालाल कृष्णदास, लहेरिया सराय, दरभंगा।
श्री योगेन्द्रसिंह, सिनहा बुक डिपो, सहर्षा।

स्थानीय भाषाओं के साहित्य की व्यवस्था

स्टैनली मिलबर्न

पाठ्य-सामग्री के बारे में यूनेस्को के दक्षिण एशिया प्रादेशिक केन्द्र द्वारा कराची से प्रकाशित बुलेटिन के खण्ड २, अङ्क ३ से साभार प्रकाशित।

सामुदायिक विकास की दिशा में जनता की प्रारम्भिक प्रगति के लिए आर्थिक अथवा सामाजिक दशा में सुधार करने के लिए जो दूसरे आन्दोलन चलाये जाते हैं उनके प्रसंग में साक्षरता का क्या महत्त्व है, बहुधा इस बात को ठीक से नहीं समझा गया है। सफलता का रहस्य केवल साक्षरता में ही नहीं है बल्कि इस बात में भी है कि वह साक्षरता किन परिस्थितियों में प्रदान की जाती है। शायद इस स्थिति को संक्षेप में सबसे अच्छे ढंग से उत्तरी रोडेशिया और न्यासालैण्ड के संयुक्त प्रकाशन-ब्यूरो के सञ्चालक ने वर्णन किया है। वह कहते हैं :

"विभिन्न आर्थिक योजनाओं के लिए रकम मंजूर कर देना ही काफ़ी नहीं है, राजनीतिक प्रतिनिधित्व ही काफ़ी नहीं है; सक्रिय रूप से स्वतन्त्र सभ्य समाज का निर्माण करने के लिए इसके अलावा भी किसी चीज की जरूरत होती है, और इस चीज में महत्त्वपूर्ण योगदान इस बात का होता है कि साहित्य के रूप में उन्नत विचारों और विकासवान विचारों में क्या परस्पर क्रिया चल रही है।"

इस बात को अब आम तौर पर स्वीकार किया जाने लगा है कि साक्षरता आन्दोलनों और स्थानीय भाषाओं के साहित्य की व्यवस्था करने पर जो काफ़ी बड़ी रकम खर्च की जाती है और इसके लिए जितना काम किया जाता है उसका यदि प्रतिफल प्राप्त करना हो तो इन प्रयासों को बाक़ी सब बातों से अलग करके नहीं देखा जा सकता। यदि इन्हें स्वतः एक लक्ष्य मान लिया गया तो वे उपयोगी सिद्ध नहीं होंगे। यूनेस्को का अनुमान है (शताब्दी के मध्य में संसार में निरक्षरता, यूनेस्को १९५७) कि १९५० में सारी दुनिया में लगभग ७० करोड़ प्रौढ़ लोग निरक्षर थे, अर्थात् संसार की कुल प्रौढ़ जनसंख्या का लगभग ४६ प्रतिशत भाग। निरक्षरता के सारे मुख्य-मुख्य क्षेत्र एशिया, अफ्रीका, मध्य-पूर्व और दक्षिणी अमेरिका में हैं। निरक्षरता का अर्थ है किसी भाषा को पढ़ने या लिखने की योग्यता का अभाव, परन्तु यदि परिस्थिति को 'व्यावहारिक साक्षरता' की दृष्टि से जाँचा जाए—अर्थात् उस स्तर से जहाँ पर बच्चा चार वर्ष तक स्कूल में पढ़ने के बाद पहुँच जाता है—तो लगभग ७० प्रतिशत लोग 'निरक्षर' निकलेंगे। इस बात का स्पष्ट प्रमाण मिलता है कि निरक्षरता को दूर करने के लिए यह बुनियादी रवैया सर्वोच्च महत्त्व रखता है कि सर्वव्यापी प्राथमिक शिक्षा को ज्यादा-से-ज्यादा क्षेत्र में बढ़ाया जाए। यह काम स्थानीय भाषाओं में होना चाहिए और बढ़ती हुई जनसंख्या के अनुसार स्कूलों की संख्या भी बढ़ती रहनी चाहिए। चूंकि शिक्षा की हर व्यवस्था पर खर्च काफ़ी आता है, इसलिए यह बात ध्यान देने योग्य है कि "किसी भी देश में साक्षरता पर आधारित कौशलों का प्रसार औद्योगिक विकास का परिणाम भी होता है और उसके लिए जरूरी भी।" यूनेस्को द्वारा किये गए इस अध्ययन के अन्त में कहा गया है :

"यह नितान्त आवश्यक है कि प्रौढ़ नव-साक्षरों के लिए पाठ्य-सामग्री तैयार करने की ओर ध्यान दिया जाए। आँकड़ों से और अन्य तरीकों से यह पता चलता है कि अभ्यास न रहने के कारण नव-साक्षर फिर निरक्षर बन सकता है। परन्तु इस परिस्थिति से बचने का सबसे अच्छा उपाय यह है कि जिस प्रौढ़ व्यक्ति को एक बार

पढ़ना-लिखना सिखा दिया गया हो उसे इन कलाओं का अभ्यास करने के उपयुक्त साधन उपलब्ध रहने का आश्वासन रहे ताकि अभ्यास के अभाव में कहीं वह उन्हें भूल न जाए।"

जैसा कि हम आगे चलकर देखेंगे, अलग-अलग टुकड़ों में बँटा होना—भाषा की दृष्टि से, सामाजिक दृष्टि से और भौगोलिक दृष्टि से—साक्षरता की मुहिम चलाने में और इससे भी बढ़कर नियमित रूप से पाठ्य-सामग्री उपलब्ध करने में एक मुख्य बाधा है। इसके मुकाबले १९१७ के बाद सोवियत प्रजातन्त्रों के एकाकार समूह ने, युद्ध और क्रान्ति द्वारा ध्वस्त होने के बावजूद लगभग बीस वर्ष के अन्दर निरक्षरता का उन्मूलन कर दिया। इस सफलता का कारण यह था कि शिक्षा-सम्बन्धी सुधारों के साथ आर्थिक तथा सामाजिक सुधारों के लिए भी सुव्यवस्थित उपाय किये गए, जिसमें इस बात से बड़ी सुविधा हुई कि आर्थिक तथा सांस्कृतिक जीवन दोनों ही पर राज्य-सत्ता का एकाधिकार था। १९४० तक सोवियत संघ की सभी जातियों के लिए स्कूलों में पढ़ाए जाने वाले व्याकरण तैयार कर लिये गए थे। दर्जनों जातियों ने अपनी-अपनी अलग साहित्यिक भाषाएँ बना ली हैं जिनमें हज़ारों पुस्तकें लिखी गई हैं।

स्वाभाविक रूप से रूस और दूसरे देशों की सफलताओं के बीच तुलना की जाती है। यह बात ध्यान में रखना ज़रूरी है कि रूस में "समाज का पूरा ढांचा और जीवन का विकास तथा उसकी पृष्ठभूमि बिलकुल भिन्न है और··· वहाँ ऐसे कठोर तरीके इस्तेमाल किए जा सकते हैं जिनके लिए, उदाहरण के लिए ब्रिटिश नीति अथवा व्यवहार में कोई गुन्जाइश नहीं है। उत्प्रेरणा की समस्या का अध्ययन हर प्रदेश और उसके निवासियों के प्रसंग में अलग-अलग किया जाना चाहिए।" ब्रिटेन के उपनिवेशों में निर्ममतापूर्वक कोई राजनीतिक अथवा आर्थिक व्यवस्था थोपने या प्रभुत्वशाली राजनीतिक सत्ता की विचारधारा के अनुकूल सामाजिक आचरण के नियम लागू करने का कोई सवाल ही नहीं पैदा होता। फिर भी रूसी अनुभव और तरीकों में हमें कुछ सम्भावनाओं का संकेत मिल सकता है, उनसे हम कुछ निष्कर्ष निकाल सकते हैं और स्थानीय भाषाओं में साहित्य उपलब्ध करने की समस्याओं के बारे में अत्यधिक उपयोगी प्रोत्साहन मिल सकता है।

रूसी सफलता का बहुत बड़ा कारण यह था कि वहाँ सरकार की ओर से केन्द्रीय रूप से योजना बनाई गई। गैर-कम्यूनिस्ट राज्य संस्कृति तथा साहित्य के बारे में योजना बनाने के विचार को अच्छा नहीं समझते। इन राज्यों को किसी विचारधारा के प्रति उन्माद द्वारा प्राप्त होने वाली प्रेरणा के बजाय नई संस्कृति की बुनियाद डालने के लिए वैयक्तिक रुचि की अधिक मानवीय—परन्तु अधिक मन्दगामी—प्रेरणाओं का सहारा लेना चाहिए, जिन्हें कभी-कभी आर्थिक अथवा स्वास्थ्य-सम्बन्धी कारणों से दूसरी दिशा में मोड़ना पड़ता है।

इस बात में तनिक भी सन्देह नहीं है कि साक्षरता के लिए और स्थानीय भाषाओं के साहित्य के प्रसार के लिए सबसे प्रबल प्रेरणा राष्ट्रीय स्वतन्त्रता से अथवा उसके मिलने की आशा से प्राप्त होती है। इस बात का बहुत स्पष्ट प्रमाण भारत की घटनाओं में मिलता है। १९३६ में जब कांग्रेस ने पहली बार मन्त्रिमण्डलों का भार सँभाला तो बिहार के शिक्षा-मन्त्री सैयद महमूद ने एक-एक आने में क्राउन अठपेजी दस-दस, बारह-बारह पृष्ठों की विभिन्न विषयों की सौ पुस्तकें हिन्दुस्तानी में छपवाने का प्रबन्ध किया था। परन्तु कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलों के इस्तीफ़ा देने के शीघ्र ही बाद यह योजना त्याग दी गई। इधर पिछले कुछ वर्षों में सबसे अधिक बढ़ावा १९५० में भारत सरकार के शिक्षा-मन्त्रालय की ओर से मिला। श्रीलंका में सभी बड़े-बड़े बौद्ध मन्दिरों के साथ 'पिरिवेण' नामक शिक्षा-संस्थाओं की स्थापना की गई थी। यहाँ बौद्ध भिक्षुओं ने प्रौढ़ लोगों को धर्म, दर्शन और प्राच्य भाषाओं की शिक्षा देने की कोशिश की थी। परन्तु कुछ हद तक विदेशी शासन के कारण और सरकारी कामकाज में विदेशी भाषा के प्रचलन के कारण इन संस्थाओं को उतना महत्त्व नहीं मिल सका जितना कि अन्यथा मिलता। बर्मा में १९३९ में सहकारी अनुवाद कार्यालय की स्थापना की गई थी, पर युद्ध के कारण उसे बन्द कर देना पड़ा। फिर भी युद्ध के दौरान में लगन रखने वाले कुछ साहित्यिक लोगों ने शिक्षा-विभाग के जरिए बर्मी भाषा में पांडुलिपियाँ तैयार करने

का काम जारी रखा, पर इनमें से बहुत ही थोड़ी पुस्तकें प्रकाशित हुईं। १९४७ में स्वतन्त्रता प्राप्त होने के बाद प्रधान मन्त्री ऊनू ने बर्मा अनुवाद सोसायटी की स्थापना की ताकि बर्मी भाषा तथा साहित्य को आधुनिकतम रचनाओं से सम्पन्न किया जा सके और सभी विषयों की पुस्तकें छापकर वितरित की जा सकें। १९५१ के बाद से घाना में जनव्यापी शिक्षा को जो सफलता प्राप्त हुई है उसका मुख्य कारण था स्वतन्त्रता मिलने की सम्भावना और सुशिक्षित नागरिकों की आवश्यकता। उत्तरी नाइजेरिया में प्रौढ़ शिक्षा के क्षेत्र में बिखरे हुए प्रयासों के स्थान पर एक केन्द्रीय योजना के अनुसार काम किया जा रहा है। बारह वर्ष में उत्तरी नाइजेरिया में ७,५०,००० लोगों ने पढ़ना सीख लिया है। इसके अलावा ३०,००,००० अन्य लोगों को पढ़ाया जायेगा। १९५४ तक कक्षाओं में पढ़ाई जाने वाली पुस्तकों में समान शब्द-रचना वाली बीस भाषाओं का प्रयोग किया गया था। विभिन्न स्थानीय भाषाओं के तेरह सम्पादकों ने पठन-पत्र, तीस-तीस पृष्ठ की पुस्तिकाएँ और धार्मिक तथा नैतिक विषयों की नसीहा नामक पत्रिका का प्रकाशन किया।

अंग्रेजी या अरबी को 'स्थानीय भाषाएँ' कहना तर्क-संगत नहीं प्रतीत होता, क्योंकि वे स्वतन्त्र देशों की भाषाएँ हैं। परन्तु फिलीपाइंस, बर्मा, पाकिस्तान, भारत, श्रीलंका इण्डोनेशिया और इस्राइल की भाषाओं के बारे में आप क्या कहेंगे, जो कि सभी नवजात राज्य हैं और सभी ने नई सरकारी अथवा राष्ट्रीय भाषाएँ अपनाई हैं? पहले इन सभी भाषाओं को बिना किसी संकोच के वर्नाकुलर (शाब्दिक अर्थ, 'गुलामों की भाषा') कहा जाता था ताकि उन्हें विदेशी सरकारी भाषा से अलग किया जा सके। अब इस अपमानजनक शब्द 'वर्नाकुलर' का प्रयोग करने से कोई मतलब नहीं निकलता। इस्राइल में प्राचीन हीब्रू भाषा को, जो १९४९ से राष्ट्रीय भाषा है, एक वर्नाकुलर भाषा का रूप दिया जा रहा है। एक पीढ़ी के दौरान में उसे "पुरातन किताबी भाषा से बदलकर, जिसकी शैली बहुत ही आलंकारिक तथा जटिल थी, एक नपी-तुली, यथार्थवादी, आधुनिक भाषा का रूप दिया जा रहा है।" अरबी में भी शास्त्रीय भाषा और आम बोलचालकी भाषा के अन्तर को कम करने की आम कोशिश की जा रही है और "इसके लिए भाषा के शास्त्रीय रूप में सुधार किया जा रहा है ताकि वह सभी स्तरों पर स्कूलों में शिक्षा का माध्यम बन सके।"

शुरू-शुरू में जन-व्यापी साक्षरता के उत्साह में बहुधा यह सोचे बिना ही लोगों को पढ़ना सिखा दिया गया कि लोगों के पढ़ने के लिए क्या सामग्री उपलब्ध है। अब उनके लिए पढ़ना सीख जाने के बाद पढ़ने की सामग्री की तात्कालिक आवश्यकता अधिकाधिक स्पष्ट होती जा रही है। विविध प्रकार के टाइपों के प्रयोग में जो प्रगति हुई है उसके कारण और विभिन्न प्रकार की छोटी आफसेट मशीनों और तेज़ रफ्तार की छपाई के कारण देशी भाषाओं में साहित्य कम कीमत पर छापना अधिक आसान हो गया है। इसलिए यूनेस्को, एशिया तथा संसार के अन्य भागों में 'साहित्यिक कार्यशालाओं' (लिटरेरी वर्कशाप) की स्थापना करके लेखकों तथा अनुवादकों को प्रोत्साहन दे रही है। अन्य संस्थाओं ने यूनेस्को की इस पहलकदमी का अनुसरण

किया है।

परन्तु जनव्यापी संसार के जो आधुनिक साधन हैं उनमें कम मूल्य का साहित्य केवल एक है और जो लोग आर्थिक तथा सामाजिक सुधार के लिए संघर्षरत हैं उनके लिए इस साधन की उपयोगिता को सिद्ध करना होगा। परन्तु यह एक ऐसा काम है जिसे आँकड़ों की सहायता से करना बेहद कठिन है। "हमारे पास इस बात के बारे में प्रायः कोई भी सचमुच ठोस जानकारी प्राप्त नहीं है कि पढ़ने या संचार के दूसरे साधनों का क्या प्रभाव पड़ता है (एल० आशीम—जनव्यापी संचार-सम्बन्धी शोध-कार्य)। पुस्तकालयाध्यक्ष को इस समय की अपेक्षा इस बात की जानकारी कहीं अधिक होनी चाहिए कि विभिन्न प्रकार की छपी हुई सामग्री कितनी कारगर सिद्ध होती है और इस बात की भी कि किन पाठकों पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है और किन पर सबसे कम, और किस प्रकार की विषय-वस्तु का।"

यह जानकारी होने पर पुस्तकालयाध्यक्ष समाज में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका को ज्यादा अच्छी तरह निभा सकता है। इस समय परिस्थिति यह प्रतीत होती है कि लोग क्या पढ़ते हैं, इसका निर्णय करने में सबसे बड़ा हाथ इस बात का होता है कि क्या चीज़ उनकी पहुँच के भीतर है, फिर इस चीज़ का कि वह चीज़ आसानी से पढ़ी जा सकती है कि नहीं और फिर जाकर इस बात का कि उन्हें किस चीज़ में रुचि है। परन्तु यदि प्रकाशक को यह मालूम भी हो कि लोग क्या पढ़ना चाहते हैं, तब भी उसके सामने अलग-अलग बोलियों में, अलग-अलग वातावरण के लिए और पाठकों की अलग-अलग रुचियों के अनुसार विशेष संस्करण प्रकाशित करने की आवश्यकता के रूप में बहुत सी ऐसी कठिनाइयाँ होती हैं जिन्हें आसानी से हल नहीं किया जा सकता।

प्रकाशक, चाहे वे सरकार द्वारा चलाए जाने वाले साहित्य-कार्यालय हों, व्यापारिक ढंग से चलाए जाने वाले प्रकाशन-गृह हों या आर्गेनाइज़ेशन ऑफ़ अमेरिकन स्टेट्स के ढंग के अन्तर्राष्ट्रीय संगठन हों, अब आसानी से इस बात का पता लगा सकते हैं कि संसार के किसी भी भाग में किस प्रकार के प्रकाशनों की आवश्यकता है। उनकी कठिनाई कुछ और होती है। समस्या टेकनीक की नहीं बल्कि संगठन की है। कुछ अन्य आर्थिक कारण भी ऐसे हैं जिन पर विचार किया जाना चाहिए। लैटिन अमरीका के प्रौढ़ लोगों के लिए तैयार की गई बुनियादी पाठ्य-सामग्री की उपयोगिता की जाँच करते समय सेथ स्पाल्डिंग ने इस बात को आधार नहीं बनाया कि उसकी बिक्री कितनी होती है। किताबों में वह कौनसा आकर्षण होता है जिसके कारण नव-साक्षर सस्ते दामों में प्रकाशनों को खरीदने पर तैयार होते हैं ? सरकार की ओर से लगातार बहुत बड़ी-बड़ी रकमें अनुदान के रूप में मिलते रहने के कारण पुस्तकों की 'बिक्री' को कसौटी नहीं बनाया जा सकता और इस हद तक प्रकाशकों को यह अनुमान लगाने में कठिनाई होती है कि आम लोग क्या पढ़ना चाहते हैं। ब्रिटेन की नेशनल बुक लीग के डायरेक्टर जे०ई० मोर्पुर्गो ने, जिन्होंने १९५० में रंगून में नव-साक्षरों तथा नए पाठक-वर्ग के लिए पाठ्य-सामग्री तैयार करने के विषय पर आयोजित प्रादेशिक सेमिनार का संचालन किया था, उन सभी लोगों के विचारों को सार-रूप में प्रस्तुत किया है जिन पर नए पाठक-वर्ग की रुचि बनाए रखने की ज़िम्मेदारी बुनियादी तौर पर है—लेखक, प्रकाशक और चित्रकार। उन्होंने कहा है, "नए पाठक-वर्ग के लिए तैयार की जाने वाली पुस्तकों के लिए सबसे पहली जरूरत इस बात की है कि वे विषय-वस्तु, शैली, सजावट तथा छपाई और मूल्य की दृष्टि से आकर्षक हों और इसके लिए अच्छे पेशेवर प्रकाशकों, मुद्रकों तथा चित्रकारों को प्रशिक्षण तथा प्रोत्साहन देना आवश्यक है। इन पुस्तकों को आम पाठकों के सामने लाने के लिए यह आवश्यक है कि हम प्रचार के तरीके, वितरण के साधन और बिक्री के केन्द्र मालूम करें जो कि संसार के कई हिस्सों में मौजूद नहीं हैं।" जहाँ सरकार के पास पैसा कम है, "वहाँ उतना ही महत्त्व इस बात का है कि सीमित सरकारी पैसा स्कूलों की किताबें मुफ्त देने, स्कूलों के तथा सार्वजनिक पुस्तकालय बनाने और पढ़ने के गुणों का प्रचार करने पर खर्च किया जाए, जितना पुस्तकें प्रकाशित करने के कार्यक्रम पूरा करने का, जिन पर अक्सर बहुत पैसा लगाना पड़ता है।

यदि लोगों पर यह प्रभाव डालने में कि वे क्या पढ़ें,
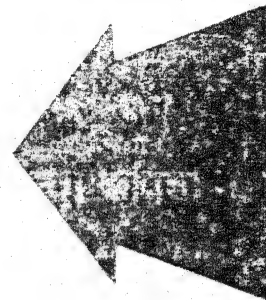
सबसे बड़ा हाथ इस बात का होता है कि क्या चीज उन्हें उपलब्ध है, तो वितरण की व्यवस्था सुनियोजित ढंग पर बनायी जानी चाहिए, उसे निरन्तर अच्छी तरह रखा जाना चाहिए और उसे बढ़ाते रहना चाहिए। कम विकसित क्षेत्रों में पुस्तकों के वितरण के लिए मुख्यत: किताबों की दूकानों पर निर्भर रहना मूर्खता होगी। इससे अधिक सक्रिय किसी चीज की आवश्यकता है। आजकल की आवश्यकताओंको चलते-फिरते पुस्तक-केन्द्र ही पूरा कर सकते हैं। पश्चिमी देशों की आर्थिक परम्पराओं के अनुसार अब भी प्रकाशन और वितरण में बहुधा कोई सम्बन्ध नहीं होता। फलस्वरूप सरकार के पैसे से स्थापित किये गए साहित्यिक कार्यालयों को अपने माल के वितरण के लिए सरकार के किसी दूसरे विभाग पर निर्भर रहना पड़ता है। उदाहरण के लिए घाना में स्थानीय भाषाओं का साहित्य तैयार करने वाले सरकारी कार्यालय को पुस्तकों के वितरण में सहायता देने के लिए समाज-कल्याण विभाग की ओर से तीन मोटर-गाड़ियाँ दी गई हैं। मोटर-गाड़ियाँ स्वत: उससे अधिक उपयोगी नहीं होतीं जितना कि पुस्तक की दूकान पर बैठा हुआ ऐसा कर्मचारी जिसमें बैठे रहने का धीरज तो हो पर ग्राहकों को पुस्तकों से परिचित कराने की समझ न हो। लोगों को पुस्तकें खरीदने पर मजबूर करना पड़ता है, विशेष रूप से यदि ये पुस्तकें चेचक की रोकथाम या सफाई के बारे में हों। "इनमें से हर मोटर गाड़ी पर लाउडस्पीकर लगाना आवश्यक हो गया है ताकि किसी गाँव में पहुँचते ही सबको उसकी उपस्थिति का ज्ञान हो जाए। जहाँ कहीं भी सम्भव हुआ है ये गाड़ियाँ जन-साक्षरता समारोहों में गयी हैं। परन्तु इन अवसरों पर लोगों का रवैया बहुत ही निराशाजनक रहा है। सबसे अधिक सफलता हाट के दिन कस्बों और देहातों में जाने पर मिली है।" मोटर गाड़ियों पर खर्च बहुत आता है, पर जनता के ऐसे सुगठित समूह, जो अपनी रुचि, व्यवसाय या प्रशासनिक संगठन के कारण लगातार एक-दूसरे के सम्पर्क में रहते हों, पुस्तकों के वितरण के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं, क्योंकि वे इनके बारे में कुछ प्रचार भी करेंगे और पुस्तकों तथा पत्रिकाओं की बिक्री का हिसाब-किताब रखने की जिम्मेदारी इन्हें सौंपी जा सकती है। महिला मंडलियाँ, ट्रेड यूनियन, स्कूल और प्रसार कार्यकर्ता सभी सहायता दे सकते हैं। पाकिस्तान में पंजाब और उत्तर-पश्चिमी सीमांत प्रदेश में पुलिस ने पुस्तकें बेचने और लोगों को पढ़ना सिखाने का काम अपने जिम्मे लिया और उन्होंने इस काम को बहुत अच्छे ढंग से किया।

सबसे महत्वपूर्ण समस्या यह रह जाती है कि साक्षरता का अधिकाधिक लाभ उठाने की योजना किस प्रकार बनायी जाए। कम उन्नत क्षेत्रों में सर्वाधिक साक्षरता की ओर धीरे-धीरे बढ़ना सम्भव नहीं है, जैसा कि पश्चिमी योरुप में हुआ था। जो राष्ट्र नये-नये स्वतन्त्र हुए हैं और जिन्हें आधुनिक टेक्नोलॉजिकल उन्नति के साधन उपलब्ध हैं उनके लिए यह जरूरी नहीं रह गया है कि वे 'अलल-टप्प' प्रकाशन करके सफलता प्राप्त करने के लिए जुआ खेलें। साक्षरों के लिए साहित्य उपलब्ध किया जाना चाहिए। प्रौढ़ों को भी उतनी ही सुविधाएँ प्राप्त रहनी चाहिए जितनी उनके बच्चों को हैं। विशेष हितों को ध्यान में रखनेवाली स्वयंसेवक संस्थाओं को और केवल अपनी ही समस्याओं को हल करने में लीन रहने वाले सरकारी विभागों को इस बात की जिम्मेदारी नहीं सौंपी जा सकती कि वे अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए लोगों को पढ़ना-लिखना सिखाएँ। साक्षरता एक दुधारी अस्त्र है और इसलिए आज हर देश की सरकार पर संतुलित तथा सुव्यवस्थित प्रगति का आश्वासन देने की ज्यादा बड़ी जिम्मेदारी है। संकटमय स्थिति का सामना करने के लिए और प्रचार-कार्य के लिए रेडियो अधिक उपयुक्त है। साक्षरता का उद्देश्य है मनुष्य को सर्वांगीण शिक्षा देना। हाँ, सरकार को इस बात का पक्का प्रबन्ध करना चाहिए कि उसकी जनता सभ्य राष्ट्रों के बीच अपना उचित स्थान ग्रहण कर सके। स्थानीय भाषाओं का साहित्य तैयार करने वाले कार्यालयों तथा संस्थाओं की आवश्यकता स्पष्ट है, परन्तु ये सरकारी छापेखाने का विस्तृत रूप न हों जो केवल सरकारी आदेश और सूचनाप्रद पर्चे छापकर संतोष कर लें। जब तक सफल, समाजोपकार की भावना रखने वाले, संवेदनशील प्रकाशकों तथा पुस्तक-विक्रेताओं की स्थापना न हो जाए, तब तक एक ऐसे कार्यालय की आवश्यकता होगी जो सरकारी और व्यापारिक प्रकाशन-संस्थाओं के

बीच की कड़ी हो। केवल ऐसा कार्यालय ही प्राविधिक ज्ञान और प्रकाशन-सम्बन्धी अनुभव अथवा 'शौक' के बीच आवश्यक सम्बन्ध स्थापित कर सकेगा। केवल ऐसा कार्यालय ही साहित्य तैयार करने की सभी समस्याओं को हल करने की निरन्तर कोशिश करने वाली उचित व्यवस्था प्रदान कर सकता है।

निरक्षरता के लगभग सभी क्षेत्रों में अब इस प्रकार के कार्यालयों की स्थापना हो चुकी है। उनका कार्य-क्षेत्र और उनके काम का आकार उनके प्रदेश की आवश्यकताओं तथा साधनों के अनुसार अलग-अलग है। इनमें बर्मा ट्रांसलेशन सोसायटी ने जितना बड़ा लक्ष्य अपने सामने रखा है या जितनी अधिक सफलता उसे मिली है, उतनी शायद किसी और को नहीं। बर्मा एक-भाषी देश है, इसलिए काफ़ी अधिक प्रतियों के संस्करण छापे जा सकते हैं।

अन्त में, इस क्षेत्र में इस प्रकार के अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के अतिरिक्त भाषा-सम्बन्धी शोधकार्य में संसार के अधिक उन्नत देशों की उच्च शिक्षा की संस्थाओं से बहुत सहायता की आशा की जा सकती है। सोवियत संघ में पूर्वी भाषाओं की पुस्तकें छापने में कोई कठिनाई नहीं होती और मास्को में विज्ञान अकादमी की इंस्टीच्यूट ऑफ़ ओरिएण्टल स्टडीज के लिए एक विशेष प्रकाशन गृह की स्थापना की गई है। २ जून १९५९ के **लन्दन टाइम्स** में नेटो के सभी सदस्य देशों के प्रतिनिधियों द्वारा तैयार की गई एक रिपोर्ट का हवाला दिया गया है जिसमें एशियाई भाषाओं के अधिक व्यापक ज्ञान की आवश्यकता पर जोर दिया गया है—प्राच्य-ज्ञान के विद्वान् भी अब शास्त्रीय ज्ञान की अपेक्षा आधुनिक ज्ञान पर अधिक जोर देने लगे हैं, संस्कृत की अपेक्षा हिन्दी पर अधिक जोर दिया जा रहा है। अमरीकी विद्वान् इस बात से चिन्तित हैं कि उच्च शिक्षा की किसी भी अमरीकी संस्था में कम-से-कम पचास ऐसी भाषाएँ पढ़ाने की कोई व्यवस्था नहीं है जिनमें से हर एक को कम-से-कम बीस लाख लोग बोलते हैं। इनमें से चौदह भाषाएँ तो ऐसी हैं जिन्हें एक करोड़ से लेकर चार करोड़ बीस लाख लोग तक बोलते हैं।

(पृष्ठ ४०३ का शेष)

राजनीति का दूषित प्रभाव

पहले राजनीति के दायरे में ही साम्प्रदायिकता, जातीयता और प्रान्तीयता थी। मुझे आज यह कहते हुए दुःख हो रहा है कि प्रकाशकों के बीच भी प्रान्तीयता के विष-बीज का वपन किया जा रहा है। मेरे पास समाचार आते हैं कि अमुक प्रान्त के प्रकाशकों ने अमुक राज्य के शिक्षा विभाग को लिखा है कि राज्य के ही प्रकाशकों को संरक्षण दिया जाय। जन-मानस को दीप्त करने वाले प्रकाशक बन्धुओ, यदि आपने राजनीति की इस गन्दी चीज का सहारा लिया तो देश का क्या होगा? परमात्मा के नाम पर इन चीजों से दूर ही रहिए। हम सारे भारत के हैं, हम सारे विश्व के हैं और हमारी सीमा अनन्त है। राजनीति का दूसरा चक्र प्रकाशकों पर है, विदेशी सहायता स्वीकार करना। मेरा संकेत लोग स्वयं समझ लें। मैं यही अनुरोध करूँगा कि चन्द रुपयों के लिए प्रकाशक दलगत राजनीति में न जायँ तथा ऐसे प्रकाशनों से बाज आएँ जो कि उन्हें रुपये देकर और खरीदकर कराये जाते हैं।

श्रद्धा-निवेदन

अन्त में मैं हिन्दी के उन प्रकाशकों के प्रति श्रद्धा-निवेदन करता हूँ, जिन्होंने हिन्दी-प्रकाशन की नींव डाली है। ऐसे लोगों में स्वर्गीय सर्वश्री महादेव सेठ, मुंशी नवलकिशोर, रामकृष्ण वर्मा, गोपालराम गहमरी, चिन्तामणि घोष, राधामोहन गोकुलजी, रामलाल वर्मा, नाथूराम प्रेमी, मूलचन्द अग्रवाल, पद्मराज जैन, गणेशशंकर विद्यार्थी, महाशय राजपाल, नारायणप्रसाद अरोड़ा, बैजनाथ केडिया, शिवनारायण मिश्र तथा हमारे बीच आज भी उपस्थित राष्ट्रकवि मैथिलीशरणजी गुप्त, श्री नारायणदत्त सहगल, श्री निहालचन्द वर्मा, श्री देवनारायण द्विवेदी, पं० मार्तण्ड उपाध्याय, श्री महावीर प्रसादजी पोद्दार, श्री जीतमल लूणिया, पं० वाचस्पति पाठक, श्री रायकृष्णदासजी, श्री रामलालजी पुरी आदि स्मरणीय हैं।

मैं आप लोगों को पुनः धन्यवाद देता हूँ जो आपने धैर्यपूर्वक मेरे वक्तव्य को सुना और प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि आप लोगों की आशा के अनुकूल सिद्ध हो सकूँ। शुभमस्तु।

आलोचना : निबन्ध

हिन्दी उपन्यास डॉ० सुषमा धवन द्वारा लिखित उनका पंजाब यूनिवर्सिटी द्वारा पी-एच० डी० उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबन्ध है। इस उपन्यास में लेखिका ने प्रेमचन्द तथा उत्तर-प्रेमचन्द-काल (१९५५ तक) के हिन्दी उपन्यासों की विस्तृत समीक्षा की है। ग्रन्थ को सुविधा की दृष्टि से लेखिका ने विषय-प्रवेश, सामाजिक उपन्यास, व्यक्तिवादी उपन्यास, मनोविश्लेषणवादी उपन्यास, समाजवाद उपन्यास, ऐतिहासिक उपन्यास और उपसंहार आदि सात अध्यायों में विभक्त किया है। इस ग्रन्थ की विशेषता यह भी है कि यह जहाँ गम्भीर पाठकों को हिन्दी-उपन्यासों की सर्वांगीण समीक्षा प्रस्तुत करता है, वहाँ साधारण-से-साधारण स्तर के उपन्यास-प्रेमी पाठक भी इससे लाभान्वित हो सकेंगे। परिशिष्ट में दी गई पुस्तक-सूची को देखने से यह भलीभाँति निश्चित हो जाता है कि इस ग्रन्थ के लिखने में लेखिका को पर्याप्त परिश्रम करना पड़ा होगा। हिन्दी के समीक्षा-साहित्य में इस ग्रन्थ से जो अभिवृद्धि हुई है, वह सर्वथा अनन्य और स्पृहणीय है। डिमाई साइज़ के ४०० पृष्ठ के इस सजिल्द ग्रन्थ का प्रकाशन **राजकमल प्रकाशन, दिल्ली** ने किया है और यह ११ रुपये में प्राप्य है।

* * *

प्रेमचन्द और गांधीवाद में श्री रामदीन गुप्त ने प्रेमचन्द-साहित्य का एक नवीन दृष्टिकोण से वैज्ञानिक और शोध-पूर्ण अध्ययन प्रस्तुत करके उसमें विवेचित गांधीवाद का तटस्थ विवेचन किया है। इस ग्रन्थ की विशेषता यह है कि इसमें लेखक ने मात्र अपनी साहित्यिक प्रतिभा को ही प्रकट नहीं किया, प्रत्युत राजनीति और साहित्य की सूक्ष्म विवेचना भी प्रस्तुत की है। प्रेमचन्द-साहित्य के अध्येताओं के लिए यह पुस्तक सर्वथा पठनीय और संग्रहणीय है। राजनीतिक चेतना से प्रसूत प्रेमचन्द की सारी ही रचनाओं का विशद अध्ययन लेखक ने इस ग्रन्थ में प्रस्तुत किया है। अन्त में 'परिशिष्ट' के अन्तर्गत डॉ० रामविलास शर्मा का एक पत्र भी दिया गया है, जिससे इस ग्रन्थ की पृष्ठभूमि का आभास होता है। परिशिष्ट दो में प्रेमचन्द की सब रचनाओं की तालिका भी प्रकाशन-तिथि सहित दे दी गई है, जो सर्वथा उपयोगी है। सहायक ग्रन्थों और पत्र-पत्रिकाओं की तालिका को देखकर ऐसा आभास होता है कि लेखक ने इस ग्रंथ को लिखने में पर्याप्त परिश्रम किया है। डिमाई साइज़ के ३२८ पृष्ठ का यह सजिल्द ग्रन्थ **हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित हुआ है और बारह रुपये पचास नये पैसे में प्राप्तव्य है।

* * *

रेडियो वार्ता-शिल्प में श्री सिद्धनाथ कुमार ने रेडियो-वार्ताओं की कला के सम्बन्ध में ऐसी उपयोगी सामग्री प्रस्तुत की है, जो प्रत्येक साहित्य-प्रेमी और साधारण पाठक दोनों के लिए उपादेय तथा पठनीय है। पुस्तक को प्रामाणिक और रोचक बनाने के लिए पुस्तक में यत्र-तत्र लेखक ने देशी-विदेशी अनेक अधिकारी व्यक्तियों के विचारों के उद्धरण भी दे दिए हैं, जिससे इसकी उपादेयता और भी बढ़ गई है। 'रेडियो वार्ता' की कला के सैद्धांतिक तथा व्यावहारिक दोनों पक्षों पर इस पुस्तक से पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। **भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी** की ओर से प्रकाशित क्राउन साइज़ के १३२ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक दो रुपये में प्राप्त की जा सकती है।

* * *

आधुनिक हिन्दी हास्य-व्यंग्य : श्री केशवचन्द्र वर्मा द्वारा संपादित हिन्दी के प्रतिनिधि हास्य-व्यंग्यपरक कुछ लेखों का संकलन है। इसमें जहाँ सर्वश्री बालमुकुन्द गुप्त, बालकृष्ण भट्ट और प्रताप नारायण मिश्र-जैसे पुराने लेखकों के 'माई लार्ड', 'वकील' और 'दाँत' शीर्षक मनोरञ्जक लेख संकलित हैं वहाँ सर्वश्री अन्नपूर्णानन्द, अमृतलाल नागर, कृष्णदेव प्रसाद गौड़, 'बेढब' आदि हिन्दी के आधुनिक

हास्य-लेखकों की रचनाएँ भी समाविष्ट की गई हैं। कुछ हलकी और सामान्य रेडियो-वार्ताएँ भी इस संग्रह की शोभा बढ़ा रही हैं। अच्छा होता कि यदि सम्पादक कुछ व्यापक दृष्टिकोण अपनाकर हिन्दी के दूसरे हास्य-लेखकों की रचनाएँ भी इसमें समाविष्ट करते। **भारतीय ज्ञान-पीठ, वाराणसी** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज़ के २५६ पृष्ठ की यह पुस्तक चार रुपये में प्राप्य है।

* * *

हिन्दी नव-लेखन में श्री रामस्वरूप चतुर्वेदी ने समसामयिक साहित्य का मूल्यांकन प्रस्तुत किया है। विगत पन्द्रह वर्षों के हिन्दी साहित्य को 'नया' विशेषण से क्यों अभिषिक्त किया गया, इसका भी सर्वांगीण विवेचन लेखक ने इसमें किया है। पुस्तक को लेखक ने दो खंडों में विभाजित करके विषय को प्रस्तुत करने की दृष्टि से कई छोटे-छोटे अध्यायों के रूप में निबन्ध लिखे हैं। पिछले ८-१० वर्ष में हिन्दी-साहित्य में जो नई चिन्तन-प्रक्रिया प्रारंभ हुई है और साहित्य के प्रत्येक क्षेत्र में जो नए प्रयोग हुए हैं, उन सबका विस्तृत ब्यौरा पाठकों को इस पुस्तक में मिलेगा। क्राउन साइज़ के २४८ पृष्ठ के इस ग्रन्थ का प्रकाशन **भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी** ने किया है और यह चार रुपये में मिल सकती है।

* * *

हिन्दी साहित्य और उसकी प्रवृत्तियाँ नामक पुस्तक में डॉ० गोविन्दराम शर्मा ने हिन्दी-साहित्य के आरम्भ से लेकर आजतक के सभी युगों से सम्बन्धित प्रमुख साहित्यिक विषयों, समस्याओं तथा प्रवृत्तियों पर समुचित प्रकाश डाला है। पुस्तक को सुविधा की दृष्टि से लेखक ने १. हिन्दी साहित्य का आदि-काल, २. हिन्दी साहित्य का भक्ति-काल, ३. हिन्दी-साहित्य का रीति-काल, और ४. हिन्दी-साहित्य का आधुनिक काल आदि विभागों में विभक्त करके, उनके अन्तर्गत विभिन्न शीर्षकों में हिन्दी-साहित्य के इतिहास के प्रायः सभी पक्षों पर व्यापक प्रकाश डाला है। प्रारम्भ में हिन्दी भाषा की उत्पत्ति और विकास पर भी विशद विचार किया गया है। क्राउन साइज़ के ७८४ पृष्ठ के इस ग्रन्थ का प्रकाशन **हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली** ने किया है और यह नौ रुपये पचास नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

कविवर प्रसाद में श्री राजेन्द्र मोहन ने प्रसाद के व्यक्तित्व, कृतित्व एवं दार्शनिक विचारों का प्रश्नोत्तर-रूप में विशद अध्ययन प्रस्तुत किया है। पुस्तक की भूमिका में श्री फूलचन्द जैन, 'सारंग' ने यह ठीक ही लिखा है कि पुस्तक की रोचक और आकर्षक शैली, छात्रों के अध्ययन को और भी अधिक सुगम और स्पष्ट बनाएगी। **हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज़ के २३८ पृष्ठ की यह पुस्तक दो रुपये पचास नए पैसे में प्राप्य है।

* * *

साहित्य का धर्म में आचार्य विनोबा भावे के सान्निध्य में अमृतसर में हुई उस गोष्ठी में दिये गए विचारों को संकलित किया गया है, जो वहाँ पर ११-१२ नवम्बर १६५६ को विभिन्न भारतीय भाषाओं के साहित्यकारों ने प्रकट किए थे। इस गोष्ठी में भारत की विभिन्न भाषाओं का लगभग ३० से ऊपर साहित्यकार सम्मिलित हुए थे। इस पुस्तक में विनोबा और दादा धर्माधिकारी के अतिरिक्त सर्वश्री जैनेन्द्रकुमार, रामधारीसिंह 'दिनकर', मामा वरेरकर, डॉ॰ नगेन्द्र, अनन्तगोपाल शेवड़े, समरेन्द्रनाथ वसु ठाकुर, अप्पाराव, गुरमुखसिंह मुसाफिर, राजगोपालन् और सेठ गोविन्ददास के विचार संकलित हैं। यह पुस्तक साहित्य के गम्भीर अध्येताओं और साधारण स्तर के छात्रों—दोनों के लिए समान रूप से उपयोगी है। क्राउन साइज़ के ८० पृष्ठ की यह पुस्तक **अखिल भारतीय सर्वसेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी** द्वारा प्रकाशित हुई है और पचास नये पैसे में उपलब्ध हो सकती है।

* * *

साहित्य लहरी नामक इस पुस्तक में श्री प्रभुदयाल मीतल ने प्रसिद्ध सन्त-कवि सूरदास के प्रख्यात काव्य के विषय में अत्यन्त खोजपूर्ण सामग्री प्रस्तुत की है। इसमें श्री मीतल ने प्रामाणिक पाठ, पाठान्तर, शब्दार्थ, भावार्थ, प्रसंग, काव्यांग, विवेचन, बोधपूर्ण टिप्पणी, परिशिष्ट, अनुक्रमणिकाएँ एवं आलोचनात्मक बृहद् भूमिका प्रस्तुत की है। इसकी प्रस्तावना में डॉ॰ धीरेन्द्र वर्मा ने यह ठीक ही लिखा है—"इधर अनेक वर्षों से 'साहित्य लहरी' का कोई भी संस्करण विद्यार्थियों को उपलब्ध नहीं था। इस संस्करण के प्रकाशन से यह अभाव दूर हो सकेगा।"

डिमाई साइज़ के ३८० पृ० की यह पुस्तक **साहित्य संस्थान, मथुरा** ने प्रकाशित की है और छः रुपए में प्राप्य है।

* * *

प्रतिभा साधना मराठी के लेखक श्री ना० सी० फड़के की विख्यात कृति का हिन्दी अनुवाद है। अनुवादक हैं श्री श्रीपाद जोशी। इस पुस्तक का प्रथम खण्ड जहाँ कवि-शिक्षा, और ललित रचना-शिक्षा की बातों से युक्त है और लेखकों के लिए उपयोगी है, वहाँ द्वितीय खण्ड साहित्य के विद्यार्थियों के लिए भी लाभप्रद है। साहित्य के प्रायः सभी सैद्धान्तिक पक्षों पर इस पुस्तक में प्रकाश डाला गया है। समीक्षा-शास्त्र के ग्रन्थों में इस पुस्तक के प्रकाशन से एक नई अभिवृद्धि हुई है। यदि पुस्तक का नाम विषयानुरूप होता तो और भी अच्छा था। आशा है प्रकाशक अगले संस्करण में इस सुझाव का आदर करेंगे। क्राउन साइज़ के २२० पृष्ठ की इस सजिल्द पुस्तक का प्रकाशन **वीनस प्रकाशन, पूना** की ओर से हुआ है और यह पाँच रुपये में प्राप्त हो सकती है।

* * *

उपन्यास

ग्यारह सपनों का देश : हिन्दी-साहित्य का कदाचित् पहला सहयोगी उपन्यास है। इसमें सर्वश्री धर्मवीर भारती, उदयशंकर भट्ट, रांगेय राघव, अमृतलाल नागर, इलाचन्द्र जोशी, राजेन्द्र यादव, मुद्राराक्षस, लक्ष्मीचन्द्र जैन, प्रभाकर माचवे और कृष्णा सोबती आदि दस लेखकों ने एक स्वप्न को कल्पना और शैली की अनेक रंगीनियाँ दी है। साथ ही कुछ लेखकों ने 'सृजन की समस्याएँ' खण्ड में अपनी रचना प्रक्रिया' के सम्बन्ध में भी रोचक प्रकाश डाला है। इस उपन्यास से निश्चय ही 'हिन्दी के उपन्यास-साहित्य' में एक नए अध्याय का सूत्रपात हुआ है। **भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी** की ओर से प्रकाशित २८२ पृष्ठ के इस सजिल्द उपन्यास का मूल्य चार रुपये है।

* * *

मोती : आचार्य चतुरसेन शास्त्री का नवीनतम और अन्तिम उपन्यास है। इसमें लेखक ने 'मोती' के रूप में एक ऐसा सजीव और अलौकिक चरित्र प्रस्तुत किया है जिससे परिचय प्राप्त करके हमारे पाठकों को आनन्द का अनुभव होगा। **राजपाल एण्ड संज, दिल्ली** की ओर से प्रकाशित क्राउन साइज़ के ११० पृ० का यह सजिल्द उपन्यास दो रुपये में मिल सकता है।

* * *

तपस्विनी : गुजराती साहित्य के प्रख्यात कथाशिल्पी श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी के नवीनतम उपन्यास का हिन्दी अनुवाद है। अनुवादक हैं श्री पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश'। इसमें मुन्शीजी ने अपनी पहली कथा-कृतियों की भाँति ही सरल-तरल शैली में पुस्तक के पावन रूप का चित्रण कथा के सूत्र में पिरोकर किया है। इसके नायक रवि त्रिपाठी में हमारे पाठकों में से बहुत से अपनी ही कहानी चित्रित देख सकते हैं। क्राउन साइज़ के २४८ पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास **राजकमल प्रकाशन, दिल्ली** ने प्रकाशित किया है और यह ५ रुपये ५० न० पै० में प्राप्य है।

* * *

अन्धेरे बन्द कमरे : हिन्दी के तरुण कथा-शिल्पी और लेखक श्री मोहन राकेश का नवीनतम प्रथम उपन्यास है। इसमें लेखक ने स्वतन्त्रता-प्राप्ति के उपरान्त देश की बढ़ती हुई सांस्कृतिक हलचलों और उनके आन्तरिक खोखलेपन का सजीव और मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है। इसकी कथाभूमि राजधानी दिल्ली से ही ली गई है और पाठक इसमें यहाँ के सांस्कृतिक जीवन का वास्तविक चित्र देख सकते हैं। अपनी सहज-विवेचन-पटुता और तीखी शैली के कारण यह उपन्यास हिन्दी में नई विचार-सरणी का द्योतक है। क्राउन साइज़ के ५४० पृष्ठ के इस सजिल्द उपन्यास का प्रकाशन **राजकमल प्रकाशन, दिल्ली** ने किया है और यह ११ रुपये में प्राप्तव्य है।

* * *

कथा कहो उर्वशी : श्री देवेन्द्र सत्यार्थी का नवीनतम उपन्यास है। इसमें श्री सत्यार्थी ने उड़ीसा के एक मूर्तिकार परिवार की तीन पीढ़ियों की कहानी उपन्यास के माध्यम से पुस्तुत की है। कथा का प्रारम्भ दूसरे महायुद्ध से होता है और जागरी, चतुर्मुख, नीलकण्ठ आदि इसके पात्र अपनी-अपनी विशेषताओं के कारण इस उपन्यास में इस प्रकार उभरे हैं कि पाठक उनमें खो-सा जाता है। मूर्तिकार की
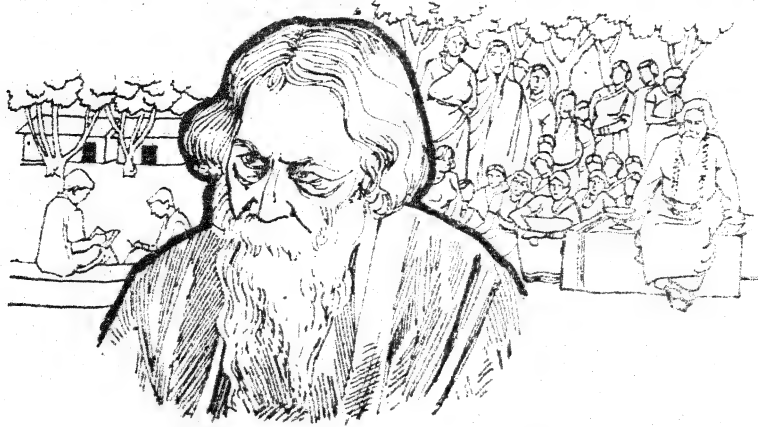
कहानी के माध्यम से लेखक ने भारत की मूर्ति-कला का जो चित्रण इस उपन्यास में किया है, वह अभूतपूर्व है। इसकी नायिका अलबीरा एक विदेशी महिला है, जो युद्ध के बाद लन्दन से आकर कलाकार नीलकण्ठ की जीवन-संगिनी बन जाती है। सत्यार्थी की शैली का निखरा हुआ रूप इस उपन्यास में देखने को मिलता है। क्राउन साइज़ के ४०० पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास **राजकमल प्रकाशन, दिल्ली** ने प्रकाशित किया है और सात रुपये में प्राप्य है।

* * *

दादा का हाथी : साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली की ओर से **पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस** द्वारा प्रकाशित मलयालम भाषा का एक लघु उपन्यास है। इसके लेखक मुहम्मद बशीर और अनुवादक के० रवि वर्मा हैं। इसमें श्री बशीर ने केरल के सामन्ती मुस्लिम समुदाय का चित्रण अत्यन्त ही सरस और रोचक शैली में किया है। क्राउन साइज़ के ११० पृष्ठ का यह छोटा-सा सजिल्द उपन्यास दो रुपये में मिल सकता है।

* * *

जय महाकाल श्री परदेशी द्वारा लिखित एक ऐतिहासिक उपन्यास है। यह एक उपन्यास ही नहीं, प्रत्युत पराधीनता के प्रतिकूल एक प्रचण्ड चुनौती भी है। इसमें कापालिक सिद्धनाथ की कूटनीति, राजनर्तकी वासन्ती का त्याग, माधुरी का प्रेम, दीपावली का विलास, वल्लभी की सेवा, मीनाक्षी का शृंगार, सांगा की महानता, सूर्यमल की वीरता आदि का अद्भुत समन्वय एकत्र मिलेगा। **वोरा एण्ड कम्पनी, बम्बई** द्वारा प्रकाशित ऐतिहासिक उपन्यासों की शृङ्खला में इस उपन्यास से अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। क्राउन साइज़ के २५६ पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास चार रुपये पचास नए पैसे में प्राप्य है।

* * *

बड़ा आदमी श्री यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' का नवीनतम उपन्यास है। इस रहस्यमय उपन्यास में लेखक ने राजस्थानी वातावरण और छात्रों के माध्यम से समूचे मानव-समाज की एक समस्या—पैसा, पैसा, पैसा—पर कलापूर्ण ढंग से प्रकाश डाला है। एक निर्धन छोटा आदमी किस प्रकार पैसे वाला—बड़ा आदमी बन गया, इसी का विस्तृत विवरण 'बड़ा आदमी' में किया गया है। **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली** की ओर से प्रकाशित क्राउन साइज़ के २१८ पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास चार रुपये में प्राप्तव्य है।

* * *

स्वस्थ दाम्पत्य जीवन का आनन्द नामक इस उपन्यास में इसके लेखक श्री श्यामलाल शर्मा ने यह प्रदर्शित किया है कि किन जीवन-तत्त्वों की हमारे स्वास्थ्य के लिए आवश्यकता होती है। अत्यन्त सिनेमा देखने के शौकीन युवक सिनेमा के कलाकार बनने की अभिलाषा के कारण व समय से पूर्व मजनू बनने से क्या परिणाम भुगतते हैं, इसी का वर्णन इस उपन्यास में है। यह बहुत घटिया शैली में लिखा गया है। **रवीन्द्र प्रकाशन-गृह, फीरोज़ाबाद** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज़ के १७६ पृष्ठ का यह उपन्यास एक रुपया पचहत्तर नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

पॉकेट बुक्स

इधर **केन्द्रीय भारत सेवक-समाज** के 'जन-जागरण विभाग' ने अपनी **'भारत सेवक पॉकेट बुक्स'** के अन्तर्गत हिन्दी के प्रसिद्ध उपन्यासकार श्री यज्ञदत्त शर्मा के नौ उपन्यास प्रकाशित किए हैं और एक उपन्यास श्री जयन्त वाचस्पति का है। श्री यज्ञदत्त शर्मा के **परिवार, बसन्ती, बुआजी, बाप-बेटी, सबका साथी, भुनिया की शादी, महल और मकान, बदलती राहें, मधु और इन्साफ** नामक उपन्यास और श्री जयन्त वाचस्पति का **माँ का स्वर्ग** है। ये सभी उपन्यास भारत सेवक समाज की विभिन्न जनोपयोगी प्रवृत्तियों को आगे बढ़ाने में सहायक हो सकते हैं। इन उपन्यासों की भाव-भूमि वैसी ही रचनात्मक है, जैसी कि भारत सेवक समाज की कार्य-प्रणाली है। श्री यज्ञदत्त शर्मा के इन उपन्यासों में से अधिकांश के कई-कई संस्करण हो चुके हैं। 'पॉकेट बुक्स' सीरीज़ के अन्तर्गत इनका प्रकाशन करके भारत सेवक समाज ने इन्हें और भी सर्वजन-सुलभ कर दिया है। प्रायः ३००, २५०, २०० और १५० पृष्ठों की ये सुमुद्रित पुस्तकें एक रुपये अस्सी नये पैसे, एक रुपया चालीस नये पैसे और नब्बे नए पैसे में प्राप्य हैं। विषय-वस्तु, साज-सज्जा और मूल्य आदि की दृष्टि से

'भारत सेवक पॉकेट बुक्स' की ये दस पुस्तकें प्रत्येक हिन्दी-प्रेमी के लिए पठनीय तथा सग्रहणीय हैं। ये समाज के नई दिल्ली-कार्यालय से उपलब्ध की जा सकती हैं।

* * *

हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली-शाहदरा की ओर से **प्यार की पुकार, अधिकार और क्रान्तिकारी** नामक तीन उपन्यास अभी-अभी प्रकाशित हुए हैं। इनके लेखक क्रमशः ख्वाजा अहमद अब्बास, प्रेमेन्द्र मित्र और जयन्त वाचस्पति हैं। 'प्यार की पुकार' में श्री अब्बास ने पाँच विभिन्न देशों के पात्रों को लेकर एकदम नयी शैली में इन देशों के एकदम रंग-बिरंगे चित्र प्रस्तुत किये हैं। 'अधिकार' में श्री प्रेमेन्द्र मित्र ने वेगवती नदी की तरह अपने तटों को छिन्न-भिन्न करने वाली ऐसी कहानी प्रस्तुत की है जो दो विरोधी मान्यताओं के तीव्र घटनाचक्र में घूमती है। 'क्रांतिकारी' में श्री जयन्त वाचस्पति ने एक क्रान्तिकारी के जीवन की ऐसी कहानी प्रस्तुत की है, जो हमारे पाठकों के जीवन की अपनी गतिशीलता, कुतूहलमयता और चुस्त शैली के कारण दम लेने की भी फ़ुरसत नहीं लेने देगी। तीनों उपन्यास एक-एक रुपये में प्राप्य हैं।

* * *

सूने आँगन रस बरसै नामक इस पुस्तक में हिन्दी के प्रख्यात तरुण कथाकार श्री लक्ष्मीनारायणलाल की १९६० में लिखी गई चौदह कहानियों का संकलन प्रस्तुत किया गया है। ये सभी कहानियाँ पहले हिन्दी की उच्चकोटि की पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं। निश्चय ही यह संकलन हिन्दी-कथा-साहित्य की अभिवृद्धि में सहायक होगा। **भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज के २०६ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक तीन रुपये में मिल सकती है।

* * *

गुजराती प्रतिनिधि कहानियाँ में इसके सम्पादक श्री गणेशलाल जोशी ने गुजराती की पन्द्रह प्रसिद्ध कहानियाँ संकलित की हैं। प्रारम्भ में कहानियों का संक्षिप्त परिचय भी दे दिया गया है। इसकी भूमिका में श्री विनयमोहन शर्मा ने यह ठीक ही लिखा है कि "हिन्दी पाठकों को गुजराती कथा-साहित्य से परिचित कराने का यह प्रयत्न अभिनन्दनीय है।" **राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा** की ओर से प्रकाशित क्राउन साइज के १८४ पृष्ठ का यह संकलन तीन रुपये में प्राप्त किया जा सकता है।

* * *

कविता

नीरज का प्रकाशन **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली** की ओर से प्रकाशित होने वाली उसकी 'आज के लोकप्रिय हिन्दी-कवि' नामक पुस्तकमाला के अन्तर्गत किया गया है। इसका सम्पादन और संकलन किया है श्री क्षेमचन्द्र **'सुमन'** ने। पुस्तक के प्रारम्भ में श्री सुमन ने अपनी विस्तृत भूमिका में कवि 'नीरज' के व्यक्तित्व का परिचय देकर उसके काव्य और जीवन-संघर्ष पर व्यापक प्रकाश डाला है। बाद में उसकी ३२ प्रतिनिधि रचनाएँ संकलित की गई हैं। प्रत्येक काव्य-प्रेमी के लिए यह पुस्तक सर्वथा पठनीय और उपादेय है। क्राउन साइज के १३६ पृष्ठ की यह पुस्तक दो रुपये में मिल सकती है।

* * *

मेघदूत का प्रकाशन **हिन्दी पॉकेट बुक्स, शाहदरा-दिल्ली** ने किया है। इसमें डॉ० भगवतीचरण उपाध्याय ने संस्कृत-साहित्य के अमर प्रेम-काव्य मेघदूत का सरल गद्यानुवाद प्रस्तुत किया है। अनेक रेखाचित्रों से सुसज्जित यह पुस्तक एक रुपये में प्राप्य है।

* * *

छलकते जाम में श्री वली शाहजहाँपुरी ने रियाज़ खैराबादी की उर्दू रचनाओं का संकलन प्रस्तुत किया है। प्रारम्भ में दी गई भूमिका से हिन्दी-पाठक उर्दू शायरी और उसकी परम्पराओं से भी परिचित हो सकेंगे। **नेशनल पब्लिशर्स जामियानगर, नई दिल्ली** द्वारा प्रकाशित ९६ पृष्ठ की यह पुस्तक एक रुपये पच्चीस नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

स्वर लहरी में **प्राच्य महाविद्यालय, जोधपुर** के **प्रकाशन** विभाग ने जोधपुर के आठ नए कवियों की रचनाओं का संकलन प्रस्तुत किया है। ११४ पृष्ठ का यह संकलन दो रुपये में प्राप्य है।

* * *

हुलसी में हास्यरस के प्रख्यात कवि काका हाथरसी की तीस हास्य रस की कविताओं का संकलन प्रस्तुत किया गया है। प्रायः सभी रचनाएँ ऐसी हैं, जिन्हें पढ़कर पाठक हँसते-हँसते लोट-पोट हुए बिना न रहेंगे। जीवन में हास्य का वही स्थान है, जो भोजन में चटनी का। आशा है ये रचनाएँ पाठकों को चटनी और चूरन-जैसी रोचक और चटकीली लगेंगी। **संगीत कार्यालय, हाथरस** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज़ के ११६ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक दो रुपये में मिलती है।

* * *

रियालो आँचल में मालवी भाषा के प्रख्यात कवि और लोककार श्री हरीश निगम के मालवी गीत संकलित हैं। इस संग्रह की भूमिका डॉ० चिन्तामणि उपाध्याय और आशीर्वचन श्री सूर्यनारायण व्यास ने लिखा है। प्रादेशिक और जनपदीय भाषाओं के प्रेमी इस संग्रह से अवश्य ही प्रभान्वित होंगे, ऐसी आशा है। **क्लबलोक साहित्य-परिषद, उज्जैन** की ओर से प्रकाशित क्राउन साइज़ के ४६ पृष्ठ की पुस्तिका १ रु० २५ न० पै० में मिलती है।

* * *

आरोग्य-जीवन

आसन और स्वास्थ्य का प्रकाशन **हिन्द पॉकेट बुक्स, शाहदरा, दिल्ली** की ओर से हुआ है और इसके लेखक डॉक्टर लक्ष्मीनारायण। इसमें ४० चित्रों के माध्यम से आसनों की पूरी जानकारी दी गई है। यदि आप चाहते हैं कि बीमारी आपके पास न फटके, और आप लम्बी उम्र ले तथा स्वस्थ रहें तो आप लोगों को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए। १२० पृष्ठ की यह पुस्तिका एक रुपये में प्राप्य है।

* * *

हमारे दाँत और हमारा स्वास्थ्य में डॉ० इन्द्रजीतसिंह ने प्राचीन भारत में दन्त-विद्या, जान-पहचान, दाँतों के रोग, दाँत और मसूड़ों की रक्षा, बच्चों के दाँत और गर्भवती स्त्री की खुराक, नवजात शिशु की खुराक, शिशु के दाँत और मुँह की रक्षा, दाँतों की सफाई—कैसे और कब, उपसंहार, पूछ-ताछ आदि विभिन्न अध्यायों में दाँतों की रक्षा के सम्बन्ध में उपयोगी सामग्री प्रदान की है। क्राउन साइज़ के ७२ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक स्वयं लेखक ने प्रकाशित की है। लेखक सफदरजंग हस्पताल, नई दिल्ली में डेंटल सर्जन हैं। पुस्तक का मूल्य दो रुपये है।

* * *

जीने की कला में प्रख्यात लेखक श्री सन्तराम बी० ए० ने जीवन में सुख-समृद्धि, स्वास्थ्य और सफलता प्राप्त करने के लिए अनेक व्यावहारिक और उपयोगी सुझाव दिये हैं। हममें से बहुतों के जीवन में ऐसे अवसर आते हैं जब हमें संसार अन्धकारमय दिखाई देने लगता है और जीवन में निराशा छा जाती है तथा हम भविष्य के लिए कुछ भी नहीं सोच पाते। ऐसी संकटपूर्ण घड़ियों में यह पुस्तक आपको मित्र की भाँति सच्ची सलाह देकर स्फूर्ति प्रदान करेगी और सही मार्ग दिखलाएगी। लेखक इस विषय के माने हुए लेखक हैं। उन्होंने इस पुस्तक में जीवन-सम्बन्धी प्रत्येक पहलू का ऐसे कलात्मक और सरल ढंग से स्पर्श किया है कि पुस्तक जन-साधारण के लिए बहुत ही उपयोगी बन गई है। क्राउन साइज़ के २०८ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक **राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली** ने प्रकाशित की है और ३ रुपये ५० न० पै० में प्राप्य है।

* * *

काम-मनोविज्ञान

विवाह और नैतिकता प्रख्यात मनोविज्ञानवेत्ता बर्ट्रेण्ड रसेल की अंग्रेज़ी पुस्तक का हिन्दी अनुवाद है। अनुवादक हैं श्री धर्मपाल। इसमें लेखक ने समाज के महत्त्व की प्रस्थापना करके विवाह, वेश्या-वृत्ति, परिवार, तलाक, जनसंख्या आदि विभिन्न पक्षों पर रोचक शैली में प्रकाश डाला है। साथ ही प्रजनन-शास्त्र और रोमैण्टिक प्रेम की वास्तविक व्याख्या करके लेखक ने सुजनन शास्त्र की उपयोगिता भी प्रतिपादित कर दी है। मानव-जीवन में सैक्स का क्या स्थान है, यह जानने के लिए यह पुस्तक अत्यन्त उपयोगी और पठनीय है। क्राउन साइज़ के २१८ पृष्ठ की इस सजिल्द पुस्तक का प्रकाशन **राजकमल प्रकाशन,**

दिल्ली ने किया है और ५ रुपये २५ न० पै० में प्राप्य

* * *

सुख की साधना श्री बर्ट्रेण्ट रसेल की पुस्तक का हिन्दी अनुवाद है। इसके अनुवादक भी श्री धर्मपाल हैं। इस पुस्तक में 'दुख के कारण' और 'सुख के कारण' नामक दो खण्ड हैं, जिनमें लोग दुखी क्यों रहते हैं, उनमें 'थकान, ईर्ष्या, प्रतियोगिता और पाप की भावना किस प्रकार उदित होती है, इसकी विस्तृत जानकारी देकर लेखक ने सुख कैसे सम्भव है, और मनुष्य में उत्साह, स्नेह, काम आदि के द्वारा सफलता का संचार कैसे हो सकता है, इसका व्यापक निदान प्रस्तुत किया है। **राजकमल प्रकाशन, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज के २१६ पृष्ठ की यह पुस्तक ५ रुपये २५ न० पै० में प्राप्य है।

* * *

राजनीति

हमारा राष्ट्रीय शिक्षण श्री चारुचन्द्र भण्डारी की प्रख्यात बंगला कृति 'जातीय शिक्षा कोन पथे' का हिन्दी अनुवाद है। इसका अनुवाद श्री विद्याभूषण 'श्रीरश्मि' ने किया है। इसमें राष्ट्रीय शिक्षा के विभिन्न पक्षों पर अद्यतन सामग्री प्रस्तुत की गई है। इसके लेखक चारू बाबू शिक्षा के सर्वांगीण विशेषज्ञ और समग्र दर्शक हैं, अतएव उनकी यह पुस्तक वास्तव में शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों की जानकारी कराने वाली है। हम समझते हैं कि शिक्षा में रुचि रखने वाला प्रत्येक पाठक इसका अध्ययन अत्यन्त गम्भीरता से करेगा। **अ० भा० सर्व सेवा संघ, वाराणसी** द्वारा प्रकाशित ३२० पृष्ठ की यह पुस्तक २ रु० ५० न० पै० में मिलनी है।

* * *

(पृष्ठ ३९३ का शेष)

अधिक कमीशन दे सकता है। बिक्री-सम्बन्धी व्यवस्था का मुख्य उद्देश्य हिन्दी के पुस्तक-विक्रेताओं को उनका उचित लाभांश प्राप्त कराना था ताकि हिन्दी-प्रकाशन को अपनी सक्रियता के लिए पुस्तक-विक्रेताओं की देश-भर में फैली शृंखला का सम्बल मिल सके। खेद है कि पुस्तक-विक्रेताओं ने भी संयम नहीं दिखलाया और अपनी स्थानीय होड़ में नियमों को तोड़ा। इस व्यवस्था को यदि इस सम्मेलन ने भंग कर देने के पक्ष में निर्णय कर लिया तो हमें आज से चार-पाँच वर्ष पहले के जंगल में लौट जाना होगा, जब कि अच्छी किताब की नहीं, अच्छे कमीशन की कदर होती थी, पुस्तक-विक्रेता पनप नहीं पाते थे और प्रकाशक स्वयं पुस्तक-विक्रेता बनकर ग्राहकों को खोजता-फिरता था।

संघ एक व्यावसायिक संस्था है और हम जो भी निर्णय करें उससे पुस्तक-व्यवसाय के हितों का संवर्द्धन ही हो, हम सबका यही प्रयत्न होना चाहिए।

अन्त में मैं अपने उन सब बन्धुओं को धन्यवाद देता हूँ जिनका सहयोग गत वर्ष संघ के उत्तरदायित्वों को निभाने के लिए प्राप्त होता रहा, विशेष रूप से अपने अध्यक्ष श्री रामलालजी पुरी का जो अडिग और सरल विश्वास के आदर्श के रूप में हमेशा हमारे सामने रहे हैं। मुझे एक प्रार्थना के साथ इस वक्तव्य को समाप्त करना है कि हम सब परस्पर उस विश्वास को फिर से उपजा सकें जिसे इस बीच कुछ चोट-सी लगी जान पड़ती है ताकि हम सबने मिलकर जिस संस्था को जन्म दिया और बड़ा किया है, वह फलती-फूलती रह सके।

इस वक्तव्य के साथ ही नई दिल्ली की एम० पॉल एंड कम्पनी, चार्टर्ड एकाउन्टैंट्स, द्वारा प्रस्तुत किये गए १९६० के हिसाब का ब्यौरा संलग्न है। साथ ही १ जनवरी से ३१ मार्च '६१ के हिसाब की नकल भी नत्थी की जा रही है जिसे हमारे कोषाध्यक्ष श्री कन्हैयालाल मलिक ने तैयार किया है और जिसके अनुसार ३१ मार्च '६१ को संघ के कोष में ५८२२ रुपये ७६ नये पैसे बैंक में अथवा नक़द मौजूद थे।

आगामी मास के प्रकाशन

आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली

—**रजनी में प्रभात का अंकुर,** श्रीमन्नारायण, कविता

—**प्रतिनिधि सामूहिक गान,** सम्पादक श्री योगेन्द्रकुमार लल्ला व श्रीकृष्ण

—**ऐन्टीगोने,** अनु० डॉ० रांगेय राघव, नाटक

—**छलावा,** श्री परितोष गार्गी, नाटक

पुस्तकायन, मुंगेर

—**मानव दर्पण,** श्री रघुवर नारायण सिंह,

राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

—**लोमहर्षिणी,** श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी

राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली

—**आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और शृंगार,** डॉ० रांगेय राघव

—**इन्कलाब,** श्री ख्वाजा अहमद अब्बास, उपन्यास

—**रामावतार त्यागी,** सम्पा० 'सुमन', हिन्दी के लोकप्रिय कवि सीरीज़

—**जगन्नाथ 'आज़ाद',** सम्पा० प्रकाश पण्डित, उर्दू के लोकप्रिय कवि सिरीज़

—**'अर्श' मलसियानी,** सम्पा० प्रकाश पण्डित, उर्दू के लोकप्रिय कवि सीरीज़

—**मूँगे का द्वीप,** अनु० श्रीकान्त व्यास

—**चरित्र-निर्माण,** पु० मु०,श्री सत्यकाम विद्यालंकार

—**गाता जाए बंजारा,** पु० मु०, श्री साहिर लुधियानवी

—**विचार-तरंग,** पु० मु०, प्रो० दीवानचन्द्र शर्मा

—**महारानी झांसी,** पु० मु०, श्री शान्तिनारायण, उपन्यास

—**भारत की कहानी,** पु० मु०, श्री भगवतशरण उपाध्याय

—**तूफान,** पु० मु०, अनु० डॉ० रांगेय राघव, नाटक

—**चाणक्य और चन्द्रगुप्त,** पु० मु०, हरिनारायण आप्टे, उपन्यास

श्रीमित्र श्रीवास्तव प्रकाशन गृह, इलाहाबाद

—**सौम्य कवि श्री सुमित्रानन्दन पन्त,** श्री कन्हैयालाल

—**उपन्यास सम्राट श्री प्रेमचन्द,** श्री कन्हैयालाल

हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी

—**मंगल ग्रह में रज़िया,** श्री शारदा मित्र, बालोपयोगी

—**पानी के प्राचीर,** श्रीरामदरश मिश्र, उपन्यास

—**कटी पतंग,** श्री नानकसिंह, उपन्यास

—**राजसिंह,** पु० मु०, श्री बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय

अप्रैल मास के प्रकाशन

आलोचना—निबन्ध

उदयशंकर भट्ट, **साहित्य के स्वर**, १८४, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली

जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन, **हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास**, पु० मु०, ३४० डि०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी

सुषमा धवन, डॉ०, **हिन्दी उपन्यास**, ४००, डि०, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

त्रिभुवनसिंह, डॉ०, **हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद**, पु० मु०, ६४०, डि०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी

उपन्यास

बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय, **चन्द्र शेखर**, पु० मु०, १५६, डि०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी

मोहन राकेश, **अंधेरे बन्द कमरे**, ५३६, क्रा०, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

लक्ष्मीनारायण मिश्र, **संन्यासी**, पु० मु०, १८३, क्रा०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी

सत्यनारायण कस्तूरिया, **सम्राट् चन्द्रगुप्त**, पु० मु०, ३०४, डि०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी

हिमांशू श्रीवास्तव, **नदी फिर बह चली**, ३४४, डि०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी

कविता

बेधड़क बनारसी, **सुन्दर और असुन्दर**, ११६, डि०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी

कहानी

गंगाधर शुक्ल, **अंधेरा छंट गया**, १२४, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली

विविध

प्रीतमसिंह पंछी, **गदर पार्टी का इतिहास**, १६२, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली

बर्ट्रेण्ड रसेल, अनु० वीरेन्द्र त्रिपाठी, **विवेक और विनाश**, ७५, क्रा०, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

बर्ट्रेण्ड रसेल, अनु० धर्मपाल, **विवाह और नैतिकता**, २१७, क्रा०, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

बर्ट्रेण्ड रसेल, अनु० ख्वाजा बदीउज्जमा, **सुख की साधना**, २१५, क्रा०, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

बाल-साहित्य, प्रौढ़-साहित्य

एच० आर० मजीखा, **चापंरा-गाँव प्रथम आया**, ८०, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली

दयाशंकर मिश्र 'दद्दा', **नटखट टम्मो**, ४८, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली

महेन्द्र चित्तल, **हिरन की चाल**, ४८, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली

वर्ष : ८
अंक : १०
वार्षिक : ३.००
एक प्रति : ०.३१

सम्पादक : ओंप्रकाश, डायरेक्टर इंचार्ज, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड

प्रकाशकों के लिए आजकल शिक्षा सम्बन्धी पाठ्य-पुस्तकें प्रकाशित करने के दिन हैं—नया शैक्षणिक सत्र कुछ ही सप्ताहों में आरम्भ होने को है।

यह दुर्भाग्य की बात है कि देश में सामान्य (जनरल) व पाठ्य-पुस्तकों के प्रकाशक अलग-अलग हैं; पाठ्य-पुस्तकों का प्रकाशन मुख्यतः उन लोगों के हाथ में है जो शिक्षा के क्षेत्र में केवल मुनाफ़ा भर कमाने का रिश्ता रखते हैं। सबके लिए यह बात नहीं कही जा सकती, तथापि अधिकांश रूप में यह सत्य है।

राज्यों के शिक्षा-विभाग पुस्तकों का चयन करते वक्त इस बात का ध्यान रखना उचित नहीं समझते कि जिन प्रकाशकों की पुस्तकें पाठ्य-क्रम में स्वीकार की जा रही हैं, उन्होंने किस मात्रा में हिन्दी की अथवा शिक्षा-क्षेत्र की सेवा की है। इसके विपरीत यह अधिक ठीक सिद्ध होगा कि जिस प्रकाशक ने इस धन्धे में जितनी अधिक अपनी सेवा की होती है, वही अधिक सफल होता है।

पाठ्य-पुस्तकों का कार्य यदि ऐसे प्रकाशकों को सौंपा जाए जो हिन्दी भाषा और साहित्य के भण्डार में उत्तरोत्तर वृद्धि कर रहे हैं, तो इसके अनेक लाभ होंगे। ऐसे प्रकाशकों को अपने जनरल पुस्तकों के काम को बेहतर रूप से सम्पन्न करने की प्रेरणा मिलेगी, और वह अपना प्रकाशन-अनुभव पाठ्य-पुस्तकों के प्रकाशन और मुद्रण में लगा सकेंगे। आज जो पाठ्य-पुस्तकों की तथा उसके प्रकाशकों की छीछालेदर होती है, वह समाप्त होगी।

पाठ्य-पुस्तकों की स्वीकृति में केवल पुस्तकों की श्रेष्ठता से ही काम नहीं चलता—श्रेष्ठता की बारी काफी बाद में आती है—पहले चाहिए वाकफ़ियत, असर, दबाव। इनके रहते रद्दी पुस्तक भी श्रेष्ठ बन जाती है, और इनके अभाव में श्रेष्ठ पुस्तक नकारी जाती है। शिक्षा-क्षेत्र में फैली इन कुरीतियों से सभी का परिचय है, लेकिन इनका मुकाबला करने के उपाय स्थिर नहीं किए जा सके। शिक्षा-अधिकारी अवश्य ही इन्हें दूर करने को प्रयत्नशील रहते होंगे लेकिन समस्या क्या इतनी जटिल और दुरूह है कि उसका अभी तक हल न खोजा जा सके?

अमरीका में पुस्तक-प्रकाशन की नयी प्रवृत्तियाँ

ई० एच० ग्लिक तथा एम० बी० ग्लिक

श्री ग्लिक तथा श्रीमती ग्लिक सदर्न लैंग्वेजेज़ बुकट्रस्ट और बुक इन्डस्ट्री काउंसिल ग्राफ़ मद्रास को सलाहकार के रूप में अपनी सेवाएँ अर्पित करने के बाद हाल ही में अमरीका वापस गए हैं। उनका यह लेख दक्षिण एशिया में यूनेस्को के पाठ्य-सामग्री सम्बन्धी प्रादेशिक केन्द्र के अप्रैल, '६१ के सूचना बुलेटिन से साभार प्रकाशित किया जा रहा है।

चाहे हम पूरब के रहने वाले हों या पश्चिम के, हम सभी चीन के प्रथम ब्लाक बनाने वालों और जोहान गूटेनबर्ग की देन का समान रूप से लाभ उठा रहे हैं। हमारी सांस्कृतिक तथा आर्थिक परिस्थितियों में अनेक अन्तर होते हुए भी, जैसे-जैसे समय बीतता जाएगा हमारी समस्याएँ एक-दूसरे से भिन्न होने के बजाय उनकी समानता बढ़ती जाएगी। अमरीका में पुस्तकों की छपाई के पूरे काम पर एक दृष्टि डालने से हमें कुछ ऐसी बातें दिखाई देंगी जो दक्षिण एशिया के देशों के लिए उपयोगी होंगी, कुछ बातें ऐसी भी होंगी जिनकी ओर हमारे लिए ध्यान देना आवश्यक नहीं है।

प्रेस का काम (मशीन पर छपाई): मात्रा और गुण

अमरीका में मज़दूरी की दर बहुत ऊँची होने की वजह से इस बात की ज़रूरत पड़ी कि ज्यादा बड़ी और ज्यादा तेज़ी से काम करने वाली छपाई की मशीनें इस्तेमाल की जाएँ। मशीनों की इस तरक्क़ी की वजह से छपाई की क्वालिटी को उच्च स्तर पर क़ायम रखना मुश्किल होता है: कुछ बातों के एतबार से आज छपाई का औसत स्तर उतना ऊँचा नहीं है जितना १९२०-३० में था। हो सकता है कि एशिया को, जहाँ श्रमिकों की कोई कमी नहीं है और जहाँ हस्तशिल्प की परम्पराएँ इतनी पुरानी हैं, इस प्रकार की मशीनों की जरूरत फौरन न पड़े। वह वक्त आने तक जब वे ऐसी मशीनें इस्तेमाल करने लगें, एशिया के मुद्रक तथा प्रकाशक अपने सामने कारीगरी का उच्चतर मानदण्ड लक्ष्य के रूप में रख सकते हैं। छपाई की क्वैलिटी बहुत बड़ी हद तक इस पर निर्भर है कि अच्छा काम करने की कितनी कोशिश की जाती है। बुरी छपाई के मुकाबले में अच्छी छपाई करने पर लागत बहुत ज्यादा नहीं आती है, खास तौर पर यदि संस्करण बड़ा हो।

इसमें तो सन्देह नहीं कि अच्छा कागज़ आवश्यकतानुसार मात्रा में न मिलने के कारण प्रेस वालों को (मशीन मैन को) बड़ी निराशा होती है, लेकिन कागज़ के नये कारखाने बन जाने पर यह कठिनाई दूर हो जाएगी। लेकिन वह वक्त आने तक भी हम किताबों और सभी छपी हुई चीज़ों की साज-सज्जा में बहुत-कुछ सुधार कर सकते हैं। यदि हम कम्पोज़ करते समय शब्दों के बीच उचित स्पेस दें, पृष्ठ पर ठीक जगह पर मैटर लगाएँ, और अच्छी स्याही से साफ़ छपाई करें। इस दिशा में शायद हमें सबसे पहले हाफटोन ब्लाकों या प्लेटों की मेक-रेडी पर ध्यान देना चाहिए।

छपाई की नई मशीनें खरीदते समय एशिया के प्रकाशकों तथा मुद्रकों को इस बात पर भली भाँति विचार कर लेना चाहिए कि उनके काम के लिए लैटर प्रेस अधिक उपयोगी रहेगा या आफ़सेट। अमरीका में आफ़सेट का चलन बड़ी तेज़ी से इसलिए बढ़ता जा रहा है कि इस तरीके से तसवीरें और पाठ्य-सामग्री को एक ही पृष्ठ पर यथा-इच्छा किसी भी प्रकार सजाया जा सकता है और

खुरदरे कागज पर आसानी से छापा जा सकता है और इसलिए भी कि आफ़सेट की छपाई का तरीका फोटो-टाइपसेटिंग की मशीन के साथ स्वाभाविक रूप से मेल खाता है।

परन्तु, ब्लाक बनाने के लिए कई नये प्रकार के पदार्थों और नये तरीकों का लाभ उठाकर लेटर प्रेस की छपाई फिर अपना खोया हुआ महत्त्व दुबारा प्राप्त करती जा रही है। गरम करके और साँचे में दबाकर प्लास्टिक और रबर के ब्लाक बनाये जाने लगे हैं। यह तरीका एलेक्ट्रो टाइपिंग से ज्यादा आसान है और अकसर इसका परिणाम भी उतना ही अच्छा निकलता है। फ़ोटो-एनग्रेविंग की डो-एच पद्धति से, जस्ते (ज़िंक), ताँबे (कॉपर) और मिश्र-धातु (एलाय) के लाइन और हाफ़टोन ब्लाक ज्यादा अच्छे और ज्यादा जल्दी बनते हैं। इस प्रकार टाइप से छपे हुए पृष्ठों के मैगनीशियम ब्लाक बनाना भी सम्भव हो गया है। ब्लाक बनाने के लिए डायक्रिल नामक एक नया पदार्थ तैयार किया जा रहा है जो लेटर प्रेस की फ्लैट बड़े और सिलिण्डर दोनों ही प्रकार की मशीनों के लिए उपयोगी है। ये ब्लाक फोटो लेकर बनाए जाते हैं और इनकी एचिंग काफ़ी गहरी तथा साफ़ होती है और चित्र की रेखाएँ बहुत उभरकर सामने आती हैं। हो सकता है कि आगे चलकर यह पद्धति लेटर प्रेस को वही पद प्रदान कर दे जो फोटो-टाइप सेटिंग के कारण आफ़सेट को प्राप्त है।

फ़ोटो-टाइपसेटिंग की मशीनें

ये मशीनें धातु के अक्षर ढालने के बजाय फ़िल्म पर अक्षरों को मिलाकर शब्द अंकित कर देती हैं। इस पर अंकित किये गए शब्दों के पृष्ठ फिर फ़ोटो की विधि से प्लेट बनाने के लिए धातु पर उतार लिए जाते हैं और आम तौर पर आफ़सेट से छापे जाते हैं, हालाँकि यह आवश्यक नहीं है। ये मशीनें एशियाई भाषाओं के पेचीदा अक्षरों के लिए बहुत उपयोगी हैं, क्योंकि इन अक्षरों को धातु में ढालना अकसर बहुत कठिन होता है। ये मशीनें उर्दू, हिन्दी या बर्मी का कोई भी अक्षर उतनी ही आसानी से ढाल सकती हैं जैसे अंग्रेज़ी का अक्षर 'O'। परन्तु फोटो-टाइपसेटिंग की मशीनें बहुत महँगी होती हैं और उनको चलाने के लिए बहुत कुशल कारीगरों की जरूरत होती है। जब तक कई मुद्रक और प्रकाशक मिलकर एक मशीन खरीदकर इस्तेमाल न करें तब तक एशिया में अभी इन मशीनों का उपयोग सम्भव नहीं है।

छपाई में रंगों का प्रयोग

दूसरे विश्वयुद्ध के बाद से अमरीका में बच्चों की किताबों में, और विशेष रूप से पाठ्य-पुस्तकों में, प्रकाशकों की आपस की होड़ के कारण रंगीन चित्रों का चलन बहुत बढ़ गया है। इसमें तो कोई सन्देह नहीं हो सकता कि बच्चे रंगीन चित्रों को बहुत पसन्द करते हैं और उनकी सहायता से वे ज्यादा जल्दी सीखते हैं। इन चित्रों की वजह से अमरीकी पाठ्य-पुस्तकें देखने में अधिक सुन्दर लगती हैं और वे शिक्षा के बेहतर साधन बन गई हैं। परन्तु रंगों का प्रयोग महँगा पड़ता है और अगर रंग सोच-समझकर न इस्तेमाल किये जाएँ तो पुस्तक भोंड़ी भी हो सकती है। आशा की जाती है कि एशियाई प्रकाशक बच्चों और नव-साक्षरों की पुस्तकों को अधिक रोचक बनाने के लिए रंगीन छपाई का सहारा केवल तभी लेंगे जब वह उपयोगी हो। इस बात का फ़ैसला करने के लिए अच्छे कलाकारों का सहयोग तथा परामर्श बहुत बहुमूल्य सिद्ध होगा।

चित्रों की छपाई

बच्चों की किताबों में चित्र देने के कई तरीके बहुत उपयोगी साबित हो सकते हैं। ब्लाक या प्लेट बनाने के खर्च में कुछ बचत करने का एक तरीका तो यह हो सकता है कि चित्रकार से कहा जाय कि वह अपने चित्र कागज पर न बनाकर काँच पर या इसी प्रकार की किसी ऐसी चीज पर बनाए जिसके आर-पार दिखाई देता हो। अगर तस्वीर कई रंगों की हो तो चित्रकार हर रंग वाला हिस्सा अलग-अलग किसी पारदर्शी चीज़ पर काली स्याही से बनाए, लेकिन यह काम इतना सही-सही किया जाना चाहिए कि बाद में एक रंग पर दूसरा रंग छापते समय वे एक-दूसरे पर बिलकुल ठीक बैठें। फिर इन चित्रों से ब्लाक या प्लेट बनाने के लिए इनके अलग-अलग फोटो लिए जा सकते हैं। रंगों को अलग करने के लिए कैमरा में फ़िल्टर लगाने की कठिनाई और खर्च से इस प्रकार बचा जा सकता है।

मनोविज्ञान

मानवी समायोजन के मूल सिद्धान्त

लेखक : नारमन एल० मन।

अनुवादक : श्री आत्माराम शाह।

मूल्य : लगभग १७ रुपये ५० नये पैसे।

प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन, दिल्ली-६, पटना-६।

समय : जुलाई, १९६१ का आरम्भ।

•

समकालीन मनोवैज्ञानिकों में श्री नारमन एल० मन की प्रतिष्ठा अपने विषय के प्रगाढ़ और अधिकारी विद्वान् के रूप में विश्व-व्यापिनी है। श्री मन मनोविज्ञानविद् ही नहीं शब्दशास्त्री भी हैं। अमेरिका के सुप्रसिद्ध विद्यालय बौडोहन कॉलेज में मन, मनोविज्ञान के प्राध्यापक हैं। मनोविज्ञान के सभी अंग-उपांगों—प्रयोगात्मक, व्यापारात्मक, व्यवहारात्मक—में लेखक की समान रूप से एवं अबाध गति है। मनोविज्ञान विषय के अध्यापक होने के साथ-ही-साथ लेखक महोदय मनोविज्ञान-सम्बन्धी शोधकार्य और प्रयोग भी करते रहते हैं।

उनका Psychology ग्रन्थ मनोविज्ञान विषयक कृतियों में शास्त्रीय ग्रन्थ की कोटि में गिना जाता है। लेखक ने अपने विशद् अनुभवों, गहन शोधकार्यों एवं विस्तृत अध्ययन के आधार पर मनोविज्ञान में प्रचलित सभी सिद्धान्तों, धारणाओं, मान्यताओं तथा व्यवहारों की गहरी छान-बीन और विवेचना की है। एक ही ग्रन्थ में एतद्विषयक सारी नई-पुरानी और अधुनातन जानकारी बड़े ही रोचक एवं वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत की गई है।

लेखक के पांडित्य और अपने लेखन-कार्य के प्रति उसकी निष्ठा और जानकारी का पता इसी तथ्य से चल जाता है कि Psychology का दूसरा संस्करण अपने पहले संस्करण की तुलना में सभी दृष्टियों से विकसित, संशोधित एवं परिवर्द्धित था, यहाँ तक कि उसे एक नई ही कृति कहा जा सकता है। तृतीय संस्करण, जिससे प्रस्तुत हिन्दी अनुवाद किया गया, अपने दूसरे संस्करण से उतना ही भिन्न, अधुनातन और सम्पन्न है।

मानवीय समायोजन के मूल सिद्धान्तों की विशद् और सांगोपांग व्याख्या एवं विवेचना करने वाला 'मनोविज्ञान' नाम का यह ग्रन्थ श्री नारमन एल० मन की सुप्रसिद्ध शास्त्रीय कृति 'Psychology' के तृतीय संस्करण का अविकल हिन्दी अनुवाद है।

मनोविज्ञान की शिक्षा के लिए अपूर्व पुस्तक !

मनोविज्ञान विषय के अनुभवी अध्यापक श्री मन ने इस ग्रन्थ की रचना मनोविज्ञान के छात्रों के ही लिए की है। इस ग्रन्थ में आधुनिक वैज्ञानिक मनोविज्ञान का प्रातिनिधिक सर्वेक्षण प्रस्तुत करने के साथ-ही-साथ विद्यार्थियों को अपनी ही मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं के प्रति अन्तर्दृष्टि विकसित करने तथा वैयक्तिक एवं सामाजिक समाचारों के समाधान में मनोवैज्ञानिक ज्ञान और विधियों का सफलतापूर्वक उपयोग कर सकने की दिशा में मार्ग-दर्शन भी किया गया है।

सम्पूर्ण ग्रन्थ कुल १६ अध्यायों में विभाजित है। अध्यायों की आयोजना इस प्रकार की गई है कि विद्यार्थी अपेक्षाकृत अधिक परिचित विषयों से प्रारम्भ करके उत्तरोत्तर नये, जटिल और अपेक्षाकृत गरिष्ठ विषयों की ओर उन्मुख होता चला जाए और नये विषयों, विचारों तथा शब्दावली को समझने और आत्मसात् करने में उसे कोई कठिनाई न हो। उदाहरणार्थ पहला अध्याय मनोविज्ञान के क्षेत्र और उसके अध्ययन की पद्धतियों से सम्बन्धित है और जो एक प्रकार से विषय की भूमिका का काम देता है। उसके बाद व्यक्तिगत एवं समूहगत भिन्नताओं एवं अन्तर की विवेचना वाला अध्याय है, जिसमें बुद्धि और समझ की चर्चा का उल्लेख होता है। इसीलिए बुद्धि-विषयक अध्याय को उसके तत्काल बाद ही स्थान दिया गया है। विचार, दृष्टि, श्रवण, एवं स्नायविक संस्थानों की व्याख्या और विवेचना करने वाले अध्यायों को अन्त में रखा गया है, क्योंकि वे कुछ अधिक दुरूह हैं और प्रचुर मात्रा में वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली का उनमें प्रयोग करना अनिवार्य हुआ है।

प्रत्येक अध्याय के प्रारम्भ में उपशीर्षकों की तालिका भिन्न टाइप में दी गई है। उसके बाद विषय-प्रवेश पर एक संक्षिप्त-सा उपोद्घात है। प्रत्येक अध्याय विभिन्न शीर्षकों एवं उपशीर्षकों के अन्तर्गत आयोजित किया गया है। प्रत्येक अध्याय के अन्त में पढ़े हुए विषय को दुहराने और आत्मसात् करने के लिए संक्षिप्त सारांश दे दिया गया है।

प्रत्येक अध्याय में विषय से सम्बन्धित अनेक चित्र, रेखाचित्र, ग्राफ और सारिणियाँ हैं।

हिन्दी में वैसे तो मनोविज्ञान पर अनेक पुस्तकें हैं, परन्तु एक सम्पूर्ण और अधुनातन, सारे विषय का सांगोपांग और रचनात्मक पद्धति से ज्ञान देने वाली पाठ्य-पुस्तक का नितान्त अभाव था। 'मनोविज्ञान' इस कमी को निर्विवाद रूप से पूरा करता है।

पुस्तक के अध्यायों की सम्पूर्ण तालिका इस प्रकार है:

स्नातक एवं स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम का अद्वितीय प्रकाशन

२. **व्यक्तिगत और समूहगत भिन्नताएँ अथवा अन्तर**—व्यक्तिगत अन्तरों का वैज्ञानिक अध्ययन—व्यक्तिगत अन्तरों का वितरण—सहसम्बन्ध—व्यक्तिगत भिन्नताओं की उत्पत्ति—आनुवंशिकता—परिवेश—आनुवंशिकता और परिवेश—आनुवंशिकताओं और परिवेश पर प्रयोग : आनुवंशिकता नियत—आनुवंशिकताओं और परिवेश पर प्रयोग : परिवेश नियत—सारांश।

३. **बुद्धि**—एक (परि) कल्पित प्रयोग—बुद्धि-परीक्षणों का प्रारम्भ—स्टैन फ़र्ड—बिन-परीक्षण—वेकास्लर-परीक्षण—परीक्षण में निष्पादन का स्तर किस सीमा तक स्थायी होता है ?—बाल्यकालीन अकाल प्रौढ़ता—आनुवंशिकता और परिवेश फिर—बालक की बुद्धि-लब्धि का पता लगाने का महत्त्व—बुद्धि के निष्पादन परीक्षण—सामूहिक परीक्षण—बुद्धि का विकास—बुद्धि के घटक—सारांश।

४. **व्यवहार की संप्रेरणा**—शारीरिक प्रेरक और समस्थिति—भूख—प्यास—यौन-प्रेरक और मैथुन—मातृक संप्रेरणा—प्रेरणाओं की सापेक्षिक शक्ति—मनुष्य मुख्यतया आदतों की सृष्टि है—प्रेरणाओं का समाजीकरण—सामान्य सामाजिक प्रेरणाएँ—भिन्न संस्कृतियों में भिन्न प्रेरणाएँ—व्यक्तिगत प्रेरणाएँ—जीवन के लक्ष्य—क्रियात्मक स्वतन्त्रता आदत की शक्ति—अचेतना संप्रेरणा—सारांश।

५. **संवेगात्मक संप्रेरणा**—संवेग और प्रेरणाएँ—भावना और संवेग—भावना और संवेग के शारीरिक पक्ष—सम्पूर्ण प्राणी की एक क्रिया के रूप में संवेग—संवेगात्मक विकास—बालकों में संवेगात्मक व्यवहार का विकास—संवेगात्मक विकास के परिस्थिति परक पक्ष—सारांश।

६. **कुण्ठा (हताशा) और अन्तर्द्वन्द्व**—अवरोध—बाल्यकालीन कुण्ठा या हताशा—कुण्ठा के प्रति यथार्थवादी प्रतिक्रिया करना—अनिराकृत अन्तर्द्वन्द्व के परिणाम—क्षतिपूरक या संपूरक प्रतिक्रियाएँ—स्वैर कल्पना—दूसरों का महत्त्व घटाना और उन पर दोषारोपण करना—अतिक्षतिपूर्ति—प्रक्षेपण—औचित्य स्थापन या तार्किकीकरण—प्रतिगमन—दमन—अन्तर्द्वन्द्व, इच्छाशक्ति और कार्य का सूत्रपात—सारांश।

७. **व्यक्तित्व**—शारीरिक गठन और स्वभाव—व्यक्तित्व का आरम्भ कैसे होता है ? परिस्थितियों का प्रभाव—व्यक्तित्व का मूल्यांकन—प्रक्षेपात्मक परीक्षण—व्यक्तिगत लक्षणों का परिमापन—सामान्य व्यक्तित्व—मनस्तापी व्यक्तित्व—मनस्ताप का मानसोपचार—उन्मादग्रस्त व्यक्तित्व—सारांश।

८. **सीखने की प्रक्रिया (अवगमन)**—हम क्या सीखते हैं ? अनुकूलित अनुक्रियाएँ—अनुकूलन की प्रक्रिया—अनुकूलन पर प्रयोग—अनुकूलन के कतिपय व्यापार—विविध निपुणताओं का अर्जन—मनुष्य का भूल-भुलैया में पारंगत होना—आदतों के निर्माण में जटिलता के स्तर—सीखने के वक्र—समस्याएँ सुलझाना—अनुकरण के द्वारा सीखना—प्रत्यक्ष प्रदर्शनों का महत्त्व—सारांश।

९. **सीखने (अवगमन) के आधार**—पारपाक और सीखना—सीखना और मस्तिष्क—संप्रेरणा का योगदान—सीखने की विभिन्न पद्धतियों की सापेक्षिक मितव्ययिता—मुखर पाठ—सीखने के कुछ मौलिक उपादान—सारांश।

विश्वविख्यात लेखक नारमन एल० मन की कृति-हिन्दी में

यूनेस्को की रिपोर्ट

दक्षिण-पूर्व एशिया में सूचना-सुविधाएँ

दक्षिण-पूर्व एशिया में ७५ करोड़ लोग ऐसे हैं जिन्हें दैनिक अखबार की सुविधा प्राप्त नहीं है और इसी प्रकार वे सूचना के दूसरे स्रोतों से भी वंचित हैं। यह बात यूनेस्को के एक नये प्रकाशन में बतायी गई है।

यूनेस्को के डायरेक्टर-जनरल ने इस प्रकाशन में बताया है कि दक्षिण-पूर्व एशिया में एक देश ऐसा भी है जहाँ कोई भी दैनिक अखबार नहीं है। एक देश और है जहाँ साल-भर में न्यूज़ प्रिंट की खपत १०० ग्राम प्रति व्यक्ति से भी कम है। फिर कुछ इलाके ऐसे भी हैं जहाँ हर सौ आदमी पर दो से भी कम रेडियो सेट हैं और ये लोग दो साल में मुश्किल से एक बार सिनेमा देखते हैं।

यूनेस्को ने यह कसौटी बनायी है कि जिस देश में प्रति सौ आदमी दैनिक अखबारों का औसत दस प्रतियों से कम, रेडियो सेटों का औसत पाँच से कम और सिनेमा-घरों में सीटों का औसत दो से कम हो उस देश के बारे में यह समझा जाएगा कि वहाँ सूचना के साधन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं हैं।

यूनेस्को के डायरेक्टर-जनरल ने आगे चलकर इस रिपोर्ट में बताया है कि "इस कसौटी पर परखने से पता चलता है कि दक्षिण-पूर्वी एशिया के लगभग सभी देशों में उन साधनों का अभाव है जिनसे वे उस ज्ञान का लाभ उठा सकें जो उन्हें उपलब्ध हो सकता है। इस गम्भीर परिस्थिति के कारण सामाजिक प्रगति में बाधा पड़ती है। निस्सन्देह आजकल इस बात पर जोर देना एक आम बात हो गई है कि सूचना के माध्यमों के विकास के बिना आर्थिक अथवा सामाजिक प्रगति नहीं हो सकती।

यूनेस्को के इस नए प्रकाशन में दक्षिण-पूर्वी एशिया के देशों की सरकारों और सूचना-प्रसार के माध्यमों के प्रतिनिधियों की उस बैठक की छानबीन के नतीजे और सिफारिशें दी गई हैं जो थाईलैंड की राजधानी बैंकाक में १८-१९ जनवरी १९६० को हुई थी। यह यूनेस्को के तत्वा-वधान में होनेवाली मीटिंगों के एक पूरे क्रम की पहली मीटिंग थी जो अलग-अलग प्रदेशों में सूचना-प्रसार की उपलब्ध सुविधाओं का मूल्यांकन करने तथा उनमें सुधार करने के सुझाव पेश करने के बारे में आयोजित की गई।

इस मीटिंग में जिन विभिन्न विषयों पर विचार किया गया उनमें यह विषय भी था कि एशिया के कुछ देशों की लिपियों में अखबार छापने में क्या कठिनाइयाँ सामने आती हैं, जैसे चीनी या जापानी भाषाओं की लिपियाँ, जिनमें एक विचार को व्यक्त करने के लिए एक अलग अक्षर इस्तेमाल किया जाता है और इसलिए अलग-अलग अक्षरों की संख्या बहुत अधिक होती है। परन्तु इस कठिनाई के बावजूद जापान ने अखबारों में इस्तेमाल करने के लिए इस प्रकार के अक्षरों की संख्या कम करके १,८५० तक पहुँचा दी है और आज जापान में ९७ दैनिक अखबार निकलते हैं जिनकी प्रतियों की कुल संख्या ३ करोड़ ६० लाख है। परंतु चीन के गणतन्त्र के अखबार अब भी निय-मित रूप से २-३ हजार अक्षर इस्तेमाल करते हैं और इसके अलावा ४ हजार अक्षर ऐसे और हैं जो कभी-कभी इस्तेमाल किए जाते हैं।

इस रिपोर्ट में बताया गया है कि रेडियो के क्षेत्र में इस प्रदेश के सभी देशों में रेडियो-प्रसार-केन्द्र हैं और लगभग सभी देशों में शार्ट-वेव की सुविधाएँ उपलब्ध हैं। तीन देशों में बहुत उच्च फ्रीक्वेन्सी के ट्रांसमीटर भी लगाये गए हैं। ज्यादातर देशों में रेडियो-प्रसार का काम सरकार के हाथों में है; परन्तु कई देशों में इसके साथ ही वाणिज्यिक आधार पर चलाए जाने वाले रेडियो-प्रसार-केन्द्रों की व्यवस्था भी है जो या तो स्वतन्त्र रूप से चलाये जाते हैं या सरकार के नियन्त्रण में काम करते हैं। इस प्रदेश के छः देशों में रेडियो रखने के लिए लाइसेंस लेना पड़ता है।

इन पूरे प्रदेशों में ऐसे लोगों की संख्या का अनुपात जिनके पास रेडियो हैं १०,००० में से ६ से लेकर १००० में १५८ तक है; इस पूरे इलाके में कुल ३ करोड़ ७० लाख रेडियो हैं अर्थात् औसत से प्रति १,००० लोगों में से २२.६ के पास रेडियो हैं।

यूनेस्को ने ५ प्रतिशत लोगों के पास रेडियो होने का जो न्यूनतम औसत निर्धारित किया है उससे यह संख्या बहुत ही कम है और मीटिंग में यह मत प्रकट किया गया कि इस संख्या को बढ़ाने की पूरी कोशिश की जानी चाहिए।

जहाँ तक टेलिविज़न का सवाल है, अनुभव से पता चलता है कि समाज की प्रभावशाली शक्तियाँ कभी-कभी किसी देश को ऐसे समय पर भी टेलिविज़न की स्थापना के लिए मजबूर कर सकती हैं, जबकि वह आर्थिक दृष्टि से इसके लिए तैयार न हो। इसलिए इस मीटिंग में विभिन्न देशों की सरकारों से यह अनुरोध किया गया कि वे अपनी आर्थिक तथा दूरगामी संचार की योजनाओं में टेलिविज़न को भी स्थान दें ताकि वे इस माध्यम के असाधारण तीव्र गति से विकसित होने के लिए तैयार रहें।

सरकारी, अर्ध-सरकारी तथा अन्य सार्वजनिक संस्थाओं से अनुरोध किया जाना चाहिए कि वे देहातों से निकलने वाले छोटे-छोटे अखबारों तथा पत्रिकाओं को विज्ञापन देकर और उनसे छपाई का काम कराकर उन्हें अधिक-से-अधिक प्रोत्साहन दें। देहातों के अखबारों को विशेष ऋण देने की सुविधाओं का भी सुझाव रखा गया है।

विभिन्न देशों के बीच फिल्मों के आदान-प्रदान के लिए और टेलिविज़न के लिए फिल्में एक-दूसरे को देने के लिए एक सहकारी प्रादेशिक कार्यालय की स्थापना का भी सुझाव रखा गया है। यह आवश्यक नहीं है कि यह कार्यालय खुद एक देश से फिल्में लेकर दूसरे देश को दे या इन फिल्मों को दिखाने के लिए अलग-अलग प्रदेशों में अपने कार्यालय खोले। इस आदान-प्रदान में जो फिल्में आयें वे फिल्में दिखाने का प्रबन्ध करनेवाली हर देश की साधारण संस्थाओं के जरिये दिखाई जा सकती हैं; यह अनुभव किया गया कि 'भाषा की बाधाएँ' होने के कारण इस प्रकार की फिल्मों के स्थानीय भाषाओं के संस्करण तैयार करना आवश्यक होगा।

इसलिए इस मीटिंग में यह सुझाव रखा गया कि प्रादेशिक वितरण कार्यालय स्थानीय भाषाओं में इन फिल्मों के रूपान्तर तैयार करने के लिए कोई नया संगठन बनाकर या उपलब्ध सुविधाओं को सहकारी आधार पर संगठित करके इस उद्देश्य को पूरा करे। इस मीटिंग में दक्षिण पूर्वी एशिया के लिए एक समाचार-एजेंसी स्थापित करने की सम्भावना पर भी विचार किया गया, लेकिन यह महसूस किया गया कि अभी इस योजना को क्रियान्वित करने का समय नहीं आया है और इसके बजाय सम्मेलन ने यह सुझाव रखा कि इस समय जो एजेंसियाँ मौजूद हैं उनके बीच ज्यादा बड़े पैमाने पर समाचारों का आदान-प्रदान हो और जिस देश में इस समय कोई समाचार-एजेंसी न हो वहाँ इस प्रकार की समाचार-एजेंसी स्थापित करने को प्रोत्साहन दिया जाए।

इस सम्मेलन में जो अन्य सुझाव दिये गए और जो इस रिपोर्ट में प्रकाशित किये गए हैं उनमें एक सुझाव यह भी है कि सूचना-प्रसार के सभी क्षेत्रों में ज्यादा बड़े पैमाने पर आदान-प्रदान हो और सब लोग अपने साधनों को एकत्रित करके मिलकर उनका उपयोग करें। •

हिन्द पॉकेट बुक्स

शकुंतला

श्री वागीश्वर ने 'अभिज्ञान शाकुन्तल' का सरल, सरस और हृदयग्राही गद्य-पद्यानुवाद प्रस्तुत किया है।

मुखपृष्ठ अतीव आकर्षक और कलापूर्ण
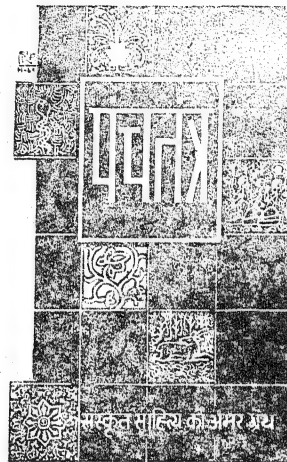
पंचतंत्र

'नवनीत' के यशस्वी सम्पादक श्री सत्यकाम विद्यालंकार द्वारा अनूदित यह प्रामाणिक अनुवाद है। इसकी टक्कर का दूसरा ग्रन्थ विश्व-साहित्य में और नहीं। हिन्दी के पाठकों के लिए इतना सस्ता और आकर्षक संस्करण अब तक प्रकाशित नहीं हुआ था।

जाल

कुछ लोग दूसरे लोगों को फँसाने के लिए जाल फैलाते हैं। यह मायाजाल कई तरह के धागों से बुना जाता है। आध्यात्मिक पाखण्ड के धागों से लेकर सुरा और सुन्दरी तक के धागों से। ऐसे ही एक जाल की कहानी श्री मन्मथनाथ गुप्त की कलम से।

कसक

अमृता प्रीतम का एक लघु उपन्यास और चुनी हुई कहानियाँ। रोमांटिक भावनाओं से भरपूर दर्दे-दिल की मुँह बोलती तस्वीरें!

प्रभावशाली व्यक्तित्व

स्वेट मार्डेन की इससे पूर्व 'सफल कैसे हों' तथा 'जैसा चाहो वैसा बनो' पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। पाठकों ने इन्हें पसन्द किया और इनकी बिक्री सबसे अधिक हुई। अपने व्यक्तित्व को प्रभावशाली बनाने के अनमोल गुर बताने वाली महान् पुस्तक!
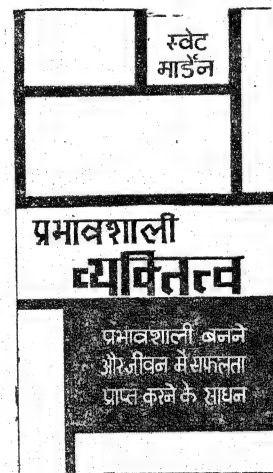
प्रत्येक का मूल्य

अब तक ६४ पुस्तकें प्रकाशित

सभी पुस्तक-विक्रेताओं एवं न्यूज़-पेपर एजेंटों से प्राप्य!

घोंसला

लोकप्रिय सिने-अभिनेता और लेखक किशोर साहू की ऐसी कहानियाँ जो पाठक के मन पर अपनी छाप छोड़ जाती हैं। किशोर साहू का अपना एक अलग ही तर्ज़-बयाँ है जो दूसरे कहानीकारों से उन्हें अलग करता है।

हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड, शाहदरा–दिल्ली–३२

ईरान में पुस्तकों का प्रकाशन तथा बिक्री

महमूद मुसाहब

यह लेख दक्षिण एशिया में यूनेस्को के पाठ्य-सामग्री सम्बन्धी प्रादेशिक केन्द्र के अप्रैल, '६१ के सूचना-बुलेटिन से साभार प्रकाशित किया जा रहा है।

पिछले बीस वर्षों में ईरान में पाठकों की संख्या लगातार बढ़ती रही है। फलस्वरूप पुस्तकों और पत्रिकाओं की संख्या भी बढ़ी है। पुस्तकों की छपाई, जिल्दसाज़ी और उनके लिए चित्र बनाने तथा छापने की आधुनिक सुविधाएँ उपलब्ध की गई हैं और पुस्तकों के वितरण के बेहतर तरीके अपनाए जा रहे हैं। प्रकाशन और पुस्तकों की बिक्री के क्षेत्रों में बहुत प्रगति हुई है और इसके फलस्वरूप आधुनिक दुकानें खुली हैं, नए प्रकाशन गृहों और अच्छे छापेखानों की स्थापना हुई है। बाजार में अब ज्यादा अच्छे क़िस्म की किताबें दिखाई देने लगी हैं, जिनमें संसार के अमर ग्रन्थों के अनुवाद शामिल हैं।

सुविधा की दृष्टि से हम पुस्तकों को दो श्रेणियों में बाँट सकते हैं: पाठ्य-पुस्तकें और अन्य पुस्तकें।

हर साल बीस लाख से अधिक पाठ्य-पुस्तकें छापी जाती हैं और जैसे-जैसे विद्यार्थियों की संख्या बढ़ती जा रही है वैसे-वैसे इन पुस्तकों की संख्या भी बढ़ती जा रही है। मार्च-अप्रैल, १९६० में विद्यार्थियों की संख्या इस प्रकार थी:

किंडरगार्टन	१७,०५८
प्राथमिक स्कूल	१,३२४,३७६
माध्यमिक स्कूल	२६५,२१०
विश्वविद्यालय	१७,९८२
नव-साक्षर:	
(१) प्रौढ़ शिक्षा-केन्द्रों में	४४२,१९४
(२) रात्रिकालीन पाठशालाओं में	१९,५४५
कुल	२,०८९,३६५

अब रोज औसत से ३-४ पुस्तकों के नए संस्करण प्रकाशित होते हैं, साल-भर में कुल मिलाकर १,२०० संस्करण। आम तौर पर हर संस्करण की २,००० प्रतियाँ छापी जाती हैं पर कभी-कभी संख्या इससे काफी अधिक होती है। जिन संस्थाओं के पास पुस्तकों के वितरण की व्यवस्था अच्छी है वे १५,००० से २०,००० प्रतियाँ तक छापते हैं। 'आत्मावलम्बी महापुरुष' नामक पुस्तक की, जिसमें शाहे-ईरान की लिखी हुई स्वर्गीय रज़ाशाह पहलवी की जीवनी भी शामिल है, १,००,००० प्रतियाँ प्रकाशित हुईं। यह इस बात का प्रमाण है कि ईरान में, जहाँ राष्ट्र-भाषा को किसी विदेशी भाषा की प्रतिस्पर्द्धा का मुक़ाबला नहीं करना पड़ा है, ज्यादा बिकने वाली पुस्तकें कितनी बिक सकती हैं।

* * *

ईरान-सरकार उपयुक्त पुस्तकों के प्रकाशन को महत्व देती है और लेखकों तथा अनुवादकों को प्रोत्साहन देती है। १९५३ में 'वर्ष की सर्वश्रेष्ठ पुस्तकों पर शाही पुरस्कार' की स्थापना की गई, तब से हर वर्ष विभिन्न क्षेत्रों में सबसे अच्छी पुस्तकों को पुरस्कार दिए जाते हैं। पुरस्कार-विजेताओं को शाह से साक्षात का सौभाग्य प्राप्त होता है और शाह अपने हाथ से उन्हें प्रमाण पत्र देता है। ६० से अधिक सुविख्यात लेखकों को इस प्रकार का सम्मान प्राप्त हो चुका है। इस प्रोत्साहन के फलस्वरूप अधिकाधिक लेखक अपने काम को बेहतर बनाने की कोशिश कर रहे हैं।

'वर्ष की सर्वश्रेष्ठ पुस्तकों' को चार श्रेणियों में

विभाजित किया गया है :

१—साहित्य

२—इतिहास अथवा भूगोल

३—विज्ञान

४—समाज-ज्ञान तथा सदाचार

इनमें के हर श्रेणी में तीन पुरस्कार दिए जाते हैं :

१—सबसे अच्छे लेखक को।

२—सबसे अच्छे संकलनकर्त्ता को।

३—सबसे अच्छे अनुवादक को।

हर पुरस्कार-विजेता को एक शाही सनद और एक पुरस्कार मिलता है।

हर श्रेणी में नक़द पुरस्कार की रक़म इस प्रकार होती है :

१—लेखक को	१,००,००० रियाल
२—संकलनकर्त्ता को	८०,००० रियाल
३—अनुवादक को	५०,००० रियाल

* * *

पुस्तकों का व्यापार बहुत प्राचीन काल से चला आ रहा है; इसका सबसे प्राचीन उल्लेख मिस्री-साहित्य में मिलता है। प्राचीन कवि और व्याख्यानदाता अपनी रचनाएँ सार्वजनिक सभाओं में पढ़कर सुनाते थे ताकि सुननेवालों में उनकी रचनाओं की लिखित प्रतियाँ खरीदने की प्रेरणा जागृत हो। पुराने ज़माने में जो लोग भोज-पत्र पर, पारचे पर या मिट्टी की सिलों पर लेखक का संदेश उसके मुँह से सुनकर अंकित करते थे या उसकी लिखित रचना को नक़ल करते थे वे वास्तव में, प्रथम पुस्तक-विक्रेता थे। जब उनसे कोई रचना माँगी जाती थी तो वे नकल करके दे देते थे। कहा जाता है कि अरस्तू के पास इस प्रकार की बहुत बड़ी लाइब्रेरी थी और अफ़लातून ने पाइथागोरस के शिष्य फ़िलोलाउस के तीन छोटे-छोटे गवेषणामूलक निबन्धों के लिए १०० मिने (प्राचीन यूनानी सिक्का) की बहुत बड़ी धन-राशि अदा की थी। लगभग ३०० ईसा-पूर्व में जब सिकंदरिया के पुस्तकालय की स्थापना की गयी थी उस समय पुस्तकें जमा करने के लिए कई तरीक़े अपनाए गए थे और इससे एथेन्स के पुस्तक-विक्रेताओं को बहुत प्रोत्साहन मिला था। रोम में, गणतन्त्र के अन्तिम

दिनों में, पुस्तकालय रखना एक फ़ैशन-सा हो गया था और पुस्तक-विक्रेताओं का कारोबार बहुत चमक उठा था।

मध्य-युग में ईरान में और दूसरे इस्लामी देशों में पुस्तकों का व्यापार बहुत बढ़ा। हर शहर में पुस्तक-विक्रेताओं के लिए, जिन्हें 'वारगान' कहते थे, खास बाज़ार होते थे। सभी बड़े-बड़े शहरों में पुस्तकालय भी थे। बादशाहों और शाहज़ादों को तरह-तरह की किताबें जमा करने का बड़ा शौक़ था।

ईरान के प्राचीन पुस्तकालयों की संख्या को देखते हुए और इस बात को ध्यान में रखते हुए कि उस ज़माने में पुस्तक की हर प्रति हाथ से लिखनी पड़ती थी, हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि उस ज़माने में पुस्तकों का व्यापार बहुत उन्नति पर रहा होगा।

पुस्तक-विक्रय का पाठकों की संख्या के साथ बहुत ही सीधा और घनिष्ठ सम्बन्ध है। जैसा कि हम ऊपर देख चुके है पिछले बीस वर्षों में, पाठकों की संख्या में वृद्धि के फलस्वरूप, प्रकाशित पुस्तकों और किताबों की दुकानों की संख्या भी बढ़ी है।

तेहरान के पुस्तक-विक्रेताओं की सभी दुकानें पहले बाज़ार में थीं। लगभग ५० वर्ष पहले उन्होंने व्यापार के नए केन्द्र ढूँढ़ने शुरू किए और नासिर खुसरो स्ट्रीट में दुकानें खोलीं। १९२९-३० से तेहरान की बड़ी-बड़ी सड़कों पर किताबों की दुकानें खोली गईं। आज शाहाबाद स्ट्रीट, नासिर-खुसरो स्ट्रीट, मुखबिरुद्दौला चौक और बाज़ार में पुस्तक-विक्रय के केन्द्र खुल गए हैं लेकिन शाहाबाद स्ट्रीट सबसे महत्वपूर्ण केन्द्र है।

१९४६-४७ में पुस्तक-विक्रेताओं ने अपना एक संघ बनाया जिसके सदस्यों की संख्या आरम्भ में ५० थी और अब बढ़कर १५० हो गई है। इनमें न केवल वे लोग हैं जो किताबों की दुकानें चलाते हैं बल्कि वे लोग भी हैं जिनकी किताबों की छोटी-छोटी दुकानें हैं।

तेहरान में किताबों की एक सबसे पुरानी दुकान 'खय्याम' है जिसकी स्थापना लगभग ६० वर्ष पहले हुई थी। कुछ दूसरी प्रमुख दुकानों के नाम हैं बर्नी, इब्ने-सीना, इक़बाल, गंजे-दानिश, मरकज़ी, सआदत इत्यादि।

सरकार को अदा किए गए टैक्स के अनुसार सबसे बड़ी किताबों की दुकानें ये हैं : अकादीमिया, अमीर-कबीर, बेरुख़िम, इब्ने-सीना, इल्मी, अल-अख़बार, एच० एम० ए० (इल्मी), एच० एम० एच० (गूटेनबर्ग) इस्लामिया और मारफ़त।

सभी बड़े-बड़े शहरों में और छोटे-छोटे शहरों में भी किताबों की दुकानें हैं।

तेहरान के पुस्तक-विक्रेताओं में लगभग ३० प्रकाशक भी हैं। वे लेखकों, संकलनकर्त्ताओं तथा अनुवादकों की पुस्तकें छापते हैं।

दूसरे शहरों में भी ऐसे पुस्तक-विक्रेता हैं जो प्रकाशक भी हैं जैसे (इस्फ़हान में) सहाफ़ी और ताईद, (मशहर में) बुस्तान और जव्वार, (शीराज़ में) मारफ़त (तब्रीज़ में) चेहर, सरोश, तरबियत और तेहरान।

जैसा कि हम पहले बता चुके हैं, ईरान में शिक्षा के प्रसार के साथ-साथ व्यावसायिक प्रकाशकों के अलावा पुस्तकें छापने और प्रकाशित करने के लिए नई तथा आधुनिक संस्थाएँ हाल में स्थापित की गई हैं। इनमें सबसे महत्वपूर्ण हैं : बी० टी० एन० के० और फ्रैंकलिन पब्लिकेशन इनकार्पोरेटेड।

बी० टी० एन० के० की स्थापना शाहे-ईरान की आज्ञा से १९५४ में की गई थी। इसका उद्देश्य संसार की सर्वश्रेष्ठ पुस्तकों का अनुवाद कराकर ईरानी भाषा में छापना है। विदेशी साहित्य के कुछ अनुवाद प्रकाशित करने के बाद अब वह ईरान-विद्या और बाल-साहित्य पर अपना ध्यान केन्द्रित कर रही है। अब तक वह सौ से अधिक पुस्तकें प्रकाशित कर चुकी है।

फ्रैंकलिन पब्लिकेशन इनकार्पोरेटेड, विदेशों में उन देशों की भाषाओं में अमरीकी पुस्तकें प्रकाशित करने के लिए स्थापित किया गया, एक कार्पोरेशन है जिसका उद्देश्य मुनाफ़ा कमाना नहीं है। यह संगठन विश्वविद्यालयों, फाउंडेशनों, सरकारी एजेंसियों, शोध-संस्थाओं और विभिन्न सांस्कृतिक संगठनों के साथ मिलकर काम करता है। इसका मुख्य कार्यालय न्यूयार्क में है और इसके कार्यालय संयुक्त अरब गणराज्य, लेबनान, ईराक, ईरान, पाकिस्तान, मलाया और इण्डोनेशिया में हैं।

(शेष पृष्ठ ४५२ पर)

पुस्तक-परिचय

सुनीता हिन्दी के ख्यातनामा उपन्यासकार श्री जैनेन्द्र-कुमार का अत्यन्त लोकप्रिय उपन्यास है। इसका प्रकाशन जन-साधारण के लाभ के लिए अब **राजकमल प्रकाशन दिल्ली** ने अब अपनी सस्ती 'राजकमल पाकेट बुक्स' सिरीज़ के अन्तर्गत किया है। इस उपन्यास के पहले हिन्दी में कई संस्करण हो चुके हैं। मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की शृंखला में सुनीता का प्रमुख स्थान है। इसमें श्रीकान्त, सुनीता और हरिप्रसन्न के जीवनों की कहानी अत्यन्त मार्मिक और रसोद्रेकमयी शैली में कही गई हैं। इसमें हमारे पाठक झूठी, परम्परा और संस्कारों के बन्धनों को तोड़कर अपने योग्य शरीर को पर-पुरुष के सम्मुख अनावरित करने वाली सुनीता, व्यवहार-जगत् से असम्पृक्त, देश के लिए प्राण होम करने को उत्सुक, संकट को प्रतिक्षण चुनौती देने वाले लेकिन सुनीता के आकर्षण के आगे असहाय हरिप्रसन्न, और अपने अधिकारों के बलात् प्रदर्शन से विमुख, निस्पृह, बालमित्र हरिप्रसन्न के प्रति अत्यन्त स्नेह-सिक्त और पत्नी सुनीता के प्रति अटूट विश्वास रखने वाले श्रीकान्त की कहानी पढ़ेंगे। २१५ पृष्टों का यह उपन्यास १ रु० ५० न० पै० में प्राप्य है।

* * *

मोहल्ले की बुआ श्रीमती बिन्दु अग्रवाल का नवीनतम सामाजिक एवं पारिवारिक उपन्यास है। इसमें लेखिका ने आपके-हमारे परिवार की बुआ का अत्यन्त सहानुभूतिपूर्ण तथा सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है। इस उपन्यास की नायिका अपनी बुद्धि और परम्परा के कारण पिछले युग से अटूट सम्बन्ध रखते हुए भी अपनी अपार सहानुभूति और उदार प्रकृति के बल पर नये युग की प्रगति को आशीर्वाद देने में सफल हुई है। उत्तर भारत के एक मध्य-वित्त परिवार की नारी का चरित्र जिस प्रकार इस उपन्यास में उभरकर सामने आया है, वह अतीव सम्पूर्ण और सजीव है। इस उपन्यास में हमारे पाठक अपने परिवार के अन्तरंग जीवन के मुँहबोलते पात्रों से परिचय प्राप्त कर सकेंगे। इसका प्रकाशन भी **'राजकमल पाकेट बुक्स'** के अन्तर्गत हुआ है और यह एक रुपये में प्राप्य है।

* * *

अछूत अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त उपन्यासकार **श्री मुल्कराज** आनन्द की अत्यन्त ख्यातिप्राप्त अंग्रेज़ी कथा-वृत्त का हिन्दी अनुवाद है। इसके पूर्व इस उपन्यास के हिन्दी में कई संस्करण हो चुके हैं। अब इसे **राजकमल प्रकाशन, दिल्ली** के अपनी 'पाकेट बुक्स' सिरीज़ के अन्तर्गत प्रकाशित किया है। इस उपन्यास में लेखक ने बक्खा भंगी के जीवन के एक ऐसे तूफानी दिन की कहानी चित्रित की है, जिसमें इन्सान की ज़िन्दगी खरीदे हुए गुलामों से भी बदतर होती है। इस उपन्यास की कहानी इस प्रकार की परिस्थितियों में पलने वाले इस समाज के लिए कड़ी चुनौती है। इस उपन्यास के लेखक श्री मुल्कराज आनन्द न केवल भारत में, वरन् विश्व-भर में सफल उपन्यासकार के रूप में ख्याति-प्राप्त कर चुके हैं। यह उपन्यास उनकी सफलतम कृतियों में से है। इस उपन्यास को इस सस्ते संस्करण में प्रकाशित करके प्रकाशक ने इसे लोक सुलभ कर दिया है। पाकेट साइज के १६४ पृष्ठ का यह उपन्यास केवल एक रुपये में प्राप्य है।

* * *

किस्सा हातिमताई की नायिका हुस्नबानो बरजख सौदागर की हसीन बेटी थी। दुनिया का हर नौजवान उससे शादी करने का ख्वाहिशमन्द था। लेकिन उसकी शर्तें कौन पूरी करे? दूसरे की खातिर अपनी जान बार-बार जोखिम में डालकर हुस्नबानो के सातों सवालों के जवाब लाने वाले यमन के शाहज़ादे हातिमताई की दिलकश कहानी इस पुस्तक में नये रूप और नई भाषा में पहली बार हिन्दी-पाठकों के सामने हाज़िर है। पाकेट साइज के १७५ पृष्ठ की इस पुस्तिका का प्रकाशन भी **राजकमल प्रकाशन, दिल्ली** ने अपनी 'पाकेट बुक्स' सिरीज़ के अन्तर्गत किया है और

यह १ रुपये में प्राप्य है।

* * *

कहानी

उग्र की श्रेष्ठ कहानियाँ में हिन्दी के ख्यातनामा शैलीकार, कथाकार और उपन्यासकार पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' की प्रतिभा के विविध रूपों की परिचायक १२ श्रेष्ठ और रोचक कहानियाँ संकलित हैं। बाहर से निर्मम और कठोर दीख पड़ने वाले इस कथाकार के भीतर कहीं कितनी कोमलता और भावुकता छिपी पड़ी है, वह इस कहानी-संग्रह से स्पष्ट होगी। **'राजकमल पाकेट बुक्स'** के अन्तर्गत प्रकाशित इस पुस्तक का मूल्य एक रुपया मात्र है।

* * *

चुम्बकों का घर में श्री भगवतस्वरूप चतुर्वेदी की हत्या, चोरी, डकैती की असली और रोमांचकारी कहानियाँ संकलित की गई हैं। इनके लेखक श्री चतुर्वेदी पुलिस-विभाग में एक बड़े अधिकारी हैं, अतः इन्हें लेखक ने निजी जानकारी के आधार पर लिखा है। यह संग्रह हिन्दी में मनोरंजक साहित्य के बड़े अभाव की पूर्ति करने में सहायक होगा, ऐसी आशा है। **राजकमल प्रकाशन** की 'पाकेट बुक्स' के अन्तर्गत प्रकाशित १३४ पृष्ठ की यह पुस्तक केवल एक रुपये में प्राप्य है।

* * *

भारतीय पौराणिक कथाएं नामक इस पुस्तक में श्री भोलानाथ तिवारी ने भारतीय पौराणिक कथाओं का एक संग्रहणीय संकलन प्रस्तुत किया है। इसमें हमारे पाठक प्रागैतिहासिक युग के उन नायकों और अग्रणियों के लोकमान्य चरित्र पढ़ेंगे, जिन्हें धर्म और परम्परा देवत्व के सिंहासन पर प्रतिष्ठित कर चुके हैं। इस पुस्तक में संग्रहीत प्रायः सभी कथाएँ पढ़कर हमारे पाठक हिन्दू-धर्म की ऐसी जानकारी प्राप्त करेंगे, जिससे हमारे देश का धार्मिक और सामाजिक चित्र उभरकर सामने आएगा। **राजकमल प्रकाशन** की 'पाकेट बुक्स' के अन्तर्गत प्रकाशित यह १५९ पृष्ठ की पुस्तिका केवल एक रुपये में प्राप्य है।

* * *

रीति-काव्य संग्रह में डा० जगदीश गुप्त ने रीतिकाल से लेकर भारतेन्दु हरिश्चन्द्र तक के लगभग २३ कवियों के ब्रजभाषा-काव्य का संकलन प्रस्तुत किया है, और प्रारम्भ में 'रीति-काव्य की पूर्व-परम्परा तथा आधार-भूमि', 'रीति-कवि के व्यक्तित्व की रूपरेखा', 'रीति-काव्य का कला-पक्ष एवं सौन्दर्य-बोध', 'रस-अलंकार-शास्त्र और नायिका-भेद', 'रीति-काव्य की भाषा और रीतिकालीन छन्द' आदि विभिन्न अध्यायों के अन्तर्गत रीति-काव्य का सांगोपांग विवरण प्रस्तुत किया है। डिमाई साइज के ५०० पृष्ठों का यह ग्रंथ **साहित्य भवन (प्रा०) लिमिटेड, प्रयाग** ने प्रकाशित किया है और यह दस रुपये मात्र में प्राप्य है।

* * *

शिला पंख चमकीले में श्री गिरिजाकुमार माथुर की लगभग ३४ नई कविताएँ संकलित हैं, इन कविताओं में कवि ने लगभग ४७ नए शब्दों का प्रयोग किया है जिनकी तालिका पाठकों की सुविधा के लिए प्रकाशक ने प्रस्तुत कर दी है। नई कविता के प्रेमी पाठक इससे अवश्य ही लाभान्वित होंगे, डिमाई साइज के ८८ पृष्ठों की यह पुस्तक **साहित्य भवन (प्रा०) लिमिटेड प्रयाग** से प्रकाशित हुई है और साढ़े दस रुपये में मिलती है।

* * *

नाटक

प्रतिनिधि हास्य एकांकी का प्रकाशन इसके प्रकाशक **आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली** ने अपनी 'प्रतिनिधि साहित्य माला', नामक पुस्तकमाला के अन्तर्गत किया है। इसमें इसके सम्पादकों (श्रीकृष्ण, अरुण, मनमोहन सरल) ने हिन्दी के लगभग २३ श्रेष्ठ एकांकीकारों के सरल और रोचक एकांकी संकलित किए हैं। इन एकांकियों की भाषा सरल, सरस और बोल-चाल की है, जिनमें चुस्त मुहावरों और चुटीले-तीखे व्यंगों ने और भी रोचकता ला दी है। हिन्दी में शिष्ट हास्य एकांकियों का यह पहला बृहद् संग्रह है, अतः अभिनन्दनीय, पठनीय और संग्रहणीय है। आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली की ओर से प्रकाशित डिमाई साइज के ३६२ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक १० रुपये में प्राप्य है। उपयोगिता की दृष्टि से सम्पादकों ने इस संकलन के कलाकार एकांकीकारों के संक्षिप्त परिचय भी दे दिए हैं।

* * *

स्त्रियोपयोगी

घर गिरस्ती में श्रीमती शकुन्तलादेवी ने घर और परिवार को अधिक सुखी, स्वस्थ व आकर्षक बनाने के लिए गृहिणी को पूरी जानकारी देने की दृष्टि से इस पुस्तक का निर्माण किया है। नारी के सामने प्रतिदिन पेश होने वाले अनेक सवालों का उत्तर सरल और रोचक शैली में आपको इस पुस्तक में मिलेगा। गृहस्थी की इमारत जिन अनेकानेक पहलुओं पर टिकी है, उनकी पूरी जानकारी इस पुस्तक में पाकर आशा है हमारे पाठक अपने जीवन को सम्पूर्ण रूप से सुखी तथा समृद्ध बनाने का प्रयत्न करेंगे। **राजकमल प्रकाशन, दिल्ली** की 'पाकेट बुक्स' सिरीज़ में प्रकाशित यह पुस्तक केवल एक रुपये में प्राप्य है।

* * *

राजनीति

विवेक और विनाश प्रख्यात मनोविज्ञानवेत्ता और दार्शनिक वर्ट्रेण्ड रसेल की अत्यन्त ख्यातिप्राप्त कृति 'कॉमन सैन्स एण्ड न्यूक्लीयर वारफेयर' का हिन्दी अनुवाद है। अनुवादक हैं श्री वीरेन्द्र त्रिपाठी। इस पुस्तक में लेखक ने शान्ति प्राप्त करने के अनेक ऐसे उपायों का वर्णन किया है जो साम्यवादी राष्ट्रों, नाटो राष्ट्रों और तटस्थ राष्ट्रों सभी को समान रूप से स्वीकार्य हों। पूर्वी और पश्चिमी जगत् की राजनीतिक, आर्थिक धारणाओं के अतिरिक्त नाभिकीय युद्ध के खतरों से संबन्धित धारणाओं का किंचित् दिग्दर्शन पाठक इस पुस्तक में पाएँगे। क्राउन साइज के ७६ पृष्ठों की यह सजिल्द पुस्तक **राजकमल प्रकाशन, दिल्ली**

ने प्रकाशित की है और यह दो रुपये ५० न० पै० में प्राप्य है।

* * *

विनोबा की ज्ञान गंगा में नामक इस पुस्तक में राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद की निजी सचिव डॉ० ज्ञानवती दरबार ने अपने वे संस्मरण अंकित किए हैं, जो उन्होंने उनके सम्पर्क में आकर प्राप्त किये हैं। निजी अनुभवों और संस्मरणों के आधार पर लेखिका ने इस पुस्तक में 'विनोबा' जी के जीवन की बहुत-सी ऐसी बातें इस पुस्तक में अंकित की हैं, जिनसे हमारे पाठक अवश्य ही लाभान्वित होंगे। विनोबा के स्वभाव और विचारों पर प्रकाश डालने वाली इस पुस्तक का हिन्दी-जगत् स्वागत करेगा, ऐसी आशा है। क्राउन साइज़ के २१८ पृष्ठ की इस पुस्तक का प्रकाशन **रंजन प्रकाशन, दिल्ली** ने किया है और यह ढाई रुपये में प्राप्य है।

* * *

यात्रा

जंगल की ओर नामक इस पुस्तक के लेखक श्री सुरेश वैद्य अंग्रेजी के अच्छे पत्रकार और लेखक हैं। यह पुस्तक उनकी 'अहेड लाईज़ दि जंगल' नामक अंग्रेज़ी पुस्तक का हिन्दी अनुवाद है। इसमें वन और वनों में बसने वाले अनेक पशु-पक्षियों के जीवन की मनोरंजक कहानियाँ प्रस्तुत की गई हैं। इस पुस्तक में जिस यात्रा का उल्लेख किया गया है, उसके लिए लेखक और उसके साथियों की भारत के पूरब, पश्चिम, उत्तर तथा दक्षिण में हज़ारों मीलों के क्षेत्र में घूमना पड़ा है। मैसूर के जंगलों से लेकर मद्रास, त्रिवांकुर, कोचीन, गिर आसाम और मध्य भारत का पर्यटन करना पड़ा है। लेखक की इस यात्रा का उद्देश्य मात्र मनोरंजन न होकर वन्य पशुओं के रहन-सहन की जानकारी प्राप्त करना था। प्रकृति-प्रेमियों, प्राणीशास्त्र के विद्यार्थियों और शिकारियों के लिए यह पुस्तक सर्वथा पठनीय और उपादेय है। **आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित डिमाई साइज़ के २०२ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक छः रुपये में प्राप्य है। विषयानुकूल यत्र-तत्र यथाप्रसंग दिये गए चित्रों के कारण यह पुस्तक और भी उपादेय हो गई है।

* * *

ग्रामोपयोगी

चरखा संघ और नव संस्करण नामक इस पुस्तक में अ० भा० चरखा संघ के विभिन्न परिवर्तित रूपों की विस्तृत जानकारी प्रस्तुत की गई है। इस पुस्तक को पढ़कर हमारे पाठक चरखा संघ के लक्ष्य तथा नई कार्य-प्रणाली से भलीभाँति अवगत हो सकते हैं। यह इस पुस्तक का दूसरा संस्करण है, जो १५ वर्ष बाद प्रकाशित हुआ है। **अ० भा० सर्वसेवा संघ, वाराणसी** द्वारा प्रकाशित १२२ पृष्ठ की यह पुस्तक एक रुपये में प्राप्य है।

* * *

आगे का कदम में खादी ग्रामोद्योग के नए मोड़ के सन्दर्भ में यह समझाने का प्रयास किया गया है कि खादी-प्रेमियों और सर्वोदय-सेवकों को अब आगे क्या कदम उठाना चाहिए? इसमें खादी और ग्रामोद्योग के सम्बन्ध में सर्वश्री जवाहरलाल जैन, शंकरराव देव, प्रेमनारायण माथुर, रा० क० पाटिल, विचित्र नारायण शर्मा, धीर भाई देसाई और श्रीकृष्णदास गांधी आदि के विचार संकलित किये गए हैं। **अ० भा० सेवा संघ, वाराणसी** द्वारा प्रकाशित १०० पृष्ठ की यह पुस्तिका ७५ न० पै० में प्राप्य है।

* * *

भारत में लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण नामक इस पुस्तक में श्री तेजमल दक और गोपीनाथ गुहा ने प्रथम खंड में 'सत्ता, अधिकार और प्रशासन,' 'प्रशासनिक समस्याएँ तथा उनका केन्द्रीकरण और विकेन्द्रीकरण', और 'लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की विचारणा' आदि महत्त्वपूर्ण विषयों पर प्रकाश डालकर दूसरे, तीसरे, चौथे, पाँचवें और परिशिष्ट खण्डों में ग्राम-पंचायतों, जिला-परिषदों के अधिकारों और कर्तव्यों पर विस्तार से विचार किया है। डिमाई साइज़ के १९४ पृष्ठ की इस सजिल्द पुस्तक का प्रकाशन **दत्तबन्धु प्राइवेट लि०, अजमेर** ने किया है और यह पाँच रुपये में प्राप्त की जा सकती है।

* * *

(शेष पृष्ठ ४५४ पर)

आगामी मास के प्रकाशन

आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली

—**मेरी तैंतीस कहानियाँ**, श्री शैलेश मटियानी

—**अपराह्न**, श्री उदयशंकर भट्ट, कविता-संग्रह

—**नहुष-निपात**, श्री उदयशंकर भट्ट, काव्य

—**दिमाग़ का बीमा**, श्री न० र० टण्डन, एकांकी संग्रह

—**श्रद्धेय के प्रति**, आचार्य तुलसी, कविता-संग्रह.

—**धरती माता**, श्री रामचन्द्र तिवारी, ज्ञान विज्ञान

सप्तसिन्धु प्रकाशन, ग़ाज़ियाबाद

—**एक मनुष्य : तीन चेहरे**, हैन्स ओटो मैसनर, अनुवादक श्रीमती रीता चौधरी

—**उठती दीवारें : हिलती नींव**, पु० मु०, डॉ० स्काट हेलन निअरिंग, अनु० डॉ० नरेन्द्र चौधरी

—**अनारकली**, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, अनु० चौ० शिवनाथसिंह शाण्डिल्य, कहानी-संग्रह

—**वहशी**, श्री देश चित्रकार

—**धूम्रपान**, डॉ० जान मानस, अनुवादक श्री प्रीतमसिंह गोस्वामी

—**बेसब्र दुलहन**, डा० एस० डी० शर्मा, प्रहसन

●

(पृष्ठ ४३३ का शेष)

आन्ध्र प्रदेश बुक डिस्ट्रिब्यूटर्स ने तेलुगु की पुस्तकों के वितरण के लिए एक सफल योजना चलाई है जिसके अनुसार स्थायी ग्राहकों को १८ मास के लिए लगातार ५ रुपया प्रतिमास देना होता है। बदले में वे अपनी पसन्द की सौ रुपयों की पुस्तकें ले सकते हैं— इसके अतिरिक्त ९ निःशुल्क भेंट की हुई पुस्तकें, एक साहित्यिक मासिक पत्रिका के १८ अंक एवं भेजी जाने वाली पुस्तकों की फ्री पैकिंग तथा फ्री डिलीवरी की सुविधा मिलेगी। जो १८ मास तक अपना शुल्क दे देंगे, उन्हें जीवन-भर उधार की सुविधा तथा पुस्तकों के प्रकाशित मूल्य पर १० प्रतिशत कमीशन दिया जाएगा।

इस समय तक स्थायी ग्राहकों की संख्या ३५०० तक पहुँच चुकी है। आर्डर देने वालों में आन्ध्र राज्य के २०० जनसंख्या के ग्राम निवासी भी हैं। ग्राहकों में ३०·६ प्रतिशत किसान हैं और ६ प्रतिशत मजदूर।

* * *

(पृष्ठ ४४४ का शेष)

तेहरान-कार्यालय में ईरानी काम करते हैं और उसके संचालक मिस्टर सनती हैं। इस कार्यालय ने १९५४ में काम करना आरम्भ किया था। १९५९ में तब्रीज़ में इसकी एक शाखा खोली गई। फ्रैंकलिन पब्लिकेशन ने ईरान में विभिन्न विषयों की २५० से अधिक पुस्तकें प्रकाशित की हैं और इतनी ही पुस्तकें छप रही हैं। इनमें ये विषय शामिल हैं : बच्चों की पुस्तकें, जीवनी, मनोविज्ञान, इस्लाम का इतिहास, सरल विज्ञान इत्यादि।

अमरीकी पुस्तकों के अनुवाद प्रकाशित करने में सुविधा प्रदान करने के अतिरिक्त फ्रैंकलिन पब्लिकेशन ने कुछ विशेष योजनाएँ भी शुरू की हैं। इनमें ईरान के शिक्षा-मन्त्रालय को पाठ्य-पुस्तकें तैयार करने में सहायता देने की योजना, ईरानी पाठ्य-पुस्तकों के सम्पादकों को प्रशिक्षित करने की योजना और एक जिल्द में सामान्य ज्ञान का विश्व-कोष तैयार करने की योजना शामिल हैं।

●

मई मास के प्रकाशन

आलोचनात्मक

जयनाथ नलिन, **विद्यापति : एक तुलनात्मक समीक्षा,** ३७५, डि०, बंसल एण्ड क०, दिल्ली ११.००

पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश', **राजा राधिका रमण प्रसाद सिंह,** २९२, क्रा०, बंसल एण्ड क०, दिल्ली ६.००

उपन्यास

अमृता प्रीतम, **कसक,** १२०, पाकेट, हिन्द पाकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली १.००

किस्सा हातिमताई, १७५, पाकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १.००

खुशवन्तसिंह अनु० प्राणनाथ सेठ, **पाकिस्तान मेल**

जैनेन्द्र कुमार, **सुनीता,** २१५, पाकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १.५०

बिन्दु अग्रवाल, **मोहल्ले की बुआ,** १५२, पाकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १.००

मन्मथनाथ गुप्त, **जाल,** १४४, पाकेट, हिन्द पाकेट बुक्स, प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली १.००

मुल्कराज आनन्द, अनु० श्यामू सन्यासी, **अछूत,** १६२, पाकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १.००

शैलेश मटियानी, **चिट्ठी रसैन,** २५६, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली ४.५०

कविता-शायरी

उदयशंकर भट्ट, **कणिका,** ६२, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली १.५०

प्रकाश पण्डित, **जगन्नाथ आजाद जीवनी और संकलन,** ९६, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली १.५०

कहानी

आचार्य चतुरसेन, **कहानी खत्म हो गई,** २६०, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली ४.००

किशोर साहू, **घोंसला,** १२८, पाकेट, हिन्द पाकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली १.००

ख्वाजा अहमद अब्बास, **इन्कलाब,** ४४३, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली ६.००

पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', **उग्र की श्रेष्ठ कहानियाँ,** १२७, पाकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १.००

भगवत स्वरूप चतुर्वेदी, **चुम्बकों का घर,** १३३, पाकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १.००

भोलानाथ तिवारी, **भारतीय पौराणिक कथाएँ,** १५६, पाकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १.००

विष्णु शर्मा, अनु० सत्यकाम विद्यालंकार, **पंचतंत्र,** १३६, पाकेट, हिन्द पाकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली १.००

हरिप्रकाश वशिष्ठ, **मिट्टी की लोथ,** २००, क्रा०, बंसल एण्ड क०, दिल्ली ४.००

नाटक

कालिदास अनु०, वागीश्वर, **शकुन्तला,** १३६, पाकेट, हिन्द पाकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली १.००

बाल साहित्य-प्रौढ़ साहित्य

धर्मपाल शास्त्री **आओ मिलकर गाएँ**, १६, कापी, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली ०.७५

मनमोहन सरल, **विज्ञान की कहानियाँ**, १०४, क्रा० आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली ५.००

मनमोहन सरल, **साहस की कहानियाँ**, १०४, क्रा० आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली ५.००

रमेशचन्द्र 'प्रेम', **दानवसरट**, ६४, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली २.००

रमेशचन्द्र 'प्रेम' **देश-विदेश की विचित्र प्रथाएँ**, ६६, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली २.५०

रामचन्द्र तिवारी, **अपना देश**, ४०, कापी, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली १.२५

सत्यप्रकाश अग्रवाल, **एक डर; पाँच निडर**, १६०, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली ३.००

सन्तराम बी० ए०, **पहाड़ी प्रदेशों की कहानियाँ**, १०३, उ० क्रा०, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली २.००

विविध

आशारानी वोहरा, **वस्त्र विज्ञान**, २४०, डि०, आत्माराम एण्ट सन्स, दिल्ली ६.००

शकुन्तला देवी, **घर गिरस्ती**, १४४, पाकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १.००

स्वेट मार्डेन अनु० मोहिनी राव, **प्रभावशाली व्यक्तित्व**, पु० मु०, ११२, पाकेट, हिन्द पाकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहरा-दिल्ली १.००

(पृष्ठ ४५१ का शेष)

बालोपयोगी

मुन्नू मुन्नू में हिन्दी के तरुण कवि श्री सरस्वती कुमार 'दीपक' द्वारा लिखित २४ बालोपयोगी कविताओं का संकलन है। इन कविताओं का विषय और भाषा ऐसी है, जिन्हें बच्चे खेल-खेल ही में आसानी से याद कर सकते हैं और इनसे लाभ उठा सकते हैं। प्रत्येक कविता विषयानुरूप चित्र से सुसज्जित हैं। अनेक विषयों और बहुरंगे चित्रों से सुसज्जित यह कविता-पुस्तक प्रत्येक बच्चे को अवश्य ही पढ़नी चाहिए। **आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित, कापी साइज़ के ४८ पृष्ठ की यह पुस्तक दो रुपये में प्राप्य है।

* * *

बिहार की लोक-कथाएँ (भाग २), **मिथिला की लोक-कथाएँ** (भाग २) तथा **गढ़वाल की लोक-कथाएँ** (भाग २) नामक इन तीन पुस्तकों का प्रकाशन **आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली** ने अपनी **'सचित्र लोक-कथामाला'** नामक पुस्तकमाला के अन्तर्गत किया है। इन तीनों पुस्तकों में से पहली दो के लेखक श्री शिवमूर्तिसिंह 'वत्स' और तीसरी के लेखक डॉक्टर गोविन्द 'चातक' हैं। तीनों पुस्तकों में उन-उन प्रदेशों की लोक-कथाएँ संकलित हैं। भाषा, शैली और रोचकता सभी दृष्टियों से ये पुस्तकें पठनीय हैं। सारी कहानियों में यथाप्रसंग दिये गए चित्रों से इन पुस्तकों की उपादेयता और भी बढ़ गई है। प्रत्येक पुस्तक एक रुपया पचास न० पै० में मिलती है।

* * *

आलोचना, निबन्ध

साहित्य-पथ में सन्त-साहित्य के मर्मी विद्वान् और चिन्तक श्री परशुराम चतुर्वेदी के साहित्य के विभिन्न पक्षों पर प्रकाश डालने वाले लगभग २३ निबन्ध संकलित हैं। इन लेखों में अधिकांश नये प्रश्नों पर समाधान परक प्रकाश डालने वाले हैं। इसी प्रकार **'मध्यकालीन शृङ्गारिक प्रवृत्तियाँ'** में श्री चतुर्वेदी के भक्ति और रीतिकाव्य से सम्बन्धित ८ निबन्ध संकलित हैं। उक्त दोनों पुस्तकों में चतुर्वेदीजी के स्फुट लेख ही संग्रहीत हैं। **साहित्य भवन लिमिटेड, प्रयाग** की ओर से प्रकाशित क्राउन साइज़ के क्रमशः २५६ और १७६ पृष्ठ की यह दोनों सजिल्द पुस्तकें चार और तीन रुपये में प्राप्य हो सकती हैं।

* * *

प्रकाशन समाचार

वर्ष : ८
अंक : ११
वार्षिक : ३.००
एक प्रति : ०.३१

सम्पादक : ओंप्रकाश, डायरेक्टर इंचार्ज, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड

इसकी शिकायत आम की जाती है कि स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद से देश में शिक्षा का स्तर निरन्तर गिरा है, और अब तक उसकी उन्नति की तो क्या बल्कि स्तर की गिरावट की रोकथाम की भी कोई व्यवस्था नहीं की जा सकी है। जो स्कूली शिक्षा पाना चाहते हैं, उनकी संख्या में प्रतिवर्ष वृद्धि हुई है, लेकिन उस अनुपात में स्कूलों, अध्यापकों और शिक्षायोजन के लिए आवश्यक वित्तीय साधनों की वृद्धि नहीं हो सकी। इस सबके अतिरिक्त और काफ़ी महत्व का जो कारण बताया जाता है, वह है उपलब्ध पाठ्य-पुस्तकों के स्तर में बराबर ह्रास !

पाठ्य-पुस्तकों के स्तर में गिरावट का मुख्य दायित्व प्रकाशकों पर डालकर अनेक राज्यों की सरकारों ने इस कार्य का राष्ट्रीयकरण कर लिया है, लेकिन राष्ट्रीयकृत पाठ्य-पुस्तकों का स्तर किसी कद्र ऊँचा नहीं हुआ है, न सरकारी यंत्र-तंत्र वक्त पर और न उचित खूबसूरती से इन पुस्तकों को छाप ही पाते हैं। न केवल इन पुस्तकों का प्रकाशन ही उचित ढंग से हो रहा है, वरन् जनता की इनके वितरण के विरुद्ध भी गम्भीर शिकायत है।

प्रकाशकों की, चाहे वे व्यक्तिगत प्रकाशक हों अथवा सरकारी प्रकाशक, यह शिकायत है कि पाठ्य-पुस्तकों का निर्धारण करने वाली समितियाँ अपने निर्णय समय पर नहीं करतीं और मुद्रण के लिए उन्हें बहुत कम समय देती हैं। उन्हें जरूरी क्वालिटी का कागज जरूरी मिकदार में ठीक भावों पर नहीं मिल पाता। इन शिकायतों में सार है और ये सरकारी सहायता के बिना दूर नहीं हो सकतीं।

पाठ्य-पुस्तकों के निर्धारण की व्यवस्था पर भ्रष्टाचार का आरोप भी गम्भीरता से लगाया जाता है। कहा जाता है कि अनेक पाठ्य-पुस्तक-समितियों के सदस्य पुस्तकों पर कम, पुस्तकों के प्रकाशकों पर और उन प्रकाशकों द्वारा प्रदत्त प्रलोभनों पर अधिक विचार करते हैं। अनेक समितियों में सम्बन्धित विषय के विद्वानों की जगह ऐसे लोग भर जाते हैं जो जनतान्त्रिक व्यवस्था के नाम पर अधिक वोट पाकर केवल इसलिए इन समितियों की सदस्यता उत्सुकता से बनाये रखना चाहते हैं कि उनसे वे अर्थ-लाभ कर सकेंगे !

हिन्दी की एकाधिक पाठ्य-समितियों के, उदाहरणस्वरूप पंजाब, दिल्ली और उत्तर प्रदेश में, संस्कृत के और अन्य विषयों के अध्यापक भी सदस्य बने हुए हैं। हिन्दी से उनका नाता काफ़ी दूर का है, लेकिन उस सदस्यता के लिए उन्होंने काफ़ी दौड़-धूप की होती है। भ्रष्टाचार का कुल आरोप प्रकाशकों पर ही नहीं लगाया जा सकता, यद्यपि वे भी स्वार्थ-लाभ के लिए किसी हथकंडे से वक्त पड़ने पर चूकते नहीं हैं। लेकिन शिक्षा-क्षेत्र के प्रहरी अध्यापक आदि जब भ्रष्टाचार की दलदल में उतर आते हैं तो स्थिति हीन ही नहीं, दयनीय भी हो जाती है।

पिछले दिनों पाठ्य-पुस्तकों की समस्या पर विचार करने के लिए देश की राज्य सरकारों के शिक्षा-मंत्रियों का एक सम्मेलन दिल्ली में हुआ। यह सम्मेलन पाठ्य-पुस्तकों के स्तर को ऊँचा करने के लिए किन्हीं विशिष्ट निर्णयों पर पहुँचा हो, इसकी सूचना नहीं है।

देश-विदेश से

चेकोस्लोवाकिया में प्रति वर्ष ५ करोड़ पुस्तकें प्रकाशित होती हैं, यानी औसतन हर नागरिक के पीछे चार पुस्तकें छपती हैं। दूसरे महायुद्ध के पूर्व की तुलना में प्रकाशन तीन गुना बढ़ गया है। अगले ५ वर्षों में प्रकाशन फी व्यक्ति पाँच-छ: प्रतियों तक पहुँच जाएगा।

* * *

किताबों की दूकानों की संख्या भी चेकोस्लोवाकिया में बहुत अधिक है। देश में ८१६ बड़ी दूकानें हैं जहाँ हर प्रकार की पुस्तकें मिल सकती हैं। छोटे बुक-स्टालों, अन्य सामग्री के साथ पुस्तकें भी बेचने वाली दूकानें आदि की संख्या अनगिनत है। किताबों की सबसे अधिक दूकानें राजधानी प्राग में हैं जहाँ हर ७,९२० नागरिकों पर एक दूकान का हिसाब बैठता है। ऐसा परिवार मुश्किल से मिलेगा, जिसके पास अपना घरेलू पुस्तकालय न हो।

* * *

चेकोस्लोवाकिया में ५६,००० सार्वजनिक पुस्तकालय हैं, जिनमें ३ करोड़ ६० लाख से अधिक पुस्तकें हैं और सदस्यों की संख्या ४० लाख से अधिक है। चेकोस्लोवाकिया की आबादी केवल १ करोड़ ३५ लाख है।

* * *

विश्वविद्यालयों, कॉलेजों और स्कूलों के अपने और विशिष्ट पुस्तकालय हैं। चेकोस्लोवाकिया की राजधानी प्राग के विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में २५ लाख से अधिक पुस्तकें हैं। हर कारखाने और सहकारी खेत के अपने पुस्तकालय तो हैं ही। साथ ही, अस्पतालों, विश्रामगृहों, सेनेटोरियमों आदि के पास भी काफ़ी बड़ा पुस्तक-भण्डार होता है।

* * *

अभी हाल में अमेरिका के सम्बन्ध में किसी विदेशी दर्शक ने कहा था, कि इस देश के सम्बन्ध में सबसे विस्मयकारी बात यह है कि वहाँ विविध प्रकार की अच्छी-अच्छी पुस्तकें उपलब्ध हैं।

आम तौर पर अमेरिका की टैक्नोलॉजिकल सफलताओं का विदेशी लोगों पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ता है। अन्य देशों में केवल पुस्तकों की दूकानों से ही पुस्तकें खरीदी जाती हैं, किन्तु अमेरिका में अत्यन्त अप्रत्याशित स्थानों पर पुस्तकें प्रदर्शित होती हैं।

* * *

अमेरिका में मोटे कागज़ की जिल्द वाली पुस्तकों का बहुत अधिक चलन है। कागज़ की जिल्द वाली इन सस्ती पुस्तकों ने प्रकाशकों तथा पाठकों दोनों के लिए ही बिलकुल नया क्षेत्र खोल दिया है।

अमेरिका में २२ वर्ष पूर्व मोटे कागज़ की जिल्दों-वाली पुस्तकों का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ था। उसके बाद से उनकी संख्या में निरन्तर आशातीत वृद्धि होती चली गई है। गत वर्ष प्रतिदिन लगभग १० लाख पुस्तकों की बिक्री होती रही है।

आँकड़ों को देखने से यह प्रकट हो जाता है कि अमेरिका में भारी संख्या में लोग मोटे कागज़ की जिल्द वाली पुस्तकें खरीदते हैं। यद्यपि इन पुस्तकों के सम्बन्ध में लोग भलीभाँति परिचित हो गए हैं, फिर भी वे कभी-कभी लोगों के लिए विस्मय का कारण बनती रहती हैं।

गत वर्ष पुन: यह बात देखने में आई जब अमेरिका के दो प्रसिद्ध समाचार-पत्रों, 'न्यूयार्क टाइम्स' तथा 'न्यूयार्क हेरल्ड ट्रिब्यून' ने केवल कागज़ की जिल्दों वाली पुस्तकों के सम्बन्ध में अपने वार्षिक रविवारीय विशेषांक प्रकाशित किए।

हमें आँकड़ों से यह पता चलता है कि अब पुस्तक-प्रकाशकों को अपनी कुल आय का ५वाँ भाग कागज़ की जिल्द वाली पुस्तकों से प्राप्त होता है। इस समय कागज़ की जिल्दों वाली लगभग १२,००० पुस्तकें उपलब्ध हैं और इनमें से लगभग २५०० नई पुस्तकें केवल १९६० में प्रकाशित हुई हैं।

* * *

पॉकेट बुक्स में सभी प्रकार की पुस्तकें—जासूसी उपन्यास पश्चिमी उपन्यास, लोकप्रिय, सरल उपन्यास, प्रेरणादायक रचनाएँ, तथा विविध प्रकार के कार्य सिखाने वाली पुस्तकें सम्मिलित हैं।

परन्तु सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि अब गम्भीर

विषयों की रचनाएँ अधिकाधिक संख्या में प्रकाशित हो रही तथा खरीदी जा रही हैं। उन पुस्तकों में इतिहास, जीवनियाँ, विज्ञान, दर्शन, अर्थशास्त्र तथा साहित्य सम्बन्धी रचनाओं के अलावा विभिन्न प्रकार के उपन्यास आदि सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त १९६० में कविता, नाटक, ललितकलाओं तथा धर्म के सम्बन्ध में अनेक उत्कृष्ट रचनाएँ प्रकाशित हुई हैं।

कागज़ की जिल्द वाली पुस्तकें बेचने वाली दूकानों के अलावा, समाचार-पत्र बेचने के स्थानों, औषधियों की दूकानों, सुपरमार्केटों, डिपार्टमेण्ट स्टोरों, रेलवे स्टेशनों तथा हवाई अड्डों पर घूमते हुए आप विविध विषयों पर कागज़ की जिल्द वाली पुस्तकें देख सकते हैं।

*　　*　　*

एक अन्य आगामी परीक्षण के अन्तर्गत कागज़ की जिल्द वाली बच्चों की पुस्तकें प्रकाशित की जाएँगी। इस समय तक कागज़ की जिल्द वाली बच्चों की पुस्तकें प्रकाशित करने के सम्बन्ध में कुछ नहीं किया गया है, किन्तु अब कुछ प्रकाशनों ने बच्चों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विस्तृत योजनाएँ तैयार की हैं।

अमेरिका में विभिन्न स्थानों पर कागज़ की जिल्द वाली पुस्तकें बेची जाती हैं। निःसन्देह सुपर-मार्केटों में ऐसी पुस्तकों की सबसे अधिक बिक्री होती है। ऐसी ८२ प्रतिशत मार्केटों में कागज़ की जिल्द वाली पुस्तकों का व्यवसाय होता है। जिन अन्य प्रकार के स्टोरों में पहले पुस्तकों का व्यवसाय नहीं होता था, वहाँ भी परीक्षण के तौर पर छोटे पैमाने पर कागज़ की जिल्द वाली पुस्तकों का व्यवसाय किया जाने लगा है।

स्कूलों तथा कॉलेजों के पुस्तक-स्टोरों में चिरकाल से कागज़ की जिल्दवाली पुस्तकों की बिक्री होती है। अब माध्यमिक स्कूलों के ऐसे पुस्तक-स्टोरों में भी ऐसी पुस्तकें बेची जाने लगी हैं जिनमें से अधिकांश का स्वयं छात्रों द्वारा संचालन होता है।

कम दामों में पुस्तकें उपलब्ध हो जाने के फलस्वरूप बहुत से छात्रों ने अपने निजी पुस्तकालय बनाने प्रारम्भ कर दिए हैं। कुछ स्कूलों में पुस्तकें खरीदना बच्चों का शौक बन गया है।

पुस्तक और पुस्तकालय

प्रख्यात फ्रांसीसी लेखक तथा विचारक और फ्रांस की अकादमी के सदस्य आन्द्रे मारवा का यह लेख 'यूनेस्को कूरियर' के मई १९६१ के अंक से साभार प्रकाशित किया जा रहा है।

हमारी सभ्यता उस समस्त ज्ञान तथा स्मृतियों का सार है जिसे हमारे पूर्वजों की अनेक पीढ़ियों ने संग्रहीत किया है। इसमें हम केवल तभी भाग ले सकेंगे जबकि हम अतीत की इन पीढ़ियों के विचारों से सम्पर्क स्थापित करेंगे। इसके लिए—और एक 'सुसंस्कृत' व्यक्ति बनने के लिए—हमारे पास एकमात्र साधन अध्ययन है।

अध्ययन का स्थान कोई दूसरी वस्तु नहीं ले सकती। किसी भी भाषण अथवा चित्र में शिक्षा प्रदान करने की उतनी शक्ति नहीं है जितनी की अध्ययन में है। चित्र लिखित वस्तु को सजीव ढंग से प्रस्तुत करने का एक अतीव मूल्यवान साधन है, लेकिन उनसे सामान्य धारणा नहीं बनाई जा सकती। मौखिक शब्दों की भाँति फिल्में हमारे सामने से गुज़र जाती हैं और उन्हें हम भूल जाते हैं। पुस्तकें एक आजीवन साथी के समान सदा बनी रहती हैं।

मोन्तेन ने तीन प्रकार के सहवास की आवश्यकता मानी है—प्रेम, मित्रता तथा पुस्तकें। ये तीनों बहुत-कुछ एक ही हैं। कोई भी पुस्तकों से प्रेम कर सकता है। वे सदा हमारी वफादार मित्र रहती हैं। मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि मैंने पुस्तकों को उनके लेखकों से कहीं अधिक विनोदपूर्ण एवं चतुर पाया है। लेखक के पास जो सबसे श्रेष्ठ होता है, उसे वह अपनी पुस्तक में रख देता है। लेखक की बातचीत में चमक हो सकती है, पर वह स्थायी नहीं होती। लेकिन पुस्तक के रहस्यों के साथ बल की आज़माइश कभी समाप्त नहीं होती।

इसके अतिरिक्त बिना परस्पर ईर्ष्या के इस मैत्री में संसार के करोड़ों लोग भाग ले सकते हैं। बाल्ज़ाक, डिकेन्स, तोल्स्तोय, सेरवान्तेस, गेटे, दान्ते अथवा मेल्विल जैसे लेखक ऐसे लोगों के बीच, जो दो ध्रुवों की भाँति एक-दूसरे से अलग होते हैं, आश्चर्यजनक बंधन का कार्य करते हैं। एक जापानी, रूसी अथवा अमरीकी मेरे लिए अपरिचित हो सकता है, पर हम सभी के सामान्य मित्र हो सकते हैं; जैसे 'युद्ध और शांति' की नताशा, 'ला चार्त्रे द पार्मे' का फाब्री, 'डेविड कापरफील्ड' का मिकाबेर।

पुस्तकें हमें अपने अन्तर से बाहर निकाल सकती हैं। हममें से कोई ऐसा नहीं है जिसके पास दूसरों को—या स्वयं अपने को—भली प्रकार जानने का पर्याप्त रूप से निजी अनुभव हो। इस विशाल, उदासीन संसार में हम एकाकी अनुभव करते हैं। इसी वजह से हम कष्ट झेलते हैं। इस संसार के अन्याय तथा जीवन की कठिनाइयों से हमें धक्का लगता है। किन्तु पुस्तकों से हमें पता चलता है कि दूसरों ने—ऐसे लोगों ने भी जो हमसे कहीं बड़े थे—मुसीबतें झेली हैं और हमारी ही तरह उन्होंने भी इनका सामना किया है।

पुस्तकें दूसरे लोगों तथा उनके विचारों को देखने-समझने के द्वार हैं। उनके द्वारा हम इस छोटे-से संकुचित संसार से, जिसमें हम रहते हैं, तथा स्वयं अपने विषय में व्यर्थ की चिन्ताओं से मुक्ति पा सकते हैं। महान् पुस्तकों के अध्ययन में व्यतीत की गई एक संध्या का हमारे मस्तिष्क के लिए वही उपयोग है जो पर्वत पर बिताई गई छुट्टी का हमारे शरीर के लिए है। हम जब उन गरिमापूर्ण ऊँचाइयों से नीचे उतरते हैं तो हमारा शरीर पहले से सशक्त होता है, हमारे फेफड़े तथा मस्तिष्क समस्त विकारों से मुक्त होते हैं और दैनिक जीवन के मैदान पर साहसपूर्वक युद्ध करने के लिए हम पहले से कहीं बेहतर ढंग से सशक्त होते हैं।

पुस्तकें ही एकमात्र ऐसा साधन है जिससे हमें विगत कालों की जानकारी होती है, और उन सामाजिक समुदायों को, जिनमें हम कभी मिलते नहीं, समझने की सर्वोत्तम कुंजी है। फेदेरिको गारसिया लोर्का के नाटकों से हमें स्पेन की आत्मा के विषय में जितनी जानकारी मिल सकती है उतनी टूरिस्ट के रूप में बीस चक्कर लगाने से भी नहीं मिल सकती। चेखोव और तालस्ताय ने रूसी आत्मा के कुछ ऐसे पहलुओं का उद्घाटन किया है, जो आज भी सच हैं। जिस तरह से हाथर्न अथवा मार्कट्वेन के उपन्यासों ने हमें उस अमरीका को देखने में सहायता दी है जो कभी का समाप्त हो चुका है, उसी तरह सेंट साइमन के 'संस्मरण' से कभी का मर चुका फ्रान्स हमारे समक्ष जीवित हो उठा है। मेरी प्रसन्नता उस समय और भी बढ़ जाती है जब हम देखते हैं कि उन संसारों में, जो देश तथा काल की दृष्टि से हमसे इतने दूर हैं, एवं उस संसार में जिसमें कि हम रहते हैं, इतनी आश्चर्यजनक समानता है।

समस्त मनुष्यों के बीच बहुत सी बातें समान हैं। होमर के राजाओं के उद्वेलित करने वाले आवेग आधुनिक गुटों के जरनैलों से भिन्न नहीं थे। जब मैं कान्सास सिटी के छात्रों के समक्ष मार्सेल प्राउस्त पर भाषण दे रहा था तो मध्य-पश्चिम के किसानों के वे बेटे फ्रेन्च चरित्र में स्वयं अपने चरित्र के साथ एकरूपता पा रहे थे। "आखिर, यह नस्ल तो एक ही है—मनुष्य की नस्ल।" यहाँ तक कि जो महान् हैं उनमें और हममें मूलतः कोई भेद नहीं है, भेद है तो केवल मात्रा का। यही कारण है जो महापुरुषों के जीवन में हम सब इतनी दिलचस्पी लेते हैं।

इस प्रकार हम यह देखते हैं कि अध्ययन करने का एक कारण हमारी यह कामना है कि हम स्वयं अपने जीवन से परे जाना चाहते हैं, साथ ही दूसरों के विषय में जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं। लेकिन पुस्तकों से हमें जो आनन्द मिलता है, उसका एकमात्र कारण यही नहीं है। अपने रोजमर्रा के जीवन में हम इतने उलझे होते हैं कि हम घटनाओं को स्पष्टतापूर्वक देख नहीं पाते, हम स्वयं अपने आवेगों के इतने वशीभूत होते हैं कि उनका समुचित स्वाद नहीं ले पाते। हममें से बहुतों का जीवन एक ऐसा उपन्यास होगा जिस पर डिकेन्स अथवा बाल्ज़ाक को गर्व होता, लेकिन अपने अनुभवों से न सिर्फ हमें कोई आनन्द नहीं आता, बल्कि प्रतिकूल अनुभूति होती है। लेखक का कर्तव्य है कि वह हमें जीवन का एक सच्चा चित्र दे, पर इसके साथ ही वह हमसे उसे इतना दूर भी रखे कि हम बिना किसी भय अथवा उलझन की आशंका के उसका आनन्द ले सकें।

कोई बड़ा उपन्यास अथवा जीवन-चरित्र पढ़ने वाला व्यक्ति अपनी मानसिक शान्ति खोए बगैर ही महान् घटना-चक्रों का अनुभव करता है। सान्तायाँ के शब्दों में कला उन बातों को हमारी आँखों के सामने ला देती है जिन्हें हम क्रिया में नहीं देख सकते—अर्थात् जीवन तथा शांति का समागम। इतिहास का अध्ययन मानसिक स्वास्थ्य के लिए अच्छा होता है। वह हमें विनम्रता तथा सहनशीलता की शिक्षा देता है; वह हमें बताता है कि वे भयावह कलह, जिनके ऊपर कभी गृह-युद्ध अथवा विश्व-युद्ध हुए थे, केवल ऐसे तुच्छ झगड़े थे जो अब मिट चुके हैं और दफन किये जा चुके हैं। इससे हमें प्रबुद्धता तथा मूल्यों की सापेक्षता का सबक़ मिलता है। कोई महान् पुस्तक पढ़ने के बाद पाठक वैसा ही नहीं रहता जैसा कि वह पहले था। पढ़ने के बाद वह सदा एक बेहतर आदमी बनकर निकलता है।

ऐसी दशा में मानव-जाति के लिए इससे बढ़कर महत्त्वपूर्ण कोई दूसरी बात नहीं हो सकती कि हमारे ज्ञान-क्षितिज को विस्तृत करने के इन साधनों को सभी के लिए उपलब्ध किया जाए, जिनसे हमारे ज्ञान-क्षितिज का विस्तार होता है, हम अपने से त्राण पाते हैं और ऐसे अन्वेषण करते हैं जो वास्तव में जीवन का रूप बदल देते हैं और व्यक्ति को समाज का एक अपेक्षाकृत अधिक मूल्यवान सदस्य बनाते हैं। यह कार्य केवल सार्वजनिक पुस्तकालयों के ही द्वारा किया जा सकता है।

हम एक ऐसे युग में रह रहे हैं जबकि अधिकाधिक देशों में समस्त जनता समान अधिकारों का उपभोग करती है, सरकार के कामों में हिस्सा लेती है तथा जनमत का निर्माण करती है, और जनमत ही सरकारों को प्रभावित करके, अन्ततोगत्वा, शान्ति और युद्ध, न्याय और

नागरी प्रचारिणी सभा, बाराणसी के कुछ अमूल्य प्रकाशन

हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास—हिन्दी साहित्य का प्रामाणिक और बृहत् इतिहास १७ भागों में तैयार करने की योजना सभा ने बनाई है। प्रत्येक भाग का सम्पादन तथा लेखन उस विषय के अधिकारी विद्वानों और लेखकों द्वारा हो रहा है। सम्प्रति इसके भाग १, ६, १६ प्रकाश में आ चुके हैं, जिनका दाम २५.०० रु० प्रति भाग है। अन्य भागों का सम्पादन तीव्र गति से चल रहा है। प्रकाशित भागों का ब्यौरा इस प्रकार है—

हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास, भाग-१—(ऐतिहासिक पीठिका) सम्पादक : श्री डॉ० राजबली पांडेय।

हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास, भाग-६—(रीतिकाल रीतिबद्ध) सम्पाक : श्री डॉ० नगेन्द्र।

हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास, भाग-१६—(लोक-साहित्य) सम्पादक : श्री राहुल सांकृत्यायन।

हिन्दी साहित्य का इतिहास—ले० श्री रामचन्द्र शुक्ल : मूल्य १०.००—साहित्य का सबसे प्रामाणिक शोधपूर्ण सर्वोत्तम इतिहास है।

हिन्दी गद्यशैली का विकास—ले० डॉ० जगन्नाथप्रसाद शर्मा : मूल्य ६.००—हिन्दी गद्य का प्रारम्भ से लेकर अब तक का क्रमिक विकास दिखलाया गया है, साथ ही सभी प्रधान गद्यलेखकों की मार्मिक समीक्षा भी की गई है। गद्य-साहित्य के इतिहास की जानकारी के लिये यह सर्वोत्तम पुस्तक है।

रस मीमांसा—लेखक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : मूल्य ६.००—प्राचीन भारतीय और काव्यशास्त्र की मनोवैज्ञानिक व्याख्या है तथा इसमें आधुनिक जिज्ञासा को दृष्टि में रखकर रस का विवेचन किया गया है।

गोस्वामी तुलसीदास—ले० आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : मूल्य २.५०—गोस्वामी तुलसीदासजी की विशेषताओं तथा उनके महत्व की मौलिक व्याख्या की है।

त्रिवेणी—ले० आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : मूल्य २.५०—सूर, तुलसी और जायसी की आलोचना के अंशों का संग्रह।

गोस्वामी तुलसीदास की समन्वय साधना—ले० श्री व्योहार राजेन्द्रप्रसाद सिंह : मूल्य ४.०० प्रति भाग—तुलसी की समन्वयात्मक दृष्टि की परीक्षा कर उनके विचारों की सम्यक् मीमांसा की गई है।

भाषा विज्ञान सार—ले० श्री राममूर्ति मेहरोत्रा : मूल्य २.७५—भाषाशास्त्र के ज्ञान के लिये उपयोगी पुस्तक है।

हिन्दी का सरल भाषा विज्ञान—ले० श्री गोपललाल खन्ना : मूल्य ३.००—भाषा-सम्बन्धी सभी पक्षों की विवेचना।

आदर्श और यथार्थ—ले० श्री पुरुषोत्तमलाल श्रीवास्तव : मूल्य ३.००—आदर्शवाद और यथार्थवाद का विस्तृत विवेचन करके काव्य में इनका उचित समन्वय दिखलाया गया है।

हिन्दी रस गंगाधर—अनुवादक श्री पुरुषोत्तम शर्मा चतुर्वेदी : मूल्य ८.०० प्रति भाग—पंडितराज जगन्नाथ के संस्कृत ग्रन्थ का हिन्दी रूपांतर है। पुस्तक तीन भागों में पूर्ण हुई है।

हिन्दीवालो सावधान—ले० श्री रविशंकर शुक्ल : मूल्य ४.५०—हिन्दी भाषा पर पड़ने वाले संकटों से सावधान करने वाली अनुपम चेतावनी है।

हिन्दी निबन्धमाला—संपादक श्री श्यामसुन्दर दास : मूल्य प्रति भाग २.००।

आर्यभाषा पुस्तकालय की सूची—नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी के आर्यभाषा पुस्तकालय की पुस्तकों की नामावली : मूल्य ३.७५।

भागवत सम्प्रदाय—ले० श्री बलदेव उपाध्याय : मूल्य ७.५०—इसमें वैष्णव धर्म का उद्गम, विकास और प्रसार तथा भिन्न-भिन्न वैष्णव सम्प्रदायों के मतों की समीक्षा की गई है।

राष्ट्रभाषा पर विचार—ले० आचार्य चन्द्रबली पांडेय : मूल्य ४.००—प्रस्तुत पुस्तक में विद्वान् लेखक ने यह सिद्ध किया है कि हिन्दी ही भारत की राष्ट्रभाषा हो सकती है।

संस्कृत साहित्य का इतिहास—ले० श्री सेठ कन्हैयालालजी पोद्दार : मूल्य ५.००—संस्कृत काव्य के प्रसिद्ध रीति-ग्रन्थों एवं उनके रचयिताओं का परिचय, काल-निर्णय के साथ-साथ काव्य के पंच सिद्धान्तों का आलोचनात्मक विवेचन किया गया है।

तुलसीदास—ले० आचार्य चन्द्रबली पांडेय : मूल्य ५.५०—गोस्वामी तुलसीदास पर अद्यतन और सर्वांगपूर्ण पुस्तक है। तुलसी के अध्येताओं के लिए अनिवार्य आवश्यक पुस्तक है।

हिन्दी मुक्तक काव्य का विकास—ले० श्री जितेन्द्रनाथ पाठक : मूल्य ५.५०—हिन्दी मुक्तक काव्य के विकास की इस कहानी में मुक्तकों के विभिन्न रूपों के अभ्युदय और विकास को बड़ी सरलता से समझाया गया है।

घनानंद और स्वच्छन्द काव्यधारा—ले० श्री मनोहरलाल गौड़ : मूल्य ८.००—घनानन्द पर अब तक प्रकाशित पुस्तकों में सर्वोत्तम शोधग्रन्थ है।

तान्त्रिक बौद्ध साधना और साहित्य—ले० श्री नगेन्द्रनाथ उपाध्याय : मूल्य ५.००—बौद्ध तान्त्रिक साधना का मार्मिक विश्लेषण करते हुए उसके साहित्य के विकास पर प्रकाश डाला गया है।

अन्याय—संक्षेप में राष्ट्र तथा समूचे संसार के जीवन का निश्चय करता है। जनता की वह शक्ति, जिसे हम जनतन्त्र कहते हैं, इस बात की अपेक्षा करती है कि सर्वसाधारण जनता को, जो अब सत्ता का स्रोत बन गई है, तमाम महत्त्वपूर्ण समस्याओं की भली प्रकार जानकारी हो। मैं मानता हूँ कि अधिकाधिक मात्रा में उसे इन सब बातों की शिक्षा स्कूलों में मिल रही है, किन्तु जब तक पुस्तकालयों द्वारा बल नहीं पहुँचाया जाएगा तब तक स्कूलों का कार्य पूरा नहीं हो सकता।

अच्छे-से-अच्छे अध्यापकों के व्याख्यान सुनने से भी प्रशिक्षित मस्तिष्क नहीं पैदा होगा। शिक्षार्थी के लिए यह आवश्यक है कि वह सोचे और मनन करे। अध्यापक का कार्य है कि वह यह समुचित ढांचा तैयार कर दे, जिसे अनिवार्य रूप से स्वयं विद्यार्थी को, मुख्यतया अध्ययन के द्वारा, भरना होगा। कोई भी शिक्षार्थी, कोई भी छात्र, चाहे वह कितना ही प्रतिभाशाली क्यों न हो, इस बात की आशा नहीं कर सकता कि वह उन तमाम बातों को पुनः कर डालेगा जिन्हें विकसित करने में मानव-जाति ने हज़ारों वर्ष का समय व्यतीत किया है। प्रत्येक प्रयोजनपूर्ण मनन सबसे पहले महान् लेखकों के विचारों का मनन होता है। इतिहास का कोई मूल्य नहीं रह जाएगा यदि उसे ऐसे तथ्यों और विचारों में संकुचित कर दिया जाए जिन्हें स्कूल का एक अध्यापक चन्द घण्टों में समझा दे। पर, यदि छात्र अध्यापक के मार्गदर्शन में संस्मरणों, दर्शकों के विवरणों तथा तथ्यों को स्वयं इतिहास के तानेबाने का पता लगाने के लिए छानबीन करेगा, तो वह जीवन के विषय में बहुत-कुछ ज्ञान प्राप्त कर लेगा।

अध्ययन केवल शक्तिदायी मानसिक व्यायाम मात्र नहीं है। इससे तरुणों को यह अनुभव करने में सहायता मिलती है कि सत्य छिपा रहता है। वह अपने को बनेबनाये रूप में उन लोगों के समक्ष समर्पित नहीं कर देता जो उसकी खोज करते हैं, बल्कि परिश्रम, नियमित कार्य तथा लगन के साथ उसे जोड़-जोड़कर तैयार करना होता है। पुस्तकालय स्कूलों और विश्वविद्यालयों का आवश्यक अंग हैं। मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि शिक्षा केवल पुस्तकालयों का द्वार खोलने की कुंजी है।

यह बात प्रौढ़-शिक्षा के सम्बन्ध में और भी सच है। जनवाद के नागरिक को, जो ईमानदारी के साथ अपना कर्तव्य पूरा करना चाहता है, आजीवन शिक्षा ग्रहण करते रहना होगा। जिस दिन हम अपनी कक्षा छोड़कर स्कूल से चले आते हैं, उस दिन से संसार की गति रुक नहीं जाती।

इतिहास ऐसी-ऐसी समस्याएँ प्रस्तुत करता हुआ, जिन पर मानव-जाति के भाग्य का दारोमदार होता है, निरन्तर आगे बढ़ता जाता है। यदि हमें यह ज्ञात न हो कि इन सारी बातों के मूल में क्या है तो भला हम किस तरह कोई निश्चय करेंगे, हम यह कैसे समझेंगे कि अमुक बात न्यायसंगत है और उसका हमें समर्थन करना चाहिए, अमुक बात अपराधपूर्ण मूर्खता है और उसका विरोध करना चाहिए।

जो बात इतिहास के सम्बन्ध में सच है वह राजनीतिक अर्थशास्त्र तथा विज्ञान और प्रविधि की अन्य शाखाओं पर भी लागू होती है। ५० वर्षों में मानव-ज्ञान में भारी क्रान्ति हो चुकी होगी। इन परिवर्तनों के विषय में उन स्त्रियों और पुरुषों को, जिनका जीवन और सुख इन पर निर्भर करता है, कौन बताएगा! उन्हें आधुनिकतम आविष्कारों से, बिना उनके दैनिक कार्य में बाधा डाले, कौन अवगत कराएगा! पुस्तकें और केवल पुस्तकें ही यह कार्य कर सकेंगी।

सार्वजनिक पुस्तकालय को चाहिए कि वह बच्चों को, तरुणों को, स्त्रियों और पुरुषों को हर क्षेत्र में अपने युग के साथ सम्पर्क बनाये रखने में सहायता करे। निष्पक्षतापूर्वक उन्हें विभिन्न दृष्टिकोणों की पुस्तकें देकर वह अपना मत बनाने में उनकी सहायता करता है तथा सार्वजनिक विषयों की ओर रचनात्मक आलोचना का वह दृष्टिकोण बनाए रखने में सहायता करता है, जिसके अभाव में स्वतन्त्रता निरर्थक बन जाती है। पुस्तकालय अपने लिए श्रेष्ठ धंधा चुनने में भी सहायक होता है। महान् विचारकों की कृतियाँ पढ़कर ऐसे प्रतिभाशाली लोग, जो अपना मार्ग नहीं चुन सके हैं, विज्ञान, साहित्य अथवा कला की ओर आकर्षित होंगे और मानव-जाति की सम्मिलित थाती में स्वयं अपना योगदान करेंगे।

अन्त में, सबसे बड़ी बात यह है कि चुनी हुई पुस्तकों

का एक ऐसा पुस्तकालय, जिसका द्वार सभी के लिए खुला हुआ है, अपने पाठकों के अन्तर्जीवन को समृद्ध बनाएगा। अब जबकि मशीन ने, आंशिक रूप से शारीरिक श्रम का स्थान लेकर, मनुष्य के लिए अधिक अवकाश उपलब्ध कर दिया है, तो इस अवकाश का व्यक्ति और समाज दोनों के हित में अधिक-से-अधिक उपयोग किया जाना चाहिए। इसमें सन्देह नहीं, कि इस कार्य में खेल-कूद और भ्रमण से भी सहायता मिलती है, लेकिन एक विस्तृत मानवतावादी दृष्टिकोण से युक्त मस्तिष्क तैयार करने में जितनी सहायता अध्ययन से मिलती है, उतनी किसी अन्य वस्तु से नहीं।

जिस प्रकार वैज्ञानिक और ऐतिहासिक रचनाओं से मनुष्य का मस्तिष्क प्रशिक्षित होता है, उसी तरह उपन्यासों और नाटकों से उसकी संवेदनाओं का विकास होता है। कोई भी पाठक जो किसी देश के महान् लेखकों को अच्छी तरह से जानता है, वह उस देश में कभी अजनबीपन नहीं महसूस करता, चाहे वह उस देश में पहले कभी गया हो या न गया हो, उसे उस देश की भाषा का ज्ञान हो या न हो। प्रत्येक पुस्तकालय अन्तर्राष्ट्रीय समझ का केन्द्र होता है। प्रचार तथा पूर्वाग्रह से मुक्त तथा बिना किसी निजी स्वार्थ के पुस्तकालय अपने अस्तित्व मात्र से शांति तथा जनतन्त्र की सेवा करता है।

अतएव, एक आधुनिक पुस्तकालय एक सक्रिय एवं गतिशील संस्था होती है। पाठक की आवश्यकता को जानने तथा उसकी पूर्ति करने के प्रयोजन से सूचना प्राप्त करने के विभिन्न उपाय बताकर उसे आकर्षित करते हुए, उसके मस्तिष्क का परिष्कार करने तथा उसे आराम पहुँचाने के उद्देश्य से पुस्तकालय स्वतः आगे बढ़कर पाठक से भेंट करता है। पुस्तकालय के लिए पुस्तकें चुनते समय इस उद्देश्य को ध्यान में रखना चाहिए। संदर्भ-ग्रन्थ जैसे शब्दकोष, विश्वज्ञान कोष, पुस्तकों की सूची, मानचित्र, तिथियाँ आदि परामर्श के लिए सबके लिए उपलब्ध होनी चाहिएँ। इतिहास विभाग में सामान्य पुस्तकों (विश्व इतिहास, प्रमुख देशों का इतिहास विशेषतया स्वयं अपने देश का इतिहास, कला, साहित्य और विज्ञान के इतिहास) के साथ-साथ स्थानीय इतिहास पर लेख आदि मौजूद होने चाहिएँ।

जीवनचरित्रों की अलमारियाँ पाठकों को विशेष रूप से आकर्षित करती हैं। भूगोल, यात्राएँ, विज्ञान तथा प्रविधि सम्बन्धी पुस्तकें भी आवश्यक हैं।

प्राचीन ग्रन्थों में से केवल उन्हीं को चुनना चाहिए जिनके पाठकों के समूह अभी भी मौजूद हैं। महान् कवियों की संख्या बहुत कम है, इसलिए उनकी रचनाओं को चुनना अपेक्षाकृत सरल है। उपन्यास और नाटकों की समस्या सबसे कठिन होती है। उनकी संख्या इतनी अधिक है कि कुछ पुस्तकों का छूट जाना अनिवार्य है, यद्यपि यह अनुचित हो सकता है। मुख्य बात यह है कि पुस्तकालय में सभी देशों के महान् लेखकों की कृतियाँ मौजूद हों।

संग्रह में टेकनिकल और व्यावसायिक पुस्तकों, विभिन्न धंधों और कौशलों, विशेष रूप से स्थानीय तौर पर प्रचलित धंधों पर पुस्तकों को समुचित स्थान दिया जाना चाहिए। पुस्तकालय को चाहिए कि वह पाठकों की आवश्यकताएँ पूरी करने के साथ-साथ स्थानीय आर्थिक ढाँचे को भी प्रतिबिम्बित करे। अलमारियों तक पहुँचने की प्रत्येक व्यक्ति को स्वतन्त्रता होनी चाहिए। पाठक को अपनी मनपसन्द पुस्तक पाने में सहायता देने के लिए पुस्तक-सूची के कार्ड होने चाहिए और वर्गीकरण द्वारा पाठक को तत्काल यह मालूम हो जाना चाहिए कि जिस विषय में उसकी रुचि है, उस पर कौन-कौनसी पुस्तकें उपलब्ध हैं।

आधुनिक सार्वजनिक पुस्तकालय के कार्यक्रम में विभिन्न प्रकार के सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक क्रियाकलाप भी सम्मिलित होते हैं, जैसे वार्ता, साहित्यिक, सांस्कृतिक अथवा सामाजिक प्रश्नों पर वाद-विवाद, प्रदर्शनियाँ, नाटक अथवा सिनेमा तथा संगीत-गोष्ठियाँ आदि। इन कार्यों से नाना रूपों में लोग पुस्तकों की ओर आकर्षित होते हैं और उनकी अध्ययन-कामना बलवती होती है।

इस प्रकार सार्वजनिक पुस्तकालय वास्तव में एक ऐसा सांस्कृतिक केन्द्र है, जो मानव-ज्ञान का प्रसार करने के साथ-साथ आनन्द का भी प्रसार करता है। वह विचारों के प्रसार का मार्ग है। वह समाज के सदस्यों के लिए बुद्धिमत्तापूर्वक अपना अवकाश इस्तेमाल करने का साधन जुटाता है।

उसका प्रभाव केवल पड़ोस के लोगों तक ही सीमित नहीं रहता, बल्कि वह दूर-दूर तक उन ग्रामीणों तक भी पहुँचता है जो दीर्घकाल से पुस्तकों से वंचित रहे हैं। कुछ गाँवों में स्कूलों के पास अपने पुस्तकालय होते हैं। लेकिन वे प्रौढ़ों को पुस्तकें नहीं देते। इसके अतिरिक्त उनके पास किताबों की संख्या भी बहुत कम होती है। कोई भी जिज्ञासु मस्तिष्क शीघ्र उन्हें समाप्त कर डालेगा। कुछ देशों में सार्वजनिक पुस्तकालयों का अतीव सुन्दर प्रबन्ध है। कुछ अन्य देशों में भी इस प्रकार की योजनाएँ चलाई गई हैं। प्रान्तों अथवा ज़िलों में क्षेत्रीय पुस्तकालय स्थापित किये गए हैं। ये पुस्तकालय छोटे-छोटे चलते-फिरते पुस्तकालयों का आयोजन करते हैं जो गाँवों में पुस्तकें पहुँचाते हैं।

प्रत्येक ग्राम में एक केन्द्र चुन लिया जाता है। यह केन्द्र नगरपालिका का पुस्तकालय, स्कूल का पुस्तकालय अथवा टाउनहॉल हो सकता है, जहाँ पुस्तकें रख दी जाती हैं। इन पुस्तकालयों का कोई ऐसा व्यक्ति निरीक्षक नियुक्त कर दिया जाता है जो पाठकों को पुस्तकों के सम्बन्ध में राय दे सके और उन्हें पढ़ने के लिए उत्साहित कर सके। केन्द्रीय पुस्तकालय का निर्देशक स्थानीय पुस्तकालयाध्यक्षों को प्रशिक्षित करता है और वे पाठकों को प्रशिक्षित करते हैं। ग्रामीण ज़िलों में सार्वजनिक पुस्तकालय एक सहकारी प्रयास होता है।

यह तो एक प्रणाली है। इसके अलावा दूसरी भी कई प्रणालियाँ हैं। लेकिन जब कभी ग्रामीण क्षेत्रों में पढ़ने की कोई सार्वजनिक योजना लागू की गई है तो उसे स्थानीय निवासियों के बीच अत्यधिक सफलता प्राप्त हुई है। यह बात बहुत ही महत्त्वपूर्ण है कि ऐसी योजनाएँ समस्त संसार में लागू की जाएँ। यह न तो कोई विलास है और न ग्रामीण लोगों के लिए अवकाश के सदुपयोग का साधन ही, हालाँकि यह अपने-आप में काफी मूल्यवान वस्तु है। इस प्रकार की योजनाएँ इसलिए भी आवश्यक हैं कि केवल पुस्तकों और अध्ययन के द्वारा ही सभ्यता का प्रसार किया जा सकता है।

(क्रमशः)

कार्यसमिति के प्रस्ताव

अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ की नवनिर्वाचित कार्यसमिति की प्रथम बैठक ४ जून १९६१ सायंकाल ४॥ बजे भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद में श्री कृष्णचन्द्र बेरी की अध्यक्षता में हुई। बैठक के प्रारम्भ में अध्यक्ष ने कार्यसमिति के रिक्त स्थान के लिए लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद के श्री दिनेशचन्द्रजी को मनोनीत किया। कार्यकारिणी के निम्नलिखित सदस्य उपस्थित थे :

१. श्री कृष्णचन्द्र बेरी — हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी।
२. श्री देवनारायण द्विवेदी — ज्ञानमण्डल लि०, वाराणसी।
३. पं० वाचस्पति पाठक — भारती भण्डार, इलाहाबाद।
४. श्री तेजनारायण टंडन — हिन्दी साहित्य भण्डार, लखनऊ।
५. श्री रामलकल सिंह — अशोक पुस्तक मन्दिर, कलकत्ता।
६. श्री पुरुषोत्तम मोदी — विश्वविद्यालय प्रकाशन, गोरखपुर।
७. श्री कैलाशनाथ भार्गव — नन्दकिशोर एण्ड सन्स, वाराणसी।
८. श्री बजरंगबली गुप्त — साहित्य सेवक कार्यालय, वाराणसी।
९. श्री दिनेशचन्द्र — लोक भारतीय प्रकाशन, इलाहाबाद।

विशेष आमन्त्रितों में उपस्थित थे :

१. पं० नर्मदेश्वर चतुर्वेदी — साहित्य भवन लि०, इलाहाबाद।
२. श्री राजकुमार शर्मा — त्रिवेणी प्रकाशन, इलाहाबाद।
३. श्री राजकुमार जौहरी — न्यू लिटरेचर, इलाहाबाद।
४. पं० गिरिधर शुक्ल — आदर्श हिन्दी पुस्तकालय, इलाहाबाद।
५. श्री राधेनाथ चोपड़ा — लाइब्रेरी सप्लाई सर्विस, इलाहाबाद।

संयुक्त मन्त्री श्री पुरुषोत्तम मोदी ने कार्यारम्भ के साथ-साथ श्री रामलालजी पुरी, श्री रमेश सन्त, श्री मार्तण्ड उपाध्याय, श्री श्यामलालजी, श्री यशपाल जैन, श्री देवकुमार मिश्र, मन्त्री बिहार पुस्तक व्यवसायी संघ, श्री विश्वनाथजी और श्री रामदत्त थानवी द्वारा भेजे पत्रों को उपस्थित किया। तत्पश्चात् सभापति ने बम्बई भूषण प्रेस, मथुरा के अध्यक्ष स्वर्गीय श्री बालमुकुन्दजी भरतिया के सम्बन्ध में एक शोक प्रस्ताव उपस्थित किया जो कि सर्वसम्मति से मौन खड़े होकर सदस्यों ने स्वीकृत किया। कार्यसमिति में निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकृत हुए :

१. स्वर्गीय श्री बालमुकुन्दजी भरतिया

समिति बम्बई भूषण प्रेस, मथुरा के संचालक स्वर्गीय श्री बालमुकुन्दजी भरतिया के स्वर्गवास पर शोक प्रकट करती है और मन्त्री को निर्देश देती है कि वे शोक-सन्तप्त परिवार को संघ के प्रस्ताव से सूचित कर दें।

२. राष्ट्रीय पुस्तक समारोह

कार्यकारिणी समिति राष्ट्रीय पुस्तक समारोह के प्रस्तावित प्रारूप को स्वीकृत करती है तथा निर्देश देती है कि पुस्तकों के प्रचार तथा शिक्षा के प्रसार की दृष्टि से इस प्रकार के समारोह का आयोजन प्राप्त सुविधाओं की सीमा के अन्तर्गत किया जाना चाहिए। कायसमिति समारोह के व्यय के लिए दो हजार रुपये की राशि स्वीकृत करती है और इसके अतिरिक्त संघ को इस समारोह के निमित्त जितनी राशि प्राप्त हो उसके व्यय के लिए भी अनुमति देती है।

३. नेट बुक समझौता

समिति ने मत प्रकट किया कि प्रधान मन्त्री के निर्देश से कोई एक संयुक्त मन्त्री नेट बुक समझौते का कार्य देखे।

४. अनुशासन समिति

कार्यसमिति ने निम्नलिखित पाँच व्यक्तियों की एक अनुशासन समिति नियुक्त की जो नेट बुक समझौते को अनुशासित करेगी।

१. श्री पं० वाचस्पति पाठक इलाहाबाद।
२. श्री रामलाल पुरी दिल्ली।
३. श्री गोकुलदास धूत इन्दौर।
४. श्री ओम्प्रकाशजी दिल्ली।
५. श्री देवनारायण द्विवेदी वाराणसी।

एक संयुक्त मन्त्री कार्य का संचालन करेगा।

५. टेण्डर प्रथा

समिति ने स्थिर किया कि संयुक्त मंत्री श्री पुरुषोत्तमदास मोदी विभिन्न सरकारों से इस विषय में लिखा-पढ़ी करें और अगली कार्यसमिति में उसका विवरण प्रस्तुत करें।

६. संघ का मुखपत्र

समिति ने स्थिर किया कि अध्यक्ष श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन से इस विषय में वार्ता कर संघ का मुखपत्र शीघ्रातिशीघ्र निकलवाने की व्यवस्था करें। इस सम्बन्ध में प्रारम्भिक व्यय के हेतु समिति ने एक हजार रुपये की राशि निर्धारित की।

७. पाठ्यक्रमों के लिए पुस्तकों की माँग

इस सम्बन्ध में समिति ने निश्चय किया कि प्रधान मन्त्री अवलम्बित सम्बन्धित विभागों से पत्रव्यवहार करें।

८. निर्यात व्यवस्था

निर्यात सम्बन्धी प्रस्ताव पर सम्बन्धित मंत्रालय से पत्रव्यवहार करने के लिए समिति ने श्री श्यामलालजी को प्रधान मंत्री के निर्देश में कार्य करने का अनुरोध किया।

९. क्षेत्रीय उपसमितियाँ

कार्यसमिति ने यह निश्चय किया कि क्षेत्रीय उपसमितियाँ बनाने हेतु विभिन्न क्षेत्रों के प्रमुख व्यक्तियों से पत्रव्यवहार किया जाए और उनसे शीघ्र इनका निर्माण करने के लिए कहा जाय। आवश्यकता पड़ने पर अध्यक्ष तथा प्रधान मन्त्री अपने किसी प्रतिनिधि को भी वहाँ भेजें, जिसका व्यय संघ देगा।

१०. कार्य समिति ने पटना अधिवेशन के समय से ४ जून १९६१ तक बने सदस्यों की स्वीकृति दी और आगे के लिए निम्नलिखित उपसमिति को अधिकार प्रदान किया ताकि नये बनने वाले सदस्यों की जाँच करें।

१. श्री कन्हैयालाल मलिक दिल्ली (संयोजक)।
२. श्री दिनेशचन्द्र इलाहाबाद।

३.	इतिहास शिक्षण (Teaching of History)	गुरुसरनदास त्यागी	४.००
४.	भूगोल शिक्षण (Teaching of Geography)	एच० एन० सिंह	४.००
५.	सामाजिक अध्ययन तथा नागरिकशास्त्र का शिक्षण (Teaching of Social Studies and Civics)	गुरुसरनदास त्यागी	४.००
६.	विज्ञान शिक्षण (Teaching of Science)	डी० एस० रावत	४.००
७.	गणित शिक्षण (Teaching of Mathematics)	एम० एस० रावत, मुकटबिहारीलाल अग्रवाल	४.००
८.	अर्थशास्त्र शिक्षण (Teaching of Economics)	गुरुसरनदास त्यागी	४.००

प्रश्नोत्तर शैली में

१.	शिक्षा सिद्धान्त (Principles of Education)	भाई योगेन्द्र जीत	३.००
२.	शिक्षा मनोविज्ञान (Educational Psychology)	भाई योगेन्द्र जीत	३.००
३.	भारतीय शिक्षा का इतिहास (History of Indian Education)	कपूरचन्द जैन	३.००
४.	पाठशाला प्रबन्ध (School Organization)	डी० सी० भारद्वाज	३.५०
५.	स्वास्थ्य विज्ञान (Health Education)	डी० सी० भारद्वाज	३.००
६.	शिक्षण विधियाँ (Methods of Teaching)	डी० सी० भारद्वाज	५.००

For J. T. C. & H. T. C. Students

१.	चर्म कला परिचय (Leather Crafts)	मानकचन्द्र गुप्त	३.००
२.	चित्र कला शिक्षण के सिद्धान्त	मुहम्मद कादरी	३.००

For Basic Training Students

१.	बुनियादी शिक्षा शास्त्र	आर० एम० तिवारी	४.००
२.	बुनियादी शिक्षा सिद्धान्त	बी० डी० शर्मा, राममोहन तिवारी	२.५०
३.	बुनियादी शिक्षालय संगठन	राममोहन तिवारी	२.५०
४.	बुनियादी शिक्षा पद्धतियाँ	बी० डी० शर्मा, राममोहन तिवारी	२.००
५.	राष्ट्र भाषा और हिन्दी	राजेन्द्र मोहन भटनागर	३.००

प्रकाशक

विनोद पुस्तक मन्दिर

हॉस्पिटल रोड, आगरा

३. श्री रामसकल सिंह — कलकत्ता।
४. श्री गिरधर शुक्ल — इलाहाबाद।
५. श्री मैथिलीशरण सिंह — पटना।
६. श्री तेजनारायण टण्डन — लखनऊ।
७. श्री पुरुषोत्तमदास मोदी — गोरखपुर।

११. संयुक्त मंत्रियों को कार्य वितरण

प्रधान मन्त्री की अनुपस्थिति में समिति ने अध्यक्ष से अनुरोध किया कि वे प्रधान मन्त्री से पत्राचार कर यथाशीघ्र कार्य-वितरण की व्यवस्था करावें।

१२. प्रान्तीय संगठनों का निर्माण

समिति ने अध्यक्ष को प्रान्तीय संगठन के निर्माण के हेतु कार्यवाही करने का अधिकार दिया।

१३. अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशक संघ से अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ का सम्बद्धीकरण

संघ ने अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशक संघ के महामन्त्री के पत्र पर विचार किया और उसको दृष्टिगत रखकर संघ की सदस्यता अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशक संघ से पुनः सम्बद्ध रखने और सदस्यता-शुल्क ६०० रु० भेजने का निश्चय किया।

१४. संघ की फाइलें

समिति को यह विदित हुआ है कि अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशक संघ तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर प्रकाशक संघ ने जो पत्रव्यवहार किया है उसकी फाइल उपलब्ध नहीं है। समिति ने निश्चय किया कि संघ के भूतपूर्व मंत्री श्री दीनानाथजी तथा श्री ओमप्रकाशजी से अनुरोध किया जाए कि वे प्रधान मन्त्री श्री रामलालजी पुरी को वे सभी फाइलें तत्काल सौंपें तथा श्री कानजट के ८ मई १९६१ के पत्र के सम्बन्ध में श्री दीनानाथजी, श्री रामलालजी पुरी तथा श्री कृष्णचन्द्र बेरी से स्पष्टीकरण प्राप्त किया जाए।

१५. १९६१ का बजट

समिति ने १९६१ के लिए निम्नलिखित बजट स्वीकृत किया।

अनुमानित आय

राशि	मद
५०००)	पंजीकृत सदस्यों से शुल्क
५०००)	प्रकाशक सदस्यों से शुल्क
२०००)	विशेष चन्दा
१२०००)	

अनुमानित व्यय

राशि	मद
२०००)	राष्ट्रीय पुस्तक समारोह
१५००)	पोस्टेज
१०००)	स्टेशनरी
१५००)	भाषण, सूची आदि के मुद्रण का व्यय।
१०००)	संघ के मुखपत्र के हेतु।
१०००)	यात्रा के व्यय के नेट बुक एग्रीमेंट के हेतु।
६००)	अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशक संघ का शुल्क।
१००)	फुटकर व्यय।
८७००)	
३३००)	बचत
१२०००)	

हिंदी प्रकाशनों की नयी दिशाएँ

प्रो० दीनानाथ 'शरण' एम० ए०

हिन्दी के कुछ प्रेमी पाठकों से ज्यादा तो आलोचक-प्रवरों और महाविद्वानों का दल है जो प्रेमचन्द के बाद हिन्दी उपन्यास की कोई उपलब्धि नहीं मानता, 'प्रसाद' की 'कामायनी' के बाद कोई महाकाव्य नहीं मानता और ऐसे में विश्वविद्यालय के डॉक्टरों ने साहित्यिक बीमारियाँ और अधिक फैलाई हैं। और तब कुछ हम-जैसों की ठीक ही धारणा होने लगी है कि अब बिहार के एक 'काँके' से काम नहीं चलने का! और इसी प्रसंग में वैसे भी सभी 'काँके' जाने काबिल हैं जिन्हें हिंदी-प्रकाशनों से वास्तविक परिचय नहीं, परन्तु हिंदी-प्रकाशकों को गुमराह करने की गुस्ताखी से पीछे नहीं हटते।

आज हिंदी-प्रकाशकों के उत्तरदायित्व पूर्व-स्वतन्त्रता-समय से बहुत अधिक बढ़ गए हैं। हिन्दी चाहे राजभाषा अभी न बनी हो किन्तु राष्ट्रभाषा वह है, और राजभाषा भी होकर रहेगी—पूर्ण विश्वास है। हिन्दी के प्रकाशक हिन्दी-प्रकाशनों में कतिपय नयी दिशाएँ अपनाकर न केवल व्यावसायिक दृष्टि से लाभान्वित हो सकते हैं अपितु राष्ट्र-भाषा व राजभाषा की गौरव-वृद्धि के श्रेय से मण्डित भी। अवश्य श्रेय की बात है कि कुछ प्रकाशकों ने हिन्दी के महत्त्व का अनुमान कर लिया है और नयी दिशा में नयी राह पर उनके पाँव उठने लगे हैं।

हिन्दी-प्रकाशन आज प्रचुर परिमाण में होता है, हो रहा है। फिर भी, नई दिशाएँ हैं जिन पर हमारे प्रकाशक-बन्धुओं को आगे बढ़ना अभी बाकी है। हिन्दी साहित्य के कई इतिहास छप चुके, किन्तु अब तक प्रकाशित-अप्रकाशित इतिहासों का विश्लेषण और मूल्यांकन बाकी है। इस विषय पर एक समीक्षात्मक ग्रन्थ अवश्य अपेक्षित है। अंग्रेज़ी में इन पंक्तियों के लेखक ने एक बार ऐसी एक पुस्तक देखी थी जिसमें सभी प्रसिद्ध महाकाव्यों की कहा-नियाँ संक्षेप में दी हुई थीं। हिन्दी के प्रेमी-पाठकों को साहित्य के समीपतम लाने के लिए अवश्य अच्छा रहेगा कि कुछ ऐसी पुस्तकें प्रकाशित हों जिनमें सब कुछ-का-कुछ हो और वह कुछ श्रेष्ठ और रोचक। मेरा मतलब यह है कि हिन्दी के प्रसिद्ध व लोकप्रिय महाकाव्यों, खण्डकाव्यों, उपन्यासों और नाटकों को चुन लिया जाए और उन सबकी कहानियाँ संक्षेप में, 'हिन्दी महाकाव्यों की कथाएँ' तथा 'हिन्दी उपन्यासों की अमर कहानियाँ' जैसे शीर्षकों से पुस्तकाकार प्रकाशित हों। फिर ऐसी पुस्तकें भी चाहिएँ जिनमें श्रेष्ठ व लोकप्रिय महाकाव्यों, उपन्यासों और नाटकों की श्रेष्ठ व लोकप्रिय पंक्तियाँ चुनकर संकलित हों। जैसे—'महाकाव्यों से मार्मिक स्थल' अथवा 'हिन्दी उप-न्यासों के विचारोत्तेजक प्रसंग' जैसे शीर्षकों से हिन्दी महाकाव्यों अथवा हिन्दी उपन्यासों में श्रेष्ठ व लोकप्रिय पुस्तकों से चुनकर पंक्तियाँ संकलित व प्रकाशित की जाएँ। इसी तरह नाटक, खण्डकाव्य आदि में भी।

हिन्दी की गौरव-वृद्धि के विचार से भिन्न-भिन्न बोलियों के वैभव-भण्डार का भी उद्घाटन आवश्यक है। हमारे देश में कई बोलियाँ हैं; उन बोलियों में सिर्फ कथाएँ व गीत ही नहीं हैं अपितु उनमें नाना शास्त्र-विधाएँ भी हैं, उनका अपना वैभव-सम्पन्न भण्डार है। आवश्यकता है कि हिन्दी के प्रकाशक, केवल 'लोककथाएँ' और 'लोकगीत' के फेर में न रहें, बोलियों के अन्य साहित्य पर भी ध्यान

दें। आज अब जरूरी है कि बोलियों के साहित्येतिहास भी प्रकाशित हों ताकि उनकी समग्र वैभवराशि के परिपार्श्व में हम सब उनके महत्त्व को महत्त्व दे सकें।

हिन्दी में पत्र-पत्रिकाओं की आज भरमार है। लेकिन दुर्भाग्य यह है कि एक ही क्षेत्र में अनेक प्रकाशक पहलवानों के दाँव-पेंच में हिन्दी पाठक तो तमाशबीन हैं मगर हिन्दी आगे नहीं बढ़ पा रही। कहानी के मैदान में तो काफ़ी हंगामा है, अनेक पत्र-पत्रिकाएँ आपस में होड़ ले रही हैं। इसी तरह फिल्मी पत्रिकाएँ भी बरसाती मेढ़क की-सी हैं। 'हिन्दी प्रचारक' (वाराणसी) और 'प्रकाशन समाचार' (दिल्ली) जैसी पत्रिकाओं ने, अवश्य, बहुत दिनों से चले आते हुए बहुत बड़े अभाव की पूर्ति की, और आज कुछ उपेक्षित क्षेत्रों में इसी भाँति नये ढंग की पत्र-पत्रिकाओं की परम आवश्यकता है। हिन्दी में विद्वानों, विद्यार्थियों, बच्चों, महिलाओं और जनसाधारण के स्तर के विचार से अनेकानेक पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही हैं। मेरा विचार है कि ऐसी एक पत्रिका की बेहद जरूरत है जिसमें हिन्दी की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं की विवरणात्मक समीक्षा प्रकाशित हो। जैसे 'पत्रिका-समाचार' शीर्षक से ऐसी एक पत्रिका प्रकाशित हो जिसमें पहले तो विद्वानों, विद्यार्थियों, बच्चों, महिलाओं व जनसाधारण के स्तर की पत्र-पत्रिकाओं का वर्गीकरण व विवरण रहे, तदुपरान्त प्रत्येक स्तर की रचनाओं की सूची। यह सूची साहित्य, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, मनोविज्ञान आदि स्तम्भ बनाकर भी दी जाए तो और उपयोगी सिद्ध होगी। ऐसी कुछ पत्रिकाओं के प्रकाशन के लिए भी अच्छा मार्केट है जिनमें भारत, और हो सके तो विदेशी यूनिवर्सिटियों के भी विभिन्न समाचार संकलित हों। पटना, राँची, भागलपुर, इलाहाबाद आदि-आदि यूनिवर्सिटियों में क्या-क्या महत्त्वपूर्ण बातें हुईं, उन सभी समाचारों की त्रैमासिक पत्रिका बहुत अच्छी रहेगी। ऐसी भी त्रैमासिक प्रत्रिकाओं की बेहद जरूरत है, जिनमें हिन्दी की परिषदों व संस्थाओं की महत्त्वपूर्ण गतिविधि के विवरण प्रकाशित हों। इस प्रकार हिन्दी के पाठकों को हिन्दी-विषयक विविध सूचना-सामग्री सहज सुलभ हो सकेगी।

आश्चर्य की बात है कि आज जबकि सिनेमा की इतनी लोकप्रियता है तब भी उस पर किसी भी प्रकाशक ने कोई पुस्तकाकार प्रकाशन नहीं किया। सिनेमा क्या है, फ़िल्में कैसे बनती हैं, भारत में फ़िल्मों का किस तरह विकास हुआ—इन सब विषयों पर पुस्तकों के प्रकाशन की काफ़ी गुंजायश है। हिन्दी में कब से पुस्तकें प्रकाशित होने लगीं, उनका क्या इतिहास है, प्रकाशन की कला क्या है—ये सब भी ऐसे अछूते क्षेत्र हैं, जिनमें पुस्तकों का प्रकाशन उपयोगी व लाभप्रद सिद्ध होगा। यह भी ज्ञातव्य है कि केवल सूर, तुलसी और जायसी ही से पाठकों का काम नहीं चलने का। सुख्यात केवल कुछ लेखकों और कवियों की किताबें छापने से न तो हिन्दी का भण्डार ही भरा-पूरा हो सकेगा और न हिन्दी पाठकों को पूर्ण सन्तोष ही। इसलिए आवश्यक है कि अपेक्षाकृत अल्पख्यात किन्तु महत्त्वपूर्ण कृतियों के लेखकों को भी प्रकाशन दिया जाए। जैसे—श्री आरसीप्रसाद सिंह, श्री रामचन्द्र शर्मा 'किशोर' आदि छायावाद युग के उपेक्षित कवियों में हैं किन्तु उनकी रचनाएँ उस महत्त्व की हैं कि उनके प्रकाशन का अच्छा मार्केट है। इसी प्रसंग में नई प्रतिभाओं का उल्लेख भी आवश्यक है। प्रायः यही देखा जाता है कि हिन्दी-प्रकाशक उन्हीं लेखकों की किताबें छापने के पीछे पड़े हुए हैं जो लोकज्ञात एवं सुख्यात हो चुके होते हैं। इससे हिन्दी पाठकों और हिन्दी के साहित्य भण्डार का कितना भारी नुकसान हो रहा है, शायद वे जानकर भी ध्यान नहीं दे रहे। किन्तु सच यह है कि हिन्दी-प्रकाशकों को नयी-से-नयी प्रतिभा का स्वागत करना ही चाहिए, और नए लेखकों की कृतियाँ सहर्ष प्रकाशित करनी चाहिए। जब तक यह न होगा, तब तक साहित्य में न नवीनता आएगी और न बुभुक्षु पाठकों को अच्छी नई सामग्री मिल सकेगी। पुराने प्रसिद्ध लेखक तो अपने ढंग, अपनी शैली की ही रचनाएँ देंगे और बढ़ती-बदलती हुई जनरुचि के योग्य वे बने ही रहेंगे, बिलकुल असंगत है। अतएव वह समय अब आ गया है कि हिन्दी-प्रकाशक केवल कुछ वर्मा, द्विवेदी, सिन्हा, शर्मा, बाजपेयी जैसे लेखकों तक सीमित न रहें, अपने दृष्टिकोण को उदार बनाएँ। नए लेखकों की रचनाएं अधिकतम संख्या में प्रकाशित करें। साहित्य की देवी कभी वृद्ध नहीं होतीं और उन्हें सदैव नए-नए आराधक प्रेमी चाहिएँ।

किताबें पेड़ों पर नहीं फलती हैं

'टाइम्स ऑफ़ इंडिया' में साहित्यिक समालोचना के प्रसिद्ध स्तम्भ 'लाइफ़ एंड लेटर्स' के लेखक 'अदीब' का यह लेख साभार प्रकाशित किया जा रहा है।

किताबें केले की तरह नहीं होतीं, वे पेड़ों पर नहीं फलती हैं और हम उन्हें छीलकर खा भी नहीं सकते हैं। नेशनल बुक ट्रस्ट ने अपनी कल्पना के घोड़े पर सवार होकर कल्पवृक्ष को अपना प्रतीक चिह्न बना लिया है और 'मेघदूत' की पंक्ति को अपना मार्गदर्शक सिद्धान्त मान लिया है—एकः सुते सकलम् (वह हर चीज़ अपने-आप देता है)! मुझे विश्वास है कि जहाँ कल्पवृक्ष होता होगा वहाँ लोगों को पुस्तकों की ज़रूरत नहीं पड़ती होगी। वे जो-कुछ भी जानना चाहते हैं वह उन्हें वैसे ही मालूम रहता है। अगर नेशनल बुक ट्रस्ट किसी वृक्ष को अपना प्रतीक चिह्न बनाना ही चाहता है तो उसे नारियल का पेड़ चुनना चाहिए था। नारियल के पेड़ में पहले चार साल में बहुत कम फल लगते हैं। अपने अस्तित्व के पहले चार वर्षों में ट्रस्ट ने (अनुवादों को छोड़कर) केवल आधी दर्जन नीरस पुस्तकें निकाली हैं।

ज़ाहिर है कि ट्रस्ट की कुछ निजी कठिनाइयाँ हैं। लेकिन निजी कठिनाइयाँ किसकी नहीं होतीं? उसकी सबसे ताज़ा रिपोर्ट में ये कठिनाइयाँ गिनाई गई हैं। उसने अपने कार्यालय के लिए जो २६९४ वर्गफ़ीट की जगह किराये पर ले रखी है उसमें उसे घुल-मिलकर किसी तरह अपना काम चलाना पड़ता है। उसे कानून के बाल की खाल निकालने वालों का सामना करना पड़ता है जो यह दलील देते हैं कि ट्रस्ट-जैसी अर्ध-सरकारी संस्था द्वारा प्रकाशित पुस्तकों को सरकारी संस्थाओं द्वारा प्रकाशित की जाने वाली पुस्तकों का दरजा नहीं दिया जा सकता। उसे अच्छे अनुवादक नहीं मिल सके हैं और उसके प्रथम प्रयासों से जो फल प्राप्त हुए हैं उनमें बासीपन की जो जानी-पहचानी बू आती है उससे यही पता चलता है कि वह नये प्रतिभाशाली लेखकों को खोज निकालने में भी असमर्थ रहा है, यहाँ तक कि प्रूफ़ पढ़ने का काम भी वह ठीक से नहीं करवा पाया है। यह एक रहस्य है कि आखिर दूसरे प्रकाशक यह सब काम कैसे कर लेते हैं!

इनके अलावा कुछ ऐसी कठिनाइयाँ भी हैं जो ट्रस्ट ने स्वयं अपने लिए पैदा कर ली हैं। अपने भोलेपन में उसने कापीराइट के बारे में पक्की जानकारी हासिल किये बिना आनन्द कुमार स्वामी की एक पुस्तक का अनुवाद १४ भाषाओं में करवाना शुरू कर दिया। रिपोर्ट में बताया गया है कि "जिन लोगों ने यह दावा किया था कि इस पुस्तक का कापीराइट उनके पास है और जिनकी इजाज़त लेकर उसका अनुवाद शुरू कराया गया था, वे ही लोग, जब उनके इस दावे पर आपत्ति की गई, बगलें झाँकने लगे।" ये कौन प्रतिष्ठित महानुभाव थे जिन्होंने पक्की तौर पर यह जाने बिना ही कि कापीराइट उनके पास है इस किताब का अनुवाद कराने की इजाज़त दे दी थी? ज़ाहिर है, रिपोर्ट में उनका नाम नहीं बताया गया है। लेकिन जो संस्था अपने ट्रस्टियों की एक मीटिंग पर ३,५०० रु० खर्च कर देती हो उसके लिए १४ अनुवादों की लागत की क्या हैसियत है! हमारे देश में कोई नौजवान लेखक अपने नये उपन्यास पर इसकी आधी रायल्टी पाकर भी अपने-आपको सौभाग्यशाली समझेगा। मैं समझता हूँ कि ऐसे मामलों में हमें लोगों पर भरोसा करके वे जो कुछ कहें उसे सच मान लेना चाहिए।

लेकिन सबसे अधिक चिन्ताजनक बात यह नहीं है कि

ट्रस्ट को किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है। सबसे अधिक चिन्ता तो इस बात से होती है कि उसने किस प्रकार की पुस्तकें चुनी हैं। उसने अब तक जो पुस्तकें प्रकाशित की हैं या अगले दो या तीन वर्षों में उसने जो पुस्तकें प्रकाशित करने की योजना बनाई है वह एक अजीब पँचमेल खिचड़ी है। उनसे यही पता नहीं चलता कि आखिर ट्रस्ट करना क्या चाहता है। क्या वह प्राचीन साहित्य की अमर कृतियों को लोकप्रिय बनाना चाहता है? अब तक जो १३ पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं उनमें से महापरिनिर्वाण कथा के एक नये बंगाली रूपान्तर को ही प्राचीन साहित्य की अमर कृति कहा जा सकता है। इस समय जो पुस्तकें प्रेस में हैं उनमें कोई भी प्राचीन साहित्य का अमर कृति नहीं है। क्या वह यह चाहता है कि आज आम पाठक को अपनी भाषा में मिलने वाली पुस्तकों से जो अधूरा ज्ञान प्राप्त होता है उसके अभावों को वह अपने प्रकाशनों से पूरा कर दे? ट्रस्ट ने विज्ञान-सम्बन्धी विषयों की आधी दर्जन नई पुस्तकें लिखवाई हैं लेकिन इससे समस्या रत्ती-भर भी हल नहीं होती। फिर क्या ट्रस्ट विदेशी साहित्य की अमर कृतियों को लोकप्रिय बनाना चाहता है? जो पुस्तकें प्रकाशित होने वाली हैं उनमें एक पुस्तक डिकेन्स की है और एक डीफ़ो की, लेकिन यह मेरी समझ में बिलकुल नहीं आता कि इन पुस्तकों का चुनाव किस ढंग से किया जा रहा है।

ट्रस्ट के सामने ये सारे लक्ष्य तो हैं ही और शायद बहुत से दूसरे लक्ष्य भी हैं। लेकिन क्या वह साल-भर में केवल दस नई पुस्तकें निकालकर (इनमें भाषाओं के संस्करण शामिल नहीं हैं) इन सब लक्ष्यों को पूरा कर सकता है? और साल-भर में वह ज्यादा-से-ज्यादा इतनी ही पुस्तकें प्रकाशित करने की आशा करता है। क्या यह बात ज्यादा तर्कसंगत नहीं होगी कि वह अपने सामने अधिक सीमित लक्ष्य रखे। साहित्य अकादमी साहित्यिक रचनाएँ प्रकाशित करती है। पुरानी और नई, अपने देश की और विदेशी साहित्यिक अमर कृतियों के प्रकाशन का काम उस पर क्यों नहीं छोड़ा जा सकता? ललितकला अकादमी ललितकलाओं की मुख्य संरक्षक है। कला-सम्बन्धी पुस्तकों को, जैसे आनन्द कुमारस्वामी की पुस्तकों को, क्षेत्रीय भाषाओं में प्रकाशित करने का काम पूरी तरह उस संस्था पर क्यों नहीं छोड़ा जा सकता। इसी तरह सामयिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक समस्याओं से सम्बन्धित समस्त साहित्य प्रकाशित करने का काम पब्लिकेशन्स डिवीज़न पर छोड़ा जा सकता है।

इन सब विषयों को निकाल देने के बाद भी नेशनल बुक ट्रस्ट के सामने इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, नागरिकशास्त्र, दर्शनशास्त्र, मनोविज्ञान और विभिन्न विज्ञानों की सरल सुबोध पुस्तकें छापने का पूरा क्षेत्र रह जाता है। अगर हर भाषा में हर साल पचास पुस्तकें भी छापी जायें तो भी इस काम को पूरा करने में बीस बरस लग जायेंगे—मगर हम कुछ देर को यह भूल भी जायें कि इन बीस वर्षों में इनमें से अधिकांश विषयों के क्षेत्र में बेहद प्रगति हो चुकी होगी। ट्रस्ट अगले दस या बीस वर्षों के लिए प्रकाशन का कार्यक्रम (हर क्षेत्र के विशेषज्ञों के छोटे-छोटे सुगठित समूहों से सलाह करके) फ़ौरन बना सकता है और आवश्यक पुस्तकें लिखने के लिए इस देश में और विदेशों में योग्य लोगों को इन पुस्तकों को लिखने का काम

सौंप सकता है। यह जरूरी नहीं है कि वह सारा काम खुद करे। उसके लिए इतना ही काफ़ी है कि वह एक दीर्घकालीन योजना तैयार करे, किताबें लिखवाये और अंग्रेज़ी तथा हिन्दी में हर पुस्तक का मुख्य संस्करण प्रकाशित करे। क्षेत्रीय भाषाओं में इन पुस्तकों के संस्करण निकालने का काम हर क्षेत्र के ट्रस्ट पर छोड़ा जा सकता है। एक ऐसा केन्द्रीय प्रेस स्थापित करने की योजना, जहाँ चौदहों राष्ट्रीय भाषाओं की पुस्तकें छापी जा सकें, अपव्यय का स्रोत बन जाएगी।

लेकिन सबसे पहले ज़रूरत इस बात की है कि ट्रस्टी लोग प्रकाशन के लिए पुस्तकें चुनते समय उन्हें अधिक कठोर मानदंडों से जाँचें। कोई वजह नहीं है कि ऐसे विषयों की पुस्तकें चुनने का काम, जिनके बारे में ज्यादा जानकारी रखने की उनसे आशा ही नहीं की जा सकती, वे उन लोगों पर छोड़ दें जो उन विषयों के बारे में ज्यादा जानते हैं। कोई भी पुस्तक चुनने से पहले उन्हें यह सवाल पूछना चाहिये कि क्या यह पुस्तक उस भाषा में उस विषय पर जो पुस्तकें उपलब्ध हैं उनके किसी अभाव को पूरा करती है। इससे भी ज्यादा जरूरी बात यह है कि वे प्रकाशन का कार्यक्रम तैयार करते समय इस बात की ओर उचित ध्यान दें कि कौनसी किताब पहले छापी जाए और कौनसी बाद में। मिसाल के तौर पर हम सभी लोग जानते हैं कि अणु-युद्ध कितना खतरनाक है। पर इस बात की कोई तुक नहीं है कि ट्रस्ट इस विषय पर अखबारों में दिये गए वक्तव्यों का संग्रह प्रकाशित करे, भले ही ये वक्तव्य राजगोपालाचारी जैसे आदमी द्वारा क्यों न दिये गए हों। अगर ट्रस्ट अणु-युग के खतरों, चुनौतियों और आशाप्रद सम्भावनाओं के बारे में **अणु-वैज्ञानिकों की बुलेटिन (बुलेटिन ऑफ़ ऐटामिक साइंटिस्ट्स)** से दर्जन भर महत्वपूर्ण लेख चुनकर छाप देता। इसी तरह, इसमें सन्देह नहीं कि अपने आज़ाद मेमोरियल लेक्चरों में श्री नेहरू ने बहुत सी अच्छी बातें कही हैं, लेकिन अखबारों से हम श्री नेहरू के विचारों से भली भाँति परिचित हैं। उन्होंने जो कुछ कहा है उससे हमारे ज्ञान के किसी रिक्त स्थान की पूर्ति नहीं होती। क्या यह ज्यादा अच्छा न होता कि इन भाषणों को प्रकाशित करने का काम ट्रस्ट

ने किसी और पर छोड़ दिया होता और स्वयं इससे ज्यादा जरूरी कामों की ओर ध्यान दिया होता।

यही बात दिल्ली में प्रोफेसर आर्नल्ड टायनबी द्वारा दिये गए लेक्चरों के बारे में भी सच है। इतने बड़े विद्वान् के मुँह से यह सुनकर हमारा खुश होना तो स्वाभाविक ही है कि हमने किसी भी दूसरे देश के मुकाबले में अपने यहाँ ज्यादा अच्छी तरह एकता कायम की है क्योंकि हमारे घर में भाँति-भाँति के पक्षी बिना खटके आ-जा सकते हैं। सच तो यह है कि अब अगर मैं किसी गौरैया को अपनी किताबों पर चोंचें मारते देखता हूँ तो उसे भगाने को मेरा दिल नहीं करता क्योंकि मुझे हमेशा यह याद आ जाता है कि हमारे और गौरैयाओं के सम्बन्ध में प्रोफेसर टायनबी के क्या विचार हैं। फिर भी प्रोफेसर टायनबी के लेक्चर छापने की योजना बनाने के बजाय अगर ट्रस्ट ने किसी से इतिहास के सम्बन्ध में विभिन्न दार्शनिक विचार-धाराओं की आलोचनात्मक विवेचना करते हुए एक पुस्तक लिखवाई होती तो ज्यादा अच्छा होता, जिसमें प्रोफेसर टायनबी की विचारधारा की भी विवेचना की गई होती।

असल बात ध्यान में रखने की यह है कि हमारी भाषाओं में उन लोगों के लिए भी, जो आधुनिक विचारों के बारे में सरसरी जानकारी ही प्राप्त करना चाहते हैं, आवश्यक सुविधाओं का बेहद अभाव है। दर्शनशास्त्र के किसी ऐसे विद्यार्थी के लिए, जो कोई विदेशी भाषा न जानता हो, यह मालूम करना बहुत कठिन है कि प्लेटो या कान्ट या हेगेल के विचार क्या थे; रसेल या विटगेन्स-टाइन या सार्त्र की रचनाओं से परिचय प्राप्त करने का तो उसके लिए सवाल ही पैदा नहीं होता। मनोविज्ञान के विद्यार्थी को फ्रायड, जंग या ऐडलर जैसे लोगों के मूल विचारों का परिचय प्राप्त नहीं होता। अर्थशास्त्र के क्षेत्र में भी, जो हमारे लिए इतना तात्कालिक महत्व रखता है, मुख्य-मुख्य प्रामाणिक ग्रन्थों का अनुवाद अभी नहीं हुआ है। अगर कोई अल्प-विकसित देशों के विकास की समस्याओं का अध्ययन करना चाहे और वह अंग्रेजी न जानता हो तो वह बिलकुल लाचार महसूस करेगा। जब कि इतने अधिक विद्यार्थी उन लोगों के बारे में जानने के लिए इतने आतुर हैं जिन्होंने आधुनिक विचारों में सबसे अधिक योग दिया है और जिनके बारे में वे कुछ भी नहीं जानते हैं, ऐसी हालत में उन्हें एक बार फिर ऐसे लोगों के विचारों से परिचित कराने की कोशिश करना बिलकुल बेतुकी बात है जिनके बारे में वे जानते हैं और वर्षों से उनके बारे में पढ़ते और सुनते आए हैं।

लेकिन शायद नेशनल बुक ट्रस्ट जन-शिक्षा में विश्वास नहीं रखता। अगर वह विश्वास रखता होता तो वह श्री नेहरू के आजाद मेमोरियल लेक्चरों का संस्कृत में अनुवाद कराने के लिए इतना उत्सुक न होता। जब मैंने ट्रस्ट की रिपोर्ट में देखा कि प्रोफेसर राघवन को यह काम सौंप दिया गया है तो मुझे अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हुआ। लेकिन रिपोर्ट में छपा हुआ यह छोटा-सा वाक्य मुझे घूर-घूरकर देख रहा था। मेरी समझ में यह योजना श्री नेहरू के लेक्चरों को एक प्राचीन अमर ग्रन्थ का पद देकर उन्हें खुश करने की कोशिश में बनाई गई है। लेकिन मुझे यकीन है कि श्री नेहरू इस बात से बहुत खुश नहीं होंगे कि उन्हें संस्कृत का विद्वान् समझा जाये। यह जन-शिक्षा की कल्पना को पूर्णतः विकृत कर देने का एक उदाहरण है। प्राचीन ग्रन्थों को ऐसी भाषा में प्रस्तुत करने के बजाय, जिसे लोग पढ़ और समझ सकें, ट्रस्ट ने एक ऐसी किताब को, जिसे लोग पढ़ और समझ सकते हैं, एक ऐसी चीज़ बना देने का फ़ैसला किया है जिसे वे केवल किसी पंडित की सहायता से ही समझ सकते हैं। लेकिन शायद कल्पवृक्ष पर, अगर कल्पवृक्ष कहीं होता है, ऐसी ही पुस्तकें फल सकती हैं।

पुस्तकालय द्वारा निरक्षरों की सेवा

परमानन्द दोषी, एम० ए०

पुस्तकालय जन-सामान्य की सेवा करता है। जन-सामान्य में शिक्षित और अशिक्षित सभी आते हैं। शिक्षित जन तो साक्षर होने के कारण पुस्तकालय की किताब पढ़ लेते हैं और उनसे यथोचित लाभ भी उठा लेते हैं। परन्तु जो अशिक्षित हैं, निरक्षर हैं, वे भला पुस्तकालय से कैसे लाभ उठा सकते हैं? दुष्परिणाम होता है कि एक बड़ी संख्या में लोग पुस्तकालय-उपयोग से वंचित रह जाते हैं। लोग पुस्तकालय-उपयोग से वंचित नहीं रहें, इसका एकमात्र सहज उपाय यही दीख पड़ता है कि लोगों को अशिक्षित रहने ही नहीं दिया जाए। यह उपाय और इसके लिए किए जाने वाले कार्य बड़े ही अनिवार्य प्रतीत होते हैं। परन्तु निरक्षरता की समस्या कोई ऐसी साधारण-सी समस्या नहीं है कि संकल्प करके आसानी से इसका समाधान कर लिया जाए। समृद्धि और सम्पन्नता की दिशा में उन्नत बड़े-बड़े राष्ट्र जब निरक्षरता-रूपी अभिशाप को अपनी भूमि से पूर्णतः उन्मूलित करने में पूर्णकाम नहीं हो सके, तो अपना सद्यः स्वतन्त्रता-प्राप्त राष्ट्र, जो अभी समृद्धि की राह पर घुटनों के बल चल सकने की स्थिति में आ सका है, भला क्योंकर अपने यहाँ से निरक्षरता को दूर करने में समर्थक हो सकता है।

निरक्षरता के बने रहने पर भी पुस्तकालय-सेवाओं की परिधि सभी जनों तक कैसे विस्तृत की जाए, यह समस्या न केवल आज अपने देश में उत्पन्न है, बल्कि सभी देशों के सम्मुख कभी-न-कभी यह उपस्थित होती रही है, और सभी देश इसके समुचित समाधान के लिए अध्याविध सचेष्ट रहे हैं। उनकी सचेष्टता के परिणामस्वरूप पुस्तकालयों की ओर से ऐसी व्यवस्थाओं का प्रावधान होता रहा है, जिनके ज़रिये पुस्तकालयों के द्वारा निरक्षरों की यत्किंचित सेवाएँ की जा सकती हैं। श्रव्य-दृश्य प्रविधियों का प्रयोग मेरे खयाल से निरक्षरों को दृष्टिपथ में रखकर ही किया जाता रहा है। भले ही श्रव्य-दृश्य उपकरणों से साक्षरों की भी बहुतेरी सहायता की जा सकती हो, पर इनकी ज्यादा उपयोगिता निरक्षरों के लिए ही है। विश्व के कतिपय उन्नत देशों में इस उपकरण का ज्यादा प्रचलन है, परन्तु अपने देश में धीरे-धीरे इसका प्रयोग किया जा रहा है। अपनी पुस्तकों एवं अन्यान्य पाठ्य-सामग्रियों के द्वारा पुस्तकालय जितनी सेवा साक्षरों की कर सकता है, उससे अधिक सेवा अपने श्रव्य-दृश्य उपकरणों के सहारे वह अशिक्षितों-निरक्षरों की कर सकता है। अतएव पुस्तकालय अपने क्षेत्र के साक्षर-निरक्षरों की, सभी व्यक्तियों की भरपूर सेवा कर सके, इसके लिए उसे अपने यहाँ पुस्तकों एवं अन्यान्य पाठ्य-सामग्रियों के संग्रह के अतिरिक्त श्रव्य-दृश्य उपकरणों की व्यवस्था करनी चाहिए। श्रव्य-दृश्य उपकरण केवल प्रोजेक्टरों एवं मशीनों के सहारे दिखाये जाने वाले चलचित्र को ही नहीं कहते। यदि पुस्तकालय अपने तत्वावधान में नाटक, प्रहसन, झलकियाँ, वाद-विवाद आदि की भी व्यवस्था करे, तो वह भी श्रव्य-दृश्य योजना के ही अन्तर्गत एक आवश्यक कार्य समझा जाएगा। खेद है कि सरकार एवं कतिपय व्यावसायिक एवं शौकिया संस्थाओं द्वारा इस दिशा में किए जाने वाले कार्यों के अतिरिक्त सामान्य जनता नाटक-प्रदर्शन, सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि की ओर से आज उदासीन है। सरकार से इन कार्यों के लिए हर प्रकार का सहयोग और पथ-प्रदर्शन मिलता भी है, फिर भी सामान्य जनता की इस दिशा में उदासीनता एक चिन्ताजनक बात है। शहरों, कस्बों, नगरों एवं गाँवों के पुस्तकालय यदि अपने तत्वावधान में इन कार्यों को नियमित रूप से सम्पादित करने की ठानें, तो उन्हें इससे मनोरंजन प्रदान और ज्ञानवान करने का दुहरा श्रेय प्राप्त हो। लोगों की गन्दी रुचि का परिष्कार भी हो और पुस्तकालय की सक्रियता भी बनी रहे। ऐसी

व्यवस्था, विशेषतः निरक्षरों के लिए वरदानवत् साबित होगी। जहाँ प्रोजेक्टर, बिजली आदि की व्यवस्था हो, वहाँ तो इनके सहारे ही निरक्षरों की यथेष्ट सेवा पुस्तकालय कर सकते हैं।

निरक्षरों के लिए पुस्तकालय वाचन की व्यवस्था भी कर सकता है। एक निश्चित समय पर समाचार-पत्र पढ़-कर सुनाए जाने की व्यवस्था रहे, उपयोगी पुस्तकों के महत्वपूर्ण अंश सरल और सुग्राह्य व्याख्या के साथ निरक्षरों को सुनाए जाएँ। पौराणिक, धार्मिक एवं आध्यात्मिक चर्चाओं का भी कार्यक्रम रखकर पुस्तकालय निरक्षरों को इन कार्यक्रमों के माध्यम से अपनी ओर आकृष्ट करने में कामयाबी हासिल कर सकता है।

सामान्य ज्ञान और दैनंदिन जीवन में उपयोगिता रखने वाली बातें पुस्तकालय के कार्यकर्त्ता निरक्षरों को अच्छी तरह बातचीत आदि के दौरान समझा सकते हैं।

समय-समय पर बाहर के विद्वानों, नेताओं, सन्तों आदि को अधिवेशन-सम्मेलन आदि के अवसरों पर बुला-कर उनके प्रवचनों-व्याख्यानों आदि द्वारा निरक्षरों का ज्ञानवर्धन कराने में पुस्तकालय समर्थ हो सकता है।

यात्रा पार्टी, मोद-मंडली तथा इसी प्रकार के अन्यान्य सरकारी भ्रमणशील दलों के कार्यक्रम कराकर योजना, राष्ट्रीय गतिविधि आदि की जानकारी निरक्षरों को कराई जा सकती है।

अब तो अपनी राष्ट्रीय सरकार के सारे कार्य-कलाप के केन्द्रबिन्दु ही गाँव हो गए हैं। समाज शिक्षा आयोजक तथा आयोजिका, जनसेवक, पंचायत सेवक, सहकारी समितियों के कार्यकर्ता, सामान्य स्वास्थ्य और चिकित्सा के कार्य करने वाले डाक्टर-वैद्य, पशुपालन एवं पशु-चिकित्सा से सम्बन्ध रखने वाले चिकित्सक तथा अनुदेशक, कृषि-विस्तार एवं सुधार-सम्बन्धी परामर्श देनेवाले कार्य-कर्ता, शिल्प-उद्योग आदि की शिक्षा-दीक्षा देने वाली महिला कार्यकर्त्रियाँ, सभी गाँवों में जाने लगे हैं। उनके लिए बैठक, सभा या गोष्ठी का आयोजन कर पुस्तकालय निरक्षरों की बहुत-कुछ सेवा कर सकता है।

पुस्तकालय-सेवाओं का सारे विश्व में बड़ी तेजी से उन्नयन हो रहा है। तरह-तरह की सुविधाजनक व्यवस्थाएँ पुस्तकालय-संचालन के दरम्यान व्यवहार में लाई जा रही हैं। अपने देश में भी वे व्यवस्थाएँ चालू और कार्यान्वित की जा रही हैं। ये सब इसीलिए कि पुस्तकालय-सेवा का दायरा बढ़े। शिक्षितों तक अपनी सेवा का जाल तो वह फैलाये ही, अशिक्षितों को भी अपनी अमूल्य सेवाएँ प्रदान करे। अपने देश में दुर्भाग्यवश इन दिनों अशिक्षितों की संख्या शिक्षितों से बहुत ज्यादा हैं। विशेषतः यहाँ के गाँवों की दशा तो इस दिशा में अत्यन्त ही शोचनीय है। हम गाँव के अशिक्षितों की शोचनीय दशा में पुस्तकालय के द्वारा भी बहुत-कुछ सुधार कर सकते हैं। इसी दृष्टिकोण से ऊपर सुझाव के रूप में कतिपय बातें निवेदित की गई हैं। आशा है, पुस्तकालय के संचालक उन्हें व्यवहृत करके पुस्तकालय की सेवा-परिधि का विस्तार करते हुए शिक्षा की विभूति से वंचित निरक्षरों का कल्याण करेंगे।

पुस्तक-परिचय

उपन्यास

अजगर बाघ और देवता : पिता और पति के बीच फँसी हुई एक षोडषी की करुण कथा इस उपन्यास में वर्णित है, जो अजगर और बाघ से घिरी हिरनी की तरह अजगर के स्थान में बाघ को आत्म-समर्पण करती है। लेखक हैं श्री सत्य-पालजी। जिनमें कल्पना का विस्तार और अनुभूति की व्यापक तीव्रता है। प्रकाशक **हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि०, जी० टी० रोड शाहदरा-दिल्ली**। मूल्य १ रुपया।

* * *

प्रेमिका : चीन के प्रसिद्ध उपन्यासकार लिन पूताङ लिखित 'मिस तू' का हिन्दी रूपान्तर। यह एक रहस्यपूर्ण प्रेम-कहानी है। एक कुमारी और छात्र की प्रेम-कहानी का अन्त प्रेमिका की रहस्यमयी आत्महत्या से होता है। बहुत ही सुन्दर उपन्यास है। अनुवाद श्री महीपालसिंहजी ने किया है। प्रकाशक **हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लि०, जी० टी० रोड, शाहदरा-दिल्ली**। मूल्य एक रुपया।

* * *

घाटियाँ और घुमाव : मानव मन की दुर्बलताओं एवं इच्छाओं का प्रतीकात्मक चित्रण इस मनोवैज्ञानिक उपन्यास में है। उपन्यास की पृष्ठभूमि यात्रा है। एक यात्री को लेकर उपन्यास का कथाक्रम चलता है, जो निरुद्देश्य है। किन्तु वह प्रान्तीयता, सामाजिक परम्परा, धर्म-लोलुपता एवं व्यक्तिवाद की परिधि के बाहर है। यात्री संयमी है, उसका लक्ष्य केवल यात्रा है। लेखक महेशचन्द्र शर्मा बधाई के पात्र हैं। प्रकाशक **नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली** तथा मूल्य चार रुपये है। पुस्तक की पृष्ठ संख्या २२६।

* * *

देख कबीरा रोया : हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक और कथाकार श्री मन्मथनाथ गुप्त का नवीनतम उपन्यास है। इस उपन्यास में लेखक ने हमारे समाज के उन सिद्धांतों को आधार-भूमि बनाया है, जो बड़े ऊँचे-ऊंचे दिखाई देते हैं, लेकिन जब हम उन्हें काय रूप में परिणत करना चाहते हैं तो सैकड़ों बाधाएँ हमारे सामने आ खड़ी होती हैं। सुषमा के रूप में लेखक ने अपनी इस कृति में ऐसी नारी की अवतारणा की है, जो किसी भी पुरुष की रखैल रहना पसंद नहीं करती। सामाजिक वातावरण की पृष्ठभूमि में लिखित यह उपन्यास हमारे आज के मध्यमवर्गीय समाज का सही चित्र उपस्थित करता है। क्राउन साइज के १५१ पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित हुआ है और तीन रुपये में प्राप्य है।

* * *

एक प्रश्न में हिन्दी के सुविख्यात उपन्यासकार श्री भगवती प्रसाद वाजपेयी ने कमलेश के रूप में ऐसे पात्र का चित्र और चरित्र अंकित किया है, जो सहज ही किसी नारी में रुचि लेने को आतुर हो उठता है। जो भी नारी उसके सम्पर्क में आई, उसके प्रति ही वह एक विचित्र आकर्षण अनुभव करने लगता है। कथाकार वाजपेयी ने इस उपन्यास में कविजनोचित भावुकता को अपनाया है और यही कारण है कि कहीं-कहीं उनकी भाषा ऐसी हो गई है कि लगता है कि वे कविता कर रहे हैं। भाषा के सहज सौंदर्य और शब्दों के निराडम्बर सटीक प्रयोगों के कारण उपन्यास अत्यन्त रोचक बन पड़ा है। क्राउन साइज के १९८ पृष्ठ का यह उपन्यास भी **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली** ने प्रकाशित किया है और तीन रुपये पचास नये पैसे में मिलता है।

* * *

इन्कलाब : उर्दू के प्रख्यात कथाकार ख्वाजा अहमद अब्बास का अत्यन्त प्रसिद्ध उपन्यास है। इसके अनुवादक हैं श्री मुनीश सक्सेना। इस उपन्यास की लोकप्रियता का इससे बड़ा प्रमाण और क्या हो सकता है कि हिन्दी में अनूदित होने से पूर्व इसके अनुवाद अंग्रेजी, जर्मन व रूसी भाषाओं में भी हो चुके हैं। मौन प्रेम के घिसे-पिटे कथानकों की

पृष्ठभूमि पर तो आपने बहुतसे उपन्यास पढ़े होंगे, यह उपन्यास उस लीक से कुछ हटकर मनुष्य को यह बताने में समर्थ हो सकता है कि अपनी स्वतन्त्रता तथा स्वाभिमान की रक्षा के लिए उसे किस प्रकार संघर्ष करना चाहिए। यह एक ऐसा सशक्त और क्रान्तिकारी उपन्यास है, जिसे पढ़ते ही अपनी आँखों के सामने इतिहास के भूले-बिसरे चित्र अंकित हो जायेंगे। क्राउन साइज़ के ४४२ पृष्ठ का यह उपन्यास **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली** ने प्रकाशित किया है और यह छः रुपये में उपलब्ध किया जा सकता है।

* * *

छंट चले बादल : श्री देवदत्त 'अटल' द्वारा देश की राजनीतिक पृष्ठभूमि पर आधारित बिलकुल नये ढंग का उपन्यास है। इस उपन्यास में नवीनता इस बात की है कि इसमें स्वाधीनता-संग्राम की विविध झाँकियाँ प्रस्तुत करते समय लेखक ने न तो पात्रों के मानसिक अन्तर्द्वंद्वों की उपेक्षा की है, और न उनका अतिरंजनापूर्ण वर्णन किया है। इस उपन्यास में एक ऐसे व्यक्ति की कहानी अंकित की गई है जो बचपन से भारत को आज़ाद करने के सपने लेता है और यथासमय उनकी खातिर अनेक भीषण-से-भीषण कष्ट भी उठाता है। राजनीतिक जीवन के बहुरंगी चित्रों से युक्त क्राउन साइज़ के २०८ पृष्ठों का यह सजिल्द उपन्यास **पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली** द्वारा प्रकाशित हुआ है और चार रुपये में प्राप्य है।

* * *

कृषि

सहकारी खेती और भारतीय अर्थतन्त्र नामक इस पुस्तक में उत्तर प्रदेश के विधायक और नेता आचार्य दीपकर ने सहकारी कृषि की उपादेयता के सम्बन्ध में अत्यन्त उपादेय सामग्री प्रस्तुत की है। वास्तव में प्रस्तुत पुस्तक का सृजन उत्तर प्रदेश के एक मंत्री चौधरी चरणसिंह की 'ज्वाइण्ट फार्मिंग एक्स-रेड' नामक पुस्तक का जोरदार जवाब देने के लिए किया गया है, जैसा कि लेखक ने अपने वक्तव्य में में लिखा भी है। लेखक के मत में आज की आर्थिक और सांस्कृतिक प्रगति के अवरुद्ध मार्ग को प्रशस्त बनाने और सामाजिक गतिरोधों को दूर करने के लिए 'सहकारी खेती' का आश्रय लेना अत्यन्त अनिवार्य है। **पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली** द्वारा प्रकाशित डिमाई साइज़ के २०८ पृष्ठों की इस सजिल्द पुस्तक में उस 'सहकारी खेती' का प्रतिपादन किया गया है, जिसकी कल्पना कभी बापू ने की थी। आज के इस कृषि-प्रधान और सहयोगिता-प्रधान युग में यह पुस्तक प्रत्येक नागरिक को पढ़नी चाहिए। मूल्य पाँच रुपये।

* * *

बालोपयोगी

झूठी आन : टाड राजस्थान के आधार पर इस पुस्तक में दो ऐतिहासिक घटनाओं को बालकोपयोगी भाषा में श्री यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' ने लिखा है। भाषा सरल और सुबोध है। पुस्तक पठनीय एवं आकर्षक है। प्रकाशक **नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली** और मूल्य साठ नये पैसे।

* * *

मूंगे का द्वीप : **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली** की ओर से उसकी 'किशोर साहित्य' नामक बालोपयोगी पुस्तकमाला के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ है। इसमें प्रख्यात विदेशी लेखक श्री आर० एम० बेलेण्टाइन के अत्यन्त ख्याति-प्राप्त बालोपयोगी उपन्यास का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया गया है। अनुवादक हैं श्री श्रीकांत व्यास। अनुवाद की भाषा इतनी सरल, सुबोध और हृदयग्राही है कि इसे बच्चे खेल-खेल में पढ़ सकते हैं। यत्र-तत्र विषय तथा प्रसंग के अनुकूल दिये गए चित्रों के कारण पुस्तक और भी उपादेय हो गई है। क्राउन साइज़ के ९४ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक डेढ़ रुपये में प्राप्तव्य है।

* * *

अपना देश नामक इस पुस्तक में श्री रामचन्द्र तिवारी की 'नदियाँ', 'प्रदेश', 'परिक्रमा', 'फसलें', 'वर्षा', 'खनिज', 'वृक्ष', 'ऋतुएँ', 'फल', 'पालतू जानवर' और 'पक्षी' शीर्षक बालोपयोगी कविताएँ संकलित हैं। सारी पुस्तक विषयानुरूप अनेक बहुरंगे चित्रों से सुसज्जित होने के कारण बच्चों के लिए और भी सहज ग्राह्य हो गई है। मूल्य एक

रुपया पच्चीस नये पैसे।

*　　　*　　　*

आओ मिलकर गाएँ नामक इस पुस्तक में श्री धर्मपाल शास्त्री की 'चलें इकट्ठे' 'सुन्दर है सावन', 'झण्डा ऊँचा रहे हमारा', 'मुन्ना फिसला', 'आँधी', 'प्यार दो', 'भारत माँ ! तुझको प्रणाम', 'डुग, डुग, डुग, डुग', 'देखो, समझो, सोचो', 'म्याऊँ, म्याऊँ', 'एक, दो, तीन', 'भारत माता की जय', 'सड़क पार', 'बच्चे धुन के सच्चे', 'सीख' तथा 'आगे बढ़ना काम तुम्हारा' शीर्षक बालोपयोगी कविताएँ संग्रहीत हैं। प्रत्येक कविता के साथ पृष्ठभूमि में उसकी भावभूमि को प्रकट करने वाला चित्र भी दिया गया है, जिससे पुस्तक अत्यन्त आकर्षक हो गई है। **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित दुरंगी छपाई और आकर्षक तिरंगे कवर वाली यह पुस्तक ७५ नये पैसे में मिलती है।

*　　　*　　　*

काव्य

रामावतार त्यागी नामक इस पुस्तक में हिन्दी के सुविख्यात लेखक और समीक्षक श्री क्षेमचन्द्र 'सुमन' ने तरुण गीतकार श्री रामावतार त्यागी के गीतों का संकलन-सम्पादन किया है। प्रारम्भ में सुमनजी ने ३० पृष्ठों की लम्बी भूमिका में त्यागी के संघर्षमय जीवन और अल्हड़ स्वभाव का चित्रण करके उनके गीतों की बड़ी ही प्रांजल और हृदयग्राही शैली में मार्मिक समीक्षा प्रस्तुत की है। इस पुस्तक का प्रकाशन **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली** ने अपनी 'आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि' नामक पुस्तकमाला के अन्तर्गत किया है और यह उक्त पुस्तकमाला की छठी पुस्तक है। जिन लोगों ने त्यागी को कवि सम्मेलनों में सुना और पत्र-पत्रिकाओं में पढ़ा है, वे इस पुस्तक का बड़े चाव से स्वागत करेंगे। बच्चनजी के शब्दों में "रामावतार त्यागी आज की पीढ़ी के कवियों में भारत-भर में अकेला है, वह गीतों का बादशाह है।" ऐसे त्यागी के चुने हुए ४५ गीत इस पुस्तक में संकलित हैं। क्राउन साइज के १३२ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक दो रुपये में मिलती है।

*　　　*　　　*

रामधारीसिंह 'दिनकर' नामक इस पुस्तक का प्रकाशन भी इसके प्रकाशक **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली** ने अपनी 'आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि' नामक पुस्तकमाला के अन्तर्गत किया है और यह उक्त पुस्तकमाला की सातवीं पुस्तक है। इसका सम्पादन हिन्दी के जाने-माने कथाकार श्री मन्मथनाथ गुप्त ने किया है। श्री गुप्त ने अपनी ३४ पृष्ठ की लम्बी भूमिका में हिन्दी के ओजस्वी कवि श्री दिनकर के जीवन, व्यक्तित्व और काव्य का सर्वाङ्गीण अध्ययन प्रस्तुत किया है और बाद में उनकी ३२ कविताओं का संकलन है। 'परिशिष्ट' शीर्षक के अन्तर्गत दिनकरजी के जीवन की प्रमुख घटनाओं की तालिका कालक्रम से देकर बाद में उस सब सामग्री और पुस्तकों का भी उल्लेख कर दिया है जो दिनकरजी के सम्बन्ध में उपलब्ध हैं। क्राउन साइज के १४४ पृष्ठ की यह पुस्तक दो रुपये में प्राप्य है।

*　　　*　　　*

जगन्नाथ आजाद नामक इस पुस्तक का प्रकाशन **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली** की ओर से उसकी 'उर्दू के लोकप्रिय शायर' नामक पुस्तक-माला के अन्तर्गत हुआ है और इसमें इसके सम्पादक श्री प्रकाश पण्डित ने उर्दू के इस

प्रख्यात शायर की जीवनी और काव्य का संकलन किया है। काउन साइज के ९६ पृष्ठ की इस सजिल्द पुस्तक के प्रारम्भिक १० पृष्ठों में सम्पादक ने श्री आजाद के जीवन तथा व्यक्तित्व पर रोचक शैली और सरल भाषा में अत्यन्त विस्तार से प्रकाश डाला है और अन्त में उनकी बेहतरीन रचनाओं को संकलित किया है। हिन्दी के पाठक उर्दू के कवियों के जीवन और काव्य से परिचय प्राप्त करने के उद्देश्य से इसे डेढ़ रुपये में प्राप्त कर सकते हैं।

* * *

शिक्षा

विश्व के महान् शिक्षाशास्त्री श्री आर० एस० श्रीवास्तव द्वारा लिखित और **कैलाश पुस्तक सदन, लश्कर, ग्वालियर** द्वारा प्रकाशित एक ऐसी पुस्तक है, जिसमें विश्व की कमेनियस, रूसो, हेनरीक पेस्तलॉजी, हरबर्ट, फ्रोबेल, जॉन डिवी, मॉन्टेसेरी, रवीन्द्रनाथ टैगोर, महात्मा गांधी, आचार्य विनोबा भावे और डॉ० राधाकृष्णन्-जैसे ग्यारह शिक्षा-शास्त्रियों की विभिन्न प्राचीन व नवीन शिक्षा-प्रणालियों को सुन्दर रूप देकर पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत पुस्तक एल० टी०, बी० टी०, बी० एड०, बी० टी० सी० और एम० एड० के परीक्षार्थियों के लिए लिखी गई है। पुस्तक में यत्र-तत्र जो पाद-टिप्पणियाँ, हिन्दी व अंग्रेज़ी में शिक्षा-शास्त्रियों के उद्धरण, परिशिष्ठ और चार्ट आदि दे दिये गए हैं, उनसे इसकी उपयोगिता और भी बढ़ गई है। डिमाई साइज के १७४ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक पाँच रुपये में प्राप्य है।

* * *

मातृभाषा शिक्षण के लेखक और प्रकाशक भी पहली पुस्तक की भाँति ही हैं। डिमाई साइज के २२४ पृष्ठ की इस सजिल्द पुस्तक में लेखक ने एल० टी०, बी० टी०, बी० एड०, बी० टी० सी० आदि कक्षाओं में पढ़ाने वाले अध्यापकों के लिए मातृभाषा की अध्यापन-विधियों एवं तत्सबन्धी अनेक दृष्टिकोणों का अवलोकन करते हुए विशेष रूप से प्रकाश डाला है। इस पुस्तक के मातृभाषा-शिक्षण के उद्देश्य, वाचन के प्रकार एवं उनका शिक्षण, मातृभाषा-शिक्षण में व्याकरण का स्थान, रचना-शिक्षण, पद्य-शिक्षण, गद्य-शिक्षण, भाषा-शिक्षण के विभिन्न उपकरण, विविध विषय, हिन्दी साहित्य की आधुनिक प्रवृत्तियाँ आदि नौ अध्याय पुस्तक की उपयोगिता का प्रमाण देने के लिए काफी हैं। पाँच रुपये में प्राप्य।

* * *

बुनियादी विद्यालय संगठन नामक पुस्तक में इसके लेखक श्री राममोहन तिवारी ने मध्य प्रदेश शिक्षा विभाग द्वारा निर्धारित बुनियादी प्रशिक्षण केन्द्रों के पाठ्यक्रम के आधार पर शासन-प्रबन्ध, शाला-स्वास्थ्य और सामाजिक संगठन आदि विषयों पर उपयोगी प्रकाश डाला है। बुनियादी प्रशिक्षण-केन्द्रों में अध्ययन करने वाले प्रशिक्षणार्थियों के लिए यह पुस्तक सर्वथा उपयोगी है। क्राउन साइज के १६० पृष्ठ की यह पुस्तक **कमला पुस्तक सदन, आगरा** ने प्रकाशित की है और २ रुपये २५ न० पै० में मिल सकती है।

* * *

इतिहास

आदिम मानव समाज : प्रथम मानव की सृष्टि से लेकर नगर-सभ्यता के प्रथम आविर्भाव के काल का इतिहास मानव समाज का बुनियादी इतिहास है। इस प्रागैतिहासिक मानव को समझे बिना मनुष्य के आधुनिक इतिहास की सही व्याख्या सम्भव नहीं है। प्रागैतिहासिक मानव-संस्कृति का विकास धीरे-धीरे लाखों वर्ष तक कैसे हुआ, यही इस पुस्तक का विषय है। पुस्तक के लेखक हमारे चिरपरिचित भूपेन्द्रनाथ सान्याल हैं। प्रकाशक **नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली**। पृष्ठ संख्या २१६ तथा मूल्य चार रुपये है।

* * *

इतिहास : प्रागैतिहासिक मानव और संस्कृतियाँ में प्रोफेसर श्रीराम गोयल ने पृथिवी के जन्म और जीवन के उद्भव से लेकर मानव के आविर्भाव और विकास, पाषाणयुगीन संस्कृतियों और ताम्रकाल में हुए आविष्कारों का वर्णन करते हुए कांस्यकाल में साक्षर नागरिक सभ्यताओं के जन्म तक की समीक्षा इस पुस्तक में की है। विषय के

विवेचन में लेखक ने नृतत्त्व और पुरातत्त्व शास्त्रों के क्षेत्र में हुए नवीनतम अध्ययन एवं गवेषणाओं को समाविष्ट किया है। डिमाई साइज़ के लगभग १८० पृष्ठों की यह पुस्तक लगभग ६० चित्रों तथा मानचित्रों से सज्जित है। प्रकाशक—**विश्वविद्यालय प्रकाशन, गोरखपुर**; मूल्य ६.५०।

* * *

भारत विभाजन की कहानी : सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली की ओर से उसकी 'सस्साहित्य अल्पमोली' पुस्तकमाला के अन्तर्गत प्रकाशित हुई है। यह पुस्तक श्री एलन कैम्पबेल जान्सन द्वारा लिखित उनकी 'मिशन विद माउण्टबेटन' नामक सुविख्यात अंग्रेज़ी पुस्तक का हिन्दी रूपान्तर है। रूपान्तरकार हैं श्री रनवीर सक्सेना। इसमें भारत के बटवारे और सत्ता-हस्तान्तरण की कहानी बड़ी ही सरस और रोचक शैली में प्रस्तुत की गई है। यद्यपि इस पुस्तक का प्रकाशन मण्डल की ओर से पहले भी हुआ था, किन्तु इसे सर्वजन-सुलभ बनाने के उद्देश्य से 'अल्पमोली' पुस्तकमाला में प्रकाशित किया है। लेखक चूंकि स्वयं माउण्टबेटन के कर्मचारी-मण्डल में संयुक्त कमाण्ड हैडक्वार्टर्स में 'एयर पब्लिक रिलेशंस आफ़िसर' थे, अतः उनकी लेखनी द्वारा लिखित यह पुस्तक अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान की अधिकारिणी है। क्राउन साइज़ के २२४ पृष्ठ की यह पुस्तक डेढ़ रुपये में प्राप्त की जा सकती है।

* * *

बापू की कारावास कहानी का प्रकाशन भी **सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली** की ओर से उसकी **'अल्पमोली'** पुस्तकमाला के अन्तर्गत हुआ है। इस पुस्तक का पहला संस्करण इतना लोकप्रिय हुआ था, कि उसी को दृष्टि में रखकर उसका यह संस्करण प्रकाशित किया गया है। इस पुस्तक की लेखिका डॉ० सुशीला नैयर को गांधीजी के साथ जेल में रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। इसी कारण उन्होंने इस पुस्तक में आगाखाँ महल के बन्दी जीवन का ऐतिहासिक विवरण प्रस्तुत किया है। पुस्तक की भूमिका डॉ० राजेन्द्र प्रसाद ने लिखी है। उन्होंने इसके सम्बन्ध में यह ठीक ही लिखा है—"यह महात्माजी से सम्बन्ध रखने वाली उन पुस्तकों में से होगी, जो मौलिक सामग्री दे सकेंगी।" ऐसी रचना को कितनी बार भी पढ़ें, उतना ही लाभ होता है। डिमाई साइज़ के ४०२ पृष्ठ की यह पुस्तक ढाई रुपये में प्राप्य है।

* * *

सर्वोदय-सन्देश में आचार्य विनोबा भावे द्वारा दिये गए सर्वोदय के बुनियादी तत्त्वों पर प्रकाश डालने वाले प्रवचन संग्रहीत कर दिए गए हैं। इन प्रवचनों में जहाँ सर्वोदय के आदर्शों पर प्रकाश डाला गया है, वहाँ इसकी भी विस्तृत जानकारी दे दी गई है कि भूदान आन्दोलन का विचार किस प्रकार उदित और पल्लवित हुआ। सारी पुस्तक को दो खण्डों में विभाजित किया गया है। पहले खण्ड में वे प्रवचन दिये गए हैं, जो सर्वोदय-समाज के उद्घाटन के दिनों में दिये थे और दूसरे खण्ड में उपसंहारात्मक सामग्री दी गई है। इन्हें पढ़कर पाठकों को यह पता चल सकता है कि हमारे समाज का वास्तविक कल्याण किन सिद्धान्तों और आदर्शों पर हो सकता है। सर्वोदय के बुनियादी तत्वों और भूदान यज्ञ की विशद जानकारी इससे पाठकों को मिल जाएगी। क्राउन साइज़ के १८८ पृष्ठ की यह पुस्तक डेढ रुपये में मिलती है। इसका प्रकाशन भी मण्डल ने अपनी 'अल्पमोली' पुस्तकमाला में किया है।

* * *

इतिहास के महापुरुष नामक इस पुस्तक में श्री जवाहरलाल नेहरू की प्रख्यात पुस्तक 'विश्व इतिहास की झलक' से संकलित वह सामग्री ही प्रस्तुत की गई है, जो उन्होंने संसार के अनेक महापुरुषों के सम्बन्ध में प्रस्तुत की थी। यह पुस्तक इतिहास की अनेक विभूतियों से परिचय कराने के साथ-साथ जीवन-निर्माण की भी प्रेरणा देती है। पुस्तक में जिन ऐतिहालिक विभूतियों का वर्णन किया गया है उनमें महावीर और बुद्ध, सुकरात, सिकन्दर, चन्द्रगुप्त मौर्य और चाणक्य, 'देवानां प्रिय' अशोक, ईसा, गुप्त सम्राट, हर्षवर्धन और ह्वेन्सांग, शंकराचार्य, हजरत मुहम्मद, महमूद गजनवी, मुहम्मद तुगलक, चंगेजखाँ, मार्कोपोलो, फिरोजशाह तुगलक, तैमूरलंग, चार्ल्स प्रथम, बाबर, अकबर, शिवाजी, क्लाइव, नेपोलियन, सन यात सेन, रजाशाह पहलवी, मेजिनी, गेरीबाल्दी, बिस्मार्क, कार्ल मार्क्स, कमालपाशा आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। यह पुस्तक जहाँ छात्रों के लिए विशेष उपयोगी

है वहाँ साधारण पाठक भी इससे लाभान्वित हो सकते हैं। क्राउन साइज़ के २३१ पृष्ठ की यह पुस्तक डेढ रुपये में प्राप्तव्य है। यह पुस्तक भी मण्डल की ओर से उसकी 'अल्पमोली' पुस्तकमाला के अन्तर्गत प्रकाशित हुई है।

* * *

भारतीय स्वाधीनता संग्राम का इतिहास नामक पुस्तक में स्व० इन्द्रविद्या-वाचस्पति ने सन् १८५७ की सुविख्यात क्रान्ति से प्रारम्भ करके स्वाधीनता-प्राप्ति (१९४७) तक की सभी प्रमुख घटनाओं और आन्दोलनों का समावेश कर दिया है। लेखक पत्रकार होने के साथ-साथ एक प्रख्यात राष्ट्रसेवी भी थे, इस कारण उन्होंने इस पुस्तक में वर्णित सभी घटनाओं को डूबकर लिखा है। इतनी उपयोगी पुस्तक का प्रकाशन उनके जीवन-काल में न हो सका, इसका प्रकाशक को भारी खेद है, यहाँ तक कि वे इसकी भूमिका भी न लिख सके। भारतीय स्वाधीनता-संग्राम के इतिहास में रुचि रखने वाले प्रत्येक पाठक के लिए यह पुस्तक सर्वथा उपादेय और संग्रहणीय है। यथाप्रसंग यत्र-तत्र दिये गए चित्रों के कारण यह पुस्तक और भी आकर्षक हो गई है। क्राउन साइज़ के ४१७ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक **सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली** ने प्रकाशित की है और साढ़े पाँच रुपये में मिलती है।

* * *

आधुनिक समाज में वर्ग तथा **हमारे युग की क्रान्ति** नामक इन दोनों पुस्तकों का प्रकाशन **नेशनल एकाडमी, दिल्ली** की ओर से हुआ है और दोनों ही पुस्तकें क्रमशः टी० बी० बोलेभोर तथा ह्यू सेटर वाटसन की अंग्रेज़ी पुस्तकों के हिन्दी अनुवाद हैं। अनुवाद श्री सर्वेश्वरदयाल सक्सेना ने प्रस्तुत किया है। पहली पुस्तक में जहाँ उसके भूमिका, सामाजिक वर्ग का स्वरूप, लोकतन्त्रीय और कम्युनिस्ट समाजों में वर्ग, सामाजिक वर्ग का तात्पर्य आदि अध्यायों में आधुनिक समाज की राजनीतिक विवेचना प्रस्तुत की गई है वहाँ दूसरी पुस्तक के भूमिका, विश्व-तनाव के कुछ मूल कारण, औद्योगिक क्रान्ति, क्रान्तिकारी शक्तियाँ, क्रान्तिकारी शासन-पद्धतियाँ और सर्वाधिकारवाद आदि अध्याय भी हमारे युग की राजनीतिक क्रान्तियों पर पर्याप्त प्रकाश डालते हैं। क्राउन साइज़ के क्रमशः ६० तथा ६१ पृष्ठ की ये पुस्तकें २५-२५ न० पै० में प्राप्य हैं।

* * *

आलोचना, निबन्ध

कला-साहित्य शास्त्र : प्रस्तुत पुस्तक में आलोचना-शास्त्र के कुछ सामान्य सिद्धान्तों का विवेचन है, विशेष आलोचना नहीं। कला और साहित्य मानव के लिए प्रधान प्राण-स्रोत हैं, जिनकी हमें सब प्रकार के छूत संसर्ग से रक्षा करनी है। पुस्तक चिन्तातुर कला-साहित्य का दुखता हुआ शोध प्रयास है। पुस्तक पठनीय और उपादेय है। लेखक श्री हरिदत्तजी दुबे। **प्रतिभा प्रकाशन, जवाहरगंज, जबलपुर** द्वारा प्रकाशित। पृष्ठ संख्या २४३ तथा मूल्य छः रुपये पचास नये पैसे।

* * *

रामचरितमानस और साकेत : श्री परमलालजी गुप्त ने तुलसीकृत रामायण और साकेत का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है। पुस्तक को हाथ में लेते समय भय हुआ कि श्री गोस्वामी तुलसीदासजी के ऊपर आज के नवयुवक जो आरोप करते हैं, कहीं लेखक भी तो उन्हीं सब बातों से प्रभावित नहीं। पर सन्तोष का विषय है कि दोनों कवियों के साथ पुस्तक में पूर्ण सहानुभूति से लेखक ने देखा है। राष्ट्रकवि के ऊपर लिखी पुस्तकों में यह पुस्तक भी अपना विशिष्ट स्थान पाएगी, इसमें सन्देह नहीं। पुस्तक में कहीं-कहीं ऐसी धारणाओं को पोषण दिया गया है जो उचित नहीं जान पड़तीं। प्रकाशक **नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली**। पृष्ठ संख्या २०८ तथा मूल्य पाँच रुपये।

* * *

आधुनिक कविता की प्रवृत्तियाँ : सम्पादक श्री मोहन वल्लभ जी पन्त। प्रकाशक **कुल सचिव, सरदार वल्लभ भाई विद्यापीठ, वल्लभ विद्या नगर, गुजरात**। पृष्ठ संख्या १८४, मूल्य पाँच रुपये। सरदार वल्लभ भाई विद्यापीठ में एक परिसंवाद कराया गया था। उसी में वहाँ के अध्यापकों ने भाग लेकर उक्त विषय पर अपने-अपने प्रबन्ध प्रस्तुत किये हैं। अंग्रेज़ी, कन्नड़, गुजराती, बंगला, मराठी, राजस्थानी, संस्कृत तथा हिन्दी (पूर्वार्द्ध) और हिन्दी (उत्तरार्द्ध)

के विवेचनात्मक निबन्ध हैं जो सभी वहाँ हिन्दी में लिखकर पढ़े गए। विद्वान् लेखकों ने काफी परिश्रम से अपना परिसंवाद प्रस्तुत किया है।

* * *

बंगला साहित्य दर्शन नामक पुस्तक में इसके लेखक श्री मन्मथनाथ गुप्त ने बंगला भाषा और साहित्य के सम्बन्ध में व्यवस्थित परिचय प्रस्तुत किया है। इस पुस्तक में व्यक्तियों के परिचय को उतना महत्त्व नहीं दिया गया, जितना बंगला साहित्य और उसकी धाराओं को। प्राचीन और अर्वाचीन बंगला साहित्य का विशद अध्ययन करने के लिए यह पुस्तक अत्यन्त उपयोगी है। क्राउन साइज़ के ३१२ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक **सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली** की ओर से प्रकाशित हुई है और चार रुपये में प्राप्य है।

* * *

नाटककार हरिकृष्ण 'प्रेमी' और संवत् प्रवर्त्तन नामक इस छोटी-सी पुस्तक में डॉ० महेन्द्र भटनागर ने प्रख्यात नाटककार हरिकृष्ण 'प्रेमी' की नाट्य-कला पर विचार करके उनके अन्तिम नाटक 'संवत्-प्रवर्त्तन' की विस्तृत और सर्वाङ्गीण समीक्षा प्रस्तुत की है। इससे पाठक जहाँ प्रेमी जी के इस नाटक से परिचय प्राप्त करेंगे वहाँ वे उनकी नाट्य-कला के बहुमुखी पक्षों की जानकारी भी हासिल कर सकेंगे। **कैलाश पुस्तक सदन, ग्वालियर** की ओर से प्रकाशित क्राउन साइज़ के ११६ पृष्ठ की यह पुस्तक तीन रुपये में प्राप्य है।

* * *

घूँघट में गोरी जले नामक इस पुस्तक का प्रकाशन **हिन्द पॉकेट बुक्स, शाहदरा** की ओर से हुआ है। इसमें उर्दू के प्रख्यात लेखक कृश्नचन्दर के १५ व्यंगपरक निबन्धों का संकलन है। ये निबन्ध पहले 'आज़ादी के पचास साल बाद' नाम से प्रकाशित हुए थे। इस पुस्तक का प्रत्येक निबन्ध व्यक्ति और समाज को जहाँ चुनौती देता प्रतीत होता है वहाँ रास्ता भी दिखाता है। यह निबन्ध नश्तर भी है और मरहम भी। भाषा, भाव और शैली, सभी दृष्टि से पठनीय है। मूल्य एक रुपया।

* * *

संस्मरण : यात्रा

मैं इनका ऋणी हूँ नामक इस पुस्तक में प्रो० इन्द्र विद्यावाचस्पति के वे संस्मरण संकलित हैं जो उन्होंने सर्वश्री लोकमान्य तिलक, बापू, मोतीलाल नेहरू, हकीम अजमलखाँ, मदनमोहन मालवीय, लाजपतराय, अन्सारी, शिवप्रसाद गुप्त, वल्लभभाई पटेल, मौलाना आज़ाद, नेताजी सुभाष, आसफअली, प्रेमचन्द, देवदास गांधी आदि के सम्बन्ध में समय-समय पर लिखे थे। अन्त में 'मेरे पिता' शीर्षक से उन्होंने अपने पिता अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्दजी के सम्बन्ध में भी संस्मरण लिखा है। प्रायः सभी संस्मरण अपनी शैली, भाषा और प्रवाह के कारण इतने रोचक बन पड़े हैं कि एक बार पढ़ना शुरू करने पर उन्हें बिना समाप्त किये नहीं रहा जा सकता। सभी संस्मरणों में लेखक ने अपनी प्रतिभा का अभूतपूर्व परिचय दिया है। **सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली** की ओर से प्रकाशित क्राउन साइज़ के १४४ पृष्ठ की यह पुस्तक दो रुपये में प्राप्य है।

* * *

रूस में छियालीस दिन नामक पुस्तक में श्री यशपाल जैन द्वारा लिखित उनकी उस यात्रा का मनोरंजक विवरण है, जो उन्होंने पिछले दिनों की थी। रूस के सम्बन्ध में सभी प्रकार की जानकारी हासिल करने के लिए यह पुस्तक सर्वथा उपादेय है। इसे पढ़कर हमारे पाठकों को जहाँ एक शक्तिशाली राष्ट्र को समझने का अवसर मिलेगा, वहीं वे इससे विदेश-यात्रा करने की प्रेरणा भी प्राप्त कर सकेंगे। **सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली** की ओर से आयोजित उसकी 'अल्पमोली' पुस्तक-माला के अन्तर्गत प्रकाशित क्राउन साइज़ के १८० पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक डेढ़ रुपये में प्राप्त की जा सकती है।

* * *

कहानी

कहानी खत्म हो गई नामक इस पुस्तक में हिन्दी के धुरन्धर कथाकार आचार्य चतुरसेन शास्त्री की चौबीस ऐतिहासिक कहानियाँ संकलित हैं। इस पुस्तक का प्रकाशन

जून '६१ में प्रकाशित नई पुस्तकें

उपन्यास

एक प्रश्न	भगवतीप्रसाद वाजपेयी	३.५०
देख कबीरा रोया	मन्मथनाथ गुप्त	३.००

हिन्दी के लोकप्रिय कवि

रामधारीसिंह 'दिनकर'	सम्पादक : मन्मथनाथ गुप्त	२.००
रामावतार त्यागी	सम्पादक : क्षेमचन्द्र 'सुमन'	२.००

किशोरों के लिए उपन्यास

मूंगे का द्वीप	श्रीकान्त व्यास	१.५०

जुलाई '६१ में प्रकाशित नई पुस्तकें

मौलिक समालोचना

आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और शृङ्गार	डा० रांगेय राघव	६.००

कहानी

ये तेरे प्रतिरूप	स० ही० वात्स्यायन 'अज्ञेय'	२.५०

उपन्यास

आत्महत्या से पहले	चन्द्रदेव सिंह	२.००

महापुरुषों के जीवन पर सरस कविताएँ

माँ यह कौन ?	रामेश्वरदयाल दुबे	१.००

उर्दू शायरी

अर्श मलसयानी	सं० प्रकाश पण्डित	१.५०

राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली-६ द्वारा प्रकाशित

इसके प्रकाशक **राजपाल एण्ड सन्स दिल्ली** की ओर से प्रकाशित होने वाली 'चतुरसेन का सम्पूर्ण कहानी-साहित्य' नामक पुस्तक-माला के अन्तर्गत हुआ है और यह पुस्तक उसकी पाँचवीं कड़ी है। जिन पाठकों ने आचार्य चतुरसेन की कृतियाँ पढ़ी हैं, उन्हें इस संग्रह की कहानियाँ पढ़कर संतोष ही होगा। इन ऐतिहासिक कहानियों को प्रकाशक ने समस्या-प्रधान, राजनीतिक, बौद्धकालीन, कौतुकप्रधान, मुगलकालीन और सामाजिक आदि विभिन्न विभागों में विभक्त किया है, जिससे इसकी उपादेयता और भी बढ़ गई है। प्रत्येक कहानी के आरम्भ में उसकी पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालने वाली परिचयात्मक पक्तियाँ भी दे दी गई हैं। क्राउन साइज़ के २६० पृष्ठ की इस सजिल्द पुस्तक का प्रकाशन भी **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली** ने किया है और यह चार रुपये में प्राप्त की जा सकती है।

* * *

खण्डित पूजा में हिन्दी के जाने-माने कथाकार श्री विष्णु प्रभाकर की २३ कहानियाँ संग्रहीत हैं। लेखक के अनुसार, इस संकलन में वे ही कहानियाँ दी गई हैं, जो १९५५ और १९५६ के बीच लिखी गई हैं। यह लेखक का आठवाँ कहानी-संग्रह है। इस संग्रह की कुछ कहानियाँ दूसरी भाषाओं में भी अनूदित हुई हैं और कुछ आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रों से प्रसारित हो चुकी हैं। विष्णुजी की लेखन-शैली में जो सौष्ठव और मार्दव होता है, वह हिन्दी के बहुत कम लेखकों की कहानियों में देखने को मिलता है। इस संग्रह की कहानियाँ हमारे इस कथन की सचाई का उज्ज्वल प्रमाण हैं। क्राउन साइज़ के १७४ पृष्ठ के इस संकलन का प्रकाशन भी **सस्ता साहित्य मण्डल, नई-दिल्ली** की 'अल्पमोली' पुस्तक-माला के अन्तर्गत हुआ है। डेढ़ रुपये में प्राप्य।

* * *

नवरंग नामक इस पुस्तक में श्री रामेश्वरप्रसाद वाशिष्ठ की ११ कहानियाँ संकलित हैं। इनमें से अधिकांश कहानियाँ सामयिक हैं। प्रत्येक कहानी में किसी-न-किसी आधुनिक समस्या पर प्रकाश डाला गया है। क्राउन साइज़ के ९८ पृष्ठ की इस पुस्तक का प्रकाशन **नवरंग पब्लिशिंग हाउस, गणगौरी बाजार, जयपुर** ने किया है और यह १ रुपया २५ नये पैसे में प्राप्त की जा सकती है।

* * *

माँ : श्री सूर्यनारायणजी अग्रवाल द्वारा लिखित एक सामाजिक नाटक। प्रकाशक **नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली**। पृष्ठ संख्या ७५ तथा मूल्य एक रुपया पच्चीस नये पैसे। प्रस्तुत नाटक में अंग्रेज़ी शब्दों की भरमार है। एक स्थान पर तो एक पूरा पत्र ही अंग्रेज़ी का देवनागरी लिपि में मुद्रित है। वैसे पुस्तक पठनीय है।

* * *

नाटक बहुरंगी नामक पुस्तक में हिन्दी के तरुण नाटककार डॉ० लक्ष्मीनारायणलाल के 'मम्मी ठकुराइन', 'दो मन चाँदनी', 'सुबह से पहले', 'औलादी का बेटा', 'बाहर का आदमी', 'शाकाहारी', 'शरणागत', 'गली की शान्ति', 'चौथा आदमी', 'काल पुरुष' और 'अजन्ता की नर्तकी', 'मैं चाहता हूँ' और 'जादू बंगाल का' आदि १२ एकांकी नाटक संकलित हैं। 'ताजमहल के आँसू' और 'पर्वत के पीछे' नामक दो एकांकी संग्रहों के बाद डॉक्टर लाल का यह तीसरा एकांकी संग्रह है। इस संग्रह में सकलित प्रायः सभी एकांकी रंगमंच पर सफलतापूर्वक अभिनीत हो चुके हैं। पुस्तक की 'प्रस्तावना' तथा 'ये बहुरंगी नाटक' शीर्षक से लिखी गई पंक्तियों में लेखक ने नाटकों के रूप, उद्देश्य और उनकी अभिनेयता के सम्बन्ध में विचार किया है। **भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी** की ओर से प्रकाशित क्राउन साइज़ के २८८ पृष्ठ की यह पुस्तक साढ़े चार रुपये में प्राप्य है।

* * *

'बरगद की छाया' में श्री देवराज 'दिनेश' के 'बरगद की छाया', 'अग्रदूत', 'सबसे बड़ी जीत', 'मिट्टी और सोना', 'मेल मिलाप', 'हमारा कर्तव्य' और 'सपनों के बहाने' शीर्षक छः मौलिक एकांकियों का संकलन प्रस्तुत किया गया है। ये सभी नाटक ऐसे विषयों पर लिखे गए हैं, जिनका हमारे निजी एवं सामाजिक जीवन के साथ निकट का

(**शेष पृष्ठ ४९६ पर**)

आगामी मास के प्रकाशन

आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली

—**इत्यादि,** श्री उदयशंकर भट्ट, कविता संग्रह

—**प्रतिनिधि बाल-एकांकी,** सं० श्री कृष्ण, श्री योगेन्द्रकुमार लल्ला

—**मुर्दा जी उठा,** श्री विजयकुमार गुप्त, नाटक

राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली

—**अर्शमलसयानी,** प्रकाश पण्डित

—**आत्महत्या से पहले,** श्री चन्द्रदेव सिंह, उपन्यास

—**ये तेरे प्रतिरूप,** श्री अज्ञेय, कहानी

—**माँ यह कौन !** श्री रामेश्वरदयाल दुबे, कविता

—**हिन्दी कविता में प्रेम और शृंगार,** श्री रांगेय राघव

विश्वविद्यालय प्रकाशन, गोरखपुर

—**मृगनयनम्,** प्रो० विश्वम्भरनाथ त्रिपाठी

—**राजस्व,** डॉ० ब्रजकिशोर सिंह

हिन्द पॉकेट बुक्स (प्रा०) लि०, शाहदरा-दिल्ली

—**दो बहनें,** श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर, अनु० श्री रामनाथ सुमन, उपन्यास

—**जुदाई की शाम,** श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर, अनु० श्री रामनाथ सुमन, उपन्यास

—**बहूरानी,** श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर, अनु० श्री श्यामू संन्यासी, उपन्यास

—**काबुलीवाला,** श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर, अनु० श्री प्रबोध-कुमार मजूमदार, कहानी-संग्रह

—**एक अनजान औरत का खत,** स्टीफन ज़्विग, अनु० श्री शरद देवड़ा, उपन्यास

—**हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ प्रेम-गीत,** सम्पादक श्री क्षेमचन्द्र 'सुमन'

(**पृष्ठ ४६४ का शेष**)

सम्बन्ध है। त्याग, प्रेम, पारस्परिक सहयोग, कर्तव्य-पालन तथा श्रम आदि का हमारे समाज में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। सभी नाटक इन्हीं विषयों को आधार-भूमि बनाकर लिखे गए हैं। इन नाटकों की एक विशेषता यह भी है कि ये बिना अधिक खर्चे से कहीं पर भी आसानी से खेले जा सकते हैं। क्राउन साइज़ के १७२ पृष्ठ की यह पुस्तक **सस्ता साहित्य मण्डल** ने प्रकाशित की है और ढाई रुपये में प्राप्य है।

* * *

शारदीया : आकाशवाणी, नई दिल्ली के महानिर्देशक श्री जगदीशचन्द्र माथुर का एक भावपूर्ण मौलिक नाटक है। नाटक की पृष्ठभूमि ऐतिहासिक है और लेखक ने अपनी 'प्राक्कथन' शीर्षक पंक्तियों में इसके विषय में व्यापक प्रकाश भी डाला है। हिन्दू-मुस्लिम एकता की भावना को आधार बनाकर लिखा गया यह नाटक वास्तव में श्री माथुर की प्रतिभा का उज्ज्वल प्रमाण प्रस्तुत करता है। मराठा-काल के इतिहास से लगभग सभी ऐतिहासिक पात्रों, तथ्यों और परिस्थितियों का ब्यौरेवार विवरण प्राप्त करके लेखक ने उन्हें अपनी प्रतिभा के रंग में रंगकर एक कलात्मक कृति का निर्माण किया है। आशा है लेखक के 'कोणार्क' की भाँति ही यह नाटक भी हिन्दी साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान बनायेगा। क्राऊन साइज़ के १२० पृष्ठों का यह नाटक **सस्ता साहित्य मण्डल** ने ही प्रकाशित किया है और यह डेढ़ रुपये में प्राप्य है।

* * *

(**शेष पृष्ठ ४६८ पर**)

जून मास के प्रकाशन

उपन्यास

अज़ीज अहमद, **दो वेश्याएँ**, पु० मु०, ११६, पॉकेट, सुमन पॉकेट बुक्स, दिल्ली ०.७५
आदिल रशीद, **हिरोइन**, पु० मु०, १३२, पॉकेट, सुमन पॉकेट बुक्स, दिल्ली ०.७५
ओमप्रकाश शर्मा, **एक रात**, १२८, पॉकेट, सुमन पॉकेट बुक्स, दिल्ली ०.७५
ओमप्रकाश शर्मा, **चम्पा का फूल**, १२५, पॉकेट, सुमन पॉकेट बुक्स, दिल्ली ०.७५
ओमप्रकाश शर्मा, **प्रीत न कीजे कोय**, १४४, पॉकेट, सुमन पॉकेट बुक्स, दिल्ली ०.७५
ओमप्रकाश शर्मा, **माधुरी**, १४४, पॉकेट, सुमन पॉकेट बुक्स, दिल्ली ०.७५
ओमप्रकाश शर्मा, **सुहाग की साँझ**, १२८, पॉकेट, सुमन पॉकेट बुक्स, दिल्ली ०.७५
रईस अहमद जाफ़री, **टूटे पत्ते**, १२७, पॉकेट, सुमन पॉकेट बुक्स, दिल्ली ०.७५
श्याम बिहारी विरागी, **चतुरी काका**, १०२, क्रा०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी २.५०
श्याम बिहारी विरागी, **धरती मुस्कराई**, २१०, क्रा०, कल्याणदास एण्ड ब्रदर्स, वाराणसी ३.५०
शौकत थानवी, **शिमले की शाम**, १३६, पॉकेट, सुमन पॉकेट बुक्स, दिल्ली ०.७५
शौकत थानवी, **ससुराल**, १२८, पॉकेट, सुमन पॉकेट बुक्स, दिल्ली ०.७५
सोमनाथ अकेला, **शमा जले सब रात**, १२०, पॉकेट, सुमन पॉकेट बुक्स, दिल्ली ०.७५
हृदेशसिंह, **काग़ज के देवता**, १४४, पॉकेट, सुमन पॉकेट बुक्स, दिल्ली ०.७५

कविता

अयोध्याप्रसाद गोयलीय, **नग़मए-हरम**, २७२, क्रा०, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी २.००
केशवचन्द्र वर्मा, **वीणापाणि के कम्पाउण्ड में**, १२१, डि०, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी ३.००
देवर्षि सनाढ्य, डॉ०, **मध्ययुग काव्य चयन**, २७२, क्रा०, विश्वविद्यालय प्रकाशन, गोरखपुर ३.५०
नीरज, **प्राण गीत**, पु० मु०, १२८, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली ३.००

कहानी

अयोध्याप्रसाद गोयलीय, **लो कहानी सुनो**, १४०, क्रा०, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी २.००

विविध

केदारनाथ शास्त्री, **सिन्धु सभ्यता समीक्षा,** ५६, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली	५.००
जयनाथ नलिन, **जवानी का नशा,** १६८, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली	३.००
तपन मोहन चट्टोपाध्याय, अनु० कणिका विश्वास, **पलासी का युद्ध,** २३६, क्रा०, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी	२.५०
राधाकृष्ण शर्मा, **आधुनिक यूरोप का इतिहास,** (१४५३-१७८८), १७६, डि०, किताबघर, गोरखपुर	
वेदप्रकाशसिंह, **लोक प्रशासन,** ४१६, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली	१०.००
श्रीराम गोयल, **प्रागैतिहासिक मानव और संस्कृतियाँ,** १८०, डि०, विश्वविद्यालय प्रकाशन, गोरखपुर	६.५०

(पृष्ठ ४६६ का शेष)

गई है। **सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली** की ओर से प्रकाशित क्राउन साइज़ के १८६ पृष्ठ की यह पुस्तक ढाई रुपये में प्राप्त की जा सकती है।

* * *

प्राकृतिक जीवन की ओर प्रख्यात लेखक एडोल्फ जस्ट की 'रिटर्न टु नेचर' नामक पुस्तक का हिन्दी भावानुवाद है। इसका हिन्दी अनुवाद किया है श्री विट्ठलदास मोदी ने। मोदीजी स्वयं प्रख्यात प्राकृतिक चिकित्सक हैं, अतएव यह स्वाभाविक ही है कि उन्होंने यह भावानुवाद मूल विषय की गहराई में जाकर किया है। मनुष्य को किस प्रकार तन्दुरुस्त रहना चाहिए, कैसी वेश-भूषा होनी चाहिए, उसे कैसा भोजन करना चाहिए आदि अनेक जीवनोपयोगी बातों की जानकारी इस पुस्तक से हो जायगी। 'प्राकृतिक चिकित्सा' जैसे विषय पर यह पुस्तक सर्वथा पठनीय है। **सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली** की 'अल्पमोली' पुस्तकमाला के अन्तर्गत प्रकाशित क्राउन साइज़ के २५३ पृष्ठ की यह पुस्तक डेढ़ रुपये में मिलती है।

* * *

संस्कृत व्याकरण : चन्द्रालोक (पंचम मयूख) में श्री विश्वभर नाथ त्रिपाठी ने चन्द्रालोक के पञ्चम मयूख की विद्वत्तापूर्ण हिन्दी व्याख्या प्रस्तुत की है। पचास पृष्ठ की पांडित्यपूर्ण भूमिका में लेखक ने अलंकार-साहित्य के उद्भव और विकास का विस्तृत विवेचन किया है। क्राउन साइज़ के ३०० पृष्ठों की यह पुस्तक **विश्वविद्यालय प्रकाशन, गोरखपुर** से प्रकाशित हुई है और चार रुपये में प्राप्य है।

टेसी टोरी : लेखक श्री यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'। प्रकाशक **नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।** मूल्य ५० नये पैसे तथा पृष्ठ संख्या ३१। पुस्तक में डॉ० टेसी टोरी तथा शरतचन्द्र के काल्पनिक इन्टरव्यू संग्रहीत हैं। शर्माजी ने विशेष प्रकार के इंटरव्यू लिखने का मार्ग प्रशस्त किया है। पुस्तक सुन्दर एवं पठनीय है।

* * *

'सुभाषित सप्तशती' नामक पुस्तक में संस्कृत साहित्य के मर्मी विद्वान् डॉ० मंगलदेव शास्त्री ने वैदिक, संस्कृत तथा पालि साहित्य से पठन और मनन करने योग्य प्रेरणाप्रद सुभाषितों का संकलन किया है। इस पुस्तक में किये गए परिश्रम का आभास इसकी सूची को देखकर ही हो जाता है। सूची के अनुसार, इस पुस्तक में वेदों, ब्राह्मणों तथा उपनिषदों के अतिरिक्त वाल्मीकि रामायण, महाभारत, धम्मपद, मनुस्मृति, चरकसंहिता, योगवाशिष्ठ और श्रीमद्भागवत से भी सूक्तियाँ संकलित की गई हैं। इसके अतिरिक्त संस्कृत वाङ्मय का ऐसा कोई नाटक, काव्य और कथा-ग्रंथ नहीं बचा जिसका सदुपयोग लेखक ने इस पुस्तक के संकलन में न किया हो। अन्त में 'सुभाषित सूची' शीर्षक के अन्तर्गत अकारादि क्रम से उन सभी सूक्तियों को एकत्र कर दिया गया है, जिनका इस पुस्तक में निर्देश है। इससे इस पुस्तक की उपादेयता और भी बढ़

प्रकाशन समाचार

वर्ष : ८
अंक : १२
वार्षिक : ३.००
एक प्रति : ०.३१

सम्पादक : ओंप्रकाश, डायरेक्टर इंचार्ज, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड

अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक-संघ के प्रतिनिधियों से भारत सरकार के शिक्षा-मन्त्रालय का विचार-विमर्श १९५८ और १९५९ में समय-समय पर लगभग एक वर्ष पर्यन्त होता रहा, इस विषय में किसी परिणाम पर पहुँचने के उद्देश्य से कि हिन्दी में विज्ञान-सम्बन्धी विषयों की पुस्तकों के प्रकाशन में प्रकाशकों का सहयोग किन नियमों, सिद्धान्तों और सूत्रों के अनुसार प्राप्त किया जा सकता है। पृष्ठभूमि में समस्या यह थी, और आज भी है कि हिन्दी को राज्य-भाषा तो घोषित किया जा चुका है लेकिन राज्यभाषा के पद के अनुरूप उसमें जिस साहित्य का अभाव है, विशेषतः वैज्ञानिक और तकनीकी साहित्य का, उसकी पूर्ति कैसे हो। प्रकाशक मुख्यतः उन्हीं पुस्तकों का निरन्तर प्रकाशन कर सकते हैं जिनकी माँग हो; अब भारत सरकार इस माँग को अपनी ओर से देने के लिए तैयार हुई है। लेकिन व्यावसायिक प्रकाशकों के प्रति हमारी सरकार में जो सन्देह और अविश्वास की भावना है, संघ के प्रतिनिधियों और केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय के अधिकारियों की बातचीत लगातार उससे दूषित रही, और अब जो केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय के हिन्दी निर्देशालय से एक परिपत्र प्रकाशकों को भेजा गया है, उस पर भी उसी भावना की छाया स्पष्ट पड़ी हुई है।

संघ के प्रतिनिधियों ने इस बात पर ज़ोर दिया था कि इस योजना के अनुसार जिन पुस्तकों का प्रकाशन हो, उनका मूल्य लागत से तीन गुना हो—इस दो-तिहाई अन्तर में रायल्टी, प्रकाशकों का पुस्तक-उत्पादन का व्यय, पुस्तक-विक्रेता का कमीशन और प्रकाशक का लाभ रहेगा। सामान्यतया रायल्टी और पुस्तक-विक्रेता को दिये जाने वाले कमीशन एवं सुविधाओं के अधिक होने के कारण पुस्तकों का मूल्य चार गुना तक रखा जाता है, फिर भी पुस्तकों के बिक जाने पर १०% से कम ही लाभ प्रकाशक को मिलता है। लेकिन सभी पुस्तकें एक निश्चित अवधि में बिक जाएँगी, इसकी गारण्टी (पाठ्य-पुस्तकों के अतिरिक्त) प्रकाशक-जगत् में कहीं नहीं होती। पुस्तकों की बीसियों प्रतियाँ समीक्षा के लिए वितरित की जाती हैं, फिर दीमक, सीलन और अन्य कारणों से उन्हें नुकसान पहुँचता रहता है, भेजे गए पार्सल पुस्तक-विक्रेताओं ने किसी कारण यदि न छुड़वाए तो लौटी हुई पुस्तकें बिक्री योग्य नहीं रहतीं—इन सबका खर्च ऊपर के सूत्र में भी नहीं जोड़ा गया है, और प्रत्येक प्रकाशक जानता है कि इस व्यय का बोझ कुल लाभ पर एक बड़े अनुपात में रहता है। यदि पुस्तक बिकने से रह गई तो उस दशा में रद्दी के दामों के अलावा शेष सभी स्वाहा हो जाता है।

सरकारी समर्थन से एक उद्देश्य-विशेष की पूर्ति के लिए प्रकाशित पुस्तकों का दाम लागत से तीन गुना रखा जाए, यह माँग सर्वथा उचित थी। इससे कम अनुपात में दाम रखना प्रकाशन-व्यवसाय को क्षति पहुँचाने से कम नहीं है। हिन्दी में आज जो साहित्य है भी, वह किसी सरकारी प्रयास का परिणाम नहीं, प्रकाशकों के सामर्थ्य, साहस और सूझबूझ का परिणाम है। उनका सहयोग उनके हितों को क्षति पहुँचाकर क्योंकर प्राप्त किया जा सकता है?

देश-विदेश से

७ नवम्बर से वाराणसी, दिल्ली, कलकत्ता, बम्बई तथा मद्रास में राष्ट्रीय पुस्तकोत्सव का सप्ताह मनाया जाएगा। अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ की ओर से इस समारोह की प्रारम्भिक तैयारियाँ शुरू कर दी गई हैं। पुस्तकोत्सव के अवसर पर विभिन्न पुस्तकों की प्रदर्शनी, रेडियो-वार्ता, कवि-सम्मेलन तथा अन्य सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाएगा। समारोह में सभी सुप्रसिद्ध भारतीय लेखकों के अतिरिक्त विदेशी लेखकों के सम्मिलित होने की सम्भावना है। यूनेस्को के एजूकेशन-डायरेक्टर डॉ० अख्तर हुसैन भी इसमें भाग लेंगे।

* * *

दिल्ली के स्कूलों के विद्यार्थियों को टैक्स्ट बुक्स समय पर न मिल पाने के कारण जो कठिनाई तथा हानि उठानी पड़ रही है उसके कारणों पर प्रकाश डालते हुए एक स्थानीय पुस्तक-विक्रेता ने इसका मुख्य कारण इस बार एजूकेशन-डायरेक्टरेट द्वारा सम्पूर्ण दिल्ली के लिए समान टैक्स्ट बुक का निर्धारण बताया है। प्रवक्ता का कहना है कि जितनी अधिक संख्या में पुस्तकों की आवश्यकता है दिल्ली में मुद्रण की उतनी अच्छी व्यवस्था नहीं है। इसी सम्बन्ध में एक प्रकाशक ने बताया कि पुस्तकों के प्रकाशन के लिए दिया गया समय बहुत कम था, यद्यपि फिर भी काफ़ी पाठ्य-पुस्तकें समय पर प्रकाशित कर दी गईं। डायरेक्टरेट ऑफ़ एजूकेशन की ओर से एक वक्तव्य में कहा गया है कि चिन्ता का कोई कारण नहीं है और यह स्थिति एक-दो दिन में सुधर जाएगी।

* * *

इंगलैण्ड की एक प्रकाशकीय संस्था ने एशिया तथा अफ्रीकी देशों के सम्बन्ध में एक नई पुस्तकमाला का प्रकाशन आरम्भ किया है। नए स्वतन्त्र हुए राष्ट्रों के सम्बन्ध में सभी देशों की दिलचस्पी है। पुस्तकमाला के उद्घाटन-अवसर पर बोलते हुए इंगलैंड के उपनिवेश-सचिव ने इस बात पर प्रसन्नता प्रकट की कि इसका आरम्भ बहुत ही उचित समय पर किया गया है। पुस्तकों में देश की लगभग १९वीं शताब्दी के आरम्भ से लेकर वर्तमान काल तक की राष्ट्रीय जागृति तथा उत्थान पर प्रकाश डाला जाएगा।

अभी तक प्राय: पश्चिमी लेखकों द्वारा एशिया व अफ्रीकी देशों के लोगों की भावनाओं को गलत रूप में प्रचारित किया जाता रहा है। इन पुस्तकों की सबसे बड़ी विशेषता यह होगी कि ये सम्बन्धित देश के लेखकों से ही लिखवाई जाएँगी। इन पुस्तकों के प्रचार का क्षेत्र भी पर्याप्त विस्तृत होगा क्योंकि आरम्भ में इङ्गलैण्ड के साथ अमरीका एवं इटली में प्रकाशित होने के बाद अन्य भाषाओं में भी इनका अनुवाद किया जाएगा। भारत के सम्बन्ध में पुस्तक, लन्दन यूनिवर्सिटी के स्कूल ऑफ़ ओरिएण्टल एण्ड अफ्रीकन स्टडीज़ के एक शिक्षाचार्य लिखेंगे।

* * *

तास की एक रिपोर्ट से सूचना मिली है कि सोवियत भाषाविदों ने मिलकर 'दि माडर्न हिस्ट्री ऑफ़ इण्डिया' नामक एक पुस्तक प्रकाशित की हैं जिसमें सत्रहवीं शताब्दी से लेकर प्रथम विश्व-युद्ध की समाप्ति तक के सांस्कृतिक, आर्थिक तथा राजनीतिक उत्थान पर प्रकाश डाला गया है। इससे पूर्व इन्स्टीट्यूट ऑफ़ एशियन पीपुल्स की ओर से १९५९ में 'कण्टम्परेरी हिस्ट्री ऑफ़ इण्डिया' का प्रकाशन किया गया था।

पुस्तक का वह अंश सबसे रोचक है जिसमें भारतीय कला तथा आधुनिक साहित्य की प्रगति का चित्रण किया गया है।

पुस्तकों में चित्रों का महत्त्व

आर० ओ० हाजेल

प्रस्तुत लेख के लेखक यूनेस्को की ओर से पाकिस्तान में पुस्तकों के चित्र बनाने के विषय के विशेषज्ञ हैं। यह लेख दक्षिणी एशिया के लिए यूनेस्को के पाठ्य-सामग्री सम्बन्धी प्रादेशिक केन्द्र की त्रैमासिक सूचना बुलेटिन के अप्रैल १९६१ के अंक से साभार प्रकाशित किया जा रहा है।

पुस्तकें पढ़ी जाएँ, इसके लिए पहले यह जरूरी है कि वे देखी जाएँ। यह एक बहुत ही स्पष्ट-सी बात है। लेकिन जब तक पुस्तकें देखी न जाएँ—और वे ध्यान न आकृष्ट करें—तब तक इस बात की सम्भावना है कि उन्हें पढ़ा भी न जाए। किसी दुकान या पुस्तकालय में कभी-कभी आनेवाला आदमी केवल कुछ ही पुस्तकों के नामों से परिचित होता है, और उसके पास इतना समय नहीं होता कि जितनी पुस्तकें उपलब्ध हों उन सबको वह पढ़ डाले। वह शायद कोई ऐसी पुस्तक चुन लेता है जिसके बारे में उसने सुन रखा है या जिसकी समीक्षा उसने कहीं पढ़ी है—या वह कोई ऐसी पुस्तक चुन लेता है जो उसे देखने में अच्छी लगती है।

पाठक के लिए आँख का महत्त्व सबसे अधिक होता है। पाठक की आँख जो कुछ देखती है और उस पर उसका जो असर होता है ये दोनों ही बातें समान रूप से उन लोगों के लिए महत्त्व रखती हैं जो पुस्तकें तैयार करते हैं और प्रकाशित करते हैं या जिन्हें इस बात में दिलचस्पी होती है कि किताबें पढ़ी जाएँ। लेकिन जाहिर है कि इसमें खास दिलचस्पी उन लोगों को होती है जो पुस्तकों के लिए चित्र बनाते हैं।

संचार के साधनों में इधर जो उन्नति की गई है उसकी बदौलत अब कम मेहनत से ज्यादा लोगों को जितनी जानकारी उपलब्ध हो गई है उतनी अब से पहले इतिहास में कभी नहीं हुई थी। लेकिन पढ़ा-लिखा आदमी या औरत वही है जो इस जानकारी को परख सके—उस जानकारी को और उन विचारों को जिन्हें जानने की शायद उसने कोशिश भी नहीं की थी—जो सच और झूठ को अलग-अलग पहचान सके, जो गूढ़ तत्वों को सनसनी पैदा करने वाली या क्षणिक महत्त्व की बातों से अलग करके देख सके। अगर व्यक्ति को अपनी पसन्द की चीज़ चुनने की आज़ादी न हो तो लोकतन्त्र एक ढोंग बनकर रह जाता है और 'शिक्षा' जबर्दस्ती दिमाग में चीजें ठूँसने का रूप धारण कर लेती है। लोगों को अपनी पसन्द की चीज़ चुनने की आज़ादी देकर उन्हें विभिन्न बातों की जानकारी प्रदान करने में आधुनिक समाज में पुस्तकों का महत्त्व बढ़ा ही है, घटा नहीं। आज हमें पहले से बनी-बनाई रायें जितनी आसानी से मिल सकती हैं उसकी वजह से यह आवश्यक हो गया है कि हर व्यक्ति सतर्क रहे ताकि कहीं ऐसा न हो कि असावधानी में कहीं स्वयं उसकी ईमानदारी पर भी आँच न आ जाए। लोगों को अपनी पसन्द की चीज़ चुनने की आज़ादी सचेतन रूप से और समझ-बूझकर चीज़ों के चुनने की आज़ादी होनी चाहिए—क्योंकि जब हर आदमी को अपनी पसन्द की चीज चुनने की आज़ादी होगी तभी हर आदमी का अलग अपना व्यक्तित्व सम्भव हो सकेगा, तभी लोकतन्त्र या स्वतन्त्रता सम्भव हो सकेगी।

पुस्तकें उपलब्ध की जानी चाहिएँ—हर तरह की पुस्तकें चाहे उसमें इस बात का ही खतरा क्यों न हो कि भावी पाठक इतनी बहुत सी पुस्तकें देखकर बौखला जाए। हाल ही में कम दामों वाली कच्ची जिल्द की पुस्तकों ने जो प्रगति की है उससे देखने वाले की आँखों के सामने इसी प्रकार की अव्यवस्था का चित्र आता है, हालाँकि इसकी बदौलत सारी दुनिया में लाखों ऐसे लोग पुस्तकें पढ़ने लगे

हैं और पुस्तकें खरीदने लगे हैं जो पहले पुस्तकें खरीदना अपने बस के बाहर की बात समझते थे। लेकिन इस अव्यवस्था में भी एक प्रकार की व्यवस्था है। कच्ची जिल्द वाली पुस्तकों (पॉकेट बुक्स) के इस गोरखधन्धे में भी विशेष प्रकार के साहित्य के प्रेमी, जैसे विज्ञान-सम्बन्धी कथा-साहित्य के प्रेमी, एक नज़र में इस विषय की पुस्तकों को पहचान सकते हैं क्योंकि इन पुस्तकों के आवरण-पृष्ठ की सज्जा भड़कीली होते हुए भी ऐसी अवश्य होती है कि उसे देखकर पुस्तक का विषय पहचाना जा सके। यह इस बात का केवल एक उदाहरण है कि पुस्तकों के प्रकाशन और उनकी बिक्री के नये-नये तरीकों के कारण पुस्तकों की रूप-सज्जा में क्या परिवर्तन आ रहे हैं। कुछ प्रकाशकों का तो यहाँ तक दावा है कि कुछ ही वर्षों में यह हालत हो जाएगी कि पुस्तकें छापी नहीं जाया करेंगी बल्कि उन्हें फोटोग्राफी की किसी तरकीब से तैयार किया जाया करेगा। उससे शायद उन लोगों को तो दुःख हो जो खूबसूरत किताबों के शौकीन होते हैं, लेकिन दुनिया में आज किताबों की जो भूख है उसे देखते हुए शायद लगातार बढ़ती हुई ज़रूरतों को पूरा करने के लिए नये-नये तरीकों का सहारा लेना पड़ेगा।

अब से पहले भी किताबों के बारे में लोगों की धारणा बदली है। सबसे पहली पुस्तकें हाथ से तैयार की जाती थीं, उनका एक-एक अक्षर चुन-चुनकर लिखा जाता था, बड़ी मेहनत से उनके लिए चित्र बनाए जाते थे और उन पर जिल्द बाँधी जाती थी। किसी पुस्तक को नकल करने और उसे तैयार करने में जितना समय और जितनी मेहनत लगती थी उसके कारण हर प्रति एक 'मूल रचना' बन जाती थी और वह निपुण तथा लगन के साथ काम करने वाले शिल्पकारों की कलाकृति होती थी।

अक्षर तथा चित्र अंकित करने की शैलियों की कोई सीमा नहीं थी—यदि उन पर कोई बन्धन था तो केवल यह कि उन्हें तैयार करने वाले में कितनी योग्यता और धैर्य होता था। ज़्यादातर शैलियाँ बहुत सजावटी और बेल-बूटेदार होती थीं, क्योंकि इनको तैयार करने में समय तो बहुत लगता था लेकिन किसी सीधी-सादी, पर अच्छे ढंग से डिज़ाइन की हुई चीज़ के मुकाबले ज़्यादा आसानी से निर्विकार सुन्दरता का नमूना प्रतीत हो सकती थीं। हर पुस्तक को बड़ी सावधानी से सँभालकर रखा जाता था ताकि उस ज़माने के इने-गिने विद्वान् उसे पढ़ सकें।

वास्तव में जो पुस्तकें सबसे पहले छापी गईं वे 'ब्लाक' वाली पुस्तकें थीं। चूँकि उस ज़माने में बहुत ही थोड़े लोग पढ़ना जानते थे इसलिए वे ज़्यादातर चित्रों का सहारा लेते थे। पूरे पृष्ठ की पाठ्य-सामग्री और चित्र काठ के एक ही टुकड़े पर काट लिए जाते थे। इस ब्लाक से एक-जैसे कई प्रूफ़ उतारे जा सकते थे, पर एक-एक अक्षर करके पूरी पाठ्य-सामग्री को लकड़ी पर काटना बहुत ही श्रमसाध्य काम था और इसमें पाण्डुलिपियों के लिए चित्र बनाने से भी अधिक कौशल की ज़रूरत पड़ती थी।

१४४० ई० के लगभग जब पहली बार ऐसे टाइप की ईजाद हुई जिसे एक जगह से हटाकर दूसरी जगह लगाया जा सकता था तो किताबों के उपयोग और उनकी रूप-सज्जा के बारे में पूरी कल्पना ही बदल गई। यह लक्ष्य अधिकाधिक महत्त्व धारण करता गया कि एक-जैसी अनेक पुस्तकें तैयार की जाएँ जिन्हें बहुत से लोग पढ़ सकें।

बिहार सचिवालय की सांस्कृतिक संस्था 'जीवन अध्ययन मंडल' की ओर से गत ११ मई को जन-सम्पर्क विभाग सचिवालय के कर्मचारी श्री रामचन्द्र शर्मा 'किशोर' को लगभग एक दर्जन उत्तम पुस्तकें लिखने के लिए सम्मानित और पुरस्कृत किया गया। चित्र में भारत सरकार की उपवित्तमंत्रिणी श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा श्री किशोर को पुरस्कार देती दिखाई पड़ रही हैं।

लेकिन सर्वप्रथम मुद्रक ऐसे शिल्पकार होते थे जिन्हें पुस्तक की सुन्दरता का पूरा ध्यान रहता था। उन उपायों की खोज में, जिन पर पूरे मुद्रण-उद्योग की स्थापना निर्भर थी, गूटेनबर्ग को इस बात का श्रेय दिया जाना चाहिए कि उसमें छोटी-छोटी बारीकियों को ध्यान में रखने का शिल्पकारों वाला गुण भी था और साथ ही पुस्तक के पृष्ठ में हाशियों और पंक्तियों के अनुपात के बारे में वह एक कुशल डिज़ाइनर की दृष्टि भी रखता था।

चूंकि छापकर जो चीज़ दूसरों तक पहुँचाई जाती थी उसमें चित्र एक अभिन्न अंग होते थे, इसलिए छपाई के लिए कला का जो रूप अपनाया गया वह 'वुडकट' अर्थात् लकड़ी पर डिज़ाइन काटने की कला थी। लकड़ी के ब्लाकों और अलग-अलग अक्षरों के टाइप को बिठाकर सजाई गई पाठ्य-सामग्री का मेल बहुत ही सुन्दर साबित हुआ। शायद इन दोनों का मेल कराने में सबसे बड़ा हाथ इस बात का था कि उस ज़माने के सबसे कुशल कलाकार पुस्तकों के लिए चित्र भी बनाते थे। वे डिज़ाइन बना देते थे और कुशल दस्तकार लकड़ी या धातु के ब्लाकों पर उसे उतार देते थे। अलब्रेख्ट ड्यूररे जैसे कुछ प्रतिभाशाली लोग ऐसे भी थे जो स्वयं अपने हाथ से ब्लाक भी तैयार करते थे। ब्लाक की छपाई बुनियादी तौर पर छपाई का काम है और इसलिए कलाकार स्वयं अपने ब्लाकों की छपाई करते थे। वे चित्र बनाते ही छपाई के लिए थे। परन्तु अच्छे कलाकारों में सभी ऐसे नहीं थे जिनमें इतना धैर्य हो कि वे छपाई का काम कर सकें, इसलिए धीरे-धीरे यह काम दस्तकारों ने अपने हाथ में सँभाल लिया। अक्सर तो ऐसा भी होता था कि चित्र बनाने की कला की अपेक्षा उस चित्र को ब्लाक के रूप में परिवर्तित करने वाले की कला का महत्त्व अधिक होता था।

पिछले कुछ दिनों में फ़ोटो-एनग्रेविंग की प्रगति के कारण और विशेष रूप से हाफ़टोन प्रोसेस की प्रगति के कारण अब किसी भी चीज़ को हूबहू वैसा ही छापा जा सकता है। पुराने दस्तकारों को अपने हाथ से काम करने के कारण कुछ कला का आभास रहता था; उनका स्थान टेकनीशियनों ने ले लिया। चूंकि ये टेकनीशियन कला अथवा चित्रण की किसी भी शैली को किसी-न-किसी तरह

छाप देने का कोई उपाय ढूँढ़ निकालते थे, इसलिए छपाई के लिए खास तौर से डिज़ाइन बनाने का महत्त्व ख़त्म होता गया और अच्छे डिज़ाइन तथा अच्छे चित्रों वाली पुस्तकें नायाब होती गईं।

१९२०-३० के ज़माने में जर्मनी में बाहास आन्दोलन ने मशीनों के डिज़ाइन के बारे में और बड़े पैमाने पर छपाई करने के बारे में कुछ प्रयोग आरम्भ किये। उन्होंने छपाई के लिए विशेष डिज़ाइनों की समस्या पर ध्यान देना शुरू किया, खास तौर पर इस सवाल पर कि कितने बड़े पृष्ठ पर किस प्रकार के टाइप में छपाई की जानी चाहिए। इन प्रयोगों के फलस्वरूप पुस्तकों की शक्ल ही बदल गई है। अब बारीक बेलबूटेदार बार्डरों और सजावटी तथा एक-दूसरे से सर्वथा असंगत टाइपों का चलन नहीं रह गया है, जिनसे न तो पढ़ाई में कोई सुविधा होती थी न छपाई में ही। बहुत ही जटिल और उलझी हुई रूप-सज्जा के स्थान पर अब सीधे-सीधे टाइपों और दूसरे ऐसे साधनों से काम लिया जाता है जो दृष्टि को अपनी ओर आकर्षित करते हैं।

आज पुस्तकों के डिज़ाइन तैयार करने वाले के सामने एक ही लक्ष्य है : पुस्तकों को अधिक पठनीय बनाना। उसे काग़ज़ का भी ध्यान रखना पड़ता है : उस पर टाइप या हाफ़टोन ब्लाक की छपाई कैसी आती है, वह देखने में कैसा लगता है, वह छूने में कैसा लगता है। वह पृष्ठ के आकार और उसकी शक्ल को ध्यान में रखकर उसके लिए ऐसा संतुलित डिज़ाइन तैयार करता है कि देखने में सुन्दर भी लगे और बेकार जगह का अपव्यय भी न हो। उसे इस बात का भी ध्यान रखना पड़ता है कि टाइप देखने में सुन्दर हो और आसानी से पढ़ा जा सके, साथ ही वह उसे पुस्तक की शैली और पाठ्य-सामग्री के भी अनुकूल रखने की कोशिश करता है। वह इस बात की कोशिश करता है कि शीर्षकों का टाइप और पाठ्य-सामग्री के टाइप तथा ब्लाक का हाशियों और पृष्ठ पर छूटी हुई सफ़ेदी के साथ ऐसा सन्तुलित सम्बन्ध हो कि आँख पर ज्यादा ज़ोर न पड़े और पुस्तक को आसानी से पढ़ा जा सके। पढ़ने में सुविधा प्रदान करके और पृष्ठ की रूप-सज्जा को आकर्षक बनाकर वह पाठक को पुस्तक पढ़ने के लिए प्रोत्साहित करना चाहता है।

यह ज़रूरी नहीं है कि जो आदमी पुस्तक का डिज़ाइन

तैयार करे वही उसके लिए चित्र भी बनाये। वह इस बात की कोशिश करता है कि अपनी कला को पुस्तक की पूरी योजना का एक अभिन्न अंग बना दे। उसे यह जानना चाहिए कि पुस्तक की पाठ्य-सामग्री के लिए चित्रों का क्या उपयोग है और उसे ऐसी शैली चुननी चाहिए जो इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए उपयुक्त हो। चित्र का उद्देश्य किसी चीज़ का वर्णन करना भी हो सकता है, उसकी व्याख्या करना भी या किसी चीज़ को सिखाना भी। चित्रकार से कभी यह आशा की जाती है कि वह किसी बात को चित्र के रूप में आँखों के सामने उतार दे या कभी उससे केवल सजावट के लिए सहायता ली जा सकती है—या कभी उसके चित्र का यह भी उद्देश्य हो सकता है कि वह पाठक के मन में एक उत्सुकता पैदा करे, पाठक के मन में पुस्तक को देखने का कौतूहल पैदा करे ताकि पाठक यह जानने के लिए कि विषय-वस्तु क्या है, पूरी कहानी को पढ़ डाले। चित्र पूर्णतः यथार्थनिष्ठ भी हो सकता है या वह बिलकुल ही कल्पना पर आधारित हो सकता है। चित्र का उद्देश्य कुछ भी हो, पर उसे पृष्ठ की सज्जा के साथ मेल खाना चाहिए और उसकी शैली पुस्तक के विषय के अनुकूल और लागत पुस्तक के लिए निर्धारित उत्पादन-व्यय की सीमाओं के भीतर होनी चाहिए।

ऐसा करने के लिए चित्रकार को छपाई की विभिन्न पद्धतियों का ज्ञान होना चाहिए और साथ ही इस बात का भी कि किसमें क्या सुविधा है और क्या कठिनाई। उसे इस बात का भी ज्ञान होना चाहिए कि छपाई की हर पद्धति के लिए आर्ट-वर्क किस ढंग से तैयार किया जाए। यदि सम्भव हो तो ब्लाक बनाने वाले और छपाई करने वाले से भी उसका परिचय होना चाहिए क्योंकि उन पर ही उसके प्रयत्नों का फल निर्भर होगा और उसे यथा-सम्भव उनके घनिष्ठतम सहयोग से काम करना चाहिए। केवल इन बातों को जानकर और उनका ध्यान रखकर ही वह इस बात की आशा कर सकता है कि अन्त में पुस्तक जिस रूप में छपकर तैयार होगी वह उसकी आशाओं पर पूरी उतरेगी।

किसी भी प्रकाशन में एक चित्र सजावट मात्र भी हो सकता है और विचार को व्यक्त करने का शक्तिशाली

माध्यम भी, क्योंकि किसी चित्र को देखना एक प्रकार का अनुभव है। कारण यह कि हमारी आँख पर किसी चीज़ की नहीं बल्कि अलग-अलग धरातलों पर से प्रतिबिम्बित प्रकाश की अनुक्रिया होती है, इसलिए शेर को देखने का अनुभव शेर के चित्र को देखने के अनुभव से बहुत भिन्न नहीं होता (अन्तर केवल यह होता है कि जिन्दा शेर को देखने से शायद दृष्टि के अतिरिक्त अन्य चेतनाएँ भी काम करती हैं)। दूसरी ओर यदि वह कोई ऐसा अनोखा जानवर हो जिसे पाठक ने पहले कभी न देखा हो और न ही उसका कोई चित्र देखा हो, तो उसके एक अच्छे चित्र की एक झलक-भर देख लेने से पाठक को उस जानवर के बारे में जितना सही-सही ज्ञान हो जाएगा उतना सही ज्ञान उसे कितने ही अधिक शब्दों में उसका वर्णन पढ़कर न होता। चित्र और शब्दों का संयोजन और भी अच्छा होता है क्योंकि उससे पाठक को उस जन्तु के आकार का भी कुछ अनुमान हो जाएगा जो कि चित्र में नहीं दिखाया जा सकता।

इस दृष्टि से चित्र एक ऐसी भाषा का काम दे सकते हैं जिसे सब लोग समझ सकें। अधिकांश भाषाएँ ध्वनि तथा दृश्य को व्यक्त करने वाले ऐसे प्रतीक-चिह्नों का समूह होती हैं जिनको अलग-अलग दे दिया जाता है। इन शब्दों अथवा ध्वनियों का स्वतः कोई अर्थ नहीं होता; उनका तो हम वही अर्थ समझने लगते हैं जो किसी संस्कृति-विशेष द्वारा उनके साथ जोड़ दिए जाते हैं—और अलग-अलग संस्कृतियों में एक ही चिह्न के अलग-अलग अर्थ हो सकते हैं। लेकिन अच्छे चित्र को समझाने की ज़रूरत नहीं पड़ती। देखने वाला उसे सीधे-सीधे अनुभव कर सकता है। बच्चों के लिए विज्ञान की पुस्तकों के लिए एक प्रख्यात लेखक का कहना है कि वे इस बात की आशा करते हैं कि उनकी पुस्तकों के लिए जो चित्र बनाए जाएँ वे लिखित सामग्री की अपेक्षा सात गुनी जानकारी प्रदान करें। इसका मतलब है कि छोटे-छोटे ब्यौरे की बातों के बारे में चित्र बनाने से पहले बहुत छानबीन कर ली जानी चाहिए, लेकिन यह हो सकता है कि कोई भी आदमी, चाहे वह पुस्तक की लिखित सामग्री को समझता हो या नहीं, इन चित्रों को 'पढ़' सकता है।

पुस्तकें सचित्र हों अथवा सादी, वे हमेशा से सभ्यता के लिए आवश्यक रही हैं और यदि कभी भी मशीनों ने पुस्तकों का स्थान ले लिया तो इसका कारण यही होगा कि मशीनों को पुस्तकों ने ही सम्भव बनाया है। मनुष्य अपने जीवनकाल में स्वयं खोजकर अथवा अनुभव करके बहुत-कुछ जान सकता है। लेकिन पुस्तकों की सहायता से तो अब तक जो कुछ हो चुका है और आगे चलकर जो कुछ हो सकता है वह सब उसकी पठन-दृष्टि की परिधि में आ जाता है। अगर मनुष्य को अपने भाग्य का निर्माण स्वयं करना है तो हमें और अधिक पुस्तकें उपलब्ध करनी चाहिएँ। हमें उनको आकर्षक बनाना चाहिए, ताकि पाठक का ध्यान उनकी ओर जाए और वह उन्हें पढ़े।

पुस्तकों को लोकप्रिय बनाने के लिए कुछ उपाय

यीरिना क्लिमेतोवा

……सभी जानते हैं कि पुस्तकें जीवन को सरस और समृद्ध बनाती हैं। किन्तु उनको जनता तक कैसे पहुँचाया जाए, उनमें रुचि कैसे पैदा की जाए? सामाजिक-सांस्कृतिक कार्यकर्ताओं के सामने ये प्रश्न उठ खड़े होते हैं। इस दृष्टि से चेकोस्लोवाकिया के एक छोटे-से नगर के ये प्रयोग और अनुभव दिलचस्प हैं।

मैं दक्षिणी मोराविया के छोटे-से नगर नोयमो पहुँची और एक सुन्दर आधुनिक होटल में ठहरी। मैं चकित रह गई यह देखकर कि शैया के किनारे वाली मेज़ पर एक किताब रखी है और साथ में एक पुर्जे पर लिखा है:

"अवकाश के समय आपको आनन्द देना इस पुस्तक का सौभाग्य होगा। कृपया पढ़ने के बाद इसे होटल में ही छोड़ दें ताकि वह अन्य अतिथियों की सेवा कर सके। अगर आप अधिक दिन ठहरें तो आप यहाँ के कार्यालय में स्थित छोटे-से पुस्तकालय में तशरीफ़ लाएँ या यहाँ से २०० मीटर दूर पर स्थित क्षेत्रीय लोक पुस्तकालय में पधारें। वहाँ आपके लिए हमने ३३,००० पुस्तकें जुटा रखी हैं।"

बढ़िया सूझ-बूझ है न! पुस्तकों को लोकप्रिय बनाने के लिए नोयमो पुस्तकालय में अपार सूझ-बूझ है। उदाहरण के लिए, यहाँ एक नर्सिंग स्कूल है। यहाँ लड़कियाँ कठोर, मगर सराहनीय काम सीखती है। डॉक्टर का 'दाहिना हाथ' बनने और रोगियों की प्राथमिक चिकित्सा तथा देखभाल करने का विज्ञान सीखने के अलावा, वे यह भी सीख लेती हैं कि पुस्तकों के बारे में दिलचस्प बातें बताकर रोगियों के दूभर वक्त को कैसे सुखद बनाया जा सकता है। और इस कला में लोक पुस्तकालय के कार्यकर्ता उनको दक्ष बनाते हैं। वे पढ़ने में खुद उनकी दिलचस्पी पैदा करते हैं, पुस्तकों पर बात करने का हुनर सिखाते हैं और दिलचस्प उद्धरण चुनने में दक्ष कर देते हैं।

इससे जहाँ अस्पताल में रोगियों को अपना दुख भूलने में मदद मिलती है, वहाँ वे बाहर निकलकर पुस्तकालय के नियमित सदस्य और अच्छे साहित्य के पाठक बन जाते हैं।

सूझ-बूझ की बातें युवकों को बड़ी भाती हैं। इसलिए पुस्तकालय ने नगर के अध्यापक प्रशिक्षण विद्यालय के छात्रों में दिलचस्पी पैदा कर दी है। पाठ्यक्रम से कोई सम्बन्ध नहीं है, फिर भी छात्रों ने अतिरिक्त ज़िम्मेदारी सहर्ष ले ली है। वे सांस्कृतिक समस्याओं, सामाजिक जीवन में पुस्तकों का महत्व और पुस्तकों को लोकप्रिय बनाने की कला पर सप्ताह में एक बार पुस्तकालय के अधीक्षक का भाषण सुनते हैं। 'कोर्स' खत्म हो जाने के बाद वे अपने जत्थे बना लेते हैं और काम शुरू कर देते हैं। कोई पुस्तक ली, पढ़ी और उस पर सौ-सवासौ तरुणों के लिए एक परिचय-व्याख्यान तैयार कर लिया। पुस्तकालय का एक अनुभवी कर्मचारी उनकी वार्ताएँ सुनता है, उनके अच्छे पहलुओं की सराहना करता है और कमज़ोरियों को दूर करने के उपाय बताता है। नतीजा यह है कि ये भावी अध्यापक पुस्तकों को लोकप्रिय तो बनाते ही हैं, स्वयं अच्छे साहित्य की विशेषताओं और सम्भावनाओं से भलीभाँति परिचित हो जाते हैं।

इसी प्रकार के अवैतनिक स्वयंसेवक माध्यमिक विद्यालय के छात्रों में से तैयार किये गए हैं जो बच्चों के खेल-कूद और अध्ययन-केन्द्रों में जाकर हर शुक्रवार को साहित्य के विषय में बच्चों से बातें करते हैं।

(शेष पृष्ठ ५२६ पर)

वर्तनी-समिति के निर्णय

शिक्षा मन्त्रालय द्वारा नियुक्त वर्तनी समिति की तीसरी बैठक शिक्षा मन्त्रालय के संयुक्त सचिव श्री रमाप्रसन्न नायक के कमरे में तारीख १६-४-६१ को हुई।

बैठक में सर्वप्रथम गत बैठक का कार्य-वृत्त पढ़कर सुनाया गया, जो स्वीकृत हुआ। इसके बाद संक्षेप में गत दोनों बैठकों में हुए सभी निर्णयों पर एक बार पुनर्विचार हुआ और अन्तिम रूप से निम्नलिखित निर्णय स्वीकृत किये गए :

(१) हिन्दी के विभक्ति-चिह्न सर्वनामों के अतिरिक्त सभी प्रसंगों में प्रातिपदिक से पृथक् लिखे जाएँ; जैसे राम ने, स्त्री को, उससे, मुझको। परन्तु प्रेस की सुविधाओं को ध्यान में रखकर पत्र-पत्रिकाओं में संज्ञादि शब्दों में भी विभक्तियाँ मिलाने की छूट रहेगी।

अपवाद : (क) सर्वनामों के साथ यदि दो विभक्ति-चिह्न हों तो उनमें से पहला मिलाकर और दूसरा पृथक् लिखा जाए; जैसे उसके लिए, इसमें से।

(ख) सर्वनाम और विभक्ति के बीच 'ही', 'तक' आदि का निपात हो तो विभक्ति को पृथक् लिखा जाए; जैसे आप ही के लिए, मुझ तक को।

(२) संयुक्त क्रियाओं की सभी अंगभूत क्रियाएँ पृथक्-पृथक् लिखी जाएँ; जैसे पढ़ा करता है, आ सकता है।

(३) 'तक', 'साथ' आदि अव्यय सदा पृथक् लिखे जाएँ; जैसे आपके साथ, यहाँ तक।

(४) पूर्वकालिक प्रत्यय 'कर' क्रिया से मिलाकर लिखा जाए; जैसे मिलाकर, खा-पीकर, रो-रोकर।

(५) द्वन्द्व समास में हाइफ़न रखा जाए; जैसे राम-लक्ष्मण, शिव-पार्वती संवाद।

(६) 'सा', 'जैसा' आदि से पूर्व हाइफ़न रखा जाए; जैसे तुम-सा, राम-जैसा।

(७) तत्पुरुष समास में हाइफ़न का प्रयोग केवल वहाँ किया जाए, जहाँ उसके बिना भ्रम होने की सम्भावना हो, अन्यथा नहीं।

(८) जहाँ श्रुतिमूलक य-व का प्रयोग विकल्प से होता है वहाँ न किया जाए, अर्थात् गए-गंये, नई-नयी, लिए-लिये आदि में से पहले (स्वरात्मक) रूपों का ही प्रयोग किया जाए। यह नियम क्रिया, विशेषण, अव्यय आदि सभी रूपों में माना जाए।

(९) हिन्दी में ऐ (ै), औ (ौ) का प्रयोग दो प्रकार की ध्वनियों को व्यक्त करने के लिए होता है। पहले प्रकार की ध्वनियाँ 'है', 'और' आदि में हैं तथा दूसरे प्रकार की 'गवैया', कौआ' आदि में। इस विषय में यह निर्णय हुआ कि दोनों ही प्रकार की ध्वनियों को व्यक्त करने के लिए इन्हीं चिह्नों का प्रयोग किया जाए। 'गवइया', 'कव्वा' आदि संशोधनों की आवश्यकता नहीं।

(१०) संस्कृत-मूलक तत्सम शब्दों की वर्तनी के विषय में यह निर्णय हुआ कि उन्हें सामान्यतः संस्कृत-रूप में ही लिखा जाए। परन्तु जिन शब्दों के प्रयोग में हिन्दी में हलन्त चिह्न लुप्त हो चुका है उनमें उसको फिर से लगाने का यत्न न किया जाए; जैसे 'महान्', 'विद्वान्' आदि में।

(११) पंचमाक्षर और अनुस्वार के प्रयोग के विषय में यह निर्णय हुआ कि जहाँ पंचमाक्षर के बाद उसीके वर्ग के शेष चार वर्णों में से कोई वर्ण हो तो अनुस्वार का ही प्रयोग किया जाए, अन्यथा उस व्यंजन का यथावत् प्रयोग किया जाए; जैसे अंत, अन्य, गंगा, वाङ्मय, संपादक, साम्य, सम्मति।

(१२) चन्द्रबिंदु के विषय में यह निर्णय हुआ कि चन्द्रबिंदु का प्रयोग आवश्यक है, क्योंकि उसके बिना प्रायः अर्थ में भ्रम की गुंजाइश रहती है; जैसे हंस, हँस अथवा

'अंगना', 'अँगना' आदि में। अतएव ऐसे भ्रम को दूर करने के लिए चन्द्रबिंदु का प्रयोग अवश्य किया जाना चाहिए। परन्तु जहाँ चन्द्रबिन्दु के प्रयोग से छपाई आदि में बहुत कठिनाई हो और चन्द्रबिन्दु के स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग किसी प्रकार का भ्रम उत्पन्न न करे वहाँ चन्द्र-बिंदु के स्थान पर अनुस्वार के प्रयोग की भी छूट दी जा सकती है। जैसे नहीं, मैं में, परन्तु कविता आदि के ग्रन्थों में छन्द की दृष्टि से चन्द्रबिंदु का यथास्थान अवश्य प्रयोग किया जाए; जैसे नंदनंदन।

(१३) हलका, हल्का; भरती, भर्ती; एकाई, इकाई; ठंडा, ठंढा; गर्मी, गरमी; गर्दन, गरदन आदि शब्दों की अक्षरी के विषय में विचार करने के बाद यह निर्णय किया गया कि हिन्दी की वर्तमान प्रवृत्तियों का विचारपूर्वक अध्य-यन करने के बाद ही यह निर्णय सम्भव है कि इन शब्दों के प्रचलित एकाधिक रूपों में से किस रूप को अधिक प्रामा-णिक माना जाए।

(१४) अरबी-फ़ारसीमूलक वे शब्द जो हिन्दी के अंग बन चुके हैं और जिनकी विदेशी ध्वनियों का हिन्दी ध्वनियों में रूपान्तर हो चुका है, हिन्दी रूप में ही स्वीकार किये जाएँ; जैसे जरूर। परन्तु जहाँ पर उनका शुद्ध विदेशी रूप में प्रयोग अभीष्ट हो वहाँ उनके हिन्दी में प्रचलित रूपों में यथास्थान नुक्ते लगाए जाएँ, जिससे उनका विदेशीपन स्पष्ट रहे; जैसे राज़, ग़ज़ल।

(१५) अंग्रेज़ी के जिन शब्दों में अर्थ-विवृत 'औ' ध्वनि का प्रयोग होता है, उनके शुद्ध रूप का हिन्दी में प्रयोग अभीष्ट होने पर 'आ' (ा) की मात्रा के ऊपर अर्द्ध-चन्द्र का प्रयोग किया जाए=ऑ, ॉ।

(१६) संस्कृत के जिन शब्दों में विसर्ग का प्रयोग होता है वे यदि तत्सम रूप में प्रयुक्त हों तो विसर्ग का प्रयोग अवश्य किया जाए; जैसे 'दुःखानुभूति' में। परन्तु यदि उस शब्द के तद्भव रूप में विसर्ग का लोप हो चुका हो तो उस रूप में विसर्ग के बिना भी काम चल जाएगा; जैसे 'दुख-सुख के साथी'।

समिति की बैठक सभापति को धन्यवाद देकर विसर्जित हुई।

पुस्तक और पुस्तकालय

प्रख्यात फ्रांसीसी लेखक तथा विचारक और फ्रांस की अकादमी के सदस्य आन्द्रे मारवा का यह लेख 'यूनेस्को कूरियर' के मई १९६१ के अंक से साभार प्रकाशित किया जा रहा है।

(गतांक से आगे)

इस कथन में सचाई है कि पढ़ने का अधिकार अब मनुष्य का एक अविच्छिन्न अधिकार बन गया है। अतएव सभी पुरुषों और स्त्रियों के लिए पुस्तकों की व्यवस्था होनी चाहिए। यदि पुस्तकों को अवसर दिया जाए तो मनुष्य को पिछली पीढ़ियों के संचित अनुभव का उत्तराधिकारी बना, इसका पूर्णतया कायाकल्प कर देंगी।

आरम्भिक जीवन में ही पुस्तकों के लिए रुचि पैदा की जा सकती है और पाठकों में आसानी से पढ़ने की आदत डाली जा सकती है। सार्वजनिक पुस्तकालय में 'बच्चों का कोना' होना चाहिए। अधिकतर बच्चों के पास इतना पैसा नहीं होता कि वे पुस्तकें खरीद सकें। उनके माँ-बाप के पास भी इतना धन नहीं होता कि वे अपने बच्चों के लिए पर्याप्त संख्या में पुस्तकों की व्यवस्था कर सकें। केवल पुस्तकालय में ही आसानी से ऐसी पुस्तकें मिल सकती हैं जो उन्हें घटिया अथवा हानिकर पुस्तकों से बचा सकती हैं। हालाँकि स्कूलों के पुस्तकालय उपयोगी होते हैं, तथापि धनाभाव के कारण वे प्रायः पर्याप्त नहीं होते। बुद्धिमान बच्चे के लिए पुस्तकों से भरी हुई अलमारी, जिसमें वह स्वतन्त्रापूर्वक पुस्तकें उलट-पुलट सके, वास्तविक स्वर्ग का द्वार खोल देती है।

लेकिन उसे सबसे अधिक आनंद शाम को घर पर अथवा बगीचे में बैठकर पढ़ने में आता है। कोई भी जिज्ञासु, प्रतिभावान बच्चा अत्यंत चाव से पढ़ने वाला पाठक बन सकता है। वह पुस्तकालय में आकर अध्ययन करेगा, घर के लिए स्कूल में दिया हुआ काम करेगा। पुस्तकालय में उसे एक ऐसा बौद्धिक केन्द्र मिलेगा जहाँ वह कहानियाँ सुन सकेगा, नाटकों के सामूहिक पाठ में भाग ले सकेगा और आगे चलकर वाद-विवाद में भी हिस्सा लेगा।

बच्चों का कोना बहुत बड़ा नहीं होना चाहिए। बच्चों के लिए यह जरूरी है कि वे पुस्तकालय में आने वाले अन्य बच्चों के साथ हिल-मिल सकें। वह एकान्त-प्रेमी बच्चों से लेकर पथ-प्रदर्शन की आवश्यकता अनुभव करने वाले उन सभी बच्चों के साथ मिल सकेगा जो पुस्तकालय में आते हैं। बच्चों का कोना आकर्षक और सुन्दर होना चाहिए ताकि बच्चों के मस्तिष्क में पुस्तकों की धारणा के साथ-साथ सम्पन्नता की धारणा भी जुड़ जाए। कोई भी नन्हे पाठकों के सदाचरण से प्रभावित हुए बिना नहीं रहेगा।

इसमें सन्देह नहीं कि स्थानीय स्कूल के अध्यापकों तथा बच्चों के अभिभावकों को पुस्तकालय का पूरा सहयोग प्राप्त होना चाहिए। जब कोई अध्यापक बच्चों के साथ किसी खास विषय का अध्ययन कर रहा हो तो उसे चाहिए कि वह पुस्तकालय में उस विषय पर एक छोटी-सी प्रदर्शनी का आयोजन कराए। उसे पुस्तकालय को ऐसी पुस्तकें खरीदने की राय देने का भी अधिकार होना चाहिए जो उसकी कक्षा के लिए उपयोगी हों। जो माताएँ अपने बच्चों के साथ पुस्तकालय में जाती हैं उन्हें भी पढ़ने की रुचि पैदा करने का अवसर मिलना चाहिए।

बच्चों के पुस्तकालय का उद्देश्य संकुचित नहीं होना चाहिए। उसे प्रौढ़ों के पुस्तकालय की सीढ़ी का काम करना चाहिए। जिस पुस्तकालयाध्यक्ष को अपने कार्य से प्यार है, उसके लिए इससे बढ़कर दिलचस्पी की कोई दूसरी वस्तु नहीं हो सकती कि वह एक बच्चे को बढ़कर

वयस्क होते हुए देखे। एक दिन ऐसा भी आता है जब शिशु-पाठक बाल-साहित्य में रुचि लेना बन्द कर देते हैं और तब कोई भी समझ सकता है कि वे महान् लेखकों की कृतियाँ पढ़ने के लिए तैयार हैं। यही वह घड़ी है जब उन्हें सामान्य पुस्तकालय में ले जाना चाहिए और उन्हें परामर्श देना चाहिए कि आरम्भ में वे कौनसी पुस्तकें पढ़ें। यदि बाल-पुस्तकालय का अध्यक्ष चाहे तो उससे बढ़कर तरुण मस्तिष्कों को खोलने वाला कोई दूसरा नहीं हो सकता।

पुस्तकालयाध्यक्ष की सामूहिक जीवन में बहुत बड़ी भूमिका होती है। उसके संरक्षण में मानव-जाति की संस्कृति होती है और वह स्वयं युगों की संचित संस्कृति की देन तथा उन लोगों के बीच कड़ी का काम करता है, जो अभी जीवित हैं और काम कर रहे हैं। पुस्तकों की संख्या इतनी अधिक है और इतनी भारी संख्या में नयी-नयी पुस्तकें प्रकाशित होती रहती हैं कि उन सबको पढ़ने की बात तो दूर रही, यह तय करना की कठिन है कि कौनसी पुस्तक पढ़ी जाए। किसी भी विशेषज्ञ के लिए इस बात का पूरा खतरा है कि वह अपना पूरा जीवन एक ऐसा काम करने में गँवा दे कि जिसे किसी और ने पहले ही सम्पन्न कर डाला है। उस माली की तरह जिसने एक ऐसी फसल बो रखी हो जिसकी उपज से वह खुद ही दबा जा रहा हो, समुचित मार्गदर्शन के अभाव में यह बिलकुल सम्भव है कि पाठक मानव-संस्कृति की विशालता से पराभूत हो जाए।

पुस्तकालयाध्यक्ष को चाहिए कि वह पाठकों की रक्षा करे। पुस्तकों की एक अच्छी सूची तथा विषयानुसार सूची के द्वारा वह मनुष्य द्वारा संग्रहीत ज्ञान के जंगल में पाठकों का मार्गदर्शन कर सकता है। वर्ष की पुस्तकों की फसल—यद्यपि वह बहुत बड़ी होती है—को पुस्तकालय तत्काल हजम कर जाते हैं। चूँकि पुस्तकों की संख्या इतनी अधिक होती है कि किसी के भी लिए उनमें से उपयोगी पुस्तकें छाँटना काफी कठिन होता है, इसलिए यह आवश्यक है कि वर्गीकरण प्रणाली में निरंतर सुधार किया जाए अतएव। बड़े पुस्तकालयों और उनके अध्यक्षों का यह कर्तव्य हो जाता है कि वे इस जंगल में आलोकित पथ का निर्माण करें, वरना थोड़े ही समय में वे अविच्छेद्य हो जाएँगे। उनका यह भी कर्तव्य है कि मानव-मस्तिष्क ने जो-कुछ पैदा किया है उसे वे सुरक्षित रखें।

यहाँ तक कि एक-छोटे-से पुस्तकालय के अध्यक्ष का काम भी कुछ कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। हमारी सभ्यता-जैसी एक जन-सभ्यता में, कोई भी नैतिक अथवा टेकनिकल उन्नति वास्तव में तब तक पूर्ण नहीं मानी जा सकती जब तक कि वह जनता के समस्त स्तरों तक नहीं पहुँच जाती। जो पुस्तकालयाध्यक्ष अपना कार्य खूबी के साथ पूरा करता है वह इस कार्य में भी सहायक होता है। कहा जाता है कि पुस्तकालयाध्यक्ष पुस्तकों की बात और जनता की ज्ञान-पिपासा के बीच छलनी का कार्य करता है। इसका अर्थ यह है कि उसे न केवल अपने कार्य का ज्ञान होना चाहिए बल्कि उसे यथेष्ट रूप से सुसंस्कृत भी होना चाहिए।

अपने पुस्तकालय का निर्माण करते समय उसे इन बातों की आवश्यकता होगी। इसमें सन्देह नहीं कि जब वह अपना नया पद ग्रहण करेगा तो उसे अपने पूर्वगामियों से पुस्तकों का भंडार विरासत में प्राप्त होगा। लेकिन यह बात भी महत्त्वपूर्ण है कि हर वर्ष नयी-नयी पुस्तकों में से

सर्वोत्तम पुस्तकें चुनकर अपने पुस्तकालय में जोड़ने के लिए वह अपने कोष का समुचित उपयोग करे। जहाँ तक पुरानी पुस्तकों का सम्बन्ध है उसे चाहिए कि वह पाठकों की माँग तथा निजी अनुभवों को ध्यान में रखते हुए पुस्तकालय की कमियों को दूर करता जाए।

प्रत्येक पुस्तकालय में पुस्तकालयाध्यक्ष सलाहकार का भी कार्य करता है। वह अध्ययन में पाठकों का मार्गदर्शन करता है तथा उन्हें कार्ड-इन्डेक्स देखने तथा संग्रहों को इस्तेमाल करने की विधि सिखाता है। वास्तव में पेशेवर योग्यता के अतिरिक्त पुस्तकालयाध्यक्ष का काम इस बात की भी अपेक्षा करता है कि उसमें अपने उदात्त कर्तव्य के लिए सच्चा उत्साह—निस्सीम उत्साह—अनन्य सद्भावना तथा ऐसे लोगों की सहायता करने की तीव्र कामना हो जो ज्ञानार्जन के लिए उत्सुक हों।

यूनेस्को के शैक्षणिक कार्यों में पुस्तकालयों पर पर्याप्त रूप से बल दिया जाता है। निरक्षरता दूर करने के उसके सारे प्रयत्न निष्फल हो जाएँगे यदि उन लोगों के लिए, जो उनसे आनन्द लेने की क्षमता प्राप्त कर चुके हैं, पुस्तकों की व्यवस्था न की गई। यूनेस्को का मुख्य कर्तव्य अन्तर्राष्ट्रीय संस्कृति द्वारा शान्ति के लिए कार्य करना है। इसमें सार्वजनिक पुस्तकालय उसका स्वाभाविक सहायक है।

इस लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए यूनेस्को ने संसार के विभिन्न क्षेत्रों के पुस्तकालयाध्यक्षों के सम्मेलनों का संगठन करके, आदान-प्रदान तथा कार्य-प्रणाली में सुधार करके, विशेषज्ञों को बाहर भेजकर, वजीफे देकर तथा सामाजिक सेवा की संचालक शक्ति के रूप में आदर्श पुस्तकालयों की स्थापना करके पुस्तकालयों के विकास में योगदान किया है।

सबसे अधिक प्रभावशाली उपदेश व्यावहारिक उदाहरण होता है। यूनेस्को ने उन सभी परामर्शों को, जिन्हें वह विभिन्न देशों और नगरों को देता है, स्वयं भी अमली रूप दिया है। उसने प्रायोगिक पुस्तकालय स्थापित किए हैं जो आदर्श उपस्थित करने के साथ-साथ परीक्षण-क्षेत्र का भी कार्य करते हैं। और इस कार्य में यूनेस्को को महती सफलता मिली है। पहला प्रायोगिक पुस्तकालय दिल्ली में खोला गया। भारत सरकार तथा यूनेस्को ने

सम्मिलित रूप से १९५० में उसकी स्थापना की। १९५१ में श्री नेहरू ने उसका उद्घाटन किया। पुस्तकालय का मुख्य उद्देश्य नये साक्षरों के लिए हिन्दी, उर्दू, पंजाबी तथा अंग्रेजी में पठन-सामग्री की व्यवस्था करना है।

यहाँ एक चलता-फिरता पुस्तकालय भी है जो पड़ोस के १५ जिलों के नगरों और गाँवों में पुस्तकें पहुँचाता है। इस पुस्तकालय में पुस्तकों की संख्या में तेजी के साथ वृद्धि हुई है। इस समय पुस्तकों की संख्या १६५,००० तक पहुँच गई है। प्रत्येक वर्ष लगभग ७५०,००० पुस्तकें लोग पढ़ने के लिए ले जाते हैं। पाठकों की आयु का विश्लेषण करने से पता चला है कि बहुमत तरुणों का है। बूढ़े या तो पढ़ते ही नहीं हैं या बहुत कम पढ़ते हैं।

इसकी वजह यह है कि इस क्षेत्र में शिक्षा का प्रसार अभी हाल के वर्षों में हुआ है। जब तक पुस्तकालय की स्थापना नहीं हुई थी अनेक पाठक सदस्यों के पास एक भी पुस्तक नहीं थी और न ही उनके पास पुस्तकें खरीदने के साधन ही थे। देश के विशिष्ट रिवाज के कारण पुस्तकालय में स्त्रियाँ बहुत कम संख्या में आती हैं। लेकिन ऐसा प्रायः देखा गया है कि पुरुष जो पुस्तकें ले जाते हैं उन्हें उनकी स्त्रियाँ भी पढ़ती हैं और घर में उन्हें अक्सर बोल-बोलकर पढ़ा जाता है। उपन्यासों के अतिरिक्त महापुरुषों तथा स्त्रियों के जीवनचरित्र, कला तथा हस्तकौशल की पुस्तकें तथा भारतीय इतिहास की पुस्तकें पढ़ी जाती हैं।

दिल्ली के प्रयोग से यह साबित हो गया है कि पढ़ने में लोगों की गहरी दिलचस्पी है। भारत के सम्मुख विविध प्रकार की अनेक समस्याएँ हैं, लेकिन पढ़ने की समस्या सर्वाधिक महत्त्व रखती है। यह बात विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है कि भारत की तमाम प्रमुख भाषाओं में पुस्तकें प्रकाशित करके नये पाठकों की आवश्यकताओं की पूर्ति की जाए। हाल में दिल्ली के पुस्तकालयाध्यक्षों ने पाठकों की रुचि और दिलचस्पी का सर्वेक्षण किया था जिससे इस विषय में मूल्यवान सूचनाएँ प्राप्त हुई हैं।

यूनेस्को ने कोलम्बिया के मेडेल्किन नामक सुन्दर विश्वविद्यालय नगर में एक पुस्तकालय स्थापित किया है। इस पुस्तकालय की स्थापना अक्तूबर १९५४ में हुई थी और अब उसमें ५०,००० पुस्तकें हैं। केन्द्रीय पुस्तकालय,

शाखा-पुस्तकालय तथा चलते-फिरते पुस्तकालय हर रोज लगभग एक हज़ार पुस्तकें वितरित करते हैं।

यहाँ भी लोकप्रिय शिक्षा में चालक-शक्ति के रूप में पुस्तकालयों की उपयोगिता का विश्वासजनक प्रमाण प्राप्त हुआ है। दिल्ली की तरह यहाँ भी नयी सुविधाओं से लाभ उठाने के लिए तरुण विशेष रूप से उत्सुक रहते हैं। जितनी पुस्तकें यहाँ से प्रौढ़ लेते हैं, लगभग उतनी ही पुस्तकें बच्चे भी लेते हैं। पुस्तकालय में 'बच्चों का कोना' जितना मनोरंजक बनाया जा सकता था, उतना बनाया गया है। चलता-फिरता पुस्तकालय गाँवों और कारखानों दोनों में ही पुस्तकें पहुँचाता है। केन्द्रीय पुस्तकालय पूरे नगर का सांस्कृतिक केन्द्र बन गया है। वह नगरवासियों के लिए पूर्ण एवं विविध प्रकार के सांस्कृतिक कार्यक्रमों की व्यवस्था करता है।

यूनेस्को ने इसी प्रकार की एक और योजना पूर्वी नाइजेरिया के एनुगू नामक नगर में चालू की है। उपरोक्त दोनों प्रयोगों के समान यह तीसरा प्रयोग भी अत्यंत सफल प्रमाणित हुआ है। यह पुस्तकालय स्थापित हुए अभी साल-भर से भी कम हुआ है। किन्तु उसके पास ६,००० पाठक तथा २०,००० पुस्तकों का भंडार जमा हो गया है। यहाँ भी शिक्षात्मक कार्यों का कार्यक्रम वाचनालय के कार्य का पूरक है तथा एक चलता-फिरता पुस्तकालय निकटवर्ती ज़िलों में पुस्तकें पहुँचाता है। रेल, सड़क तथा नावों द्वारा पुस्तकों की संदूकची मार्ग से दूर बिखरे हुए पाठकों तक पुस्तकें पहुँचाएगी।

यूनेस्को तथा सार्वजनिक पुस्तकालयों के लक्ष्य समान हैं। ये लक्ष्य हैं: विभिन्न जातियों के लोगों की एक-दूसरे को समझने में सहायता करना; लोकप्रिय शिक्षा को बल-प्रदान करना; सांस्कृतिक जीवन में भाग लेने के लिए सभी लोगों के लिए समान सुविधाओं की व्यवस्था करना; मनुष्य द्वारा मनुष्य को विरासत में मिली हुई पुस्तकों की अकूत धरोहर का संरक्षण करना; संसार के समस्त राष्ट्रों के लिए अन्य राष्ट्रों द्वारा प्रकाशित पुस्तकों को उपलब्ध करना। यह सामान्य आदर्श इस बात की सबसे बड़ी गारंटी है कि यूनेस्को तथा सार्वजनिक पुस्तकालयों के बीच अधिक-से-अधिक सहयोग होता रहेगा।

आधुनिक सामाजिक जीवन में सार्वजनिक पुस्तकालयों की अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका है। यह एक ऐसी भूमिका है जो आगामी काल में, अनेक कारणों से, निश्चय ही और भी महत्त्वपूर्ण हो जाएगी।

प्रत्येक वर्ष पढ़ने वालों की संख्या में वृद्धि हो रही है और यह प्रक्रिया बराबर जारी रहेगी। संसार-भर में निरक्षरता मिटाने का आन्दोलन तेज़ी के साथ चलाया जा रहा है। इसमें सन्देह नहीं कि इस आन्दोलन की बेहद आवश्यकता है। अधिकाधिक संख्या में ऐसे लोग, जो पढ़ नहीं सकते, स्वयं अपने युग में विजातीय अनुभव करने लगे हैं।

शिक्षा अकेले किसी एक वर्ग का अधिकार नहीं है। अब यह सबके लिए अनिवार्य हो गई है। फलस्वरूप भारी संख्या में पाठक पैदा होते जा रहे हैं। नए पाठक वास्तविक, आध्यात्मिक, शिक्षात्मक तथा साहित्यिक मूल्य की पुस्तकों की अपेक्षा करते हैं। लेकिन मानव-जाति के भारी बहुमत के पास इतना भी धन नहीं है कि वह सस्ते संस्करण तक खरीद सके। जनता के लिए पुस्तकें पढ़ने का केवल एक ही साधन है कि वह पुस्तकालयों में जाए। प्रत्येक गाँव के लिए यह अनिवार्य है कि उसके पास स्कूल की ही तरह एक पुस्तकालय भी हो। पुस्तकालय स्कूल का पूरक है।

आर्थिक तथा टेकनिकल प्रगति के फलस्वरूप शिक्षा की आवश्यकता बेहद बढ़ गई है। यह बात दो ढग से हुई है। पहली बात यह कि इससे लोगों को अपनी रोजमर्रा की आवश्यकताओं से आगे देखने में मदद मिलती है। एक दरिद्र, जिसे इस बात का पता नहीं है कि उसे अपना अगला भोजन कहाँ से प्राप्त होगा, जिसके पास शीत और वर्षा से सुरक्षा का कोई साधन नहीं है, कभी भी अपने मानसिक विकास की बात नहीं सोच सकता। जितना ही ऊँचा जीवन का स्तर होगा, उतना ही अधिक लोगों को मनुष्य के रूप में अपनी मर्यादा की चिन्ता होगी, उतना ही अधिक वह अपने को शिक्षित करने के लिए साधनों की माँग करेगा।

इसके अतिरिक्त मशीन और टेकनीक ज्यों-ज्यों जटिल होती जाएगी, त्यों-त्यों कुशल मज़दूरों को पढ़ाने की

आवश्यकता भी बढ़ती जाएगी ताकि वह अपना कार्य संतोष-जनक ढंग से कर सके। मशीनें उन मजदूरों का स्थान लेती जा रही हैं जो पहले केवल अपने हाथ से कार्य करते थे। मजदूर अब टेक्नीशियन बनता जा रहा है। उसे अब अपने मस्तिष्क से काम लेना होता है। अतएव हम किताबों की दुकानों तथा पुस्तकालयों में पढ़ने के इच्छुक जवान श्रमजीवियों के समूह देखते हैं। यहाँ तक कि कृषि भी अब विज्ञान बन गई है, जो किसानों से ऐसी कुशलता की अपेक्षा करती है, जो केवल पुस्तकों के ही द्वारा हासिल की जा सकती है। सीखने की आवश्यकता पढ़ने की आवश्यकता को जन्म देती है।

अचानक अनेक देश आत्म-निर्णय का अर्थात् आत्म-शासन का अधिकार प्राप्त करते जा रहे हैं। यह एक न्यायोचित अधिकार है, बशर्ते कि इसके साथ-साथ उन्हें न केवल अपने अतीत की, अपनी परम्पराओं, जातीय एवं ऐतिहासिक विशेषताओं, उनकी देन तथा उनके आर्थिक भविष्य की पर्याप्त जानकारी होनी चाहिए बल्कि, दूसरे देशों की भी, उनके इतिहास, संसार में उनके स्थान, उनकी विशिष्टताओं—संक्षेप में उन तमाम बातों की जानकारी होनी चाहिए जिनकी उनके साथ उचित सम्बन्ध बनाए रखने के लिए आवश्यकता होती है।

एक नये राज्य को, जो स्वाधीन राष्ट्र के रूप में अपना जीवन आरम्भ कर रहा है, अपने राष्ट्रीय व्यक्तित्व का ज्ञान होना चाहिए। प्रायः इन नये नागरिकों को, जो पहले आपस में किसी मजबूत बंधन से बँधे नहीं थे और एक भिन्न राजनीतिक व्यवस्था के अन्तर्गत जीवन व्यतीत करते थे, अपने राष्ट्रीय व्यक्तित्व का वह सच्चा एवं गम्भीर ज्ञान नहीं हो सकता था जो अतीत की समझ तथा वर्तमान के ज्ञान से प्राप्त होता है। यह ज्ञान उन्हें कहाँ से मिल सकता है? ये बातें उन्हें उन पुस्तकों से प्राप्त होंगी जिनमें बिखरी हुई परम्पराओं को एकत्र किया गया है। पुस्तकालय न केवल राष्ट्र के हाथों में एक मूल्यवान उपकरण हैं, बल्कि उनसे स्वयं राष्ट्र के निर्माण में भी सहायता मिलती है।

सभ्यता नयी आवश्यकताओं को जन्म देती है। मनुष्य अब ऐसी शक्तियों के हाथों का खिलौना नहीं बना

रह सकता जो उससे अधिक बलवान हैं। जहाँ तक सम्भव हो वह जानना और सीखना चाहता है। अतीत में केवल एक दार्शनिक अथवा कवि ही यह कह सकता था—"मैं मनुष्य हूँ, और कोई भी मानवीय वस्तु मेरे लिए विजातीय नहीं है।" अब यह बात हर आदमी कहना चाहेगा क्योंकि वह जानता है कि दूर देश के लोग, जो उसके लिए अजनबी हैं, स्वयं उसके भाग्य पर प्रभाव डालते हैं; क्योंकि वह पहले से कहीं अधिक सचेतन हो गया है और पृथ्वी के दूसरे छोर पर होने वाली अन्यायपूर्ण घटनाओं से द्रवित होता है। ऐसी तमाम समस्याओं के विषय में, जिनका सम्बन्ध समूची मानवता से है, सूचनाओं का सबसे महत्वपूर्ण तथा समृद्ध स्रोत पुस्तकालय हैं।

अंत में, ऊर्जा की पर्याप्त उपलब्धि तथा स्वचालन में होने वाली प्रगति के द्वारा हमारी सभ्यता, चाहे हम इसे पसंद करें या न करें, अधिकाधिक मात्रा में अवकाश की सभ्यता बनती जा रही है। इस सभ्यता में इससे बढ़कर सन्तोष की कोई दूसरी बात नहीं हो सकती कि काम के घण्टों में कमी की जाए तथा मानव-श्रम को हलका बनाया जाए। फिर भी, आगे चलकर अधिक अवकाश खतरनाक हो सकता है, यदि इसके साथ-ही-साथ लोगों की रुचि और दिलचस्पी को व्यापक न बनाया गया।

इसमें सन्देह नहीं कि खेल-कूद, सार्वजनिक मनोरंजन और टेलिविजन से लोगों को व्यस्त रहने में सहायता मिलती है, लेकिन वे केवल सीमित समय तक ही लोगों को व्यस्त रख सकते हैं, क्योंकि उनके लिए काफी तैयारी की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त कोई भी मनुष्य, जिसमें कुछ मनुष्यता है, केवल दर्शक बने रहने से ऊब जाएगा। पुस्तकालय उसके लिए समय और स्थान के अनंत दृश्य की व्यवस्था करता है।

आल्डुअस हक्सले ने कहा है, "वह हर आद-ी, जिसे पढ़ना आता है, अपना विस्तार करने, अपने जीवन के तौर-तरीकों को बढ़ाने, अपने जीवन को पूर्ण, महत्त्वपूर्ण तथा रोचक बनाने की शक्ति रखता है।" हम सब इस पूर्ण जीवन का, जिसे दूसरों के जीवन से भरा-पूरा बनाया जा सकता है, आनन्द लेना पसंद करेंगे। जन-संचार के अन्य साधन, जैसे सिनेमा, टेलीविज़न, रेडियो तथा ग्रामोफोन के

रेकार्ड कलाओं के आनंद का प्रसार करने तथा उसमें भाग लेने में मानवता की सहायता करते हैं। फिर भी, इनमें से ऐसा कोई भी नहीं है जिसका इतना गम्भीर और स्थायी प्रभाव पड़ता हो जितना कि अध्ययन का। इनमें से कोई भी हमारे सामने इतना विस्तृत एवं गहन भाव और ज्ञान नहीं लाता जितना कि अध्ययन लाता है।

१८३३ में इटॉन सार्वजनिक पुस्तकालय का उद्घाटन करते हुए सर जॉन हर्सेल ने कहा था, "....किसी भी मनुष्य में पढ़ने की रुचि पैदा कर दीजिए और उसकी पूर्ति का साधन मुहय्या कर दीजिए, फिर शायद ही उसे सुखी बनाने में आप कभी असफल हों...उसे आप इतिहास के प्रत्येक काल के श्रेष्ठतम समाज के उन सबसे चतुर, बुद्धिमान, कोमल, वीर तथा शुद्ध चरित्रों के सम्पर्क में ला दीजिए जिन्होंने मानवता की शोभा बढ़ाई है। उसे आप सभी राष्ट्रों का नागरिक, सभी कालों का सहकालीन बना देंगे।"

हम किसी भी समाज से यह कह सकते हैं : "आप हमें यह बताइए कि आप अपनी जनता को पढ़ने के लिए क्या देते हैं, और मैं आपको यह बता दूँगा कि आप स्वयं हैं क्या !"

(पृष्ठ ५१२ का शेष)

यह पुस्तकालय १९४६ में शुरू हुआ था। उस समय नगर में युद्ध के ध्वंसावशेष ही दिखाई देते थे। तब पुस्तकालय में ४,००० पुस्तकें थीं और लगभग १,६०६ पाठक थे। १९५२ में यहाँ १३,५०० पुस्तकें हो गईं और सदस्यों की संख्या दो हजार से ऊपर हो गई। अब तो पुस्तकें ३३,००० से अधिक हैं और पिछले वर्ष ५,५०० से अधिक सदस्य थे जिन्होंने लगभग डेढ़ लाख पुस्तकें लीं, यानी हर पाठक ने लगभग ३० पुस्तकें पढ़ीं। यों छः कर्मचारी हैं, मगर उनके २५० से अधिक कार्यकर्ता हैं जो साहित्य को लोकप्रिय बनाने के अभियान में जुटे रहते हैं। पुस्तकालय में अमर साहित्यकारों के दिवस भी मनाए जाते हैं और उन पर विशेष वार्ताएँ भी आयोजित की जाती हैं।

इस प्रकार नोयमो पुस्तकालय एक ऐसा केन्द्र है जहाँ से पुस्तकों का प्रकाश प्रसारित होता है और जन-साधारण के जीवन को उज्ज्वल बनाता है। हर रुचि के लिए एक पुस्तक और पुस्तक के लिए सर्वस्व—नोयमो में यह नारा जन-जीवन में फलीभूत हो रहा है।

आगामी मास के प्रकाशन

आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली

—**सात प्रहसन**, श्री उदयशंकर भट्ट

—**प्रतिनिधि सामूहिक गान**, सं० योगेन्द्रकुमार लल्ला, श्री कृष्ण

—**वैशाली की दत्तक पुत्री**, श्री शिवकुमार कौशिक, उपन्यास

—**तपस्वियों की कहानियाँ**, श्री राजबहादुरसिंह

—**रजनी में प्रभात का अंकुर**, श्री श्रीमन्नारायण, कविता

—**एण्टीगोने**, अनु० डॉ० रांगेय राघव, नाटक

—**रोचक कथाएँ**, श्री योगराज थानी

—**आइये हिन्दी सीखें**, श्री सोमदत्त मालवीय

व्यंजना प्रकाशन, कलकत्ता

—**आदर्श हिन्दू होटल**, श्री विभूतिभूषण वन्द्योपाध्याय, अनु० श्री छेदीलाल गुप्त, उपन्यास

—**पत्थर और लकीरें**, श्री सकलदीपसिंह, कविताएँ

—**कथांतर**, श्री शरद देवड़ा, कहानी-संग्रह

विजयकृष्ण लखनपाल, देहरादून

—**सामाजिक विचारों का इतिहास**, कर्नल सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार

सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली

—**बालकों का पालन-पोषण**, डॉ० आचार, अनु० माधव उपाध्याय

—**गांधीवादी संयोजन के सिद्धान्त**, श्री श्रीमन्नारायण

—**आज का इंगलिश समाज**, श्री मुकुटबिहारी वर्मा

—**सूफी संत समाज**, श्री भगवान

हिन्दी भवन, जालन्धर

—**कवि और काव्य**, डॉ० इन्द्रनाथ मदान

—**इन्द्रधनुष**, श्री सत्येन्द्र शरत्, एकांकी-संग्रह

—**गुरुग्रन्थ दर्शन**, डॉ० धर्मपाल मैनी

हिन्दी-साहित्य संसार, दिल्ली

—**विमर्श और निष्कर्ष**, डॉ० सरनामसिंह शर्मा

—**हिन्दी पद परम्परा और तुलसीदास**, डॉ० रामचन्द्र मिश्र

आलोचनात्मक साहित्य

ओमप्रकाश शर्मा, **प्रथमा हिन्दी गाइड**, ११२०, क्रा०, हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली ७.००

कृष्णदेव शर्मा व अन्य, **मध्यमा हिन्दी गाइड**, १४४०, क्रा०, हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली ८.००

कृष्णदेव शर्मा, **सुदामा चरित**, १०८, क्रा०, हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली ०.७५

देशराजसिंह भाटी व अन्य, **अशोक साहित्यरत्न गाइड, प्रथम खण्ड**, पु० मु०, १२४८, डि०, हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली ११.००

भारतभूषण सरोज व अन्य, **अशोक साहित्यरत्न गाइड, द्वितीय खण्ड**, पु० मु०, ९६०, क्रा०, हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली ९.००

भारतभूषण सरोज, **हिन्दी साहित्य का इतिहास**, पु० मु०, २४०, क्रा०, हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली २.५०

रांगेय राघव, डॉ०, **आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और शृंगार**, १९५, डि०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली ६.००

रामविलास शर्मा, डॉ० **आस्था और सौन्दर्य**, ११२, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ५.००

हरिभाऊ उपाध्याय, **उपचार और विचार** १७८, क्रा०, हिन्दी प्रकाशन मन्दिर, इलाहाबाद २.५०

हुमायून कबिर, अनु० हंसकुमार तिवारी, **बंगला काव्य की भूमिका**, ८३, डि०, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली ४.००

उपन्यास

आल्बेयर कामू, अनु० राजेन्द्र यादव, **अजनबी**, १३५, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १.००

चन्द्रदेवसिंह, **आत्महत्या से पहले**, १०५, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली २.००

बलभद्र ठाकुर, **लहरों की छाती पर**, ४६०, क्रा०, हिन्दी भवन, जालन्धर ७.५०

बलवन्तसिंह, **रात चोर और चांद**, २४३, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १.५०

महमूद अहमद, **चार प्रहर**, ८५, क्रा०, व्यंजना प्रकाशन, कलकत्ता १.५०

मालती परूलकर, **बाली**, १२८, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १.००

रवीन्द्रनाथ ठाकुर, अनु० श्री रामनाथ सुमन, **जुदाई की शाम**, १३६, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि० शाहदरा-दिल्ली १.००

रवीन्द्रनाथ ठाकुर, अनु० श्री रामनाथ सुमन, **दो बहनें**, ११६, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि० शाहदरा-दिल्ली १.००

रवीन्द्रनाथ ठाकुर, अनु० श्यामू संन्यासी, **बहूरानी**, १४४, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि० शाहदरा-दिल्ली १.००

रामकृष्ण कौशल, **ये सपने ये रातें**, १५८, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १.००

स्टीफन ज्विग, अनु० शरद देवड़ा, **एक अनजान औरत का खत**, ११२, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि० शाहदरा-दिल्ली १.००

कविता-शायरी

केशवचन्द्र वर्मा, **झरबेरिया**, ६४, डि०, किताब महल, इलाहाबाद — १.२५

प्रकाश पण्डित, सम्पा०, **अर्श मलसियानी**, १०४, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली — १.५०

विनोदचन्द्र पाण्डेय, **लाल फूलों की टहनी**, १६६, डि०, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली — ६.००

शकुन्तला सिरोठिया, **चांद इतना हँसा**, ११२, डि०, किताब महल, इलाहाबाद — ३.५०

शकुन्तला सिरोठिया, **जाग पहरुए**, ३२, डि०, किताब महल, इलाहाबाद — ०.६२

क्षेमचन्द्र सुमन, सम्पा०, **हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ प्रेमगीत**, १४४, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि० शाहदरा-दिल्ली — १.००

कहानी

अमरनारायण अग्रवाल, डॉ०, **बटेसुर की घुड़िया**, ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद — ०.७५

अवधनारायणसिंह, **एक बिन्दु : अनेक कोण**, १०४, क्रा०, व्यंजना प्रकाशन, कलकत्ता — २.००

अश्क, **अश्क की श्रेष्ठ कहानियाँ**, १३६, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली — १.००

अज्ञेय, **ये तेरे प्रतिरूप**, ११५, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली — २.५०

छेदीलाल गुप्त, **फन्दा**, १५०, क्रा०, व्यंजना प्रकाशन, कलकत्ता — ३.००

रवीन्द्रनाथ ठाकुर, अनु० प्रबोधकुमार मजूमदार, **काबुलीवाला**, १३२, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि० शाहदरा-दिल्ली — १.००

राजेन्द्र किशोर, **सूरजमुखी के फूल**, १६०, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद — ३.००

शैलेश मटियानी, **मेरी तेंतीस कहानियाँ**, २४०, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — ६.००

नाटक

चतुर्भुज, **अरावली का शेर**, ८०, क्रा०, साधना मन्दिर, पटना — १.५०

चतुर्भुज, **कर्ण**, ६४, क्रा०, साधना मन्दिर, पटना — १.५०

चतुर्भुज, **मीर कासिम**, ७२, क्रा०, साधना मन्दिर, पटना — १.५०

चतुर्भुज, **सिराजुद्दौला**, ६६, क्रा०, साधना मन्दिर, पटना — २.००

परितोष गार्गी, **छलावा**, ११२, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — २.००

बाल साहित्य—प्रौढ़ साहित्य

अशोक, **गांधीजी के आश्रम**, ३२, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली — ०.३७

कृष्णचन्द्र, **धरती से सोना**, ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद — ०.७५

के० सी० मलैया, **मानव समाज**, १६४, क्रा०, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली — १.१३

गोविन्द चातक, **एवरेस्ट की कहानी**, ३२, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली — ०.३७

देवराज दिनेश, **लाला लाजपतराय**, ३२, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली — ०.३७

द्रोणवीर कोहली, **मोर के पैर**, ३२, कापी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली — १.२५

बाबूराव जोशी, **जनता के जवाहर**, पु० मु०, ६८, क्रा०, हिन्दी प्रकाशन मन्दिर, इलाहाबाद — ०.७५

बाबूराव जोशी, **संत विनोबा**, पु० मु०, ६४, क्रा०, हिन्दी प्रकाशन मन्दिर, इलाहाबाद — ०.७५

बाबूराव जोशी, **सबके बापू**, पु० मु०, ५६, क्रा०, हिन्दी प्रकाशन मन्दिर, इलाहाबाद — ०.७५

महात्मा भगवानदीन, **कुदरत की मिठाइयाँ**, ३२, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली ०.३७
यशपाल जैन, **हारिये न हिम्मत**, ३२, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली ०.३७
रमानाथ त्रिपाठी, **ग्राम सेविका**, ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५
रामेश्वरदयाल दुबे, **माँ यह कौन**, ३२, कापी, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली १.००
रामेश्वर प्रसाद मेहरोत्रा, **हमारे वैज्ञानिक**, ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५
लुई कैरोल, प्रस्तुतकर्ता शमशेर बहादुरसिंह, **आश्चर्यलोक में एलिस**, १६०, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १.००
व्यथित हृदय, **पढ़े-लिखे किसान**, ४८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ०.७५
विष्णु प्रभाकर, **रवीन्द्रनाथ ठाकुर**, ३२, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली ०.३७
शिवनाथसिंह शांडिल्य, **मछेरा और देव**, ४०, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली ०.३७
शुभा वर्मा, **आयरलैंड की लोक कथाएँ**, ४६, कापी, हिन्दी भवन, जालन्धर १.५०
शुभा वर्मा, **युक्रेन की लोक कथाएँ**, ३८, कापी, हिन्दी भवन, जालन्धर १.३०
सत्यनारायण व्यास, **अर्जुन कर्ण**, पु० मु०, १२४, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद १.५०
सत्यनारायण व्यास, **कुन्ती, गांधारी, पाञ्चाली**, पु० मु०, १२२, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद १.५०
सत्यनारायण व्यास, **भीमसेन, दुर्योधन, अश्वत्थामा**, पु० मु०, १२४, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद १.५०
सत्यनारायण व्यास, **भीष्म, धृतराष्ट्र, द्रोणाचार्य**, पु० मु०, १२८, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद १.५०
सत्यनारायण व्यास, **युधिष्ठिर, श्रीकृष्ण**, पु० मु०, १२८, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद १.५०
सोमाभाई भावसार, अनु० काशीनाथ त्रिवेदी, **हमारे सरदार**, पु० मु०, ४०, क्रा०, हिन्दी प्रकाशन मन्दिर, इलाहाबाद ०.७५

मनोविज्ञान—शिक्षा

जी० वाई० तनखीवाले, के० सी० मलैया व विद्यावती मलैया, **बुनियादी शिक्षण सिद्धान्त**, १७५, क्रा०, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली ३.५०
नारमन एल० मन, अनु० आत्माराम शाह, **मनोविज्ञान**, ५६५, रायल, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १७.५०
रामचन्द्र शुक्ल, **नवीन भारतीय चित्रकला शिक्षण पद्धति**, २००, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद ५.००
विद्यावती मलैया, **भारतीय शिक्षा तथा आधुनिक विचारधाराएँ**, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली ५.५०
वीरेन्द्रकुमार सिंह, **कला एवं उद्योग**, ६४, क्रा०, साधना मन्दिर, पटना १.००
वीरेन्द्रकुमार सिंह, **पाठशाला प्रबन्ध**, ६४, क्रा०, साधना मन्दिर, पटना १.००
वीरेन्द्रकुमार सिंह, **शिक्षण कला**, ६४, क्रा०, साधना मन्दिर, पटना १.००
वीरेन्द्रकुमार सिंह, **शिक्षा मनोविज्ञान**, ६४, क्रा०, साधना मन्दिर, पटना १.००
वीरेन्द्रकुमार सिंह, **शिक्षा सिद्धान्त**, ६४, क्रा०, साधना मन्दिर, पटना १.००
वीरेन्द्रकुमार सिंह, **सामान्य ज्ञान**, ६४, क्रा०, साधना मन्दिर, पटना १.००

विविध

बर्नियर, अनु० भगवतीप्रसाद पांथरी, **सिंहासन के लिए युद्ध**, ११४, साहित्य केन्द्र, वाराणसी १.७५
सावित्रीदेवी वर्मा, **रूप सौंदर्य**, १४१, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १.००
सिंह और श्रीवास्तव, **विश्व भूगोल की रूपरेखा**, ४७८, डि०, किताब महल, इलाहाबाद ४.००

प्रकाशन समाचार

वर्ष : ९
अंक : १
वार्षिक : ३.००
एक प्रति : ०.३१

सम्पादक : ओंप्रकाश, डायरेक्टर इंचार्ज, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड

प्रकाशन समाचार के इस अंक में हम आगामी **राष्ट्रीय पुस्तक समारोह** के सम्बन्ध में **अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ** के कार्यालय द्वारा प्रसरित विस्तृत योजना अन्यत्र प्रकाशित कर रहे हैं। **राष्ट्रीय पुस्तक समारोह** नवम्बर के पहले दिनों में देश-भर के महत्त्वपूर्ण नगरों में आयोजित किया जाएगा। यह अवसर न केवल देश के पुस्तक-व्यवसाय के लिए ही महत्व का है वरन् इसकी उपयोगिता और महत्त्व से देश के शिक्षा-अधिकारियों, समाज-कल्याण और सांस्कृतिक विभाग के अधिकारियों को भी इन्कार नहीं है। लेखकों, शिक्षालयों और पुस्तकालयाध्यक्षों में भी देश में पुस्तकों को पढ़ने और खरीदने की रुचि के संवर्द्धन के लिए किए जाने वाले ऐसे समारोह में विशेष दिलचस्पी प्रदर्शित करना आवश्यक है।

विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के सम्पन्न होने के साथ आज पुस्तक पढ़ सकने वालों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है, लेकिन पुस्तकें पढ़ने और खरीदने वालों की संख्या में उसी अनुपात में वृद्धि नहीं हुई। पुस्तकें पढ़ने और खरीदने के प्रति एक विमुखता, विशेषकर हिन्दी-भाषी क्षेत्र में, देखने को मिलती है। **राष्ट्रीय पुस्तक समारोह** का उद्देश्य इस अवसर के विभिन्न कार्यकलापों, प्रचार-प्रसारों, प्रदर्शनियों, वार्ताओं और गोष्ठियों द्वारा इस विमुखता को भंग करना और पुस्तकों की खरीद और उन्हें पढ़ने की ओर प्रवृत्त करना है। पुस्तकों के लिए मोह का जो आज अभाव है, उसे व्यापक सांस्कृतिक दैन्य का एक लक्षण ही कह सकते हैं। इस स्थिति से उबरना और उबारना पुस्तकों के लेखन, प्रकाशन और पाठन से सम्बन्धित सभी लोगों का कर्तव्य है।

प्रकाशक और पुस्तक-विक्रेताओं से अपील है कि वे अपनी और अपने नगर की परिस्थितियों के अनुसार इस **समारोह** को सफल बनाने के लिए पूर्ण सहयोग दें। अन्य भाषाओं के स्थानीय लेखकों, प्रकाशकों और पुस्तक-विक्रेताओं से भी पूरा सहयोग लें। यद्यपि इस आयोजन का नेतृत्व संघ ने किया है, लेकिन इसका महत्त्व राष्ट्रीय है, और इसकी सफलता सभी भाषाओं के लिए एक समान सार्थक सिद्ध होगी। आने वाले वर्षों में इस समारोह को एक राष्ट्रीय समारोह का स्तर प्राप्त हो सकता है और होगा।

हिन्दी और अन्य भाषाओं की विभिन्न विषयों की पुस्तकों की प्रदर्शनियाँ सब छोटे-बड़े नगरों में आयोजित करके जनता का ध्यान विशेष रूप से इस समारोह के प्रति आकर्षित किया जा सकता है। इन प्रदर्शनियों में पुस्तकों की बिक्री का प्रबन्ध भी समीचीन होगा। समाचारपत्रों में पुस्तकों को खरीदकर पढ़ने के प्रश्न का सांस्कृतिक महत्त्व दरशाने वाले सुबोध लेख प्रकाशित कराए जाएँ; स्थान-स्थान पर कपड़े के झंडे लहराए जाएँ जिन पर लोगों को पुस्तकों के प्रेम के प्रति प्रेरित करने वाले सुवाक्य लिखे रहें। पुस्तकों की दूकानें सजायी जाएँ और पाठकों के पते और उनकी विशेष रुचि की सूचियाँ एकत्रित की जाएँ। ऐसे प्रयास का देश-व्यापी प्रभाव बहुत शीघ्र ही पड़ेगा।

अखिल भारतीय हिन्दी-प्रकाशक संघ

राष्ट्रीय पुस्तक समारोह मनाने की योजना

समारोह की योजना की यह रूपरेखा संघ द्वारा प्रचारित की जा रही है।

लक्ष्य—पुस्तकें महान् आत्माओं के सन्देश की वाहक होती हैं। मनुष्य के बौद्धिक विकास के लिए पुस्तकों की वृद्धि आवश्यक है। बौद्धिक विकास एक-दूसरे के विचारों को समझाता तथा मानव-मात्र के भ्रातृत्व का मार्ग प्रशस्त करता है। आज के समाज में, जो अनेक प्रतिकूल सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थितियों में जकड़ा हुआ है, इस भावना को विकसित करने की बहुत आवश्यकता है। आज के मानव को, जो घोर व्यस्तता का जीवन व्यतीत कर रहा है और जिसका परिणाम उन्मादग्रस्त अविश्रान्ति है, थोड़ी शान्ति प्रदान करने के लिए भी यह भावना आवश्यक है।

विदेशों में पुस्तकों का प्रचार—विदेशों में राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह राज्य-स्तर पर मनाए जाते हैं। उन्हें सफल बनाने के लिए राष्ट्र की सभी सरकारी तथा गैर-सरकारी संस्थाएँ काम में जुट जाती हैं। ऐसे अवसरों पर विशिष्ट तथा सामान्य रुचियों की सभी प्रकार की पुस्तकों का व्यापक प्रचार किया जाता है, जिससे पुस्तकें उनके जीवन का एक आवश्यक अंग बन जाएँ। समारोह को सफल बनाने के लिए प्रकाशक, मुद्रक, पुस्तक-विक्रेता तथा पुस्तकालय संघ, सब मिलकर अपने-अपने देश की सरकारों के सहयोग से कार्यक्रम तैयार करते हैं।

शान्ति-स्थापन के लिए पुस्तकों का विकास आवश्यक—भारत सभ्यता का केन्द्र रहा है। उसका इतिहास गौरवमय रहा है और वह सदा से मानव की भलाई के लिए ज्ञान का प्रचार करता रहा है। किन्तु उस पर अनेक मुसीबतें आईं और वह दो सौ साल से अधिक काल तक विदेशी दासता की जंजीर में जकड़ा रहा, जिसका परिणाम यह हुआ कि ज्ञान का स्वतन्त्र प्रवाह अवरुद्ध हो गया है। किन्तु अब राष्ट्रीय सरकार के जनतान्त्रिक सिद्धान्तों के कारण जो मुक्त वातावरण तैयार हो गया है उससे देश में पुस्तक-विकास सप्ताह मनाने की तीव्र भावना उत्पन्न हो गई है जिससे भारत भी उन देशों के समक्ष, जो मानव-मात्र में भ्रातृत्व की भावना पैदा करने के निमित्त शान्ति-स्थापन का प्रयास कर रहे हैं, अपने विचार रख सके, और योग-दान कर सके। विभिन्न ग्रहों पर पहुँचने के लिए अन्तरिक्ष में जो उड़ानें की जा रही हैं उनसे यही निष्कर्ष निकलता है कि सम्पूर्ण विश्व एक है और वह इस बात का भी संकेत करता है कि हम विश्व-राष्ट्र-युग के प्रवेश-द्वार पर खड़े हैं।

पुस्तक विकास योजना भारत सरकार द्वारा प्रेरित—भारत सरकार ने प्रकाशकों, मुद्रकों तथा पुस्तक-विक्रेताओं के साथ मिलकर संयुक्त रूप से पुस्तक विकास सप्ताह मनाने का निर्णय किया है।

भारत सरकार की अपील पर अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक-संघ राष्ट्रीय पुस्तक समारोह को अखिल भारतीय स्तर पर संघटित करने का काम सक्रिय रूप से कर रहा है।

राष्ट्रीय पुस्तक समारोह कैसे मनाया जाए ?

राष्ट्रीय पुस्तक समारोह जिन सिद्धान्तों के आधार पर मनाया जाएगा वे निम्नलिखित हैं—

(१) पाठकवर्ग को प्रोत्साहित करना तथा उसकी संख्या बढ़ाना।

(२) अप्रकाशित नाटकों तथा उच्चकोटि के नाटकों के अभिनय द्वारा सांस्कृतिक समारोह आयोजित करना।

(३) प्रकाशकों, पुस्तक-विक्रेताओं तथा मुद्रकों की ओर

से संयुक्त रूप से सार्वजनिक सभाएँ आयोजित करना और उनमें यह बताना कि वे पुस्तक तैयार करने में अलग-अलग क्या भूमिका अदा करते हैं।

(४) पुस्तक-गोष्ठियाँ तथा पुस्तकालय संघटित करने का आन्दोलन चलाना और केन्द्रीय सरकार तथा राज्य सरकारों की संयुक्त सहायता से विशेष छूट देने की सुविधा प्रदान करना।

(५) पारिवारिक पुस्तकालय आन्दोलन संघटित करना और विशेष पुस्तक कूपन जारी करना।

(६) लोकप्रिय पुस्तकों के सस्ते संस्करण तथा उच्चकोटि के ग्रन्थ सस्ते दाम पर उपलब्ध करना और किसी विषय का पूरा सैट खरीदने पर प्रोत्साहन के तौर पर किताब रखने के लिए रैक तथा अलमारियाँ देना।

(७) लेखकों, पढ़ने में सर्वाधिक रुचि रखने वाले पाठकों, मुद्रकों तथा प्रकाशकों को इस क्षेत्र में उनके योगदान के अनुसार पुरस्कृत करना।

(८) शैक्षिक तथा सांस्कृतिक संस्थाओं से सहयोग का अनुरोध करना।

(९) पुस्तक-व्यापार पर विशेष स्मृति-पत्र प्रकाशित करना।

(१०) विभिन्न शहरों, विशेषकर राजधानियों में प्रदर्शनियाँ आयोजित करना।

(११) पुस्तक-विक्रेताओं, प्रकाशकों तथा मुद्रकों के संस्थानों को उचित नारों, रंग-बिरंगी झंडियों आदि से सजाना, जिससे जनसाधारण का ध्यान आकर्षित हो।

(१२) पुस्तकों के विकासार्थ स्थानीय समितियाँ संघटित करने के लिए सभी संस्थाओं तथा जनसाधारण के हाथ 'पुस्तक झंडियाँ तथा टिकट' बेचना।

(१३) पाठकों का ध्यान आकर्षित करने के लिए चलचित्रों, दीवारों आदि पर चिपकाने के लिए विज्ञापन-पत्रों तथा आकर्षण की अन्य वस्तुओं की व्यवस्था करना।

(१४) वयस्कों तथा बालक-बालिकाओं में ऐसी आदत विकसित करना जिससे वे जीवन-भर कुछ-न-कुछ

पढ़ते रहें ।

(१५) पाठकों की संख्या, उनके पते तथा उनकी रुचियों के सम्बन्ध में पूरी जानकारी रखना ।

(१६) केन्द्रीय सरकार से निम्नलिखित सुविधाओं के लिए माँग की जा सकती है—

(क) आकाशवाणी द्वारा पुस्तक सप्ताह मनाया जाए ।

(ख) इस अवसर की स्मृति में विशेष डाक टिकट जारी किये जाएँ ।

(ग) पुस्तकालय आन्दोलन के लिए आर्थिक सहायता दी जाए ।

(घ) राष्ट्रीय पुस्तक समारोह को प्रोत्साहित करने वाले विशेष वृत्तचित्र दिखाए जाएँ और प्रदर्शनियाँ संघटित की जाएँ ।

(ङ) रेल-मन्त्रालय से निम्नलिखित सुविधाओं के लिए अनुरोध किया जाए—

(१) प्रदर्शनी रेलें चलाई जाएँ जो विभिन्न शहरों में घूम-घूमकर पुस्तकों का प्रचार करें ।

(२) रेलवे स्टेशनों पर विज्ञापन-पत्र लगाने की अनुमति दी जाए ।

(३) उक्त कार्यों में भाग लेने वालों के लिए किराये आदि में रिआयत की जाए ।

(१) पाठक-वर्ग को प्रोत्साहित करना तथा उसकी संख्या बढ़ाना।

यह आन्दोलन नारों द्वारा आरम्भ किया जाए—पुस्तकें विशिष्ट रुचि वाले व्यक्तियों के लिए तथा जन-साधारण के लिए, पुस्तक चिह्नांकन-पत्र तथा निम्नलिखित नारों के विज्ञापन-पत्र, जैसे—

(क) जागिए और पढ़िए ।

(ख) प्रकाशकों तथा मुद्रकों के लिए—'जो व्यक्ति अध्ययन करता है वह दो के बराबर है ।'

(ग) पुस्तक-विक्रेताओं के लिए—'जो आप स्वयं अनुभव नहीं कर सकते उसे पढ़िए ।'

(घ) गृहिणियों के लिए—'पुस्तकें भी पौष्टिक होती हैं—भोजन के बाद पुस्तक ।'

(ङ) यात्रा एजेंसियों तथा स्टेशनों के लिए—'पुस्तक यात्रा को आनन्दमय बनाती है ।'

(च) डाकखानों के लिए—'अपने अभिनन्दन के साथ एक पुस्तक भेज रहा हूँ ।'

(छ) होटलों के लिए—'पुस्तक है तो आप अकेले नहीं हैं ।'

(ज) प्राथमिक स्कूलों के लिए—'पुस्तक से मनोरंजन कीजिए ।'

(झ) माध्यमिक स्कूलों, पेशेवरों तथा विश्वविद्यालय के छात्रों के लिए—'बिना अध्ययन के सच्ची सभ्यता नहीं ।'

(ञ) पाठकों को निम्नलिखित विषयों की पुस्तकों में से सर्वोत्तम पुस्तकों का चुनाव करने पर योग्यता-क्रम के अनुसार पारितोषित दिये जाएँ—

(१) कला और साहित्य, (२) उपन्यास और कथा-साहित्य, (३) कई अन्य वर्ग ।

इन पुस्तकों के सम्बन्ध में निर्णय कुछ अवधि के बाद प्रकाशित किये जाएँ ।

(ट) पाठकों को पुस्तकें पढ़ने के लिए प्रोत्साहन दिया जाए ।

(ठ) सभी वर्गों के लोगों के लिए प्रकाशन कार्यक्रम तैयार किये जाएँ ।

(२) अप्रकाशित तथा उच्चकोटि के नाटकों को अभिनीत कर सांस्कृतिक समारोह आयोजित करना ।

प्रख्यात लेखकों के नाटकों को अभिनीत करना और अप्रकाशित नाटकों को प्राथमिकता देना ।

विशेषज्ञों की एक समिति अप्रकाशित नाटकों की पाण्डुलिपियों की जाँच करे, ऐसी कृतियों की सूची तैयार करे और उनके प्रकाशन अथवा उन्हें अभिनीत करने के सम्बन्ध में अपनी रिपोर्ट दे ।

(३) प्रकाशकों, पुस्तक-विक्रेताओं तथा मुद्रकों की ओर से संयुक्त रूप से सार्वजनिक सभाएँ आयोजित करना और उनमें यह बताना कि वे पुस्तक तैयार करने में अलग-अलग क्या भूमिका अदा करते हैं ।

ये सभाएं किसी प्रख्यात लेखक या प्रकाशक या मुद्रक द्वारा आयोजित की जानी चाहिएँ, जिनमें मुख्यत: इन विषयों पर विचार-विमर्श होना चाहिए—पुस्तक-व्यापार पर विचार-गोष्ठियाँ, स्वतन्त्र भारत में पुस्तक-व्यापार की

भूमिका, पुस्तक-विकास की समस्याएँ तथा उनके हल के उपाय, लेखकों, मुद्रकों तथा प्रकाशकों का पारस्परिक सम्बन्ध तथा चित्रों की डिजाइनें।

इन व्यापारों से सम्बन्धित विभिन्न संघों को इसे सफल बनाने में हाथ बटाना चाहिए।

(४) पुस्तक-गोष्ठियाँ तथा पुस्तकालय संघटित करने का आन्दोलन चलाना और केन्द्रीय सरकार तथा राज्य-सरकारों की संयुक्त सहायता से विशेष छूट देने की सुविधा प्रदान करना।

पुस्तक गोष्ठियों तथा पुस्तकालयों का संघटन पुस्तक-विकास कार्यक्रम का मुख्य अंग है। सार्वजनिक पुस्तकालयों में किताबों की जितनी अधिक खपत होगी उतनी ही उनकी माँग बढ़ेगी। पुस्तकालयों तथा पुस्तक-गोष्ठियों का संघटन सामाजिक कार्य का एक अंग है। इनका संघटन पाठकों की संख्या के आधार पर होना चाहिए। बालक-बालिकाओं तथा वयस्कों के लिए पुस्तकों का वर्गीकरण करने की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। बच्चों के अन्दर पुस्तकें पढ़ने की आदत पैदा करना प्रथम लक्ष्य होना चाहिए। इससे पुस्तक-विकास कार्यक्रम को भविष्य में आगे बढ़ाने में सहायता मिलेगी। बच्चों को पढ़ने के लिए पर्याप्त किताबें उपलब्ध होनी चाहिएँ। पुस्तक-गोष्ठियों तथा पुस्तकालयों के विकास के लिए सरकार को समान शर्तें तथा नियम बनाने चाहिएँ।

पाठकों की गणना होनी चाहिए। उनकी जीवनचर्या, उनकी पसन्द तथा उनके मनोरंजन के तरीकों का अध्ययन होना चाहिए। कितनी जनसंख्या पर एक पुस्तक-गोष्ठी तथा एक पुस्तकालय होंगे, यह निर्धारित कर देना चाहिए।

पुस्तकालयों के लिए ऐसी भूमि, जिसमें खुली जगह भी हो, प्राप्त करने तथा इमारतें बनाने की सुविधाएँ मिलनी चाहिएँ। इमारतें ऐसी होनी चाहिएँ कि भविष्य में उनका विस्तार किया जा सके। विभिन्न श्रेणी के पुस्तकालयों के नकशे तैयार किये जाने चाहिएँ और सरकार की अनुमति के बाद ही उन्हें कार्यान्वित करना चाहिए।

(५) पारिवारिक पुस्तकालय आन्दोलन संघटित करना तथा विशेष पुस्तक कूपन जारीकरना।

पारिवारिक पुस्तकालय पुस्तक-विकास-कार्यक्रम का एक आवश्यक अंग है। दक्षिण भारत में गृह-पुस्तकालय योजना का प्रयोग किया जा रहा है। 'पारिवारिक पुस्तकालय' की योजना 'आन्ध्र प्रदेश पुस्तक वितरक' ने मई सन् १९६० में चलाई। अब तक लगभग ३५०० व्यक्ति इस योजना की ओर आकर्षित हुए हैं। ये अठारह मास तक ५ रुपये मासिक देते हैं। इस प्रकार ये कुल ९० रुपये देते हैं जिसके बदले इन्हें सौ रुपये की अपनी पसन्द की पुस्तकें मिलती हैं। इसके अतिरिक्त इन्हें ९ पुस्तकें तथा मासिक-पत्रिका की अठारह प्रतियाँ मुफ्त मिलती हैं। डाक-खर्च आदि भी नहीं लिये जाते। जो लोग अठारहों किश्त दे चुकते हैं उन्हें जीवन-भर के लिए पाँच अतिरिक्त सुविधाएँ दी जाती हैं जिनमें 'आन्ध्र प्रदेश पुस्तक वितरक' द्वारा वितरित की जाने वाली पुस्तकों पर दस प्रतिशत छूट तथा कुछ ऐसी सुविधाएँ भी शामिल हैं जिनसे बी० पी० पी० का खर्च बचाया जा सके।

सर्वेक्षण से कुछ अन्य रोचक बातें भी मालूम हुईं। एक तो यह पता चला कि उक्त योजना से लाभ उठाने

नई

हिन्द पॉकेट बुक्स
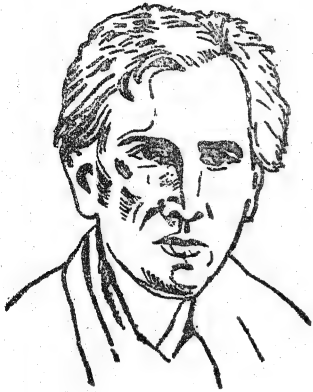
प्रत्येक का मूल्य १.०० **1/-**

महान् उपन्यासकार

शरत्चन्द्र

के

तीन श्रेष्ठ एवं लोकप्रिय उपन्यास

७१. चरित्रहीन

७२. पंडितजी

७३. बिराजबहू

शरत् की चौथी लोकप्रिय कृति

•

देवदास

पहले ही प्रकाशित की जा चुकी है।

क्रम संख्या २५ पर

•

दॉस्तॉवस्की

का अत्यधिक रोचक महान् मनोवैज्ञानिक उपन्यास

७४. जुआरी

अनुवादक : रामचन्द्र तिवारी

•

देवीप्रसाद धवन 'विकल'

का घटना-प्रधान मौलिक सामाजिक उपन्यास

७५. पाखण्डी

•

७६. डाक्टर के आने से पहले

'बर्थ कन्ट्रोल' और 'योगासन और स्वास्थ्य' के यशस्वी लेखक **डॉ० लक्ष्मीनारायण** की नवीनतम उपयोगी कृति

वाले व्यक्तियों में से बहुत अधिक लोग ऐसे स्थानों में रहते हैं जहाँ किताब की दुकानें हैं ही नहीं। हर चार में एक व्यक्ति ऐसी जगह में रहता है जहाँ दस मील की दूरी तक किताब की कोई दुकान नहीं है।

अनुभव से पता चला है कि इन व्यक्तियों को ग्राहक बनाने में साप्ताहिक पत्रिकाओं में विज्ञापन देना बहुत प्रभावकारी सिद्ध हुआ है। ३५०० से अधिक ग्राहकों में से ३००० व्यक्ति केवल एक तेलुगु साप्ताहिक पत्रिका में विज्ञापन पढ़कर ग्राहक बने। एक पुस्तक की दो हज़ार प्रतियाँ फरवरी १९६० में प्रकाशित की गईं। किन्तु पारिवारिक पुस्तकालय योजना के अन्तर्गत बने ग्राहकों की माँग के कारण इस पुस्तक की सारी प्रतियाँ अगस्त १९६० में ही बिक गईं जिन्हें बिकने में सामान्यतः दो वर्ष लगते।

आन्ध्र के एक छोटे-से गाँव से एक महिला ग्राहक लिखती हैं—'आप सम्भवतः इस बात की कल्पना नहीं कर सकते कि हमारे इस छोटे-से गाँव में आपकी पुस्तकों के आने से मेरे ऊपर क्या प्रभाव पड़ा है। आपने अन्धकार में प्रकाश ला दिया है।'

पारिवारिक पुस्तकालय एक अभिनव प्रयास है। वह अभी बाल्यावस्था में है और उसने एक वर्ष भी पूरा नहीं किया है। अभी बहुत सी संघटन तथा व्यवस्था-सम्बन्धी समस्याएँ हल करने को हैं।

"जो भी हो, एक बात बिलकुल स्पष्ट है कि पुस्तकों की माँग बहुत है। मुख्य समस्या यह है कि पाठकों को उनकी आर्थिक क्षमता के अनुसार पुस्तकें किस प्रकार उपलब्ध की जाएँ। पारिवारिक पुस्तकालय योजना की अब तक की सफलता ने यह सिद्ध कर दिया है कि दूरदर्शिता तथा लगन द्वारा इस कार्य में सफलता प्राप्त की जा सकती है। ऐसी स्थिति में आन्ध्र में पारिवारिक पुस्तकालय योजना का विस्तार-कार्य उन सबके देखने योग्य है जो पुस्तकों के विकास में रुचि रखते हैं।"

(देखिए—राष्ट्रसंघीय शैक्षिक, वैज्ञानिक तथा सांस्कृतिक संघटन का सूचना-पत्र, भाग ३, नं० १, अप्रैल, १९६१ 'दक्षिण भारत के लिए नई पुस्तक योजना'—लेखक आर्थर आइसेनबर्ग, फोर्ड फाउंडेशन की ओर से दक्षिण भारतीय भाषा पुस्तक न्यास, मद्रास, भारत के वरिष्ठ परामर्शदाता।)

उक्त उद्धरण से यह पता चलता है कि पुस्तक-विकास के लिए पारिवारिक पुस्तकालय योजना कितनी महत्त्वपूर्ण है। नियोजित ढंग से कार्य करने से पुस्तक-विकास के कार्य में अवश्य सफलता मिलेगी। ज्यादा अच्छा हो कि इस कार्यक्रम के लिए एक योजना बनाई जाए और राष्ट्रीय पुस्तक समारोह के अवसर पर उसे कार्यान्वित किया जाए।

'विशेष पुस्तक कूपन' जारी करना भी पुस्तक विकास कार्यक्रम का एक आवश्यक अंग है। इन कूपनों को खरीदने वालों को पुस्तकों पर विशेष छूट दी जाती है और उनसे पैकिंग आदि का खर्च नहीं लिया जाता। इनके अतिरिक्त कूपनों की लाटरी भी निकाली जानी चाहिए और विजेता को विशेष पुरस्कार दिया जाना चाहिए।

(६) लोकप्रिय पुस्तकों के सस्ते संस्करण तथा उच्च कोटि के ग्रन्थ सस्ते दाम पर उपलब्ध करना और किसी विषय का पूरा सेट खरीदने पर प्रोत्साहन के तौर

पर किताब रखने के लिए रैक तथा अलमारियाँ देना।

भारत में अनेक प्रकार के उच्च कोटि के ग्रन्थ हैं जिनका वर्गीकरण साहित्य के विकास-काल के अनुसार किया जा सकता है। इस श्रेणी में आधुनिक युग की उत्कृष्ट कृतियाँ भी रखी जा सकती हैं। दफ्ती की जिल्द के सस्ते संस्करण भी छापे जा सकते हैं। राज संस्करण के भी ऑर्डर लिये जा सकते हैं और किसी विषय का पूरा सेट खरीदने पर विशेष प्रकार के रैक तथा अलमारियाँ भी दी जानी चाहिएँ। इन सबसे इस सप्ताह में पुस्तकों की बिक्री बढ़ेगी। इस सप्ताह में ऑर्डर लिये जा सकते हैं। उनकी पूर्ति ऑर्डरों के क्रमानुसार की जानी चाहिए।

(७) लेखकों, पढ़ने में सर्वाधिक रुचि रखने वाले पाठकों, मुद्रकों तथा प्रकाशकों को पुरस्कार देना।

इस व्यापार में जो लोग लगे हैं उन सबको प्रोत्साहन देना आवश्यक है—

(क) लेखकों को उनकी सर्वोत्कृष्ट कृतियों के लिए पुरस्कृत करना चाहिए।

(ख) पाठकों को सर्वाधिक पढ़ने के लिए।

(ग) समालोचकों को सर्वोत्तम समालोचना के लिए, जिससे साहित्य का स्वस्थ विकास हो।

(घ) पुस्तक-विक्रेताओं को सबसे अधिक किताब बेचने के लिए।

(ङ) प्रकाशकों को चुनी हुई पुस्तकों का प्रकाशन करने के लिए।

(च) मुद्रकों को सर्वोत्तम किस्म की किताब छापने के लिए।

इन सबसे हमारे देश में पुस्तक-व्यापार की अभिवृद्धि होगी और किताबों का जितना ही प्रचार बढ़ेगा शिक्षा तथा सभ्यता के क्षेत्र में उतनी ही उन्नति होगी।

(८) शैक्षिक तथा सांस्कृतिक संस्थाओं से सहयोग का अनुरोध करना।

पूरे कार्यक्रम को एक उत्सव का रूप देना चाहिए। अतः सभी संस्थाओं का सहयोग प्राप्त करना आवश्यक है। निम्नलिखित संघटनों से योगदान करने का अनुरोध करना चाहिए—

(क) शैक्षिक संस्थाएँ।
(ख) भारत के पुस्तकालय संघ।
(ग) भारत के सांस्कृतिक संघटन।
(घ) सिनेमा प्रदर्शक संघ,.......निम्नलिखित कार्यों के लिए—
(१) विज्ञापन-पत्र निःशुल्क प्रदर्शित किये जाएँ।
(२) पुस्तक-विकास-सम्बन्धी स्लाइडों की दरों में ५० प्रतिशत छूट दी जाए।
(३) पुस्तक समारोह के लिए धन एकत्र करने के निमित्त स्पेशल शो किये जाएँ।
(ङ) समाचार-पत्र तथा समाचार-समितियाँ—समाचार-पत्र इस अवसर के अनुकूल परिशिष्टांक प्रकाशित करें और सम्पादक भारत में पुस्तक-समारोह के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए अग्रलेख लिखें।
समाचार-समितियाँ इस अवसर पर किये गए भाषणों तथा निर्णयों को देश-भर में प्रचारित करें।
इस सप्ताह के लिए विज्ञापन-शुल्क घटा दिए जाएँ जिससे प्रकाशक अपनी पुस्तकों तथा प्रकाशनों का व्यापक प्रचार कर सकें।
विशेष कालम—इस सप्ताह में पुस्तकों की समालोचना प्रकाशित की जाए। अप्रकाशित पाण्डुलिपियों की सूची के लिए एक कॉलम निर्धारित कर दिया जाए और उसमें उनके प्रकाशनाधिकारियों के पते भी छापे जाएँ।
समस्त विषयों की प्रकाशित पुस्तकों के सम्बन्ध में आँकड़े सहित सूचना प्रकाशित करना।

(९) पुस्तक-व्यापार पर विशेष स्मृति-पत्र प्रकाशित करना

स्मृति-पत्र में पुस्तक-विकास पर लेखों के अतिरिक्त सभी प्रकाशन-संस्थाओं का विज्ञापन तथा उनका संक्षिप्त इतिहास हो तथा उनके कार्यक्षेत्र का पूरा वर्णन हो। इस प्रकार के स्मृति-पत्र से पुस्तक-विकास कार्यक्रम की हर वर्ष की प्रगति का पता चलता रहेगा।

(१०) विभिन्न शहरों में प्रदर्शनियाँ संघटित करना—प्रदर्शनियाँ बहुत आवश्यक हैं।

इन प्रदर्शनियों द्वारा पाठकों को प्रकाशित तथा उपलब्ध पुस्तकों की जानकारी होती है और वे प्रकाशन-कार्यक्रम से भी परिचित होते हैं। इन प्रदर्शनियों से दो लाभ हैं—
(क) यह पता चलता है कि किस प्रकार के प्रकाशन हो रहे हैं और प्रकाशन-व्यापार में क्या त्रुटियाँ हैं।
(ख) पाठक-वर्ग की रुचि का पता चलता है।

यदि पुस्तक-विक्रेता तथा प्रकाशक यह समझें कि प्रदर्शनी से उनकी पुस्तकों की अत्यधिक बिक्री होगी तो यह गलत होगा। उन्हें केवल यह लाभ होगा कि उन्हें ऐसे अनुभव प्राप्त होंगे जिनसे वे भविष्य में पुस्तक-विकास का काम सफलतापूर्वक कर सकेंगे।

यद्यपि भारत के पाँच नगरों—कलकत्ता, मद्रास, दिल्ली, वाराणसी तथा बम्बई में पुस्तक-समारोह प्रदर्शनियाँ आयोजित की जाएँगी तथापि सब राज्यों की राजधानियों में भी इस प्रकार की प्रदर्शनियाँ संघटित करना आवश्यक है।

(११) पुस्तक-विक्रेताओं, प्रकाशकों तथा मुद्रकों के संस्थानों को उचित नारों, रंग-बिरंगी झण्डियों आदि से सजाना, जिससे जनसाधारण का ध्यान आकर्षित हो।

पुस्तक-समारोह को बड़े पैमाने पर मनाने के लिए पर्याप्त प्रचार आवश्यक है। चूँकि इस समारोह का उद्देश्य पुस्तकों का विकास करना है, अतः इस क्षेत्र से सम्बद्ध सभी लोगों को समारोह को सफल बनाने में योगदान करना चाहिए।

इस अवसर पर ऊपर वर्णित नारों को यथास्थान लिखकर प्रदर्शित करना चाहिए। दूकानों तथा अन्य संस्थानों को अवसर के अनुकूल सजाना चाहिए। झंडियाँ, तोरण, प्रदर्शन-कार्ड आदि से भी सजावट करनी चाहिए।

(१२) स्थानीय समिति के लिए धन एकत्र करने के निमित्त पुस्तक-झण्डियाँ तथा टिकट सभी संघटनों तथा जनसाधारण के हाथ बेचना।

टी० बी० सील के आकार की विशेष पुस्तक-झंडियाँ, जिनमें आलपीनें लगी हों, दस नये पैसे या पाँच नये पैसे में बेची जाएँ। समारोह आरम्भ होने के तीन-चार मास पूर्व पुस्तकों पर टिकट चिपकाए जा सकते हैं और पाठकों से उन्हें खरीदने का अनुरोध किया जा सकता है। किन्तु उनका मूल्य पाँच नये पैसे से अधिक नहीं होना चाहिए। पुस्तक-विक्रेताओं तथा प्रकाशकों के सहयोग से इस प्रकार काफ़ी धन एकत्र किया जा सकता है।

(१३) पाठकों का ध्यान आकर्षित करने के लिए चल-चित्रों, विज्ञापन-पत्रों तथा आकर्षण की अन्य वस्तुओं की व्यवस्था करना।

शहरों में चौराहों, मुख्य बाज़ारों आदि उपयुक्त स्थानों में विज्ञापन-पत्रों, विद्युत् पट्टों तथा अन्य साधनों द्वारा प्रचार किया जाए।

सिनेमा-घरों में स्लाइड दिखलाए जाएँ, टेलीविजन पर कार्यक्रम प्रसारित किये जाएँ, प्रचार के साधनों से युक्त मोटरगाड़ियों का उपयोग किया जाए तथा प्रचार के अन्य सभी उपायों का सहारा लिया जाए।

(१४) वयस्कों तथा बालक-बालिकाओं में जीवन-भर कुछ-न-कुछ पढ़ते रहने की आदत विकसित

करना।

प्रकाशकों का सबसे बड़ा कर्तव्य है लोगों में जीवन-भर कुछ-न-कुछ पढ़ते रहने की आदत विकसित करना। अमेरिका में इसके लिए पुस्तकालयों में काफ़ी पुस्तकें वितरित की जाती हैं। यदि देश-भर में पुस्तकालयों का जाल बिछा दिया जाए और पुस्तकों की पूर्ति का ढंग अच्छा हो जाए तो इस प्रकार की आदत पैदा की जा सकती है। कार्यक्रम के सम्बन्ध में बहुत सी बातें कही जा सकती हैं किन्तु इस समय आवश्यकता इस बात की है कि इस विषय पर दो सम्मेलन बुलाए जाएँ—एक ग्रीष्मकाल में तथा दूसरा शीतकाल में। इन सम्मेलनों में लोगों की जीवनचर्या-सम्बन्धी अनुसन्धान के आधार पर पुस्तकों के प्रकाशन का कार्यक्रम तैयार करना चाहिए। पुस्तकों के विकास तथा प्रकाशकों को इस बात की जानकारी के लिए कि किस प्रकार की पुस्तकों की माँग है और वे किस प्रकार की पुस्तकें छापें, यह कार्य आवश्यक है।

(१५) **पाठकों की संख्या, उनकी रुचियों आदि की आँकड़े सहित सूचना रखना।**

पुस्तक की प्रत्येक दुकान तथा प्रकाशन-गृह में अनेक पाठक, लेखक तथा पढ़ने में रुचि रखने वाले व्यक्ति आया करते हैं। यदि प्रश्नावलियाँ तैयार की जाएँ और इन लोगों से प्रश्नों के उत्तर एक फार्म पर लिखवा लिए जाएँ तो उनकी रुचियों का आसानी से पता चल सकता है। सही किस्म की पुस्तकों के प्रकाशन के लिए यह आवश्यक है।

समारोह की सफलता के लिए पुस्तक-व्यापार में लगे लोगों के विभिन्न संघों का सहयोग

यह काम अखिल भारतीय हिन्दी-प्रकाशक संघ, जो इस कार्यक्रम का जन्मदाता है, तथा निम्नलिखित संघों की सहायता से राज्य-स्तर पर किया जाएगा—

(१) पश्चिमी बंगाल प्रकाशक संघ।
(२) प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता संघ, बम्बई।
(३) दक्षिण भारत का पुस्तक व्यापार परिषद, मद्रास।
(४) बड़े मुद्रकों का अखिल भारतीय संघ, मद्रास।

अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ के छठे अधिवेशन में, जो पटना में श्री कृष्णचन्द्र बेरी की अध्यक्षता में हुआ, राष्ट्रीय पुस्तक समारोह मनाने के सम्बन्ध में निम्नलिखित प्रस्ताव पास किया गया—

'अखिल भारतीय हिन्दी-प्रकाशक संघ का यह अधिवेशन देश में शिक्षा तथा साहित्य के प्रचार के लिए राष्ट्रीय पुस्तक समारोह की योजना को महत्त्वपूर्ण समझता है और इस कारण वह इस बात को आवश्यक समझता है कि राष्ट्रीय पुस्तक समारोह पूरे देश में काफ़ी बड़े पैमाने पर तथा पूरे उत्साह तथा खुशी से मनाया जाए। इस सम्बन्ध में विभिन्न प्रकाशक संघों, साहित्यिकों, पत्रकारों, सांस्कृतिक संघटनों तथा केन्द्र एवं राज्य की सरकारों से सहयोग प्राप्त करने का प्रयास किया जा सकता है। पुस्तक-विकास-कार्यक्रम को संघटित करने के लिए निम्नलिखित व्यक्तियों की एक उपसमिति संघटित की जा रही है।

(१) श्री रामलाल पुरी
(२) श्री लक्ष्मीचन्द जैन
(३) श्री ए० के० वसु
(४) श्री वाचस्पति पाठक
(५) श्री मार्तण्ड उपाध्याय
(६) श्री ओंप्रकाश
(७) पं० जयनाथ मिश्र
(८) श्री तेजनारायन टंडन
(९) श्री गोकुलदास 'धूत'

उपसमिति को अन्य सदस्यों को चुनने का अधिकार होगा।

श्री रामलाल पुरी इस समिति के अध्यक्ष तथा श्री ए० के० वसु अवैतनिक मन्त्री होंगे।

केन्द्रीय समिति के कार्य

यह केन्द्रीय समिति पुस्तक सप्ताह को व्यापक ढंग से तथा सफलतापूर्वक मनाने के लिए केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों से आर्थिक सहायता तथा अन्य सुविधाओं के लिए वार्ता, पत्र-व्यवहार आदि करेगी।

यह समिति समस्त राज्यों की राजधानियों में स्थानीय समितियाँ संघटित करेगी, उन्हें प्रदर्शनियाँ आयोजित करने में सहायता देगी और राष्ट्रीय पुस्तक समारोह की सफल समाप्ति के लिए समय-समय पर निर्देश देती रहेगी।

केन्द्रीय समिति सरकारों तथा अन्य संस्थाओं से पत्र-व्यवहार करेगी, सदस्यों को सुविधाएँ देगी और पूरा कार्यक्रम इस प्रकार तैयार करेगी कि पाँचों शहरों तथा राज्यों की राजधानियों में होने वाले सब समारोह एक साथ हों।

धन की आवश्यकता तथा केन्द्र एवं राज्य सरकारों से सुविधाएँ

पूरे कार्यक्रम को सफलतापूर्वक कार्यान्वित करने के लिए धन के अतिरिक्त राज्य तथा केन्द्र की सरकारों से विभिन्न प्रकार की सुविधाएँ तथा उनका सहयोग बहुत आवश्यक है। अतः इस बृहत् योजना को आरम्भ करने से पहले उसे अन्तिम रूप देने के लिए केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों के अधिकारियों की संयुक्त बैठक आवश्यक है।

एक प्रकाशक का दृष्टिकोण

विज्ञापन तथा बिक्री बढ़ाने के उपाय

सज्जनो,

यह बात बहुत बार दोहरायी जा चुकी है पर मैं इसे एक बार फिर कहना चाहूँगा कि प्रकाशन बहुत ही जोखिम का काम है। इस जोखिम के व्यापार का जो पहलू सबसे अधिक अनिश्चितताओं से भरा हुआ है वह है उस माल को बेचने और उसकी बिक्री बढ़ाने वाला पहलू। हर नयी किताब, जिसका प्रकाशन हम करते हैं, बाजार में बेचने के लिए लाया जाने वाला बिलकुल नया माल होता है और किसी भी दूसरे उद्योग के उत्पादन के मुकाबले इस माल की बिक्री के बारे में निश्चय के साथ कुछ कह सकना ज्यादा कठिन होता है। दूसरे उद्योगों द्वारा तैयार किया जाने वाला माल बहुत व्यापक पैमाने पर बेचा जा सकता है और उनके माल की माँग के बारे में विभिन्न प्रकार के ऐसे तथ्यों तथा आँकड़ों के आधार पर, जो आसानी से उपलब्ध हो सकते हैं, पहले ही से अनुमान लगाया जा सकता है। लेकिन जो पुस्तकें हम प्रकाशित करते हैं उनके बारे में या उनकी बिक्री बढ़ाने के बारे में पहले से इस प्रकार का कोई अनुमान लगाना कठिन है; उनकी माँग हद-से-हद व्यक्तियों के किसी वर्ग-विशेष में मुख्यतः इसलिए हो सकती है कि वे उस वर्ग की रोज़मर्रा की नहीं बल्कि बौद्धिक आवश्यकताओं को—उसकी सांस्कृतिक आवश्यकताओं को पूरा करती हैं। एक ही समाज के व्यक्तियों में भी मानसिक जगत् की ये आवश्यकताएँ तथा रुचियाँ बहुत भिन्न होती हैं; संस्कृति, लोकतन्त्र और समता के शिखर पर होने का दावा करने वाले समाजों में भी ये आवश्यकताएँ तथा रुचियाँ बहुत भिन्न होती हैं। शायद यही कारण है कि हम पुस्तकों को 'बिकाऊ माल' नहीं कह सकते, और इसी बात में उनका अपार महत्त्व निहित है। पुस्तकों की दुनिया में जो चीज़ एक व्यक्ति के लिए विष होती है वही दूसरे के लिए मनभाता खाजा होती है और इसी बात के कारण हमारे सामने बिक्री और विज्ञापन की वे समस्याएँ आ खड़ी होती हैं जिन पर हम आज यहाँ विचार कर रहे हैं।

कोई पाण्डुलिपि चुनने में अपनी बुद्धि खपाने और उसे पुस्तक का गौरवान्वित रूप देने के लिए अपनी पूँजी लगाने के बाद प्रकाशक ऐसे व्यक्तियों के वर्ग का पता लगाने की सबसे जटिल समस्या को हल करने में जुटता है जिन्हें उस पुस्तक की प्रतियाँ खरीदने पर राज़ी किया जा सके। अच्छा प्रकाशक पहले से इस बात को ध्यान में रखता है कि कौन लोग किस पुस्तक-विशेष के ग्राहक हो सकते हैं, वरना वह उस पुस्तक को तैयार करने की विभिन्न प्रक्रियाओं में अपना पैसा न लगाता। हिन्दी के और शायद दूसरी प्रादेशिक भाषाओं के जो प्रकाशक किसी वर्ग-विशेष को ध्यान में रखे बिना पुस्तकें प्रकाशित करते हैं बहुत देर में जाकर इस बात को समझते हैं कि केवल पांडुलिपि प्राप्त कर लेना, उसके लिए कागज़ का प्रबन्ध कर देना और उसे छपाकर जिल्द बँधा लेना ही प्रकाशन नहीं है। यह तो प्रकाशक के काम का केवल एक भाग है। प्रकाशन-व्यापार का दूसरा और शायद ज्यादा महत्त्वपूर्ण भाग पुस्तक छप जाने के बाद आरम्भ होता है, जब यह सवाल पैदा होता है कि उसे ऐसे पाठक के हाथों तक पहुँचाया जाए जिसे उसमें इतनी काफ़ी दिलचस्पी हो कि वह उसे प्राप्त करने के लिए पैसे खर्च करने को तैयार हो।

ऐसे ग्राहकों तक पहुँचने के लिए प्रकाशक पुस्तक-विक्रेताओं पर बहुत भरोसा करते हैं। वे अपने ट्रैवेलिंग ऐजेंटों के ज़रिये या कभी-कभी अपने सूचीपत्र भेजकर व्यापक क्षेत्र में फैले हुए इन थोक तथा फुटकर पुस्तक-

विक्रेताओं के साथ सम्पर्क स्थापित करते हैं। आम तौर पर भारतीय भाषाओं के प्रकाशकों द्वारा भेजे जाने वाले ये सूचीपत्र बहुत ही आकर्षक होते हैं और पुस्तक-विक्रेताओं के लिए बहुत उपयोगी नहीं होते। इनमें से ज़्यादातर रद्दी की टोकरी में फेंक दिए जाते हैं। वे इतने आकर्षक रूप में नहीं छापे जाते कि पुस्तक-विक्रेता का ध्यान आकर्षित कर सकें। एक ही सूचीपत्र में जरूरत से ज्यादा पुस्तकें ठूंस-ठूंसकर भर दी जाती हैं और ये सूचीपत्र इतनी बार भेजे जाते हैं कि भले-से-भला पुस्तक-विक्रेता भी उकता जाता है। नये प्रकाशन पुस्तकों की इस भीड़ में खो जाते हैं जैसे जंगल में बच्चे खो जाएँ। नयी तथा महत्त्वपूर्ण पुस्तकों के बारे में या नये अथवा महत्वपूर्ण लेखकों की रचनाओं के बारे में शायद ही कभी अलग से फोल्डर छापकर बड़े सूचीपत्र के साथ भेजे जाते हैं ताकि पुस्तक-विक्रेता को पूरा सूचीपत्र देखने की प्रेरणा मिले। इन सूचीपत्रों को रद्दी पैकिंग पेपर में लपेटकर और उस पर उलटा-सीधा पता लिखकर भेज दिया जाता है। इस पर पुस्तक-विक्रेता की यह प्रतिक्रिया उचित ही होती है कि ऐसे प्रकाशक से क्या आशा की जा सकती है, जो व्यापारियों के साथ सम्पर्क स्थापित करने में इतनी लापरवाही बरतता हो ?

प्रकाशकों के यहाँ से आने वाले सूचीपत्रों के प्रति पुस्तक-विक्रेता के उत्साह प्रकट न करने का एक कारण यह भी है कि वह अपने अनुभव से जानता है कि उनमें ज्यादातर ऐसी पुस्तकों के नाम होते हैं जिन्हें बेचने में उसे कठिनाई होती है। जो प्रकाशक किसी पुस्तक की बिक्री की सम्भावना पर काफ़ी विचार किए बिना या कोई भी विचार किए बिना केवल उस पुस्तक को छाप देने के लिए उत्सुक होता है उसकी पसन्द के बारे में यह बात बहुत ही खेदजनक पर सत्य है। किसी पुस्तक की बिक्री की सम्भावनाओं तथा समस्याओं पर पाण्डुलिपि स्वीकार करते समय ही विचार कर लिया जाना चाहिए; दुर्भाग्यवश बहुत से प्रकाशक इस बात को ध्यान में नहीं रखते और उन्हें इसका आभास बहुत देर में होता है जबकि पुस्तक बिकने में कठिनाई होने लगती है।

जो एजेंट शहर-शहर घूमकर पुस्तक-विक्रेताओं से मिलते हैं उन्हें पुस्तक विक्रेताओं को अपने आर्डर तैयार
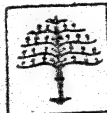
करने में सहायता देने के बजाय बहुधा उनसे पुस्तकों का आर्डर देने के लिए खुशामद करनी पड़ती है। यह बहुत ही अपमानजनक और दयनीय परिस्थिति है। कोई भी अच्छा एजेंट किसी पुस्तक-विक्रेता पर ज़बरदस्ती किसी पुस्तक का आर्डर नहीं थोपेगा। इससे न उसे स्वयं लाभ होता है न उस संस्था को जिसका कि वह प्रतिनिधि होता है। उसके सफ़र पर आने वाले खर्च के कारण पुस्तक की बिक्री बढ़ाने की लागत लगातार बढ़ती रहती है, लेकिन अगर वह ऐसी पुस्तकों के नमूने या ऐसी पुस्तकों के बारे में सूचना लेकर जाए जिनके लिए उस पुस्तक-विशेष के विषय, उसके लेखक और उसके सम्भावित ग्राहकों के बारे में उचित तथा पूरी जानकारी के बजाय व्यापारिक तर्कों के अलावा दूसरे तर्कों की ओर भावनाओं को उभारने की ज्यादा ज़रूरत पड़े तो बेचारा एजेंट और कर ही क्या सकता है ?

हिन्दी के पुस्तक-विक्रेता आम तौर पर अपने आर्डर तैयार करने के लिए प्रकाशकों या थोक पुस्तक-विक्रेताओं के एजेंटों के आने की प्रतीक्षा करते हैं। मैं नहीं कह सकता कि दूसरी प्रादेशिक भाषाओं में भी ऐसी ही परिस्थिति है कि नहीं। उनमें से केवल थोड़े से ही पुस्तक-विक्रेता, जो अपने दूसरे साथियों से ज्यादा उत्साह वाले होते हैं और पुस्तकों का स्टाक भरपूर रखने की आवश्यकता को समझते हैं, अपने-आप आर्डर भेज देते हैं। इस तरह हम देखते हैं कि एजेंट के आने की प्रतीक्षा करना एक आदत-सी हो गई है और जो प्रकाशक इस सेवा का प्रबन्ध नहीं करता उसका कारोबार अपेक्षत: मन्दा रहता है।

आजकल अच्छे प्रकाशक अपनी पुस्तकों से सम्बन्धित जानकारी के प्रसार के लिए व्यावसायिक पत्रिकाओं में विज्ञापन देने की भी सहायता लेते हैं। इस समय हिन्दी में इस प्रकार की कई पत्रिकाएँ हैं। इस प्रकार की पहली पत्रिका की स्थापना १९५३ में हुई थी। व्यावसायिक पत्रिकाओं का प्रकाशन, जो पुस्तक-व्यापार से सम्बन्ध रखने वाली विभिन्न शाखाओं के लोगों के पास भेजी जाती हैं, बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। दैनिक पत्रों में विज्ञापन देना बहुत महँगा होने के कारण लाभदायक नहीं

होता और पॉकेट-बुक्स के अलावा, जिनकी प्रतियाँ बहुत बड़ी संख्या में बिकती हैं, दूसरी पुस्तकों के लिए विज्ञापन के इस माध्यम की सहायता नहीं ली गई है। कुछ समय पहले अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ ने अखबारों के मालिकों से यह अनुरोध किया था कि फ़िल्मों की तरह वे पुस्तकों के विज्ञापन भी कम दामों पर प्रकाशित किया करें, पर अखबारों के मालिक इसके लिए राजी नहीं हुए, शायद अगर और अधिक कोशिश की जाए तो यह कोशिश सफल हो सकती है।

नये प्रकाशनों की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित करने के लिए प्रकाशक दैनिक पत्रों तथा अन्य पत्रिकाओं में पुस्तकों की समालोचना छपवाने का भी सहारा लेते हैं। यह बात कही जा सकती है कि भारतीय भाषाओं के पत्र-पत्रिकाओं में पुस्तकों की समालोचना की ज़िम्मेदारी ठीक से नहीं निभायी जा रही है, वरना यह माध्यम पाठकों और प्रकाशकों दोनों ही के लिए अधिक फलप्रद तथा उपयोगी सिद्ध होता। पुस्तकों के समालोचक विचाराधीन पुस्तकों की कीमत के बारे में बिना कुछ जाने हुए ही अपना फैसला दे देते हैं और इस प्रकार उस पुस्तक के प्रकाशक को हानि पहुँचाते हैं, विशेष रूप से ऐसी हालत में जबकि प्रकाशक को अपनी सफ़ाई देने का कोई मौक़ा नहीं मिलता।

हम जो पुस्तकें प्रकाशित करते हैं उनकी बिक्री की समस्या मुख्यतः पत्र-व्यवहार द्वारा आर्डर मँगाने का व्यापार है और इसके लिए प्रकाशक के कार्यालय में बाकायदा पतों की सूची रखने पर जितना भी ज़ोर दिया जाए कम है। ये पते अलग-अलग प्रदेशों और अलग-अलग शहरों के हिसाब से रखे जाने चाहिएँ और इनमें पुस्तक-विक्रेताओं के पतों के अतिरिक्त सार्वजनिक पुस्तकालयों, संस्थाओं के पुस्तकालयों और व्यक्तिगत ग्राहकों के पते भी बड़ी संख्या में होने चाहिएँ। उद्देश्य यह है कि किसी पुस्तक के लिए यथासंभव अधिक-से-अधिक माँग पैदा की जाए ताकि पुस्तक-विक्रेता उस पुस्तक में उससे अधिक दिलचस्पी लें जितनी कि वे किसी ऐसी पुस्तक में लेते जिसके बारे में कोई प्रचार न किया गया हो। पुस्तक की माँग पैदा करने की बुनियादी ज़िम्मेदारी प्रकाशक पर

होती है। जब प्रकाशक यह रवैया अपनाते हैं कि अपना प्रकाशन पुस्तक-विक्रेताओं तक पहुँचा देने के बाद उनकी ज़िम्मेदारी ख़त्म हो जाती है तो वे अपने मुख्य विश्वास-पात्र अर्थात् पुस्तक-विक्रेता का समर्थन पूर्ववत् बनाए रखने की आशा नहीं कर सकते।

प्रकाशक अच्छे पुस्तक-विक्रेताओं के साथ मिलकर स्थानीय बाज़ार में संयुक्त विज्ञापन का सहारा ले सकते हैं और कभी-कभी वे ऐसा करते भी हैं। इस पर जो खर्च आता है वह दोनों में बँट जाता है और दोनों ही इससे लाभ उठाते हैं।

पुस्तकों की बिक्री बढ़ाने का एक और साधन है जिसका आम तौर पर उपयोग नहीं किया जाता और वह है पुस्तक-विक्रेताओं के पास ऐसी पुस्तकों के बारे में दुकान पर सजाने के लिए प्लेकार्ड तथा पोस्टर भेजना, जिनकी बिक्री अधिक व्यापक होने की संभावना हो—इनमें ज्यादातर कथा-साहित्य की पुस्तकें होती हैं या फिर बिलकुल ही सामयिक दिलचस्पी वाले विषयों की या दूसरी ओर दीर्घकालीन दिलचस्पी की। शायद इसका कारण यह है कि इन पर खर्च बहुत आता है और इन्हें तैयार कराने की सुविधाएँ सुलभ नहीं हैं। यदि इस प्रकार की घोषणाएँ किताबों की दुकानों पर प्रदर्शित की जाएँ तो वे ग्राहकों का ध्यान फौरन आकर्षित करती हैं। प्रकाशक इस प्रकार की प्रचार-सामग्री पर पैसा इसलिए नहीं खर्च करते कि किताबों की कीमत का हिसाब जिस आधार पर लगाया जाता है उसमें इस प्रकार के खर्च की गुन्जाइश नहीं होती। हमें इस बात की आदत डालनी चाहिए कि हम पुस्तक के मूल्य का कम-से-कम पाँच प्रतिशत भाग प्रचार और विज्ञापन के खर्च के लिए रखें। केवल ऐसा करके ही हम पुस्तक की बिक्री बढ़ाने की ऐसी सुविधाओं की व्यवस्था कर सकते हैं जिनकी कि प्रकाशन-व्यापार को इतनी अधिक आवश्यकता है।

अब तक मैंने उन माध्यमों का उल्लेख किया है जिनका उपयोग हम प्रकाशक अलग-अलग करते हैं या हमें करना चाहिए। भारत-जैसे देश में, जहाँ ज्ञान के प्रसार का मुख्य साधन युगों से मौखिक शब्द रहा है, वहाँ मुद्रित शब्द, अर्थात् पुस्तक के महत्व तथा उसकी

उपयोगिता को हमें सिद्ध करना होगा। इस दिशा में हमें मिलकर सामूहिक रूप से ही प्रयास करना होगा और इसमें हमें सरकार का, लेखकों का, शिक्षाशास्त्रियों का और पुस्तकालयाध्यक्षों का पूरा समर्थन मिलना चाहिए। इन प्रयासों का रूप यह होना चाहिए कि बहुत व्यापक पैमाने पर पुस्तकें खरीदने के लिए पर्चियाँ बेची जाएँ, पुस्तकों की प्रदर्शनियाँ तथा पुस्तक-समारोह हों और लोगों में शुभ अवसरों पर पुस्तकें उपहार में देने की आदत डाली जाए। हमारे समाज में पुस्तकों को अभी तक उनका उचित प्रतिष्ठित पद नहीं प्राप्त हो सका है और इस काम को पूरा करने के लिए हम सबको मिलकर एक बृहत् आन्दोलन आरम्भ करना चाहिए। हमें इस काम के लिए विज्ञापन और बिक्री बढ़ाने के सभी संभव आधुनिक उपायों का सहारा लेना चाहिए। इस आन्दोलन में किसी एक व्यक्ति की स्वार्थ-पूर्ति निहित नहीं है। इससे पूरे भारतीय समाज के बुनियादी हितों को लाभ पहुँचेगा।

मैं आपका आभारी हूँ कि आपने बड़े धैर्य से मेरी बातें सुनीं। मैं जानता हूँ कि मैंने यहाँ पर केवल ऐसी बातों को दुहराया है जिन्हें आप सब लोग जानते हैं और जिन पर आप प्रतिदिन व्यवहार करते हैं या जिन्हें आप व्यक्तिगत रूप से अथवा अपने व्यापारिक संगठनों के ज़रिये पूरा करने का इरादा रखते हैं।

पुस्तकों की दुकानों की भूमिका और कर्तव्य

कृष्णचन्द्र बेरी

मैं यूनेस्को के तत्त्वावधान में अनुष्ठित सेमीनार के आयोजक पब्लिकेशन डिवीज़न तथा संचालक श्री सदानन्द जी भटकल का आभारी हूँ जो उन्होंने आप-जैसे अनुभवी पुस्तक-विक्रेताओं के बीच व्याख्यान देने के लिए मुझे आमन्त्रित किया। मैं आपके समक्ष आज जो कुछ भी कहने जा रहा हूँ, कुछ अपवादों को छोड़कर, भारत में पुस्तकों की दुकानों की यह वास्तविक चित्रकथा है। यह चित्र-कथा हमारे देश में पुस्तक-व्यवसाय में लगे साधारण विक्रेता की कहानी है। कतिपय इने-गिने, हज़ारों में एक पर, भले ही यह कहानी लागू न हो, परन्तु वास्तविकता और मेरे आज के व्याख्यान में आप बहुत-कुछ साम्य पाएँगे। इसके पूर्व कि मैं आपसे कुछ कहूँ, मैं यह आवश्यक समझता हूँ कि पुस्तकों की भूमिका के सम्बन्ध में आपको कुछ बता दिया जाए। पुस्तकों की वह भूमिका, जब कि उन्हें आध्यात्म्य, शिक्षा और संस्कृति का एक केन्द्र माना जाता था, समाप्त हो चुकी है। इसका कारण आज के विज्ञान के युग में रेडियो, टेलीविज़न और चलचित्रों का आविष्कार है। निश्चय ही इन तीन वैज्ञानिक खोजों ने पुस्तकों की भूमिका का महत्त्व बहुत-कुछ कम कर दिया है, और यदि एकतरफा हम इनके उपयोग की ओर झुकें तो इसका परिणाम भयावह है ही।

१९१४ के पूर्व परीलोक की कथाओं वाले युग में कठिन-से-कठिन विषयों की पुस्तकों के पाठक भी खोजने में दिक्कत नहीं होती थी, परन्तु आज के युग में जबकि सामाजिक व्यवस्था में आमूल परिवर्तन हो रहे हैं और विश्व का झुकाव आर्थिक क्रान्तियों की ओर है, स्थिति ऐसी उत्पन्न हो रही है कि लोग पुस्तकों की भूमिका का महत्त्व भूलते जा रहे हैं। आप देखेंगे कि दुनिया के कुछ देशों को छोड़कर प्रायः सभी देशों में एक छोटा-सा वर्ग तो थोड़ी सुविधाओं का उपयोग कर पा रहा है, परन्तु सामान्य जनता के नाम से सम्बोधित वर्ग आर्थिक कष्टों से बुरी तरह त्रस्त है। इसीलिए आर्थिक सन्तुलनों के कारण समृद्ध और असमृद्ध दोनों वर्गों के बीच एक ऐसा वर्ग-युद्ध चल रहा है जिसका लक्ष्य आध्यात्मिक न होकर भौतिक है। परन्तु पुस्तकों की भूमिका तो आध्यात्मिक चिन्तन की भूमिका है और लोग इस युग में औषधियों, पैट्रोल, सौंदर्य-प्रसाधनों और भोजन की वस्तुओं की बात पहले सोचते हैं। पैट्रोल से मेरा आशय है सवारीगाड़ियाँ और औष-धियों से ऐसी औषधियाँ जो मानव को चमत्कारिक ढंग से थोड़े समय के लिए आरोग्य कर देती हैं। सौंदर्य-प्रसाधनों को आप समझते ही हैं—पाउडर, लिपस्टिक, स्नो-क्रीम आदि। खाद्य-सामग्री की व्याख्या तो सर्वविदित ही है। पुस्तकों का महत्त्व उपरोक्त चीज़ों की तुलना में कम हो गया है, इसका मूल कारण जीवन-संगीत के परिवर्तन में है और यह नया संगीत ऐसा है जिससे भय हो रहा है कि आदमी एकान्त चिन्तन से वंचित हो जाएगा और परिणाम यह होगा कि उसकी चिन्तन-शक्ति का विकास नहीं हो सकेगा जो कि पूर्व युग के मानव-मनीषियों को सहज-प्राप्य थी। इन तथ्यों के बावजूद आज के युग के मानव की असफलताओं को हमें इतनी गम्भीरता से नहीं सोचना होगा, यदि अपना कर्तव्याकर्तव्य स्थिर करना है। इस युग की आवश्यकताएँ रेडियो, टेलीविज़न आदि की चहल-पहल कृत्रिम जीवन के परिचायक हैं, इससे प्राकृतिक आनन्द का कोई सम्बन्ध नहीं है। प्राकृतिक आनन्द के बिना मनुष्य जीवित नहीं रह सकता। कृत्रिम आनन्द देने वाली वस्तुएँ थोड़े समय के लिए दिल ज़रूर बहला देती हैं, परन्तु प्रकृति-प्रदत्त चिन्तन और पठन का आनन्द मानव को मानसिक शान्ति दे सकता है और वही सत्य है

और शाश्वत भी। एक सामान्य-सा उदाहरण लीजिए—बिजली की रोशनी में निश्चय ही बहुत से ग्रन्थ लिखे गए हैं और चिन्तन भी हुए हैं, परन्तु उनकी तुलना उन कृतियों और चिन्तन से नहीं है जो दीये की रोशनी में लिखे और किये गए हैं। प्रकृति का चरम आनन्द मानव तब तक नहीं पा सकता जब तक कि उसके पवित्र वातावरण में पढ़े-लिखे और चिन्तन न करे। कोई भी व्यक्ति इन तथ्यों को अस्वीकार नहीं कर सकता। बदले हुए इस युग में भी मानव को चिन्तन और मनन की ओर यदि कोई वस्तु आकृष्ट कर सकती है तो वह है पुस्तक, न कि रेडियो, टेलीविजन और अन्य कृत्रिम उपादान।

जब पुस्तकों की भूमिका इतनी महत्त्वपूर्ण और व्यापक है, तब यह सोचने की आवश्यकता है कि पुस्तकों की दुकान की भूमिका का क्या महत्त्व है। मेरा अपना मत है कि जितना महत्त्व किसी बड़े-से-बड़े शिक्षा-संस्थान का शिक्षा और संस्कृत के क्षेत्र में है उससे कम महत्त्व पुस्तकों की दुकान का नहीं है। ये पुस्तक-संस्थान देश की संस्कृति के पवित्रतम प्रतिष्ठान हैं। यदि पुस्तक-व्यवसाय में लगे हुए लोग अपनी इस महत्ता को दृष्टिगत रख सकें तो देश में शिक्षा और संस्कृति के प्रचार-प्रसार में उनके द्वारा काफ़ी योग मिल सकता है। दूसरे शब्दों में, यह भी कहा जा सकता है कि पुस्तकों की दुकानें व्यवसाय के कोरे केन्द्र नहीं हैं वरन् समाज-सेवा की पीठिकाएँ हैं। पिछले दिनों अखिल भारतीय हिन्दी-प्रकाशक संघ के अपने अध्यक्षीय भाषण में मैंने कहा था कि जो लोग पुस्तक-विक्रय व प्रकाशन के क्षेत्र में पदार्पण करें वे आर्थिक दृष्टि से कदापि इस पुनीत व्यवसाय में न आयें, वरन् उनका ध्येय समाज-सेवा भी हो। हमारे देश में पुस्तकों की दुकानें स्थानीय जनजीवन का प्रतिविम्ब हैं। आप किसी भी पुस्तक की दुकान में जाकर आसपास के रहने वालों की अभिरुचि का पता लगा सकते हैं। आपको मालूम हो सकता है कि वहाँ किस तरह के पाठक हैं और आसपास में शिक्षा के प्रति लोगों का क्या सम्मान है। राजनीति के इस युग में निश्चय ही पुस्तकों की दुकानों का महत्त्व उतना नहीं है, जितना कि किसी राजनीतिक संस्थान का, परन्तु आने वाले देश के सांस्कृतिक उत्थान के युग में प्रत्येक पुस्तक की दुकान एक संस्था का स्वरूप ले लेगी, इसमें मुझे रच-मात्र भी सन्देह नहीं है। स्वतन्त्रता-पूर्व के पिछले वर्षों में पुस्तक का व्यवसाय करने वाले लोगों की सामाजिक प्रतिष्ठा नहीं के बराबर थी, परन्तु अब यह बात नहीं रह गई है और इस व्यवसाय के प्रति लोगों की अच्छी आस्था हो चुकी है। ऐसी परिस्थिति में पुस्तकों की दुकान करने वाले लोगों को सुशिक्षित एवं सुसंस्कृत बनना होगा और सुन्दर वैज्ञानिक तरीके सीखने और अपनाने होंगे। इसके पूर्व कि मैं आपको यह बताऊँ कि पुस्तक की दुकान कैसी होनी चाहिए, यह बताना आवश्यक है कि हमारे देश में कितनी तरह की पुस्तकों की दुकानें हैं। साधारण तौर पर इनका वर्गीकरण इस प्रकार है—

(१) पाठ्य-पुस्तक-विक्रेता।
(२) जन-साहित्य-विक्रेता।
(३) साहित्यिक पुस्तक-विक्रेता।
(४) धार्मिक पुस्तक-संस्थान।
(५) प्रचार साहित्य-विक्रेता।

मेरा कुछ ऐसा सौभाग्य रहा है कि प्रचार-साहित्य को छोड़कर शेष सभी साहित्य के बेचने की कला और पद्धतियों को थोड़ा-बहुत समझने-बूझने का अवसर मुझे अपने ३१ वर्ष के कार्यकाल में प्राप्त हुआ है। विभिन्न तरह की दुकानों की कार्य-पद्धति का विश्लेषण करने के पूर्व कुछ साधारण-सी बातें हमें सोच लेनी होंगी, जिनमें मुख्य निम्न हैं—

(१) पुस्तक-विक्रेता को दुकान में मौजूद पुस्तकों के विषयों की जानकारी हो।
(२) आगन्तुक ग्राहक का विनयपूर्वक स्वागत किया जाए ताकि उसे यह अनुभव हो कि वह एक सांस्कृतिक संस्थान के सम्पर्क में आया है और पुस्तकों की दुकान में आने का महत्त्व वह समझ सके।
(३) दुकानदार को ग्राहक की स्थानीय भाषा का ज्ञान हो।
(४) दुकान इस ढंग से सजी हो कि सर्वसाधारण का ध्यान स्वतः प्रवेश करने को बरबस उत्सुक हो उठे।

(५) पुस्तक-विक्रेता साफ़-सुथरे परिधान पहने हो।
(६) यथासम्भव ग्राहकों की जिज्ञासा-पूर्ति की जाए।
(७) ग्राहकों की सुविधा-असुविधा की ओर ध्यान दिया जाए।
(८) मोल-भाव की पद्धति दुकान में न हो।
(९) पत्राचार पर समुचित ध्यान दिया जाए।
(१०) नये लेखकों की कृतियों का प्रचार किया जाए।

उपरोक्त दस तथ्यों को सामने रखकर मैं आपके समक्ष अब पुस्तकों की पाँचों वर्गों की दुकानों का विश्लेषण करूँगा, जिससे यह स्पष्ट हो जाएगा कि हमारा कर्तव्या-कर्तव्य क्या है।

पाठ्य-पुस्तकों की दुकान

आज देश में पठन-रुचि भले ही उस रफ्तार से नहीं बढ़ रही है जिस तरह से उसे बढ़ना चाहिए, परन्तु यह निश्चय है कि प्रत्येक माँ-बाप अपने बच्चों को विद्यालयों में पढ़ने को भेजने का दायित्व समझते हैं। हमारी सरकारें भी सचेष्ट हैं कि देश में अधिकाधिक विद्यालय खुलें और शिक्षा का स्तर ऊँचा हो। फलत: पाठ्य-पुस्तकों की दुकानें पुस्तकों की माँग के बढ़ जाने के कारण बहुत अधिक संख्या में खुलती जा रही हैं। जो दस बातें मैंने पीछे कहीं हैं वे अभी देश में पाठ्य-पुस्तकों की दुकानों में नहीं के बराबर दिखाई देती हैं। विषयों की जानकारी का जहाँ तक प्रश्न है, इनमें से अधिकांश दुकानों में अनपढ़ लोग काम करते हैं। आप उनसे पूछें, भाई जूलॉजी पर कोई पुस्तक है तो जूलॉजी शब्द न समझने के कारण जियालॉजी की पुस्तक दे देंगे। उनसे यदि प्रसिद्ध लेखकों के नाम पूछिए तो हजरत जानते ही नहीं। आपको भारत के इतिहास पर प्रामाणिक और अधिकारिक ग्रन्थ चाहिए तो कभी-कभी अनजान पुस्तक-विक्रेता आपको नोट की पुस्तक दिखा देंगे। ऐसी कितनी कहानियाँ हैं जिन्हें कि आपके सामने उपस्थित कर सकता हूँ। आगन्तुक ग्राहकों का स्वागत ये पुस्तक-विक्रेता इतना अच्छा करते हैं कि मैं बयान नहीं कर सकता। रूखी जबान, कड़वी भाषा का प्रयोग आये-दिन देख लीजिए। पुस्तकों की बाज़ार में कमी होने पर चिड़चिड़ाकर बोलना तो इनके लिए साधारण-सी बात है। आप सोचिए कि किसी बालक या किसी अभिभावक के पुस्तकों की दुकान पर स्वागत के प्रति उसकी क्या धारणा होगी। स्थानीय भाषा का ज्ञान तो अवश्य होगा ही, परन्तु यह भी अत्यावश्यक है कि वे स्थानीय भाषा के अतिरिक्त अंग्रेज़ी और हिन्दी भी जानें। यदि सिन्धी भाई आ जाएँ, बंगाली भाई आ जाएँ या मराठी भाई आ जाएँ और पाठ्य-पुस्तक-विक्रेता उनकी भाषा में दो मधुर शब्द कहें, जिसकी कि आशा कम है, तो कमाल हो जाए। दुकानों की सजावट पर ध्यान दीजिए तो आप देखेंगे कि पुस्तकें ऊबड़-खाबड़ ढंग से लगाई गई हैं। मोदी की दुकान देख लीजिए, एक-जैसी दशा है। परन्तु यह चीज ग्राहकों को आकृष्ट करने के मार्ग में रुकावट डालती है और अधिक दिन तक यह पद्धति चालू नहीं रह सकती। साफ़-सुथरे परिधान की बात जब आती है तो क्या कहा जाए! दुकान के मालिक साहब भले ही साफ़-सुथरे परिधान पहने हों, परन्तु कम वेतन-प्राप्त कर्मचारी फटे और मैले कपड़ों में दिखाई देते हैं। ग्राहकों की जिज्ञासा-पूर्ति के लिए जब इन पाठ्य-पुस्तकों के विक्रेताओं की ओर नज़र उठाएँ तो अधिकांश दुकानदार ऐसे मिलेंगे जो जवाब तक नहीं देते, जिज्ञासा-पूर्ति की बात दर-किनारे है। पुस्तक का संस्करण समाप्त है और कब निकलेगा, यह ग्राहकों को प्रेम से बताना इनका कर्तव्य है यह ये नहीं मानते। पाठ्य-पुस्तकों के ग्राहक प्राय: कोमल बालक-बालिकाएँ हैं। इनसे प्रेमपूर्ण व्यवहार किया जाए और इनकी जिज्ञासाओं की पूर्ति की जाए, ताकि इनका मन विकसित हो और ये आपकी दुकान में आएँ। इससे आपकी बिक्री बढ़ेगी और आपके संस्थान का सच्चा महत्त्व भी कूता जाएगा, जो ग्राहक की सुविधा और असुविधा के प्रश्न पर ग्राहकों की पाठ्य-पुस्तक-विक्रेताओं के प्रति बड़ी शिकायतें हैं। कभी-कभी देखा जाता है कि कुछ पाठ्य-पुस्तक-विक्रेता (सब नहीं) पुस्तकों की ब्लैक मार्केटिंग शुरू कर देते हैं। पुस्तकों के काम में कालाबाजारी की कल्पना करना कितना निन्दनीय है! कोई भी दण्ड उसके समकक्ष नहीं दिखाई देता। संस्कृति और शिक्षा के पुण्य प्रचारक पुस्तक-विक्रेता भी ऐसी घृणित और निन्दनीय प्रवृत्ति को अपना सकते हैं, कोई समझ नहीं सकता। जो लोग शिक्षा के प्रचार-प्रसार का कार्य करते हैं, वे ही यदि

नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी के प्रकाशन

अपनी प्रकाशन योजना के अन्तर्गत सभा द्वारा विभिन्न मालाएँ प्रकाशित हो रही हैं। उनमें मनोरंजन पुस्तकमाला में प्रकाशित पुस्तकों की नामावली नीचे दी जा रही है। इस माला में विभिन्न विषयों पर सरल, सुबोध और शिक्षाप्रद पुस्तकों का प्रकाशन होता है। उनकी नामावली इस प्रकार है—

१. **आदर्श जीवन** ले० रामचन्द्र शुक्ल मू० २.००
२. **आत्मोद्धार** ले० रामचन्द्र वर्मा मू० २.००
३. **गुरु गोविन्दसिंह** ले० श्री वेणीप्रसाद मू० २.००
४. **आदर्श हिन्दू** भाग १ ले० श्री मेहता लज्जाराम शर्मा मू० २.००
५. **आदर्श हिन्दू** भाग २ ले० श्री मेहता लज्जाराम शर्मा मू० २.००
६. **आदर्श हिन्दू** भाग ३ ले० श्री मेहता लज्जाराम शर्मा मू० २.००
७. **राणा जंगबहादुर** ले० जगन्मोहन वर्मा मू० २.००
८. **भीष्म पितामह** ले० श्री द्वारकाप्रसाद चतु० २.००
९. **जीवन के आनन्द** ले० श्री गणपति जानकीराम दूबे मू० २.००
१० **भौतिक विज्ञान** ले० श्री सम्पूर्णानंद मू० २.००
११. **लाल चीन** ले० श्री ब्रजनंदन सहाय मू० २.००
१२. **कबीर वचनावली** संपा० श्री अयोध्या सिंह उपाध्याय मू० २.००
१३. **महादेव गोविन्द रानाडे** ले० श्री रामनारायण मिश्र मू० २.००
१४. **बुद्धदेव** ले० श्री जगन्मोहन वर्मा मू० २.००
१५. **मितव्यय** ले० श्री रामचन्द्र वर्मा मू० २.००
१६. **सिक्खों का उत्थान और पतन** ले० श्री नंदकुमार देव शर्मा मू० २.००
१७. **वीरमणि** ले० श्री मिश्रबन्धु मू० २.००
१८. **नेपोलियन बोनापार्ट** ले० श्री राधामोहन गोकुलजी मू० २.००
१९. **शासन पद्धति** ले० श्री प्राणनाथ विद्यालंकार मू० २.००
२०. **हिन्दुस्तान** भाग १ ले० श्री दयाचन्द्र गोयलीय मू० २.००
२१. **हिन्दुस्तान** भाग २ ले० श्री दयाचन्द्र गोयलीय मू० २.००
२२ **महर्षि सुकरात** ले० वेणीप्रसाद मू० २.००
२३. **ज्योतिर्विनोद** ले० श्री सम्पूर्णानंद मू० २.००
२४. **आत्मशिक्षण** ले० श्री मिश्रबन्धु मू० २.००
२५. **सुन्दरसार** सं० श्री पुरोहित हरिनारायण २.००
२६. **जर्मनी का विकास** भाग १ ले० श्री ठाकुर सूर्यकुमार वर्मा मू० २.००
२७. **जर्मनी का विकास** भाग २ ले० श्री ठाकुर सूर्यकुमार वर्मा मू० २.००
२८. **कृषि कौमुदी** ले० श्री दुर्गाप्रसादसिंह मू० २.००
२९. **कर्तव्यशास्त्र** ले० गुलाबराय मू० २.००
३०. **मुसलमानी राज्य का इतिहास** भाग १ ले० श्री मन्नन द्विवेदी मू० २.००
३१. **मुसलमानी राज्य का इतिहास** भाग २ ले० श्री मन्नन द्विवेदी मू० २.००
३२. **रणजीत सिंह** ले० श्री वेणीप्रसाद मू० २.००
३३. **विश्वप्रपंच** भाग १ ले० रामचन्द्र शुक्ल २.००
३४. **विश्वप्रपंच** भाग २ ,, ,, ,, २.००
३५. **अहिल्याबाई** ले० श्री गोविन्दराम केशवराम जोशी मू० २.००
३६. **रामचन्द्रिका** सं० डा० पीताम्बरदत्त बडथ्वाल मू० २.००
३७. **ऐतिहासिक कहानियाँ** ले० द्वारका प्रसाद चतुर्वेदी मू० २.००
३८. **हिन्दी निबंधमाला** भाग १ सं० श्री श्यामसुन्दरदास मू० २.००
३९. **हिन्दी निबन्धमाला** भाग २ सं० श्री श्यामसुन्दरदास मू० २.००
४०. **सूरसुधा** सं० श्री मिश्रबन्धु मू० २.००
४१. **कर्तव्य** ले० श्री रामचन्द्र वर्मा मू० २.००
४२. **संक्षिप्त रामस्वयंबर** सं० श्री ब्रजरत्नदास २.००
४३. **शिशुपालन** ले० मुकुन्दस्वरूप वर्मा मू० २.००
४४. **शाही दृश्य** ले० माखनलाल गुप्त मू० २.००
४५. **पुरुषार्थ** ले० श्री जगन्मोहन वर्मा मू० २.००
४६. **तर्कशास्त्र** भाग १ ले० गुलाबराय मू० २.००
४७. ,, ,, २ ,, ,, मू० २.००
४८. ,, ,, ३ ,, ,, मू० २.००
४९. **प्राचीन आर्य वीरता** ले० श्री द्वारका प्रसाद चतुर्वेदी मू० २.००
५०. **रोम का इतिहास** ले० डा० प्राणनाथ विद्यालंकार मू० २.००
५१. **रसखान और घनानंद** सं० श्री अमीरसिंह २.००
५२. **मानसरोवर और कैलाश** अनु० श्री रामचन्द्र वर्मा मू० २.००
५३. **बालमनोविज्ञान** ले० श्री लालजीराम शुक्ल २.००
५४. **नई कहानियाँ** सं० रायकृष्णदास मू० २.००
५५. **भूदान का आर्थिक आधार** ले० श्री बाबूराम मिश्र मू० ३.२५
५६.-५७. **राष्ट्रभाषा पर विचार** ले० श्री चन्द्रबली पांडेय मू० ४.००
५८-६१. **अस्सी कहानियाँ** ले० श्री विनोदशंकर व्यास मू० ८.००

कालाबाजारी करें तो वह शिक्षा कितनी लाभप्रद और देश के लिए हितकर हो सकती है, यह हमें सोचना होगा। लिहाजा इस घृणित आचरण से मुँह मोड़ना होगा। एक सामान्य-सी कहानी है मेरी आँखों के सामने की। एक ग़रीब बाप अपनी बच्ची को लेकर किसी दुकान पर पुस्तक लेने आता है और उससे कहा जाता है कि कुञ्जी भी खरीद लो। ग़रीब बाप के पास पैसे नहीं हैं। बेटी ललचाए नेत्रों से पुस्तक की ओर देखती है। लालची दुकानदार को न तो बालिका के उत्कण्ठापूर्ण नेत्र दिखाई देते हैं और न बाप के आँखों में वात्सल्य से भरे हुए आँसू। मेरी आँखें भर आती हैं और मुझे कहना पड़ता है कि भाई मुझसे पैसे ले लो और नोट की पुस्तक इसे अविलम्ब दे दो। हजरत शरमा जाते हैं और अपने कुकृत्य पर उन्हें झेंप-सी आ जाती है। कहने को तो बहुत-कुछ है, परन्तु मैं पाठ्य-पुस्तक-विक्रेताओं से निवेदन करूँगा कि वे पुस्तकों की दुकानों पर लागू होने वाली ऊपर कही दस बातों पर अमल करें। इसी पर उनका उज्ज्वल भविष्य निर्भर है। कुछ ऐसे दुकानदार हैं जो नकली पुस्तकें बेचते हैं जिसे अंग्रेज़ी में पाइरेसी कहते हैं। दुकानदार इसे डालडा शब्द से भी सम्बोधित करते हैं। पुस्तकों की दुकान करने वाले यदि चोरी को अपना पेशा बना सकते हैं तो मैं नहीं सोच सकता कि सारे देश का ढाँचा क्या होगा? नकली घी बेचने वाले, नकली तेल बेचने वाले, नकली दवाई बेचने वाले तो समाज के शत्रु गिने ही जाते हैं, परन्तु इन नकली किताब बेचने वालों को भी हमें समाज का शत्रु समझना होगा, क्योंकि पुस्तकों की दुकान को देश की शिक्षा, संस्कृति और आचरण-संहिता का मूल उद्गम-स्थान समझा जाता है।

जन-साहित्य-विक्रेता

४० करोड़ आबादी वाले भारत देश में सदियों की गुलामी और स्वतन्त्रता के १४ वर्षों के बाद आज भी करोड़ों की संख्या में ऐसे लोग उपस्थित हैं जो कम पढ़े-लिखे हैं या पढ़े ही नहीं हैं, अथवा इतने पढ़े हुए हैं कि सही दस्तखत कर सकें। परन्तु उनके बीच भी एक ऐसी चीज है जो उन्हें पुस्तकों की ओर आकर्षित करती है। पढ़े-लिखे लोगों के वर्ग से अधिक इस अशिक्षित अथवा अर्धशिक्षित वर्ग में पढ़ने-लिखने का शौक पाया जाता है। ऐसा वर्ग देश में प्रचलित लोक-कथाएं, पौराणिक कथाएँ, धार्मिक कृतियाँ, रामायण, महाभारत, बाइबिल, कुरान आदि पढ़ता है। लिहाजा ऐसे ग्राहकों के लिए समूचे देश में हजारों की संख्या में जन-साहित्य बेचने वालों की दुकानें हैं। सम्भवतः आपको यह पता नहीं है कि जन-साहित्य के ये पुस्तक-विक्रेता किसी साहित्यिक पाठ्य-पुस्तक, प्रचार साहित्य और धार्मिक पुस्तकों के विक्रेताओं से अधिक धनी हैं, क्योंकि इनके ग्राहकों की संख्या बहुत काफ़ी है। जहाँ तक विषय की जानकारी का प्रश्न है, इस तरह के पुस्तक-विक्रेताओं के लिए अपने ग्राहक के ज्ञान को देखते हुए आवश्यक नहीं है कि विषय-सम्बन्धी बहुत अधिक ज्ञान उन्हें हो। ग्राहकों का स्वागत ये लोग अच्छी तरह करते हैं। स्थानीय भाषा का ज्ञान भी इन्हें रहता है। यदि बिहार का जन-साहित्य-विक्रेता है तो वहाँ की भोजपुरी का वह मर्मज्ञ है और रायपुर (मध्य प्रदेश) का जन-साहित्य का विक्रेता है तो वह छत्तीसगढ़ी बोली जानता है। सजावट का प्रश्न इन दुकानों में उठता ही नहीं; जैसे अनपढ़ ग्राहक, वैसे चपाट

विक्रेता। ये पुस्तक-विक्रेता साफ-सुथरे परिधान शायद ही कभी रखते हों।

ग्राहकों की जिज्ञासा-पूर्ति ये कर देते हैं। यदि किसी ने पूछा कि लोरिकायन पर कोई पुस्तक निकली है और कहाँ से प्रकाशित हुई है, तो ये बता देते हैं। ग्राहकों की सुविधा-असुविधा का इन्हें ध्यान रखने की जरूरत नहीं है, क्योंकि इस तरह के पुस्तक-विक्रेता स्वतः अनपढ़ होने के कारण आज के वैज्ञानिक युग के वातावरण से बिलकुल ही अनभिज्ञ हैं। बदली हुई परिस्थितियों में ये अपने को ढाल नहीं सकते। ऐसी स्थिति में मुझे संशय होता है कि इन्हीं की तरह इनके बाल-बच्चे भी यदि इसी पद्धति को अपनाएँगे तो वे आधुनिक युग में कमा-खा न पाएँगे। मोल-भाव तो इस तरह की दुकानों में ज्यादा है, संभवतः ग्राहक भी ऐसे ही आते हैं। जन-साहित्य की पुस्तकों पर दाम छपा रहता है दस रुपया तो मोल-भाव करने पर ग्राहक तीन रुपये में ही उसे प्राप्त कर लेता है। ग्राहकों की बात तो छोड़िए, ये पुस्तक-विक्रेता स्वयं प्रकाशकों को भी मोल-भावकर परेशान करते हैं। मैं आपको आप-बीती एक कहानी इसी सम्बन्ध में सुनाता हूँ। एक व्यापारी भाई बिहार के गाँव से पधारे। आते ही उन्होंने कहा कि भइया कुछ खियावा, अर्थात् कुछ खिलाइए। एक रुपये की पूरी उनके लिए आई, उन्होंने भोजन किया। इसके बाद पुस्तकें छाँटीं। व्यापाराना मूल्य पर उन्होंने पुस्तकें खरीदीं। फिर उन्होंने कहा कि कुछ एक्सट्रा कमीशन दें। एक्सट्रा कमीशन एक आना रुपया हमें छोड़ना पड़ा। १० रुपये की कुल किताबें ली थीं, दस आने बाद करके ९ रु० ६ आ० का सामान हुआ। अभी तक मोल-भाव का अन्त नहीं हुआ था। उन्होंने चलते-चलते कहा कि मेले में दुकान लगानी है, आप हमें एक टाट दे दीजिए। सोचा कि अपने सहयोगी हैं टाट माँगते हैं दे देना चाहिए। टाट की जब पूर्ति हुई तो उन्होंने कहा कि एक बात और कहे के हौ। मैंने पूछा क्या बात है। हमार भाई बदे एक रामायण गुटका दे दिहल जाइ। संकोच में एक रामायण गुटका भी दे देना पड़ा। जन-साहित्य के कुछ पुस्तक-विक्रेता आजकल अश्लील साहित्य के विक्रय-केन्द्र बन रहे हैं। हमें इन पुस्तक-विक्रेताओं तक अपनी यह आवाज पहुँचानी है कि मुल्क की आजादी के बाद और विज्ञान की चरम सीमा पर पहुँचे हुए इस युग में पुस्तकों की महत्ता को वे समझें और साथ ही अपने व्यवसाय के महत्त्व को भी। अनपढ़ लोगों में पुस्तक बेचने वाले इन पुस्तक-विक्रेताओं पर देश के चरित्र और संस्कृति के निर्माण का दायित्व भी है। अश्लील साहित्य बेचना और व्यभिचार बेचना एक बराबर है। जब ये पुस्तक-विक्रेता अश्लील साहित्य बेचेंगे और उन्हें इस कुत्सित कार्य से रोका नहीं जाएगा तो आने वाली सन्तति के चरित्र-भ्रष्ट होने का कलंक उन पर अवश्य लगेगा। कई लोग तर्क देते हैं कि यह यथार्थवाद है, परन्तु यथार्थवाद के नाम पर अश्लील साहित्य बेचने की कुचेष्टा करना मेरी राय में अनुचित है। पुस्तकों के दुकानदारों को अपना महत्त्व समझना होगा। जन-साहित्य के ये पुस्तक-विक्रेता पढ़े-लिखे प्रकाशकों की संस्था द्वारा प्रशिक्षित हो सकें तो निश्चय है कि देश में शिक्षा का प्रचार-प्रसार जितना ये कर सकते हैं उतना अन्य कोई वर्ग (पुस्तक-विक्रेता) नहीं। इस वर्ग के पुस्तक-विक्रेता का सर्वसाधारण जनता से सम्पर्क है इनके सहयोग से

सामान्य जनता तक सत्साहित्य पहुँचाया जा सकता है।

साहित्यिक पुस्तक-संस्थान

देश में आज साहित्यिक पुस्तकों का प्रकाशन और विक्रय की ओर ध्यान देने की बात कही जा रही है। कुछ प्रकाशक हमारे सामने आये हैं, जिन्होंने लाभ की परवाह न करते हुए भी सत्साहित्य का प्रकाशन किया है। साथ ही देश में पुस्तक-विक्रेताओं का एक ऐसा वर्ग आ रहा है, हालाँकि उसकी संख्या बहुत अल्प है, जो सत्साहित्य की बिक्री की ओर ध्यान दे रहा है। देश की शिक्षा और संस्कृति के निर्माण में पुस्तक-विक्रेताओं के इस वर्ग की कहानी आदर्श रूप में गिनी जाएगी। साहित्यिक पुस्तकों की बिक्री करके कोई पुस्तक-विक्रेता मुश्किल से एक साधारण परिवार की जीविका पाल ले, तो बहुत बड़ी बात है। ऐसी स्थिति में इस तरह के वर्ग को यदि हम समाजसेवी की संज्ञा दें तो अत्युक्ति नहीं होगी। इस वर्ग को देश में पुस्तकों की दुकानों का आदर्श (मॉडल) बनाना ही पड़ेगा। साथ ही इन्हें पुस्तकों की दुकानों की भूमिका और कर्तव्य की वास्तविकता चरितार्थ करनी होगी। ऐसी दुकानों में पढ़े-लिखे लोग ही कार्य करें, चाहे वे मालिक हों या कर्मचारी। उन्हें इतना ज्ञान होना चाहिए कि यदि कोई ग्राहक आता है और पूछता है कि 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' कितने लेखकों द्वारा लिखा गया है तो वे उसकी सही-सही सूचना ग्राहकों को दे सकें। यदि कोई शोध-प्रबन्ध लिखने वाला विद्यार्थी आता है और पूछता है कि अमुक विषय पर पुस्तकें दीजिए तो उसको पुस्तक-सम्बन्धी सूचना मिलनी चाहिए। इसके अतिरिक्त पुस्तक-विक्रेता को विनयी होना चाहिए। विनय आपके पास है यही बहुत बड़ी बात नहीं है, उसकी वास्तविकता तब प्रमाणित होगी, जब दुकान में आने वाले ग्राहक उसका अनुभव करें। उसी दशा में साहित्यिक दुकान के पुस्तक-विक्रेता का कार्य सफल समझा जाएगा। स्थानीय भाषा का ज्ञान विक्रेता को होना ही चाहिए। साथ ही इस तरह की दुकानों में काम करने वाले पुस्तक-विक्रेता दो-चार भाषाओं को जानते हों तो ज्यादा अच्छा है। मोल-भाव की पद्धति ऐसी दुकानों में हरगिज नहीं होनी चाहिए, क्योंकि पढ़े-लिखे लोग यहाँ आते हैं। इस सम्बन्ध में आपको अखिल भारतीय हिन्दी-प्रकाशक संघ के नेट बुक एग्रीमेण्ट के बारे में दो शब्द कह दूँ। संघ ने सारे देश में हिन्दी-पुस्तकों की बिक्री में एक नियम लागू कर दिया है। कोई भी ग्राहक समूचे भारत में हिन्दी-पुस्तक कहीं से खरीदे, उसे एक ही मूल्य पर पुस्तक मिलेगी। यही नेट बुक एग्रीमेण्ट समस्त भारतीय भाषाओं की बिक्री पर लागू होना चाहिए, कम-से-कम साहित्यिक पुस्तकों पर अवश्य ही। साहित्यिक पुस्तकों की दुकान की सजावट इस तरह की होनी चाहिए कि प्रवेश करते ही पाठक को यह अनुभव हो कि वह किसी सांस्कृतिक स्थान पर आ गया है और उसकी आत्मा में ऐसा भाव उदित हो, जिससे उसका झुकाव सत्साहित्य की ओर बरबस हो जाए। दुकान में पुस्तकों की सजावट से पढ़ाई की तरफ झुकाव कैसे होगा, इसका मैं आपको सामान्य उदाहरण देता हूँ। रेकों पर पुस्तकें सजा देने से ही सजावट नहीं होगी। उदाहरण-स्वरूप दो रेक सामने रखिए। एक पर पुस्तकें साधारण तौर पर लगाइए और दूसरे पर कवरों के रंगों को दृष्टिगत रखकर इस तरह सजाइए कि मालूम पड़े कि रंग-बिरंगे फूलों का गुलदस्ता बनाया गया है। यह ठीक उसी तरह होगा जिस तरह केवल किसी एक तरह के फूल का गुलदस्ता और दूसरा पत्तियों तथा विभिन्न प्रकार के फूलों के रंग-क्रम से सजा गुलदस्ता। दुकान की सजावट का ग्राहकों के मन पर प्रभाव पड़ता है और कभी-कभी केवल उसी आकर्षण के कारण उन्हें पुस्तकें खरीदनी पड़ती हैं। बम्बई में अभी हाल में नवनीत प्रकाशन ने एक एयर कण्डीशन सजी-धजी पुस्तकों की दुकान खोली है। स्वाभाविक है जब ग्राहक वहाँ जायेंगे, उसकी सजावट देखेंगे, और उसमें आराम देखेंगे तो उनका ध्यान अनायास पुस्तकों की ओर जाएगा ही और वे पुस्तकें खरीदेंगे और पढ़ेंगे। दुकानों में जब सफाई और सजावट पर इतना ध्यान दिया जाता है तो आवश्यक है कि उनमें काम करने वाले कर्मचारी और व्यवस्थापक सभी साफ-सुथरे परिधान पहनें। परिधान का भी दुकान के ग्राहकों पर प्रभाव पड़ता है। ग्राहकों की जिज्ञासा-पूर्ति की ओर सचेष्ट रहना इस तरह की दुकानों में नितान्त आवश्यक है। आपके पास ग्राहक आयेंगे और

पूछेंगे कि अमुक लेखक की कृति कहाँ से प्रकाशित हुई है, आप हमें मँगा दीजिए, तो ऐसी दशा में यदि आपके पास वह पुस्तक न भी हो तो कम-से-कम सूचना तो देनी ही चाहिए कि यह पुस्तक अमुक प्रकाशक के यहाँ से प्रकाशित हुई है, हमारे स्टाक में इस समय समाप्त है, आप वहाँ से पत्राचार करके मँगा लें या आदेश दें तो हम मँगाकर आपको भेज दें।

सत्साहित्य बेचने वाली दुकानों का बहुत बड़ा दायित्व है। प्रायः ऐसा देखा जाता है कि ऐसी पुस्तकों की दुकानों पर कुछ ग्राहक ऐसे भी आते हैं जो पुराने लेखकों की अप्राप्य पुस्तकें भी खोजते हैं। साहित्यिक कार्य करने वाले पुस्तक-विक्रेता यदि अपने कर्तव्य को समझें तो उनका यह भी दायित्व है कि वे ग्राहकों के लिए चेष्टा कर ऐसी पुस्तकें भी खोजें और हो सके तो उन्हें उपलब्ध कराएँ अथवा पुस्तक कहाँ और कैसे मिल सकती है, सूचित करें। स्वाभाविक है कि जब ग्राहक को वांछित सूचना प्राप्त होगी तो वह दुकान में पुनः आयेगा और अपनी माँग की अन्य पुस्तकें भी वहीं से खरीदेगा।

सत्साहित्य के विक्रेताओं को एक बड़ी ही महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करनी है। उन्हें पाठकों से नये प्रतिभाशाली लेखकों का परिचय कराना है। पुस्तक-विक्रेता लेखक तथा पाठक के बीच मिलने वाली एक कड़ी है। नये लेखकों को पाठकों से परिचित कराने के कार्य में पुस्तक-विक्रेता की भूमिका पाठक और लेखक से किसी भी तरह कम नहीं है। तीनों ही अपने-अपने स्थान पर साहित्य-सेवी हैं।

इस तरह की दुकानों में व्यवस्था-कुशलता पर बहुत ही ज़ोर दिया जाना चाहिए। कभी-कभी ऐसी स्थिति आती है कि इन्सान अपनी कमज़ोरियों के कारण मौके-बे-मौके बरबस ऐसी बातें बोल जाता है जो कि अशोभनीय होती हैं। पुस्तकों का काम करने वाले व्यक्ति को किसी हालत में अपनी वाणी को अमर्यादित नहीं होने देना चाहिए। हो सकता है कि ऐसे ग्राहक आयें जो आपको अकारण गालियाँ भी दे दें; ऐसे भी अवसर आ सकते हैं कि किसी प्रकाशक ने फटी पुस्तक भेज दी हो, ग्राहक ने उसे ले लिया और आकर आप पर बिगड़े; ऐसे भी अवसर आ सकते हैं कि कुछ ग्राहक उधार पुस्तकें माँगते हैं और आप न दें तो वे आप पर गुस्सा हो जाएँ; ऐसे भी अवसर आ सकते हैं कि आप किसी ग्राहक को समझा-बुझाकर पुस्तकें बेचना चाहते हों और वह न लेता हो तो आप ग्राहक पर गरम हो जाएँ। इस व्यवसाय में ये बातें गवारा नहीं की जा सकतीं और आपको हर हालत में विनयी होना ही चाहिए, क्योंकि सत्साहित्य का विक्रेता यदि विनयी नहीं हुआ तो सत्साहित्य की मर्यादा कौन समझाएगा ? आपकी मुखाकृति ऐसी होनी चाहिए कि ग्राहक बरबस प्रसन्न हो जाए और पुस्तकें खरीद ले, न कि आपका व्यवहार ऐसा हो कि वह दुबारा दुकान पर आये ही नहीं। मैं आपको एक मिसाल दूं। वर्मा के एक भारतीय धनी ज़मींदार और उनके पुत्र से मेरा साबिका पड़ा। उनका लड़का पुस्तकों का शौकीन था, परन्तु पिताजी की पुस्तकों की ओर कोई दिलचस्पी नहीं थी। मैंने पिताजी से आग्रह किया कि आदेश हो तो कुछ पुस्तकें लड़कों को दिखाऊँ और यदि वह पसन्द कर लें तो आप खरीद लीजिए। उन्होंने मेरी बातों पर कुछ ध्यान नहीं दिया। कुछ देर बाद लड़के के आग्रह पर उन्होंने अन्यमनस्क होकर मुझसे कहा कि लड़के को दिखा दीजिए, यदि वह पसन्द कर लेगा तो कुछ पुस्तकें खरीदवा दूंगा। वह इतना कहकर कहीं चले गए। मैंने लड़के को अच्छी-अच्छी किताबें दिखाकर लगभग २५ रुपये की पुस्तकें पसन्द कराईं। जब पिताजी लौटे तो मैंने कहा कि २५ रुपये की पुस्तकें लड़के ने पसन्द की हैं, उन्हें आप ले लीजिये, बिल तैयार है। भुगतान उनसे मैंने प्रत्यक्ष रूप से माँगा नहीं, परन्तु बिल तैयार है का अर्थ है कि भुगतान कीजिए। उन्होंने देखा और कहा कि ये पुस्तकें हमें नहीं लेनी हैं, ये तो कोई ज्ञान की नहीं हैं। मैंने उनसे कहा कि अमुक पुस्तक जीवन-चरित्र की है, उन्होंने कहा कि चरित्र-सम्बन्धी बातें तो हमें रामायण से मिल जाती हैं जो हमारे घर पर है। मैंने कहा कि यह पुस्तक स्त्रियोपयोगी है, तो उन्होंने कहा कि स्त्रियोपयोगी बातें तो हमें रामायण में ही मिल जाती हैं। मैंने कहा कि अमुक पुस्तक राजनीति की है, उन्होंने पुनः रामायण का हवाला देते हुए कहा कि राजनीति से तो रामायण भरी पड़ी है। मैंने फिर कहा कि यह पुस्तक विज्ञान की है तो उनका उत्तर

था कि पुष्पक विमान का विज्ञान रामायण में देख लीजिए। मैं निरुत्तर-सा हो गया। अपनी असफलता पर मुझे क्रोध-सा आ रहा था। उन वयोवृद्ध सज्जन के तर्क के सामने मैं अपने को असहाय-सा पा रहा था। मैंने सोचा कि मैं ऐसी कौनसी चीज़ बताऊँ जो रामायण में नहीं है। मैं बिलकुल खीझ-सा गया था और क्रोध के भाव मेरे चेहरे पर आ गए थे, परन्तु मैंने अपने को सम्हाला और विनय-पूर्वक कहा कि मैंने दो-तीन घण्टे तक परिश्रम करके ये पुस्तकें आपके लड़के को पसन्द कराई हैं, यदि आप दो-तीन पुस्तकें ही ले लें तो दया होगी। वयोवृद्ध कुछ पसीजे। उन्होंने कहा कि लो ये तीन रुपये और इस मूल्य की पुस्तकें लड़के को दे दो। कहने का तात्पर्य यह है कि किसी भी परिस्थिति में हमें ग्राहक पर झल्लाना नहीं चाहिए।

सत्साहित्य के विक्रेताओं को नई पुस्तकों की सूचना सर्वसाधारण को देने के लिए अपनी दुकानों के बाहर एक ऐसी तख्ती लगा रखनी चाहिए, जिसमें प्रति माह निकलने वाली नई पुस्तकों का नाम अंकित हो। पाठकों को डाक द्वारा भी नई प्रकाशित पुस्तकों की सूचना भेजते रहना चाहिए। उन्हें ऐसे पाठकों की सूची भी बनाकर रखना चाहिए जो विषय-विशेष की पुस्तकों में रुचि रखते हों। बच्चों और स्त्री-ग्राहकों के प्रति सजग रहते हुए बहुत ही भद्र व्यवहार करने की आवश्यकता है, क्योंकि यह वर्ग व्यवहार-कुशलता के प्रति बहुत ही जागरूक है। ज़रा-सी भी व्यवहार में त्रुटि आई तो ये दुकान ही छोड़ देंगे। पुस्तक-सूचियों का भी प्रणयन बड़ी कुशलता से करना चाहिए। इससे ग्राहकों को पुस्तकों के चयन में सुविधा मिलेगी। सूची में विषय-क्रम से पुस्तकों के नाम होना चाहिए। विभिन्न प्रकाशकों की सूची भी ऐसी दुकानों में संचित रहनी चाहिए, जिनसे पाठक लाभ उठा सके और आपको भी जानकारी रहे कि अमुक विषय की पुस्तक अमुक प्रकाशक के यहाँ से प्रकाशित है।

ग्राहकों को आकर्षित करने के लिए ऐसी दुकानों पर उपहार, कैलेण्डर, डायरी आदि भी भेंट की जाएँ तो उत्तम होगा। पुस्तकों का पैकिंग साफ़-सुथरे ढंग से हो तो ग्राहक प्रसन्न रहेंगे और आपकी दुकान का स्वयं प्रचार करेंगे। ग्राहकों के पत्रों का उत्तर समुचित रूप से दिया जाना चाहिए। ऐसा देखा गया है कि ग्राहक पत्र लिखते थक जाते हैं, परन्तु पुस्तक-विक्रेता के पास यदि पुस्तकें न हों तो वे पत्र का उत्तर नहीं देते। यह चीज़ कितनी गलत है, विशेष-कर सत्साहित्य विक्रेता के लिए! यदि आप किसी ग्राहक को समुचित उत्तर देते हैं तो हो सकता है कि आज नहीं तो कुछ दिन बाद उसकी ओर से आपको अन्य पुस्तकों का आदेश प्राप्त हो। सौ उत्तर के बाद आपको दस ही ग्राहक मिलें तो भी निराश होने की बात नहीं। जनता की रुचि आकृष्ट करने के लिए सत्साहित्य के विक्रेताओं को पुस्तक-प्रदर्शनियाँ, प्रतियोगिताएँ, आधुनिक तरीकों आदि का आश्रय भी लेना चाहिए।

पुस्तकों की दुकान की भूमिका और कर्तव्य के सम्बन्ध में मैंने ऊपर पुस्तकों की तीन वर्गों की दुकानों का विश्लेषण किया है। अन्य दो वर्गों के लिए मुझे विशेष नहीं कहना है, क्योंकि धार्मिक पुस्तक प्रतिष्ठान और प्रचार साहित्य संस्थान सर्वसाधारण से सम्बन्धित न होकर वर्ग-विशेष से सम्बन्धित होते हैं, उन्हें ग्राहकों के लिए विशेष परिश्रम नहीं करना पड़ता। प्रायः धर्म या सिद्धान्तों के अनुयायी ही उनके ग्राहक होते हैं। परन्तु उपरोक्त दस सूत्रों वाला फारमूला यहाँ पर भी लागू हो तो अच्छा है।

आपके समक्ष मैंने जो कुछ कहा है संक्षेप में यह मेरे अनुभव की छोटी-सी कहानी है। न तो मुझे आपकी तरह अपने प्रारम्भिक जीवन में विचार-गोष्ठियों का युग देखने को मिला था और न ही कहीं पुस्तक-व्यवसाय-व्यवस्था में प्रशिक्षण पाने का अवसर ही। मैंने ३२ वर्ष के व्यावहारिक जीवन में जो कुछ देखा और अनुभव किया है वह आपके सामने कह दिया है। मैं आपको धन्यवाद देता हूँ जो आपने मेरे इस वक्तव्य को धैर्यपूर्वक सुना।

प्रकाशकों, थोक पुस्तक-विक्रेताओं, फुटकर पुस्तक-विक्रेताओं और ग्राहकों के व्यापारिक सम्बन्ध

श्री रामलाल पुरी

मेरे निबन्ध का विषय है : "प्रकाशकों, थोक पुस्तक-विक्रेताओं, फुटकर पुस्तक-विक्रेताओं और ग्राहकों के व्यापारिक सम्बन्ध।" मैं शुरू में ही इस बात को आपके सामने मान लूँ कि मैंने बहुत संकोच और शंकाओं के साथ इस महत्त्वपूर्ण विषय पर निबन्ध पढ़ना स्वीकार किया था। इसके कई कारण थे। पहला तो यह कि यह बहुत विस्तृत विषय है और किसी विशेषज्ञ को ही इसमें हाथ लगाना चाहिए और मैं विशेषज्ञ नहीं हूँ। दूसरे, यह निबन्ध विशेषज्ञों के सामने पढ़ा जाना था, जिनमें से कुछ इस विषय के बारे में अवश्य ही मुझसे ज्यादा जानते होंगे। लेकिन चूँकि मुझे यह भार स्वीकार करने के लिए बहुत जोर दिया गया इसलिए मेरे सामने कोई दूसरा रास्ता ही नहीं था। इसी हैसियत से मैंने श्रोताओं के समय और धीरज की सीमाओं के भीतर रहकर अपनी ओर से इस विषय को पूरी तरह निभाने की चेष्टा की है। मैं आशा करता हूँ कि जिन लोगों को मेरे निबन्ध से निराशा हो वे मुझे क्षमा करेंगे।

भूमिका

किसी भी उत्पादन-व्यापार की व्यापारिक शर्तें और उसकी नीतियों का निर्धारण उस उद्योग-विशेष में पायी जाने वाली परिस्थितियों तथा आर्थिक उपकरणों से निर्धारित होता है। प्रकाशन भी एक उत्पादन-प्रक्रिया है—पुस्तकों के उत्पादन की प्रक्रिया। इसलिए अपनी व्यापारिक शर्तों की अन्दरूनी बातों को सही-सही समझने के लिए हमें पहले उन आर्थिक तत्त्वों तथा उन खतरों का अध्ययन करना चाहिए जिनका हमारी व्यापारिक नीति निर्धारित करने में बहुत बड़ा हाथ होता है। इसके लिए मैं सबसे पहले पुस्तक का परिचय दूँगा।

पुस्तक

पुस्तक की सीधी-सादी परिभाषा इस प्रकार की गई है—"कागज़ के कुछ छपे हुए पृष्ठों को जब एक साथ जिल्द में बाँध दिया जाता है तो उसे पुस्तक कहते हैं।" परन्तु उसकी परिभाषा और भी आकर्षक शब्दों में की जा सकती है। युगों से बुद्धिमान लोग पुस्तकों की प्रशंसा में बहुत अच्छी-अच्छी बातें कहते आए हैं। "जितना अधिक ज्ञान और मनोरंजन पुस्तकें प्रदान करती हैं उतना किसी दूसरी उत्पादित वस्तु से नहीं मिलता। मनुष्य ने जितना भी ज्ञान प्राप्त किया है वह सब पुस्तकों में सुरक्षित है। वे मानव-जीवन तथा मनुष्य के क्रिया-कलाप के हर पहलू का पूरा विवरण न्यूनाधिक स्थायी रूप में सुरक्षित रखती हैं।" "पुस्तकें एक अनन्त क्रम के रूप में होती हैं जो अतीत को वर्तमान और भावी पीढ़ियों के साथ जोड़ती हैं। सभ्यताएँ उत्पन्न हुईं और मिट गईं, पर पुस्तकों का अस्तित्व बाकी रहा और उन्होंने राष्ट्रों का निर्माण करने तथा अत्याचार को मिटाने में बहुत योग दिया है।" "पुस्तकें मानव-बुद्धि को विकसित करने का मुख्य स्रोत हैं और आधुनिक नागरिक के लिए वे ऐसे साधनों का काम देती हैं जो उसे सार्वजनिक नीतियों को समझने तथा उनका निर्धारण करने में सहायक होती हैं।" पुस्तकों का विवरण बहुत ही आकर्षक रूप में किया जा सकता है और कुछ लोग उनके प्रति बहुत ही आकर्षित होते हैं। इनमें प्रकाशक भी

होते हैं। अब मैं प्रकाशक का परिचय दूँगा।

प्रकाशक

प्रकाशक वह अभागा व्यक्ति होता है जो पुस्तकें प्रकाशित करता है। चकाचौंध कर देने वाले प्रकाश, पुस्तकों की भूरि-भूरि प्रशंसा, किताबों की रौनकदार दुकानों, शिक्षित समाज की तड़क-भड़क और पुस्तकों के राष्ट्रीय तथा विश्वव्यापी महत्त्व से आकर्षित होकर उसे यह भ्रम हो जाता है कि इस कारोबार में पूँजी लगाने से बहुत लाभ होगा, वह शीघ्र ही धनवान हो जाएगा और समाज में प्रतिष्ठा प्राप्त कर लेगा। परन्तु शीघ्र ही उसका यह भ्रम दूर हो जाता है। प्रकाशक का काम बहुत ही जोखिम का और मँहगा कारोबार है। उसे पहले पांडुलिपि ढूँढ़नी पड़ती है, फिर किसी ऐसे सम्पादक को ढूँढना पड़ता है जो पांडुलिपि का सम्पादन करके उसे उचित रूप प्रदान करे। फिर उसे किसी कलाकार को खोजना पड़ता है जो उसके लिए चित्र तैयार करे और उसका आवरण-पृष्ठ तैयार करे। फिर उसके लिए कोई मुद्रक ढूँढना पड़ता है, कागज़ और जिल्दसाजी का प्रबन्ध करना पड़ता है। इसके बाद सबसे कठिन काम आता है—उसका प्रचार करने और उसे बेचने का काम। ये सब काम बहुत मँहगे होते हैं। इनके लिए प्राविधिक ज्ञान आवश्यक होता है और उसे हर पुस्तक के सिलसिले में यही क्रम दोहराना पड़ता है। वह आशा करता है कि इन पुस्तकों से उसका भाग्य चमक उठेगा। परन्तु वास्तव में उसे एक दिन पता चलता है कि जिन किताबों के बारे में वह समझता था कि वे धड़ाधड़ बिकेंगी वे बिलकुल भी नहीं बिक रही हैं। ब्रिटेन के प्रख्यात प्रकाशक सर स्टैनली अनविन ने अपनी एक पुस्तक में एक जर्मन कविता का अनुवाद इस प्रकार दिया है :

"पुस्तकें लिखना आसान है, उसके लिए केवल कलम और स्याही और सब-कुछ सहन कर लेने वाले काग़ज़ ज़रूरत होती है। किताबें छापना इससे कुछ कठिन होता है, क्योंकि जो जीनियस होता है उसे ऐसी लिखाई लिखने में मजा आता है जिसे कोई पढ़ न सके। पुस्तकें पढ़ना इससे भी कठिन होता है क्योंकि उन्हें पढ़ते-पढ़ते नींद आने लगती है। लेकिन जिस कठिनतम काम का बीड़ा उठा सकता है वह है किताबें बेचने का काम।"

बेचारा प्रकाशक कुछ दिन तक टक्करें खाता है, फिर उसके पास बहुत से ऐसे बिल जमा हो जाते हैं जिनकी अदायगी नहीं होती और दूसरे बहुत से बोझ जमा हो जाते हैं, और तब एक दिन उसे पता चलता है कि उसके लिए बचने का केवल एक मार्ग रह गया है कि वह अदालत में जाकर अपने-आपको दिवालिया घोषित कर दे। अपने अस्तित्व के प्रारम्भिक काल में बहुत से प्रकाशकों का यही अन्त होता है। परन्तु हर व्यवसाय की तरह इसमें भी अपवाद होते हैं, सफल लोग होते हैं—असाधारण अपवाद और असाधारण सफल लोग। यही गिने-चुने सफल लोग दूर से चमकती हुई रोशनियों की तरह भोले-भाले पथिकों को अपनी ओर आकृष्ट करके संकट में फँसाते रहते हैं। यह बात ठीक ही कही गई है कि हमारा भविष्य बहुत उज्ज्वल है और व्यापार की सम्भावनाएँ बहुत विस्तृत हैं। लेकिन इस समय क्या हालत है? मैं उन आशावादियों में से हूँ जिनका यह दृढ़ विश्वास है कि इस हालत में भी हम सफल हो सकते हैं और दूसरों का भला कर सकते हैं, यदि हम अवसर का पूरा लाभ उठा सकें और अपने देश की कोटिसंख्यक जनता को यह समझा सकें कि हमारे राष्ट्र के विकास में पुस्तकों का क्या महत्त्व है और यह क्यों आवश्यक है कि हमें उचित मुनाफ़ा कमाने दिया जाए। एक बात मेरी समझ में नहीं आती है कि एक ओर तो इस कारोबार के लोगों के मुनाफ़ा कमाने पर लोगों को आपत्ति होती है और दूसरी ओर हमसे यह आशा की जाती है कि हम विभिन्न अभावों की पूर्ति करें और ज्यादा बड़ी तथा ज्यादा मँहगी योजनाओं को पूरा करने की जिम्मेदारी लें। सरकार खुद अपने प्रकाशन के काम के लिए बहुत बड़ी रक़म खर्च करती है। अगर हमें किताबों की बिक्री से मुनाफ़ा नहीं कमाने दिया जाएगा तो फिर हम अपनी जिम्मेदारी निभाने के लिए पैसा कहाँ से लायेंगे? हमने हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाया है। क्या वह सही माने में राष्ट्रभाषा बन सकती है जब तक कि इस भाषा में विभिन्न विषयों की और बहुत ज्यादा पुस्तकें न हों जो संसार के सबसे बड़े लोकतान्त्रिक राज्य की प्रतिष्ठा के अनुकूल हों और देश की कोटिसंख्यक जनता की

आवश्यकताओं को पूरा कर सकें ? हम अभी अपने शैशव-काल में हैं और हमें बहुत काफ़ी पोषण की आवश्यकता है। हमें अपने कारोबार में पूँजी लगाने के लिए पैसे की बहुत जरूरत है और जहाँ तक हो सके हमारे दिल से इस कारोबार के खतरों का खटका दूर किया जाना चाहिए। इस बात को समझा जाना चाहिए कि हम पुस्तकें छापते हैं, करेंसी नोट नहीं छापते हैं। हमें समृद्ध बनने का मौका दिया जाना चाहिए और ऐसी स्थिति में पहुँचा दिया जाना चाहिए कि हम उस विदेशी प्रकाशक की टक्कर पर बड़ी-बड़ी योजनाएँ हाथ में ले सकें, जो कि हमारे बाज़ारों में अपना माल थोपकर हमारे अस्तित्व की जड़ें खोखली करने की कोशिश कर रहा है। मैं माँग करता हूँ कि प्रकाशन को भी एक उद्योग का पद दिया जाए और इस औद्योगिक पद के साथ दूसरे उद्योगपतियों की तरह उसे संरक्षण भी दिया जाए। मैं जिस संरक्षण की माँग करता हूँ वह बहुत सीधा-सादा है। मैं अपनी सरकार से अनुरोध करता हूँ कि वह हमारे विश्वविद्यालयों तथा अन्य संस्थाओं में पढ़ायी जाने वाली सारी विदेशी पाठ्य-पुस्तकों की सूची तैयार करके प्रकाशकों के पास भेजे। जब भी हममें से कोई प्रकाशक या कई प्रकाशक उसी स्तर की पुस्तकें तय कर दें, जिन्हें विभिन्न विश्वविद्यालयों इत्यादि के प्रतिनिधियों का एक केन्द्रीय मण्डल उन पुस्तकों के स्तर का घोषित कर दें, तो ये विदेशी पुस्तकें पाठ्यक्रम में से हटाकर उनकी जगह हमारी पुस्तकें लगा दी जाए। इसके लिए सरकार को खर्च कुछ नहीं करना पड़ेगा और बहुत सी विदेशी मुद्रा की बचत होगी। इसके अतिरिक्त इस प्रकार हमारे देश के लेखकों, कलाकारों, मुद्रकों, प्रकाशकों और जिल्दसाज़ों की प्रतिभा को प्रोत्साहन मिलेगा और प्रकाशन के कारोबार में फ़ौरन बहुत से लोग पैसा लगाने को तैयार हो जाएँगे और उन्हें जिस पूँजी की सख्त जरूरत है वह उन्हें मिल जाएगी। इसके अलावा यह भी बात है कि विदेशी पाठ्य-पुस्तकों का प्रयोग करने के कारण हमारे अध्यापकों, प्रकाशकों तथा इस कारोबार से सम्बन्ध रखने वाले दूसरे लोगों में हीनता की भावना पैदा होती जा रही है। इससे किसी को लाभ नहीं है। हमारे-जैसे बड़े देश में विदेशी पाठ्य-पुस्तकों का प्रयोग राष्ट्रीय हित तथा प्रतिष्ठा के प्रतिकूल है। हमारे देश में नाना प्रकार की संस्थाएँ और सुयोग्य प्रतिभाशाली अध्यापक हैं और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि वे अच्छी किताबें लिख सकते हैं। ऊपर बतायी गई योजना पर अमल करने से प्रकाशक देश और राष्ट्र के हित में उनकी प्रतिभा का सदुपयोग कर सकेंगे। ये पाठ्य-पुस्तकें हमारे देश की परिस्थितियों तथा बुनियादी आवश्यकताओं पर आधारित होंगी।

अति विकसित तथा समृद्ध देशों में प्रकाशन

अति विकसित तथा समृद्ध देशों में चूंकि साक्षरता का स्तर बहुत ऊँचा है और वहाँ लोग बहुत समृद्ध हैं, इसलिए वे घर में, परिवार के सदस्यों के लिए, शिक्षा-संस्थाओं के लिए और व्यावसायिक कामों के लिए पुस्तक का महत्त्व समझते हैं। इन देशों में प्रकाशन एक बहुत ही विकसित, प्राविधिक तथा कलात्मक व्यवसाय बन गया है, जिसकी प्रगति के लिए राष्ट्र और सरकार के सबसे बुद्धिमान लोग मिलकर कोशिश करते हैं। इसकी वजह से किताबें अधिक संख्या में बिकती हैं और बैठक के, सोने के कमरे में और हर उस जगह, जहाँ किताब पढ़ी जा सकती है, पुस्तकों को उनका उचित स्थान मिलता है। और इसके अलावा उनकी सहायता करने के लिए पुस्तकालयों की एक व्यापक व्यवस्था है। पुस्तकालयाध्यक्ष हमेशा अच्छी किताबों की तलाश में रहते हैं और अलग-अलग पुस्तकालयों के अध्यक्षों के बीच अपने पुस्तकालयों को बेहतर बनाने और जन-साधारण की बेहतर सेवा करने की होड़ लगी रहती है। इसकी वजह से प्रकाशकों के लिए यह सम्भव हो गया है कि वे बहुत बड़ी पूँजी लगाकर बड़े-बड़े कार्पोरेशन बना सकें और अपने सम्पादकीय विभाग, बिक्री-विभाग, विज्ञापन तथा प्रचार-विभाग इत्यादि के आधार पर बड़ी-बड़ी योजनाएं पूरी कर सकें। अपनी आर्थिक स्थिति के कारण और सरकार की सहायता से वे दूसरे देशों में, विशेष रूप से संसार के कम विकसित और कम समृद्ध देशों में, कामयाबी के साथ अपना माल बेच रहे हैं। चूंकि इन प्रकाशकों का व्यापार केवल एकतरफ़ा है और वे केवल दूसरे देशों में अपना माल बेचना चाहते हैं, इसलिए इन कम विकसित देशों के प्रकाशकों की हालत दिन-ब-दिन निराशा-

जनक होती जाएगी जब तक उन्हें अपनी सरकार और अपनी जनता से उचित संरक्षण न मिले। इस कारोबार में बहुत बड़ी पूँजी लगी होने के कारण, बड़े पैमाने का कारोबार होने के कारण और उचित प्रशिक्षण पाये हुए कर्मचारियों की वजह से इन विदेशी प्रकाशकों ने पुस्तकों के वितरण की समुचित योजनाएँ बनाई हैं। इसमें उन्हें अपने पस्तक संघों, राष्ट्रीय पुस्तक परिषदों, प्रकाशक-संघों, पुस्तक-विक्रेता-संघों, पुस्तकालयों की विस्तृत व्यवस्था, थोक-विक्रेताओं (वितरकों), किताबों की अच्छी दुकानों और नागरिकों द्वारा अपने दैनिक जीवन में पुस्तकों को दिये जाने वाले महत्व के कारण बहुत मदद मिलती है। उन्होंने पुस्तक के 'नेट' मूल्यों के बारे में भी समझौते कर रखे हैं जिसकी वजह से इस कारोबार में मुनाफे का संरक्षण तथा आश्वासन है और पुस्तकालयाध्यक्ष भी इस बात का ध्यान रखते हैं कि पुस्तक-विक्रेताओं को उचित मुनाफा मिले ताकि पुस्तकों से भरपूर बड़ी-बड़ी, उपयोगी तथा सहायताप्रद किताबों की दुकानें खुल सकें जो उस नगर के निवासियों की आवश्यकताओं के अनुसार और उनके व्यवसाय के हितों के अनुकूल उनकी सेवा कर सकें। वहाँ किताबें टेंडर पद्धति से नहीं खरीदी जातीं क्योंकि वहाँ के लोग जानते हैं कि किताबों की ऐसी दुकानें, जिनमें हर प्रकार की बहुत-सी पुस्तकें मौजूद हों, राष्ट्रीय महत्त्व रखती हैं और टेंडर पद्धति से पुस्तकें खरीदना उनकी प्रगति तथा विकास के लिए घातक सिद्ध होगा। वहाँ कम कीमत के बजाय बेहतर सेवा पर जोर दिया जाता है।

इन देशों में प्रकाशन और पुस्तक-विक्रय दो अलग-अलग काम समझे जाते हैं। प्रकाशक केवल पुस्तकें प्रकाशित करता है और विक्रेता उन्हें बेचता है। प्रकाशक केवल एनसाइक्लोपीडिया या इसी प्रकार की कुछ दूसरी विशिष्ट पुस्तकें बेचते हैं जिनके बहुत अधिक दाम के कारण तथा कई दूसरी बातों के कारण पुस्तक-विक्रेता उन्हें बेचने में सहायक नहीं हो सकते।

भारत में प्रकाशन-व्यापार

भारत में प्रकाशन की कहानी बिलकुल ही अलग है। समृद्ध देशों में प्रकाशन का कारोबार स्थापित करने के लिए ३० हजार पौण्ड (लगभग ४ लाख रुपया) से ५० हजार पौण्ड (लगभग साढ़े छः लाख रुपया) की जरूरत होती है। भारत में केवल अपने नाम का लेटरहैड-भर छपवा लेने से कोई भी आदमी पुस्तक-विक्रेता अथवा प्रकाशक या दोनों ही बन सकता है। वह साधारण प्रकाशकों के मुकाबले दुगुनी रायल्टी का प्रलोभन देकर एकाध पांडुलिपियाँ भी जुटा लेता है, जिसका नतीजा यह होता है कि लेखक को जो कुछ मिलना चाहिए उसकी वह कभी सूरत भी नहीं देखता। लेखकों को यह बात समझना चाहिए कि १०% रायल्टी, जो नियत समय पर मिल जाए, उस २०% रायल्टी से अच्छी है जो कभी न मिले। लेकिन दुर्भाग्य की बात यह है कि ऊपर जिस प्रकार के प्रकाशक का उल्लेल किया गया है उसे हमारे इतने बड़े देश में ऐसे बहुतेरे लेखक मिल जाते हैं जिनकी पांडुलिपियाँ गिने-चुने अच्छे प्रकाशक आर्थिक अथवा अन्य कारणों से अस्वीकार कर चुके होते हैं और इनके बल पर वह मजे में अपना कारोबार चलाता रहता है। ये लोग पूरे व्यवसाय को बदनाम करते हैं और उन्हीं के कारण बाजार में व्यर्थ पुस्तकों की भरमार रहती है। प्रकाशन का कारोबार ऐसे लोगों के लिए नहीं है जिनके पास साधनों का अभाव हो। समृद्ध तथा विकसित देशों में तो काफ़ी पैसा लगाकर बड़े-बड़े कार्पोरेशन बनाये जाते हैं, पर हमारे यहाँ केवल वैयक्तिक प्रयासों पर ही यह काम चलता है। कई वर्ष तक संघर्ष करने के बाद ही कोई प्रकाशक इस स्थिति में पहुँचता है कि वह कोई बड़ा काम कर सके, लेकिन उस समय तक उसका बहुत-कुछ उत्साह और शक्ति क्षीण हो चुकी होती है और उससे ऐसी दशा में किसी बड़े काम की आशा करना अत्याचार होगा। यही कारण है कि हमारे यहाँ बड़े प्रकाशकों की अपेक्षा छोटे प्रकाशकों की संख्या इतनी अधिक है। इस परिस्थिति को सुधारना होगा और जितनी ही जल्दी उसे सुधार दिया जाए, लेखकों और देश के लिए उतना ही अच्छा होगा। प्रकाशन आराम का काम नहीं है, जैसा कि कुछ लोग समझते हैं। यह बहुत ही जोखिम का, कठिन और सर खपाने वाला कारोबार है। अगर आप बहुत जल्दी बहुत सा मुनाफ़ा कमा लेना चाहते हैं तो यह कारोबार आपके लिए नहीं है। इसके लिए ऐसे

लगन वाले लोगों की ज़रूरत है जो हर समय त्याग करने के लिए तैयार हों। भारत में प्रकाश को हर समय तरह-तरह की खैरात, चन्दों, कॉलेजों तथा संस्थाओं की पत्रिकाओं में विज्ञापनों, पुस्तकों के दान और नमूने की पुस्तकों आदि की माँग का खतरा रहता है। चूंकि यह उद्योग अभी तक समृद्ध अवस्था में नहीं है इसलिए जिन लोगों से हमारा सम्पर्क होता है वे भी निर्धनता की अवस्था में होते हैं और उनके साथ सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करने की आवश्यकता होती है। मैं अपने प्रकाशक मित्रों से इस बात को स्वयं अपने हित में विशेष रूप से ध्यान में रखने का अनुरोध करना चाहता हूँ।

साक्षरता के निम्न स्तर, भाषाओं की विविधता, लोगों की निर्धनता, बिक्री की सीमित सम्भावनाओं और अन्य ऐसे कारणों से, जो प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता के हितों के प्रतिकूल हमेशा काम करते रहते हैं, भारतीय प्रकाशक को अपने माल की निकासी में और अधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। यह आश्चर्य की बात है कि इस बात के बावजूद कि हमारे देश की संस्थाओं में लगभग पाँच करोड़ विद्यार्थी पढ़ते हैं, और इससे कई गुनी संख्या में हमारे देश में साक्षर लोग हैं और काफ़ी बड़ी संख्या ऐसे धनवान लोगों की भी है जो किताबें खरीदने के लिए पैसा खर्च कर सकते हैं, फिर भी हमारे यहाँ पुस्तकों की बिक्री बहुत थोड़ी है। जो लोग स्कूलों तथा दूसरी संस्थाओं को बहुत बड़ी-बड़ी रक़में चन्दे में देते हैं उनके घरों में भी किताबें नहीं होतीं। किताबों के प्रति उदासीनता का यह व्यापक रवैया आश्चर्यजनक है। आप आसानी से इसका कोई कारण नहीं बता सकते क्योंकि हमारे यहाँ लेखकों की परम्परा बहुत पुरानी है और प्राचीन काल से हमारे प्रतिदिन के जीवन में पुस्तकों को महत्व दिया जाता रहा है। साथ ही हमारे यहाँ पुस्तकों की पूजा करने का भी प्रचलन है, जैसा कि सरस्वती-पूजा के दिनों में बंगाल मे होता है।

शायद इसका कारण यह है कि आज हमारे देश में जो धनवान लोग हैं जिन्होंने व्यापार में अकूत धन कमाया है, उनमें से अधिकांश निरक्षर हैं और उन्होंने कभी किसी स्कूल या कॉलेज में शिक्षा नहीं पाई है। इसलिए वे पुस्तकों का महत्त्व नहीं समझ सकते और उनके प्रति उदासीन रहते हैं। जब वे अपने चारों ओर बेशुमार पढ़े-लिखे लोगों को नौकरियों के लिए दर-दर की खाक छानते देखते हैं तो उनकी यह उदासीनता और भी बढ़ जाती है। उनके अपने पढ़े-लिखे बच्चे भी उनके लिए बेकार हो जाते हैं क्योंकि उनकी रुचियाँ और दिलचस्पियाँ परिवार के व्यापार की ओर से हटकर दूसरी बातों की ओर चली जाती हैं। वे कठिन कामों से कतराने लगते हैं। इसलिए वे सोचने लगते हैं कि अपने बच्चों को पढ़ा-लिखाकर उन्होंने केवल समय और पैसा नष्ट किया है। कभी-कभी इस बात के कारण उन्हें घर में किताबों की सूरत से नफ़रत हो जाती है। हमारे देश की बढ़ती हुई जनसंख्या के हित में हमारे समाज-सुधारकों को चाहिए कि वे इन दोषों को दूर करें। हमारे देश में ऐसे बहुत से प्रकाशक हैं जो अपना काम ठीक से नहीं जानते और जिन्होंने अभी तक मिलकर काम करना नहीं सीखा है। थोक विक्रेता या तो हैं ही नहीं और जो थोड़े-बहुत हैं भी वे विदेशी पुस्तकों की बिक्री करते हैं। दूसरे प्रकाशक अपना काम ठीक से नहीं जानते, जिसकी वजह से व्यापार को बहुत हानि और निराशा का सामना करना पड़ता है। हमारे यहाँ पुस्तक-विक्रेता बहुत बड़ी संख्या में हैं लेकिन उनमें से ज्यादातर को अपने काम का कोई ज्ञान नहीं होता और उनके पास गलियों में छोटी-छोटी दुकानें होती हैं जो उनके शहरों की बढ़ती हुई जनसंख्या की आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर सकतीं। इस पृष्ठभूमि में मैं अब प्रकाशक, थोक-विक्रेता, फुटकर पुस्तक-विक्रेता और ग्राहक के बीच व्यापारिक शर्तों पर विचार करूँगा।

(क्रमशः)

पुस्तक-परिचय

आलोचना, निबन्ध

केशव और उनका साहित्य डॉक्टर विजयपालसिंह द्वारा लिखित आगरा विश्वविद्यालय की पी० एच-डी० उपाधि के लिए एक शोध-प्रबन्ध है। इसमें विद्वान् लेखक ने केशव का जीवन-वृत्त, केशव की रचनाएँ, केशव-कालीन परिस्थितियाँ, केशव का जीवन-दर्शन, केशव का आचार्यत्व, केशव की काव्य-कला, केशव का आदान-प्रदान और केशव का हिन्दी-साहित्य में स्थान आदि आठ अध्यायों में रीति-कालीन महाकवि केशव की काव्य-कला और उसके साहित्य पर विशद प्रकाश डाला है। केशव-साहित्य के प्रेमी पाठकों और अनुसन्धान करने वालों, सभी के लिए यह ग्रन्थ समान रूप से उपयोगी है। डिमाई साइज के ३९६ पृष्ठ का यह सजिल्द ग्रन्थ **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली** ने प्रकाशित किया है और यह १२ रुपये में प्राप्य है।

* * *

विद्यापति : एक तुलनात्मक समीक्षा नामक ग्रन्थ में हिन्दी के समधीत समीक्षक और कवि श्री जयनाथ 'नलिन' ने 'हिन्दी गीति-काव्य-परम्परा में विद्यापति की देन', 'राधा-कृष्णवाद और विद्यापति के राधाकृष्ण', 'अप्रतिम शृंगारी कवि विद्यापति', 'सूर में विद्यापति की अनुकृति', 'विद्यापति का काव्य-शिल्प', 'शास्त्र-परम्परा और रूढ़ि-पालन', तथा 'विद्यापति की भक्ति-पद्धति' आदि सात विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत हिन्दी के भक्त और शृंगारी कवि विद्यापति की काव्य-कला पर विस्तृत समीक्षा प्रस्तुत की है। लेखक के गहन अध्ययन और चिन्तन का पता इस ग्रन्थ को पढ़ने से पग-पग पर चलता है। डिमाई साइज के ३२८ पृष्ठ का यह सजिल्द ग्रन्थ **साहित्य संस्थान, दिल्ली** ने प्रकाशित किया है और ११ रुपये में प्राप्य है।

* * *

आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और शृंगार नामक इस पुस्तक के लेखक डॉक्टर रांगेय राघव हिन्दी के जाने-माने समीक्षक और साहित्यकार हैं। इस ग्रन्थ में विद्वान् लेखक ने 'भूमिका', 'वासना पुरुष', 'वासना : नारी', 'रूप का उफान', 'भोर से साँझ तक' तथा 'फागुन से पावस' आदि छः अध्यायों में आधुनिक हिन्दी-कविता में प्रेम और शृंगार का सांगोपांग आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है। इसमें जहाँ नर-नारी की वासना और रूप के उफान का वर्णन पाठकों को पढ़ने को मिलेगा, वहाँ रूप का उफान और भोर से साँझ और फागुन से पावस के वर्णन के माध्यम से प्रेम और शृंगार की मार्मिक समीक्षा भी पाठक इस ग्रन्थ में पाएँगे। डिमाई साइज के १९५ पृष्ठ की यह पुस्तक **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली** ने प्रकाशित की है और छः रुपये में प्राप्त हो सकती है।

* * *

बँगला काव्य की भूमिका नामक यह ग्रन्थ शिक्षा-शास्त्री और विचारक प्रो० हुमायूँ कबीर की प्रख्यात बँगला पुस्तक 'बंगलार काव्य' का हिन्दी अनुवाद है। अनुवाद श्री हंसकुमार तिवारी ने किया है। हिन्दी-संस्करण की भूमिका में प्रो० कबीर ने यह ठीक ही लिखा है कि 'कला में वैयक्तिकता, राष्ट्रीयता और सार्वभौमिकता की झलक एक साथ मिलती है।' इसी कला की सार्वभौमिकता की झलक पाठक इस पुस्तक में स्थान-स्थान पर पाएँगे। बंगला-काव्य और साहित्य के प्रेमी पाठकों का तो यह पुस्तक मनोरंजन करेगी ही, साथ ही इससे साधारण स्तर के पाठक भी लाभान्वित हो सकते हैं। डिमाई साइज के ८४ पृष्ठ की यह सजिल्द और सुमुद्रित पुस्तक **राजकमल प्रकाशन (प्रा०) लिमिटेड, दिल्ली** ने प्रकाशित की है और यह चार रुपये में प्राप्य है।

* * *

राजा राधिकारमण प्रसादसिंह : व्यक्तित्व और कृतित्व नामक इस पुस्तक में डॉक्टर पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' ने हिन्दी के प्रख्यात शैलीकार और उपन्यास-लेखक राजा

राधिकारमण प्रसादसिंह के जीवन और व्यक्तित्व पर प्रकाश डालकर बाद में एक-एक करके उनकी सभी कृतियों की समीक्षा प्रस्तुत की है। इस पुस्तक की भूमिका में केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय के निदेशक डॉ० विश्वनाथप्रसाद ने यह ठीक ही लिखा है कि "इस पुस्तक से राजा साहब द्वारा सृजित साहित्य को समझने में बड़ी सहायता मिलेगी।" इसमें सुविज्ञ आलोचक ने बड़ी कुशलता से राजा साहब के कृतित्व तथा व्यक्तित्व पर रोचक प्रकाश डाला है। क्राउन साइज़ के २७४ पृष्ठ की इस सजिल्द पुस्तक का प्रकाशन **साहित्य संस्थान, दिल्ली** ने किया है और यह ६ रुपये में प्राप्य है।

*   *   *

साहित्य के स्वर में प्रख्यात नाटककार और कवि श्री उदयशंकर भट्ट के समय-समय पर लिखित साहित्यिक और आलोचनात्मक लेखों का संकलन प्रस्तुत किया गया है। लेखक के अनुसार इसमें उनके 'प्रायः वही निबन्ध हैं जिन्हें सम्पादकों एवं विश्वविद्यालय के अध्यापकों के आग्रह पर लिखना पड़ा है। इसके अतिरिक्त एक-दो भाषण भी हैं, जो विभिन्न साहित्य-परिषदों के अवसर पर लिखने पड़े हैं।' पुस्तक की विषय-सूची को देखकर ऐसा लगता है कि इनमें से अधिक लेख रेडियो-वार्ताएँ हैं। क्राउन साइज़ के १७५ पृष्ठों की इस सजिल्द पुस्तक का प्रकाशन **आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली** ने किया है और यह तीन रुपये पचास नये पैसे में प्राप्य है।

*   *   *

युग-निर्माता द्विवेदी नामक इस पुस्तिका में श्री कुलवन्त कोहली ने आधुनिक हिन्दी के निर्माता सम्पादक-प्रवर आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के साहित्यिक जीवन का अध्ययन प्रस्तुत किया है। जीवनी देने के अतिरिक्त इसमें विज्ञ लेखक ने द्विवेदीजी के सम्पादक, कवि, निबन्धकार, आलोचक और भाषा-संशोधक रूप पर सविस्तर विचार किया है। क्राउन साइज़ के १२० पृष्ठ की इस पुस्तक का प्रकाशन **बोरा एण्ड कम्पनी, बम्बई** ने किया है और यह ५ रुपये ५० नये पैसे में मिल सकती है।

*   *   *

संगीत शिक्षा सेमिनार का प्रकाशन **राजस्थान संगीत नाटक अकादमी** की ओर से किया गया है और इसमें संगीत और उसके विभिन्न पक्षों पर उपयोगी प्रकाश डालने वाले वे निबन्ध प्रकाशित किये गए हैं, जो इस अकादमी की ओर से आयोजित सेमिनार में पढ़े गए थे। इन निबन्धों के लेखकों में अध्यक्ष श्री हरिभाऊ उपाध्याय के अतिरिक्त श्री गोवर्धनलाल काबरा, पण्डित ओंकारनाथ ठाकुर, वि० ल० इनामदार, देवीलाल सागर, विनयचन्द्र मौद्गल्य, अमूभाई दोषी के नाम उल्लेखनीय हैं। साहित्य और कला के प्रेमी पाठक इस पुस्तक का हृदय से स्वागत करेंगे, ऐसी आशा है। क्राउन साइज़ के १४८ पृष्ठ की यह पुस्तक दो रुपये में मिल सकती है।

*   *   *

सत्य हरिश्चन्द्र हिन्दी के प्रख्यात कवि और नाटककार भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का प्रख्यात नाटक है। यह पुस्तक **नागरी प्रचारिणी सभा, काशी** की ओर से प्रकाशित हुई है और इसका सम्पादन शिवप्रसाद मिश्र 'रुद्र काशिकेय' ने किया है। सम्पादक ने १०६ पृष्ठ की अपनी विस्तृत भूमिका में 'सत्य हरिश्चन्द्र' नाटक की उपादेयता और

भारतेन्दु की नाटक-कला पर उपयोगी प्रकाश डाला है। इस पुस्तक से हिन्दी के समीक्षकों को एक नई दृष्टि मिलेगी, ऐसी आशा है। क्राउन साइज के २१६ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक तीन रुपये पचास नये पैसे में प्राप्त की जा सकती है।

* * *

अग्रगीता

लाल फूलों की टहनी नामक इस पुस्तक में श्री विनोद-चन्द्र पांडे की नई कविताओं का संकलन प्रस्तुत किया गया है। इसको कवि ने 'लाल फूलों की टहनी', 'जैसलमेर', 'श्रद्धा की झील', 'एक बीमार लड़की', '**एक था राजा**', 'समूह' और 'मुहूर्त' नामक सात अध्यायों में विभक्त किया है और कुल मिलाकर इस पुस्तक में कवि की १५२ नई कविताएँ संकलित हैं। नई कविता के प्रेमी पाठक इससे पर्याप्त लाभान्वित होंगे। डिमाई साइज़ के २०० पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक **राजकमल प्रकाशन (प्रा०) लिमिटेड, दिल्ली** ने प्रकाशित की है और ६ रुपये में मिलती है।

* * *

वीणापाणि के कम्पाउण्ड में नामक इस कविता-संकलन में श्री केशवचन्द्र वर्मा की ४१ कविताएँ संग्रहीत हैं। इन कविताओं के लेखक हिन्दी में व्यंग्य-लेखक के रूप में पर्याप्त ख्याति अर्जित कर चुके हैं। इन कविताओं में भी लेखक की वही व्यंग्य-प्रतिभा स्थान-स्थान पर उभरकर सामने आई है। डिमाई साइज के १२२ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक **भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी** द्वारा प्रकाशित हुई है और यह तीन रुपये में प्राप्त की जा सकती है।

* * *

प्रणय-पत्रिका कविवर बच्चन की काव्य-कृति है। यह उसका दूसरा संस्करण है। इसका पहला संस्करण १९५५ में प्रकाशित हुआ था। इस संकलन में कविवर **बच्चन** की वे ५९ रचनाएँ समाविष्ट हैं, जो उन्होंने अधिकांशतः उस समय विदेश में लिखी थीं, जबकि वे अंग्रेजी काव्य के विशेष अध्ययन के निमित्त विदेश गये हुए थे। इस दूसरे संस्करण के लिए बच्चनजी ने एक विशेष भूमिका भी लिखी है। भूमिका में उन्होंने अपने काव्य-विकास के प्रसंग में इस पुस्तक की रचनाओं पर यथातथ्य प्रकाश डाला है। क्राउन साइज़ के १४० पृष्ठों की यह सजिल्द पुस्तक **राज-पाल एण्ड सन्स, दिल्ली** ने प्रकाशित की है और दो रुपये पचास नये पैसे में प्राप्त की जा सकती है।

* * *

अमृत और विष में श्री उदयशंकर भट्ट की मुक्त वृत्त में लिखी गई कविताओं का संकलन किया गया है। यह इस पुस्तक का तीसरा संस्करण है। इस संग्रह की प्रायः सभी कविताएँ युद्ध की विभीषिका की पृष्ठभूमि में लिखी गई हैं। इसमें भट्टजी की 'अमृत और विष', 'आज जीवन का यही है…', 'आज उबलते जग-कड़ाह में', 'सैनिक की मृत्यु-शैया पर', 'सैनिक', 'बन्द करो द्वार', 'बंगाल', 'रिफ्यूजी', 'लुई सुई शेंकाई', 'दलित', 'विलम्ब', 'नर्तकी' शीर्षक १२ रचनाएँ संकलित हैं। क्राउन साइज़ के ८० पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक **आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली** ने प्रकाशित की है और दो रुपये में प्राप्य है।

* * *

अर्चना में श्री कृष्णवल्लभ दवे के सन् १९५९-६० में रचित ५९ गीतों का संग्रह प्रस्तुत किया गया है। इसकी भूमिका में श्री रामनिरंजन पाण्डेय ने यह ठीक ही लिखा है कि 'कवि की यह प्रथम प्रकाशित कृति है। उसका जीवन अग्रसर हो रहा है।' क्राउन साइज़ के ६४ पृष्ठों की यह सजिल्द और सुमुद्रित पुस्तक **प्रतिभा प्रकाशन, हैदराबाद** ने प्रकाशित की है और तीन रुपये में प्राप्य है।

* * *

नग़मए हरम नामक इस पुस्तक में उर्दू काव्य के मर्मज्ञ श्री अयोध्याप्रसाद गोयलीय ने उर्दू की ख्याति-प्राप्त एवं उदीयमान १०४ महिलाओं की १९४० से १९६० तक की शाइरी संकलित की है। अन्त में 'सिंहावलोकन' शीर्षक के अन्तर्गत 'बहू-बेटियों की शाइरी' परिशिष्ट के रूप में समाविष्ट कर दी है। इस पुस्तक के सम्पादन और संकलन में श्री गोयलीयजी ने परिश्रम किया है। हमारी यह धारणा है कि उनकी यह पुस्तक भी उनकी 'शेरो-शायरी', 'शेरो-सुखन', 'उर्दू शायरी के नये मोड़' तथा 'उर्दू शायरी के नये दौर' नामक दूसरी पुस्तकों की भाँति लोकप्रिय होगी।

क्राउन साइज़ के २७२ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक **भारतीय ज्ञानपीठ, काशी** ने प्रकाशित की है और चार रुपये में प्राप्य है।

* * *

रसवन्ती का प्रकाशन **अरुण प्रकाशन, दिल्ली** की ओर से किया गया है। इसमें विभिन्न कवियों की कविताएँ, 'निर्गुण धारा', 'सगुण धारा', 'नीति-काव्य', 'आख्यायिका काव्य', 'राष्ट्रीय विचारधारा', 'जन वाणी', 'प्रकृति-चित्रण', 'गीति-काव्य', 'व्यंग्यात्मक रचनाएँ' आदि विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत समाविष्ट करके सम्पादक ने विषयानुसार हिन्दी की प्रतिनिधि कविताओं का संकलन प्रस्तुत किया है। इसका सम्पादन प्रिंसिपल सूर्यभानु ने किया है। क्राउन साइज़ के १२४ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक १ रुपये ७५ नये पैसे में प्राप्त की जा सकती है।

* * *

उपन्यास

प्रतिक्रिया श्री मन्मथनाथ गुप्त का नवीनतम उपन्यास है। इसमें लेखक ने स्वतन्त्रता-संग्राम की पृष्ठभूमि में सन् १९३३ से लेकर १९३७ तक की घटनाओं का चित्रण किया है। इससे पूर्व भी उनके इसी शृंखला में चार उपन्यास और प्रकाशित हो चुके हैं। क्रान्तिकारी आन्दोलन की पृष्ठभूमि पर लिखा गया यह उपन्यास निश्चय ही हिन्दी पाठकों का मनोरंजन करने में समर्थ होगा। इससे पाठकों को जहाँ विचारोत्तेजक सामग्री प्राप्त होगी वहाँ वे इसे पढ़कर अपनी राजनीतिक गतिविधियों से भी सम्पर्क स्थापित कर सकेंगे। क्राउन साइज़ के २९६ पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली** ने प्रकाशित किया है और पाँच रुपये में प्राप्य है।

* * *

आत्महत्या से पहले तरुण लेखक श्री चन्द्रदेव सिंह का बिलकुल नया और ताजा उपन्यास है। इसमें एक ऐसे व्यक्ति की कहानी अंकित की गई है, जो जीवन से निराश होकर 'आत्महत्या' करना चाहता था। 'आत्महत्या से पहले' मनुष्य की कैसी मानसिक स्थिति होती है, इसकी

झलक पाने के लिए यह उपन्यास पढ़ना अत्यन्त आवश्यक है। उपन्यासकार के अनुसार यह उपन्यास "एक ऐसे ही भावुक, संवेदनशील कवि का अपना निजी परिवेश है, जो सम्भवतः बहुतों का हो सकता है, शायद एक पूरी पीढ़ी का हो सकता है।" क्राउन साइज़ के १०० पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली** ने प्रकाशित किया है और २ रुपये में प्राप्य है।

* * *

पाकिस्तान मेल नामक यह उपन्यास अंग्रेज़ी लेखक श्री खुशवन्तसिंह के 'ट्रेन टू पाकिस्तान' नामक अत्यन्त विख्यात अंग्रेज़ी उपन्यास का हिन्दी अनुवाद है। अनुवादक हैं श्री प्राणनाथ सेठ। कदाचित् अन्तर्राष्ट्रीय उपन्यास प्रतियोगिता में पुरस्कृत यह पहला भारतीय उपन्यास है। इस दृष्टि से यह प्रकाशन महत्त्वपूर्ण है। भारत-विभाजन की पृष्ठभूमि पर लिखित यह उपन्यास हिन्दी के पाठकों को अवश्य ही पढ़ना चाहिए। क्राउन साइज़ के २१४ पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास **साहित्य संस्थान, दिल्ली** ने प्रकाशित किया है और ५ रुपये में प्राप्त किया जा सकता है।

* * *

रावरेखा गुजराती के प्रख्यात उपन्यासकार श्री गुणवन्त राय द्वारा लिखित उनके विजयनगर-राज्य की पृष्ठभूमि पर लिखे गए उपन्यासों का चौथा पुष्प है। इसका अनुवाद किया है श्री परदेशी ने। इस उपन्यास में लेखक ने उस महान् विजयनगर साम्राज्य का चित्रण किया है जिसमें नया विधान, नया निशान और नया प्रधान बना। एकता और संगठन के बल पर शत्रु को किस प्रकार हार खानी पड़ी, इसका वर्णन हमारे पाठकों को इस उपन्यास में देखने को मिलेगा। क्राउन साइज़ के २६० पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास **वोरा एण्ड कम्पनी, बम्बई** ने प्रकाशित किया है और पाँच रुपये में प्राप्य है।

* * *

पुराने रास्ते नये मोड़ डॉ० लक्ष्मीनारायण टण्डन 'प्रेमी' द्वारा लिखित एक पारिवारिक उपन्यास है। इस उपन्यास में इसके भूमिका-लेखक श्री अमृतलाल नागर के शब्दों में "चलते जमाने की झाँकियाँ और हलचल देखने को मिल जाती हैं। फिर भी दोष-दिठौने के रूप में यह कहना

आवश्यक है कि उनके कथा-शिल्प ने अभी अपना पूरा निखार नहीं पाया है।" क्राउन साइज़ के २८८ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक **प्रेमी प्रकाशन, लखनऊ** ने प्रकाशित की है और पाँच रुपये में प्राप्य है।

* * *

खेतों की गोद में नामक यह उपन्यास गुजराती के प्रख्यात उपन्यासकार श्री पीताम्बर पटेल की नवीनतम कृति का हिन्दी अनुवाद है। इस उपन्यास में स्वतन्त्रता के बाद के हमारे गाँवों के नव-निर्माण और उनमें आई नव-चेतना की झाँकी देखने को मिलती है। यह उपन्यास अपने मूल रूप में बम्बई सरकार द्वारा पुरस्कृत हो चुका है और 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में हिन्दी रूप में भी प्रकाशित हो चुका है। अनुवाद श्री गोपालदास नागर ने किया है। क्राउन साइज़ के २५५ पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास **आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली** ने प्रकाशित किया है और यह चार रुपये ५० नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

मंजिल दूर नहीं नामक यह सृजनात्मक, प्रगतिशील, सामाजिक और आर्थिक उपन्यास श्री रविशेखर वर्मा द्वारा लिखा हुआ है। इसमें लेखक ने स्वातन्त्र्योत्तर भारत के गाँव में होने वाले पुनर्निर्माण की हल्की-सी झाँकी प्रस्तुत करके 'विष्णुपुर' के रूप में एक आदर्श ग्राम की कल्पना की है। इस उपन्यास को पढ़कर हमारे नवयुवक ग्राम-सुधार के लिए प्रेरणा प्राप्त कर सकेंगे, ऐसी आशा है। क्राउन साइज़ के १८३ पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास दो रुपये पचास नये पैसे में प्राप्य है और यह **नव साहित्य साहित्यकार मण्डल, नैनीताल** ने प्रकाशित किया है।

* * *

मायनी फ्रेंच भाषा के अद्भुत कथा-शिल्पी जार्ज सैण्ड की प्रख्यात कृति का हिन्दी-अनुवाद है। इसमें पाठकों को जहाँ ग्रामीण जीवन की सरल, निश्चल और प्रेम की आन्तरिक अभिलाषा के उत्कर्ष की कहानी पढ़ने को मिलेगी वहाँ वे उसमें अनुभूति का चमत्कार और भाषा का प्रवाह भी प्राप्त कर सकेंगे। पाठकों की सुविधा के लिए अनुवादक ने इसमें इसकी लेखिका के जीवन और कार्यों पर प्रकाश डालने वाला एक विवरण भी दे दिया है, इससे इसकी उपयोगिता बढ़ गई है। डिमाई साइज़ के १६८ पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास चार रुपये में प्राप्य है। और **मानसरोवर साहित्य निकेतन, मुरादाबाद** से प्रकाशित है।

* * *

बे परछाईं का आदमी प्रख्यात जर्मन उपन्यासकार लुई चार्ल्स एडलेड डि शॉमिसी की एक कृति का हिन्दी अनुवाद है। इसमें उपन्यासकार ने एक ऐसी समस्या को पाठकों के सामने उभारकर रखा है, जो बड़ी विचित्र-सी लगती है। मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर लिखे गए इस उपन्यास में बे-परछाईं के उस आदमी की झाँकी पाठक पाएँगे, जिसे हम भूत कहते हैं। क्राउन साइज़ के ६४ पृष्ठ का यह उपन्यास **मानसरोवर साहित्य निकेतन, मुरादाबाद** ने प्रकाशित किया है और एक रुपये में प्राप्तव्य है।

* * *

कहानी

नारी हृदय की साध में हिन्दी की प्रख्यात महिला कहानी-लेखिका श्रीमती सत्यवती मलिक की १६ कहानियों का संकलन प्रस्तुत किया गया है। इस संग्रह की कुछ कहानियाँ पहले पुस्तकाकार छप चुकी हैं, किन्तु जिन संग्रहों में छपी थीं, वे वर्षों से अप्राप्य हैं। अन्य कहानियाँ भी जहाँ-तहाँ पत्रिकाओं में छपी थीं और संग्रहीत हो रही हैं। नारी-जीवन की झलक मलिकजी की इन कहानियों में पग-पग पर देखने को मिलती है। क्राउन साइज़ के १२० पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक **राजपाल एण्ड सन्स** ने प्रकाशित की है, और २ रुपये में प्राप्त हो सकती है।

* * *

अँधेरा छँट गया नामक पुस्तक श्री गंगाधर शुक्ल की नवीनतम कहानियों का संग्रह है। इसमें उनकी १५ कहानियाँ हैं। प्रत्येक कहानी किसी-न-किसी विशेष घटना से प्रेरित होकर लिखी गई है। ये प्रायः सभी कहानियाँ प्रायः पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं। इन कहानियों में हल्का व्यंग्य, मीठा हास्य देखने को मिलता है। इन कहानियों में पाठक अपने समाज की झाँकी भी पा सकते हैं।

आत्माराम एण्ड सन्स द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज के ११८ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक २ रुपए में प्राप्य है।

* * *

मिट्टी का लोथ तरुण लेखक श्री हरिप्रकाश की कहानियों का पहला संग्रह है। इसमें उनकी 'मालिक कौन', 'लहरें और तसवीर', 'बस का सफर', 'एक दर्द एक खत', 'हिसाब के पैसे', 'मेरा दोस्त', 'जिन्दगी की माँग', 'बीज और माटी', 'टूटा हुआ बाल', 'डब्ल्यू० टी०', 'मिट्टी की लोथ' शीर्षक ११ कहानियाँ संग्रहीत हैं। प्रत्येक कहानी गहरी अनुभूति और आस्था लिये हुए है। लेखक ने इनमें आज के समाज की विभीषिकाओं का यथातथ्य चित्रण किया है। क्राउन साइज के १८२ पृष्ठ की यह पुस्तक **साहित्य संस्थान, दिल्ली** ने प्रकाशित की है और चार रुपए में प्राप्य है।

* * *

लो कहानी सुनो में श्री अयोध्याप्रसाद गोयलीय की ऐसी २८ कहानियाँ संकलित हैं, जिनमें उन्होंने जीवन के गहरे अनुभवों को कहानियों के माध्यम से चित्रित किया है। प्रायः सभी कहानियाँ ऐसी हैं, जिन्हें पढ़कर पाठक सहज ही अनेक उपयोगी शिक्षाएँ ग्रहण कर सकता है। गोयलीयजी जैसे गुण-ग्राहक व्यक्ति की लेखनी से प्रसूत ये कहानियाँ वास्तव में प्रत्येक पाठक को एक नवीन प्रेरणा और शिक्षा देने वाली हैं। अन्त में 'स्मृतियाँ' शीर्षक के अन्तर्गत आठ ऐसी कहानियाँ दी गई हैं, जिनमें लेखक ने अपने संस्मरणों के माध्यम से बड़ी ही महत्त्वपूर्ण बातें कही हैं। क्राउन साइज के १४० पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक **भारतीय ज्ञानपीठ** ने प्रकाशित की है और दो रुपए में प्राप्य है।

* * *

नाट्य

पर्दा उठने से पहले नामक इस पुस्तक में श्री राजेन्द्रकुमार शर्मा के 'उधार देवता', 'एक दिन की छुट्टी', 'बुरे फँसे नाम कमाने में', 'समझौता', 'किराये के आँसू', 'पर्दा-उठने से पहले' शीर्षक ६ एकांकी संग्रहीत हैं। ये सभी नाटक एकाधिक बार रंगमंच पर अभिनीत भी किए जा चुके हैं। इन नाटकों की भावभूमि और भाषा सभी ऐसी हैं कि जिसे देखकर पाठक इनकी सहजता का अनुमान लगा लेता है। जन-जीवन की सूक्ष्म-से-सूक्ष्म समस्याओं की झाँकी और उनका समाधान पाठक इन नाटकों में पा सकते हैं। लेखक के अनुसार "इन नाटकों के पात्र इस वसुधा के पात्र हैं। उनकी अपनी भाषा है, अपनी मान्यताएँ हैं, अपना दृष्टिकोण और अपने विचार हैं। प्रत्येक पात्र सहज रूप से हमारे सामने आता है।" क्राउन साइज के ११२ पृष्ठ की इस पुस्तक का प्रकाशन **आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली** ने किया है और यह दो रुपये में प्राप्य है।

* * *

यात्रा

हरी घाटी हिन्दी के प्रख्यात आलोचक डॉक्टर रघुवंश की नवीनतम कृति है। इसमें यात्रा, संस्मरण, डायरी और जर्नल, लेखक के सभी माध्यमों के दर्शन पाठकों को हो सकते हैं। इन्हें हम निबन्ध भी कह सकते हैं और कहानी भी। विचारों के गाम्भीर्य के कारण तो ये निबन्धों की कोटि में आते हैं, किन्तु शैली की दृष्टि से ये संस्मरण ही हैं। प्रायः सारी पुस्तक में ही लेखक की गहन चिन्तन-शीलता और शैली की आत्मीयता परिलक्षित होती है। लेखक के अनुसार "हरी घाटी" के अकाल्पनिक यात्रा 'संस्मरणों में भी एक अन्तर्वर्ती दृष्टि और आभ्यन्तरिक प्रमाण है।" क्राउन साइज के २१४ पृष्ठ की इस पुस्तक का प्रकाशन **भारतीय ज्ञानपीठ** की ओर से हुआ है और यह साढ़े चार रुपये में मिलती है।

* * *

स्वास्थ्य

आरोग्य का अमूल्य साधन—स्वमूत्र नामक पुस्तक में इसके लेखक श्री रावजी भाई मणिभाई पटेल ने अपने जीवन के गहन अनुभवों के आधार पर यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि मनुष्य की बड़ी-से-बड़ी बीमारियों का इलाज उसके अपने मूत्र द्वारा सम्भव है। यह पुस्तक पहले गुजराती भाषा में प्रकाशित हुई थी और अभी तक

इसके पाँच संस्करण हो चुके हैं, जिनमें लगभग १३ हजार प्रतियाँ छपी थीं। छठे संस्करण की तैयारी है। यह हिन्दी-अनुवाद हंसराज 'हंस' ने किया है और प्रकाशन हुआ है **भारत सेवक समाज, गुजरात** की ओर से। क्राउन साइज़ के ३०८ पृष्ठ की यह पुस्तक ३ रुपये ५० नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

ग्राम्य चिकित्सा में पं० केदारनाथ पाठक रासायनिक ने ग्रामों में रहने वाली जनता के लिए अनेक उपयोगी नुसखे लिखे हैं। लेखक के मत में गाँवों की बीमारियाँ वहाँ पर उपलब्ध होने वाली वस्तुओं से ही दूर हो सकती हैं। इस पुस्तक की उपयोगिता का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि इसके अभी तक छः संस्करण हो चुके हैं। क्राउन साइज़ के ६४ पृष्ठ की यह पुस्तक **श्यामसुन्दर रसायनशाला, वाराणसी** ने प्रकाशित की है और यह ६२ नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

प्रारम्भिक स्वास्थ्य में इसके लेखक श्री गौरीशंकर गुप्त ने दैनिक स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए ऐसे सूत्र लिखे हैं, जिससे प्रत्येक प्राणी अपने स्वास्थ्य को बना सकता है। दैनिक जीवन की प्रत्येक क्रिया ही स्वास्थ्य की आधार-भूमि है। इस पुस्तक से वह सब जानकारी हमें मिल जाती है। क्राउन साइज़ के २६ पृष्ठ की यह पुस्तक भी **श्यामसुन्दर रसायनशाला, वाराणसी** द्वारा प्रकाशित हुई है और ३७ नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

अध्यात्म

गीता-रत्न-प्रभा नामक इस पुस्तक में काका साहेब कालेलकर ने गीता के चुने हुए अर्थघन शब्दों की विवरणी प्रस्तुत की है। गीता और अध्यात्म के प्रेमी पाठकों के लिए यह पुस्तक सर्वथा उपादेय एवं संग्रहणीय है। उदाहरण के लिए गीता के ज्ञानयोग, कर्म, कर्मयोग, असत्, परिग्रह, परिचर्या आदि शब्दों का उल्लेख किया जा सकता है। गीता में ऐसे अनेक शब्द हैं, जिनकी व्याख्या अनिवार्य है। काका साहेब कालेलकर ने परिश्रम से ऐसे ही शब्दों की यह विवरणी प्रस्तुत की है। क्राउन साइज़ के ३४० पृष्ठों की यह पुस्तक **नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद** ने प्रकाशित की है और यह तीन रुपये में प्राप्य है।

* * *

गांधी चरित मानस नामक इस छोटी-सी पुस्तक में इसके लेखक श्री बालजी गोविन्दजी देसाई ने गांधीजी के जीवन की दक्षिण अफ्रीका की प्रथम यात्रा से लेकर भारत आकर पत्नी और बालकों के साथ पुनः दक्षिण अफ्रीका के लिए प्रस्थान करने तक का विवरण प्रस्तुत किया है। इस पुस्तक के इस भाग का नामकरण लेखक ने 'उद्योग-काण्ड: आरम्भ' ठीक ही किया है। पॉकेट साइज़ के १०० पृष्ठ की इस पुस्तिका का प्रकाशन भी **नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद** ने किया है और यह ६० नये पैसे में मिल सकती है।

* * *

शिक्षा

बेसिक शिक्षा में प्रो० हीरालाल चौबे, एम० ए० ने बेसिक शिक्षा के प्रयोजन, प्रारूप और प्रक्रिया पर व्यापक रूप से प्रकाश डाला है। इसके 'हमारी शिक्षा : भारतीय आधार एवं स्वरूप', 'परम्परित शिक्षा : परिणति', 'शिक्षा पद्धतियाँ', 'पाश्चात्य शैक्षिक दर्शन और बेसिक शिक्षा : एक तुलनात्मक अध्ययन', तथा 'बेसिक शिक्षा के उद्देश्यों एवं आदर्शों की दार्शनिक पृष्ठभूमि' आदि शीर्षकों से पता चलता है कि लेखक ने इस महत्त्वपूर्ण विषय पर कितना गम्भीर और अध्ययनपूर्ण प्रकाश डाला है। डिमाई साइज़ के २४० पृष्ठ की इस सजिल्द पुस्तक का प्रकाशन **जनकल्याण प्रकाशन, कलकत्ता** ने किया है और यह पाँच रुपये में प्राप्तव्य है।

आगामी मास के प्रकाशन

आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली-६

—**लिख-लिख भेजत पाती**, सं० नीरज, पत्र-संग्रह।

—**प्रतिनिधि सामूहिक-गान**, सं० योगेन्द्रकुमार लल्ला : श्रीकृष्ण, गीत-संग्रह।

—**सात प्रहसन**, उदयशंकर भट्ट, एकांकी-संग्रह।

—**इत्यादि**, उदयशंकर भट्ट, कविता-संग्रह।

—**रजनी में प्रभात का अंकुर**, श्रीमन्नारायण, कविता-संग्रह।

—**दिमाग का बीमा**, न० र० टण्डन, एकांकी-संग्रह।

—**तपस्वियों की कहानियाँ**, राजबहादुरसिंह, बाल-साहित्य।

—**रोचक कथाएँ**, योगिराज थानी, बाल-साहित्य।

—**आइये हिन्दी सीखें**, सोमदत्त गालवीय, प्रौढ़-शिक्षा माला।

दिल्ली पुस्तक सदन, दिल्ली

—**तोपों के साये में**, उपन्यास।

नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली

—**ब्रजभाषा के कृष्ण-भक्ति-काव्य में अभिव्यंजना-शिल्प**, डॉ० सावित्री सिनहा, आलोचना।

—**लिच्छवियों के अंचल में**, डॉ० जगदीशचन्द्र जैन।

—**जब हिमालय बोला**, श्रीमती सुभद्रादेवी, समाज-शिक्षा।

—**एक गोली दो शिकार**, रमेश नारायण तिवारी, बाल-साहित्य।

—**एनियास**, विराज, काव्योपन्यास।

भारतीय ग्रन्थमाला, लखनऊ

—**निर्धनता का अभिशाप**, कुमारी अन्नपूर्णा तांगड़ी।

—**झुलसते फूल**, 'कुमार'।

—**विदा राही विदा**, ज्ञानेन्द्रकुमार भटनागर।

—**रेतीला मोती**, 'कुमार'।

साहित्यवाणी, इलाहाबाद

—**माटी हमारी माँ**, ज्ञानेन्द्रकुमार भटनागर, उपन्यास।

हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद

—**मार्कण्डेय पुराण**, डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल।

—**आगरा जिले की बोली**, डॉ० रामस्वरूप चतुर्वेदी।

हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी

—**रूपी**, राहुल सांस्कृत्यायन, उपन्यास।

—**पाषाण पंख**, श्री नानकसिंह, उपन्यास।

—**इन्द्रजाल**, श्री रघुनाथसिंह, उपन्यास।

—**कौन जानता था**, ठाकुर राजबहादुरसिंह।

—**वन पाँखी**, श्री गुरुबचनसिंह।

—**जूही**, श्रीमती मालती बाई बड़ेकर।

—**गोरी हो गोरी**, सैयद रफ़ीक हुसैन, कहानी-संग्रह।

—**चमत्कारिक अनुभूतियाँ**, सन्तराम बी० ए०।

—**कुमारसम्भव**, महाकवि कालिदास, काव्य।

—**बेकरां**, जगन्नाथ आजाद, उर्दू-शायरी।

हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली

—**विमर्श और निष्कर्ष**, डॉ० सरनामसिंह शर्मा, आलोचना।

—**हिन्दी पद-परम्परा और गोस्वामी तुलसीदास**, डॉ० रामचन्द्र मिश्र, आलोचना।

—**पृथ्वीराज रासो के दो अध्याय**, प्रो० भारत भूषण 'सरोज', पु० मु०, आलोचना।

—**पृथ्वीराज रासो : आदि पर्व**, प्रो० भारत भूषण 'सरोज', आलोचना।

—**पृथ्वीराज रासो : पद्मावती समय**, प्रो० भारत भूषण 'सरोज', आलोचना।

अगस्त मास के प्रकाशन

आलोचनात्मक साहित्य

डॉ० आशा गुप्त, **खड़ी बोली काव्य में अभिव्यंजना**, ४६६, डिमाई, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली — १६.००
प्रो० दामोदरदास गुप्त, **तुलसीदास**, २०८, क्रा०, हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली — २.५०
डॉ० नगेन्द्र, **विचार और अनुभूति**, १५०, डिमाई, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली — ४.५०

उपन्यास

अमरनाथ शुक्ल, **राही**, पु० मु०, क्रा०, विद्या प्रकाशन मन्दिर, दिल्ली — ४.००
कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी, **आधे रास्ते**, पु० मु०, २२४, क्रा०, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली — ५.००
कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी, **सीधी चढ़ान**, पु० मु०, ३३२, क्रा०, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली — ५.००
दास्तायवस्की, अनु० रामचन्द्र तिवारी, **जुआरी**, १२८, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि० शाहदरा-दिल्ली — १.००
देवीप्रसाद धवन 'विकल', **पाखण्डी**, १०८, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि० शाहदरा-दिल्ली — १.००
भगवतीचरण वर्मा, **भूले बिसरे चित्र**, पु० मु०, ७२५, क्रा०, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली — ११.००
मामा वरेरकर, **संतुलन**, २३२, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्ज, दिल्ली — ४.००
मामा वरेरकर, **लड़ाई के बाद**, क्रा०, विद्या प्रकाशन मन्दिर, दिल्ली — ५.५०
मामा वरेरकर, **द्राविण प्राणायाम**, क्रा०, विद्या प्रकाशन मन्दिर, दिल्ली — ३.००
यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र', **नया इन्सान**, पु० मु०, क्रा०, विद्या प्रकाशन मन्दिर, दिल्ली — ३.००
शरत्चन्द्र, अनु० रामनाथ 'सुमन', **विराज बहू**, १२८, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि० शाहदरा-दिल्ली — १.००
शरत्चन्द्र, अनु० रामनाथ 'सुमन', **चरित्रहीन**, १२८, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि० शाहदरा-दिल्ली — १.००
शरत्चन्द्र, अनु० श्यामू सन्यासी, **पंडितजी**, १२८, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि० शाहदरा-दिल्ली — १.००
शिवकुमार कौशिक, **वैशाली की दत्तक पुत्री**, २८८, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — ६.५०
श्रीलाल शुक्ल, **अज्ञातवास**, १२८, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्ज, दिल्ली — २.५०

कविता

आनन्द मिश्र, **हिमालय के आँसू**, १४८, डि०, राजपाल एण्ड सन्ज, दिल्ली — ४.००
विराज, **अरुणोदय**, १३६, क्रा०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली — ४.००

कहानी

यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र', **विश्वामित्र की खोज**, क्रा०, विद्या प्रकाशन मन्दिर, दिल्ली — २.००

नाटक

उदयशंकर भट्ट, **नहुष-निपात**, ५६, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्ज, दिल्ली — १.२५

परितोष गार्गी, **छलावा**, ११२, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — २.००

बर्नर्ड शा, शिवदानसिंह चौहान, विजय चौहान, **शैतान**, १५२, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्ज, दिल्ली — ३.००

मामा वरेरकर, **उड़ते पंछी**, क्रा०, विद्या प्रकाशन मन्दिर, दिल्ली — २.२५

विजयकुमार गुप्त, **मुर्दा जी उठा**, ५६, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — १.००

सोफोक्लीज़, अनु० डॉ० रांगेय राघव, **एण्टीगोने**, ६४, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — १.२५

बाल-साहित्य—प्रौढ़-साहित्य

उर्मिलाकुमारी, **साहस का फल**, २४, कापी, हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली — १.२५

उर्मिलाकुमारी, **यमुना और सोना**, २४, कापी, हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली — ०.७५

ओंकार शरद्, अनु०, **गुलीवर की यात्राएँ**, २ भाग, कापी, राजकमल प्रकाशन प्र० लि० दिल्ली, प्रत्येक — १.७५

जगन्नाथप्रसाद मिश्र, **अगस्त्य**, २०, कापी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली — ०.७५

जगन्नाथप्रसाद मिश्र, **व्यास**, २०, कापी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली — ०.७५

जगन्नाथप्रसाद मिश्र, **विश्वामित्र**, २०, कापी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली — ०.७५

जगन्नाथप्रसाद मिश्र, **दुर्वासा**, २०, कापी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली — ०.७५

बी० डी० अवस्थी, **ग्रह और नक्षत्र**, ४०, कापी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली — १.२५

बी० डी० अवस्थी, **सूर्य और चन्द्र ग्रहण**, ४४, कापी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली — १.२५

रत्नसिंह गिल, **परमाणु-शक्ति**, ४८, डि०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली — १.५०

राजेन्द्र शर्मा, **महाभारत के पशु-पक्षियों की कहानियाँ, भाग-१**, ४८, डिमाई, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली — १.५०

रामचन्द्र तिवारी, सिद्धि तिवारी, **धरती माता**, १२८, डिमाई, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — ३.००

विराज, **भारत के प्रमुख स्तम्भ**, ७६, डि०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली — १.५०

विकास वाजपेयी, **हमारे राष्ट्र पुरुष**, ३२, कापी, हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली — १.५०

वीरेन्द्रकुमार गुप्त, **हड्डियों का दान**, ६८, क्रा०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली — १.५०

श्रीकृष्ण, योगेन्द्रकुमार 'लल्ला' (सम्पा०), **प्रतिनिधि बाल एकांकी**, २८८, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — ६.५०

विविध

अक्षयकुमार जैन, **ब्रिटेन में चार सप्ताह**, ८८, क्रा०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली — २.५०

आशारानी वोहरा, **वस्त्र विज्ञान**, २४०, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — ६.५०

जगन्नाथ नलिन, **जवानी का नशा**, १६८, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — ३.००

राजेन्द्र अवस्थी 'तृषित', **नया तीरथ**, ४८, डि०, राजपाल एण्ड सन्ज, दिल्ली — १.००

लक्ष्मीनारायण शर्मा, **डॉक्टर के आने से पहले**, १४०, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली — १.००

वेदप्रकाशसिंह, **लोक-प्रशासन**, ४००, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — १०.००

प्रकाशन समाचार

वर्ष : ९
अंक : २
वार्षिक : ३.००
एक प्रति : ०.३१

सम्पादक : ओंप्रकाश, डायरेक्टर इंचार्ज, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड

हिन्दी की सामान्य पुस्तकों की बिक्री का 'सीज़न' फिर से आ रहा है और हिन्दी-भाषी प्रदेशों में प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता इसके लिए तैयारी में लग गए हैं।

हिन्दी की पुस्तकों की बिक्री 'सीज़नल' है—जून-जुलाई में पाठ्य-पुस्तकें तथा दिसम्बर से मार्च तक सामान्य पुस्तकें बिकती हैं, शेष समय अधिकांश प्रकाशक और पुस्तक-विक्रेता हाथ-पर-हाथ धरे बैठे रहते हैं। हिन्दी में पाठकों के अभाव और कमी का इससे बड़ा और क्या सबूत हो सकता है?

इन दिनों सामान्य पुस्तकों की अधिकांश खरीद सरकार द्वारा अनुदान-प्राप्त पुस्तकालय अथवा विभिन्न सरकारी विभाग करते हैं। प्रकाशक अपनी सामान्य पुस्तकों की बिक्री के लिए एक बड़ी सीमा तक इन पुस्तकालयों और सरकारी विभागों पर आश्रित रहते हैं। यद्यपि इस प्रकार का आश्रय हिन्दी के प्रकाशन-व्यवसाय के स्वास्थ्य का लक्षण नहीं है, लेकिन इससे तब तक उन्मुक्ति सम्भव नहीं है जब तक कि हिन्दी में पुस्तकों को खरीदकर पढ़ने वालों की संख्या काफ़ी नहीं बढ़ जाती।

यदि पुस्तकालय और सरकारी विभाग पुस्तकों को खरीदने का निश्चय करते समय केवल पुस्तक की श्रेष्ठता और उत्कृष्टता को ही ध्यान में रखें तो प्रकाशक-वर्ग को कोई शिकायत नहीं हो सकती। लेकिन पुस्तकों की बड़ी-बड़ी खरीद में न केवल टेंडर द्वारा प्राप्त कमीशन की संघातक, ऊँची-ऊँची दरें ही, हैं वरन् अनेक अधिकारियों द्वारा व्यक्ति-विशेष अथवा प्रकाशक-विशेष अथवा किसी विचार-धारा-विशेष के पक्ष में अधिकारियों द्वारा किये गए निर्णय भी अच्छे प्रकाशनों और प्रकाशनों की राह की बाधा बन जाते हैं। कई राज्यों के शिक्षा-विभाग स्वयं ही इस बात का फैसला कर लेते हैं कि उनके स्कूलों के पुस्तकालयों द्वारा कौन-कौन पुस्तकें खरीदी जाएँगी। इस पक्षपात का एक उदाहरण उत्तर प्रदेश में मिलता है जहाँ एक-दो प्रकाशन-संस्थाओं की कुछ पुस्तकों की ३३-३३ हज़ार प्रतियों की खरीद का आर्डर गत वर्ष शिक्षा-विभाग ने प्रसारित कर दिया था। स्कूल या उनकी ओर से विभिन्न जिलों के शिक्षा-अधिकारी, पुस्तकों का स्वयं चुनाव करने से वंचित कर दिये गए थे। यह स्थिति देश-भर में फैले हुए हिन्दी के उन प्रकाशकों के लिए मान्य नहीं है जो हिन्दी-साहित्य के अभावों की पूर्ति में और उसे देश की राज्यभाषा के अनुकूल गौरव प्राप्त करवाने के सत्प्रयत्नों में लाखों रुपया तथा अपना अथक परिश्रम लगा रहे हैं। उनके प्रयासों का फल उन्हें उपेक्षा के रूप में नहीं मिलना चाहिए और देश के शिक्षा-अधिकारियों पर उनका इतना भी विश्वास बना रहना चाहिए कि उनके अच्छे प्रकाशनों का इस 'लाइब्रेरी सीज़न' में समादर किया जाएगा।

प्रायः सभी राज्यों में पुस्तकों की खरीद के बजट काफ़ी अनुत्तरदायी ढंग से खर्च किये जाते हैं—बजट तो बहुत पहले बन चुकते हैं, क्यों नहीं पुस्तकों की खरीद सारा वर्ष-भर की जा सकती? यदि सारे वर्ष की खरीद दो-तीन महीनों में न करके अधिक समय में की जा सके तो निश्चय ही पुस्तकालय अपने लिए अच्छी पुस्तकों का चुनाव कर सकेंगे और प्रकाशकों और पुस्तक-विक्रेताओं से अधिक सन्तोष प्राप्त कर सकेंगे।

● ● ●

हमारे नवीन

प्र का श न

[आलोचना]

बाबू श्यामसुन्दर दास : उनका व्यक्तित्व और कृतित्व

लेखक : रामनाथ पाण्डेय

[हिन्दी-जगत् में 'बाबू साहब' के नाम से विख्यात् स्व० डॉ० श्यामसुन्दर दासजी के व्यक्तित्व एवं उनकी साहित्यिक उपलब्धियों पर प्रामाणिक ग्रन्थ]

डिमाई आकार : चित्ताकर्षक गेट-अप : मजबूत जिल्दबन्दी; मूल्य : २.२५ न० पै०

[उपन्यास]

कटी पतंग

लेखक : नानकसिंह

[पंजाबी के लोकप्रिय मनीषी कथाकार श्री नानकसिंह का नारी-समस्याओं पर रचित हृदयग्राही एवं अनूठा उपन्यास]

पृ० सं० ४८० : डबल-क्राउन आकार : पचरंगा लुभावना गेट-अप : मूल्य रु० ६.००

द्विधा

लेखक : 'युगल'

[मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर आधारित संश्लिष्ट चरित्रों की अकथित कथा]

पृ० सं० ३०८ : डबल-क्राउन आकार : मनोमुग्धकारी कवर : आकर्षक छपाई : मूल्य रु० ३.५०

[नाटक]

पंचमाँगी

लेखक : राजकुमार

[भारत के सीमावर्ती क्षेत्रों में पंचमाँगी कार्रवाइयों पर आधारित प्रथम सनसनीखेज़ नाटक]

तिरंगा गेट-अप : मोनोटाइप में मुद्रित : डबल-क्राउन आकार : पृ० सं० ११६ : मूल्य रु० २.००

हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी-१

अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ

कार्यकारिणी समिति की बैठक की कार्यवाही

संघ की कार्यसमिति की १४ सितम्बर '६१ को हुई बैठक के निर्णय।

अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ की कार्यकारिणी समिति की बैठक १४ सितम्बर '६१ (बृहस्पतिवार) को श्री कृष्णचन्द्र बेरी की अध्यक्षता में आत्माराम एण्ड संस के हिन्दी विभाग में सम्पन्न हुई। बैठक में निम्नलिखित सदस्य उपस्थित थे—

१. श्री पुरुषोत्तमदास मोदी, गोरखपुर
२. " रामतीर्थ भाटिया, राजधानी ग्रन्थागार, नई दिल्ली
३. " चम्पालाल रांका, किताब महल, जयपुर
४. " बलदेवदास अग्रवाल, बम्बई बुक डिपो, कलकत्ता
५. " कन्हैयालाल मल्लिक, इण्डियन पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली
६. " ओंप्रकाश, राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०, दिल्ली
७. " दीनानाथ मल्होत्रा, राजपाल एण्ड संज़, दिल्ली
८. " वाचस्पति पाठक, भारती भण्डार, प्रयाग
९. " मैथिलीशरण सिंह, पुस्तक भण्डार, पटना
१०. " कैलाशनाथ भार्गव, नन्दकिशोर एण्ड सन्स, दिल्ली
११. " लक्ष्मीचन्द्र जैन, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी
१२. " योगेन्द्रदत्त, भारती साहित्य सदन, नई दिल्ली
१३. " बलराज सहगल, एन० डी० सहगल एण्ड सन्स, दिल्ली
१४. " देवनारायण द्विवेदी, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी
१५. " रामलाल पुरी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली
१६. " कृष्णचन्द्र बेरी, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी
१७. श्री मार्तण्ड उपाध्याय, सस्ता साहित्य मण्डल, दिल्ली (विशेष आमन्त्रित)
१८. " यशपाल जैन, " " "
१९. " दिग्दर्शनचरण जैन, ज्ञान प्रकाशन, दिल्ली

संघ के महामन्त्री ने इलाहाबाद में हुई कार्यकारिणी की पिछली बैठक की कार्यवाही पढ़कर सुनाई, जिसे समिति ने सर्व-सम्मति से स्वीकृत किया।

इसके बाद समिति ने हिन्दी के प्रख्यात विद्वान, पटना विश्वविद्यालय के अध्यक्ष श्री नलिनविलोचन शर्मा तथा श्री सौभाग्यमल जैन, सुषमा साहित्य मन्दिर, जबलपुर के अग्रज श्री जोरावरसिंह के निधन पर शोक-प्रस्ताव पास किए और प्रधान मन्त्री को निर्देश दिया कि वे दोनों शोक-सन्तप्त परिवारों को संघ के प्रस्ताव से सूचित करें। दोनों प्रस्तावों का अविकल पाठ निम्न है—

"अ० भा० हिन्दी प्रकाशक संघ की कार्यसमिति हिन्दी के प्रख्यात विद्वान्, पटना विश्वविद्यालय के हिन्दी-विभाग के अध्यक्ष श्री नलिन विलोचन शर्मा के आकस्मिक निधन पर शोक प्रकट करती है और प्रधान मन्त्री को निर्देश देती है कि वे शोक-सन्तप्त परिवार को संघके प्रस्ताव से सूचित कर दें।"

"अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ की कार्य-समिति हमारे माननीय सदस्य श्री सौभाग्यमल जैन, सुषमा साहित्य मन्दिर, जबलपुर, के अग्रज श्री जोरावरसिंह के स्वर्गवास पर शोक प्रकट करती है और प्रधान-मन्त्री को निर्देश देती है कि वे शोक-सन्तप्त परिवार को संघ के प्रस्ताव से सूचित कर दें।"

श्री ओंप्रकाश जी ने प्रश्न किया कि पिछली कार्य-

कारिणी की बैठक में जो प्रस्ताव पारित हुए थे उन पर क्या कदम उठाये गए।

श्री कृष्णचन्द्र बेरी ने 'राष्ट्रीय पुस्तक समारोह' विषयक प्रस्ताव के अन्तर्गत समारोह-सम्बन्धी प्रगति का विवरण प्रस्तुत किया। उन्होंने बताया कि राष्ट्रीय पुस्तक समारोह के लिए सभी जगह अपार उत्साह है। वे स्वयं इस सम्बन्ध में सरकारी तथा गैर-सरकारी संस्थाओं से सहयोग और सहायता के लिए पत्राचार कर रहे हैं; लोगों से मिल रहे हैं। सूचना तथा प्रसार-मन्त्री श्री केसकर से हुई अपनी भेंट का ज़िक्र करते हुए श्री कृष्णचन्द्र बेरी ने बताया कि उन्होंने उनसे 'राष्ट्रीय पुस्तक समारोह' के प्रति सहयोग तथा सहायता के लिए रेडियो, टेलीविज़न, चलचित्रों आदि के उपयोग के सम्बन्ध में बातचीत की और सुझाव रखा कि सूचना तथा प्रसार-मन्त्रालय के संरक्षण में निकलने वाले पत्रों के विशेषांक निकाले जाएँ। इसके अलावा उन्होंने बताया कि विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं ने राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह के अवसर पर अपने विशेषांक निकालने और अनेक विद्वानों ने समारोह के अन्तर्गत आयोजित सभाओं में भाषण आदि का सहयोग देने का आश्वासन दिया है। उन्होंने आशा प्रकट की कि सरकार की ओर से भी राष्ट्रीय पुस्तक समारोह की पूरी सहायता प्राप्त होगी। अन्त में उन्होंने बनारस में राष्ट्रीय पुस्तक समारोह के विस्तृत कार्यक्रम का प्रारूप पढ़कर सुनाया।

नैट-बुक समझौता—इस सम्बन्ध में कार्य-समिति ने स्थिर किया कि श्री कन्हैयालाल मल्लिक (संयुक्त मन्त्री) नैट-बुक समझौता-सम्बन्धी कार्य का संचालन करेंगे।

सरकार की ओर से सन् १९५२ में निकाले गए नोटिफ़िकेशन, जिसमें कहा गया है कि पुस्तकों की खरीद टेण्डरों के आधार पर न की जाए, के सम्बन्ध में संयुक्त मन्त्री श्री पुरुषोत्तम मोदी समुचित कार्यवाही करेंगे और इस कार्यवाही का आधार इस प्रकार होगा—

(अ) संघ में उस नोटिफ़िकेशन की प्रतियों का प्रकाशन तथा वितरण।

(आ) प्रत्येक प्रदेश में इस विषय पर आन्दोलन की आयोजना।

(ई) पोस्टरों का प्रकाशन और विभिन्न सरकारों से

संघ की ओर से प्रतिनिधि-मण्डल की इस सम्बन्ध में वार्ता।

संघ का मुख-पत्र

इस सम्बन्ध में सूचना प्राप्त हुई कि श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन ने संघ के मुख-पत्र की तैयारी के सम्बन्ध में यथा-सम्भव प्रयत्न किया है। परन्तु उनके प्रयत्नों को यथोचित सहयोग और सहायता नहीं मिल सकी। श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन ने इस सम्बन्ध में बताया कि उन्हें अब तक यह नहीं मालूम हुआ था कि संघ की कार्यवाहियों तथा आवश्यक सूचनाओं के सम्बन्ध में प्रामाणिक सामग्री उनके पास कहाँ से और किस प्रकार पहुँचेगी। मुख-पत्र के सम्बन्ध में समिति ने सभापति, प्रधान मन्त्री और श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन पर यह भार सौंपा कि वे तीनों आपस में इस सम्बन्ध में विचार करके निर्णय करेंगे और उन्हें इस कार्य में श्री ओंप्रकाशजी का सहयोग प्राप्त होगा। मुख-पत्र के सम्बन्ध में यह सुझाव समिति ने सर्व-सम्मति से स्वीकृत किया कि राष्ट्रीय पुस्तक समारोह के अवसर पर प्रकाशित किया जाने वाला 'स्मृति-उपायन' संघ के प्रस्तावित मुखपत्र का प्रथम अंक हो।

कार्य-समिति की पिछली बैठक के एक प्रस्ताव में विश्वविद्यालयों को भेजी जाने वाली पुस्तकों की संख्या निश्चित करने के सम्बन्ध में उचित कार्यवाही किये जाने का निर्णय किया कि इस सम्बन्ध में प्रधान मन्त्री पत्राचार करेंगे और इस कार्य में प्रधान मन्त्री को कार्य-समिति के सभी सदस्यों का पूरा सहयोग प्राप्त होगा।

'अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशक संघ' में संघ की सदस्यता

इस प्रस्ताव पर प्रधान मन्त्री ने अपना मत प्रकट किया कि समिति को अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशक संघ का सदस्य बनने से कोई लाभ नहीं हो सकता, क्योंकि 'अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशक संघ' की सक्रियता पश्चिमी देशों तक ही सीमित है। इसके अतिरिक्त संघ की ओर से हमें इस दौरान बहुत कम पत्र तथा सूचनाएँ प्राप्त हुई हैं। अतः उनकी राय में संघ का 'अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशक संघ' का सदस्य बनना ७५० रुपये प्रतिवर्ष का नकद नुकसान है; जबकि उससे हमें कोई भी लाभ होने की सम्भावना नहीं है। श्री

बैंक में एकाउण्ट खोलने तथा सुचारु रूप से चलाने का भार श्री कन्हैयालाल मल्लिक ने लिया।

अन्त में श्री रामतीर्थ भाटिया ने बताया कि ग्रामीण पुस्तकालयों और सामुदायिक विकास-खण्डों में जो पुस्तकें खरीदी जाती हैं उनके बिलों के भुगतान में अपेक्षा से कहीं अधिक समय लग जाता है, जिसके फलस्वरूप अल्प पूंजी वाले पुस्तक-व्यवसायों को काफी कठिनाई होती है। इस सम्बन्ध में उन्होंने एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया जिसे समिति ने सर्व-सम्मति से स्वीकार किया। वह प्रस्ताव इस प्रकार है—

"अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ की यह कार्य-समिति भारत सरकार, विशेषतः सामुदायिक विकास मन्त्रालय, का ध्यान इस ओर आकर्षित करती है कि योजनाओं में शिक्षा-प्रसार एवं ग्रामीण पुस्तकालयों के लिए सामुदायिक विकास-खण्डों द्वारा जो पुस्तकें खरीदी जाती हैं उनके बिलों का भुगतान शीघ्र-से-शीघ्र कराने का प्रयत्न करें और अधिकारियों को भी इस सम्बन्ध में कड़ा आदेश दें।

बिलों के भुगतान में इतना लम्बा समय लग जाता है, जिससे इस व्यवसाय के प्रायः अल्पपूंजी वाले प्रकाशक या विक्रेता आर्थिक संकट में पड़ जाते हैं और समाज-विकास के महत्वपूर्ण अंश की पूर्ति नये प्रकाशनों के प्रचार एवं प्रसार में बाधा पड़ती है। यह शासन और व्यवस्था की दृष्टि से भी आवश्यक है कि बिलों का भुगतान शीघ्र हो।"

समिति ने भारत सरकार के कृषि-मन्त्रालय की हिन्दी में वैज्ञानिक और तकनीकी प्रकाशनों से सम्बन्धित स्कीम के अन्तर्गत प्रकाशकों के सहयोग के सम्बन्ध में श्री ओंप्रकाश का प्रस्ताव सर्व-सम्मति से स्वीकृत किया, जिसका अविकल रूप इस प्रकार है—

"यह समिति भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय का ध्यान उनके अधिकारियों की संघ के प्रतिनिधियों से हुई और कई वर्ष से चली बातचीत की ओर दिलाती है। इस बातचीत के परिणामस्वरूप हिन्दी के प्रकाशकों ने भारत सरकार को हिन्दी में वैज्ञानिक और तकनीकी प्रकाशनों के लिए अपना सहयोग का आश्वासन पारस्परिक विचार-विमर्श से तय हुए इस फार्मूले पर दिया था कि प्रकाशित पुस्तकों का मूल्य लागत दाम से ढाई से तीन गुना तक रखा जाएगा। मूल्य रखने के इससे कम के सिद्धान्त पर सामान्य प्रकाशक केवल अपनी आर्थिक हानि करके ही इस ओर कुछ कर सकेंगे। हिन्दी के प्रकाशकों का सहयोग हिन्दी साहित्य के विभिन्न अंगों की पूर्ति के लिए इसी फार्मूले पर प्राप्त किया जा सकता है।

समिति इस बात की पुष्टि करती है कि संघ के सदस्य प्रकाशक भारत सरकार को हर प्रकार का सहयोग देने के लिए तैयार हैं। शिक्षा मन्त्रालय से अनुरोध है कि वह मूल्य रखने के उपरिलिखित फार्मूले पर स्थिर रहे।

अन्त में धन्यवाद प्रस्ताव के साथ बैठक विसर्जित हो गई।

व्यापारिक शर्तें

रामलाल पुरी

(१) थोक-विक्रेता

थोक-विक्रेता, जिसे पुस्तक-वितरक भी कहते हैं, इस व्यापार में बहुत महत्वपूर्ण व्यक्ति होता है। छोटे प्रकाशकों के लिए तो वह बहुत ही सहायताप्रद होता है, जो अपने छोटे-से कारोबार में बहुत सी चीजों का भार नहीं उठा सकते। उसकी वजह से प्रकाशक ऐसे बहुत से छोटे-छोटे खातों का हिसाब रखने से बच जाते हैं जिनसे पैसा वसूल करने के लिए अदालती कार्यवाही करना भी असम्भव होता है। अति विकसित देशों में तो थोक-विक्रेता व्यापार का मेरुदण्ड होता है। यह व्यापार कुछ है ही इस प्रकार का कि प्रकाशक को अपना माल निकालने के लिए बहुत बड़े पैमाने पर लोगों को कर्ज देना पड़ता है। चूंकि उसके कारोबार में हर समय बड़ी सावधानी की और गम्भीरतापूर्वक ध्यान देने की जरूरत रहती है, इसलिए उसके लिए यह सम्भव नहीं होता कि वह छोटे-छोटे विक्रेताओं की समस्याओं को सुलझाने में बहुत समय दे सके। वह अपनी इस समस्या को थोक विक्रेता के जरिये हल कर लेता है। महत्वपूर्ण बात यह है कि उसे पुस्तक-विक्रेताओं के हाथ अपने माल की बिक्री में से इतना काफी मुनाफ़ा मिलना चाहिए कि वह आराम से रह सके। यह बहुत ही महत्वपूर्ण बात है और साथ ही बहुत कठिन बात भी है। उसे मुनाफ़ा देने के लिए किताबों की कीमतें बढ़ानी पड़ेंगी जो शायद सम्भव न हो। दूसरा रास्ता यह है कि पुस्तक-विक्रेताओं को दिये जाने वाले कमीशन की दर घटा दी जाए, लेकिन यह बात भी ठीक नहीं है क्योंकि पुस्तक-विक्रेता इस बात पर जरूर बुरा मानेगा और वह निश्चय ही ऐसी स्थिति में होता है कि किताबों की बिक्री धीमी कर दे। पहले थोक-विक्रेता उतना ही कमीशन देता था जितना प्रकाशक देता है, पर धीरे-धीरे अब यह तरीका खत्म होता जा रहा है और थोक-विक्रेता को प्रकाशकों से लगभग उतना ही कमीशन मिलता है जितना फुटकर विक्रेता को। उसे अब मुनाफ़ा ज़्यादा माल की बिक्री से होता है। वह एक साथ बहुत सा माल उठाकर भी ज्यादा दर पर कमीशन ले सकता है, जिसका कि अब आम चलन हो गया है। छोटे पुस्तक-विक्रेता, जिनके यहाँ माल की निकासी बहुत थोड़ी होती है, इस सुविधा का लाभ नहीं उठा सकते। फिर वह पुस्तक-विक्रेता को कुछ कम कमीशन देकर भी, कुछ मुनाफ़ा कमाता है। पुस्तक-विक्रेता भी इस पर आपत्ति नहीं करता क्योंकि वह उधार और बिना बिकी हुई पुस्तकों की वापसी के रूप में उससे दूसरी सुविधाएँ प्राप्त कर लेता है और उसका बहुत सा ऊपर का खर्च बच जाता है। उसे दूसरी सुविधा यह होती है कि खरीदने से पहले वह कई प्रकाशकों की बहुत सी किताबें खुद देख सकता है और इस प्रकार अपनी दुकान के सीमित स्थान का बेहतर सदुपयोग कर सकता है। इन सब कारणों से वह थोक-विक्रेता से माल खरीदना ज्यादा पसन्द करता है और उसे लगभग ५% कमीशन कम मिलने पर कोई आपत्ति नहीं होती, क्योंकि कई दूसरे तरीकों से वह इस कमी को पूरा कर लेता है और उसके लिए जोखिम बहुत कम रह जाता है। थोक-विक्रेता विभिन्न ग्राहकों के बीच प्रचार-सामग्री का भी वितरण करता है और इस प्रकार पुस्तकों की माँग और खपत बढ़ती है। थोक-विक्रेता पुस्तकालयों के हाथ भी पुस्तकें बेचता है और जिन पुस्तकालयों के नाम प्रकाशक संघ अथवा पुस्तक-विक्रेता संघ के पास दर्ज होते हैं उन्हें वह १०% कमीशन देता है। जिन पुस्तकालयों के नाम

दर्ज नहीं होते उन्हें कमीशन नहीं मिलता। इस प्रकार के पुस्तकालयों को यह आश्वासन देना पड़ता है कि वे संघ के सदस्यों के अतिरिक्त और किसी से माल नहीं खरीदेंगे। थोक-विक्रेता और फुटकर पुस्तक-विक्रेता के बीच कोई प्रतिस्पर्धा नहीं होती क्योंकि दोनों के कार्य-क्षेत्र अलग-अलग होते हैं। उन देशों में पुस्तक-विक्रेता अपनी जीविका के लिए अपने आस-पास के इलाकों पर निर्भर रहता है। चूँकि लोगों को किताबें खरीदने की आदत होती है और इसके अलावा पुस्तक-विक्रेता स्टेशनरी का सामान भी बेचता है, इसलिए वह अपने भर को काफ़ी पैसा पैदा कर लेता है।

किताबों की इन दुकानों में काफी जगह होती है। क्योंकि 'नेट' मूल्य पर पुस्तकें खरीदने के समझौते की यह एक शर्त होती है, इसलिए विभिन्न विक्रेताओं के बीच कोई होड़ या प्रतिद्वन्द्विता नहीं होती। कम-से-कम ऊपर से देखने में तो ऐसा ही लगता है। चूँकि सारी दुनिया में मानव-स्वभाव एक जैसा ही होता है इसलिए निश्चय के साथ कोई यह नहीं कह सकता कि अन्दर-अन्दर क्या होता है। तमाम बातों के बावजूद यह सुनने में आया है कि इन देशों के पुस्तक-विक्रेताओं के बीच भी एक-दूसरे से कम मूल्य पर किताबें सप्लाई करके आर्डर हासिल करने की प्रवृत्ति पाई जाती है।

हमारे यहाँ भारत में इस प्रकार के थोक-विक्रेता नहीं होते, कम से-कम ऐसे थोक-विक्रेता तो नहीं होते जो हमारी दूसरी राष्ट्रीय भाषाओं की पुस्तकें बेचते हों। विदेशी पुस्तकों के कुछ थोक-विक्रेता तो हैं भी। उनके कार्य-क्षेत्र अलग होते हैं। उनमें से कुछ तो ऐसे हैं जो केवल प्रकाशकों से माल खरीदकर फुटकर पुस्तक-विक्रेताओं के हाथ बेच देते हैं। वे बहुत बड़ी संख्या में एक साथ पुस्तकें खरीद लेते हैं और फिर मुद्रा की विनिमय की दर खुद तय करके अपनी व्यापार की शर्तें खुद लगाते हैं। उनमें से कुछ तो ऐसे होते हैं जो प्रकाशकों द्वारा दिये जाने वाले कमीशन का दो-तिहाई स्वयं रख लेते हैं। वे इस बात को उचित इस आधार पर ठहरा सकते हैं कि वे अपने प्रकाशकों की पुस्तकें काफी संख्या में रखते हैं और उनके यहाँ ये पुस्तकें लगभग हमेशा ही उपलब्ध रहती हैं। इन पुस्तकों की बिक्री से पुस्तक-विक्रेता को केवल १०% बचता है जो उन्हें बहुत अखरता है, क्योंकि इतने में उनका ऊपर का खर्च भी मुश्किल से पूरा होता है। वे आम तौर पर उन किताबों का स्टाक अपने यहाँ नहीं रखते और कोई आर्डर आने पर ही मँगाते हैं। जैसा कि मैं पहले भी कह चुका हूँ, हमारे यहाँ भारतीय पुस्तकों के सही माने में थोक-विक्रेता या वितरक नहीं हैं। इसकी वजह यह है कि यह काम लाभदायक नहीं सिद्ध हुआ है। भारत में पुस्तकों की दुकानें आम तौर पर एक-दूसरे से फासले पर नहीं होतीं बल्कि एक-दूसरे के बिलकुल पास होती हैं। बड़े-बड़े शहरों में तो किताबों के बाजार होते हैं जहाँ किताबों की बहुत सी दुकानें होती हैं। इनमें कुछ होड़ तो इसलिए भी चलती है कि ग्राहक एक दुकान से दूसरी दुकान में जाकर कीमतें पूछता है और शंकाएँ पैदा करता है। जब वह कोई किताब खरीदता है तो जाहिर यही करता है कि उसने पुस्तक इसलिए उसके यहाँ से खरीदी कि उसके यहाँ दाम दूसरों के यहाँ से कम थे। वास्तव में शायद ऐसा न भी हो, पर मन में शंका तो पैदा हो ही जाती है। इसका

देश-भर के प्रमुख

सितम्बर, १९६१ में **प्रकाशन समाचार** ने अपनी ज़िन्दगी के नवें वर्ष में पदार्पण किया है। **प्रकाशन समाचार** के माध्यम से हिन्दी प्रकाशन व्यवसाय की हमने निरन्तर सेवा करने की कोशिश की है। जहाँ तक हम सफल या असफल हुए हैं, यह आप ही कह सकेंगे।

अब तक इस पत्र के जितने विशेषांक निकले हैं, उनका सम्बन्ध प्राय: विशिष्ट श्रेणियों की पुस्तकों अथवा लेखकों से रहा है। अब हम जनवरी, १९६२ का विशेषांक **प्रकाशक विशेषांक** के नाम से निकालने जा रहे हैं। हमारी इच्छा है कि इस विशेषांक में देश के सभी प्रमुख प्रकाशकों, उनके मुख्य अधिकारियों और कार्यकर्ताओं तथा उनके समस्त प्रकाशनों का परिचय रहे।

प्रकाशक विशेषांक को बहुत ही सजधज के साथ निकालने की योजना है। काग़ज़ सामान्य अंकों में प्रयुक्त होने वाले न्यूज़ प्रिन्ट की जगह ग्लेज़्ड यानी चिकना लगाया जाएगा। प्रकाशकों के चित्र वग़ैरह भी इसमें रहेंगे जो कि इस चिकने काग़ज़ पर अच्छी तरह छप सकेंगे। इसलिए इस विशेषांक में दिये जाने वाले विज्ञापन की दरें कुछ बढ़ा दी गई हैं जो कि निम्न प्रकार हैं :—

कवर : मुख पृष्ठ	१०० रुपये
कवर : अंतिम पृष्ठ	९० रुपये
कवर : दूसरा और तीसरा पृष्ठ	८०-८० रुपये
सामान्य पृष्ठ	६० रुपये
आधा पृष्ठ	३५ रुपये
चौथाई पृष्ठ	२० रुपये

विज्ञापन की ये बढ़ी हुई दरें केवल इस विशेषांक के लिए हैं।

कृपया अपनी संस्था के सम्बन्ध में निम्न सूचनाएँ नवम्बर मास के अन्त तक अवश्य भेज दीजिए। इसके बाद प्राप्त हुई सूचनाएँ इस विशेषांक में सम्मिलित करने में हम असमर्थ होंगे। अपने प्रकाशनों का सम्पूर्ण सूचीपत्र भी भेज दीजिए। अपने नये प्रकाशनों का समावेश, जोकि आप समझते हों कि दिसम्बर के अन्त तक आ जाएँगे, इस सूची में कर लेना आपके हित में होगा।

१. संस्था का नाम और पता।

२. स्थापना-वर्ष।

३. संस्थापक यदि चित्र आदि भेजना चाहें तो साथ संलग्न कर दें।

४. यदि वैयक्तिक संस्था हो तो स्वत्वाधिकारी का नाम, परिचय तथा चित्रादि।

५. शाखाएँ यदि हों तो उनके पते, टेलीफोन नम्बर इत्यादि।

६. संस्था का प्रारम्भिक रूप।

प्रकाशकों से

७. किस प्रकार के प्रकाशनों में विशेष रुचि लेते हैं, उनका ब्यौरा, मुख्य लेखकों के नाम।

८. संस्था के मुख्य अधिकारियों, टूरिस्ट एजेंटों तथा मुख्य कार्यकर्ताओं के नाम, परिचय तथा चित्रादि यदि देना चाहें तो।

९. आपकी प्रकाशन-संस्था की विशिष्टताएँ।

१०. अन्य विवरण।

११. आपके प्रकाशनों की सम्पूर्ण सूची जो कि विषयानुसार बनाई जाए। हर पुस्तक के नाम के साथ लेखक का नाम, आकार, वर्तमान संस्करण तथा मूल्य दिया जाना चाहिए। यदि पुस्तक अनूदित हो तो मूल लेखक तथा अनुवादक का नाम भी अवश्य दें।

इस विशेषांक की फिलहाल ५००० प्रतियाँ छपवाने की योजना है। देश-भर में पुस्तकें खरीदने वाले अधिकारियों और पुस्तकालयों को इस विशेषांक की प्रतियाँ भेजी जाएँगी।

प्रत्येक संस्था के सम्बन्ध में **प्रकाशन समाचार** के एक कालम के आकार में दस पंक्तियों तक हम निःशुल्क प्रकाशित करेंगे। इससे अधिक आपकी संस्था का परिचय एक पूरे पृष्ठ तक अर्थात् ५० अतिरिक्त पंक्तियों में दिया जा सकेगा। प्रत्येक अतिरिक्त पंक्ति का मूल्य १ रुपया देना होगा।

यदि आप अपनी संस्था के अधिकारियों अथवा कार्यकर्ताओं के चित्र छपवाना चाहेंगे तो पंक्तियों के हिसाब से उस स्थान का मूल्य चार्ज होगा। अपना परिचय, अपने प्रकाशनों के सूचीपत्र के साथ देश-भर के पुस्तकालयों तथा पुस्तकें खरीदने वाले अधिकारियों तक पहुँचाने का इससे सस्ता और सुलभ साधन आपको नहीं मिल सकता। इस विशेषांक में अपने विज्ञापन आदि का स्थान अभी से सुरक्षित करवा लें।

प्रकाशकों का परिचय तथा उनके सूचीपत्र आदि अकारादि क्रम से प्रकाशित किये जाएँगे।

इस विशेषांक का मूल्य एक रुपया होगा। यदि आप **प्रकाशन समाचार** के ग्राहक नहीं हैं तो ३ रुपये भेजकर अभी एक वर्ष के लिए ग्राहक बन जाएँ ताकि आपको विशेषांक निःशुल्क प्राप्त हो सके।

१५ सितम्बर, १९६१

ओंप्रकाश
सम्पादक

नतीजा यह होता है कि खुले-आम या छुपे-छटके एक-दूसरे से कम दाम पर बेचकर गाहक फँसाने का संघर्ष चलता रहता है। ज्यादातर इस तरह की बात बहुत छोटी दुकानों में होती है जहाँ किताबों का स्टॉक काफ़ी नहीं होता। इसका कारण यह है कि ब्रिटिश शासन के ज़माने में हमारी प्रादेशिक भाषाओं में बहुत कम पुस्तकें छपती और बिकती थीं और इसलिए इन पुस्तक-विक्रेताओं को मुनाफा बहुत कम मिलता था और उनका रहन-सहन का स्तर बहुत नीचा था, जिसकी वजह से वे ज़्यादा छोटी और ज्यादा सस्ती जगहों में अपनी दुकानें ले जाने पर मजबूर हो गए। हालाँकि परिस्थितियाँ बदल गई हैं पर बुनियादी तथ्य अब भी वैसे ही हैं। यह एक ऐसा कारण है जिसकी वजह से विशेष रूप से हिन्दी-पुस्तकों की बिक्री की रफ्तार में अब भी रुकावट पड़ती है। जब कोई प्रकाशक देखता है कि उसकी किताबें जगह की कमी की वजह से या और किसी वजह से इन दुकानों में नहीं रखी जाती हैं तो वह खुद किताबें बेचने का रास्ता अपनाता है। यही कारण है कि भारत में हर प्रकाशक पुस्तक-विक्रेता भी होता है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि पुस्तक-विक्रेता के रूप में वह दूसरे प्रकाशकों के साथ अपनी पुस्तकों के विनिमय द्वारा या दूसरे समझौतों के आधार पर थोक-विक्रेता का भी काम करता है।

जिन अंग्रेज़ी पुस्तकों के विक्रेताओं का कारोबार ब्रिटिश शासनकाल में बहुत चमका था उनकी दुकानें बड़ी-बड़ी सड़कों पर प्रमुख स्थानों पर हैं। वे अब भी काफी बड़े पैमाने पर कारोबार कर रहे हैं। पर दुर्भाग्य की बात है कि उनमें से बहुतों को अभी तक हिन्दी नहीं आती है और वे हिन्दी-पुस्तकों की बिक्री में बहुत दिलचस्पी नहीं दिखाते हैं। दूसरे, वे दूसरों से कम मूल्य पर पुस्तकें बेचकर गाहक नहीं घेरते हैं, जो कि हिन्दी के पुस्तक-विक्रेताओं में एक नियम-सा हो गया है। फिर इसके अलावा हमारे यहाँ टेंडर मँगाकर पुस्तकें खरीदने की दूषित व्यवस्था है। फल-सब्जी और दूसरी चीजें खरीदने के लिए टेंडर का तरीका उपयोगी हो सकता है, पर किताबों के लिए यह तरीका कदापि उचित नहीं है। अगर आप कोई खास किताब खरीदना चाहते हैं तो आपको हर दुकान पर बिलकुल एक ही चीज मिलेगी और इस पर मूल्य भी वही छपा होगा। हर पुस्तक-विक्रेता के लिए उस पुस्तक की लागत भी एक ही होगी। टेंडर पद्धति द्वारा कोशिश यह की जाती है कि पुस्तक-विक्रेता को कम-से-कम मुनाफा देकर या कोई भी मुनाफा दिये बिना ही वह पुस्तक हासिल कर ली जाए जो अनुचित बात है। यह पुस्तक-विक्रेता की लाचारी का और उसके माल के विशेष स्वरूप का बेजा फायदा उठाना है। इससे पुस्तक-व्यापार के क्षेत्र में बहुत निराशा फैलती है क्योंकि प्रकाशक ही, जो कि पुस्तक-विक्रेता भी होता है, सबसे कम दाम पर वह पुस्तक बेच सकता है और ऐसी परिस्थिति में पुस्तक-विक्रेता बहुत बड़ी संख्या में पुस्तकों का स्टॉक रखने का साहस नहीं कर सकते। हमारे जैसे कल्याणकारी राज्य के लिए ऐसा करना बहुत ही अनुचित बात है। टेंडर में जो शर्तें और धाराएँ दी होती हैं वे ऐसी होती हैं कि उनका इस माल के साथ कोई संगत सम्बन्ध नहीं होता है। अखिल-भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ ने हिन्दी-पुस्तकों के सम्बन्ध में 'नेट' मूल्य पर ही पुस्तकें बेचने का समझौता लागू करके इस दोष को दूर करने का

प्रयत्न किया था। 'नेट' मूल्य पर ही पुस्तकें बेचने के समझौते के लिए बुनियादी जरूरत इस बात की है कि पुस्तक-विक्रेता अथवा प्रकाशक स्वयं अपने ऊपर एक अनुशासन लागू करें, अपने-आप पर नियन्त्रण रखें। इस समझौते के अनुसार यह पाबन्दी लगा दी गई थी कि कोई प्रकाशक किसी पुस्तकालय को १२% से अधिक कमीशन नहीं दे सकता। इस शर्त का पालन न करने वाले के लिए सजा यह रखी गई थी कि प्रकाशक उसके हाथ पुस्तकें नहीं बेचेंगे। इस सिद्धान्त को सबने बड़े उत्साह के साथ स्वीकार किया और लगभग दो वर्ष तक इसे आशातीत सफलता मिली। परन्तु बाद में कुछ लोगों ने गड़बड़ शुरू कर दी। कुछ पुस्तक-विक्रेता कई अलग-अलग नामों से इस समझौते से शामिल हो गए। एक नाम से तो वे समझौते की सारी शर्तें बड़ी पाबन्दी से मानते थे,-लेकिन दूसरे नाम से वे १२½% से ज़्यादा कमीशन देकर टेंडर दे देते थे ताकि अपना माल ज़्यादा बेच सकें। बेहतर यह होगा कि सरकार टेंडर के आधार पर पुस्तकें खरीदने के बजाय १२½% कमीशन की दर स्वीकार कर ले। इस बात को देखते हुए कि पुस्तक-विक्रेताओं को इस समय १०% से २५% तक कमीशन दिया जाता है, १२½% कमीशन की दर काफ़ी ऊंची है। बेचारे पुस्तक-विक्रेता के कमीशन में से १२½% कट जाने के बाद उसके पास इतना नहीं बचता कि उसे अपना व्यापार बढ़ाने की प्रेरणा मिल सके। ज़ाहिर है कि ऐसी परिस्थितियों में यह आशा नहीं की जा सकती कि उसके यहाँ हर समय पुस्तकों का स्टाक मौजूद रहेगा। वह कम कीमत वाली अच्छी पुस्तकें भी अपने यहाँ नहीं रखेगा जिन पर कमीशन की दर कम होती है। नतीजा यह होता है कि वह अपने यहाँ आम तौर पर बहुत ही घटिया किताबें रखता है जिन पर छपी हुई कीमतों पर उसे बहुत ऊँची दर से कमीशन मिलता है। प्रकाशकों में कुछ ऐसी महान् विभूतियाँ भी मौजूद हैं जो पुस्तक पर प्रकाशित मूल्य पर ५० से ७५ फ़ीसदी तक कमीशन दे देती हैं। आप आसानी से कल्पना कर सकते हैं कि वे किस तरह का माल बेचते हैं और किस ढंग से वे अपने माल की कीमत लगाते हैं। ज़्यादातर दुकानों में और फुटपाथ पर आम तौर पर यही घटिया किताबें बिकती हैं। चूंकि जनसाधारण के सामने ऐसी ही पुस्तकें आती हैं इसलिए उनकी रुचि विकृत हो जाती है और अच्छी किताबों को कोई पूछता नहीं। इन्हीं घटिया किताबों की बिक्री के कारण अच्छे प्रकाशक बहुत चिंतित रहते हैं। अर्थशास्त्र का एक नियम है कि "खोटा सिक्का अच्छे सिक्के को चलने नहीं देता।" यह नियम किताबों के सिलसिले में व्यवहार में देखा जा सकता है।

टेंडर मँगाकर किताबें खरीदने से एक और बहुत बड़ा नुकसान यह होता है कि व्यापार असली व्यापारियों और स्टाकिस्टों के हाथ से निकलकर चालाक मौकापरस्तों के हाथों में चला जाता है। चूंकि ये लोग सारी किताबें सप्लाई नहीं कर पाते हैं, इसलिए संस्थाओं को किताबें खरीदने के लिए जो रकम मंजूर की जाती है उसका कोई इस्तेमाल नहीं हो पाता और पुस्तक-व्यापार ऐसी बहुत सी पूँजी से वंचित रह जाता है जिसकी उसे सख्त जरूरत है। चूंकि टेंडर मँगाकर माल बहुत बड़े पैमाने पर खरीदा जाता है और माल फौरन बिक जाता है, इसलिए बाहर का कोई भी आदमी कम दाम का टेंडर देकर आर्डर

हथिया लेता है। चूँकि उसे बहुत थोड़े समय के लिए पूँजी लगानी पड़ती है और उस सौदे में किसी तरह का जोखिम नहीं होता, इसलिए अगर उसे कुछ कम पैसा भी बचता है तो उसे कोई आपत्ति नहीं होती। इस प्रकार असली व्यापारी, जो पुस्तकों के स्टाक रखता है, निराश होता जाता है और पूरे व्यापार को बहुत हानि पहुँचती है। अखिल-भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ काफ़ी समय से विभिन्न राज्यों में थोक-विक्रेता नियुक्त करने की समस्या पर विचार कर रहा है और यह समस्या इस समय भी विचाराधीन है। कठिनाई यह है कि ऐसे लोग नहीं मिलते जो इस काम को अच्छी तरह जानते हों। ऐसे बड़े-बड़े भण्डार कायम करने के लिए मुनासिब जगह नहीं मिलती और फिर पुस्तक-विक्रेताओं से इतना ज्यादा कारोबार भी नहीं होता कि थोक-विक्रेताओं का काम सुचारु रूप से चल सके। लेकिन जब तक टेंडर मँगाकर किताबें खरीदने का तरीका बन्द नहीं किया जाता और जब तक व्यापारियों को पुस्तकें बेचने में लाभ का आश्वासन नहीं हो जाता, तब तक हमें इस योजना की सफलता में संदेह ही है। स्थानीय पुस्तक-विक्रेताओं के जरिये ही हम जन-साधारण तक अपनी पुस्तकें पहुँचा सकते हैं। एक व्यापारी की हैसियत से पुस्तक-विक्रेता को इस काम में तभी दिलचस्पी होगी जब उसे अपनी पूँजी और अपनी मेहनत का उचित फल मिले। जब तक उसे इसमें लाभ नहीं दिखाई देगा तब तक कुछ भी नहीं किया जा सकता।

हममें से कुछ प्रकाशकों ने पुस्तक-व्यापार को यह आवश्यक सहायता देने के लिए स्वयं थोक पुस्तक-विक्रेता बनने की कोशिश की। इसके लिए हमारी माँग यह थी कि हमें अपना खर्च पूरा करने के लिए १०% अतिरिक्त कमीशन दिया जाए, साल में एक बार हिसाब किया जाए और जो किताबें न बिक सकें उन्हें वापस ले लिया जाए। जिस प्रकाशक को फौरन माल बेचकर पैसा पा जाने की जरूरत होती है उसे इन शर्तों पर पूरा नहीं पड़ता। इसके अलावा हमारा देश इतना लम्बा-चौड़ा है और पुस्तकों पर जिल्द ज्यादातर हाथ से ही बाँधी जाती है, इसलिए वापस करने पर किताबें रास्ते में खराब हो जाती हैं और उन्हें बेचा नहीं जा सकता।

थोक विक्रेताओं को किसी भी हालत में २५% से कम कमीशन नहीं दिया जाना चाहिए और हो सके तो यह ३३% तक होना चाहिए, परन्तु यह कोई पत्थर की लकीर नहीं है। थोक-विक्रेता के काम को देखते हुए और वह अपने शहर या क्षेत्र में कारोबार को जितना फैला सके उसके अनुसार इसमें वृद्धि भी की जा सकती है। अगर उसे जिन्दा रखने के लिए और ज्यादा त्याग की जरूरत हो तो वह भी किया जाना चाहिए। थोक-विक्रेता प्रकाशक और पुस्तक-विक्रेता के बीच एक महत्त्वपूर्ण कड़ी का काम करता है—एक ऐसी कड़ी जिसे यथासंभव ज्यादा-से-ज्यादा मजबूत बनाया जाना चाहिए। दूसरा रास्ता यह है कि कमीशन की दर इस तरह बाँध दी जाए कि वह जितना ज्यादा माल बेचे उसी हिसाब से कमीशन की दर भी बढ़ा दी जाए ताकि वह ज्यादा माल बेचकर ज्यादा मुनाफा कमा सके। चूँकि हर प्रकाशक की कमीशन की दर अलग-अलग होती है, इसलिए यह उसकी जिम्मेदारी है कि वह लागत और खर्च को ध्यान में रखते हुए ऐसी शर्तें तय कर ले जिसमें दोनों को फायदा हो। इसके अलावा पैकिंग और माल भेजने का खर्च थोक-विक्रेता से न लिया जाए।

(२) फुटकर पुस्तक-विक्रेताओं को कमीशन

हमारे देश में पुस्तक-विक्रेता की हालत बहुत खतरनाक है। "किसी भी देश में पुस्तकों की दुकानों के महत्त्व को जितना भी अधिक आँका जाए कम है। जो कम विकसित देश तेजी से प्रगति करना चाहते हैं उनके लिए यह जरूरी है कि उनके यहाँ सभी बड़े-बड़े शहरों में किताबों की ज्यादा-से-ज्यादा अच्छी दुकानें हों—सिर्फ ऐसी ही दुकानें नहीं जहाँ किसी खास वक्त पर सबसे ज्यादा बिकने वाली किताबें रखी जाती हों बल्कि ऐसी दुकानें भी जहाँ सभी अच्छी किताबें मिलती हों। इस बात में राष्ट्र का हित है कि बेहतर किस्म की दुकानें कायम की जाएँ, उनका कारोबार चले और वे प्रतिकूल आर्थिक परिस्थितियों का और व्यापार को हानि पहुँचाने वाली एक-दूसरे का गला काटने वाली प्रतिद्वन्द्विता का मुकाबला करके जीवित रह सकें। राष्ट्रीय विकास की किसी भी योजना में यदि संभव

हो सके तो इस बात की गुंजाइश रखी जानी चाहिए कि कम-से-कम किताबों की बड़ी-बड़ी दुकानों को 'आदर्श पुस्तक भंडारों' के रूप में विकसित किया जाए। यह बात समझी जानी चाहिए कि प्रकाशक या थोक-विक्रेता से जो कमीशन मिलता है वही पुस्तक-विक्रेता की एकमात्र आमदनी होती है। इसके अलावा उसे अपना कारोबार चलाने पर भी कुछ खर्चा करना पड़ता है और फिर उसे बिना बिकी हुई किताबों का बोझ भी सँभालना पड़ता है। व्यापार की परिस्थितियों ने पुस्तक-विक्रेताओं को इस बात पर मजबूर कर दिया है कि वे ग्राहकों की अपेक्षा प्रतिद्वन्द्विता की ओर और व्यापार से बाहर के लोगों के हथकंडों का मुकाबला करने की ओर अधिक ध्यान देने लगे हैं। पर यह बात अपनी जगह पर सच है कि प्रकाशक की सफलता पुस्तक-विक्रेता की सफलता पर निर्भर है और प्रकाशक भी तभी फलता-फूलता है जब पुस्तक-विक्रेता खुश रहता है। प्रकाशक को असली पुस्तक-विक्रेता और दूसरे लोगों के बीच अन्तर करना चाहिए।"

फुटकर पुस्तक-विक्रेता थोक-विक्रेता और जनसाधारण के बीच एक महत्त्वपूर्ण कड़ी का काम करता है। अगर वह बड़ा पुस्तक-विक्रेता होता है तो वह अपनी इच्छा के अनुसार प्रकाशक या थोक-विक्रेता से माल खरीदता है। वह और उसके ऐसे दूसरे विक्रेता ही ऐसे लगे होते हैं जो आपके माल को जनसाधारण के सामने व्यापक रूप से बिक्री के लिए पेश कर सकते हैं। इन पुस्तक-विक्रेताओं को १५% से २०% तक कमीशन दिया जाता है। ज्यादा कमीशन देने की माँग की जा रही है, पर इस प्रवृत्ति को यथासंभव प्रोत्साहन नहीं दिया जाना चाहिए। ज्यादा कमीशन देने के लिए पुस्तकों का मूल्य बढ़ाना पड़ेगा जो उचित नहीं है। पुस्तक-विक्रेता को ज्यादा माल बेचकर अपनी आमदनी बढ़ानी चाहिए, प्रकाशक को निचोड़कर नहीं। पर उसे उधार की सुविधा मिलनी चाहिए और इसके लिए उसे अपने-आपको इसके योग्य साबित करना होगा। पश्चिमी देशों में वह अपने माल की बिक्री के लिए अपने आस-पास के लोगों पर निर्भर रहता है, पर भारत में परिस्थिति इससे भिन्न है। यहाँ पुस्तक-विक्रेताओं के मुख्य ग्राहक संस्थाएँ तथा पुस्तकालय होते हैं। ये हमेशा माल उधार खरीदते हैं। इनका कभी यकीन नहीं होता कि वे पैसा कब देंगे। चूँकि कोई भी बैंक किताबों के स्टाक की जमानत पर उधार पैसा नहीं देता, इसलिए पुस्तक-विक्रेता को कभी-कभी पैसे की बहुत तंगी हो जाती है और वह अपनी अदायगी का भुगतान समय पर नहीं कर पाता। ऐसी दशा में उसके साथ सहानुभूति के साथ पेश आना चाहिए। पैसे की अदायगी करने में उसकी असमर्थता का कारण उसकी बेईमानी न होकर उसकी परिस्थितियाँ भी हो सकती हैं। उसका काम भी बहुत कठिन है पर बहुत महत्त्वपूर्ण है। वह जो माल बेचता है वह बहुत जटिल और वैविध्यपूर्ण होता है। हो सकता है कि उसकी दुकान में हजारों अलग-अलग पुस्तकें हों, पर इससे भी ज्यादा किताबें हर समय छपती रहती हैं। अपने ग्राहकों को संतुष्ट रखने के लिए उसे इन सबका हिसाब रखना पड़ता है। किताबों की वही दुकानें ज्यादा चलती हैं जिनमें पुस्तक प्रकाशित होते ही मिल सकें। कुछ पुस्तक-विक्रेता प्रकाशकों के पास स्थायी आर्डर रख छोड़ते हैं कि किसी खास विषय की कोई नई पुस्तक छपते ही उसकी प्रतियाँ एक निश्चित संख्या में उसके पास भेज दी जाया करें। किताबों की दुकान की सबसे बड़ी मुसीबत होती है बिना बिकी हुई पुस्तकें। लेकिन अगर माल की निकासी ज्यादा हो तो इस मुसीबत को बहुत बड़ी हद तक कम किया जा सकता है। हम चाहते हैं कि ऐसी सड़कों पर, जहाँ लोगों की आवा जाही ज्यादा हो, किताबों की ज्यादा बड़ी, ज्यादा अच्छी और ज्यादा सजी हुई दुकानें हों जहाँ लोग आसानी से पहुँच सकें। यहाँ पर पुस्तकें और उनके नाम ग्राहकों का ध्यान आकर्षित कर सकते हैं और उनकी बिक्री हो सकती है। कभी-कभी पुस्तक-विक्रेता को पसन्द कराने के लिए भी किताबें भेजनी पड़ती हैं और कई-कई दिन या कई-कई हफ्ते तक ग्राहक के फैसले का इंतजार करना पड़ता है। कभी-कभी कारोबार बढ़ाने के लिए उसे सौदेबाजी भी करनी पड़ती है। ऐसी परिस्थिति में महत्त्वपूर्ण बात यह नहीं है कि उसे ज्यादा कमीशन दिया जाए, बल्कि जो कमीशन उसे मिलता है उसे सुरक्षित रखा जाए। हमें इसकी कोई व्यवस्था करनी होगी। मैं समझता हूँ कि पुस्तकालयों और पुस्तकालय-संघों को इस मामले

में हमारी मदद करनी चाहिए। उन्हें पुस्तक-व्यापार से सम्बन्धित आर्थिक तथ्यों का अध्ययन करना चाहिए और यह तय कर देना चाहिए कि किताबों की कितनी कीमत और कितना कमीशन दिया जाएगा ताकि इस व्यापार से सम्बन्धित सभी लोगों को उचित लाभ हो सके। इस प्रकार ऊपर के खर्च में बहुत बचत होगी और पुस्तकों की कीमतें कम हो जाएँगी। इस काम में आजकल इतना पैसा और इतनी मेहनत बेकार जाती है कि किसी को भी इस कारोबार में हाथ डालने की प्रेरणा नहीं मिलती। बहुत-से ऐसे विक्रेताओं को, जो स्टाक रखते हैं और यही लोग सही माने में माल सप्लाई कर सकते हैं, कभी मौका ही नहीं मिल पाता और दूसरे लोग आर्डर हथिया लेते हैं।

(३) कॉलेजों के पुस्तक-विक्रेताओं को कमीशन

एक और प्रकार के पुस्तक-विक्रेता हमारी संस्थाओं और विश्वविद्यालयों में बड़ी तेज़ी से बढ़ते जा रहे हैं। ये पुस्तक-विक्रेता विद्यार्थियों की ज़रूरतों को पूरा करते हैं और उन्हें सस्ते दामों पर किताबें बेचते हैं। ये दुकानें या तो किसी एक आदमी की मिल्कियत होती हैं और वे इन संस्थाओं के अधिकारियों के साथ खास शर्तों पर समझौता कर लेते हैं, या फिर वे रजिस्ट्रार ऑफ़ कोआपरेटिव सोसायटीज़ के यहाँ रजिस्टर्ड सहकारी संस्थाओं के रूप में काम करती हैं, जिनमें विद्यार्थियों के शेयर होते हैं और वे इन दुकानों में खाली वक़्त में काम करते हैं जिसके लिए उनको पैसा मिलता है। इन दुकानों का मुनाफा ग़रीब लड़कों की सहायता के लिए भी बाँटा जाता है। आम तौर पर वे माल उधार ले जाते हैं और इस शर्त पर कि उन्हें बिना बिका हुआ माल वापस करने की सुविधा दी जाएगी। अपनी विशेष स्थिति के कारण और अध्यापकों के साथ प्रत्यक्ष सम्पर्क और अध्यापकों की सहानुभूति उनके साथ होने के कारण वे अपनी माँगें मनवाने में सफल हो जाते हैं। ये दुकानें अपना हिसाब कभी वक़्त पर साफ़ नहीं करतीं और इनकी अनुचित माँगों और गैर-जिम्मेदार ढंग से काम करने के कारण प्रकाशकों को बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। उनका मुख्य उद्देश्य बिना पूँजी लगाए व्यापार करना होता है। यह बहुत

ही अनुचित बात है। पुस्तक-व्यापार को इस समस्या का कुछ हल निकालना होगा और कोई ऐसी व्यवस्था करनी होगी जिससे दोनों पक्ष संतुष्ट रहें। यह बात स्वीकार तो की जाती है कि इन दुकानों को साधारण पुस्तक-विक्रेताओं के मुकाबले कम कमीशन दिया जाना चाहिए, पर आम तौर पर व्यवहार में इस बात का ध्यान नहीं रखा जाता। पारस्परिक हित के लिए पुस्तक-व्यापार को इस पद्धति का नियमन करना होगा। मैं यह सुझाव रखता हूँ कि ये विद्यार्थी, जिनकी संख्या लगभग पाँच करोड़ है और जो हमसे सहायता चाहते हैं, उन्हें पुस्तक-व्यापार की सहायता करनी चाहिए। जब वे गरमी की छुट्टियों में घर जाते हैं तब वे अपने इलाकों में किताबें बेचकर खुद भी पैसा कमा सकते हैं और पुस्तक-व्यापार की सहायता भी कर सकते हैं।

(४) आम ग्राहकों को कमीशन

पुस्तक-व्यापार और इस व्यापार द्वारा बेचे जाने वाले माल के स्वरूप को ध्यान में रखते हुए सबसे अच्छी बात तो यह होगी कि पुस्तक-विक्रेता ग्राहकों को न कोई कमीशन दें और न ही उनसे कमीशन की माँग की जाए। या फिर उसे इतने काफ़ी मुनाफ़े का आश्वासन रहना चाहिए कि वह शरीफ आदमियों की तरह जीवन व्यतीत कर सके और कारोबार के प्रति उसका उत्साह नष्ट न होने पाए। मेरे लिए इस बात पर बार-बार ज़ोर देने की ज़रूरत नहीं है कि प्रगतिशील ढंग के ऐसे पुस्तक-विक्रेता, जिनके यहाँ पुस्तकों का अच्छा भण्डार रहता हो, राष्ट्र के लिए लाभदायक तथा आवश्यक हैं, जिनके बिना बड़े पैमाने पर कोई प्रगति संभव नहीं है। हमें ऐसे सामाजिक कार्यकर्ताओं की ज़रूरत है जो घर-घर जाकर लोगों को यह समझायें कि अपने बच्चों के उचित विकास के लिए और पूरे राष्ट्र की उन्नति के लिए किताबें खरीदना और अपने घर में किताबें रखना स्वयं उनके हित में है। कमीशन की माँग करना और कमीशन देने पर मजबूर करना इस राष्ट्रव्यापी व्यापार के लिए बहुत हानिकारक है। यह

प्रवृत्ति इतनी व्यापक हो गई है कि जो पुस्तक-विक्रेता कमीशन नहीं देता उसे नफाखोर कहा जाने लगता है। इसे रोकने के लिए पुस्तक-विक्रेताओं को बहुत कोशिश करनी होगी। मेरा सुझाव है कि हर आदमी को इस काम में पूरा सहयोग देना चाहिए क्योंकि इस प्रकार किताबों की ज्यादा बड़ी, ज्यादा अच्छी, ज्यादा खूबसूरत दुकानों की स्थापना संभव होगी, जिनमें हर प्रकार की पुस्तकें मिल सकेंगी और विभिन्न व्यवसायों में काम करने वाले लोग इनसे लाभान्वित हो सकेंगे। जनसाधारण ही इस बात को संभव बना सकते हैं। इस बात को ध्यान में रखते हुए कि पुस्तक-विक्रेता को खुद आम तौर पर १०% से २५% तक कमीशन मिलता है, अगर उसे इसमें से भी अपने ग्राहकों को कमीशन देना पड़े तो उसके लिए कुछ भी नहीं बचेगा। इस प्रवृत्ति से पुस्तक-विक्रेताओं को कोई प्रोत्साहन नहीं मिलता। खास तौर पर किताबों की बड़ी-बड़ी दुकानों को, जिनमें लाखों रुपये की पूंजी लगानी पड़ती है और काफ़ी अच्छी तनख्वाह पाने वाले पढ़े-लिखे लोगों को नौकर रखना पड़ता है, कमीशन माँगते समय इन सब बातों को ध्यान में रखा जाना चाहिए। अब मैं फुटकर किताबें खरीदने वाले कुछ विशेष प्रकार के ग्राहकों का उल्लेख करूँगा।

(१) विद्यार्थी

भारत का विशाल विद्यार्थी-वर्ग बहुत बड़ी संख्या में पुस्तकें खरीदता है। इनमें से कुछ किताबें बहुत ही उच्चस्तर की तथा मँहगी होती हैं, जिन्हें केवल इने-गिने ऐसे पुस्तक-विक्रेता ही अपने यहाँ रख सकते हैं जिनके यहाँ बहुत कुशल तथा अनुभवी कर्मचारी हों। इन पुस्तकों पर ऊपर का खर्च इतना आता है कि कोई भी पुस्तक-विक्रेता इन पर कमीशन नहीं दे सकता। दूसरी तरह की पुस्तकें पाठ्य-पुस्तकें होती हैं, जिन्हें बहुत से छोटे-छोटे पुस्तक-विक्रेता और पुरानी किताबें बेचने वाले भी बहुत बड़ी संख्या में खरीदते हैं। इन पर कमीशन की कोई निश्चित दर नहीं होती। बहुत थोड़ी संख्या में खरीदने पर तो एक निश्चित दर से ही कमीशन दिया जाता है। चूँकि ये किताबें साल में एक खास वक्त पर ही बिकती

हैं इसलिए कुछ बाहर वाले लोग भी थोड़े समय के लिए इनका कारोबार कर लेते हैं और दुकानदारों का मुनाफा घटते-घटते ५% रह जाता है। विद्यार्थी बहुत चालाक खरीदार होते हैं क्योंकि उनका सिनेमा और दूसरे मनोरंजनों का खर्च भी किताबों के पैसों में से ही निकलता है। थोड़े ही लड़के ऐसे होते होंगे जो अपनी जरूरत की सारी पाठ्य-पुस्तकें खरीदते हों। इसीलिए परिणाम बहुत हानिकारक होता है। लड़के दुकान-दुकान जाकर किताबों के दाम पूछते हैं और इस प्रकार दुकानदारों के बीच एक प्रतिद्वन्द्विता पैदा कर देते हैं, जिससे केवल इन विद्यार्थियों को लाभ होता है। पुरानी किताबें बेचने वाले इस बात की चिन्ता नहीं करते कि उन्हें नई किताबों की बिक्री से कितना मुनाफा होता है क्योंकि उन्हें पुरानी किताबों की बिक्री से मुनाफ़े का आश्वासन रहता है। कभी-कभी तो इन किताबों पर ३२% तक लाभ हो जाता है।

(२) पुस्तकालयाध्यक्ष

पुस्तकालय किताबों के महत्त्वपूर्ण ग्राहक हैं। सच तो यह है आज भारत में किताबों की बहुत सी दुकानें इन्हीं की बदौलत चल रही हैं। पुस्तकालयाध्यक्षों के साथ व्योहार बहुत महत्त्व रखता है, पर दुर्भाग्य की बात यह है कि उनमें से बहुत से लोग इस बात को नहीं महसूस करते कि पुस्तक-विक्रेता के लिए भी काफी गुंजाइश रखी जानी चाहिए ताकि उसे स्वयं इन पुस्तकालयों के हित में अपने व्यापार में दिलचस्पी बनी रहे। पुस्तकालयाध्यक्ष के लिए सीधे प्रकाशक से किताबें मँगाना संभव नहीं होता, क्योंकि इसमें उसका बहुत सा बहुमूल्य समय नष्ट होता है। पुस्तक-विक्रेता नई पुस्तकों की ओर ध्यान आकर्षित करके, विभिन्न विषयों की सूचियाँ भेजकर और पसन्द करने के लिए पुस्तकें भेजकर और कई दूसरे तरीकों से पुस्तकालयों की बहुत सहायता करते हैं। पुस्तक-विक्रेता यह सारी सेवा मुफ्त करता है और पुस्तकालयाध्यक्ष को इससे बहुत सहायता मिलती है और आम तौर पर वह स्थानीय विक्रेताओं से ही पुस्तकें खरीदना पसन्द करता है। चूँकि वह बहुत सी किताबें एक साथ खरीदता है वह अपनी पसन्द का विक्रेता खुद चुन लेता है। पुस्तक-विक्रेता इस बात को मानते हैं कि पुस्तकालय जो पुस्तकें खरीदें उन पर उन्हें कुछ कमीशन मिलना चाहिए। दिल्ली पुस्तक-विक्रेता संघ ने सारी बातों पर विचार करके कमीशन की उचित दरें तय कर दी हैं। यह पुस्तकालयों और व्यापारियों दोनों ही के हितों को ध्यान में रखकर किया गया था और दोनों ही इससे संतुष्ट हैं। यदि पुस्तकालयाध्यक्ष भी आपस में मिलकर कमीशन की दर की समस्या पर विचार कर लें और किसी उचित निर्णय पर पहुँच जाएँ, तो पुस्तक-व्यापार के लिए बहुत बड़ी सहायता होगी क्योंकि इस प्रकार टेंडर मँगाकर किताबें खरीदने के तरीके से बचा जा सकेगा जिसमें कई जगह पर समय बहुत नष्ट होता है और ऊपर का खर्च बढ़ता है। पुस्तकालयाध्यक्षों को उनके द्वारा खरीदी जाने वाली पुस्तकों के अनुसार ५% से १०% तक कमीशन दिया जाता है। टेंडर में माल सप्लाई करने वाले पर तरह-तरह की पाबन्दियाँ लगाई जाती हैं पर खरीदने वाले पर कोई नहीं और रकम की अदायगी की तारीख के बारे में कभी कुछ भी नहीं कहा जाता। चूँकि पुस्तकालय और संस्थाएँ माल उधार खरीदती हैं, इसलिए पुस्तक-विक्रेताओं को बहुत परेशानी होती है क्योंकि उन्हें इन किताबों में नकद पूँजी लगानी पड़ती है। पुस्तकालयों को गम्भीरतापूर्वक पुस्तक-विक्रेताओं के हिसाब का भुगतान जल्दी कर देने की समस्या पर विचार करना होगा, क्योंकि इसके कारण पुस्तक-विक्रेता, थोक-विक्रेता और प्रकाशक को बड़ी परेशानी होती है। चूँकि पुस्तकों की ज़मानत पर बैंक भी पैसा उधार नहीं देते हैं, इसलिए पैसे की अदायगी के सम्बन्ध में नियमों में कुछ छूट दी जानी चाहिए। पुस्तकालय यदि हमारी ओर से इस बात की कोशिश करके हमें इस बात की सुविधा दिला दें, जो हमारे लिए बहुत आवश्यक है, तो उससे पुस्तक-व्यापार का बहुत उपकार होगा।

मन्त्रालय के वर्तनी-निर्णय पर विचार

आगीश्वर

प्रकाशन समाचार के अगस्त '६१ के अंक में शिक्षा-मन्त्रालय की वर्तनी-समिति के निर्णय प्रकाशित हुए हैं। पढ़कर जैसी प्रतिक्रिया हुई है, उसकी अभिव्यक्ति आवश्यक हो गई है। शिक्षा-मन्त्रालय के प्रस्तुत निर्णयों के बारे में कुछ कहने से पूर्व इसकी पृष्ठभूमि का उल्लेख करना आवश्यक होगा।

प्रकाशक-संघ ने एक उपसमिति मनोनीत की थी, जिसने लेखन-मुद्रण में एकरूपता-सम्बन्धी एक प्रारूप निर्धारित किया था। वह प्रारूप अगस्त '६० के 'प्रकाशन समाचार', 'पुस्तक-जगत्' और 'हिन्दी-प्रचारक' में एक साथ छपा था। साथ ही प्रकाशक-संघ ने विद्वानों एवं भाषाविदों को सुझावों के लिए आमन्त्रित किया था। तत्पश्चात् इन्हीं पत्रिकाओं में उक्त प्रारूप पर कई एक व्यक्तियों के विचार प्रकाशित होते रहे हैं, और मैं एक भाषा-प्रमी के नाते उक्त तीनों पत्रिकाओं के अंकों को ढूँढ़-ढूँढ़कर पढ़ता रहा हूँ। इसलिए उक्त सारी गति-विधि का मैंने बारीकी के साथ अध्ययन किया है।

और उस दिन अचानक मेरे एक मित्र ने कहा—'भई, तुम जिस खबत में पड़े रहे हो उसका अन्तिम निर्णय तो शिक्षा-मंत्रालय की ओर से हो भी गया है।' और उसने 'प्रकाशन समाचार' का अंक मेरे हाथ में थमा दिया।

मैं सकते में आ गया। मैंने कहा—'क्या कहते हो भई, प्रकाशक-संघ के प्रारूप का फैसला शिक्षा-मन्त्रालय में कैसे हुआ? इसकी कोई दूसरी रूप-रेखा रही होगी।'

पर जब मैंने स्वयं वर्तनी-समिति के निर्णय को पढ़ा तो मुझे भी कहना पड़ा कि यह निर्णय, प्रकाशक-संघ के प्रारूप पर और उस पर उक्त पत्रिकाओं में प्रकाशित अन्य विद्वानों के संशोधनों पर आधारित है।

अपने-आप में यह बुरी बात है या अच्छी, यह अलग प्रसंग है और इस पर मुझे विचार नहीं करना है। यह प्रकाशक-संघ का विषय है। पर जो-कुछ निर्णय हुए, उन्हें सारी पृष्ठभूमि को सामने रखकर देखें तो जो निष्कर्ष सामने आता है उससे हमें अपनी सरकारी मशीनरी पर खेद ही अधिक होता है। उसके प्रति कोई सद्‌भावना उभरकर नहीं आती। कारण? यही कि शिक्षा मन्त्रालय की वर्तनी-समिति ने अपने 'अन्तिम' निर्णयों में प्रकाशक-संघ के प्रारूप पर प्रकाशित विविध संशोधनों को तोड़-मरोड़कर अधूरे रूप में प्रस्तुत किया है। इससे कहीं तो सम्यक् रूप से लाभान्वित ही नहीं हुआ जा सकता है, और कहीं गोल-मोल भाषा रहने से नियम को जिधर चाहें उधर ही मोड़े जा सकने की गुञ्जाइश बनी रह जाती है।

नियमों की ऐसी ढुलमुल भाषा रखने का अभिप्राय क्या यह नहीं है कि इसके निर्णायक किसी भाषाविद् की ठीक जँचने वाली बात को पूरी तरह ग्रहण करने में अपनी हेठी समझ बैठे हैं? और साथ ही क्या यह अभिप्राय नहीं है कि वे कुछेक यूनिवर्सिटियों के प्रभावशाली विभागाध्यक्षों की असंगत पड़ने वाली बात को काटने में हिचकिचा गए हैं और बात को गोलमोल रखकर उभयपक्षीय समर्थन (?) के लोलुप हो गए हैं? यदि ऐसा है तो यह अत्यन्त शोचनीय बात है।

आइए, अब वर्तनी-समिति के निर्णयों पर थोड़ी गम्भीरता से विचार करें।

(१) उक्त-निर्णय की १, २, ३, ४ और ६—ये धाराएँ तो सामान्य ही हैं। पहली तीन में की तो कोई समस्या ही नहीं है। वस्तुतः ऐसा होता ही है।

(२) धारा ५ में द्वन्द्व समास के लिए और धारा ७

में तत्पुरुष समास की विशिष्टावस्था के लिए हाइफन का विधान किया गया है।

इससे पूर्व प्रकाशक-संघ द्वारा प्रचारित प्रारूप में पृथक्-पृथक् अवस्थाओं के कुछ समस्त शब्द गिनाकर उनको एक शिरोरेखा में रखने या उनमें हाइफन डालने का विधान प्रस्तुत किया गया था। इस पर पं० बलराम शास्त्री (पुस्तक-जगत, सितम्बर '६०), पं० गोपालचन्द्र चक्रवर्ती (हिन्दी-प्रचारक, सितम्बर '६०) आदि कुछेक विद्वानों ने आपत्ति की थी और उन्होंने ऐसे शब्दों में समास की दृष्टि से निर्णय करने का सुझाव दिया था। तत्पश्चात् 'प्रकाशन-समाचार' के नवम्बर '६० के अंक में पृ० १२४ पर श्री कृष्ण विकल ने इस समस्या पर समास की दृष्टि से, भेद-उपभेदों को दृष्टि में रखकर, विस्तार से प्रकाश डाला। ऐसे शब्दों के बारे में उनका आग्रह है कि हिन्दी भाषा में 'समस्त शब्दों की समस्तता तब तक अखंडित रहेगी जब तक उन्हें एक शिरोरेखा में रखा जाएगा अथवा उन्हें युग्रेखा (-) से सम्बद्ध किया जाएगा।' किन्तु इसके विपरीत भारतीय हिन्दी परिषद् की वर्तनी-समिति के विद्वानों—डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, डॉ० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, डॉ० माताप्रसाद गुप्त, डॉ० हरदेव बाहरी, डॉ० रघुवंश— का विचार है कि 'हिन्दी की मूल प्रकृति विश्लेषणात्मक है, संस्कृत के समान संश्लिष्ट नहीं।' फलतः वे पहले विचारकों के इस विचार से तो सहमत हैं कि अव्ययीभाव (कुछेक अपवादों को छोड़कर), बहुव्रीहि और द्विगु में, अनिवार्य रूप में, समस्त पदों को एक शिरोरेखा में रखा जाए; और वे इस विचार से भी सहमत हैं कि 'भूदेव', 'नरपति' आदि छोटे-छोटे समस्त शब्दों को, एवं उन समस्त शब्दों को, जिनका या तो 'पहला तत्त्व' विकृत हो, या 'अपने मूल रूप में हो,' एक शिरोरेखा में रखा जाए। किन्तु जहाँ पहले विचारक तत्पुरुष समास में आवश्यकतानुसार 'साहित्य-समारोह', 'शब्द-चमत्कार' आदि लम्बे-लम्बे समस्त शब्दों में, हाइफन का विधान उचित मानते हैं, वहाँ दूसरे विचारक पृथक् करना अधिक उचित मानते हैं। वे ऐसे शब्दों को एक शिरोरेखा में देना नहीं चाहते; और ऐसा पहले विचारक भी नहीं चाहते। फिर यहाँ अन्तर केवल इतना ही है कि पहले विचारक ऐसे शब्दों में पारस्परिक सम्बद्धता बनाए रखने के विशेष आग्रही हैं, जबकि दूसरे विचारक यहाँ, हिन्दी की विश्लेषणात्मक प्रकृति के विचार से, पृथक्-पृथक् रखने में अनौचित्य नहीं देखते। वैसे यह तो वह भी मानते हैं कि 'सिगरेट केस' और 'देख भाल' आदि शब्दों को ऐसे भी लिखा जा सकता है—'सिगरेट-केस', 'देख-भाल' आदि (प्रकाशन समाचार, फरवरी, '६१, पृ० ३००)। और फिर जहाँ तक कर्मधारय के विशेषण-विशेष्य उदाहरणों का प्रश्न है, सामान्य विशेषण-विशेष्यों को तो श्री कृष्ण विकल ने भी नहीं लिया। वह 'लालमिर्च', 'शीतयुद्ध' आदि शब्दों को मिलाकर रखने की बात कहते हैं। ऐसे शब्दों को दूसरी कोटि के विद्वानों के अनुसार, मेरे विचार से, पृथक् भी रखा जाए तो किसी को कोई विशेष ऐतराज नहीं होगा।

इससे यह सिद्ध होता है कि समास की दृष्टि से विचार करते हुए उभयपक्षीय विचारकों में कोई बहुत बड़ा अंतर नहीं रह गया। कुछ अन्तर है तो यही कि पहला पक्ष कुछ अधिक सख्ती का पक्षपाती है, और दूसरा कुछ ढील का।

अब शिक्षा-मंत्रालय के निर्णय की ओर देखिए। उसके निर्णय के अनुसार 'तत्पुरुष समास में हाइफ़न का प्रयोग केवल वहाँ किया जाए, जहाँ उसके बिना भ्रम होने की सम्भावना हो, अन्यथा नहीं।' 'भ्रम' होने की सम्भावना कहाँ है, यही समझ में नहीं आया। क्या उसका आशय कृष्ण विकल की इस उक्ति में निहित है? '...तत्पुरुष समास में न तो अपरिहार्य रूप से युग्रेखा का विधान ही किया जा सकता है, और न ही बहिष्कार। इसके विपरीत दृष्टि ही प्रमाण है। इसके मूल में यही सिद्धान्त काम करता है कि समस्त पद घुले-मिले हों तो एक शिरोरेखा में दे देने चाहिएँ, और यदि अप्रचलित या लम्बे-लम्बे समस्त पद हों तो सुविधा के लिए उनमें हाइफन का प्रयोग करना चाहिए।' (प्रकाशन समाचार, नवम्बर, '६०) और यदि यही आशय है तो कितना अस्पष्ट है! और फिर तत्पुरुष की अन्यान्य दशाओं के बारे में क्या ध्वनित होता है कि शेष दशाओं में अलग रखें या मिलाएँ? और फिर यही सोचिए न, कि भ्रम वाली दशाएँ कौनसी हैं? उनका एक उदाहरण भी तो नहीं दिया।

इसके अलावा द्वन्द्व समास के बारे में उन्होंने जो

नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी के प्रकाशन

अपनी प्रकाशन योजना के अन्तर्गत सभा द्वारा विभिन्न मालाएँ प्रकाशित हो रही हैं। उनमें मनोरंजन पुस्तकमाला में प्रकाशित पुस्तकों की नामावली नीचे दी जा रही है। इस माला में विभिन्न विषयों पर सरल, सुबोध और शिक्षाप्रद पुस्तकों का प्रकाशन होता है। उनकी नामावली इस प्रकार है—

१. **आदर्श जीवन** ले० रामचन्द्र शुक्ल मू० २.००
२. **आत्मोद्धार** ले० रामचन्द्र वर्मा मू० २.००
३. **गुरु गोविन्दसिंह** ले० श्री वेणीप्रसाद मू० २.००
४. **आदर्श हिन्दू** भाग १ ले० श्री मेहता लज्जाराम शर्मा मू० २.००
५. **आदर्श हिन्दू** भाग २ ले० श्री मेहता लज्जाराम शर्मा मू० २.००
६. **आदर्श हिन्दू** भाग ३ ले० श्री मेहता लज्जाराम शर्मा मू० २.००
७. **राणा जंगबहादुर** ले० जगन्मोहन वर्मा मू० २.००
८. **भीष्म पितामह** ले० श्री द्वारकाप्रसाद चतु० २.००
९. **जीवन के आनन्द** ले० श्री गणपति जानकीराम दूबे मू० २.००
१०. **भौतिक विज्ञान** ले० श्री सम्पूर्णानंद मू० २.००
११. **लाल चीन** ले० श्री ब्रजनंदन सहाय मू० २.००
१२. **कबीर वचनावली** संपा० श्री अयोध्या सिंह उपाध्याय मू० २.००
१३. **महादेव गोविन्द रानाडे** ले० श्री रामनारायण मिश्र मू० २.००
१४. **बुद्धदेव** ले० श्री जगन्मोहन वर्मा मू० २.००
१५. **मितव्यय** ले० श्री रामचन्द्र वर्मा मू० २.००
१६. **सिक्खों का उत्थान और पतन** ले० श्री नंदकुमार देव शर्मा मू० २.००
१७. **वीरमणि** ले० श्री मिश्रबन्धु मू० २.००
१८. **नेपोलियन बोनापार्ट** ले० श्री राधामोहन गोकुलजी मू० २.००
१९. **शासन पद्धति** ले० श्री प्राणनाथ विद्यालंकार मू० २.००
२०. **हिन्दुस्तान** भाग १ ले० श्री दयाचन्द्र गोयलीय मू० २.००
२१. **हिन्दुस्तान** भाग २ ले० श्री दयाचन्द्र गोयलीय मू० २.००
२२. **महर्षि सुकरात** ले० वेणीप्रसाद मू० २.००
२३. **ज्योतिर्विनोद** ले० श्री सम्पूर्णानंद मू० २.००
२४. **आत्मशिक्षण** ले० श्री मिश्रबन्धु मू० २.००
२५. **सुन्दरसार** सं० श्री पुरोहित हरिनारायण २.००
२६. **जर्मनी का विकास** भाग १ ले० श्री ठाकुर सूर्यकुमार वर्मा मू० २.००
२७. **जर्मनी का विकास** भाग २ ले० श्री ठाकुर सूर्यकुमार वर्मा मू० २.००
२८. **कृषि कौमुदी** ले० श्री दुर्गाप्रसादसिंह मू० २.००
२९. **कर्तव्यशास्त्र** ले० गुलाबराय मू० २.००
३०. **मुसलमानी राज्य का इतिहास** भाग १ ले० श्री मन्नन द्विवेदी मू० २.००
३१. **मुसलमानी राज्य का इतिहास** भाग २ ले० श्री मन्नन द्विवेदी मू० २.००
३२. **रणजीत सिंह** ले० श्री वेणीप्रसाद मू० २.००
३३. **विश्वप्रपंच** भाग १ ले० रामचन्द्र शुक्ल २.००
३४. **विश्वप्रपंच** भाग २ ,, ,, ,, २.००
३५. **अहिल्याबाई** ले० श्री गोविन्दराम केशवराम जोशी मू० २.००
३६. **रामचन्द्रिका** सं० डा० पीताम्बरदत्त बडथ्वाल मू० २.००
३७. **ऐतिहासिक कहानियाँ** ले० द्वारका प्रसाद चतुर्वेदी मू० २.००
३८. **हिन्दी निबंधमाला** भाग १ सं० श्री श्यामसुन्दरदास मू० २.००
३९. **हिन्दी निबन्धमाला** भाग २ सं० श्री श्यामसुन्दरदास मू० २.००
४०. **सूरसुधा** सं० श्री मिश्रबन्धु मू० २.००
४१. **कर्तव्य** ले० श्री रामचन्द्र वर्मा मू० २.००
४२. **संक्षिप्त रामस्वयंवर** सं० श्री ब्रजरत्नदास २.००
४३. **शिशुपालन** ले० मुकुन्दस्वरूप वर्मा मू० २.००
४४. **शाही दृश्य** ले० माखनलाल गुप्त मू० २.००
४५. **पुरुषार्थ** ले० श्री जगन्मोहन वर्मा मू० २.००
४६. **तर्कशास्त्र** भाग १ ले० गुलाबराय मू० २.००
४७. ,, ,, २ ,, ,, मू० २.००
४८. ,, ,, ३ ,, ,, मू० २.००
४९. **प्राचीन आर्य वीरता** ले० श्री द्वारका प्रसाद चतुर्वेदी मू० २.००
५०. **रोम का इतिहास** ले० डा० प्राणनाथ विद्यालंकार मू० २.००
५१. **रसखान और घनानंद** सं० श्री अमीरसिंह २.००
५२. **मानसरोवर और कैलाश** अनु० श्री रामचन्द्र वर्मा मू० २.००
५३. **बालमनोविज्ञान** ले० श्री लालजीराम शुक्ल २.००
५४. **नई कहानियाँ** सं० रायकृष्णदास मू० २.००
५५. **भूदान का आर्थिक आधार** ले० श्री बाबूराम मिश्र मू० ३.२५
५६.-५७. **राष्ट्रभाषा पर विचार** ले० श्री चन्द्रबली पांडेय मू० ४.००
५८-६१. **अस्सी कहानियाँ** ले० श्री विनोदशंकर व्यास मू० ८.००

हाइफन लगाने की बात कही है वह बहुसम्मत है, पर इसमें भी उन्होंने भारतीय हिन्दी परिषद् के एक पाइंट का ध्यान नहीं रखा। इस नियम में उन्हें यह बात समाविष्ट करनी चाहिए थी कि जहाँ द्वन्द्व समास तीन शब्दों का होगा वहाँ हाइफन नहीं लगेगा। जैसे—राम, लक्ष्मण, भरत। जहाँ दो शब्द होंगे वहाँ हाइफन आएगा। जैसे—राम-लक्ष्मण, राम-भरत, या भरत-लक्ष्मण आदि।

द्वन्द्व और तत्पुरुष के अलावा दूसरे समासों में शिक्षा-मन्त्रालय का क्या निर्णय है—क्या वे शेष सभी समासों में मिलाने के पक्ष में हैं या कहीं उन्हें अपवाद रखना भी अभीष्ट है, इस बारे में वे चुप क्यों हैं? क्या वे कर्मधारय के उपमान-उपमेय उदाहरण में 'चरण-कमल' और 'मुख-चन्द्र' आदि एक शिरोरेखा में देना चाहते हैं या हाइफन से, या पृथक्-पृथक्?

इसी प्रकार अव्ययीभाव समास में क्या वे 'प्रतिदिन' और 'हर रोज़' आदि समस्त शब्दों को मिलाने के पक्ष में हैं या पृथक्-पृथक् रखने के पक्ष में? इसके बारे में वे चुप्पी लगा गए। आखिर क्यों?

(३) शिक्षा-मन्त्रालय की धारा ८ में क्रिया, विशेषण, अव्यय ('गए', 'नई', 'चाहिए') आदि सभी शब्दों में स्वरात्मक रूप ग्रहण किये गए हैं।

इससे पूर्व 'प्रकाशक-संघ' ने अपने प्रारूप में प्रधान क्रिया-शब्दों और विशेषण-शब्दों के लिए 'गये, नयी' आदि रूप की सिफारिश की थी, साथ ही संयुक्त क्रियाओं में 'गौण' क्रिया-शब्द के लिए तथा अव्यय-शब्द के लिए स्वरात्मक रूप ग्रहण करने का आग्रह किया था। इस पर डॉ० नगेन्द्र ने यह संशोधन प्रस्तुत किया कि संयुक्त क्रियाओं में गौण क्रिया के लिए भी प्रधान क्रिया जैसा रूप रखा जाना चाहिए। अर्थात—'हँसते गये', 'उठायी गयी' ही होना चाहिए; 'हँसते गए' और 'उठाई गई' नहीं (प्रकाशन-समाचार, अगस्त, '६०)। श्री हर्षनारायण ने भी इसी पक्ष का समर्थन किया है (हिन्दी-प्रचारक, सितम्बर, '६० पृ० १७)। पं गोपालचन्द्र चक्रवर्ती ने भी 'गया' से 'गये', 'गयी' आदि रूपों को ही हिन्दी में शुद्ध माना और 'लिए' आदि अव्ययों के लिए स्वरात्मक रूप का विधान स्वीकार किया (हिन्दी-प्रचारक, सितम्बर '६०, पृ० ९)। इसी प्रकार श्री सियाराम तिवारी ने भी इस समस्या में डॉ० नगेन्द्र के पक्ष का समर्थन किया (हिन्दी प्रचारक, सितम्बर '६०, पृ० १४-१५)। और पं० बलराम शास्त्री ने यह विचार प्रस्तुत किया कि किसी भी स्थिति में 'धातु-रूप के परसर्ग के अन्तिम यकारापात का 'ए' या 'ई' में लाघव करना निरर्थक और साथ-ही-साथ निर्नियम भी है।' उनके विचार से कैसी भी क्रिया हो—चाहे वह आज्ञार्थक, सम्भावनार्थक अथवा आदरसूचक भी क्यों न हो—सब जगह यकारी प्रत्ययों में ही रूप रहने चाहिए'; अर्थात् 'आइये', 'खायेगा' आदि रूप शुद्ध हैं। उनके विचार से अव्यय, विशेषण आदि शब्दों के रूप भी 'चाहिए' और 'नए' आदि शुद्ध हैं (पुस्तक-जगत्, सितम्बर, १९६०)। ऐसी स्थिति में जबकि इतने विद्वानों का मत 'गये' 'नयी' आदि रूप रखने का था (जो कि मेरे विचार से हिन्दी की प्रकृति के अनुकूल भी था) तो शिक्षा-मंत्रालय को इस विषय में निर्णय करते समय अपेक्षाकृत अधिक गम्भीरता से विचार करने की आवश्यकता थी।

(४) शिक्षा-मन्त्रालय के उक्त निर्णय की धारा १० में 'महान', 'विद्वान' आदि कुछेक शब्दों को छोड़कर शेष सामान्यतः सभी शब्दों को संस्कृत रूप में लिखने की सिफारिश की गई है।

प्रकाशक-संघ ने 'महत्व', 'कतव्य', 'उज्वल', 'तत्व', 'दुख' आदि विकृत रूप प्रचलित करने की सिफारिश की थी। साथ ही भगवान्, महान्, विद्वान्, किंचित्, पृथक् आदि शब्दों में, संस्कृत व्याकरण के नियमानुसार, हलंत् का प्रयोग करने का ही आग्रह किया था। इस पर डॉ० नगेन्द्र ने भी यही पक्ष प्रस्तुत किया था कि जिन शब्दों का हिन्दी में संस्कृतत्व लुप्त हो चुका है उन शब्दों का संस्कृतवत् प्रयोग न किया जाए। वे शायद (?) किंचित्, पृथक्, महत्त्व, तत्त्व, के स्थान पर 'किंचित', 'पृथक', 'महत्व' 'तत्व'—ये रूप रखना चाहते थे (प्रकाशन-समाचार, अगस्त '६०)। डॉ० इन्द्रनाथ मदान ने भी इसी आशय की पुष्टि की थी। उनके शब्दों में 'संस्कृत व्याकरण के नियमानुसार हलंत् का यथास्थान प्रयोग करने से कोई लाभ नहीं है, हानि है। महान् के स्थान पर 'महान', जगत् के स्थान पर 'जगत' और किंचित् के स्थान पर 'किंचित' होना चाहिए। (पुस्तक-जगत् सितम्बर १९६०)। किन्तु इसके विपक्ष में पं० गोपालचन्द्र चक्रबर्ती ने 'तत्त्व', 'सत्त्व', 'महत्त्व', 'उज्ज्वल' आदि रूप ही शुद्ध माने, साथ ही भगवान्, किंचित्, पृथक् आदि शब्दों में हल् चिह्नों को अनावश्यक बताया (हिन्दी-प्रचारक, सितम्बर, '६०)। और पं० बलराम शास्त्री ने यह सुझाव दिया कि महान्, विद्वान् आदि अनेकाकारी शब्दों और किंचित्, पृथक् आदि एकाकारी अव्ययों पर पृथक्-पृथक् रूप से विचार करना चाहिए। भारतीय हिन्दी परिषद् ने भी महत्त्व, उज्ज्वल, तत्त्व आदि रूपों के साथ विद्वान्, महान् आदि संस्कृत रूपों को ही प्रश्रय दिया (प्रकाशन-समाचार, फरवरी '६१)।

इस समस्या पर श्री कृष्ण विकल का तो एक स्वतन्त्र लेख 'पुस्तक-जगत्' के नवम्बर, '६० के अंक में छपा। उसमें विस्तार के साथ संस्कृत शब्दों के स्वरूप-निर्णय पर प्रकाश डाला गया। उनका आग्रह है कि 'संस्कृत के किसी शब्द का रूप-परिवर्तन करने से पहले यह देखना आवश्यक है कि अमुक शब्द के बदलने पर कोई ऐसी नई अड़चन तो

नहीं खड़ी हो जाएगी जिसका परिणाम दूर तक जा सकता हो।' और इसी सिद्धान्त के आधार पर उन्होंने जगत्, पृथक्, साक्षात्, भगवत्, श्रीमत्, विद्वत्, महत् आदि रूपों को ही प्रश्रय दिया ताकि जगन्नाथ, पृथक्करण, साक्षात्कार, भगवद्गीता, श्रीमच्चरण, विद्वज्जन, महद्धाम आदि को समझने में कोई दुविधा न हो। किन्तु साथ ही उक्त लेख में भगवान्, महान्, विद्वान्, विराट् आदि रूप रखने का आग्रह किया गया है; क्योंकि हिन्दी में ये शब्द दोनों लिंगों में धड़ल्ले से प्रयुक्त होते हैं और ऐसा करने से कोई दूरगामी दुष्प्रभाव भी नहीं पड़ता।

शिक्षा-मंत्रालय की वर्तनी-समिति ने भी इस सम्बन्ध में जो निर्णय किया है वह कृष्ण विकल के निष्कर्ष से मिलता-जुलता प्रतीत होता है। किन्तु यहाँ निर्णय को और अधिक स्पष्ट करने की आवश्यकता थी कि क्या उन्हें जगत्, पृथक्, साक्षात्, महत् आदि उक्त रूप ग्राह्य हैं अथवा इनके हलंतरहित रूप। क्योंकि उनके निर्णय में लिखा गया है कि 'जिन शब्दों के प्रयोग में हिन्दी में हलंत-चिह्न लुप्त हो चुका है उनमें उसको फिर से लगाने का प्रयत्न न किया जाए; जैसे—महान्, विद्वान् आदि में।' यहाँ 'महान्, विद्वान् आदि' में 'आदि' शब्द क्या भ्रम नहीं उत्पन्न करेगा? इस विषय को, इस रूप में 'deal' करना उचित न था क्योंकि किसका हलंत्-चिह्न लुप्त हो चुका है और किसका नहीं, यह तो अपने-आप में ही विवादास्पद प्रश्न है। वस्तुतः दूरगामी प्रभाव का उल्लेख करते हुए निर्णय किया जाता तो अधिक संगत रहता।

(५) शिक्षा-मन्त्रालय की वर्तनी-समिति के निर्णय की धारा १२ में जहाँ चन्द्रबिन्दु लगाए जा सकते हैं वहाँ प्रयोग करने की सिफारिश की गई है।

प्रकाशक-संघ के प्रारूप में भी इसी प्रकार का सुझाव प्रस्तुत किया गया था। किन्तु प्रश्न यह है कि वर्तमान स्थिति में चन्द्रबिन्दु का पूरा लाभ हिन्दी में, नागरी लिपि में प्राप्त नहीं किया जा सकता। हमें चन्द्रबिन्दु के शत-प्रतिशत सही उच्चारण को लिपिबद्ध कर सकने का कोई हल ढूँढ़ना चाहिए था।

(६) उक्त निर्णय की धारा १५ में अंग्रेजी के जिन शब्दों में अर्ध विवृत 'ऑ' ध्वनि का प्रयोग होता है, उनके शुद्ध रूप को लिखने के लिए अर्ध-चन्द्र (ॅ) का संकेत लगाने की सिफारिश की गई है।

प्रकाशक-संघ के प्रारूप में भी ऐसा ही सुझाव दिया गया था, किन्तु साथ ही 'e' के एक विशिष्ट उच्चारण को सही रूप में बाँधने के लिए न तो प्रकाशक-संघ के प्रारूप में ही संकेत दिया गया है, और न ही मन्त्रालय की निर्णय-समिति ने उल्लेख करने का कष्ट किया है। जबकि 'पुस्तक-जगत्' के जनवरी, '६१ के अंक में एक लेख में इस प्रश्न को भी प्रारूप में शामिल करने की जोरदार अपील की गई थी, और समस्या का एक हल भी प्रस्तुत किया गया था।

संक्षेप में वर्तनी-समिति के हाल ही में दिये गए निर्णयों को उक्त पृष्ठभूमि पर रखकर देखते हैं तो सहसा श्री अनन्तगोपाल शेवड़े का एक कथन याद हो आता है—'जो सोचते हैं, विचारते हैं, चिंतन करते हैं, उनकी समाज में या देश में कोई प्रतिष्ठा नहीं है। सभी गुण शासन में समाहित हैं, और सत्ता की परिधि से बाहर कुछ भी नहीं है—ऐसी धारणा (हमारे देश में) बल पकड़ती जा रही है।' (भग्न-मन्दिर, पृष्ठ २८४)

उक्त धारणा को प्रश्रय देते जाना निस्सन्देह राष्ट्र के लिए हानिकारक होगा; अतः मेरा विश्वास है कि निर्णायकगण इन त्रुटियों को, ठंडे मन से परीक्षण करके उनमें यथोचित संशोधन करने में संकोच नहीं करेंगे। और भविष्य में अधिक उदार दृष्टिकोण अपनाएँगे। इससे राष्ट्रभाषा का बहुत हित होगा।

विज्ञापन और विक्रय-वृद्धि

दीनानाथ मलहोत्रा

यह लेख पब्लिकेशन्स डिवीज़न द्वारा आयोजित सेमिनार ऑन बुक सेलिंग के अवसर पर पढ़ा गया था।

किसी भी आधुनिक व्यवसाय के लिए विज्ञापन और बिक्री की वृद्धि का आधारभूत महत्त्व है एवं पुस्तकों की बिक्री का क्षेत्र इससे भिन्न नहीं। विकासमान व्यवसाय के लिए एक पुस्तक-विक्रेता का कर्तव्य है कि वह विज्ञापन और बिक्री की वृद्धि के सभी सम्भव साधनों का उपयोग करे। इस दिशा में उसका सर्वप्रथम कर्तव्य है कि वह समाज में यह धारणा उत्पन्न करे कि वह जो पुस्तकें बेच रहा है वे सभ्य जीवन के आवश्यक अंग हैं। दूसरी बात यह कि उसे यह प्रचार करना होगा कि उसकी पुस्तकों की दूकान में प्रत्येक रुचि की पूर्ति करने योग्य सर्वोत्तम पुस्तकों का संग्रह है ताकि लोग उसकी दूकान से पुस्तकें खरीदें। हमारे देश के विकासोन्मुख समाज-जैसे समाज में पुस्तकों की दूकान की ओर सर्वसाधारण का ध्यान आकृष्ट करने के लिए यह आवश्यक है कि पुस्तक-विक्रेता सभी प्रकार के उपायों और प्रलोभनों की व्यवस्था करें। समाज के जिस सम्प्रदाय की सेवा करनी हो उसके क्षेत्र और प्रकृति की विशिष्ट परिस्थिति के उपयुक्त सुस्पष्ट उपायों का इस्तेमाल करना चाहिए। इस छोटे-से लेख में बिक्री बढ़ाने के कुछ महत्त्व-पूर्ण उपायों पर प्रकाश डाला गया है जिनका उपयोग पुस्तक-विक्रेता कर सकते हैं।

विज्ञापन, बिक्री की वृद्धि और आर्थिक दृष्टिकोण

कभी-कभी यह बुनियादी प्रश्न उठता है कि क्या कोई पुस्तक-विक्रेता अपने अत्यन्त साधारण लाभ से विज्ञापन का व्यय बरदाश्त नहीं कर सकता है? यह सच है कि पुस्तकों का व्यवसाय छोटा और कठिन होता है और इसमें लाभ भी कम होता है। लेकिन इसीलिए यह और भी आवश्यक है कि विज्ञापन और बिक्री की वृद्धि के सभी सम्भव उपायों के साथ इसे संचालित किया जाता रहे। हाँ, यह बात अवश्य ध्यान में रखनी होगी कि विज्ञापन और बिक्री की वृद्धि के केवल वे ही उपाय काम में लाए जाएँ जिनमें खर्च कम हो और पुस्तक-विक्रेता के लिए अत्यधिक आशाप्रद हों। केवल ऐसे ही उपाय व्यावहारिक हैं। यह स्थिति उन प्रकाशकों से बिलकुल भिन्न है जो एक पुस्तक-विक्रेता से अधिक व्यय कर सकते हैं।

पुस्तक-विक्रेता का व्यक्तित्व

अन्यान्य बहुत से थोक बिक्री वाले व्यवसायों के समान पुस्तक-विक्रेता का काम भी बहुलांश में व्यक्तिगत है। जहाँ तक बिक्री की वृद्धि का प्रश्न है, बेचने वालों का व्यक्तित्व, उनके आचरण, उनकी साधारण दृष्टि और दूकान की निपुणता—ये बड़े महत्त्व की बातें हैं जिन पर मालिक अथवा व्यवस्थापक को सावधानी से ध्यान देना चाहिए। एक ग्राहक की भावना केवल पुस्तकें ही खरीदने की नहीं होती, अपितु बुद्धिमान और शिक्षित व्यक्ति होने के नाते वह सुरुचिपूर्ण अनुभूतियाँ भी हासिल करना चाहता है। वह उस दूकान में जाना चाहता है जहाँ व्यापक आकार में विभिन्न प्रकार की नवीनतम पुस्तकों का समुचित समावेश हो तथा जहाँ के बेचने वाले को उस व्यवसाय की जानकारी हो और उसका स्वभाव मधुर हो। बेचने की योग्यता एक बहुत बड़ी कला है और अब इसने विज्ञान और तकनीक का रूप अख्तियार कर लिया है, जिसकी जान-कारी प्राप्त करने के लिए अध्ययन की आवश्यकता है। लेकिन व्यक्तिगत गुण सर्वोपरि है। पुस्तक-विक्रेता को

खरीदार के साथ मैत्रीवत् व्यवहार करना चाहिए ताकि ग्राहक पुस्तक की दूकान में जाकर खुशी महसूस कर सके, पुस्तक-विक्रेता से मित्र के समान बातें कर सके, क्योंकि एक पुस्तक-विक्रेता का काम एक दार्शनिक और पथ-प्रदर्शक का काम है। पुस्तक-विक्रेता पुस्तकों के चुनाव में ग्राहक की सहायता करता है, नयी पुस्तकों और नये लेखकों से उसका परिचय कराता है।

सफल पुस्तक-विक्रेता

कुछ सफल पुस्तक-विक्रेता स्वयं एक प्रतिष्ठान बन जाते हैं जिनको लोग बड़े आनन्द के साथ याद करते रहते हैं। इस सम्बन्ध में दो महत्त्वपूर्ण उदाहरण दिये जाते हैं—एक है कैंबरीज का हेफर्स-बुक-शाप और दूसरा है ऑक्सफोर्ड का ब्लाक वेल्स। अभी केवल कुछ वर्ष पहले पुस्तक-विक्रेता की ब्लाक वेल्स को उनकी योग्यता के लिए नाइट की उपाधि से विभूषित किया गया था। इसी तरह प्रत्येक पुस्तक-विक्रेता को हेफर्स और ब्लाकवेल्स के समान स्वयं एक प्रतिष्ठान बन जाने की चेष्टा करनी चाहिए। इस तरह की और भी शानदार मिसालें दी जा सकती हैं। इस शानदार शोहरत के कारण ऑक्सफोर्ड-जैसे छोटे शहर की ब्लाक वेल्स-पुस्तक-दूकान में विश्व के कोने-कोने से पुस्तकों के हजारों आर्डर्स पहुँचने लगे। ब्लाकवेल्स के सैकड़ों कर्मचारी बड़ी योग्यता के साथ काम करते हैं और इस छोटे-से पुस्तक-विक्रेता के व्यवसाय को बड़े पैमाने पर चलाते हैं। अतः पुस्तक-विक्रेता के व्यक्तित्व और निपुणता के महत्त्व को कभी भी नज़रंदाज़ नहीं किया जा सकता।

पत्रों में प्रचार

पुस्तक-विक्रेता द्वारा पत्रों में विज्ञापन के माध्यम से प्रचार बड़ी सावधानी से करना चाहिए। बहुत बड़े और ख्याति-प्राप्त पुस्तक-विक्रेता के अतिरिक्त साधारण पत्र-प्रचार का कोई विशेष मूल्य नहीं होता। ख्याति-प्राप्त पुस्तक-विक्रेता ऐसा प्रचार केवल सम्मान के लिए करते हैं ताकि सर्वसाधारण में उनकी ख्याति बनी रहे। एक पुस्तक-विक्रेता को साधारण तौर से विशेष-विशेष पुस्तकों का स्थानीय पत्रों में प्रचार करना चाहिए और वह भी राष्ट्रीय पुस्तक-समारोहों के अवसर पर अथवा उस समय जबकि स्वयं ग्रन्थकार अपनी किसी नयी पुस्तक पर ग्राहकों को अपना हस्ताक्षर देने के लिए उपस्थित होने वाला हो।

नाम का विज्ञापन अच्छी तरह होना चाहिए, क्योंकि पुस्तक-व्यवसाय उतना लाभदायक व्यवसाय नहीं है इसलिए पुस्तकों की दूकानें कम महत्त्व के स्थानों में होती हैं जहाँ खर्च कम बैठता है।

अक्सर यह तजरबा हुआ है कि किसी पत्र के वर्गीकृत कालमों में अथवा उसके साहित्यिक पृष्ठ पर किये गए छोटे-छोटे विज्ञापन अधिक लाभदायक और मितव्ययी होते हैं। उपन्यास, जीवन-चरित्र तथा राजनीति की पुस्तकों के लिए किसी पत्र का साहित्यिक पृष्ठ अधिक उपयोगी होता है। दूसरे प्रकार की पुस्तकों का विज्ञापन वर्गीकृत कालमों में भी किया जा सकता है। विज्ञापन के विषय और सजावट पर कुछ ध्यान देना चाहिए। आम तौर से किसी पुस्तक-विक्रेता के लिए यह सम्भव नहीं हो पाता कि वह इस सम्बन्ध में किसी विशेषज्ञ से परामर्श कर सके, लेकिन सजावट की कुछ खास बातें ध्यान में रखी जा सकती हैं। पहली बात तो यह है कि विज्ञापन में बातें (Matter) अधिक

नहीं होनी चाहिएँ। पाठकों का ध्यान आकृष्ट करने के लिए कुछ सफेद स्थान आवश्यक होता है। दूसरी बात यह है कि दूकान का नाम सुन्दर मोटे अक्षरों में होना चाहिए। यदि दूकान का पता छोटे-से ब्लाक में दिया जाए तो अति उत्तम।

पुस्तकों की विक्री की एक विशेष प्रणाली भी है जो मुख्यतः पत्रों में प्रचार से सम्बन्धित है। यह है डाक (मेल) से प्राप्त आर्डर्स। ऐसे बहुत से प्रकाशकों का उदाहरण है जिन्होंने मेल-आर्डर के ज़रिए निरंतर विक्री का काफी काम किया है और इसके लिए प्रचार में काफी खर्च किया है। लेकिन इस तरह के व्यवसाय के लिए विशेष किस्म की पुस्तकों का चुनाव करना होता है और लगातार उनका विज्ञापन कराना पड़ता है। पर्याप्त परिमाण में आर्डर आते हैं जिनके पार्सलों के साथ प्रचार की अन्यान्य सामग्रियाँ भी भेजी जाती हैं। इस उपाय से आर्डरों की संख्या और भी बढ़ जाती है।

क्षतिकारक शुभकामना विज्ञापन

इस विशेष किस्म के तथाकथित शुभकामना-विज्ञापन पर बहुत से पुस्तक-विक्रेता काफी रुपये खर्च करते हैं। किसी निकट के स्कूल के व्यवस्थापक स्कूल की पत्रिका अथवा वार्षिक रिपोर्ट की पुस्तिका के लिए विज्ञापन माँगने पहुँच जाते हैं। क्रिकेट खेल के मौके पर कोई विशिष्ट नागरिक विज्ञापन माँगने पहुँच जाते हैं। पुस्तक-विक्रेता ऐसे लोगों को विज्ञापन देने के लिए बाध्य हो जाता है क्योंकि वह ऐसे अधिकारी व्यक्तियों को नाखुश नहीं करना चाहता। विज्ञापन देने में वह हिचकिचाहट तो पैदा करता है परन्तु दबाव में पड़कर उसे देना ही पड़ता है। इसीलिए ऐसे विज्ञापनों को कुछ लोग शुभकामना-विज्ञापन के बदले दुष्कामना-विज्ञापन कहते हैं।

गश्ती चिट्ठियाँ, पर्चे और सूची-पत्र

जिस अंचल में दूकान स्थित हो उस अंचल के विभिन्न पतों पर विशेष गश्ती चिट्ठियाँ (Circulars) पुस्तकों की विक्री की वृद्धि के लिए प्रेषित करना अत्यधिक फलप्रद प्रमाणित होता है। प्रत्येक पुस्तक बिकने योग्य होती हैं बशर्ते कि आपको उसके चाहने वाले का पता हो।

पुस्तक-विक्रेता को प्रत्येक प्रकार के ग्राहकों के पते रखने पड़ते हैं जो विभिन्न पसन्दों की पुस्तकें खरीदना चाहते हैं। ऐसे बहुत से स्कूल, पुस्तकालय, विशेष संगठन और व्यक्ति होते हैं जो अपनी-अपनी पसन्द की पुस्तकों में दिलचस्पी लेते हैं। इसमें कुछ खर्च अवश्य होता है लेकिन लाभ की अधिक गुन्जाइश रहती है। बहुत से ऐसे पुस्तक-विक्रेता हैं जिन्होंने गश्ती चिट्ठियों के माध्यम से अपने व्यवसाय को अपनी सीमा से बाहर काफी दूर तक फैला रखा है। ये गश्ती चिट्ठियों के जरिये अपने ग्राहकों को अपने भावी प्रकाशनों से अवगत कराते रहते हैं तथा उनसे अग्रिम आर्डर ले लेते हैं। इस तरीके को अपनाने से कभी-कभी आर्डर बढ़ जाते हैं और लाभ अधिक हो जाता है। इस उपाय से ग्राहक और पुस्तक-विक्रेता दोनों का फ़ायदा होता है—ग्राहक अपनी रुचि की पुस्तक पा जाता है और पुस्तक विक्रेता की आमदनी बढ़ जाती है। कुछ पुस्तक-विक्रेता तो ऐसे सैकड़ों और हजारों ग्राहकों के पते अपने पास रखते हैं और गश्ती चिट्ठियों आदि के माध्यम से इनसे निरंतर सम्पर्क बनाए रखते हैं। ऐसी गश्ती चिट्ठियाँ सुगमता से और सस्ते में मासिक पर्चे (बुलेटिन) निकालकर भेजी जा सकती हैं। यह एक प्रभावशाली उपाय है। ऐसे पर्चे में कुछ साहित्यिक संवाद भी दिये जाते हैं। इस उपाय से डाक-व्यय की काफ़ी बचत हो जाती है क्योंकि पर्चे को डाक से रिआयती दर में भेजने की सहूलियत मिल जाती है।

पतों का निरंतर परीक्षण, संशोधन और परिवर्धन करते रहना चाहिए। हजारों पते पुराने पड़ जाते हैं जिनसे कुछ फायदा नहीं होता। यह काम एक सुयोग्य व्यक्ति को करना चाहिए। पते उन व्यक्तियों के लिखे जाने चाहिएँ जिनके आर्डर डाक से आते हैं तथा जो खुद दूकान में आते हैं। दूकान में छपे सुन्दर कार्ड रखे जा सकते हैं और उनके जरिए ग्राहकों से नम्रता के साथ निवेदन किया जा सकता है कि वे अपनी रुचि के विषय की पुस्तक का नाम लिख भेजें।

गश्ती चिट्ठियों के विषय

प्रेषित की जाने वाली गश्ती चिट्ठियों के विषय में यहाँ कुछ कहना आवश्यक है। गश्ती चिट्ठियों की बातें असर पहुँचाने वाली हों ताकि बुद्धिमान ग्राहक उनसे

प्रभावित हो सके, जिसे पुस्तक के लिए पैसे खर्च करने हैं। प्रत्येक पुस्तक अपने-आप में एक नयी पण्य-वस्तु है। वह पहले मौजद पुस्तक से भिन्न है और इसीलिए वह प्रकाशित की गई है। इस बात से ग्राहक को परिचित होना चाहिए। नयी पुस्तक में जो भाषा और विशेषण प्रयोग किये जाएँ वे पूर्व-प्रकाशित पुस्तक की भाषा और विशेषणों से भिन्न हों—नवीन हों। पुस्तक प्रभावोत्पादक और यथार्थ हो। काम लायक होने पर ही किसी पुस्तक में ये दोनों बातें हो सकती हैं। अगर पुस्तक काम की न हो तो पुस्तक-विक्रेता का कर्तव्य है कि वह उसे खरीदने की सिफारिश न करे। जिस पुस्तक के गुण का ज्ञान पुस्तक-विक्रेता को न हो वह उस पुस्तक के केवल नाम का जिक्र कर सकता है। इसलिए गश्ती चिट्ठियों की भाषा बड़ी बुद्धिमानी से लिखी जानी चाहिए।

पुस्तक प्रदर्शनी

पुस्तक-विक्रेताओं द्वारा आयोजित पुस्तक-प्रदर्शनियों से पुस्तकों की विक्री की वृद्धि में बड़ी सहायता मिलती है। हाँ, पुस्तक-प्रदर्शनियों का आयोजन बराबर नहीं करना चाहिए क्योंकि ऐसा करने से उनका महत्व घट जाता है, आकर्षण कम हो जाता है। प्रदर्शनी का उद्देश्य सर्वसाधारण का ध्यान आकृष्ट करना तथा उसी अवसर पर पुस्तक की दूकान में उनको निमन्त्रित करना है। जब लोग दूकान में जाते हैं तो विभिन्न तरह की अथवा विशेष किस्म की पुस्तकें देखते हैं जिन्हें खरीदने की भावना उनमें उत्पन्न होती है। ऐसे अवसरों पर जो पुस्तकें खरीदते हैं उन्हें और जो नहीं खरीदते हैं उन्हें भी कुछ पुरस्कार दिये जा सकते हैं। पुस्तकों को विषयानुसार सजाना चाहिए। ऐसी पुस्तक-प्रदर्शनियों का आयोजन संयुक्त रूप से पुस्तक-विक्रेताओं और प्रकाशकों के संयुक्त संघों के तत्वावधान में किया जा सकता है। ऐसे अवसरों पर पुस्तक-विक्रेता तथा प्रकाशक प्रचारार्थ सुन्दर-से-सुन्दर आकर्षक पोस्टर आदि निकाल सकते हैं।

उद्घाटन और हस्ताक्षर

प्रदर्शनियों का उद्घाटन बाकायदा किसी मशहूर आदमी से कराना चाहिए और इसकी सूचनाएँ और खबरें पत्रों में प्रकाशनार्थ भेज देनी चाहिएँ। अगर उद्घाटन-कर्ता काफी मशहूर आदमी हो अथवा अगर वह किसी अखबार का सम्पादक हो तो खबर आसानी से छप जायगी। ऐसे अवसरों पर स्थानीय सम्वाददाताओं को निमन्त्रित करना चाहिए और पत्रों में प्रकाशनार्थ खबरें तथा फोटो देने चाहिएँ।

प्रचार और विक्री की वृद्धि के लिए विदेशों में प्रसिद्ध ग्रन्थकारों के हस्ताक्षर (autographing) संग्रह करने की प्रणाली बहुत ही जनप्रिय है। प्रचार और विक्री की वृद्धि के लिए इसे प्रभावशाली साधन माना जाता है। इसकी व्यवस्था करने के लिए पुस्तक-विक्रेता को अधिक कुछ व्यय नहीं करना पड़ता—केवल कुछ समय, शक्ति और संगठन की आवश्यकता होती है। ऐसे खर्च में प्रकाशक भी हाथ बटा सकता है। अखबारों में छोटा-सा विज्ञापन, पुस्तक-प्रेमियों के पास गश्ती चिट्ठियाँ, दूकानों में कुछ पोस्टरों की व्यवस्था आदि में बहुत ज्यादा खर्च नहीं होता। दूकान में लोगों के स्वागत-सम्मान की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। दूकान में इतनी जगह रखनी चाहिए ताकि ग्राहक घूम-घूमकर पुस्तकों को देख सके। जो उस विशेष अवसर पर पहुँच न पाएँ उनके लिए हस्ताक्षर-युक्त प्रति सुरक्षित रखनी चाहिए। ऐसे समारोह तभी सफल होते हैं जबकि लेखक बहुत नामी होते हैं अथवा जब नये लेखक अपने क्षेत्र में काफ़ी जनप्रिय होते हैं—प्रसिद्ध खेलवाड़, अभिनेता या नेता होते हैं।

समाज के प्रति पुस्तक-विक्रेता की एक महत्वपूर्ण भूमिका है जिसे उसे समझना चाहिए और गर्व के साथ काम करना चाहिए, ताकि लोग अपने सार्वजनिक जीवन के कर्तव्य को समझ सकें। यह स्मरण रखना चाहिए कि पुस्तक-विक्रय जीविकार्जन के लिए केवल एक साधारण व्यापार नहीं है अपितु इसका एक सांस्कृतिक पहलू भी है। इस सांस्कृतिक कार्य की पूर्ति हम तभी कर सकते हैं जबकि हम इसे उत्तरदायित्व और गर्व के साथ करें। ऐसे उत्तरदायित्व के पालन से केवल व्यक्तिगत संतोष ही उपलब्ध नहीं होता अपितु बड़े पैमाने पर व्यवसाय का प्रसार भी होता है।

विक्री-वृद्धि के अन्यान्य साधन

पुस्तक-विक्रेता को उस सम्पूर्ण समुदाय का खयाल

रखना चाहिए जिसकी वह सेवा कर रहा है। उसे इस बात का ख़याल रखना चाहिए कि वह किन उपायों और रास्तों से उन पुस्तकों की व्यवस्था कर सकता है जिनकी उस समुदाय को आवश्यकता है। स्कूली पुस्तकें, स्टेशनरी के दूसरे सामान आदि भी दूकान में रखना चाहिए। इनसे व्यापार की तथा दूसरी साधारण पुस्तकों की बिक्री में सहायता मिलती है। एक आदमी दूकान में केवल एक निब खरीदने के लिए जा सकता है लेकिन दूकान में पहुँचकर वह कई पुस्तकें भी खरीद सकता है। विकसित देशों में बिक्री की वृद्धि की आधुनिक-से-आधुनिक प्रणालियाँ काम में लाई जाती हैं। ग्राहक दूकान में एक किताब खरीदने के लिए जाकर कई किताबें खरीदने को ललच जाता है।

जो दूकान में जाते हैं उन्हें सूची-पत्र तथा प्रचार के दूसरे साधन देने चाहिएँ ताकि अपनी रुचि की पुस्तक का चुनाव करने में उन्हें आसानी हो। प्रत्येक पुस्तक के साथ एक खूबसूरत 'बुक-मार्क' होना चाहिए। उसमें कोई अच्छा उद्धरण तथा दूकान का पता भी होना चाहिए। रबर की धुँधली मुहर के बदले प्रत्येक पुस्तक पर टिकटें तथा लेबल्स होने चाहिएँ जो सुन्दर ढंग से बनाये गए हों। काग़ज़ के छपे सुन्दर ढोंगे, लपेटने के काग़ज़ आदि का इस्तेमाल करना चाहिए। इन सबके इस्तेमाल से दूकान की जनप्रियता बढ़ती है।

पुस्तक-प्रकाशकों द्वारा प्राप्त सूची-पत्रों, छपे सुन्दर कार्डों आदि से भी पुस्तक-विक्रेता का पर्याप्त प्रचार हो जाता है।

दूसरी जिस प्रकृति की ओर ध्यान देने की ज़रूरत है, वह है उन ग्राहकों की प्रकृति जो पुस्तकों को बार-बार उठाते हैं और क्षणों ऐसा करते रहते हैं। पुस्तक-विक्रेता का काम दूसरों की अपेक्षा भिन्न प्रकार का है। अगर कोई आदमी आता है और किताबों को बार-बार देखता है लेकिन खरीदे बिना ही चला जाता है, ऐसे महानुभाव के साथ भी, जो आपकी दूकान को पुस्तकालय (Library) की तरह इस्तेमाल करता है, आपका व्यवहार भिन्न नहीं होना चाहिए। ऐसा वह एक अकेला व्यक्ति हो सकता है, लेकिन मुमकिन है कि किसी-न-किसी दिन वह भी कोई किताब खरीद ले। आपका नियम यह होना चाहिए कि लोग आएँ और पुस्तकें देखें। किसी ऐसे व्यक्ति के कारण आप अपना व्यवहार नहीं बदल सकते।

पुस्तक-विक्रेता को ऐसे माता-पिताओं के नामों और पतों का संग्रह करना चाहिए जो अपनी लड़की या लड़के का जन्मदिन मनाते हों और उन्हें परामर्श देना चाहिए कि वे अपने बच्चे के जन्मोत्सव पर उसे पुस्तकें उपहार में दें। अगर यह काम ठीक से, संगठित रूप से किया जाए तो काफी लाभदायक होगा। माता-पिता दूकान में जा सकते हैं अथवा आर्डर दे सकते हैं। ऐसी परिस्थिति में पुस्तकें एक सुन्दर पुरस्कार के साथ भेज देनी चाहिएँ। पुस्तक-बँधाई की दूकान अगर पुस्तक की दूकान के आस-पास हो तो फिर पूछना ही क्या!

किताबों के ज़रिये समाज की जितनी भी सेवा हो सकती हो, वह करना ही इसका प्रधान उद्देश्य है। पुस्तक की दूकान को एक सांस्कृतिक और साहित्यिक प्रतिष्ठान का काम करना चाहिए। किताब की दूकान अध्यापकों, प्राध्यापकों, पुस्तकाध्यक्षों तथा समस्त पुस्तक-प्रेमियों के लिए आमन्त्रणात्मक केन्द्र-स्थल होना चाहिए। किसी पुस्तक की दूकान की महानतम उन्नति सम्पूर्ण समाज में उसके निजी वैशिष्ट्यपूर्ण व्यक्तित्व में है जिसे कभी भी नजरंदाज नहीं होने देना चाहिए।

(गत २१ अगस्त, १९६१ को नयी दिल्ली में यूनेस्को की तरफ़ से भारत सरकार के सूचना मन्त्रालय के प्रकाशन विभाग द्वारा आयोजित पुस्तक-विक्रय सेमीनार में प्रदत्त श्री डी० एन० मलहोत्रा की वार्ता का संक्षिप्त अंश)।

O

डॉ० केवल धीर सूचना देते हैं कि उनके पास 'मंटो मेरा दोस्त' नामक एक आलोचनात्मक पुस्तक तथा परिवार-नियोजन एवं काम मनोविज्ञान पर विभिन्न पाण्डुलिपियाँ तैयार हैं। प्रकाशनेच्छुक सज्जन निम्न पते पर पत्रव्यवहार करें : 'धीर परिवार नियोजन केन्द्र, मेहली गेट, फगवाड़ा (पंजाब)।

* * *

श्री रामचन्द्र शर्मा 'किशोर', द्वारा जनसम्पर्क विभाग, पटना-१ से सूचित करते हैं कि उनका चौथा उपन्यास 'तन का पंछी मन का पिंजड़ा' प्रकाशनार्थ तैयार है। यह लघु उपन्यास पॉकेट बुक्स सीरीज के लिए भी उपयुक्त है। इच्छुक प्रकाशक सम्पर्क स्थापित करें।

* * *

श्री अक्षयकुमार सिंह ३९/सी पुनाई चक, पटना से सूचित करते हैं कि उनकी लघु कहानियों का संग्रह 'चिनियाबादाम' प्रकाशन के लिए तैयार है। पत्र-व्यवहार उपर्युक्त पते पर किया जाए।

* * *

श्री राजेन्द्र सूचित करते हैं कि उनके पास 'पुरइन का पत्ता' शीर्षक एक उपन्यास की पाण्डुलिपि प्रकाशनार्थ प्रस्तुत है। प्रकाशक निम्न पते पर पत्रव्यवहार करें। श्री राजेन्द्र, १५५७/२ रोहतास नगर, शाहदरा-दिल्ली-३२।

* * *

श्री हरिप्रसाद सुमन, सुमन कुटीर, चम्बा (हि० प्र०) के पास चम्बा के १५० लोक-गीतों का संग्रह प्रकाशनार्थ तैयार है। जो प्रकाशक प्रकाशित करना चाहें, उचित शर्तों के साथ लेखक से उपरोक्त पते पर पत्रव्यवहार करें।

* * *

भारत की सुप्रसिद्ध मासिक पत्रिका 'नवनीत' द्वारा आयोजित अखिल भारतीय लेख-प्रतियोगिता में भारत सरकार के ब्रेल एडीटर ठाकुर विश्वनारायण सिंह को उनके संस्मरण श्री आर० एम० अलेपाईवाला पर १०० रु० का पुरस्कार प्रदान किया गया है।

* * *

डॉक्टर सरोजनी कुलश्रेष्ठ मथुरा से सूचित करती हैं कि उनके पास बालोपयोगी कविताओं के तीन संग्रह प्रकाशनार्थ तैयार हैं। इच्छुक प्रकाशक निम्न पते पर पत्र-व्यवहार करें—डॉ० सरोजनी कुलश्रेष्ठ, रामनाथ रोड, डेम्पियर नगर, मथुरा।

* * *

डॉ० सत्यधीर सत्य चिकित्सालय, कुतुबखाना, बरेली के सूचना देते हैं कि उनके पास विभिन्न विषयों की पाण्डुलिपियाँ प्रकाशनार्थ तैयार हैं। जो प्रकाशक छपाना चाहें उपर्युक्त पते पर पत्र-व्यवहार करें।

* * *

श्री कृष्ण 'मायूस' ९६५ कूँचा पातीराम, बाजार सीताराम, देहली-६ से सूचित करते हैं कि उनके पास 'तन के भोगी—मन के मीत', 'सूना पिंजरा—फुदकती बुलबुल'—'सूखी कलियाँ—मुरझाये फूल' और 'खटमल—खून और खूनी' उपन्यासों की पाण्डुलिपियाँ प्रकाशनार्थ तैयार हैं। इच्छुक प्रकाशकगण पत्र-व्यवहार द्वारा सम्पर्क स्थापित करें।

* * *

हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठ साहित्यकार

डॉ० लक्ष्मीनारायणलाल की अतीव लोकप्रिय औपन्यासिक रचना

बड़ी चम्पा छोटी चम्पा

अक्तूबर में प्रकाशित हो जाएगी

मूल्य : ४.५०

हमारे कुछ अन्य प्रमुख उपन्यास

पचपन खम्भे लाल दीवारें	:	उषा प्रियंवदा	३.००
डाक बँगला	:	कमलेश्वर	३.००
वह फिर नहीं आई	:	भगवतीचरण वर्मा	२.२५
सुहाग के नूपुर	:	अमृतलाल नागर	४.५०
सारा आकाश	:	राजेन्द्र यादव	५.००
पतन	:	आल्बेयर कामू : अनु० उमराव	२.२५
अजनबी	:	आल्बेयर कामू : अनु० राजेन्द्र यादव	३.००
प्लेग	:	आल्बेयर कामू : अनु० शिवदानसिंह चौहान, विजय चौहान	७.००

राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०

८, फ़ैज़ बाज़ार, दिल्ली-६ | साइंस कालेज के सामने, पटना-६

पुस्तक विक्रय पद्धति-गोष्ठी

विज्ञान भवन, नई दिल्ली में भारत सरकार के सूचना और प्रसार मन्त्रालय के प्रकाशन प्रभाग द्वारा यूनेस्को की ओर से उत्तर भारत के लिए पुस्तक-विक्रय पद्धति पर नौ-दिवसीय गोष्ठी का १६ से २४ अगस्त तक आयोजन किया गया।

पॉपूलर बुक डिपो, बम्बई से सम्बद्ध तथा भारत में प्रकाशकों और पुस्तक-विक्रेताओं की संस्थाओं के संघ के अध्यक्ष श्री सदानन्दजी भटकल तकनीकी निदेशक थे। उन्होंने गोष्ठी के अधिवेशन की अध्यक्षता की।

१६ अगस्त को सूचना और प्रसार-मन्त्री डॉ० बी० वी० केसरकर ने गोष्ठी का उद्घाटन किया। नेशनल बुक ट्रस्ट के अध्यक्ष डॉक्टर जी० सी० चटर्जी ने उद्घाटन-उत्सव की अध्यक्षता की। २४ अगस्त १९६१ को अन्तिम अधिवेशन में शिक्षामन्त्री डॉ० के० एल० श्रीमाली ने समर्पण भाषण दिया, और इसका सभापतित्व आर्थिक विकास संस्थान के निदेशक डॉ० वी० के० आर० वी० राव ने किया।

गोष्ठी के उद्देश्य

गोष्ठी का उद्देश्य बढ़ते हुए नये पाठकों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विशेष रूप से भारतीय भाषाओं में लिखित पठनीय सामग्री को जन-सामान्य तक सुलभ बनाने की तकनीक और पद्धतियों का विकास करना था।

भाग लेने वाले

गोष्ठी में २५ भाग लेने वाले और १६ पर्यवेक्षक थे। इनमें विभिन्न प्रदेशों—बम्बई, कलकत्ता, नई दिल्ली, पटना, अहमदाबाद, इलाहाबाद, वाराणसी, लखनऊ, कानपुर, देहरादून, अम्बाला, फिरोजपुर, श्रीनगर, भावनगर, नागपुर, जोधपुर, बीकानेर, इन्दौर और भोपाल के प्रमुख पुस्तक-विक्रेता सम्मिलित हुए।

व्याख्यान

इसमें बारह व्याख्यान हुए और बाद में उन पर चर्चा हुई। उसमें पुस्तक-उत्पादन और वितरण का शिल्प, पुस्तकों की दूकान के उद्देश्य और उपयोग, व्यापार-सम्बन्ध, पुस्तक-विक्रेताओं की आचार-संहिता, संचय के लिए पुस्तकों का चयन, पुस्तक-दूकान का प्रबन्ध, विज्ञापन और विक्रय में अभिवर्धन, विक्रय-कला, उधार बिक्री, ग्रन्थ-सूची-सम्बन्धी सेवा, समाचार-पत्र और अंशदान अभिकरण संगठन और पुस्तक-विक्रय में विशेष योग्यता—विषय थे।

व्याख्याता—सर्वश्री सैमुअल इजराइल, यू० एस० मोहन राव, के० सी० बेरी, रामलाल पुरी, एस० एच० प्रिमलानी, सी० एल० कौशल, जे० एच० शाह, दीनानाथ मलहोत्रा, ओंप्रकाश, जी० एम० प्रिमलानी, एस० भार्गव, एस० एस० सेठ, बी० एस० केसवन, आर० पी० पुरी और डी० वी० त्रिवेदी अपने विषयों के अनुभवी व्यक्ति थे।

चर्चा

चर्चा उच्च स्तर पर हुई। विशेषज्ञों द्वारा पुस्तक-विक्रय-व्यवसाय के समूचे ढाँचे का सर्वेक्षण किया गया। यह पहला अवसर था जब कि वर्तमान अवस्था और समस्याओं, आशाओं और आवश्यकताओं, पुस्तक-व्यवसाय में वितरण-पद्धति से विकास की सम्भावनाओं और भविष्य पर विस्तार से विचार किया गया। मद्रास में दिसम्बर १९५९ में आयोजित यूनेस्को प्रादेशिक गोष्ठी के सुझावों पर विशेष रूप से ध्यान दिलाया गया। विशेषकर यूनेस्को द्वारा सूचित, पुस्तकों के मुक्त प्रसार को बनाये रखने

तथा विस्तृत करने का सिद्धान्त, पाठकगण की सेवा में अधिक व्यावसायिक क्षमता लाने के लिए नियन्त्रण की अपेक्षा सहकारिता-तत्त्व को अपनाने की व्यापारी वर्ग की इच्छा आदि बातों पर बल दिया गया।

अनुरोध और निर्णय

अधिवेशन की अन्तिम बैठक में गोष्ठी की उपलब्धियों को अन्तिम रूप दिया गया। यह देखा गया कि पुस्तक-व्यवसाय का आर्थिक सर्वेक्षण नितांत आवश्यक है; और अनुभव किया गया कि विद्यमान व्यापारिक संगठनों को शक्तिशाली बनाने की तथा जहाँ स्थानिक एवं प्रादेशिक संगठनों का अभाव है वहाँ ऐसे संगठनों की स्थापना करने की भी आवश्यकता है। गोष्ठी में इस बात पर भी जोर दिया गया कि पुस्तक खरीदने की टेंडर-प्रणाली को हटाकर पुस्तकों की बिक्री पुस्तक-विक्रेताओं द्वारा ही की जाए। इस व्यवसाय की आर्थिक अभिवृद्धि के लिए अधिक प्रशिक्षण एवं प्रबोधन पाठ्यक्रमों, शिक्षण-केन्द्रों (वर्कशापों) के अध्ययन तथा हाट-सर्वेक्षण के लिए विदेश-भ्रमण, सहकारी रूप से निधि-संकलन आदि बातों की आवश्यकता भी बताई गई। बिक्री बढ़ाने के लिए, वैयक्तिक कार्य-क्षमता, अधिक सजावट, संचय, नियंत्रण तथा संगठन की अर्थ-व्यवस्था द्वारा पुस्तक बेचने वाली दुकानों के सुधरे हुए प्रबन्ध के लिए अतिरिक्त प्रयत्नों की आवश्यकता अपेक्षित है।

विशेषतः पाठक-संख्या बढ़ाने के लिए सहकारी तथा सामासिक कार्य करने की आवश्यकता भी गोष्ठी में स्वीकार की गई। साथ-साथ पुस्तक-विक्रेताओं की संस्थाओं द्वारा प्रदेश में राष्ट्रीय पुस्तक समारोह, पुस्तक-प्रदर्शनियाँ, काव्य-पठन, नाटक, वार्ता, आकाशवाणी कार्यक्रम, चित्रपट आदि आयोजित कार्यक्रमों का स्वागत किया गया। इससे जनता में पुस्तकें पढ़ने तथा खरीदने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिलने की बहुत सम्भावना है।

बर्मा में पुस्तक प्रकाशन उद्योग

इस लेख के लेखक **केनेथ टी० हर्स्ट** अमरीका की प्रमुख प्रकाशन-संस्था हाथर्न बुक्स के विज्ञापन मैनेजर हैं। हाल ही में वह अमरीकी सरकार की ओर से तीन महीने तक बर्मा का दौरा करके आये हैं।

बर्मा में पाठ्य-सामग्री की बेहद भूख है। किसी भी दिन शाम को रंगून शहर के सूले पगोडा के आस-पास की पुस्तकों तथा पत्र-पत्रिकाओं की अनेक दुकानों पर आपको सैकड़ों बर्मी खड़े हुए मिल जाएँगे। ये दुकानें अमरीका की पुस्तकों की दुकानों-जैसी नहीं हैं। इनमें तो कुछ तो दीवारों में छोटे-छोटे आलों में खोल ली गई हैं या फिर बहुत से लोग तो सड़क के किनारे पटरी पर ही दुकान लगा लेते हैं। यहाँ से आप कोई भी चीज खरीद सकते हैं—**टाइम** नामक पत्रिका के दो वर्ष पुराने अंक से लेकर अणु-विज्ञान की नई-से-नई पाठ्य-पुस्तक तक आपको यहाँ मिल जाएगी। हालाँकि आमतौर पर यहाँ सबसे ज्यादा लोग कच्ची जिल्द वाले उपन्यास खरीदने ही आते हैं, पर इन रंग-बिरंगे आवरण-पृष्ठों वाली पुस्तकों की बगल में ही आपको डिकेन्स की पक्की जिल्द वाली पुस्तकें या 'सचित्र बर्मी एनसाइक्लोपीडिया' का पूरा सेट भी मिल जाएगा।

निरक्षरता और महँगी किताबें

बर्मा के पुस्तक-प्रकाशकों के सामने इस समय दो मुख्य समस्याएँ हैं—देश में साक्षरता का निम्न स्तर (नवीनतम आँकड़ों के अनुसार ५०%) और देशवासियों के रहन-सहन के स्तर की तुलना में पुस्तकों का अपेक्षतः अधिक मूल्य। बर्मा में दफ्तर में काम करने वाले किसी आदमी को, जो महीने में ४५० क्यात कमाता हो (१ क्यात=१ रुपया), पक्की जिल्द वाली एक पुस्तक पर अपनी एक दिन की तनख्वाह खर्च कर देना बहुत मालूम होता है। शारीरिक श्रम करने वाले ऐसे आदमी के लिए तो, जिसे २०० क्यात माहवार के वेतन पर चार-पाँच बच्चों का पेट भरना पड़ता हो, इस प्रकार की खरीदारी आर्थिक दृष्टि से असंभव है।

प्रकाशकों की कोशिश

बर्मा के प्रकाशक इन समस्याओं को किस प्रकार हल करने की कोशिश कर रहे हैं? बर्मा की सबसे बड़ी प्रकाशन-संस्था बर्मा ट्रान्सलेशन सोसायटी, जहाँ मैंने बिक्री-सलाहकार के रूप में तीन महीने तक काम किया था, इस समस्या को हल करने के लिए 'पीपुल्स हैंडबुक सिरीज़' नामक पुस्तकालय का प्रकाशन करती है। यह सोसायटी हर महीने सेंटर-स्टिच की कच्ची जिल्द वाली २५-२५ प्यास (४ आने) मूल्य की दो पुस्तकें छापती है। हर पुस्तक किसी बर्मी लेखक से लिखवायी जाती है जो बहुत ही सरल और रोचक कहानी की शैली में कोई मनोरंजक लोकप्रिय कहानी पेश करने की कोशिश करता है। लेकिन ट्रांसलेशन सोसायटी अपने संस्थापक तथा अध्यक्ष प्रधान मन्त्री ऊ नू के आदर्शों का पालन करती है, इसलिए वह कहानी की आड़ में कोई शिक्षाप्रद सन्देश भी पाठकों के सामने रखती है। उदाहरण के लिए इस पुस्तकमाला के ज़रिये स्वास्थ्य, कृषि, चिकित्सा और सफाई के बारे में बहुत सी उपयोगी बातें पाठकों को बतायी गई हैं। इन पुस्तकों में बहुत से रेखाचित्र होते हैं और वे कम-से-कम आंशिक रूप से बर्मा में पुस्तकें पढ़ने की प्रगति की राह में आने वाली शैक्षणिक बाधाओं को दूर करते हैं। दुर्भाग्यवश इस पुस्तक की लागत लगभग १७ नये पैसे आती है और जब इसमें सम्पादकीय खर्च तथा ऊपर का खर्च जोड़ दिया जाता है तो प्रकाशक इनकी बिक्री से लागत भी वसूल नहीं कर पाता। अब ट्रान्सलेशन सोसायटी

मुख्यतः शहरों के पाठकों के लिए ५० नये पैसे कीमत वाली कुछ बड़ी किताबें भी प्रकाशित कर रही है और इस प्रकार वह चवन्नी वाली पुस्तकों पर होने वाली हानि को बराबर करने की आशा करती है।

दूसरी ओर यह सोसायटी १४ खंडों में 'सचित्र बर्मी इनसाइक्लोपीडिया' प्रकाशित कर रही है, जो 'इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका' के ढंग पर लिखी गई है। अन्तर केवल यह है कि इसे बर्मी लेखकों ने बर्मी भाषा में लिखा है और इसलिए स्वाभाविक रूप से इसमें बर्मा से सम्बन्ध रखने वाले विषय ज्यादा हैं। इसकी हर जिल्द २५ क्यात (२५ रु०) में बिकती है, जो पुस्तक-विक्रेताओं की राय में आम खरीदारों के लिए बहुत ऊँची कीमत है। लेकिन अगर इस पुस्तक का मूल्य अमरीकी पद्धति के अनुसार लागत का पाँच गुना रखा जाता तो हर जिल्द कम-से-कम ३५ क्यात में बिकती।

इस समस्या का एक हल यह निकाल दिया गया है कि इसे अब इंगलैण्ड के बजाय बर्मा में छपाया जा रहा है जहाँ मजदूरियाँ बहुत कम हैं। इसकी पहली पाँच जिल्दें इंगलैंड में छपी थीं। ट्रान्सलेशन सोसायटी बाकी नौ जिल्दें ब्रिटिश मुद्रक के नमूने पर अपने प्रेस में छापेगी।

इनसाइक्लोपीडिया की बिक्री बढ़ाने की जबरदस्त कोशिश की जा रही है। इसे घर-घर ले जाकर बेचने का कार्यक्रम आरम्भ किया गया है, जिससे शहरों में काफ़ी सफलता प्राप्त हुई है। लोगों के पते पर इस पुस्तक के बारे में छपे हुए पर्चे भेजे जा रहे हैं। पुस्तक-विक्रेताओं के लिए दुकानों पर सजाने के लिए विज्ञापन-सामग्री तैयार की गई है और दुकानों में काम करने वाले कर्मचारियों को प्रोत्साहन देने के लिए भी योजनाएँ बनाई जा रही हैं।

बर्मी ट्रांसलेशन सोसायटी की स्थापना

इस सोसायटी की स्थापना १९४७ में अ नू ने संसार की ज्ञान-निधि बर्मा की जनता को उसकी भाषा में उपलब्ध करने के लिए की थी, परन्तु अब यह बहुत बड़ी प्रकाशन-संस्था बन गई है जिसमें अनेक विभाग हैं। इसमें ३५६ कर्मचारी काम करते हैं और इसका सालाना बजट लगभग ३५ लाख रुपये का है। इस सोसायटी ने सभी क्षेत्रों तथा सभी स्तरों की ५०० से अधिक व्यावसायिक पुस्तकें, पाठ्य-पुस्तकें तथा संदर्भ-पुस्तकें प्रकाशित की हैं। रंगून में इसकी अपनी चार-मंजिला इमारत है। इस इमारत में नीचे वाली मंज़िल पर इसकी अपनी दूकान, बिक्री तथा प्रशासन-विभाग, एक बहुत बड़ा सभा-भवन और एक सार्वजनिक पुस्तकालय है। रंगून से बाहर सोसायटी के सम्पादकीय विभाग की दुमंज़िला इमारत है। दो बड़ी-बड़ी इमारतों में इसके छापेखाने तथा जिल्दसाज़ी के विभाग, गोदाम और मोटर ट्रान्सपोर्ट विभाग हैं।

छापेखाने की आधुनिक मशीनें

सोसायटी का छापाखाना बर्मा में सबसे आधुनिक छापाखाना है। इसमें ३ केली मशीनें, ३ इकरंगी छपाई करने वाली और १ दुरंगी छपाई करने वाली मिली मशीनें, २ मिली के ट्रैडिल, २ छोटी प्लेटन मशीनें, २ आफ़सेट मशीनें और एक बहुरंगी छपाई करने वाली मशीन है। जिल्दसाज़ी के लिए फर्मे मोड़ने वाली एक बाडम मशीन और एक पोलीग्राफ, फर्मे मोड़ने वाली दो कंडैल मशीनें, तार की सिलाई करने वाली एक मशीन

और एक जुज़बन्दी सिलाई करने वाली मशीन है। छापेखाने की आधी आमदनी सोसायटी की किताबें छापकर होती है और बाकी आधी आमदनी दूसरी कम्पनियों के काम से—जिसमें कलेंडर और लेबिल छापने से लेकर पुस्तिकाएँ और फ़ोल्डर छापने से लेकर अमरीकी सूचना-विभाग की मासिक पत्रिका 'डान' छापने तक के काम शामिल हैं। यहाँ पर ब्लाक बनाने की आधुनिकतम मशीनें भी हैं। ज़्यादातर मशीनें इंटरनेशनल को-आपरेशन आथरिटी और फोर्ड फाउंडेशन के पैसे से खरीदी गई हैं।

सोसायटी का नया नाम सारये बेकमन

चूँकि अब इस सोसायटी का कार्यक्षेत्र विदेशी पुस्तकों का अनुवाद करके प्रकाशित करने के इसके मूल उद्देश्य से बहुत बढ़ गया है, इसलिए इसका नाम भी बर्मा ट्रांसलेशन सोसायटी से बदलकर सारये बेकमन (साहित्य महल) इंस्टीट्यूट रख दिया गया है।

बर्मा की सबसे बड़ी शैक्षणिक प्रकाशन-संस्था होने की हैसियत से यह सोसायटी प्राथमिक तथा माध्यमिक स्कूलों, अध्यापकों की ट्रेनिंग इंस्टीच्यूटों और टेकनिकल तथा व्यावसायिक स्कूलों की पुस्तकें छापती है। बर्मा की सरकार धीरे-धीरे विश्वविद्यालयों में शिक्षा का माध्यम अंग्रेज़ी से बदलकर बर्मी कर देना चाहती है और यह सोसायटी इस कार्यक्रम को पूरा करने के लिए पाठ्य-पुस्तकें तैयार करने को तत्पर है। शैक्षणिक तथा व्यावसायिक पुस्तकें छापने के अपने कार्यक्रम के अतिरिक्त सोसायटी अब बच्चों के लिए दो बड़ी-बड़ी पुस्तक-मालाएँ प्रकाशित कर रही हैं—एक ४ से ८ वर्ष तक के बच्चों के लिए और दूसरी ९ से १४ वर्ष तक के बच्चों के लिए। इनमें से हर पुस्तकमाला की दो-दो पुस्तकें हर महीने छपती हैं और इनका मूल्य चार-चार आने होता है।

सोसायटी ने अपने पुस्तक-विक्रेताओं को दो श्रेणियों में बाँट रखा है। एक श्रेणी में तो सोसायटी ने २२० ऐसे पुस्तक-विक्रेता चुनकर रखे हैं जो उसकी छापी हुई सारी किताबें बेचते हैं, जिनमें पाठ्य-पुस्तकें भी होती हैं और वे सोसायटी के पास १०० क्यात डिपाजिट रखते हैं। दूसरी श्रेणी में ऐसे २३४ पुस्तक-विक्रेता हैं जिन्हें कोई डिपाजिट नहीं रखना पड़ता और जो सोसायटी की केवल कुछ चुनी हुई पुस्तकें ही रखते हैं और उन्हें सोसायटी द्वारा छापी गई पाठ्य-पुस्तकें बेचने का अधिकार भी नहीं होता।

सोसायटी की प्रकाशित सभी पुस्तकें रखने वाले विक्रेताओं में से केवल १०० ऐसे हैं जो केवल पुस्तकों का ही व्यापार करते हैं। बाकी दुकानें ज़्यादातर देहातों में हैं और वे सूखी हुई मछलियों से लेकर सिगार तक सभी चीज़ें बेचती हैं। बर्मा में पुस्तकों के लगभग २०० फुटकर विक्रेता और हैं, पर सोसायटी से इनका कारोबार इसलिए नहीं है कि वे बहुत थोड़ी किताबें खरीदते हैं और बहुत दूर हैं। सोसायटी पुस्तक-विक्रेताओं को २५% और शिक्षा संस्थाओं को १५% कमीशन देती है। ज़्यादातर स्कूलों को किताबें स्थानीय पुस्तक-विक्रेता सप्लाई करते हैं। शिक्षा मन्त्रालय हर साल सभी प्रकाशकों की स्वीकृत पाठ्य-पुस्तकों की सूची प्रकाशित करता है। इस सूची में से पुस्तकें चुनकर हर स्कूल स्थानीय विक्रेताओं से खरीद सकता है।

सोसायटी ने लगभग साल-भर पहले एक बुक-क्लब

आरम्भ किया था जिसके २००० से अधिक सदस्य हैं और आशा की जाती है कि इसके सदस्यों की संख्या इस साल बढ़कर ७००० हो जाएगी। सदस्य हर साल १० क्यात चन्दा देते हैं जिसके बदले में उन्हें उनकी पसन्द की १५ क्यात मूल्य की पुस्तकें दी जाती हैं और इसके अलावा वे सोसायटी की कोई दूसरी व्यावसायिक पुस्तक २५% डिसकाउन्ट पर ले सकते हैं।

सोसायटी की इमारत की नीचे वाली मंजिल पर उसकी अपनी जो किताबों की दूकान है उसमें बर्मी और अंग्रेज़ी दोनों भाषाओं की पुस्तकें तथा पत्रिकाएँ, अमरीकी पाठ्य-पुस्तकें, आम व्यावसायिक पुस्तकें और कच्ची जिल्द वाली पुस्तकें बेची जाती हैं। १९६१ में इस दूकान को चलते हुए तीन साल पूरे हो जाएँगे। पिछले साल उसने पहले साल के मुकाबले तीन गुनी किताबें बेची थीं और इस साल वह अपनी बिक्री पिछले साल के मुका-बले दुगुनी कर देने की आशा करती है।

रंगून में किताबों की लगभग आधे दर्जन दूसरी बड़ी-बड़ी आधुनिक दुकानें हैं जिनमें अंग्रेज़ी की किताबें बिकती हैं। चूँकि बर्मा में जीवन में प्रगति करने की महत्त्वाकांक्षा रखने वाले हर आदमी के लिए अंग्रेज़ी जानना ज़रूरी है, इसलिए अंग्रेज़ी की पाठ्य-पुस्तकों, व्यावसायिक पुस्तकों और विशेष ज्ञान की पुस्तकों की बिक्री बढ़ती जाएगी। सोसायटी ने पुस्तक-उद्योग के बारे में एक व्यापारिक पत्रिका निकालना शुरू किया है। वह एक मासिक सूचना बुलेटिन भी प्रकाशित करती है जिसमें सभी प्रकाशित पुस्तकों तथा भावी प्रकाशनों की सूची और पुस्तक-व्यापार से सम्बन्ध रखने वाले लोगों की दिलचस्पी के सामयिक लेख दिये जाते हैं। यह बुलेटिन पुस्तक-विक्रेताओं, पुस्तकालयों, प्रकाशकों और लेखकों को भेजी जाती है। यह बर्मी प्रका-शकों द्वारा सहकारी आधार पर कोई काम करने के प्रथम प्रयास की द्योतक है।

इस वर्ष १३ मार्च से १८ मार्च तक बर्मी पुस्तक-विक्रेताओं का पहला सम्मेलन हुआ। छः दिन तक चलने वाली इस गोष्ठी में लगभग ६० पुस्तक-विक्रेताओं ने हिस्सा लिया, जिसमें पुस्तक-व्यापार के कई पहलुओं पर विचार किया गया। किताबों की दूकान चलाने के व्यापारिक पहलू, स्टाक के लिए पुस्तकें चुनने और उनका हिसाब रखने, कर्मचारियों की समस्या और विदेशी पुस्तकों के आयात के बारे में सरकारी नियन्त्रणों के बारे में लेख तैयार करके पढ़े गए। मैंने 'अमरीका में पुस्तकों की बिक्री बढ़ाने के उपाय' के विषय पर अपना लेख पढ़ा। हर अधिवेशन के बाद अलग-अलग गोष्ठियों में विभिन्न विषयों पर चर्चा होती थी। इस गोष्ठी को यूनेस्को का समर्थन प्राप्त था।

बर्मा ट्रान्सलेशन सोसायटी अमरीकी सूचना विभाग के स्थानीय कार्यालय के कार्यक्रम में सक्रिय सहयोग दे रही है। पिछले साल अमरीकी सूचना विभाग ने बर्मा में जितनी आम बिक्री की पुस्तकें और जो छः पाठ्य-पुस्तकें प्रका-शित की थीं उनमें से आधी इस सोसायटी ने अनुवाद करके छापी थीं।

बर्मा में और अधिक अमरीकी पुस्तकों के आयात के मार्ग में मुख्य बाधाएँ ये हैं कि बर्मावासियों की औसत आमदनी को देखते हुए अमरीकी पुस्तकों की कीमतें बहुत होती हैं और दूसरे इस प्रकार की पुस्तकें मँगाने के लिए आयात लाइसेंस प्राप्त करने में सरकारी दफ्तरों की लम्बी कार्रवाई से भी बहुत बाधा पड़ती है। अमरीका में २०० डालर माहवार कमाने वाला क्लर्क पाँच डालर की किताब खरीदने के लिए अपनी तनख्वाह का ढाई फीसदी हिस्सा खर्च करता है; बर्मा में १५० क्यात माह-वार कमाने वाले वैसे ही क्लर्क को वही किताब खरीदने के लिए अपनी तनख्वाह का १७ फीसदी हिस्सा खर्च करना पड़ता है। बर्मा में अमरीकी पुस्तकों के कम दामों वाले संस्करण बहुत लोकप्रिय हो रहे हैं, विशेष रूप से ऐसे संस्करण जो कुछ अमरीकी प्रकाशक आफ़सेट से जापान या भारत में छपवाकर तिहाई दामों पर बेचते हैं। १९६२ से किताबों के आयात की कुछ कठिनाइयाँ दूर हो जाएँगी, क्योंकि तब अमरीकी पुस्तकें 'ओपेन जनरल लाइसेंस' से मगायी जा सकेंगी।

चूँकि रंगून में विदेशी सूचना विभागों के तीन पुस्तकालयों के अलावा कोई बड़ा सार्वजनिक पुस्तकालय नहीं है, इसलिए सोसायटी ने १९५६ में अपना पुस्तकालय खोला। सारये बेकमन सार्वजनिक पुस्तकालय में १३ हज़ार

से अधिक पुस्तकें हैं, जो खुली अलमारियों में विषयवार सजाई गई हैं। लगभग ७००० पुस्तकें अंग्रेज़ी की हैं, जिनमें पाठ्य-पुस्तकों और संदर्भ-ग्रन्थों से लेकर प्रख्यात उपन्यासों और जीवनियों तक सभी प्रकार की पुस्तकें हैं। बाकी पुस्तकें बर्मी भाषा की हैं। चूँकि बर्मी भाषा की लगभग सभी पुस्तकें मूल्य कम रखने के लिए कच्ची जिल्द की होती हैं इसलिए पुस्तकालय पहले इन पर पक्की जिल्द बँधवा लेता है। पुस्तकों के वर्गीकरण के लिए ड्यूई की दशमलव प्रणाली इस्तेमाल की जाती है और इन पुस्तकों के कार्ड पुस्तक आने के साथ ही बना दिये जाते हैं। पुस्तकालय से पुस्तकें लेने के लिए ३ क्यात जमा करने पड़ते हैं जो बाद में वापस मिल जाते हैं और साथ ही दो आदमियों की ज़मानत भी दिलवानी पड़ती है। लेकिन पुस्तकालय में आने वाली बर्मी भाषा की अनेक पत्रिकाएँ कोई भी जाकर पढ़ सकता है।

सोसायटी की ओर से विभिन्न प्रकार के शैक्षणिक तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों का भी आयोजन किया जाता है। हर साल सोसायटी की ओर से सबसे अच्छे बर्मी उपन्यास, किसी प्राचीन रचना के सबसे अच्छे अनुवाद, ललित-साहित्य की सबसे अच्छी पुस्तक, सबसे अच्छे नाटक, किसी एक लेखक के सबसे अच्छे कहानी-संग्रह, सबसे अच्छे कविता-संग्रह और सामान्य ज्ञान के किसी विषय की सबसे अच्छी पुस्तक को इनाम दिये जाते हैं। प्रधान मन्त्री ने इन पुरस्कारों को 'नव-जीवन' साहित्य के प्रकाशन के लिए प्रेरणा बताया है, जो उस नई संस्कृति का एक अंग हैं, जिसका निर्माण बर्मा एक स्वतन्त्र तथा सार्वभौम राष्ट्र के रूप में करना चाहता है। १९६१ के साहित्यिक पुरस्कारों के वितरण-समारोह में मैं उपस्थित था। यह समारोह खुली जगह में हुआ था और इसमें १५०० लोगों ने भाग लिया था। पुरस्कार-विजेताओं के भाषणों के फ़िल्म लिये गए और कुछ ही घण्टों के भीतर उन्हें सरकारी रेडियो पर प्रसारित किया गया। पुरस्कार-विजेताओं की पुस्तकें भी वहाँ पर बेची गईं।

जब हम अपनी आँखों से देखते हैं कि दक्षिण-पूर्वी एशिया के प्रकाशकों को बहुत सी ऐसी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है जो पश्चिमी देशों के प्रकाशकों के सामने नहीं आतीं, तो हम इन कठिन परिस्थितियों में प्रा[illegible] की गई सफलताओं की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते। बर्मा एक नवजात राष्ट्र है और बर्मी प्रकाशकों के सामने बहुत बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ हैं। कागज़, छपाई की स्याही और दूसरे सामान की तंगी, सरकारी दफ्तरों की लम्बी कार्रवाई और प्रतिबन्ध, विदेशों से पुस्तकें मँगाने के लिए लाइसेंस की ज़रूरत, अनुभवहीन कर्मचारी—इन सब कठिनाइयों के मिल जाने से एक निराशा उत्पन्न होती है। वहाँ कोई ऐसी साहित्यिक एजेंसियाँ भी नहीं हैं जो लेखकों को ढूँढ़ निकालें। वहाँ ऐसे बड़े-बड़े संगठन भी नहीं हैं जो पुस्तक-प्रकाशन से सम्बन्धित विभिन्न कामों के विशेषज्ञ हों, जैसे ब्लाक बनाना, टाइप ढालना, छपाई, जिल्दसाज़ी इत्यादि। इसलिए प्रकाशक को सारा काम स्वयं ही सँभालना पड़ता है। वहाँ गोदामों की सुविधा, विज्ञापन- एजेन्सियाँ और अखबारों में पुस्तकों की नियमित समीक्षा की व्यवस्था भी नहीं है।

इसलिए हमें मानना पड़ता है कि सारये बेकमन इन्स्टीच्यूट के व्यवस्थापक, जो बर्मा की जनता को ऐसा साहित्य प्रदान कर रहे हैं जिससे वह शिक्षित भी होती है और अपना स्तर ऊँचा उठाने के लिए प्रेरणा भी प्राप्त करती है, सचमुच अपने देश के भविष्य को उज्ज्वल बनाने के लक्ष्य के प्रति बड़ी लगन के साथ काम कर रहे हैं।

●

आलोचना निबन्ध

खड़ीबोली काव्य में अभिव्यंजना : डॉक्टर आशा गुप्ता का पंजाब विश्वविद्यालय की पी-एच० डी० उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबन्ध है। इसमें लेखिका ने 'खड़ी बोली की व्युत्पत्ति, क्षेत्र तथा रूप', 'खड़ी बोली कविता का संक्षिप्त इतिहास', 'अभिव्यंजना', 'खड़ी बोली काव्य में अभिव्यंजना' 'भारतेन्दु युग', 'सन्धिकाल', 'द्विवेदी युग' आदि सात अध्यायों में सन् १६२० तक के खड़ी बोली-काव्य की अभिव्यञ्जना पर व्यापक विचार किया है। अन्त में परिशिष्ट १ तथा २ के अन्तर्गत उन संस्कृत, हिन्दी, उर्दू तथा अंग्रेज़ी के ग्रन्थों और पत्र-पत्रिकाओं की तालिका प्रस्तुत की गई है, जिनसे लेखिका को इस विशद ग्रन्थ के लेखन में सहायता मिली है। उन ग्रन्थकारों तथा ग्रन्थों का भी इन परिशिष्टों में उल्लेख कर दिया गया है, जिनसे इस ग्रन्थ के निर्माण में प्रत्यक्ष या परोक्ष सहायता मिली है। रायल साइज़ के ४८० पृष्ठों का यह सजिल्द, सुमुद्रित ग्रन्थ **नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली** ने प्रकाशित किया है और सोलह रुपये में प्राप्य है।

* * *

महाकवि मतिराम और मध्यकालीन हिन्दी कविता में अलंकरण-वृत्ति नामक इस ग्रन्थ में डॉ० त्रिभुवनसिंह एम० ए०, पी-एच० डी० ने महाकवि मतिराम के जीवन और काव्य का व्यापक विवेचन किया है। यह लेखक का काशी हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच० डी० की उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबन्ध है। इस ग्रन्थ के 'अलंकृत काव्य के मूल तत्त्व और परिवेश', 'मध्यकालीन हिन्दी कविता में अलंकरण वृत्ति', 'वंश-परिचय', 'मतिराम के ग्रन्थ और उनके रचना-काल', 'मतिराम और नायिका-भेद', 'मतिराम और अलंकार-वर्णन', 'सतसई परम्परा और मतिराम', तथा 'मध्यकालीन हिन्दी साहित्य में मतिराम का स्थान' शीर्षक आठ अध्यायों में विद्वान् लेखक ने मतिराम के काव्य पर व्यापक प्रकाश डाला है। इस ग्रन्थ से हिन्दी-समीक्षा को नई दिशा तथा संकेत मिलता है। इस ग्रन्थ के 'दो शब्द' लिखते हुए डॉ० श्रीकृष्ण लाल ने यह ठीक ही कहा है—"डॉ० त्रिभुवनसिंह ने मध्यकालीन समाज और संस्कृति के परिवेश में मतिराम के काव्य को परखने का प्रयत्न किया है।" पुस्तक के अन्त में दी गई सहायक ग्रन्थों, पत्रिकाओं की सूची और नामानुक्रमणिकाओं से ग्रन्थ और भी उपादेय हो गया है। रायल साइज़ के ३४२ पृष्ठ का यह ग्रन्थ दस रुपये में मिल सकता है। **हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी** से प्रकाशित।

* * *

भोजपुरी लोक-साहित्य का अध्ययन नामक इस ग्रन्थ में डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय ने भोजपुरी भाषा और उसके लोक-साहित्य का व्यापक अध्ययन प्रस्तुत किया है। इस ग्रन्थ पर लेखक को लखनऊ विश्वविद्यालय ने पी-एच० डी० की उपाधि प्रदान की है। मूलतः इस ग्रन्थ को विद्वान् लेखक ने (१) लोकगीत, (२) लोक-गाथा, (३) लोककथा (४) प्रकीर्ण-साहित्य नामक चार खण्डों में विभक्त करके 'भोजपुरी लोक-साहित्य का सामान्य परिचय', 'भोजपुरी भाषा', 'भोजपुरी साहित्य', 'लोकगीतों की भारतीय परम्परा', 'लोकगीतों के वर्गीकरण की पद्धति', 'लोकगीतों के गाने की विधि', 'लोकगीतों में समान नाद-धारा', 'लोक-गाथा', 'लोकगाथाओं की उत्पत्ति', 'भोजपुरी लोकगाथाओं के प्रकार', 'भोजपुरी लोकगाथाओं की विशेषताएँ', 'लोक-गाथाओं की भारतीय परम्परा', 'भारतीय भाषाओं में लोक-गाथाओं का संग्रह', 'भोजपुरी लोकगाथाओं के प्रकार', 'भोजपुरी लोकगाथाओं की विशेषताएँ', 'लोकगाथाओं की शैली' और 'लोकोक्तियाँ', 'मुहावरे', 'पहेलियाँ' और 'प्रकीर्ण सूक्तियाँ' आदि विभिन्न अध्यायों में भोजपुरी भाषा और उसके लोक-साहित्य पर विशद प्रकाश डाला है। इस ग्रन्थ की भूमिका हिन्दी के ख्यातिप्राप्त नाटककार

श्री जगदीशचन्द्र माथुर ने की है। डिमाई साइज़ के ४५४ पृष्ठ के इस सजिल्द ग्रन्थ का प्रकाशन **हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी** से हुआ है और यह दस रुपये में प्राप्त हो सकता है।

* * *

बिहारी का नया मूल्यांकन नामक इस ग्रन्थ में डॉ० बच्चन सिंह ने 'बिहारी सतसई' का मूल्यांकन करते हुए तत्कालीन सामन्तीय परिवेश को बराबर दृष्टि में रखा है। इसके 'रीतिकाव्य का हेतु', 'परम्परा और गतिशीलता', 'बिहारी के प्रेम का स्वरूप', 'श्रृंगारेतर भाव-व्यञ्जना' 'अभिव्यक्ति के प्रसाधन', 'व्यञ्जना और सतसई', 'भाषा', 'मुक्तक दोहा', 'बिहारी का देखा हुआ समाज' तथा 'ऐन्द्रिय-बोध और बिहारी' आदि दस अध्याय इस बात के प्रत्यक्ष साक्षी हैं कि इस पुस्तक को लिखने में लेखक ने परिश्रम किया है। डिमाई साइज़ के १३८ पृष्ठ की इस सजिल्द पुस्तक का प्रकाशन भी **हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी** ने किया है और यह तीन रुपये पचास नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

उपन्यास

एक चादर मैली-सी : श्री राजेन्द्रसिंह बेदी का नवीनतम उपन्यास है। पहले यह उर्दू में प्रकाशित हुआ था और अब **नीलाभ प्रकाशन, प्रयाग** ने इसे हिन्दी में प्रकाशित किया है। इसमें लेखक ने अपनी तीव्र अनुभूतियों के आधार पर पंजाबी गाँव के यथार्थ जीवन का अध्ययन प्रस्तुत किया है। यह उपन्यास पहले 'माया' में धारावाहिक रूप से प्रकाशित हुआ था। लेखक स्वयं उर्दू के प्रसिद्ध कथाकार और फ़िल्मकार हैं। अतः इसमें वे सभी विशेषताएँ उभरकर सामने आ जाती हैं, जो एक अच्छी फिल्म के लिए ज़रूरी होती हैं। क्राउन साइज़ के १४४ पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास तीन रुपये पचास नये पैसे में प्राप्त हो सकता है।

* * *

ये तेरे प्रतिरूप नामक इस पुस्तक में हिन्दी-साहित्य के प्रख्यात कथा-शिल्पी और शैलीकार श्री 'अज्ञेय' की 'सेब और देव', 'देवीसिंह', 'नारंगियाँ', 'हजामत का साबुन', 'बन्दों का खुदा, खुदा के बन्दे', 'शरणदाता', 'लेटर बक्स', 'मुस्लिम-मुस्लिम भाई-भाई', 'रमन्ते तत्र देवताः', 'बदला' 'छविहीन बाबू', 'कविता और जीवन—एक कहानी', 'शिक्षा' तथा 'कलाकार की मुक्ति' शीर्षक चौदह कहानियों का संकलन प्रस्तुत किया गया है। लेखक के अनुसार "इस संकलन की आधी कहानियाँ यहीं पहली बार छप रही हैं। अन्य कहानियाँ दूसरे संग्रहों में छप चुकी हैं, किन्तु वे जिन संग्रहों में छपी थीं वे वर्षों से अनुपलब्ध हैं और उनके पुनर्मुद्रण का विचार भी नहीं है।" इस दृष्टि से तो यह कहानी-संग्रह हिन्दी पाठकों के लिए पठनीय और संग्रहणीय है। **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज़ के ११६ पृष्ठ का यह सजिल्द संकलन ढाई रुपये में प्राप्य है।

* * *

भगवतीचरण वर्मा नामक इस पुस्तक का प्रकाशन **राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली** की ओर से आयोजित 'आज के

लोकप्रिय हिन्दी कवि' नामक पुस्तकमाला के अन्तर्गत हुआ है और इसके सम्पादक हैं श्री अमृतलाल नागर। प्रारम्भ में १८ पृष्ठों में श्री नागरजी ने भगवती बाबू के जीवन-व्यक्तित्व पर बड़ा रोचक प्रकाश डाला है और बाद में 'संकलन' शीर्षक भाग में उनकी तीस अत्यन्त लोकप्रिय रचनाएँ संकलित की गई हैं। अन्त में 'परिशिष्ट १ और २' में वर्माजी के जीवन की प्रमुख घटनाएँ देकर उनकी सभी प्रकाशित पुस्तकों की प्रामाणिक सूची प्रस्तुत की गई है। क्राउन साइज़ के ११६ पृष्ठों की यह सजिल्द पुस्तक दो रुपये में प्राप्त हो सकती है।

* * *

अरुणोदय में श्री विराज के एक सौ चौंतीस काव्य-विचार संकलित हैं। इनमें कवि की कल्पना, आशा, उत्साह और प्रेरणा के अनेक बहुरंगे चित्र देखने को मिल सकते हैं। काव्य-प्रेमियों को यह पुस्तक अवश्य ही सन्तोष प्रदान करेगी। **नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली** की ओर से प्रकाशित क्राउन साइज़ के १३४ पृष्ठों की यह सजिल्द पुस्तक चार रुपये में मिलती है।

निबन्ध

सुबोध हिन्दी निबन्ध में श्री धर्मेन्द्र शर्मा एम० ए० ने १०० ऐसे निबन्ध इस पुस्तक में दिये हैं जो विभिन्न प्रांतों के हाईस्कूल, हायर सेकेण्डरी व इण्टरमीडियेट के विद्यार्थियों के लिए समान रूप से उपयोगी सिद्ध होंगे। पाकेट साइज़ के ३२० पृष्ठ की यह पुस्तक दो रुपये में मिल सकती है। इसका प्रकाशन **सुबोध प्रकाशन, दिल्ली** ने किया है।

* * *

यात्रा

ब्रिटेन में चार सप्ताह नामक इस पुस्तक में 'नवभारत टाइम्स' के सम्पादक श्री अक्षयकुमार जैन ने अपनी उस यात्रा का रोचक वर्णन प्रस्तुत किया है, जो उन्होंने कुछ दिन पूर्व की थी। इस पुस्तक के 'यात्रा का प्रारम्भ', 'लन्दन के दर्शनीय स्थान', 'संग्रहालय और पुराने राज-भवन', 'शिक्षण संस्थाएँ', 'संसद और राजनीतिक दल', 'स्कॉटलैण्ड यार्ड में कुछ घण्टे', 'स्कॉटलैण्ड यार्ड का इतिहास', 'शैक्सपियर की जन्मभूमि में', 'शैक्सपियर रंगमंच' 'स्कॉटलैण्ड की शोभा', 'पुराने किले', 'राष्ट्रमण्डल', 'समाचार-पत्रों की दुनिया' तथा 'यात्रा की समाप्ति' १४ अध्यायों के शीर्षक ही इस पुस्तक की उपयोगिता को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं। यह पुस्तक एक ऐसी शैली और भाषा में लिखी गई है कि इससे बच्चे, बूढ़े और प्रौढ़ सभी प्रकार के पाठक समान रूप से लाभान्वित हो सकते हैं। क्राउन साइज़ के ८८ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक **नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली** ने प्रकाशित की है और यह दो रुपये पचास नये पैसे में प्राप्य है। यत्र-तत्र दिये गए विभिन्न चित्रों के कारण इसकी उपयोगिता और भी बढ़ गई है।

* * *

नाटक

रूपायन नामक इस पुस्तक में डॉ० रामरतन भटनागर ने ९ एकांकी नाटकों का संकलन प्रस्तुत किया है। प्रायः सभी एकांकी ऐसे हैं जो समाज की भावभूमि से घनिष्ठ सम्बन्ध

रखते हैं। इन हिन्दी-एकांकियों में करतारसिंह दुग्गल का एकांकी कैसे सम्पादक ने दे दिया, यह आश्चर्य की बात है। श्री दुग्गल मूलतः पंजाबी के लेखक हैं, हिन्दी में अभी उनका स्थान बना ही कहाँ है! **साथी प्रकाशन, सागर** की ओर से प्रकाशित क्राउन साइज के १६३ पृष्ठ का यह संकलन २ रुपये ५० नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

प्रतिकार में श्री गोवर्धननाथ कक्कड़ ने 'शर्मिष्ठा' और 'देवयानी' की प्रसिद्ध पौराणिक कथा के आधार पर एक ऐसे नाटक का प्रस्तुतीकरण किया है जो बड़े चाव से पढ़ा और खेला जाएगा। इस छोटे-से ५२ पृष्ठों के नाटक में पाठक एक पौराणिक गाथा को नये रूप में पाएँगे। **शान्ति प्रकाशन, इलाहाबाद** द्वारा प्रकाशित यह नाटक एक रुपये में प्राप्य है।

* * *

अश्क की श्रेष्ठ कहानियाँ नामक इस पुस्तक में बहुमुखी प्रतिभा के धनी श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क' की १० बेजोड़ और अनुपम कहानियों का सुलभ संग्रह प्रस्तुत किया गया है। कहानियों के शीर्षक इस प्रकार हैं—डाची, काकड़ाँ का तेली, काले साहब, कैप्टन रशीद, उबाल, बच्चे, तकल्लुफ़, चारा काटने की मशीन, गली का नाम, पलंग। अश्क की इन कहानियों में जिन्दगी के विभिन्न स्तरों और रूपों के अनेक अन्तरंग चित्र पाठकों को देखने को मिलेंगे। १३६ पृष्ठ की यह पुस्तक एक रुपये में प्राप्य है।

* * *

आखिरी चट्टान तक नामक इस पुस्तक में हिन्दी के ख्याति-प्राप्त कथाकार और नाटककार श्री मोहन राकेश ने भारत के दक्षिण प्रदेश की अपनी यात्रा का मनोरंजक विवरण प्रस्तुत किया है। उपन्यास से भी अधिक रोचक इस यात्रा-संस्मरण में लेखक ने सुदूर दक्षिण के प्रदेश की जानकारी ही नहीं दी, प्रत्युत इसमें उन्होंने मानव-हृदय के गुह्यतम प्रदेशों की झाँकी भी प्रस्तुत की है। १३४ पृष्ठ की यह पुस्तक १ रुपये में मिल सकती है।

* * *

आश्चर्यलोक में एलिस नामक यह पुस्तक अंग्रेज़ी साहित्य की एक ऐसी विलक्षण कल्पना-कृति का हिन्दी-रूपान्तर है, जिसे पिछले सौ वर्ष से बालक, युवक और प्रौढ़ सभी प्रकार के पाठक समान भाव और एक रस से पढ़कर अपना मनोरंजन करते रहे हैं। हिन्दी-रूपान्तर श्री शमशेर बहादुर सिंह ने किया है। कुकुरमुत्ते का एक किनारा खाकर एलिस इतनी लम्बी हो गई कि वह आसमान को छूने लगी, दूसरा किनारा खाकर एकदम एक बटा दस इंच लम्बी हो गई। आँसुओं की झील में डूबने से बचकर वह ताश के पत्तों के राज्य में गई, जहाँ सारस के बल्ले और बिज्जोओं की गेंदों से खेल होता था। यह आश्चर्यजनक कहानी पाठक इस पुस्तक में पढ़ें। १६० पृष्ठ की यह पुस्तक भी १ रुपये में प्राप्य है।

* * *

रूप-सौन्दर्य नामक इस पुस्तिका में नारी-मनोविज्ञान की ख्याति-प्राप्त लेखिका श्रीमती सावित्रीदेवी वर्मा ने महिलाओं के लिए आधुनिक ढंग से सजने-सँवरने के नवीनतम और प्रामाणिक तरीके प्रस्तुत किये हैं। रूप-सौन्दर्य की देख-भाल और सार-सँभाल रखने के लिए महिलाओं के लिए यह पुस्तक सर्वथा उपादेय और संग्रहणीय है। १४८ पृष्ठ की यह पुस्तक केवल एक रुपये में प्राप्य।

* * *

अर्थशास्त्र

आर्थिक और औद्योगिक जीवन : उसकी समस्याएँ और हल नामक इस पुस्तक में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के ऐसे भाषण और लेख संकलित किये गए हैं जिनसे भारत के आर्थिक और औद्योगिक जीवन पर विशद प्रकाश पड़ता है। इसे सम्पादक ने 'स्वराज्य, समाजवाद और साम्यवाद', 'शरीर-श्रम', 'आर्थिक समानता' और 'संरक्षकता' शीर्षक चार भागों में विभक्त किया है। इसके संग्राहक और सम्पादक श्री बी० बी० खेर ने इसके सम्पादन में पर्याप्त परिश्रम किया है। डिमाई साइज़ के २०० पृष्ठों की यह पुस्तक ४ रुपये में मिल सकती है।

* * *

राजनीति

प्राचीन भारत की दण्डनीति नामक इस पुस्तक के लेखक स्व० योगेन्द्रनाथ वेदान्ततीर्थ बँगला भाषा के विख्यात विद्वान् थे। यह पुस्तक उनकी बँगला पुस्तक का ही हिन्दी अनुवाद है। इसमें लेखक ने 'दण्डनीति-शास्त्र की रूपरेखा', 'रामायण में दण्डनीति और रामचन्द्र का अनुशासन', 'महाभारत में दण्डनीति व नारद का अनुशासन', 'अर्थशास्त्र के अनादर का कारण', 'पैतामह तन्त्र', 'वैशालाक्षा तन्त्र', 'वार्हस्पत्य तन्त्र', 'भरद्वाज नीति', 'शुक्र नीति', 'शाम्बर नीति', 'मातंग नीति' आदि दस विभिन्न अध्यायों में प्राचीन भारत में व्यवहृत होने वाली दण्डनीतियों का विशद विश्लेषण प्रस्तुत किया है। डिमाई साइज़ के २२० पृष्ठों की इस पुस्तक का प्रकाशन **के० एल० मुखोपाध्याय, कलकत्ता** के द्वारा हुआ है और यह १० रुपये में मिलती है।

* * *

बालोपयोगी

पोपुलर पब्लिशिंग हाउस (प्रा०) लिमिटेड, नई दिल्ली की ओर से **बाल जीवनी माला** नामक जो बालोपयोगी जीवनियों की पुस्तकें प्रकाशित हो रही हैं; उनके अन्तर्गत अभी-अभी **'प्रफुल्लचन्द्र राय', 'सी० वी० रमन'** तथा **'आइज़क न्यूटन'** नामक तीन पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। 'प्रफुल्लचन्द्र राय' की यह जीवनी श्री राजीव सक्सेना ने लिखी है और प्रकाशक ने इसका प्रकाशन डॉ० राय की जन्म-शताब्दी के अवसर पर किया है। 'सी० वी० रमन' श्री विश्वमित्र शर्मा ने लिखी है और 'आइज़क न्यूटन' के लेखक हैं श्री ओम्प्रकाश आर्य। तीनों पुस्तकों की भाषा सरल, सुबोध और मुहावरेदार है। बच्चों के मानसिक विकास को दृष्टि में रखकर लिखी गई ये तीनों पुस्तकें सर्वथा उपयोगी और पठनीय हैं। तीनों पुस्तकें सजिल्द हैं और तीनों में क्रमशः क्राउन साइज के ८०, ६२, ८० पृष्ठ हैं। प्रत्येक पुस्तक का मूल्य एक रुपया ५० नये पैसे हैं।

* * *

राजकमल प्रकाशन, दिल्ली की ओर से प्रकाशित द्रोणवीर कोहली द्वारा लिखित **मोर के पैर** नामक पुस्तक में 'मोर के पैर', 'चार तोतली बहनें', 'गन्दा पानी', 'गीदड़ की लाल आँखें', 'मीरासी और राजकुमार', 'लोहामल', 'तोते' तथा 'तीन चुहिया बहनें' शीर्षक ८ कहानियाँ संकलित की गई हैं। प्रत्येक कहानी विषय और सन्दर्भ के अनुसार एकाधिक चित्रों से सुसज्जित है। इससे पुस्तक और भी आकर्षक हो गई है। डिमाई साइज़ के चौथाई साइज़ के ३२ पृष्ठ की यह पुस्तक १ रु० २५ न० पै० में मिलती है।

* * *

राजकमल पाकेट बुक्स

राजकमल पॉकेट बुक्स की ३३, ३४, ३५, ३६, ३७, ३८, ३९, ४० नम्बर की पुस्तकें अभी इसी मास में प्रकाशित हुई हैं। उनका परिचय इस प्रकार है—

रात, चोर और चाँद बलवन्तसिंह का अत्यन्त ख्यातिप्राप्त उपन्यास है। यह उसका पॉकेट संस्करण है। इसमें लेखक ने पंजाब के गाँवों की ऐसी निरंकुश जिन्दगी की कहानी अंकित की है, जिसे बाहरी और झूठी नैतिकता की लगाम काबू में नहीं रख सकती। बेलाग पुरुषों और बेलौस औरतों के चित्रों के साथ इसमें डाके, खून, अपहरण, अदम्य प्यार, त्याग और बलिदान की पराकाष्ठा की झाँकी भी पाठकों को मिलेगी। २४४ पृष्ठों की यह पुस्तक एक रुपया पचास नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

ये सपने ये रातें में श्री रामकृष्ण कौशल ने मंगला, अशोक, सरला और चित्रा आदि पात्रों के माध्यम से युवक-युवतियों के ऐसे अल्हड़ और अलमस्त जीवन का चित्रण किया है, जिनमें कोई छिपाव और दुराव नहीं होता। इसमें हमारे आज के समाज-युवकों और युवतियों का सही चित्र देखने को मिलेगा। पॉकेट साइज़ के १६० पृष्ठ की यह पुस्तक केवल एक रुपये में प्राप्य।

* * *

बाली हिन्दी की प्रख्यात कहानी-लेखिका श्रीमती मालती परूलकर (सिरसीकर) का नवीनतम उपन्यास है। शिरीष और बाली ऐसे प्रेम-बन्धन में बँधे थे कि उन्हें उससे दुनिया की कोई भी ताकत अलग नहीं कर सकती थी। एक-दूसरे के बिना दोनों की दुनिया फीकी थी और दोनों बराबर मिलते रहते थे। १२८ पृष्ठ के इस छोटे-से उपन्यास में लेखिका ने इतनी पीड़ा और आकुलता बिखेरी है कि पाठक की सहानुभूति सहज ही इसकी नायिका बाली के प्रति हो जाती है। एक रुपये में प्राप्य।

* * *

अजनबी नोबल पुरस्कार-विजेता आल्बेयर कामू के उपन्यास का हिन्दी अनुवाद है। अनुवादक हैं श्री राजेन्द्र यादव। इस उपन्यास में परिस्थितियों से तटस्थ रहने की कोशिश करने वाले एक ऐसे संवेदनशील व्यक्ति की कहानी अंकित की गई है, जो अन्ततः अबाध, अदम्य परिस्थितियों का शिकार हो गया। अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति की यह रचना पाठकों को अवश्य ही पढ़नी चाहिए। १३६ पृष्ठ की यह पुस्तक १ रुपये में मिल सकती है।

* * *

हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटिड की नई पुस्तकें— **'जुदाई की शाम', 'बहूरानी', 'दो बहनें', 'काबुली वाला'** जिसमें और भी कई कहानियाँ दी गई हैं—रवीन्द्रनाथ टैगोर की रचनाएँ हैं, जिनका हिन्दी-अनुवाद रामनाथ सुमन, श्यामू संन्यासी तथा प्रमोद कुमार मजूमदार द्वारा बड़े ही रोचक ढंग से किया गया है। पाठक इन रचनाओं को पढ़ते समय इतना खो जाता है कि उसकी विचार-धारा तभी टूटती है, जब पुस्तक समाप्त हो जाती है। इन पुस्तकों को पढ़ने से मालूम होता है कि गुरुदेव की रचनाओं में कितना अपनापन और सत्यता है। एक लालसा भी उत्पन्न होती है कि बंगला का ज्ञान करने के बाद इन पुस्तकों के पढ़ने में कितना आनन्द अनुभव होता होगा। पाकेट साइज़ में ये पुस्तकें जहाँ पढ़ने के लिए रोचक सामग्री प्रदान करेंगी, वहाँ साथ-ही-साथ हिन्दी के पाठकों का पथ-प्रदर्शन भी होगा।

* * *

हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ प्रेमगीत, जिनका सम्पादन श्री क्षेमचन्द्र

(शेष पृष्ठ १०८ पर)

आगामी मास के प्रकाशन

अजन्ता प्रकाशन, मुजफ्फर नगर

—**दर्द मुस्कराया**, कमल शुक्ल, उपन्यास

अशोक प्रकाशन, दिल्ली

—**दिनकर और उनका कुरुक्षेत्र**, प्रो० देशराजसिंह भाटी एम० ए०, आलोचना

—**साकेत समीक्षा**, प्रो० ब्रजभूषण एम० ए०, आलोचना

—**अशोक मध्यमा गाइड**, शिवप्रसाद शास्त्री व अन्य परीक्षोपयोगी

आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली

—**पत्ते गिर पड़े**, शिवसागर मिश्र, उपन्यास

—**आँधी की नींवें**, डॉ० रांगेय राघव, उपन्यास

—**धरती की बेटी**, सोमा वीरा, कहानी-संग्रह

—**प्रतिनिधि सामूहिक गान (सचित्र)**, सं० योगेन्द्रकुमार लल्ला : श्रीकृष्ण, गीत-संग्रह

—**सात प्रहसन**, उदयशंकर भट्ट, एकांकी-संग्रह

—**इत्यादि**, उदयशंकर भट्ट, कविता-संग्रह

—**रजनी में प्रभात का अंकुर**, श्रीमन्नारायण, कविता-संग्रह

—**दिमाग का बीमा**, न० र० टंडन, एकांकी-संग्रह

—**आइए हिन्दी सीखें (सचित्र)**, सोमदत्त गालवीय, प्रौढ़-शिक्षा-माला

—**तोरी**, रामेश बेदी, द्रव्य-गुण

नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली

—**अनुसन्धान और आलोचना**, डॉ० नगेन्द्र, साहित्यालोचन

—**अन्तराल की लहरें**, स्वर्णलता भूषण, वैज्ञानिक उपन्यास

—**पंजाब प्रान्तीय हिन्दी साहित्य का इतिहास**, चन्द्रकान्त बाली, साहित्येतिहास

—**रिबेका**, महेन्द्र भारद्वाज, उपन्यास

पंजाबी पुस्तक भण्डार, दिल्ली

—**टूटे पंख**, गुलशन नन्दा, उपन्यास

—**अभिशाप**, दत्त भारती, उपन्यास

—**कल्पना**, दत्त भारती, उपन्यास

भारतीय ग्रन्थ निकेतन, दिल्ली

—**भुवन विजयम्**, उमाशंकर, ऐतिहासिक उपन्यास

लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

—**तुलसी-दर्शन-मीमांसा**, डॉ० उदयभानु सिंह, शोध-प्रबन्ध

स्टार पब्लिकेशन्स, दिल्ली

—**जात न पूछो कोय**, गुरुदत्त, उपन्यास

—**कल्पना**, दत्त भारती, उपन्यास

—**टूटे पंख**, गुलशन नन्दा, उपन्यास

—**दूर कोई गाए**, शकील बदायुनी, शायरी

—**गुलिस्ताँ**, शेख सादी, शिक्षाप्रद कहानियाँ

सितम्बर मास के प्रकाशन

आलोचना-साहित्य

डॉ० नगेन्द्र, **रीतिकाल की भूमिका,** पु० मु०, १८४, डिमाई, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ५.५०
डॉ० नगेन्द्र, **आधुनिक हिन्दी कविता की प्रवृत्तियाँ,** पु० मु०, १३६, डिमाई, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ४.००
प्रो० शिवप्रसाद एम० ए०, **अशोक निबन्ध-माला,** पु० मु०, ४०७, क्रा०, अशोक प्रकाशन, दिल्ली ३.००
डॉ० रामगोपाल शर्मा, **गोदान,** पु० मु०, १६४, क्रा०, अशोक प्रकाशन, दिल्ली २.५०
प्रो० देशराजसिंह भाटी, **प्रमुख कवियों की काव्य-साधना,** २८६, क्रा०, अशोक प्रकाशन, दिल्ली ३.५०
मुनिश्री महेन्द्रकुमार प्रथम, **अणुव्रत की ओर-१,** १४४, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली २.००
मुनिश्री महेन्द्रकुमार प्रथम, **अणुव्रत की ओर-२,** १४४, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली २.००

उपन्यास

आनन्द सागर शेष्ठ, **वाजिदअली शाह,** ३५६, क्रा०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ६.००
कमल शुक्ल, **प्रीति के पांव,** १८४, क्रा०, अजन्ता प्रकाशन, मुजफ्फर नगर ३.५०
दत्त भारती, **अपमान,** पंजाबी पुस्तक भण्डार ३.००
गुरुदत्त, **गृह संसद,** पंजाबी पुस्तक भण्डार ५.५०
दत्त भारती, **अन्धों की दुनिया,** पंजाबी पुस्तक भण्डार ३.५०
शिवकुमार कौशिक, **वैशाली की दत्तक पुत्री,** २८८, डिमाई, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली ६.५०

नाटक

गोवर्धननाथ कक्कड़, **प्रतिकार,** ५२, क्रा०, शान्ति प्रकाशन, इलाहाबाद १.००
सोफ़ोइलीज़, अनु० रांगेय राघव, **एण्टीगोने,** ६४, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली १.२५
उदयशंकर भट्ट, **नहुष निपात,** ५६, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली १.२५

कविता

आचार्य श्री तुलसी, **अग्नि परीक्षा,** १८०, डिमाई, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली ६.५०
आचार्य श्री तुलसी, **श्रीकाल उपदेश-वाटिका,** ६८८, डिमाई, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली १२.५०
आचार्य श्री तुलसी, **श्रद्धेय के प्रति,** १४४, डिमाई, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली २.५०
मुनिश्री बुद्धमल, **आवर्त्त,** १२८, डिमाई, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली ३.००
मुनिश्री धनराज, **भाव-भास्कर काव्यम्,** ११२, डिमाई, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली २.००

राजनीति

वेदप्रकाश सिंह, **लोक-प्रशासन,** ४००, डिमाई, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली १०.००

बाल-साहित्य

राजबहादुर सिंह, **तपस्वियों की कहानियाँ**, १२८, कापी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — २.००

विविध

ज्ञानेन्द्र पाण्डेय, **भावी चिकित्सक निर्देशिका**, ३००, क्रा०, अशोक प्रकाशन, दिल्ली — ६.००

ज्ञानेन्द्र पाण्डेय, **अशोक वैद्य विशारद गाइड**, ३००, क्रा०, अशोक प्रकाशन, दिल्ली — ६.००

नीरज (सं०), **लिख-लिख भेजत पाती**, ११२, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — २.५०

आशारानी वोहरा, **वस्त्र-विज्ञान**, २४०, डिमाई, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — ६.५०

रामचन्द्र तिवारी : सिद्धि तिवारी, **धरती माता (सचित्र)**, १२८, डिमाई, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — ३.००

मुनिश्री महेन्द्रकुमार प्रथम, **अंकस्मृति**, ४०, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — १.००

[पृष्ठ १०८ का शेष]

सुमन ने किया है, में भारत के सर्वश्रेष्ठ कवियों की रचनाओं का संकलन बड़े युक्तिपूर्ण ढग से किया गया है। हिन्दी-जगत् में ऐसी पुस्तकों की बड़ी माँग है।

* * *

एक अनजान औरत का खत के लेखक हैं स्टीफन ज्वीग और अनुवादक हैं शरद देवड़ा। **हिन्द पाकेट बुक्स** की सीरीज़ में उक्त सैट एक अनुपम भेंट है।

स्वास्थ्य-चिकित्सा

काया पुष्कर शिक्षा तथा चिकित्सा प्रवेश नामक इस पुस्तक में डॉ० आर० सी० भट्टाचार्य ने चिकित्सा-शास्त्र के सम्बन्ध में रोचक और उपयोगी प्रकाश डाला है। इस पुस्तक से कम्पाउण्डर, परिचारक और साधारण व्यक्ति सभी समान रूप से लाभ उठा सकते हैं। क्राउन साइज़ के ४५३ पृष्ठ की यह पुस्तक **स्वास्थ्य प्रकाशन गृह, वाराणसी** ने प्रकाशित की है और ८ रुपये में मिलती है।

* * *

विविध

भारत के प्रमुख साँप नामक इस पुस्तक में श्री विराज ने साँपों की उपयोगी जानकारी देकर उनके काटने, उनके विष और उनके इलाज का भी विवरण प्रस्तुत किया है। साँपों के विषय में हमारे समाज में प्रचलित किंवदन्तियों का उल्लेख भी इस पुस्तिका में किया गया है। डिमाई साइज़ के ७६ पृष्ठ की इस पुस्तक का प्रकाशन **नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली** ने किया है और यह दो रुपये में प्राप्य है।

* * *

महाभारत के पशु-पक्षियों की कहानियाँ नामक इस बालोपयोगी पुस्तक में श्री राजेन्द्र शर्मा ने 'मातृभक्त गरुड़, स्वार्थ कोविद गीदड़, शरणागत की रक्षा, स्वर्ग से सर्प-योनि, शृंगी 'माहात्म्य तथा सुख के साथी' नामक ६ ऐसी कहानियाँ प्रस्तुत की हैं, जो महाभारत में आई हैं। डिमाई साइज़ के ४८ पृष्ठ की यह पुस्तक **नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली** ने प्रकाशित की है और यह १ रु० ५० न० पै० में प्राप्य है।

* * *

परमाणु शक्ति नामक इस पुस्तक में श्री रत्नसिंह गिल ने परमाणु-शक्ति के विभिन्न पक्षों पर सरल और रोचक शैली में विचार किया है। पुस्तक को उपयोगी बनाने के लिए यत्र-तत्र बहुत से चित्र और रेखाचित्र भी दे दिये गए हैं। हिन्दी में ऐसी पुस्तकों की नितान्त आवश्यकता है। डिमाई साइज़ के ४८ पृष्ठ की यह पुस्तक **नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली** ने प्रकाशित की है और यह १ रु० ५० न० पै० में मिल सकती है।

* * *

प्रकाशन समाचार

वर्ष : ६
अंक : ३
वार्षिक : ३.००
एक प्रति : ०.३१

सम्पादक : ओंप्रकाश, डायरेक्टर इंचार्ज, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड

नवम्बर मास के मध्य में अ० भा० हिन्दी प्रकाशक संघ के तत्त्वावधान में एक 'राष्ट्रीय पुस्तक समारोह' मनाने की व्यवस्था की गई है। यह समारोह देश के सभी प्रमुख नगरों में एक साथ मनाया जाएगा। यह अपने ढंग का अभूतपूर्व आयोजन होगा। इस समारोह का प्रारूप भारत के प्रायः सभी पुस्तक-विक्रेताओं और प्रकाशकों की सेवा में भेज दिया गया है।

इस सन्दर्भ में इस समारोह का प्रारूप भेजते हुए अ० भा० हिन्दी प्रकाशक संघ के प्रधान ने देश के सभी सुबुद्ध प्रकाशकों से यह अपील की है कि वे इस आयोजन को सफल बनाने में अपना पूरा-पूरा सहयोग दें।

आज जब कि हिन्दी राष्ट्रभाषा के गौरवपूर्ण पद पर अधिष्ठित होने जा रही है, हिन्दी के प्रकाशकों का यह नैतिक कर्तव्य हो जाता है कि वे इस पुनीत अनुष्ठान में अपना पूरा-पूरा सहयोग दें। 'राष्ट्रीय पुस्तक समारोह' का आयोजन इसलिए किया जा रहा है कि देश की जनता में पुस्तकों को खरीदकर पढ़ने और प्रत्येक परिवार में निजी पुस्तकालय स्थापित करने की भावना का प्रचार किया जाए। इस दिशा में यदि हमारे प्रकाशक-बन्धुओं ने अपने कर्तव्य का सतर्कतापूर्वक पालन किया तो यह समारोह अपने उद्देश्य में पूर्णतः सफल होगा।

साहित्य के निर्माण और उसके प्रचार-प्रसार में जहाँ प्रकाशकों का अपना सहयोग आवश्यक है, वहीं हमारे शिक्षित जन-समुदाय का यह भी कर्तव्य है कि वे इस पुनीत अनुष्ठान में अ० भा० हिन्दी प्रकाशक संघ को सर्वात्मना सहयोग दें। हमें यह पूर्ण विश्वास है कि 'राष्ट्रीय पुस्तक समारोह' हमारी उन आशा-आकांक्षाओं को फलीभूत करेगा, जिन पुनीत भावनाओं को लक्ष्य में रखकर इस आयोजन का निश्चय किया गया था।

साहित्य के प्रचार की दिशा में ऐसे समारोह जहाँ सहायक होंगे, वहाँ जन-साधारण में साहित्य के अध्ययन के प्रति भी रुचि जागृत करने में सफल होंगे।

राष्ट्रीय पुस्तक समारोह

अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ के अध्यक्ष श्री बेरी की अपील

१४ नवम्बर १९६१ से २१ नवम्बर तक मनाए जाने वाले राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह के विषय में उसे सफल व जन-हित के लिए उपयोगी बनाने के लिए अखिल भारतीय हिन्दी-प्रकाशक संघ के अध्यक्ष की अपील।

भारत का पहला राष्ट्रीय पुस्तक समारोह १४ से २१ नवम्बर १९६१ तक देश के पाँच बड़े नगरों, यथा वाराणसी, दिल्ली, कलकत्ता, बम्बई तथा मद्रास, में अधिकृत रूप से अनुष्ठित होने जा रहा है। समारोह का संयोजन 'अखिल भारतीय हिन्दी-प्रकाशक संघ' कर रहा है। बम्बई, मद्रास, कलकत्ता तथा देश की प्रायः अन्य सभी प्रकाशन तथा मुद्रण-संस्थाएँ इस समारोह को सफल करने के लिए संयुक्त रूप से कार्य कर रही हैं। भारत-जैसे विभिन्न भाषा-भाषी देश में राष्ट्रीय ऐक्य का जो महत्त्व है उसका स्वरूप इस समारोह के अवसर पर जनता को देखने को मिलेगा। इस अवसर पर देश के पुस्तक-प्रकाशकों तथा विक्रेताओं के सभी वर्गों से मेरी अपील है कि वे चाहे किसी भी भाषा की पुस्तकों का प्रकाशन या विक्रय क्यों न करते हों, इस राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह को सफल बनाने में अपना पूर्ण योग दें। उपर्युक्त पाँच स्थानों के अतिरिक्त भारत के प्रत्येक ग्राम से लेकर बड़े शहर तक इस समारोह के मनाने का दायित्व प्रकाशकों तथा पुस्तक-विक्रेताओं के सबल कन्धों पर ही है। हमारा यह पहला राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह यदि सफल हो सका तो निश्चय है कि देश में शिक्षा का प्रचार-प्रसार करने और ऐक्य स्थापित करने में हमारा वर्ग सबसे अग्रणी माना जाएगा।

इस अवसर पर आप अपनी दुकानों को झंडियों से सजाएँ और जो पोस्टर आपको संघ के कार्यालय से प्राप्त हों उन्हें अपनी दुकान के प्रमुख स्थान पर लगाएँ। इन दिनों जो स्टेशनरी छपे और व्यवहृत हो, उस पर 'राष्ट्रीय पुस्तक समारोह १४ से २१ नवम्बर, १९६१ 'मुद्रित करें। स्थानीय समाचार-पत्रों में सामूहिक विज्ञापन दें। विशेष चन्दा उठाकर सिनेमा में 'राष्ट्रीय पुस्तक समारोह मनाइए' शीर्षक स्लोगन की स्लाइड दिखाइए। बेलून गुब्बारे, जिन पर 'राष्ट्रीय पुस्तक समारोह' अंकित हो, अपनी दुकानों में लगाएँ। अपने नगर या ग्राम में सहयोगियों के सहयोग से पुस्तक-प्रदर्शनी का आयोजन कीजिए। इन दिनों पाठकों को नई पुस्तकों तथा अब तक प्रकाशित सत्साहित्य की सूचना देने के लिए यथाविधि विज्ञापन कीजिए, यथा सूचीपत्र, इश्तहार आदि वितरित करना।

जहाँ समारोह का आयोजन कीजिए वहाँ सर्वसाधारण के अतिरिक्त विशेष रूप से बच्चों तथा महिलाओं को आमन्त्रित कीजिए। कवि-सम्मेलनों और मुशायरों का

आयोजन हो। स्थानीय सूचना-अधिकारी से शिक्षा-सम्बन्धी फ़िल्में प्राप्त कर दिखाई जाएँ। स्थानीय जन-पथों पर 'राष्ट्रीय पुस्तक समारोह मनाइये' लिखे हुए बैनर लगाए जाएँ। क्षेत्रीय भाषाओं के प्रचार पर विशेष रूप से ज़ोर दिया जाए। जो प्रकाशक या विक्रेता संघ के सदस्य न हों उन्हें संघ का सदस्य बनने के लिए आमन्त्रित किया जाए और इसके अलावा स्थानीय सुविधानुसार पुस्तकों की ओर जनता की रुचि आकर्षित करने के लिए सांस्कृतिक कार्यक्रमों की सप्ताहव्यापी योजना बनाई जाए।

इस अवसर पर प्रकाशक संघ की ओर से 'स्मारिका' (सुवेनिर) लगभग ४००-५०० पृष्ठों का प्रकाशित होने जा रहा है, जिसकी प्रतियाँ हज़ारों की संख्या में पुस्तक-प्रेमियों, साहित्यकारों तथा पुस्तकालयों को भेंट की जाएँगी। इसके सम्पादक होंगे, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी के श्री लक्ष्मीचन्दजी जैन। इसमें आप अपने प्रकाशनों का विज्ञापन देने की कृपा भी करें।

समारोह के अवसर पर सूचना तथा प्रसारण मन्त्रालय रेडियो द्वारा विशेष कार्यक्रम प्रसारित करेगा, इसे यथावसर सुनें। अपने क्षेत्र में जो भी समारोह हों, उनकी सूचना स्थानीय समाचारपत्रों में प्रकाशनार्थ दें और उसकी एक-एक प्रतिलिपि संघ के वाराणसी तथा दिल्ली कार्यालय को भेजें।

यह समारोह देश में शिक्षा के क्षेत्र में नई क्रान्ति का अभिनव प्रयोग है। मुझे आशा है कि हमारे देश का जागरूक पुस्तक-प्रकाशक तथा विक्रेता-वर्ग इस समारोह को सफल करने में पूर्ण सहयोग देगा और समारोह को उसी तरह महत्त्व देगा जैसा कि प्रसिद्ध सामाजिक पर्वों को। साथ ही मैं सर्वसाधारण, जन-नायकों, साहित्यकारों, पुस्तक-प्रेमियों और सरकार के विभिन्न अधिकारियों से अपील करता हूँ कि वे प्रकाशक-संघ के इस महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय कार्य में यथासम्भव सहयोग दें और इस पुनीत राष्ट्रीय पर्व को सफल बनायें।

जापान का पुस्तक-संसार

दीनानाथ मल्होत्रा

हमारे पड़ोसी देशों में पुस्तक-व्यवसाय की क्या स्थिति है? क्या वहाँ की और हमारी समस्याएँ और समाधान प्रणालियाँ एक हैं? इस विषय में यथातथ्य जानकारी देने वाला एक ज्ञानवर्द्धक लेख।

जापान दस करोड़ आबादी का देश है, जिसमें लगभग एक करोड़ जनता जापान की राजधानी टोकियो में बसती है। जापानी लोग अत्यन्त उद्यमी और विज्ञान एवं कला में बहुत बढ़े-चढ़े हैं। जापान में जहाँ यूरोप और अमरीका की वैज्ञानिक व टेक्नीकल सभी चीजें चरम-सीमा तक पहुँच चुकी हैं, वहाँ साथ ही उन्होंने अपनी सभ्यता व रीति-रिवाज नहीं छोड़े। जापानी घरों में उनकी अपनी परम्परागत सादगी व कला की छाप है। कई वर्षों के अमेरिकन आधिपत्य के होते हुए भी जापान में जापानी भाषा ही चलती है, अंग्रेज़ी मुश्किल से ही कोई-कोई लोग समझते हैं। सब दुकानों के बोर्ड जापानी में, बातचीत जापानी में, और उनके सोच-विचार का ढंग भी जापानी है। देशभक्ति उनमें कूट-कूटकर भरी हुई है और दिन-प्रतिदिन उनका देश उन्नति कर रहा है।

अन्य उद्योगों की तरह जापान का पुस्तक-उद्योग भी बहुत प्रगतिशील है। जापानी पुस्तकें बहुत सुन्दर और सस्ती होती हैं। छपाई में तो जापान इतना उन्नत है कि वहाँ पर विदेशों के प्रकाशक अपनी पुस्तकें भेजकर छपवाते हैं। छपी हुई पुस्तकों का वापसी किराया लगाकर भी अन्य देशों में पहुँचकर वह सस्ती पड़ती हैं। टोकियो के एक टोपाँ नामक प्रेस में मैंने ब्रिटिश एवं अमेरिकन प्रकाशकों की पुस्तकें बड़ी संख्या में छपती हुई देखीं। ये कई रंगों में सुसज्जित बाल-साहित्य की पुस्तकें थीं, जोकि बड़ी तेज गति वाली मशीनों पर छप रही थीं। इसी प्रेस में एक मशीन पर पाँच लाख प्रतियाँ अरबी भाषा में कुरान की छप रही थीं। यह इण्डोनेशिया का ऑर्डर था। इस प्रेस का एक पूरा विभाग विदेशी प्रकाशकों की पुस्तकें छापता है। जापान में छपाई की मशीनें बनाने के बहुत से कारखाने हैं, जो बढ़िया और सस्ती मशीनें बनाकर अपने देश की खपत पूरी करते हैं और निर्यात भी करते हैं। जापानी मशीनें हमारे देश में भी बहुत से प्रेसों में लगी हुई हैं। इसी प्रकार जापान में कागज़ बनाने की भी बहुत सी मिलें हैं, जहाँ बहुत बढ़िया और सस्ता कागज़ बनता है।

जिस देश में कागज़-निर्माण व मुद्रण उद्योग इतना उन्नत हो, उस देश में पुस्तक-व्यवसाय कितना प्रगतिशील होगा, इसका आप स्वयं अनुमान लगा सकते हैं। सचमुच ही जापान का पुस्तक-व्यवसाय बिलकुल निराला है। पुस्तक-व्यवसाय का संगठन भी अन्य देशों से सर्वथा भिन्न है। उसके कई एक अंग ऐसे हैं जो दूसरे देशों में पाए ही नहीं जाते।

सर्वप्रथम बात तो यह है कि जापान में पुस्तक-व्यवसाय कीं तीन बिलकुल अलग-अलग कड़ियाँ हैं—प्रकाशक, वितरक व पुस्तक-विक्रेता। इन तीनों में से संगठन के महत्त्व की दृष्टि से तथा सम्पन्नता के आधार पर वितरक सर्वप्रथम हैं। वितरक ही सारे व्यवसाय का केन्द्र हैं। प्रकाशक केवल पुस्तकें प्रकाशित करते हैं और वितरकों को दे देते हैं। कोई भी प्रकाशक अपनी पुस्तकें सीधे पुस्तक-विक्रेताओं को नहीं पहुँचाते और न ही पुस्तक-विक्रेताओं से उनका कोई सम्बन्ध है। वे अपनी पुस्तकें वितरकों को देकर स्वयं और नई पुस्तकें प्रकाशित करने में लग जाते हैं।

संगठन व वितरण का सारा काम वितरकों के कार्यालयों में होता है। विभिन्न प्रकाशकों से नित-नई पुस्तकों के ढेर उनके पास आते रहते हैं और उनके गोदामों व डिस्पेच-विभाग में बीसियों नहीं, बल्कि सैकड़ों कार्यकर्ता

निश्चित योजना के अनुसार उन पुस्तकों को पुस्तक-विक्रेताओं के पास भेजते हैं। या तो पुस्तक-विक्रेताओं के निश्चित आदेश-पत्र उनके पास आ जाते हैं अथवा वितरक अपनी दूरदर्शिता से अनुमान लगाकर कि किस विक्रेता के पास कौनसी पुस्तक कितनी बिक सकती है, स्वयमेव भेज देते हैं। न बिकी पुस्तकें वापस ले ली जाती हैं। पुस्तक-विक्रेता कुछ रकम तो तत्काल दे देते हैं और शेष मासिक हिसाब करके वितरकों को भेजते रहते हैं। इसी प्रकार वितरक भी प्रकाशकों को कुछ राशि तो उसी समय दे देते हैं और शेष हिसाब देते रहते हैं। ईमानदारी व नियमितता के कारण सारा कारोबार यन्त्रवत् चलता रहता है।

ऐसे भी प्रकाशक हैं जिनकी पुस्तकें अत्यधिक सर्वप्रिय होने के कारण, वे सारी रकम पहले ही नकद प्राप्त कर लेते हैं। वितरक उनको पूरी रकम नकद दे देते हैं और आगे वितरक भी पुस्तक-विक्रेताओं से पूरी राशि ले लेते हैं। यह सब-कुछ पुस्तकों के महत्व और उनकी बिक्री-क्षमता पर निर्भर रहता है। यदि पुस्तकें अधिक बिकाऊ हों तो प्रकाशकों को उतना अधिक रुपया तत्काल प्राप्त हो

जाता है और यदि कम बिकाऊ हों तो उस अनुपात से उतनी कम राशि नकद प्राप्त होती है। वितरक नई-नई पुस्तकें प्रकाशित करने के लिए प्रकाशकों को उधार या एडवान्स के तौर पर रुपया भी देते हैं। वितरक सर्वाधिक सम्पन्न हैं। उनकी बड़ी-बड़ी बिल्डिगें हैं, उनके अपने ट्रक हैं, बड़े गोदाम हैं और उनके अपने पत्र-पत्रिकाएँ निकलती हैं जिनके द्वारा लाइब्रेरियों को, पुस्तक-विक्रेताओं को, स्कूलों तथा विशिष्ट व्यक्तियों को नई प्रकाशित पुस्तकों की सूचना भेजी जाती है। ये पत्रिकाएँ लाखों की संख्या में प्रकाशित की जाती हैं। एक नहीं, ये कई प्रकार की होती हैं— कोई बाल-साहित्य-सम्बन्धी, कोई जनरल पुस्तकों की और कोई केवल पुस्तक-विक्रेताओं के लिए ही।

देश-भर में लगभग पचास वितरक हैं, जिनमें से ७५ प्रतिशत व्यवसाय केवल सात-आठ वितरकों के हाथ में है। इनमें एक बड़े प्रमुख वितरक हैं 'निपान', जिनका कार्य मैंने थोड़ा-बहुत देखा। यह बहुत बड़े स्तर पर काम करते हैं और जैसे टाइम्स ऑफ इण्डिया बम्बई की बिल्डिंग हो, वैसे बड़े भवन में इनके विभिन्न विभागों के हजारों कार्यकर्ता काम में लगे हैं। पुस्तक-वितरण व्यवसाय इतना बड़ा हो सकता है, इसकी मैं कल्पना भी नहीं कर सकता था। उस देश में पुस्तकों का प्रचार व प्रसार इतना व्याप्त है कि पुस्तक-व्यवसाय उनके देश का एक महान् उद्योग है और उसकी प्रतिष्ठा भी बहुत है।

पुस्तकों के साथ-ही-साथ मासिक पत्र-पत्रिकाएँ भी इन्हीं वितरकों द्वारा वितरित होती हैं। कई प्रकाशन-गृह ऐसे हैं जो पुस्तकों के साथ कई-एक पत्रिकाएँ भी निकालते हैं। बच्चों के लिए हर स्तर की पत्रिकाएँ हरेक श्रेणी के अनुसार प्रकाशित होती हैं। ये पत्रिकाएँ बड़ी सुन्दर, मनोरंजक व शिक्षाप्रद भी होती हैं। एक-एक पत्रिका लाखों की संख्या में छपती है और वैसी ही मिलती-जुलती पत्रिकाएँ कई प्रकाशन-संस्थानों से निकलती हैं। अचरज होता है यह सब देखकर कि दस करोड़ की जन-संख्या के देश में पुस्तकों की इतनी अधिक खपत, जोकि अंग्रेज़ी के मुकाबले कहीं कम नहीं, जिसका प्रचलन सारे संसार में है।

कुछेक आँकड़े भी ऐसे मिले जिनसे उनके प्रकाशन-

काय का पता चला। १९५९ में विभिन्न विषयों पर जापानी में २२,१९८ पुस्तकें प्रकाशित हुईं, जिनका विषय-वार ब्यौरा इस प्रकार है—

विषय	संख्या
धर्म	१३२
दर्शन	४१०
इतिहास	५४०
राजनीति	१५३
कानून	५८९
अर्थशास्त्र	१०६१
शिक्षा	५९०
सामाजिक	४७७
जनहित	१०९८
फ़िज़िक्स	५७८
आयुर्वेद	४३१
इंजीनियरिंग	१०९२
खेती	३१३
कला	५३५
साहित्य	४३९८
संग्रह	२१७४
बाल-साहित्य	२४८१
चित्रकला	११२९
भाषा	५३२
रेफ़रेन्स	२९६३
डिक्शनरी	२३८
जनरल	१५९
डायरी	२२५
कुल	२२,१९८

इन आँकड़ों से पता चलता है कि साहित्य, अर्थशास्त्र, जनहित, इंजीनियरिंग, संग्रह, बाल-साहित्य, चित्रकला और रेफ़रेन्स पर बहुत सी पुस्तकें प्रकाशित होती हैं। कुल संख्या २२,१९८ भी बहुत बड़ी है। साम्यवादी रूस को छोड़कर, जहाँ सब-कुछ राज्य द्वारा ही किया जाता है, सम्भवतया यह संसार में पुस्तकों के प्रकाशन में सर्वप्रथम देश है। जापान के अतिरिक्त विदेशों में भी जहाँ-जहाँ जापानी बसे हुए हैं, वहाँ पुस्तकें भेजी जाती हैं। इसी प्रकार पुस्तक-सम्बन्धी संस्थाओं के जापान के आँकड़े निम्न

प्रकार हैं—

पुस्तक-प्रकाशक	१२१३
थोक वितरक	५६
पुस्तक-विक्रेता	१४,६८८
सार्वजनिक पुस्तकालय	७६६

इन तीनों वर्गों के अलग-अलग संघ हैं। प्रकाशक-संघ का नाम 'निप्पॉन शोसेकी शुप्पान क्योकाइ' अर्थात् 'जापान पुस्तक प्रकाशक संघ' है। इसका अपना कार्यालय है, जहाँ कई कार्यकर्ता हैं और इसका अपना भवन है। एक बहुत उच्च कोटि के व्यक्ति सेक्रेटरी हैं, जोकि वैतनिक हैं और पूरा समय संघ का काम करते हैं। प्रकाशकों की चुनी हुई एक कार्यसमिति है और अवैतनिक प्रधान हैं, जिनकी आज्ञा से सेक्रेटरी काम चलाता है। इसके अतिरिक्त जनता में पुस्तक पढ़ने की आदत डालने के लिए एक संस्था है, जो पुस्तक-प्रदर्शनियाँ करती है, राष्ट्रीय पुस्तक सप्ताह, बाल-पुस्तक सप्ताह आदि मनाती है। प्रकाशक संघ की बहुत-सी समितियाँ हैं, जो नियमित रूप से बैठकें करती हैं और कार्य-संचालन करती हैं।

प्रकाशन-गृहों में प्रमुख नाम ये हैं—कोदांशा, इवानामी, शोगाकुकान, हीबोंशा, होइकुशा, शिंचोशा, बुंगे शुंजु आदि। सबसे बड़ा प्रकाशन-गृह 'कोदांशा' है। मैं इस प्रकाशन-गृह में गया भी और इनके संचालकों से भेंट की। इसके प्रधान श्री नोमा हैं, जोकि बड़े गम्भीर व विनम्र स्वभाव के सज्जन हैं। वैसे तो सभी जापानी लोग बड़े विनीत होते हैं, परन्तु श्री नोमा जापानी संस्कृति के सच्चे प्रतीक हैं। प्रकाशक संघ के वर्तमान प्रधान भी श्री नोमा ही हैं।

'कोदांशा' से गत वर्ष ३६० नई पुस्तकें प्रकाशित हुईं और लगभग इतनी ही संख्या में पुरानी पुस्तकों की पुनरावृत्ति हुई। कुल बिकी पुस्तकों की संख्या डेढ़ करोड़ थी। इसके अतिरिक्त ग्यारह बच्चों की पत्रिकाएँ निकलती हैं। प्रथम ग्रेड की पत्रिका छः लाख और पाँचवें स्तर की चार लाख छपती है। इस प्रकाशन-गृह में ६० पत्रिकाओं के सम्पादक हैं और ३० पुस्तकों के विभाग में हैं। इनके कुल ८०० कार्यकर्ता हैं और इनका अपना भवन सारे टोकियो में सर्वविदित है।

पुस्तक-विक्रेता हर स्थान पर हैं। एक-दो बाजार तो बिलकुल पुस्तक-विक्रेताओं से भरे हैं, जहाँ नई व पुरानी दोनों प्रकार की पुस्तकें मिलती हैं। पाठ्य-पुस्तकें भी बड़ी सुरुचिपूर्ण हैं।

जापान की पुस्तकें सुन्दर तो हैं ही, परन्तु इतनी सस्ती कैसे हैं? यह रहस्य जानने का मैंने यत्न किया। हमारे देश को भी तो सस्ती व सुन्दर पुस्तकें चाहिएँ। एक बात तो यह है कि वहाँ का काग़ज़ व छपाई बहुत सस्ती है और स्तर भी बढ़िया है। काग़ज़ की मिलें बहुत हैं और वहाँ उत्पादन भी बढ़िया होता है। छपाई की मशीनें बनाने के बड़े-बड़े कारखाने हैं और ये न केवल अपने देश के लिए बल्कि निर्यात के लिए भी बढ़िया मशीनें बनाते हैं।

दूसरा कारण वहाँ के पुस्तक-व्यवसाय का संगठन, उसका अनुशासन व कमीशन-सम्बन्धी नियम हैं। जापान में प्रकाशक वितरक को २५% कमीशन देता है और वितरक अपने पास ७% रखकर शेष १८% पुस्तक-विक्रेता को दे देता है। पुस्तक-विक्रेता का काम १८ प्रतिशत में चल जाता है क्योंकि पुस्तकों की बिक्री बहुत है और कोई कमीशन की माँग नहीं करता। पुस्तकें छपे दामों पर बिकती हैं। वितरक को ७% भी बहुत होता है क्योंकि उसकी बिक्री तो देश-भर की बिक्री का बड़ा भारी भाग होती है। एक-एक वितरक करोड़ों की बिक्री करता है। कम बिक्री वाले देश में ७% सम्भव नहीं। अब जबकि प्रकाशक ने केवल २५% ही कमीशन देना है और वितरण-संगठन से भी वह मुक्त है तो उसका काम थोड़े में चल जाता है और वह अपना लाभांश थोड़ा रखकर पुस्तकों के दाम कम रखता है। परिणामतः देश-भर में सस्ती व सुन्दर पुस्तकों का प्रचार होता है।

आज भारत को भी सस्ती व सुन्दर पुस्तकों की आवश्यकता है। यदि हम भी अपने संगठन व अनुशासन को ठीक कर लें तो जापान की तरह हमारे देश में पुस्तकों की दुकानों की भरमार हो जाए और देश उन्नत हो। काश, हम जापानियों-जैसा देश-प्रेम व अनुशासन अपने जीवन में ले आएँ।

हमारा राष्ट्रीय पुस्तकालय

फतहचन्द्र शर्मा 'आराधक'

राष्ट्रीय पुस्तकालय कलकत्ता का हमारे देश के पुस्तकालयों में प्रमुख स्थान है। नीचे की पंक्तियों में इस विशाल पुस्तकालय का सर्वाङ्गीण परिचय प्रस्तुत किया गया है। हमारे पाठक इससे अवश्य लाभान्वित होंगे, ऐसी आशा है।

भारतीय सभ्यता और संस्कृति में पुस्तकों का विशेष महत्त्व रहा है। यही कारण है कि पुस्तक किसी दूसरे को न देने की चर्चा कई संस्कृत साहित्यकारों ने की है। इसका कारण यह भी है कि प्राचीन काल में जिन दिनों पुस्तकें हाथ से लिखी जाती थीं, उन दिनों यह आवश्यक था कि पुस्तकें भली प्रकार से सुरक्षित रखी जाएँ। यदि ऐसा नहीं किया जाता तब हज़ारों पुस्तकें वैसे ही बरबाद हो जातीं। किंतु आज जब मुद्रण-कला उन्नति के शिखर पर है, उस समय पुस्तकें सँभालकर रखना और भी आवश्यक है।

पुस्तकें किस प्रकार सँभालकर रखी जाएँ, यह एक विशेष रूप से विचार करने की बात है। यह आवश्यक है कि जिन पुस्तकों को हम प्रेरणा-स्वरूप मानते हैं, उन्हें जैसे अपने घर के कोने में बिस्तरे से शालिग्राम की बटिया को घर के कोने में कहीं-न-कहीं स्थान देते हैं, उसी तरह ज्ञान का प्रकाश बिखेरने वाली पुस्तकों को भी बड़े स्नेह के साथ अपने घर में रखना चाहिए। क्या अच्छा हो कि अपने घर के कोने में एक छोटा-सा पुस्तकालय हो, परिवार अवकाश के समय बेकार की फिजूल बातों में समय बरबाद न करके पुस्तक पढ़कर अपने ज्ञान का विकास करें।

अपने देश में पुस्तकालयों में भी पुस्तक पढ़ने का चाव विशेष नहीं है। और पढ़ते भी हैं तो किस्से-कहानियों और जासूसी उपन्यासों को ही। इन सबसे कितना ज्ञान बढ़ता है, यह भी एक विचार करने की बात है।

राष्ट्रीय पुस्तकालय

पिछले दिनों कलकत्ता गया हुआ था। अब तक राष्ट्रीय संग्रहालय नई दिल्ली में देख चुका था। और अभी तक राष्ट्रीय पुस्तकालय नहीं देख पाया था। उसे देखने की जो उत्कण्ठा मेरे हृदय में उत्पन्न थी, उसे पूरा करने के लिए राष्ट्रीय पुस्तकालय देखने के लिए मैं गया। जिस समय पुस्तकालय की विभिन्न भाषाओं के कक्ष देखकर, पुस्तकालय में घूम रहा था, उस समय ऐसा लग रहा था कि जैसे संसार में पुस्तकों से बड़ा मनुष्य का कोई मित्र ही नहीं। पुस्तकालय में बड़ी शान्ति के साथ काम हो रहा था। सौभाग्य से हिन्दी, संस्कृत आदि के विभागीय अध्यक्ष मेरे परिचित निकले। उनके सहयोग से पुस्तकालय घूमने में विशेष सहायता मिली। पुस्तकालय के अध्यक्ष डॉ० केशवानी से भेंट नहीं हो सकी, जो उस दिन पुस्तकालय में नहीं थे। उपाध्यक्ष एक बंगाली बाबू थे। उन्होंने बड़े प्रेम से पुस्तकालय को दिखाया और जो मेरे प्रश्न थे, उनका भी बड़े स्नेह के साथ समाधान किया।

पुस्तकालय की स्थिति

राष्ट्रीय पुस्तकालय में पुस्तकालय के अतिरिक्त एक बहुत बड़ा वाचनालय भी है, जिसमें कई सौ व्यक्ति एक साथ बैठकर पुस्तकें और समाचार-पत्र आदि पढ़ सकते हैं। मुझे वाचनालय के उस बड़े कमरे में कुछ समय खड़े होकर विभिन्न प्रकार के जिज्ञासु व्यक्तियों को देखने का अवसर मिला, जो वहाँ पुस्तक आदि पढ़ने के लिए एकत्रित थे। विभिन्न स्थानों के व्यक्ति उस वाचनालय और पुस्तकालय में घूमते दिखाई दिये। इसलिए राष्ट्रीय पुस्तकालय सच्चे अर्थों में राष्ट्र के सभी वर्ग और व्यक्ति के हित में काम कर रहा है, ऐसा मुझे लगा।

पुस्तकालय की स्थापना

राष्ट्रीय पुस्तकालय की स्थापना भी एक बड़ी मनारंजक कहानी है। जिस समय भारतीय भाषाओं को समुन्नत करने के लिए कलकत्ता में ओल्ड विलियम कालेज की स्थापना की गई थी, उस कालेज से स्थानान्तरित लगभग छः हजार पुस्तकें, जो अपने विषय की बड़ी मूल्यवान् थीं, इस पुस्तकालय को मिलीं। पुस्तकालय के जन्म और विकास का श्रेय 'इंगलिश मैन' के सम्पादक जे० एच० स्टाकेलर को है। उन्होंने १८३५ में वक्तव्य प्रकाशित किया, जिसमें उन्होंने पुस्तकालय की स्थापना पर बल दिया था। उनके वक्तव्य का लगभग डेढ़ सौ व्यक्तियों ने समर्थन किया और ३१ अगस्त १८३५ में टाउनहॉल में एक सभा पुस्तकालय की स्थापना करने के लिए हुई। और उसमें पुस्तकालय खोलने का प्रस्ताव स्वीकृत हो गया। ८ मार्च, १८३६ में पुस्तकालय आरम्भ हो गया। पहले टाउनहॉल में पुस्तकालय के कुछ स्थान प्राप्त करने का प्रयत्न किया गया, किन्तु उसमें सफलता नहीं मिली। आरम्भ में पुस्तकालय का कार्य डॉ० एफ० बी० स्ट्राण्डा के मकान पर शुरू किया गया। कुछ वर्ष पुस्तकालय यहाँ चलकर १८४१ में उठकर ओल्ड विलियम कॉलेज में चला आया। लगभग १८४० में सरकार ने पुस्तकालय को कुछ भूमि प्रदान की, जिस पर मेटकाफ भवन का निर्माण हुआ। १८४४ में इस भवन के एक भाग में पुस्तकालय रखा गया। लगभग २० अप्रैल १८९० को पुस्तकालय की व्यवस्था कलकत्ता नगरपालिका को सौंप दी गई। उन्हीं दिनों एक विशाल वाचनालय तथा चलता-फिरता पुस्तकालय आरम्भ किया गया। वाचनालय से पुस्तकालय का विशेष महत्त्व बढ़ा। इस पुस्तकालय का यह सौभाग्य रहा है कि इसे प्रसिद्ध क्रान्तिकारी स्वर्गीय विपिन चन्द्रपाल के संरक्षण में भी कार्य करने का अवसर मिला। लगभग १८९०-९१ में पुस्तकालय की बहुत लोकप्रियता बढ़ गई थी।

पुस्तकालय के विकास की दिशा में बंगाल सरकार ने यदा-कदा प्रयत्न किया। लगभग १८९१ में इम्पीरियल लाइब्रेरी की स्थापना हुई। यह लाइब्रेरी कलकत्ता की अदालती बिल्डिगों के एक कक्ष में थी। लार्ड कर्ज़न ने १९०१ में इम्पीरियल लाइब्रेरी और इस पुस्तकालय को एक साथ मिला दिया और मेटकाफ भवन में दोनों पुस्तकालय एकाकार होकर चलने लगे। पुस्तकालय को अधिक उपयोगी बनाने के लिए, भारत-सम्बन्धी पुस्तकों को विशेष रूप से पुस्तकालय में रखा गया। पुस्तकालय का नियन्त्रण सरकार के हाथ में रहा। किन्तु पुस्तकालय-सम्बन्धी अन्य समस्त व्यवस्था इस कार्य के लिए बनायी गई परिषद के सुपुर्द की गई।

लार्ड कर्ज़न का प्रयत्न

लार्ड कर्ज़न ने एक अवसर पर कहा था कि कलकत्ता में एक ऐसा पुस्तकालय स्थापित किया जाना चाहिए जो कलकत्ता के अनुरूप हो। कलकत्ता उन दिनों भारत की राजधानी थी। राजधानी की दृष्टि से राष्ट्रीय पुस्तकालय की स्थापना आवश्यक थी। पुस्तकालय के संचालन और संवर्द्धन में सर जॉन बुडवर्न का भी सहयोग रहा।

पुस्तकों का संकलन

राष्ट्रीय पुस्तकालय में इतिहास, भूगोल, प्रशासन-सम्बन्धी पुस्तकों का संकलन बहुत अच्छा था। उन सबको राष्ट्रीय पुस्तकालय में भली प्रकार से सुरक्षित रखा गया। पुस्तकालय में बहुत-सी पुस्तकें बड़ी मूल्यवान् और उपयोगी हैं, जिस तरह की पुस्तकें लन्दन की इण्डिया ऑफ़िस लाइब्रेरी में संकलित की गई थीं। इस पुस्तकालय की अपनी यह भी विशेषता है कि विभिन्न भाषाओं की भारत सम्बन्धी पुस्तकें पुस्तकालय में रखी गई हैं। एक समय ऐसा भी रहा जब पुस्तकालय के संचालन में बंगाल के बड़े-से-बड़े महापुरुषों ने सहयोग दिया था। स्वर्गीय आशुतोष बाबू भी पुस्तकालय की प्रबन्ध परिषद् के १९१२ में अध्यक्ष थे।

व्यवस्था पर विचार

भारत सरकार ने १९२६ में पुस्तकालय के सम्बन्ध में विशेष विचार करने के लिए रिचे समिति की स्थापना की। इस समिति ने इस बात पर बल दिया कि पुस्तकालय के साथ संदर्भ पुस्तकालय भी खोला जाए। यह भी विचार किया गया कि भारत के किसी भाग का व्यक्ति विशेष अध्ययन करने का इच्छुक हो तो समस्त सुविधा पुस्तकालय से उसे मिले। पुस्तकालय को बोहार लाइब्रेरी की भी सहायता मिली। सैयद सदरुद्दीन अहमद

ने बोहार लाइब्रेरी की लगभग एक हज़ार हस्तलिखित पारसी की पुस्तकें और लगभग डेढ़ हज़ार अरबी-फारसी में छपी पुस्तकें लाइब्रेरी को दीं। इस तरह धीरे-धीरे राष्ट्रीय पुस्तकालय के रूप में पुस्तकालय की स्थापना की। पुस्तकालय का १९४८ में नाम बदलकर राष्ट्रीय पुस्तकालय रखा गया और इस कार्य के लिए बलवेडियर भवन को प्राप्त किया गया, जो पुस्तकालय के लिए बड़ा उपयुक्त और उचित स्थान था। पुस्तकालय में १४ लाख से अधिक विभिन्न विषयों पर पुस्तकें हैं। अमेरिकन पुस्तकालयों से भी इस पुस्तकालय को बहुत सी पुस्तकें मिलीं। स्वर्गीय मौलाना आज़ाद उस समय केन्द्रीय सरकार के शिक्षा-मन्त्री थे। उनके प्रयत्न से इस पुस्तकालय को राष्ट्रीय पुस्तकालय बनाने में बड़ा सहयोग मिला। पुस्तकालय बराबर उन्नति कर रहा है और आशा है कि दिन-प्रतिदिन पुस्तकालय की उन्नति और समृद्धि बढ़ेगी। भारत सरकार ने इस सम्बन्ध में एक कानून बना दिया है कि जो भी कोई पुस्तक छपे, उसकी एक प्रति राष्ट्रीय संग्रहालय में अवश्य रखी जाए। इस तरह एशिया में चीन को छोड़कर राष्ट्रीय पुस्तकालय अपने ढंग का अभूतपूर्व पुस्तकालय है। इतनी भारी संख्या में किसी दूसरे पुस्तकालय में पुस्तकें नहीं हैं, जितनी पुस्तकें यहाँ हैं। यहाँ आने पर एक बार बड़ा आनन्द मिलता है। इन दिनों सभी नगरों में पुस्तकालय बढ़ाने का आन्दोलन चल रहा है। दिल्ली में भी रेलवे स्टेशन के सामने जनता पुस्तकालय अपने ढंग का अभूतपूर्व स्थान है। इस पुस्तकालय को दिल्ली में स्थापित कराने का श्रेय प्रसिद्ध पुस्तकालय-विशेषज्ञ डॉ० रंगनाथन् को है, जिनके प्रयत्न से दिल्ली में यूनेस्को की सहायता से कई वर्ष पूर्व यह पुस्तकालय स्थापित किया जा सका।

राष्ट्रीय पुस्तक समारोह के अवसर पर प्रत्येक व्यक्ति यह निश्चय करे कि वह कम-से-कम अपनी आमदनी का कितना कुछ भाग पुस्तक खरीदने में खर्च करेगा। इससे देश में विविध विषयों की पुस्तकें लिखने को प्रोत्साहन मिलेगा और बहुत से देशवासी पुस्तक पढ़कर संकीर्णता से दूर रहकर विशेष ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
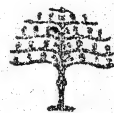
हमारे एकांकी नाटक

ज्ञानपीठ के एकांकी नाटकों में ऐसे ध्वनि-रूपक हैं, जिन्होंने रेडियो पर से श्रोताओं को आकर्षित किया है, मंच पर से दर्शकों को रोमांचित किया है। अनेक अवसरों पर अनेक मर्मज्ञ पाठकों को हिन्दी-साहित्य की इस नयी देन ने परिचित-प्रमुदित किया है—

पुस्तक	लेखक	मूल्य
जनम कैद	गिरिजाकुमार माथुर	२.५०
कहानी कैसे बनी ?	कर्तारसिंह दुग्गल	२.५०
पचपन का फेर	विमला लूथरा	३.००
तरकश के तीर	श्रीकृष्ण	३.००
रजतरश्मि	डॉ० रामकुमार वर्मा	२.५०
और खाई बढ़ती गयी	भारतभूषण अग्रवाल	२.५०
चेखव के तीन नाटक	राजेन्द्र यादव	४.००
बारह एकांकी	विष्णु प्रभाकर	३.५०
कुछ फीचर : कुछ एकांकी	भगवतशरण उपाध्याय	३.५०
सुन्दर रस	लक्ष्मीनारायण लाल	१.५०
सूखा सरोवर	"	२.००
नाटक बहुरंगी	"	४.५०
भूमिजा	सर्वदानन्द	१.५०

हमारा यात्रा-साहित्य

घुमक्कड़ी एक प्रवृत्ति ही नहीं, एक कला भी है। देशाटन करते हुए नये देशों में क्या देखा, क्या पाया, यह जितना देश पर निर्भर करता है, उतना ही देखने वाले पर भी। एक नज़र होती है जिसके सामने देश भूगोल की किताब के नक्शे-जैसे या रेल-जहाज के टाइम टेबिल-जैसे बिछे रहते हैं। एक दूसरी होती है—जिसके स्पर्श से देश एक प्राणवान् प्रतिमा-सा आपके सामने आ खड़ा होता है। भारतीय ज्ञानपीठ का यात्रा-साहित्य ऐसा ही है—

पुस्तक	लेखक	मूल्य
सागर की लहरों पर	डॉ० भगवतशरण उपाध्याय	४.००
पार उतरि कहँ जइहौ	श्री प्रभाकर द्विवेदी	३.००
एक बूँद सहसा उछली	श्री स० ही० वात्स्यायन	७.००
हरी घाटी (यात्रा, डायरी संस्मरण)	डॉ० रघुवंश	४.५०

एक साथ कविता, कहानी, उपन्यास का आनन्द

पुस्तक	लेखक	मूल्य
सीढ़ियों पर धूप में	श्री रघुवीर सहाय	४.००
पत्थर का लैम्प-पोस्ट	श्री शरद देवड़ा	३.००
काठ की घंटियाँ	श्री सर्वेश्वरदयाल सक्सेना	७.००

१९६१ के नये प्रकाशन

पुस्तक	लेखक	मूल्य
एक बूँद सहसा उछली	'अज्ञेय'	७.००
रेडियोवार्ता शिल्प	सिद्धनाथ कुमार	२.००
नाटक बहुरंगी	डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल	४.५०
वीणापाणि के कम्पाउंड में	केशवचन्द्र वर्मा	३.००
हरी घाटी	डॉ० रघुवंश	४.५०
नग्मए-हरम	अयोध्याप्रसाद गोयलीय	४.००
लो कहानी सुनो	अयोध्याप्रसाद गोयलीय	२.००
आधुनिक हिन्दी हास्य-व्यंग्य	सं० केशवचन्द्र वर्मा	४.००
पलासी का युद्ध	तपनमोहन चट्टोपाध्याय	३.५०
नये रंग नये ढंग	लक्ष्मीचन्द्र जैन	२.००
सन्त विनोद	नारायणप्रसाद जैन	२.००
शाइरी के नये दौर	अयोध्याप्रसाद गोयलीय	३.००

भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५

अखिल भारतीय प्रकाशक संघ की योजनानुसार १४ नवम्बर '६१ से एक सप्ताह तक अजमेर में 'राष्ट्रीय पुस्तक समारोह' मनाने का निर्णय किया गया है।

समारोह के अन्तर्गत एक विशाल पुस्तक प्रदर्शन करने का भी निश्चय किया गया है। पुस्तक-प्रदर्शनी के अतिरिक्त 'राजस्थान में शिक्षा का विकास' नामक प्रदर्शनी एवं शिक्षा-सम्बन्धी चलचित्रों का भी प्रदर्शन उसी स्थान पर होगा। साथ ही प्रान्तीय कवि सम्मेलन एवं मुशायरे का भी आयोजन रहेगा तथा निम्नलिखित विषयों पर निबन्ध-प्रतियोगिताएँ भी की जा रही हैं। निबन्ध-प्रतियोगिता के लिए निबन्ध (कागज़ पर एक तरफ सफाई से लिखे हुए अथवा टाइप किये हुए) संयोजक, राष्ट्रीय पुस्तक समारोह, द्वारा, दत्त बन्धु प्राइवेट लिमिटेड, कचहरी रोड, पोस्ट बाक्स नं० ८७, अजमेर के पते पर १ नबम्बर १९६१ तक प्रेषित करने हैं। निबन्ध-प्रतियोगिता को दो श्रेणियों में विभाजित किया गया है। प्रथम श्रेणी में छात्रों के लिए, द्वितीय में सर्वसाधारण के लिए हैं। हर श्रेणी में दो पुरस्कार रखे गए हैं। छात्रों के लिए प्रथम पुरस्कार ५१), द्वितीय पुरस्कार २१) का है।

द्वितीय श्रेणी (सर्वसाधारण) के लिए प्रथम पुरस्कार १०१) तथा द्वितीय ५१) का है। पुरस्कार में श्रेष्ठ पुस्तकें ही दी जाएँगी। पुरस्कृत निबन्ध-लेखक समारोह के अवसर पर स्वयं निबन्ध पढ़ना चाहें तो वे अपने व्यय से आने के लिए सहर्ष आमंत्रित हैं।

फ्रेंक फर्ट में हो रहे अन्तर्राष्ट्रीय-पुस्तक-समारोह में भाग लेने के लिए राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली के डायरेक्टर इंचार्ज तथा प्रकाशन समाचार के सम्पादक श्री ओंप्रकाश १२ अक्तूबर को विदेश रवाना हुए। वह यूरोप के सभी प्रमुख देशों का भ्रमण कर रहे हैं तथा पुस्तक-व्यवसाय से सम्बन्धित व्यक्तियों से प्रकाशन-व्यवसाय की विभिन्न समस्याओं पर विचार-विनिमय कर रहे हैं तथा भारतीय पुस्तक-प्रकाशन-व्यवसाय की स्थिति से अवगत कराएँगे।

* * * *
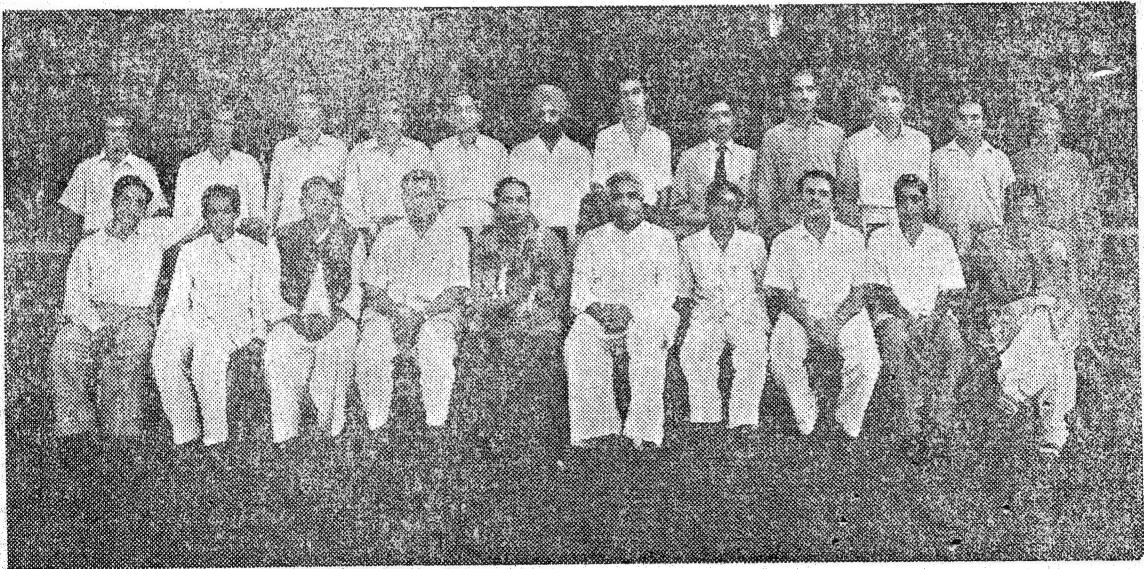
निबन्ध प्रतियोगिता के विषय

१. हमारी सच्ची मित्र पुस्तकें। (छात्रों के लिए) २००० शब्दों तक।

२. 'मानव जीवन में पुस्तकों का महत्त्व'। (सर्वसाधारण के लिए) ४००० शब्दों तक।

इसी अवसर पर एक 'स्मृति-पत्र' प्रकाशित किया जाएगा। इस समारोह के संयोजक हैं श्री प्रकाशचन्द्र जोशी, दत्तबन्धु प्रा० लिमिटेड, अजमेर।

* * * *

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की ओर से वर्तमान आर्थिक वर्ष (१९६१-६२) में एक हज़ार रुपये के छः ग्रन्थ-पुरस्कार उसके आगामी वार्षिकोत्सव के अवसर पर निम्नलिखित विषयों के श्रेष्ठ मौलिक हिन्दी-ग्रन्थों के लिए दिये जाएँगे।

इन छः पुरस्कारों में एक पुरस्कार अहिन्दी-भाषाभाषी हिन्दी-लेखकों के लिए होगा और शेष पाँच पुरस्कारों में से तीन बिहार के ग्रन्थकारों के लिए तथा दो पुरस्कार अखिल-भारतीय स्तर पर हिन्दी-लेखकों को दिये जाएँगे।

(१) अहिन्दी-भाषा-भाषी लेखकों के लिए पुरस्कार-विषय—हिन्दी मौलिक उपन्यास।

(२) बिहारी लेखकों के लिए पुरस्कार-विषय—(क) आदिवासी संस्कृति, (ख) शिकार, (ग) नीतिशास्त्र (Ethics)।

(३) अखिल भारतीय स्तर के पुरस्कार-विषय—(क) तन्त्र-विज्ञान और (ख) सैन्य-विज्ञान।

उपर्युक्त पुरस्कार-प्रतियोगिता के लिए जनवरी, १९५० ई० से दिसम्बर, १९६१ ई० तक की अवधि में प्रकाशित पुस्तकें ही स्वीकृत होंगी। पुरस्कार के लिए भेजी जाने वाली प्रत्येक पुस्तक की सात-सात प्रतियाँ परिषद्-कार्यालय में ५ जनवरी, १९६२ ई० तक अवश्य ही पहुँच जानी चाहिएं। पुरस्कार मिलने या न मिलने की दशा में पुस्तकें लौटाई नहीं जाएँगी। **प्रत्येक पुस्तक पर यह लिखा होना चाहिए कि वह किस विषय की प्रतियोगिता में भेजी गई। प्रत्येक पुस्तक के साथ एक स्पष्ट लिखित पत्रक संलग्न रहना चाहिए जिसमें पूरा विवरण अंकित हो—पुस्तक और प्रकाशक के नाम और पते, प्रकाशन-वर्ष, लेखक का वर्तमान पूरा पता, विषय आदि।**

परिषद्-नियमावली, संख्या ४ के अनुसार बिहार-सरकार की विशेष अनुमति के बिना इस प्रतियोगिता में बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के संचालक-मण्डल तथा सामान्य-समिति के सदस्य भाग नहीं ले सकेंगे।

रेलवे पार्सल से भेजी जाने वाली पुस्तकों के लिए पता—

(१) ईस्टर्न रेलवे : पटना जंक्शन और नॉर्थ ईस्टर्न रेलवे : महेन्द्रू घाट। डाक से भेजी जाने वाली पुस्तकों के लिए पता—

(२) संचालक, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना-६।

श्री धूत अध्यक्ष चुने गए

ता० ८-१०-६१ को इन्दौर पुस्तक-प्रकाशक एवं विक्रेता-संघ के सदस्यों की साधारण सभा की बैठक हुई। श्री गोकुलदास धूत (नवयुग साहित्य सदन) सर्वानुमति से दो वर्ष के लिए संघ के सभापति चुने गए। संघ की कार्य-कारिणी के सदस्यों का चुनाव किया गया।

ता० १४-१०-६१ को कार्य-समिति की बैठक संघ के निम्नलिखित पदाधिकारियों का चुनाव करने के लिए हुई। चुनाव सर्वानुमति से हुआ।

उप-सभापति—श्री बलवीरनारायणजी अग्रवाल (श्री इन्दौर बुकडिपो)

प्रधान मन्त्री—श्री चेतनदासजी भैया (भैया स्टोर्स)

सहायक मन्त्री—श्री बंसीलालजी मेड़तिया (कमल प्रकाशन)

कोषाध्यक्ष—श्री रामशरणजी अग्रवाल (इन्दौर बुक सेन्टर)।

* * * *

दिल्ली में उमेश प्रकाशन (५, नाथ मार्केट, नई सड़क) के नाम से हाल ही में नई प्रकाशन-संस्था की स्थापना हुई है। इसके भागीदार हैं श्री रमेश सन्त तथा श्री शिव सन्त। अब वे इस संस्था द्वारा स्वतन्त्र रूप से कार्य करेंगे। इन्होंने अपनी विस्तृत प्रकाशन-योजना बनाई है, ऐसा वे कहते हैं।

"हिन्दी साहित्य की प्रगति हेतु 'पुस्तक प्रसार केन्द्र' की स्थापना की गई है, जिसके माध्यम से पुस्तकों की बिक्री घर-घर जाकर की जाती है। जो पुस्तक-प्रकाशक अपने प्रकाशनों की बिक्री चाहते हैं वह सेल एण्ड रिटर्न पर हमें पुस्तकें भेजने की कृपा करें।

क्या हम स्कूल वाचनालय से अधिक-से-अधिक लाभ उठाते हैं

जे० डी० वैश्य

राजस्थान के डिप्टी डायरेक्टर ऑफ़ एजुकेशन महोदय का यह लेख विशेष दिलचस्पी से पढ़ा जाएगा।

यह सर्वमान्य सिद्धान्त है कि प्रत्येक शिक्षण-संस्था के अंदर वाचनालय एवं पुस्तकालय अवश्य होना चाहिए। यही नहीं, हम इसको मानकर चलते हैं कि वाचनालय एवं पुस्तकालय शिक्षण-संस्था के प्राण हैं। इसी दृष्टिकोण से प्रतिदिन और प्रतिवर्ष न केवल राजस्थान में वरन् भारत के प्रत्येक राज्य में शासन से, विशेषकर वित्त विभाग से, बहस करनी पड़ती है, लड़ाई करनी पड़ती है कि शिक्षण-संस्था को वाचनालय एवं पुस्तकालय को अधिक-से-अधिक आवर्तक और अनावर्तक अनुदान दिया जाए।

उद्देश्य की पूर्ति

प्रश्न यह उठता है कि क्या हमारे वाचनालय और पुस्तकालय, जो कि विभिन्न स्कूलों में हैं, उस उद्देश्य की पूर्ति करते हैं जिसके लिए उन पर प्रतिदिन बल दिया जाता है। वर्तमान परिस्थिति बड़ी शोचनीय मालूम पड़ती है। क्यों ?

एक ओर तो हम निरन्तर चिल्लाते हैं कि हमारे वाचनालय एवं पुस्तकालयों को अधिक-से-अधिक धन, सुविधा, कर्मचारी चाहिएँ और दूसरी ओर जो-कुछ साधन, जो-कुछ पुस्तकें और पत्र-पत्रिकाएँ हमारे पास हैं, हम उनका उपयोग नहीं करते। हम इस ओर ध्यान ही नहीं देते।

हमारे स्कूल वाचनालय

स्कूल का जो वाचनालय है वह एक सार्वजनिक वाचनालय से भिन्न है। सार्वजनिक वाचनालय भिन्न-भिन्न प्रकार के व्यक्तियों की आवश्यकता को पूरा करेगा, जबकि स्कूल के वाचनालय का क्षेत्र बहुत सीमित है। स्कूल का वाचनालय एक विशेष प्रकार के पाठकों के लिए है। इसके पाठक दो श्रेणी में विभाजित होते हैं—(१) छात्र और (२) अध्यापक।

प्रायः यह देखा जाता है कि जो पत्र-पत्रिकाएँ वाचनालय में आती हैं उनके चुनाव की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है। सबसे भयंकर भूल तो उस समय होती है जबकि हम इस बात को मानकर चलते हैं कि जो पत्र-पत्रिकाएँ पहले से आ रहे हैं, वे स्कूल में आते रहें क्योंकि उनके चुनाव का उत्तरदायित्व वर्तमान प्रधानाध्यापक से पहले किसी अन्य प्रधानाध्यापक के ऊपर रखा जा सकता है। अधिकांश स्कूलों में इनके बारे में कोई सोचता नहीं है, बल्कि साधारण दैनिक कार्यक्रम के अनुसार स्कूल का लेखक व वाचनालय-अध्यक्ष पत्र-पत्रिकाएँ मँगवाते रहते हैं या मँगवाना बन्द करते रहते हैं। इसका फल क्या होता है ? इसका फल यह होता है कि स्कूल में ऐसे-ऐसे पत्र आ जाते हैं जिनसे न तो छात्रों को लाभ पहुँचता है न अध्यापकों को। इसके कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं—

एक स्कूल में केवल ९वीं, १०वीं अथवा ९वीं, १०वीं, ११वीं कक्षाएँ हैं। वह स्कूल 'पराग', 'चन्दामामा', 'बालभारती' जैसे मासिक पत्र भी मँगाता है।

एक स्कूल के अन्दर १ से लेकर ११वीं तक की कक्षाएँ हैं, लेकिन कक्षा १ से लेकर ७-८ कक्षा तक के लायक कोई पत्र-पत्रिका नहीं।

किसी-किसी स्कूल में अध्यापकों के उपयोगी पत्र-पत्रिकाओं की भरमार रहती है और किसी स्कूल में एक भी ऐसी पत्र-पत्रिका नहीं होती।

स्कूल बेसिक स्कूल कहलाता है और भारत सरकार द्वारा प्रकाशित 'बुनियादी तालीम' नहीं आता।

स्कूल के अन्दर कृषि प्रमुख ऐच्छिक विषयों में से है और स्कूल के अन्दर भारत सरकार द्वारा प्रकाशित 'खेती-बारी', 'धरती के लाल' और 'फार्मिंग' पत्रिकाओं में से एक भी नहीं आती।

स्कूल के अन्दर विज्ञान क्लब चलता है और विज्ञान की उपयुक्त पत्र-पत्रिकाएँ स्कूल में नहीं। जो पत्रिकाएँ आती हैं वे ऐसी आती हैं जिनका उपयोग न छात्र करते हैं न अध्यापक; जैसे 'बंगलोर का करेण्ट साइंस', 'केलकटा का साइंस' एण्ड 'कलचर जनरल ऑफ दी कैमिकल सोसायटी' आदि।

इस समय काफ़ी पत्र-पत्रिकाएँ निकल रही हैं जो कि छात्रों और अध्यापकों को लाभ पहुँचा सकती हैं; जैसे, 'विज्ञान लोक', 'विज्ञान', 'इण्डस्ट्री', 'उद्यम' और 'पोपुलर साइंस'।

एक ओर स्कूल बालोपयोगी और अध्यापक-उपयोगी पत्र-पत्रिकाएँ नहीं मँगता है। कारण ? स्कूल के पास पैसा नहीं। एक ओर तो यह है और दूसरी ओर स्कूल के अन्दर 'इलस्ट्रेटेड वीकली', 'मॉडर्न रिव्यू', 'कलकटा रिव्यू', 'प्रबुद्ध भारत', 'कोमर्स', 'धर्मयुग, 'माया', 'कहानी', 'सरिता' आदि आते हैं। ऐसा क्यों हो रहा है ? हम पत्र-पत्रिकाओं का रुचि के अनुसार अच्छी तरह से अवलोकन और निरीक्षण नहीं करते। स्कूल के अन्दर कौन-कौनसी पत्र-पत्रिकाएँ आनी चाहिएँ, इसको स्कूल की आवश्यकता को देखते हुए स्कूल के पास कितना धन है, उसे विचारते हुए, तय करना होगा। जिस स्कूल में ५० पत्र-पत्रिकाएँ आती हैं उसकी सूची भिन्न होगी, उस स्कूल के मुकाबले जहाँ पर कि १० पत्र-पत्रिकाएँ आती हैं। कभी-कभी हम इस तर्क से काम लेते हैं कि यह पत्रिका अमुक स्कूल में आती है इसलिए इस स्कूल में भी मँगा ली जाए। यह तर्क न्यायसंगत नहीं है। मान लो कि एक स्कूल के अन्दर बहुत सी पत्र-पत्रिकाएँ आती हैं, जैसे 'धर्मयुग', 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान,' 'इलस्ट्रेटेड वीकली' और एक अन्य स्कूल है जिसमें केवल एक साप्ताहिक ही मँगाया जा सकता है। मेरी समझ में यदि वह स्कूल 'धर्मयुग' मँगाता है तो गलती करता है, क्योंकि 'धर्मयुग' और 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' इन दोनों में से यदि एक पत्र चुनना है तो सामग्री और उपयोगिता की दृष्टि से हमको 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' ही चुनना चाहिए। यदि कोई स्कूल दूसरे अच्छे पत्र न मँगाकर 'इलस्ट्रेटेड वीकली' मँगाता है तो यह उसकी भूल है। 'इलस्ट्रेटेड वीकली' अच्छा साप्ताहिक है, लेकिन हमारे सामने जो पाठक हैं वे हैं छात्र और अध्यापक। उनकी दृष्टि से क्या उसमें अच्छी सामग्री आती है ? प्रायः यह देखा जाता है कि न तो हमारे छात्र और न अध्यापक 'इलस्ट्रेटेड वीकली', 'मॉडर्न रिव्यू', 'कलकटा रिव्यू'-जैसे पत्र पढ़ते हैं और न इनमें रुचि लेते हैं। 'इलस्ट्रेटेड वीकली' केवल पन्ने उलटने, चित्र देखने और पहेली भरने के काम ही आता है।

यह सब क्यों होता है ? केवल इसीलिए कि कौन-कौन से पत्र-पत्रिकाएँ मँगानी चाहिएँ इसकी ओर हम इतना ध्यान नहीं देते जितना कि हमें देना चाहिए। यदि हम केवल यही सोच लें—क्योंकि हमने वे ही पत्र-पत्रिकाएँ मँगवाई हैं

जो कि विभाग द्वारा स्वीकृत हैं, इसलिए इनका मँगाना ठीक है, तो हम अपने स्कूल के वाचनालय की वर्तमान स्थिति में सुधार नहीं ला सकते। हमको केवल स्वीकृत सूची ही नहीं बल्कि दो चीजें और सामने रखनी पड़ेंगी। एक तो व्यय का बन्धन और दूसरा यह कि किस श्रेणी के और किन विषयों के तथा छात्र और अध्यापकों के लिए क्या-क्या पत्र-पत्रिकाएँ अधिकतम उपयोगी सिद्ध होंगी। केवल उपयोगी सिद्ध होने वाली पत्र-पत्रिकाओं से ही काम नहीं चलेगा, बल्कि कौन-कौनसी पत्र-पत्रिकाएँ अधिकतम उपयोगी होंगी इसकी ओर ध्यान देना होगा।

पत्र-पत्रिकाओं का मँगवाना

ऊपर कुछ बातें पत्र-पत्रिकाओं के चुनाव के बारे में बताई गई हैं। इसके बाद चयन की हुई पत्र-पत्रिकाओं के मँगवाने का प्रश्न उठता है। इस सम्बन्ध में सरकारी, विभागीय, शाला-निरीक्षक अथवा शिक्षा-उपाध्यक्ष की भिन्न-भिन्न आज्ञाओं को ध्यान में रखकर कार्य किया जाए। इस सम्बन्ध में कुछ मोटे सुझाव नीचे दिए जा रहे हैं—

(१) जो पत्र-पत्रिकाएँ स्थानीय एजेन्ट से मिल सकती हैं वे उससे खरीदी जाएँ या उसके मारफत।

(२) अन्य पत्र-पत्रिकाओं के लिए यदि ऐसा हो सके कि एक ही एजेन्ट द्वारा मँगवाई जा सकें तो इसमें अलग-अलग रुपये भेजने में जो परेशानी व अतिरिक्त व्यय होता है वह सब बच जाएगा। इस सुविधा को छोटे स्थानों तक पहुँचाने के लिए यदि किसी फर्म के नाम इसका रेट कॉन्ट्रेक्ट तय हुआ है तो उससे पूरा लाभ उठाया जाए। लेकिन एक बात का ध्यान रखना बहुत आवश्यक है और वह यह है कि रेट कॉन्ट्रेक्ट वाली फर्म को चन्दा भेजने के साथ यह स्पष्ट रूप से लिखना चाहिए कि कितने दिनों का चन्दा भेजा जा रहा है और चन्दा किस अंक से किस अंक तक का भेजा गया है। इसके अतिरिक्त रेट कन्ट्रेक्टर को यह जानकारी देना भी नितान्त आवश्यक है कि यदि वह पत्रिका पहले से आ रही है तो ग्राहक-संख्या क्या है और कब तक का चन्दा पहले भेजा गया था। यदि वह पत्रिका नये सिरे से मँगाई जा रही है तो ऐसा लिख देना चाहिए कि पहले यह पत्रिका नहीं मँगाई जाती थी।

(३) कभी-कभी सरकारी प्रकाशनों के बारे में उनका चन्दा भेजने के बारे में विशेष निर्देश होते हैं। इनका ध्यान रखा जाए और उसके अनुसार चन्दा भेजा जाए।

उदाहरणार्थ—'राजपत्र' का चन्दा मनीआर्डर से नहीं भेजना है। राजकीय आदेशानुसार ही कार्यवाही करनी चाहिए। 'विभागीय गजट' और 'नया शिक्षक' इनका चन्दा भी विभागीय आदेशानुसार उपयुक्त सीगे में चालान से धन राजकोष में जमा कराकर भेजा जाए।

(४) कभी राज्य सरकार भी कुछ पत्र-पत्रिकाएँ भिजवाने का प्रबन्ध अपने हाथ में ले लेती है, जैसे कि दो वर्ष पूर्व राजस्थान के अन्दर भारत सरकार के पब्लिकेशन्स डिवीजन मिनिस्ट्री ऑफ़ इन्फॉरमेशन एण्ड ब्रॉडकास्टिंग द्वारा प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं के भिजवाने की व्यवस्था संचालक जन-सम्पर्क विभाग, शिक्षा विभाग की थी और संस्थाओं को ऐसे आदेश दिये गए थे कि उनको पब्लिकेशन डिवीजन द्वारा प्रकाशित जो भी पत्र-पत्रिकाएँ मँगवानी हों अपने आर्डर संचालक जन-सम्पर्क विभाग को दें। अब इस व्यवस्था का रूप बदल दिया है और संस्थाओं को यह

स्वतन्त्रता नहीं है कि पब्लिकेशन डिवीजन द्वारा प्रकाशित पत्र-पत्रिकाएँ सीधे मँगवाएँ अथवा अधिकृत एजेंट द्वारा ।

इस प्रकार यह निश्चय करने के बाद कि अमुक पत्र-पत्रिकाएँ इस संस्था से मँगानी हैं और अमुक पत्र-पत्रिका उस संस्था से व फर्म से या प्रकाशक से मँगानी है, उसका आॅर्डर दे देना चाहिए। आॅर्डर की आॅफ़िस कॉपी पर इस बात का संकेत अवश्य होना चाहिए कि यह व्यय छात्र-फण्ड से लिया जाएगा अथवा सरकारी बजट से ।

पत्र-पत्रिकाओं के सम्बन्ध में यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि स्थानीय एजेंट के अतिरिक्त अन्य फर्म, एजेंट अथवा प्रकाशक को चन्दा पेशगी भेजना पड़ेगा। कभी-कभी संस्था-प्रधान इस उलझन में पड़ जाते हैं कि बिना अंक आये चन्दा कैसे भेजा जाए। अन्य सामग्री पुस्तकें आदि के लिए यह बन्धन अवश्य मानना पड़ेगा कि उन वस्तुओं के आने पर ही बिल का पेमेण्ट किया जाए, लेकिन पत्र-पत्रिकाओं के बारे में ऐसा नहीं हो सकता। प्रायः सभी पत्र-पत्रिकाओं का नियम है कि उनको चन्दा पेशगी भेजा जाए। इसलिए पत्र-पत्रिकाओं को पेशगी चन्दा भेजने में किसी भी हिसाबी नियम की अवहेलना नहीं होती। बिल या रसीद के ऊपर ऐसा प्रमाण-पत्र दे दिया जाए कि यह पत्रिका है और अमुक अंक से अमुक अंक तक का चन्दा पेशगी भेजा गया है।

पत्रिका रजिस्टर

प्रत्येक शिक्षण-संस्था में पत्रिका रजिस्टर रखना अति आवश्यक है। इस समय बहुत सी संस्थाएँ पत्रिका रजिस्टर तो रखती हैं, लेकिन उसके अन्दर सारी सूचनाएँ व्यवस्थित रूप से नहीं रखतीं। जिस समय किसी पत्रिका के लिए आॅर्डर दिया जाए अथवा चन्दा भेजा जाए, तभी से उसी पत्रिका के सम्बन्ध में विभिन्न सूचनाएँ रजिस्टर में अंकित करनी आरम्भ कर दी जाएँ।

पत्र-पत्रिकाओं के नाम, दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, त्रैमासिक आदि जिस प्रकार से प्रकाशित होती हैं, प्रकाशक का पूरा पता, वार्षिक चन्दा, पत्रिका का आॅर्डर किसको दिया गया है, स्कूल के पत्रांक-दिनांक का विवरण जिनके द्वारा आॅर्डर दिया गया हो, किस अंक से किस अंक तक के लिए आॅर्डर दिया गया। यदि यह पत्रिका स्कूल के अन्दर

पहले आती थी तो उसकी पुरानी ग्राहक-संख्या व उसका चन्दा किस प्रकार भेजा गया व कब से कब तक का। इसके अतिरिक्त यह भी लिखा जाए कि चन्दा कब व किस प्रकार से किसको भेजा गया। ये सब बात पत्रिका के आने से पहले ही रजिस्टर में अंकित कर लेनी चाहिएँ।

नये पत्र आने चालू होने पर उनकी ग्राहक-संख्या भी इसमें लिख लेनी चाहिए।

पत्र-पत्रिका के आने पर क्या करना चाहिए ?

पत्र-पत्रिकाएँ प्रत्येक स्कूल में दो प्रकार से आएँगी—(१) डाक से अथवा (२) स्थानीय एजेंट का कर्मचारी स्कूल में दे जाएगा।

डाक से आने वाली पत्र-पत्रिकाएँ—जो पत्र-पत्रिकाएँ डाक से आती हैं उनको ध्यान से खोला जाए। खोलते ही उनका ग्राहक नं० पत्रिका के ऊपर अंकित कर दिया जाए और उसके नीचे रेखा खींचकर आने की तारीख दी जाए।

स्थानीय एजेंट द्वारा प्राप्त पत्र-पत्रिका—जो पत्र-पत्रिकाएँ स्थानीय एजेंट द्वारा प्राप्त होंगी उन पर ग्राहक सं० लिखने की आवश्यकता नहीं होती है, हाँ उन पर आने की तारीख डाल दी जाए।

इसके पश्चात् पत्र-पत्रिकाओं पर स्कूल की मोहर लगाई जाए। स्कूल की मोहर कहाँ लगाई जाए ? कभी इसके बारे में स्कूल वाले बिलकुल ध्यान ही नहीं देते और चपरासी जहाँ भी ठीक समझता है वहीं पर मोहर लगा देता है।

पत्र-पत्रिका पर मोहर कहाँ लगानी चाहिए ?

मोहर लगाने का क्या उद्देश्य है ? हम मोहर इसलिए लगाते हैं कि पत्र-पत्रिका को देखते ही मालूम हो जाए कि यह अमुक संस्था के वाचनालय की है। इसलिए मोहर ऐसे स्थान पर लगाना आवश्यक है कि इस उद्देश्य की पूर्ति भले प्रकार से हो जाए।

पत्र-पत्रिका के कवर पर, अन्दर जहाँ से पत्रिका के पढ़ने की सामग्री आरम्भ होती है और अन्तिम पृष्ठ पर जिस पर कि पढ़ने की सामग्री समाप्त होती हो उस स्थान पर मोहर लगानी चाहिए। इसके अतिरिक्त जिन पत्र-पत्रिकाओं में विभिन्न प्रतियोगिता के कूपन हों, उन सब पर भी मोहर लगानी चाहिए। यदि पत्रिका में कुछ ऐसे चित्र हों जिनके पत्रिका से फाड़े जाने की सम्भावना हो तो उन पर भी दोनों ओर मोहर लगानी चाहिए।

पत्रिका रजिस्टर

मोहर लगाने के बाद पत्रिका को पत्रिका-रजिस्टर में दर्ज कर लेना चाहिए। प्रत्येक पत्रिका का अलग-अलग खाता अलग-अलग पन्ने पर अथवा एक लाइन में एक पत्रिका का खाता खोलना चाहिए। उस पत्रिका के खाते में उस अंक की तारीख अथवा माह आदि लिखकर वह तारीख लगा देनी चाहिए जिस दिन की वह पत्रिका स्कूल में आई हो।

वाचनालय की मेज़ पर पत्रिका

इतना किये जाने के बाद पत्र-पत्रिका को वाचनालय की मेज़ पर आने देना चाहिए। पुरानी पत्रिकाओं को हटाकर नई पत्रिका लगा देनी चाहिए।

पत्रिकाओं के कवर बनवा लेने चाहिएँ। कवर का आकार उस पत्रिका के ऊपर निर्भर होगा जो उसमें रखनी है। कवर के अन्दर इतनी गुँजाइश होनी चाहिए कि उसमें उस पत्रिका के मोटे अंक भी आसानी से लग सकें। आजकल प्लास्टिक के कवर भी आने लगे हैं। प्लास्टिक के कवर कितनी ही प्रकार के आते हैं। खरीदते समय इस बात का ध्यान रखा जाए कि पतले प्लास्टिक-कवर अच्छे काम नहीं देते हैं, मोटे प्लास्टिक-कवर अच्छे रहते हैं, टिकाऊ होते हैं और सुन्दर प्रतीत होते हैं।

यदि स्कूल के अन्दर गत्ते का काम होता है तो बहुत आसानी से अध्यापक और छात्र मिलकर पत्र-पत्रिकाओं के कवर तैयार कर सकते हैं।

पत्र-पत्रिकाओं को मेज पर सुन्दरता से सजाना चाहिए। यदि मेज पर दोनों ओर बैठते हों और बेंच व कुरसियाँ पड़ी हों तो पत्र-पत्रिका दोनों ओर लगानी चाहिएँ, उनको इस प्रकार से रखना चाहिए कि कुछ पत्रिकाएँ एक तरफ के पाठकों के सामने रहें और कुछ दूसरी तरफ के पाठकों की ओर।

सब पत्र-पत्रिकाएँ मेज पर तरतीब से जमानी चाहिएँ। यदि दैनिक समाचार-पत्र के प्रदर्शन के लिए ऊँचे स्टेण्ड हों तो और भी अच्छा है।

संस्था के प्रधान का कर्तव्य है कि वह इस बात को समय-समय पर देखता रहे कि—

(१) वाचनालय के अन्दर पत्र-पत्रिकाएँ जिस क्रम से रखी जाएँ उनका क्रम व ढंग देखने में अच्छा मालूम हो और पढ़ने वालों की सुविधा के अनुकूल हो।

(२) पत्र-पत्रिकाएँ स्कूल में आते ही वाचनालय में रखी जाएँ।

(३) कवर के ऊपर उस पत्रिका का नाम उस पत्रिका के पुराने अंक से काटकर ऐसा चिपकाया जाए कि सुन्दर प्रतीत हो। नाम सब कवरों पर हो।

पुरानी पत्र-पत्रिकाएँ

जिस समय स्कूल के अन्दर नई पत्र-पत्रिकाएँ आती हैं तो पुरानी पत्रिकाओं का क्या करना चाहिए ?

आजकल प्रायः प्रत्येक स्कूल में पत्र-पत्रिकाओं और पुस्तकों की संख्या बहुत जल्दी-जल्दी बढ़ती जा रही है। कुछ स्कूलों को यह दिक्कत मालूम होती है कि इतने सारे पत्र-पत्रिकाओं को कैसे रखा जाए और कहाँ रखा जाए ? इस समस्या को भी सुलझाना बहुत आवश्यक है।

इसके अतिरिक्त एक बात और भी है जिसकी ओर ध्यान देना आवश्यक है। वह यह है कि भारतवर्ष के अन्दर पत्र-पत्रिकाएँ अपने पैसे से खरीदकर पढ़ने की प्रथा बहुत कम पाई जाती है। बहुत कम व्यक्ति ऐसे मिलेंगे जो पत्र-पत्रिकाओं में पैसा खर्च करने का चाव रखते हों। स्कूल के अन्दर जहाँ हम बालकों को तरह-तरह की बातें बताते हैं वहाँ यह भी आवश्यक है कि उनके अन्दर पढ़ने का चाव ही नहीं बल्कि पुस्तकें और पत्रिकाओं के खरीदने का भी चाव पैदा करें।

इस कमी की पूर्ति करने के लिए एक सरल-सा सुझाव नीचे दिया जा रहा है—वह प्रणाली जोकि इस सुझाव के अन्तर्गत बतलाई गई है, हमारी कई समस्याओं को हल कर देगी। स्कूल के अन्दर जो अलमारी और स्थान की कमी पुराने पत्र-पत्रिकाओं के रखने की आती है, हल हो जाएगी। पत्र-पत्रिकाओं को बिलकुल रद्दी बनाकर बेचने से जो धन प्राप्त होता है उससे शायद कुछ अधिक धन स्कूल को मिल सकेगा। बालकों के अन्दर उत्तरदायित्व की भावना बढ़ेगी, उनके अन्दर काम करने की उमंग पैदा होगी, बच्चों के अन्दर पत्र-पत्रिकाओं में पैसा व्यय करने की आदत पड़ेगी। वे पत्र-पत्रिकाएँ, जो कि स्कूल के अन्दर अलमारी में बन्द पड़ी रहती हैं या कमरे में सड़ती रहती हैं वे सब उन छात्रों के भाई-बहनों अथवा कुटुम्बी जनों के हाथ में पहुँच सकेंगी और वे उन्हें बड़े चाव से पढ़ेंगे और एक-दूसरे को पढ़कर सुनाएँगे।

एक सुलभ परन्तु बहुत उपयोगी सुझाव

पत्र-पत्रिका के स्कूल के अन्दर सड़ने के बजाय यह अच्छा है कि हम उनको छात्रों के हाथ में पहुँचने दें। उन छात्रों के द्वारा वे पत्र-पत्रिकाएँ उनके भाई-बहन व अन्य कुटुम्बी जन तक पहुँच सकेंगी। इसको किस प्रकार सम्पन्न करना होगा ?

संस्था-प्रधान को सत्र के आरम्भ होते ही जहाँ इस बात का निश्चय करना है कि अमुक-अमुक पत्र-पत्रिकाएँ स्कूल में मँगवानी हैं, यह भी तय करना होगा कि किस पत्र-पत्रिका की जिल्द बँधवाकर स्कूल में रखनी है, किस पत्र-पत्रिका को छात्रों को बेचना है और किस पत्र-पत्रिका को रद्दी के रूप में छः माह के बाद अथवा एक वर्ष के बाद नीलाम करना या बेचना है। स्कूल चाहे जितना बड़ा हो, स्कूल की इमारत में चाहे जितनी गुंजाइश हो, कोई भी स्कूल वाचनालय की सब पत्र-पत्रिकाओं की जिल्द बँधवाकर अधिक समय तक इकट्ठा नहीं रख सकता है। अब प्रश्न यही है कि हम इन पत्र-पत्रिकाओं को जोड़-जोड़कर एक दिन रद्दी के रूप में बेचें अथवा नई पत्रिका के आने पर पुरानी पत्रिका को छात्र को ले जाने दें।

मेरा अनुभव यह है कि यदि हम कुछ पत्रिकाएँ ऐसी चुन लें जिनको छात्रों को नीलाम कर दें, तो यह हर प्रकार से अधिक हितकर सिद्ध होगा। नीलामी का मूल्य उस पत्रिका के एक अंक अथवा एक वर्ष के अंकों की रद्दी के मूल्य के लगभग हो तो संस्था को इस सौदे में कोई हानि नहीं होगी। पत्रिका को खरीदने का अवसर केवल छात्रों को ही दिया जाए, अध्यापकों अथवा संस्था-प्रधान को भी नहीं। मान लो एक संस्था के अन्दर यह तय कर लिया जाए कि 'चन्दामामा', 'बालसखा', 'विज्ञान लोक', 'धर्मयुग' छात्रों को नीलाम किये जाएँ तो क्या करना होगा ? स्कूल के बच्चों को इकट्ठा करके उनकी बोली लगाई जाए और साधारण नीलामी के सिद्धान्त पर जो ज़्यादा बोली लगाए उसके नाम पत्रिका छोड़ी जाए। एक

दूसरा तरीका भी हो सकता है, वह यह कि छात्रों की एक सब-कमेटी एक अध्यापक की सहायता द्वारा बनाकर तय कर ले कि अमुक पत्र को इतने रुपये मिलने पर बेच दिया जाएगा और फिर इसके बाद में जो-जो छात्र उस पत्र को खरीदना चाहते हैं उन सबके नाम लॉटरी डाली जाए, फिर जिसका नाम आ जाए उसको पत्रिका बेच दी जाए।

नीलाम करते समय अथवा बेचते समय एक सावधानी बरतने की आवश्यकता है। हो सकता है कि वाचनालय की मेज़ से उस पत्रिका के कुछ अंक चले जाएँ, इसलिए इस बात को स्पष्ट कर देना चाहिए कि यदि कुछ अंक वाचनालय की मेज़ से उठ जाएँगे तो खरीदार को जितने भी अंक मिले उनसे संतोष करना होगा।

जिस समय नया अंक आए तो खरीदार छात्र को स्कूल-कार्यालय से उस पत्रिका का पुराना अंक दे दिया जाए।

मान लो एक छात्र ने 'चन्दामामा' वर्ष-भर के लिए आठ आने में खरीदा है तो इसका प्रभाव उस पर या उसके भाई-बहनों अथवा कुटुम्बी जन पर क्या पड़ेगा? उसके पढ़ने के लिए उसके भाई-बहन अथवा कुटम्बीजन में एक चाव-सा रहेगा कि स्कूल से वह बच्चा कितने सस्ते मूल्य पर 'चन्दामामा' लाता है। एक अंक के मूल्य में १२ अंक आते हैं तो उस छात्र में पढ़ने का चाव बढ़ेगा, वह अपने आसपास सब बालकों को दिखलाएगा और कहेगा कि वह स्कूल से प्रतिमास 'चन्दामामा' लाता है। इस प्रकार उस छात्र में पैसा खर्च कर पत्र-पत्रिका पढ़ने की भावना उठेगी और वह पत्रिका कितने ही बालक-बालिकाओं व अन्य व्यक्तियों के पढ़ने के उपयोग में आएगी। इधर स्कूल में रद्दी के मुकाबले अधिक मूल्य प्राप्त होगा। जो बालक 'चन्दामामा' का खरीदार बन जाता है वह दिन-प्रतिदिन इस बात का ख़याल रखेगा कि उसका 'चन्दामामा' स्कूल से उठाकर कोई न ले जाए। इस प्रकार यदि स्कूल इस नीलामी की प्रणाली को अपनाता है तो छात्रों का भला होता है। समाज के अन्दर पत्र-पत्रिकाएँ पढ़ने का प्रचार होगा और स्कूल के सामने जो पत्र-पत्रिकाओं को रखने की समस्या है वह भी हल हो जाएगी।

उच्च-माध्यमिक शालाएँ, उच्चतर माध्यमिक शालाएँ,

सरकार के जमाने में एक अस्पताल के वातावरण का चित्रण है। यह उपन्यास फ़ासिस्टी शासन के विरुद्ध स्लोवाक देशभक्तों के गौरवशाली संघर्ष की कथा कहता है।

फ़िल्में

फ़िल्मों में सबसे अधिक मत प्राप्त हुए 'एक सौ पाँच फीसदी बहानेबाज़ी' को। इसके निर्देशक हैं व्लादीमिर चेख। यह उस तरह की फ़िल्म है जिसे 'क्राइम फ़िल्म' कहा जाता है। अपराधी को पकड़ने की कथा है और इतनी रहस्यमय है कि दर्शक साँस रोके रह जाता है। निर्देशन और अभिनय दोनों ही उच्च स्तर के हैं।

निर्देशक कारेल काचियाना की फ़िल्म 'सुमावा का राजा' को दूसरे नम्बर पर मत प्राप्त हुए। यह फ़िल्म अभी ही प्रदर्शित हुई थी और निश्चय ही अनेक पाठक उसको देख भी न सके होंगे। पाठकों ने लिखा कि वे इस फ़िल्म में चित्रित दुर्गम सुमावा पर्वत के जीवन की यथार्थ पृष्ठभूमि से अत्यन्त प्रभावित हुए। इस क्षेत्र में सीमान्त पहरुओं का जीवन कितना कठिन और रोमांचक है और वहाँ रहने के लिए कितना आत्मसंयम और अनुशासन आवश्यक है, यह देखकर दर्शक मुग्ध हुए बिना नहीं रहता।

टेलीविज़न कार्यक्रम

टेलीविज़न कार्यक्रमों में सबसे अधिक मत प्राप्त हुए 'दस उत्तर दीजिए' नामक कार्यक्रम को। इस कार्यक्रम में साधारण दर्शकों को टेलीविज़न कैमरे के सामने लाया जाता है और विज्ञान, कला, साहित्य, जीवन आदि विषयों पर दस प्रश्न पूछे जाते हैं। यह कार्यक्रम जनसाधारण को अपना सामान्य ज्ञान बढ़ाने की प्रेरणा देता है।

चेकोस्लोवाकिया के युवकों की पसन्द को देखकर क्या निष्कर्ष निकलता है?—यही कि वे दुस्साहसिक कार्यों की सराहना करते हैं, वीरता को आदर्श मानते हैं और न्याय की उदात्त भावनाओं से प्रेरित होते हैं। और क्या दुनिया-भर में युवकों की यही पसन्द नहीं है?

उपन्यास

क्षितिज के आगे गुजराती भाषा के प्रख्यात उपन्यासकार श्री रमणलाल बसन्तलाल देसाई का ऐतिहासिक उपन्यास है। इस उपन्यास में लेखक ने उस काल के कथानक को अपनी कल्पना का आश्रय बनाया है जबकि देश में 'आर्य संस्कृति' और 'नाग संस्कृति' दोनों साथ-साथ विकसित और परिपुष्ट हो रही थीं और आर्य संस्कृति ने सुसंगठित राजतन्त्रों का रूप धारण कर लिया था। श्री देसाई के अन्य उपन्यासों की भाँति यह उपन्यास भी हिन्दी के पाठकों का पर्याप्त मनोरंजन करेगा ऐसी पूर्ण आशा है। क्राउन साइज़ के २६८ पृष्ठ के इस सजिल्द उपन्यास का प्रकाशन **वोरा एण्ड कम्पनी, बम्बई** ने किया है और यह पाँच रुपये में मिल सकता है।

* * *

रूपमती भी **वोरा एण्ड कम्पनी, बम्बई** द्वारा प्रकाशित श्री जगदीशकुमार 'निर्मल' का एक ऐतिहासिक उपन्यास है। इसमें लेखक ने महा मालव की सुविख्यात रानी रूपमती के अद्वितीय प्रणय की कथा अंकित की है। इस उपन्यास का समर्पण पद्मभूषण पं० सूर्यनारायण व्यास को किया गया है और इसके लिए श्री वृन्दावनलाल वर्मा तथा श्री वाचस्पति पाठक ने आशीर्वाद प्रदान किये हैं। श्री वृन्दावनलाल वर्मा के शब्दों में "रूपमती और बाजबहादुर के प्रबन्ध में इतिहास और परम्परा में जो आख्यान हैं श्री निर्मल ने उनका मेल सुन्दरता के साथ किया है।" क्राउन साइज़ के २६८ पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास भी पाँच रुपये में प्राप्य है।

* * *

आशीर्वाद : सिन्धी के प्रख्यात कथाकार और उपन्यासकार श्री शेवक भोजराज का एक सामाजिक उपन्यास है। इस उपन्यास की प्रस्तावना आचार्य कालेलकर ने लिखी है। इस उपन्यास में लेखक ने छोटे बच्चों के बाल-मानस से लेकर युवकों तथा युवतियों के प्रेम, निष्ठा, सेवा, त्याग तथा बलिदान आदि भावनाओं का सुन्दर विकास किया है। इस उपन्यास की यह विशेषता है कि इसकी आधारभूमि श्रीमती एनी बेसेन्ट के होम-रूल आन्दोलन से लेकर गांधीजी के नमक-सत्याग्रह तक रखी गई है। यह उपन्यास सिन्धी भाषा में सन् १९३२ में लिखा गया था, जब कि इसके लेखक कराची की डिस्ट्रिक्ट जेल में बन्द थे। क्राउन साइज़ के ८४ पृष्ठ का यह छोटा-सा उपन्यास भी **वोरा एण्ड कम्पनी, बम्बई** ने प्रकाशित किया है और एक रुपया पच्चीस नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

चिट्ठीरसैन : नई पीढ़ी के प्रख्यात कथाकार श्री शैलेश मटियानी का नवीनतम उपन्यास है। इसमें उपन्यासकार ने कुमायूँ-अंचल में प्रचलित लोक-कथाओं के आधार पर ऐसी कुछ कहानियों का सृजन किया है, जिनसे पाठकों का मनोरंजन तो होगा ही, साथ ही वे लेखक के कथा-कौशल की प्रशंसा किये बिना न रहेंगे। इस उपन्यास का प्रणयन लेखक ने अपनी 'पोस्टमैन' नामक अत्यन्त ख्याति-प्राप्त कहानी के आधार पर किया है। लेखक के पहले उपन्यासों की भाँति यह उपन्यास भी अत्यन्त लोकप्रिय होगा, ऐसी आशा है। क्राउन साइज़ के २४८ पृष्ठों का यह सजिल्द उपन्यास **आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली** से प्रकाशित हुआ है और ४ रुपये ५० न० पै० में उपलब्ध है।

* * *

राजकमल पॉकेट बुक्स के अन्तर्गत इन्हीं दिनों जो चार उपन्यास प्रकाशित हुए हैं उनके नाम हैं 'सागर, लहरें और मनुष्य', 'पचपन खम्भे लाल दीवारें', 'डाक बँगला' तथा 'प्लेन'। 'सागर, लहरें और मनुष्य' श्री उदयशंकर भट्ट का प्रख्यात उपन्यास है। यह उस उपन्यास का पॉकेट-संस्करण है। इसमें उपन्यासकार ने तूफानों में उमड़ते, समुद्र की लहरों में साँस लेते ऐसे मनुष्यों की कहानी कही है, जो घोंघों, मछलियों और बेशुमार जन्तुओं की तरह अपना जीवन

जीते हैं। पॉकेट साइज़ के ३१४ पृष्ठ का यह उपन्यास केवल दो रुपये में प्राप्य है।

*   *   *

पचपन खम्भे, लाल दीवारें उषा प्रियंवदा का उपन्यास है। इसमें लेखिका ने लड़कियों के होस्टल की एक वार्डन का चरित्र अंकित किया है। सब ओर यह चर्चा थी कि नील उससे उम्र में छोटा है, फिर भी वह उसके पास इतना क्यों आता है? वह नील के साथ अपने कमरे में घण्टों तक क्यों रहती है, इसका रहस्य जानने के लिए इस उपन्यास को अवश्य ही पढ़ें। लेखिका ने इस रहस्य का उद्‌घाटन अत्यन्त सफल रूप में किया है। पॉकेट साइज़ के १३८ पृष्ठ और मूल्य एक रुपया।

*   *   *

डाक बँगला श्री कमलेश्वर का नया छोटा-सा उपन्यास है। इस उपन्यास में लेखक ने इस समस्या को पाठकों के सामने रखा कि हर क्वारी माँ की कोख से हमारे समाज के प्यार-भरे पापों ने जबरदस्ती सन्तानें पैदा की हैं और उन सन्तानों को हम लोगों ने पैगम्बर का दर्जा दिया है।

इस उपन्यास की नायिका इरा से उसकी कहानी सुनिये और देखिए हमारे समाज में औरतें पुरुष-समाज से कैसी-कैसी लांछनाएँ भोग रही हैं। लेखक के मत में हमारे इस समाज में 'हर आदमी कुछ करने आता है और हर औरत कुछ भोगने आती है।' इसका रहस्य जानने के लिए इस उपन्यास को अवश्य ही पढ़ें। पॉकेट साइज़ के १२० पृष्ठ का यह उपन्यास एक रुपये में प्राप्य है।

*   *   *

प्लेग में इसके लेखक श्री आल्बेयर कामू ने एक ऐसे डॉक्टर के साहस की कहानी अंकित की है, जो जान पर खेलकर प्लेग से लड़ा, और जिसने शहर छोड़कर जाने वाले एक पत्रकार हैम्बर्ट को अपने प्रभाव से रोका। भय, आतंक, मृत्यु और बरबादी के बीच मानव के साहस की मार्मिक कहानी पाठक इस उपन्यास में पढ़ सकते हैं। इस ख्याति-प्राप्त विदेशी उपन्यास का हिन्दी अनुवाद श्री शिवदानसिंह चौहान और विजय चौहान ने किया है। अनुवाद अत्यन्त सफल और सजीव हुआ है। कथा का प्रवाह बराबर बना रहता है और पाठक यह भी नहीं समझ पाता कि वह अनुवाद पढ़ रहा है। यही इसकी सफलता का प्रमाण है। पॉकेट साइज़ के ३३६ पृष्ठ का यह उपन्यास दो रुपये में मिलता है।

*   *   *

पानी के प्राचीर : हिन्दी के लब्ध-प्रतिष्ठ कवि और आलोचक श्री रामदरश मिश्र का यह उपन्यास 'राप्ती' और 'गोरी' नदियों से घिरे ज़िला गोरखपुर के एक ऐसे भू-भाग की कहानी है जहाँ केवल भूख, बेकारी, विवशता, अभाव और संघर्ष-ही-संघर्ष है। घटना-स्थल 'पांडेपुरवा' (कल्पित गाँव) की कहानी न सिर्फ उसकी अपनी कहानी है वरन् उसके माध्यम से वह सारे-का-सारा उपेक्षित भू-भाग बोलता है। इस आशा और विश्वास के साथ उपन्यास स्वतन्त्रता-प्राप्ति के साथ-साथ समाप्त होता है कि अब ये पानी के प्राचीर टूटेंगे, नये सपने खिलेंगे और नयी रोशनी आयेगी। भाषा सरल और प्रवाहमयी है। **हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी** द्वारा प्रकाशित यह डिमाई साइज़ के ३१४ पृष्ठ का सजिल्द उपन्यास ५ रुपये में प्राप्य है।

*   *   *

नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी के कुछ अलभ्य ग्रन्थ

जिनकी अत्यन्त सीमित संख्या उपलब्ध है, संस्थाओं और पुस्तकालयों के लिए संरक्षणीय हैं

पृथ्वीराज रासो : सम्पादक श्री श्यामसुन्दरदास, मूल्य प्रति सं० २·७५
पूरी पुस्तक २२ संख्याओं में प्रकाशित हुई है। इस समय इनमें से सं० २, ३, ५, ६, ८ और ९ अप्राप्य हैं।

हिन्दी शब्दसागर : सम्पादक श्री श्यामसुन्दरदास। हिन्दी का सबसे बड़ा कोश ८ खण्डों में प्रकाशित हुआ है। संप्रति खण्ड १, २, ५ प्राप्य हैं। दाम प्राप्य खण्डों का ३३·००।

संक्षिप्त हिन्दी शब्दसागर : सम्पादक श्री रामचन्द्र वर्मा, मूल्य १८·००। उक्त बृहत् हिन्दी शब्दसागर के संक्षिप्त संस्करण की छठी आवृत्ति है जो बिलकुल अद्यतन रूप में प्रकाशित की गई है।

श्री सम्पूर्णानंद अभिनंदन ग्रन्थ : सम्पादक आचार्य नरेन्द्रदेव। श्री कृष्णदेवप्रसाद गौड़, मूल्य १५·००। विविध विषयों पर अधिकारी विद्वानों के चुने लेखों का ऐसा संग्रह अत्यन्त दुर्लभ है।

हीरक जयंती ग्रन्थ : सम्पादक डॉ० श्रीकृष्णलाल व श्री करुणापति त्रिपाठी, मूल्य १२·५०, नागरी प्रचारिणी सभा के हीरक जयंती अवसर पर यह बहुमूल्य ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है। इसमें विविध विषयों पर गवेषणात्मक लेखों का सम्पादन हुआ हैं। साथ ही भारत की विविध भाषाओं और साहित्यिक विगत वर्षों का सिंहावलोकन भी दिया गया है।

अर्द्धशती इतिहास : सम्पादक श्री वेदव्रत शास्त्री, मूल्य २·००।

मुगल दरबार : ४ भागों में। अनुवादक श्री ब्रजरत्नदास, मूल्य २२·००। मुगल दरबार के प्रधान सामंतों और प्रमुख व्यक्तियों का ऐतिहासिक विवेचन है।

अकबरी दरबार : ३ भागों में। अनुवादक श्री रामचन्द्र वर्मा, मूल्य १२·००। आइने-अकबरी का यह हिन्दी अनुवाद है। इसमें अकबर बादशाह के दरबारियों का जीवनचरित दिया हुआ है।

बीसलदेव रासो : सम्पादक श्री सत्यजीवन वर्मा, मूल्य २·५०। इसमें बीसलदेव (विग्रहराज चतुर्थ) के जीवन की मुख्य घटनाओं और युद्धों का वर्णन है।

बांकीदास ग्रन्थावली : तीन भागों में, सम्पादक रामनारायण दूगड़, मूल्य प्रति भाग १·५०। डिंगल भाषा के महाकवि बांकीदासजी की समस्त कृतियों का संग्रह है। पाद-टिप्पणी और विस्तृत भूमिका भी दी गई है।

ब्रजनिधि ग्रन्थावली : सम्पादक पुरोहित हरिनारायण शर्मा, मूल्य ३·७५।

शिखर वंशोत्पत्ति : सम्पादक पुरोहित हरिनारायण शर्मा, मूल्य १·००।
कविवर गोपालजी द्वारा रचित सीकर राज्य का छन्दोबद्ध इतिहास है।

रघुनाथरूपक गीतारी : सम्पादक श्री महताबचन्द्र खारैड़, मूल्य २·५०।
डिंगलभाषा के महाकवि मंछ का प्रसिद्ध काव्यग्रन्थ जिसमें रामकथा का वर्णन है।

राजरूपक : सम्पादक श्री रामकर्णजी, मूल्य ६·२५।
वीरतापूर्ण ऐतिहासिक ग्रन्थ है।

ढोलामारूरादूहा : सम्पादक रामसिंह, सूर्यकिरण पारीक, मूल्य ८·००।
राजस्थानी भाषा की एक प्रेम कहानी जो काव्यरूप में लिखी गई है।

अर्थतत्व की भूमिका : ले० डॉ० शिवनाथजी मूल्य ६·००।
अर्थ-विज्ञान भाषा-शास्त्र का एक स्वतन्त्र अंग माना जाने लगा है। प्रस्तुत पुस्तक इस स्वतन्त्र शाखा के गवेषणात्मक अध्ययन से परिपूर्ण होने के कारण हिन्दी में अपने विषय की उच्चकोटि की मौलिक रचना है।

नदी फिर बह चली : श्री हिमांशु श्रीवास्तव का यह उपन्यास समाज के विभिन्न वर्गों की वास्तविकता पर प्रकाश डालता है। जहाँ उसमें एक ओर व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाओं के घात-प्रतिघातों का चित्रण है वहाँ वर्ग-संघर्ष भी सामने आता है। कथाकार समाज पर चोटें भी करता चलता है। गाँव के चित्रण में अधिक सजीवता लाने के लिए उन्होंने लोक-परम्पराओं, लोकोक्तियों, मुहावरों और लोक-संगीत का सहारा भी लिया है। नायिका 'परबतिया' का चरित्र-चित्रण बड़ा ही सजीव है। वह भारतीय ग्रामीण नारी के आदर्श की प्रतीक है। डिमाई साइज़ के ३३४ पृष्ठ का यह सजिल्द उपन्यास सात रुपये में प्राप्य है। इसके प्रकाशक हैं **हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी।**

* * *

द्विधा : श्री युगल के इस उपन्यास में व्यक्ति के आत्म-संघर्ष का चित्रण किया गया है। क्या हम सिर्फ उतने ही हैं जितने कि बाहर दिखाई देते हैं, या फिर जो कुछ हैं अन्दर ही हैं। लेखक ने इन दोनों बातों को गलत सिद्ध करने का प्रयत्न किया है। उसकी धारणा है जो कि सही जान पड़ती है कि हमारा अन्तर और बाह्य मिलकर हम पूर्ण बनते हैं। उपन्यास के पात्र सजीव हैं। वे अपने-अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। क्राउन साइज़ के ३०८ पृष्ठों के इस सजिल्द उपन्यास के प्रकाशक हैं **हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी** और यह चार रुपये में मिल सकता है।

* * *

कटी पतंग : इस कृति में लब्धप्रतिष्ठ उपन्यासकार नानकसिंह ने हमारे तथाकथित उन्नतिशील समाज में झाँककर उसे यथातथ्य रूप में हमारे सामने रखा है। हमारे पारिवारिक जीवन की समस्याएँ—शक और मिथ्या धारणाओं पर आधारित आपस में मनमुटाव, आपस की खाई और उस खाई का बेवजह बढ़ते जाना—सचमुच ही हमारे आज के समाज में ऐसे चित्र चारों तरफ़ मिलते हैं। अश्रु-हास, आशा-निराशा और विश्वास तथा संघर्ष से भरे इस उपन्यास का भी प्रकाशन **हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी** ने किया है और यह क्राउन साइज़ के ३६८ पृष्ठ का सजिल्द उपन्यास छः रुपये में प्राप्य है।

* * *

सुप्रभात नामक इस पुस्तक में हिन्दी के प्रख्यात कथाकार श्री सुदर्शन की देशभक्ति और स्वतन्त्रता-संग्राम की पृष्ठ-भूमि पर आधारित १० कहानियाँ संग्रहीत हैं और अन्त में 'जब आँखें खुलती हैं' नामक एक छोटा नाटक भी है। सुदर्शनजी की कहानियों के प्रेमी पाठकों तथा अध्येताओं के लिए यह संग्रह सर्वथा उपादेय और संग्रहणीय है। **बोरा एण्ड कम्पनी, बम्बई** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज़ के १६८ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक तीन रुपये में मिलती है।

* * *

पहाड़ी की श्रेष्ठ कहानियाँ का प्रकाशन **राजकमल पॉकेट बुक्स** के अन्तर्गत हुआ है। इस पुस्तक में हिन्दी के श्रेष्ठ कथाकार श्री पहाड़ी की 'हिरनी की आँखें', 'तूफान', 'कंकड़, 'चूना', 'ईंटें', 'शेषनाग की थाती', 'मौली', 'तूफान के बाद' तथा 'अधूरा चित्र' नामक सात अत्यन्त ख्याति-प्राप्त और लोकप्रिय कहानियाँ संकलित की गई हैं। इन कहानियों में हमारे पाठक वर्तमान समाज और उसके जीवन का सही चित्रण देख सकेंगे। अपनी शैली, व्यंजना, और भाषा की मौलिकता के कारण वे इन कहानियों में पूर्णतः सफल हुए हैं। पॉकेट साइज़ के १२८ पृष्ठों की यह पुस्तक एक रुपये में प्राप्य है।

* * *

मेरी तेंतीस कहानियाँ नामक इस पुस्तक में हिन्दी के नये कथाकार और उपन्यासकार श्री शैलेश मटियानी की ३३ कहानियाँ संग्रहीत हैं। लेखक के अनुसार यह उनकी अब

तक की प्रायः सभी चुनी हुई कहानियों का संकलन है। इन कहानियों द्वारा लेखक के साहित्यिक विकास के क्रमिक सोपान का पता चल सकता है। शैलेश मटियानी की कहानियाँ अपनी भाषा, भाव-भंगिमा तथा चरित्र-चित्रण आदि सभी दृष्टि से अभूतपूर्व हैं। उनकी कहानियों के इस संकलन का हिन्दी संसार स्वागत करेगा, ऐसी आशा है। डिमाई साइज़ के २२० पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक **आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली** ने प्रकाशित की है और ६ रुपये में मिलती है।

* * *

आलोचना, निबन्ध

भोजपुरी लोकगीतों के विविध रूप नामक इस ग्रन्थ में प्रो० श्रीधर मिश्र ने भोजपुरी लोकगीतों की विशेषता प्रतिपादित करके उनमें निहित समान भावधारा, सांस्कृतिक तत्व, धार्मिक भावना, सौन्दर्यानुभूति, नारी-जीवन, हास्य एवं विनोद, जीवन का यथार्थ चित्रण, स्वातन्त्र्य-प्रेम तथा दार्शनिक तत्त्व पर व्यापक तथा सोदाहरण प्रकाश डाला है। इसके अतिरिक्त भोजपुरी लोकगीतों में प्रथम स्वतन्त्रता-संग्राम के अमर सेनानी कुँवरसिंह और अहिंसात्मक क्रान्ति के अग्रदूत महात्मा गांधी के सम्बन्ध में आये हुए वर्णनों की भी विशद चर्चा की गई है। डिमाई साइज़ के १८४ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक **प्रकाश प्रिंटिंग वर्क्स, इलाहाबाद** ने प्रकाशित की है और चार रुपये में प्राप्य है।

* * *

बाबू श्यामसुन्दरदास : व्यक्तित्व और कृतित्व : श्री रामनाथ पाण्डेय की इस पुस्तक में हिन्दी के प्रबल समर्थक और साहित्यकार बाबू श्यामसुन्दरदास के व्यक्तित्व और उनकी साहित्य-सेवा पर प्रकाश डाला है। व्यक्तित्व और कार्य, हिन्दी आलोचना और श्यामसुन्दरदास, लेख और निबन्ध, बाबू साहब के भाषा-विज्ञान-सम्बन्धी कार्य, भाषा और शैली, मौलिकता का प्रश्न, साहित्यिक नेता, तथा उपसंहार, इन आठ अध्याय-शीर्षकों एवं अनेक उप-शीर्षकों में बँटी यह पुस्तक उनके व्यक्तित्व और साहित्य-स्रष्टा के सभी पक्षों पर प्रकाश डालती है। पुस्तक उपयोगी

बन पड़ी है। **हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी** द्वारा प्रकाशित यह डिमाई साइज़ के ८८ पृष्ठ की पुस्तक दो रुपये पच्चीस पैसे में प्राप्त की जा सकती है।

* * *

कविता

सृजन के पीड़ित क्षणों में नामक इस पुस्तक में मध्य प्रदेश के नये कवि श्री पुरुषोत्तम खरे की नई कविताओं का संकलन प्रस्तुत किया गया है। पुस्तक में श्री माखनलाल चतुर्वेदी, भवानीप्रसाद तिवारी और वीरेन्द्रकुमार जैन की प्रशंसात्मक पंक्तियाँ भी प्रकाशित हुई हैं। श्री खरे नये कवियों में अपना स्थान बना रहे हैं। उनकी कविताओं का यह संकलन हिन्दी पाठकों का निश्चय ही मनोरंजन करेगा। क्राउन साइज़ के ७४ पृष्ठ की यह पुस्तक **लोक चेतना प्रकाशन, जबलपुर** ने प्रकाशित की है और एक रुपया पचास नये पैसे में **प्राप्य** है।

* * *

नाटक

औरत और अरस्तू : श्री लालधुआँ द्वारा लिखित नाटक है। इसमें लेखक ने 'सिकन्दर जब चला दुनिया से दोनों हाथ खाली थे' इसकी सार्थकता सिद्ध की है। तक्षशिला की नर्तकी पण्यां सिकन्दरी सिपाहियों द्वारा हरी जाकर किस प्रकार यूनान पहुँचती है, इसी का मार्मिक वर्णन लेखक ने इस नाटक में किया है। सर्वथा नई टेकनीक में लिखित यह नाटक हिन्दी के नाट्य-साहित्य में एक अभिवृद्धि की सूचना देता है। **ज्ञानपीठ (प्रा०) लि०, पटना** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज़ के १०६ पृष्ठ का यह नाटक दो रुपये में प्राप्य है। भाषा और शैली के सारल्य के कारण यह नाटक सहज ही अभिनेय भी है।

* * *

जीवनी

भारत के मनीषी (दार्शनिक) नामक इस पुस्तक में इसके

लेखक श्री रामलाल ने महर्षि कपिल, पतञ्जलि, गौतम, कणाद, जैमिनी और व्यास आदि भारत के प्रख्यात दार्शनिकों की जीवनियाँ सरल और सुबोध शैली में प्रस्तुत की हैं। प्रत्येक जीवनी के साथ सम्बन्धित महापुरुष के काल्पनिक रेखाचित्र भी प्रस्तुत किये गए हैं। **वोरा एण्ड कम्पनी, बम्बई** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज़ के १३४ पृष्ठ की यह पुस्तक दो रुपये में मिल सकती है।

* * *

विविध

पृथ्वी और अन्तरिक्ष : 'श्री अलैक्ज़ैण्डर मारशैक' की प्रख्यात पुस्तक का हिन्दी अनुवाद है। इसमें इसके अनुवादक श्री नरेश वेदी ने सरल और रोचक भाषा में विज्ञान-जैसे शुष्क विषय को ऐसे ढंग से प्रस्तुत किया है कि वह सहज ही पठनीय हो गया है। इसके पृथ्वी का वर्ष, प्रारम्भ, पानी के सागर, हिम, वायुमण्डल, चुम्बकत्व का क्षेत्र, ठोस पृथ्वी, अयनमण्डल का क्षेत्र, सूर्य, उपग्रह, उपसंहार और सिंहावलोकन आदि अध्याय इस पुस्तक की उपयोगिता का ज्वलन्त प्रमाण प्रस्तुत कर रहे हैं। **राजकमल पॉकेट बुक्स** के अन्तर्गत प्रकाशित यह पुस्तक १ रुपया ५० न० पै० में उपलब्ध है।

* * *

भोजन और पाचन नामक पुस्तक में श्रीमती ज्योतिर्मयी ठाकुर ने भोजन और उसके विविध रूपों पर व्यापक रूप से प्रकाश डालकर उसके पचने की क्रियाओं पर विस्तार से विचार किया है। इसके रोगों का मूल कारण, कब्ज़ियत और उसका कारण, सादा और साधारण भोजन ही उत्तम भोजन है, भोजन अमृत भी है और विष भी, भोजन कैसे करना चाहिए, पाचन-क्रिया, आँतों का महत्वपूर्ण कार्य, कब्ज़ की रोक और सेहत, भोजन की चीज़ों के पौष्टिक तत्त्व, भोजन की चीज़ों का ज्ञान, भोजन के सम्बन्ध में अन्य बातें, भोजन की चीज़ों का अनुपात तथा भोजन के प्रमुख पदार्थ आदि अध्यायों के विभिन्न शीर्षक ही पुस्तक की उपयोगिता की साक्षी देने के लिए पर्याप्त हैं। **छात्र हितकारी पुस्तक माला, प्रयाग** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज़ के २०४ पृष्ठ की यह पुस्तक २ रु० ५० न० पै० में प्राप्य है।

* * *

छात्रो, उठो ! जागो !! नामक पुस्तक में डॉ० रामानन्द तिवारी 'भारती नन्दन' ने भारतीय छात्रों के चरित्र-निर्माण से सम्बन्धित ऐसी बातों का सूत्र-रूप उल्लेख किया है, जिनका अनुकरण करके वे अपने जीवन को एक सच्चे नागरिक के रूप में परिणत कर सकते हैं। स्वतन्त्र देश के नागरिक के रूप में हमारे छात्रों को इस पुस्तक को पढ़कर पर्याप्त प्रेरणा प्राप्त होगी। **भारती मन्दिर, भरतपुर** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज़ के १४६ पृष्ठ की यह पुस्तक दो रुपये में मिल सकती है।

* * *

सुखी जीवन का रहस्य में प्रख्यात विचारक और लेखक श्री सन्तराम बी० ए० ने सुखी जीवन बिताने के ऐसे रहस्यों को प्रस्तुत किया है, जिनको जानकर मानव-मात्र अपना जीवन सुखी बना सकता है। इस पुस्तक को पढ़कर प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में एक नई चेतना और प्रेरणा प्राप्त कर सकता है। प्रत्येक पाठक को इस पुस्तक का अध्ययन अवश्य ही करना चाहिए। **राजकमल पॉकेट बुक्स** के अन्तर्गत प्रकाशित ११२ पृष्ठ की यह पुस्तक केवल एक रुपये में प्राप्य है।

* * *

बापू मेरी नजर में नामक इस पुस्तक में श्री जवाहरलाल नेहरू के उन विचारों को संकलित किया है, जो उन्होंने समय-समय पर राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के सम्बन्ध में व्यक्त किये हैं। इस छोटी-सी पुस्तिका में वे सब बातें समाविष्ट कर दी गई हैं, जो नेहरूजी ने महात्माजी के सम्बन्ध में अनुभव की हैं। इसके सम्पादक श्री तो० कृ० महादेवन स्वयं गांधी विचार-धारा के प्रमुख चिन्तक कहे जाते हैं, अतः उनके द्वारा सम्पादित यह पुस्तक निश्चय ही महत्त्वपूर्ण कही जा सकती है। **राजकमल पॉकेट बुक्स** के अन्तर्गत इस पुस्तक का प्रकाशन करके प्रकाशकों ने निश्चय ही अभिनन्दनीय कार्य किया है। १०६ पृष्ठ की यह पुस्तक एक रुपये में प्राप्तव्य है।

* * *

कांगड़ा एनुअल (कांगड़ा वार्षिक) नामक यह वार्षिक पत्रिका **कांगड़ा सेवक सभा, नई दिल्ली** की ओर से अंग्रेजी और हिन्दी में प्रकाशित होती है। इसके सहायक मण्डल में सी० डी० खन्ना, आर० एल० पुरी, सन्तराम वत्स्य, नित्यानन्द शर्मा और ओंकार 'सेठी' हैं। इस पत्रिका में कला और जीवन-सम्बन्धित अनेक लेख दिये गए हैं। ऐसे प्रयत्न निश्चय ही प्रशंसा और प्रोत्साहन के पात्र हैं। पत्रिका के इस अंक में देश के बहुत से राजनीतिक नेताओं की शुभ-कामनाएँ भी प्रकाशित हुई हैं। कला और साहित्य के प्रेमियों के लिए भी यह उपादेय है।

* * *

बालोपयोगी

आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली की ओर से प्रकाशित होने वाली 'सचित्र बाल उपहार माला' के अन्तर्गत श्री मनमोहन सरल और योगेन्द्रकुमार लल्ला के सम्पादन में जो पुस्तकें प्रकाशित की जा रही हैं उनमें से 'विज्ञान की कहानियाँ' और 'साहस की कहानियाँ' इसी मास निकली हैं। इस माला का उद्देश्य बच्चों को चित्रों के माध्यम से ऐसी कहानियाँ सुनाना है, जिनको पढ़कर उनमें विश्व के ज्ञान-विज्ञान और अपने सांस्कृतिक गौरव के प्रति रुचि जाग्रत हो सके। ऐसी कहानियाँ भी इस माला में प्रस्तुत की गई हैं, जिनसे बच्चों में साहस, त्याग तथा बलिदान की भावनाएँ प्रवाहित हो सकें। इस माला की ये दोनों पुस्तकें इसी पवित्र उद्देश्य से प्रेरित होकर लिखी गई हैं। इन पुस्तकों को अनेक बहुरंगे और इकरंगे चित्रों से इतना आकर्षक और उपादेय बनाया गया है, कि बच्चे गहन-से-गहन विषय को भी कहानियों के माध्यम से सरलतापूर्वक समझ सकेंगे। प्रत्येक पुस्तक पाँच रुपये में प्राप्य है।

* * *

देश-विदेश की विचित्र प्रथाएं नामक इस पुस्तक के लेखक श्री रमेशचन्द्र 'प्रेम' बाल-साहित्य के अग्रणी लेखकों में गिने जाते हैं। उन्होंने इस पुस्तक में देश-विदेश की ऐसी विचित्र प्रथाओं और परम्पराओं का सरल और सुबोध शैली में वर्णन किया है, जिनका जानना और समझना हमारे बच्चों के लिए अनिवार्य है। पुस्तक में यत्र-तत्र दिये गए चित्रों से इसकी उपयोगिता और भी बढ़ गई है। इस सजिल्द और सचित्र पुस्तक का प्रकाशन **आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली** ने अपनी 'विश्व ज्ञान माला' नामक पुस्तकमाला के अन्तर्गत किया है और यह दो रुपये ५० नये पैसे में प्राप्य है।

* * *

(पृष्ठ १३२ का शेष)

पत्रिका पढ़ना ही नहीं पत्रिका मँगाना भी आवश्यक है

हमारे देश के अन्दर पत्रिका मँगाकर पढ़ने वालों की संख्या बहुत कम है। जीवन-स्तर को ऊँचा उठाने के दृष्टिकोण से, पत्रिका के प्रकाशकों के दृष्टिकोण से, वाचनालयों के दृष्टिकोण से एवं स्कूल के दृष्टिकोण से यह आवश्यक है कि हमारे देश में पत्रिकाएँ खरीदकर पढ़ने वालों की संख्या खूब बढ़े। हमारे स्कूल भी इस दिशा में काफ़ी काम कर सकते हैं। इस उद्देश्य की पूर्ति के सिलसिले में एक सुझाव जो ऊपर दिया जा चुका ही है कि छात्रों को पत्रिका नीलाम की जाए। इसके अतिरिक्त एक और भी तरीका है जो इस दिशा में काफी लाभदायक सिद्ध होगा। जब भी छात्रों को इनाम देने का अवसर आए उनको और वस्तुओं के अतिरिक्त अथवा और वस्तुओं के साथ-साथ पत्रिका के चंदे भी पारितोषिक के रूप में देने चाहिए। मान लो एक छात्र संगीत प्रतियोगिता में प्रथम आता है और उसका कुछ इनाम दिया जाता है तो इनाम की अन्य वस्तुओं के साथ छः माह का अथवा एक वर्ष का 'संगीत' मासिक दिया जाए। चंदा प्रकाशक को भेजकर लिख दिया जाए कि अमुक छात्र को एक वर्ष या छः माह के लिए 'संगीत' भेज दिया जाए। मान लो एक छात्र ने विज्ञान प्रदर्शनी में कुछ अद्भुत चीजें प्रदर्शित कीं तो उसको अन्य वस्तुओं के साथ 'विज्ञानलोक' मासिक अवश्य दिया जाए।

प्रत्येक स्कूल के पारितोषिक में अन्य वस्तुओं के साथ-साथ पुस्तकें और पत्र-पत्रिकाएँ अधिक-से-अधिक मात्रा में दी जाएँ, ऐसा नियम बना लेना होगा।

आगामी मास के प्रकाशन

आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली-६

—**अज्ञात महाद्वीप की खोज**, वाल्टर, सुलिवान, यात्रा

—**अन्तरिक्ष के यात्री (सचित्र)**, नरेन्द्र धीर, विज्ञान

—**भारत के महान् वैज्ञानिक (सचित्र)**, हरीश अग्रवाल, जीवनी

—**हमारे पड़ोसी देश (सचित्र)**, रमेशचन्द्र प्रम, ज्ञान-विज्ञान

—**भारत के हस्त-शिल्प (सचित्र)**, सुभाषणी, ज्ञान-विज्ञान

—**भारत की सांस्कृतिक परम्परा (सचित्र)**, केदारनाथ शास्त्री, ज्ञान-विज्ञान

—**भारत के लोक-नृत्य (सचित्र)**, विश्वमित्र शर्मा, ज्ञान-विज्ञान

—**हमारी आजादी की लड़ाई (सचित्र)**, उर्मिल सब्बरवाल, ज्ञान-विज्ञान

—**धरती की बेटी**, सोमवीरा, कहानी-संग्रह

—**पत्ते गिर पड़े**, शिवसागर मिश्र, उपन्यास

—**आँधी की नींवें**, डॉ० रांगेय राघव, उपन्यास

—**प्रतिनिधि सामूहिक गान (सचित्र)**, सं० योगेन्द्रकुमार लल्ला : श्रीकृष्ण, गीत-संग्रह

—**रजनी में प्रभात का अंकुर**, श्रीमन्नारायण, कविता-संग्रह

—**आइए हिन्दी सीखें (सचित्र)**, सोमदत्त मालवीय, प्रौढ़-शिक्षा

राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली

—**सुन्दर और असुन्दर**, यज्ञदत्त शर्मा, उपन्यास

—**धरती मेरा घर**, डॉ० रांगेय राघव, उपन्यास

—**नई जिन्दगी**, रामनाथ 'सुमन', प्रेरक साहित्य

—**आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि**, **गिरिजाकुमार माथुर**, सं० डॉ० नगेन्द्र, कविता

—**सामान्य रोगों की रोकथाम**, डॉ० लक्ष्मीनारायण शर्मा, चिकित्सा-स्वास्थ्य

—**कप्तान लाल**, राहुल सांकृत्यायन, उपन्यास

—**पश्चिमीय आचार विज्ञान**, डॉ० ईश्वरचन्द्र शर्मा, आचार-शास्त्र

राष्ट्रभाषा प्रकाशन मन्दिर, वाराणसी

—**हमारे गाँव**, गङ्गाधर मिश्र

—**कवि विद्यापति**, गङ्गाधर मिश्र, आलोचना

—**वैदिक भाषानुशीलन**, गङ्गाधर मिश्र, भाषा-विज्ञान

—**शिशु-गीत**, गङ्गाधर मिश्र, कविता

सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली

—**आत्म-रहस्य**, रतनलाल जैन, आचार-शास्त्र

—**सूक्ति रत्नावली**, सं० आनन्दकुमार, सूक्ति-संग्रह

—**अटलांटिक के उस पार**, रामकृष्ण बजाज, यात्रा-विवरण

—**रूसी युवकों के बीच**, रामकृष्ण बजाज, यात्रा-विवरण

—**अनोखा**, विक्टर ह्यूगो, उपन्यास

—**निरोग रहने का सच्चा उपाय**, वासुदेवशरण अग्रवाल, स्वास्थ्य-सम्बन्धी

—**विनोबा के पत्र**, सं० रामकृष्ण बजाज, पत्र

—**विचार-पोथी**, विनोबा, सूक्ति-संग्रह

—सेतु बन्धु, बनारसीदास चतुर्वेदी, संस्मरण
—गुरुदेव और उनका आश्रम, शिवानी, संस्मरण

साधना मन्दिर, पटना
—पकौड़ी साह ज़िन्दाबाद, विन्ध्याचल प्रसाद गुप्त, हास्य-उपन्यास
—नया ज़माना नया रंग, विन्ध्याचल प्रसाद गुप्त, हास्य-उपन्यास
—जिस देश में रहते लोटाराम, विन्ध्याचल प्रसाद गुप्त, हास्य-उपन्यास
—मुसीबत है गुदगुदाना, विन्ध्याचल प्रसाद गुप्त, हास्य-उपन्यास

हिन्द पाकेट बुक्स, शाहदरा-दिल्ली
—रात और प्रभात, भगवतीप्रसाद वाजपेयी, उपन्यास
—मृगतृष्णा, नानकसिंह, उपन्यास
—शिकारी, वनफूल, अनु० माया गुप्त, उपन्यास
—कलंक, नैथेनियल हॉथर्न, आसुतोष, उपन्यास
—एक पुरुष : एक नारी, राजेन्द्र यादव और मन्नू भण्डारी, कहानी-संग्रह
—बिन बुलाये मेहमान, प्रकाश पण्डित, हास्य-व्यंग्य

हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी
—गीतिकाव्य का विकास, लालधर त्रिपाठी, शोध-प्रबन्ध
—इन्हें भी इन्तज़ार है, डॉ० शिवप्रसाद सिंह, कहानी-संग्रह
—भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन के नेता, डॉ० लीला अवस्थी, जीवन-चरित्र
—मंगलग्रह में रज़िया, शारदा मिश्रा, बाल-साहित्य
—मुक्ति का रहस्य, लक्ष्मीनारायण मिश्र, नाटक
—प्रतिद्वन्द्वी, सेरीडन, नाटक
—जनगण अधिनायक, समर-सरकार, नाटक

अक्तूबर मास के प्रकाशन

कविता

डॉ० बच्चन, **मिलन यामिनी**, पु० मु०, २३०, का०, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली	३.५०
उदयशंकर भट्ट, **इत्यादि**, १३६, डिमाई, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली	३.५०
आचार्य श्री तुलसी, **श्रद्धेय के प्रति**, १४४, डिमाई, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली	२.५०
'नीरज', **बादर बरस गयो**, पु० मु०, १२०, डिमाई, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली	३.००

उपन्यास

कंचनलता सब्बरवाल, **नया मोड़**, २४०, का०, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली	४.००
कृष्णचन्द्र, **मेरी यादों के चिनार**, १६६, का०, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली	३.००
नानकसिंह, **कटी पतंग**, का०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी	६.००
'युगल', **द्विधा**, का०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी	३.५०
दाफ्ना द्यु मोरिये, **रेबेका**, ३००, का०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली	५.००
श्रीराम शर्मा 'राम', **झरोखे**, ३००, का०, उमेश प्रकाशन, दिल्ली	५.००
उमाशंकर, **तारों से पूछिये**, ३२०, का०, उमेश प्रकाशन, दिल्ली	५.५०
गुरुदत्त, **सभ्यता की ओर**, १७५, का०, उमेश प्रकाशन, दिल्ली	३.००

कहानी-संग्रह

श्री यश, **मैं पूछता हूँ**, १०२, का०, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली	२.००
टाल्स्टाय, अनु० जैनेन्द्रकुमार, **प्रेम में भगवान्**, पु० मु०, २००, का०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली	२.५०

नाटक

सोफोक्लिज, अनु० डॉ० रांगेय राघव, **ऐण्टीगोने**, ६४, का०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली	१.२५
उदयशंकर भट्ट, **नहुष-निपात**, ५६, का०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली	१.२५
गोविन्दवल्लभ पंत, **सुजाता**, १००, का०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली	१.५०
राजकुमार, **पंचमांगी**, ११८, का०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी	२.००

आलोचना—निबन्ध

डॉ० नगेन्द्र, **विचार और विश्लेषण**, पु० मु०, १७२, डिमाई, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली	५.५०
डॉ० नन्ददुलारे वाजपेयी, **राष्ट्रभाषा की कुछ समस्याएँ**, १३०, का०, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली	२.५०
प्रभुदयाल मीतल, **स्वामी हरिदास : जीवनी, वाणी और सम्प्रदाय**, साहित्य संस्थान, मथुरा	३.००

रामनाथ पाण्डेय, **बाबू श्यामसुन्दरदास : उनका व्यक्तित्व और कृतित्व**, डिमाई, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी २.२५
टाल्स्टाय, अनु० शांति भटनागर, **हम करें क्या**, पु० मु०, २९२, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली ४.००
हरिभाऊ उपाध्याय, **स्वतन्त्रता की ओर**, पु० मु०, ३००, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली ४.००

बाल-साहित्य—प्रौढ़-साहित्य

केशव सागर, **पानी**, ३२, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली १.२५
सं० श्रीकृष्ण, योगेन्द्रकुमार लल्ला, **प्रतिनिधि बाल एकांकी (सचित्र)**, २८८, कॉपी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली ६.५०
रायबहादुरसिंह, **तपस्वियों की कहानियाँ (सचित्र)**, १२८, कॉपी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली २.००
उमाशंकर, **गढ़मण्डल की रानी**, ९२, क्रा०, उमेश प्रकाशन, दिल्ली २.००

विविध

डॉ० जगदीश गुप्त, **भारतीय कला के पदचिह्न**, १५२, डि०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ५.००
डॉ० जी० एस० सहारिया व श्रीमती ए० के० सहारिया, **भोजन और स्वास्थ्य**, १७०, क्रा०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ३.००
नीरज सम्पा०, **लिख लिख भेजत पाती**, ११२, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली २.५०
रमेश बेदी, **सोंठ**, ८४, पॉकेट, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली १.७५
गांधीजी, **धर्मनीति**, पु० मु०, २००, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली २.००
महात्मा भगवान, **सूफी सन्त चरित**, २५०, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली ३.००
धर्मचन्द सरावगी, **सरल योगासन**, १००, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली २.५०
श्रीमन्नारायण, **गांधीवादी संयोजन के सिद्धान्त**, ४००, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली ५.००

इतिहास

प्रीतमसिंह पंछी, **ग़दर पार्टी का इतिहास**, २२४, डिमाई, आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली ३.५०

नागरिक-शास्त्र

के० आर० बम्बवाल, **नागरिक-शास्त्र के सिद्धांत**, २८८, क्रा०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली ४.००

संस्मरण

रामवृक्ष बेनीपुरी, **मील के पत्थर**, पु० मु०, १४४, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली २.२५
जवाहरलाल नेहरू, **राष्ट्रपिता**, पु० मु०, २००, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली २.००

यात्रा-विवरण

विट्ठलदास मोदी, **योरुप यात्रा**, २००, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली १.५०
मुकुटविहारीलाल वर्मा, **आज का इंगलिस्तान**, १५०, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली २.००
यशपाल जैन, **उत्तराखण्ड के पथ पर**, पु० मु०, १७६, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली २.५०

आत्म-कथा

जवाहरलाल नेहरू, **मेरी कहानी सम्पूर्ण**, पु० मु०, ८६४, क्रा०, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली १०.००

प्रकाशन समाचार

वर्ष : ६
अंक : ४
वार्षिक : ३.००
एक प्रति : ०.३१

सम्पादक : ओंप्रकाश, डायरेक्टर इंचार्ज, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड

क्या आज अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ द्वारा हिन्दी की पुस्तकों की बिक्री का 'नेट बुक समझौता' कहीं कार्यान्वित हो रहा है? संघ ने अपने जीवन में इससे अधिक महत्त्व का और कोई काम नहीं किया था। समस्त पुस्तक-व्यवसाय में प्रगति लाने, इसे एक समुचित और दृढ़ आकार देने के लिए इससे अधिक महत्त्व का साधन नहीं खोजा जा सकता। देश-भर से प्राप्त सूचनाओं से तो यही आभास मिलता है कि आज यह नियम केवल कागज की शोभा ही बनकर रह गया है—एक निरर्थक नारा जो कि केवल हिन्दी-प्रकाशकों और संघ का मान बनाए रखने के लिए लगाया जा रहा है। वर्ष-भर से संघ द्वारा पंजीबद्ध पुस्तक-विक्रेताओं की कोई नई सूची प्रकाशित नहीं हुई और इस अव्यवस्था द्वारा संघ से सम्बन्धित अधिकारियों ने अपनी कार्यरतता का सुपरिचय नहीं दिया। बिक्री के इन नियमों का भंग करने वालों के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही करने का कोई मजबूत तरीका भी अभी तक नहीं अपनाया जा सका। ऐसा नहीं है कि इस 'नेट बुक समझौते' की उपयोगिता से प्रकाशक, पुस्तक-विक्रेता अथवा ग्राहक—सरकारी और गैर-सरकारी वाकिफ़ नहीं हैं। सभी इस सिद्धान्त के पक्ष में हैं, इसे कार्यान्वित करने के हक में अपना मत देते हैं, लेकिन इसके कार्यान्वयन के वक्त हम सभी को एक-दूसरे का मुंह ताकने का अभ्यास है—'अमुक इस नियम का पालन करेगा तो हम भी करेंगे', 'अमुक ने नियमों को तोड़ा है, हम भी तोड़ेंगे।' फिर उस 'अमुक' ने चाहे नियम तोड़ा हो या नहीं, यदि हमारे स्वार्थ की किंचित् भी सिद्धि होती हो तो हम तो इस आड़ में नियमों को तोड़ ही डालते हैं।

संघ का वार्षिक अधिवेशन इस वर्ष के अन्त तक होने का कार्यक्रम है। हम सभी को चाहिए कि एक बार फिर से इस प्रश्न पर आमूल विचार-विनिमय करें—केवल प्रस्ताव ही स्वीकृत नहीं करें, उन्हें कार्यान्वित करने का निश्चय भी करें। किसी थोथी, झूठी शान के पीछे भव्य दिखलाई और सुनाई देने वाले कार्यक्रम न बनाएँ—अपने व्यवसाय और समाज के सामूहिक हित में जिन नियमों का पालन उचित माना जाए, उन्हें कार्य-रूप में व्यवहृत करने-कराने की सुदृढ़ व्यवस्था भी पैदा करें।

पुस्तकों का महत्त्व

रामलाल पुरी

'राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह' के उपलक्ष्य में दिल्ली में आयोजित पुस्तक-प्रदर्शनी के उद्घाटन के अवसर पर श्री रामलाल पुरी, अध्यक्ष, राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह समिति, का पुस्तकों के महत्त्व पर भाषण।

'राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह' अपने ढंग का अभूतपूर्व आयोजन है, जो अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक-संघ के तत्त्वावधान में मनाया जा रहा है। प्रसन्नता की बात है कि भारत सरकार के सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालय तथा दिल्ली राज्य के शिक्षा-निर्देशालय का सहयोग भी किसी-न-किसी रूप में इसे प्राप्त है। इस समारोह का मुख्य उद्देश्य दैनिक जीवन में पुस्तकों के महत्त्व और उपयोगिता को समझाकर उनके प्रचार-प्रसार को बढ़ावा देना और उन्हें लोकप्रिय बनाना तथा घर-घर में पहुँचाना है।

पाश्चात्य देशों में इस प्रकार के समारोह राज्य-स्तर पर मनाए जाते हैं। राष्ट्र की सरकारी और गैर-सरकारी संस्थाएँ परस्पर सहयोग से उसे सफल बनाने में जुट जाती हैं। वहाँ पुस्तक-प्रसार के विविध कार्यक्रम समय-समय पर आयोजित किए जाते हैं। यही कारण है कि वहाँ की जनता के हर वर्ग में पुस्तकों के प्रति अगाध प्रेम है। किसी भी देश की उन्नति वहाँ पुस्तकों की खपत से आँकी जा सकती है। जिस देश में पुस्तकों की खपत अधिक है वह उतना ही अधिक उन्नत है।

किन्तु खेद है कि हमारे देशवासियों ने पुस्तकों के महत्त्व को अभी तक नहीं पहचाना है। यही कारण है कि हमारा देश पाश्चात्य देशों की अपेक्षा पिछड़ा हुआ है। आज जबकि अन्य देश विभिन्न ग्रहों पर पहुँचने की होड़ में अन्तरिक्ष में उड़ानें भर रहे हैं, हम सम्प्रदाय, भाषा और प्रदेशवाद के शिकार होकर देश के टुकड़े कर देना चाहते हैं।

यह परम आवश्यक है कि हमारे देशवासी देश की उन्नति और जीवन के विकास में पुस्तकों के महत्त्व को समझें, पहचानें। जिस देश के निवासी पुस्तकों से जितना ही प्रेम रखते हैं उसी मात्रा में वहाँ ज्ञान-विज्ञान का प्रसार होता है।

पुस्तकें मनुष्य को अन्धकार के गर्त से उबारकर, प्रकाश की ओर ले जाती हैं। मनुष्य के परिमित जीवन में अपरिमित ज्ञान को अर्जित करने का माध्यम पुस्तकें हैं। बड़े-बड़े मनीषी और चिन्तक, जो जीवन-पर्यन्त मानव-हित के लिए ही चिन्तन किया करते हैं, अपने ग्रन्थों में वह ज्ञान-राशि सुरक्षित कर जाते हैं जिसके द्वारा भावी पीढ़ी की अन्धकार में घिरी मानवता को प्रकाश का पथ मिल जाता है, सच्ची मनुष्यता के विकास में सहायता मिलती है। जितना अधिक ज्ञान और मनोरंजन पुस्तकें प्रदान करती हैं उतना किसी दूसरे माध्यम से नहीं मिलता। पुस्तकें हमें बताती हैं कि मनुष्यों ने दुनिया में क्या किया? उन पर जब-जब मुसीबतों के काले-काले बादल मँडराए, पुस्तकें उनके जीवन में किस तरह सूर्य-किरणें बनकर चमकीं। वे किस तरह जीवन-संग्राम में विजयी होते गए? यह है पुस्तकों का गुप्तदान, जो हर मनुष्य को सुलभ हो सकता है। पुस्तक बुद्धि की चाबी हैं, इज्ज़त के दरवाज़े हैं, सुख का भण्डार हैं और आनन्द का खजाना हैं। पुस्तकें आदमी नामक पशु को नर ही नहीं नारायण बना देती हैं। पुस्तकें मन के लिए साबुन का कार्य करती हैं। महाकवि मिल्टन के अनुसार 'एक उत्तम पुस्तक, एक महान् आत्मा

का मूल्यवान जीवन-रक्त है।' जिसे पुस्तकें पढ़ने का शौक है वह हर जगह सुखी है। भारतीयों में स्वतन्त्रता का शंख फूँकने वाले लोकमान्य तिलक ने भी कहा है—"मैं नरक में भी अच्छी पुस्तकों का स्वागत करूँगा क्योंकि इनमें वह शक्ति है कि जहाँ ये होंगी वहीं स्वर्ग बन जाएगा।"

सभ्यताएँ उत्पन्न हुईं और मिट गईं, पर पुस्तकों का अस्तित्व बाकी रहा और उन्होंने राष्ट्रों का निर्माण करने तथा अत्याचार को मिटाने में महान् योग दिया है। पुस्तकें मानव-बुद्धि को विकसित करने का मुख्य स्रोत हैं।

लोगों का यह कथन कि भारत की निर्धनता पुस्तकों की बिक्री न होने का मूल कारण है, युक्तिसंगत नहीं। जब लोग लाखों-करोड़ों रुपए त्योहारों, सिनेमा, चाय, सिगरेट और शृंगार के प्रसाधनों पर खर्च कर सकते हैं, तो कोई कारण नहीं कि वे पुस्तकें न खरीद सकें। कमी धन की नहीं, बल्कि पुस्तकों के महत्त्व, उपयोगिता और आवश्यकता को समझने और समझाने की है। हमारे देश में अनेक पर्वों पर जिस तरह वस्त्र, बरतन आदि खरीदना धर्म में शामिल है, उसी तरह पुस्तकें खरीदना, उन्हें जन्मदिन और विवाह आदि शुभ अवसरों पर उपहार-रूप में देना भी हम अपना धर्म समझें। पुस्तकों का दान सबसे उत्तम दान है।

मैं समझता हूँ कि पुस्तकों को लोकप्रिय बनाने के लिए वर्ष में कई बार 'पुस्तक-सप्ताह' मनाए जाएँ और पुस्तक-प्रदर्शनियाँ की जाएँ, जो केवल प्रकाशन-संघ की ओर से ही नहीं बल्कि अन्य संस्थाओं की ओर से भी स्कूलों, कॉलिजों, लाइब्रेरियों तथा सार्वजनिक मेलों में आयोजित किये जाएँ।

'राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह' को 'राष्ट्रीय पर्व' का रूप दिया जाना चाहिए। पुस्तकों का प्रचार शिक्षा का प्रचार है। शिक्षा का प्रचार देश के निर्माण की ओर बढ़ता हुआ कदम है। इस तरह का समारोह करने का दायित्व जनता और सरकार दोनों पर है। जब तक लोगों में पुस्तकें खरीदने और पढ़ने की आदत नहीं पड़ेगी, उनका सांस्कृतिक और सामाजिक स्तर ऊंचा होना सम्भव नहीं। हमारी पंचवर्षीय योजनाओं की सफलता भी सांस्कृतिक जीवन पर ही निर्भर करती है, क्योंकि सुसंस्कृत जनता अपनी जिम्मेदारियों को अधिक समझती है और बिना किसी बाहरी दबाव के ही अपने कर्तव्यों का पालन करती है। हमारे दूरदर्शी प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू ठीक ही कहते हैं कि हमें छोटे-छोटे तात्कालिक हितों पर ध्यान न देकर व्यापक हितों और उज्ज्वल भविष्य के लिए काम करना चाहिए। जनता में व्यापक हितों और उज्ज्वल भविष्य को समझने तथा व्यक्तिगत स्वार्थों से ऊपर उठकर महान् कार्यों के लिए त्याग करने की बुद्धि पुस्तकों द्वारा ही पैदा होगी।

'राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह' के इस शुभावसर पर मेरा प्रत्येक व्यक्ति से अनुरोध है कि वह निश्चय करे कि अपनी आय का कुछ भाग पुस्तकों पर अवश्य खर्च करेगा। आज आवश्यकता है कि घर-घर में निजी पुस्तकालय बनाए जाएँ, जिनमें श्रेष्ठ पुस्तकों का संग्रह हो। पुस्तकों से रहित मकान बिलकुल ऐसा ही है जैसे खिड़कियों के बिना कमरा।

बालक राष्ट्र की सम्पत्ति हैं। उन्हीं के कन्धों पर देश का भविष्य निर्भर है। इसलिए यह आवश्यक है कि वे सुसंस्कारी हों, सुसंस्कृत हों, और यह तभी हो सकता है जबकि उनमें आरम्भ से ही पुस्तकें पढ़ने की रुचि जागृत की जाए। केवल पाठ्य-पुस्तकें पढ़ने से ही उनका नैतिक स्तर ऊँचा नहीं हो सकता। इसके लिए अन्य अच्छी पुस्तकों का पठन भी अत्यन्त आवश्यक है। राष्ट्र-पिता महात्मा गांधी के शब्दों में, "अच्छी पुस्तकों के पास होने से हमें अपने भले मित्रों के साथ न रहने की कमी नहीं खटकती।"

अन्त में मैं अधिक समय न लेते हुए श्री भट्टजी, उपस्थित सज्जनगण तथा प्रकाशक-बन्धुओं के प्रति आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने इस पुस्तक-प्रदर्शनी में भाग लेकर 'राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह' के प्रथम चरण की सफलता में योगदान दिया है। इसके अतिरिक्त वे सरकारी-संस्थाने भी धन्यवाद के पात्र हैं, जिन्होंने 'राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह' को किसी-न-किसी रूप में अपने सहयोग का आश्वासन दिया है। श्री भट्टजी के प्रति मैं पुनः आभार प्रकट करता हूँ।

राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह

श्री कृष्णचन्द्र बेरी का भाषण

राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह सप्ताह के सिलसिले में १६ नवम्बर ६१ को वाराणसी के टाउन हॉल में 'भारत में पुस्तक प्रकाशन' विषय पर आयोजित विचार-गोष्ठी में एक ओर जहाँ अखिल भारतीय प्रकाशक संघ के अध्यक्ष श्री कृष्णचन्द्र बेरी ने प्रकाशकीय दृष्टिकोण उपस्थित करते हुए प्रकाशकों को पुस्तकों के विषय, बाजार का अनुभव, सम्पादन, प्रेसों का चयन, प्रूफ़रीडिंग आदि विषयों से सचेष्ट रहने का अनुरोध किया, वहाँ दूसरी ओर लेखकीय दृष्टिकोण से तर्कपूर्ण विचार उपस्थित करते हुए 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' के सम्पादक श्री बाँकेबिहारीलाल भटनागर ने प्रकाशकों से अपील की कि वे व्यावसायिक दृष्टिकोण का परित्याग करके लेखकों की वय, प्रतिष्ठा और नाम का ध्यान किये बिना उनकी योग्य सामग्रियों का चयन किया करें।

यह गोष्ठी श्री देवनारायण द्विवेदी की अध्यक्षता में हुई।

श्री बेरी ने प्रकाशकीय दृष्टिकोण से बोलते हुए बताया कि प्रकाशन में भारत उत्तरोत्तर उन्नति की ओर बढ़ रहा है। इस समय वह विश्व में प्रकाशन की दृष्टि से चौथे स्थान पर आ गया है।

आपने कहा कि जब कोई पाण्डुलिपि प्रकाशक के सम्मुख आती है तो उसके सामने समस्याएँ आती हैं—सम्पादन की, टाइप चयन की, मशीन तथा जिल्दसाजी की तथा प्रकाशन के उपरान्त उसकी बिक्री की। पाण्डुलिपि साफ-सुथरी लिखी हुई अथवा टाइप की हुई हो और उसका उचित रीति से सम्पादन किया गया हो।

अच्छे प्रकाशकों के सम्बन्ध में श्री बेरी ने कहा कि उन्हें पुस्तक का नाम या उपनाम, लेखक की अन्य कृतियों के नाम, लेखक का नाम, अनुवादक का नाम, किस भाषा से अनुवाद किया गया, समर्पण, भूमिका, चित्रकार का नाम, कापीराइट का विवरण, विषय-सूची, कितनी प्रतियाँ मुद्रित हुईं, पुस्तक का मूल्य, पुस्तक का कवर-पृष्ठ और मुद्रक का नाम आदि चौदह सूत्रों की जाँच सावधानीपूर्वक कर लेनी चाहिए।

आपने कहा कि प्रकाशकों को पुस्तकों के सम्पादन की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। श्री बेरी ने कहा कि लेखक से बढ़कर विद्वान् व्यक्ति से सम्पादन कराया जाए।

श्री भटनागर ने लेखकीय दृष्टिकोण उपस्थित करते हुए कहा कि लेखक कलाकार है। उसकी अपने स्वप्नों की दुनिया है, जिसे वह लेखनी द्वारा साकार रूप देता है, जिसमें वह कभी सफल होता है और कभी असफल। मानव की सहानुभूति उसके साथ होती है और वह समाज के जीवन का निर्माण करता है।

श्री बेरी द्वारा उपस्थित किये गए तर्क—लेखक से योग्य सम्पादक की आवश्यकता—से असहमति प्रकट करते हुए आपने कहा कि यह सम्भव नहीं है और न इसकी आवश्यकता है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि सम्पादक की लेखक पर श्रद्धा हो और वह हिन्दी-साहित्य में श्रद्धा रखता हो तथा लेखक के प्रति श्रद्धा, सहयोग और मैत्री की भावना रखता हो।

गोष्ठी के अध्यक्ष श्री द्विवेदी ने दोनों पक्षों के उपस्थित तर्कों से सहमति प्रकट करते हुए गोष्ठी में सम्मिलित व्यक्तियों से अच्छी बातों को अपनाने की अपील की।

श्री गणेशदास द्वारा आभार-प्रदर्शन के बाद गोष्ठी समाप्त हुई।

श्री रामचन्द्र वर्मा का भाषण

टाउन हॉल में ही आयोजित जिला पुस्तक व्यवसायी सम्मेलन के अध्यक्ष-पद से हिन्दी के सुप्रसिद्ध कोषकार श्री रामचन्द्र वर्मा ने कहा कि पुस्तक-व्यवसाय के क्षेत्र में आज हमें जो धाँधली दिखाई देती है, उसके लिए थोड़े-से बड़े पुस्तक-व्यवसायी तो दोषी हैं ही, पर हमारे देश की शासन-व्यवस्था कम दोषी नहीं है।

इस सम्बन्ध में सरकार को सुझाव देते हुए अध्यक्ष ने कहा कि इससे बचने का एक अच्छा मार्ग यही हो सकता है कि सरकारी विभाग थोड़े-से बड़े-बड़े पुस्तक-विक्रेताओं से लाखों रुपये की पुस्तकें एक साथ न खरीदकर और अधिक कमीशन का मोह छोड़कर अच्छी-अच्छी पुस्तकें सीधे उनके प्रकाशकों से ही खरीदा करें।

केन्द्रीय सरकार और डाक-व्यय का ध्यान आकृष्ट कराते हुए श्री वर्मा ने कहा कि पुस्तकों की बढ़ी हुई डाक-दर बहुत अधिक है। आजकल पुस्तकें वी० पी० से भेजने के लिए रजिस्ट्री-व्यय देना भी अनिवार्य हो गया है। आपने बताया कि रेल-विभाग ने पुस्तकों का रेल-भाड़ा तो कम कर दिया है, किन्तु डाक-विभाग इस ओर अभी तक उदासीन है।

अन्त में पुस्तक-व्यवसायियों से आपने अनुरोध किया कि लक्ष्मी के प्रलोभन में पड़कर कोई ऐसा काम नहीं करना चाहिए जो सरस्वती की दृष्टि में अशोभन हो और दूसरी ओर थोड़ी पूँजी वाले हमारे साधारण भाइयों के लिए विनाशकारी सिद्ध हो।

उद्घाटन भाषण

प्रारम्भ में सम्मेलन का शुभारम्भ करते हुए नागरी प्रचारिणी सभा के प्रकाशन-मन्त्री श्री सुधाकर पाण्डेय ने कहा कि पुस्तक-व्यवसाय को लघु कुटीर उद्योग की सीमा में मानकर तब तक चला जाए, जब तक इस क्षेत्र में अभिनवीकरण की आमूल प्रतिष्ठा नहीं हो जाती।

श्री पाण्डेय ने कहा कि यदि शिक्षा का विकास सरकार का ध्येय है तो डाक-व्यय नहीं बढ़ाना चाहिए। ज्ञान के विकास के लिए हम तो यह चाहेंगे कि लेखक और प्रकाशक तब तक के लिए सभी करों से मुक्त कर दिए जाएँ,

जब तक उनकी स्थिति सुदृढ़ नहीं हो जाती, या उन पर कर में विशेष छूट की व्यवस्था होनी चाहिए और इस वर्ग को विशेष संरक्षण इस क्षेत्र में प्रदान किया जाना चाहिए।

स्वागताध्यक्ष का भाषण

प्रथम जिला पुस्तक-व्यवसायी सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष श्री राजदेव दीक्षित ने अपने स्वागत-भाषण में काशी के गौरव और उसकी प्राचीन संस्कृति तथा शिक्षण-केन्द्रों और उद्योग-धन्धों पर प्रकाश डालते हुए कहा कि पुस्तक-व्यवसाय की महत्ता पुस्तक के महत्व से आँकी जा सकती है।

अखिल भारतीय प्रकाशक संघ के अध्यक्ष श्री कृष्णचन्द्र बेरी ने अपने संक्षिप्त भाषण में बताया कि वह अन्तर्राष्ट्रीय कांग्रेस में भाग लेने गये हुए थे, तो वहाँ पर पता चला कि ३६ देशों में राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह मनाया गया है। वहीं से इस प्रकार के आयोजन अपने देश में करने की प्रेरणा मिली।

करतल-ध्वनि के बीच 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' के सम्पादक एवं सम्मेलन के आमन्त्रित अतिथि श्री बाँकेबिहारी लाल भटनागर ने अपने संक्षिप्त भाषण में इस प्रकार के संगठनों की आवश्यकता पर बल देते हुए इसे दृढ़ करने और व्यापक बनाने की अपील की।

सम्मेलन में महाकवि निराला की मृत्यु पर शोक प्रकट करते हुए एक शोक-प्रस्ताव पारित करके उनकी आत्मा की शान्ति के लिए भगवान् से प्रार्थना की गई।

पुस्तक-प्रदर्शनी का श्री भगवती द्वारा उद्‌घाटन

राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह के अवसर पर नागरी प्रचारिणी सभा के भवन में राष्ट्रभाषा हिन्दी की पुस्तकों की प्रदर्शनी का उद्‌घाटन करते हुए काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के वाइस चान्सलर श्री एन० एच० भगवती ने कहा कि हिन्दी के प्रकाशकों को चाहिए कि वे हिन्दीभाषी जनता को अच्छा-से-अच्छा साहित्य सस्ते मूल्य में प्रदान करें। इस दिशा में आपने गोरखपुर के गीता प्रेस के सस्ते प्रकाशनों का उल्लेख किया और बताया कि भारती भवन की पुस्तकमाला में जनता को सस्ती और बहुमूल्य पुस्तकें सस्ते

दामों में प्राप्त हो रही हैं। साथ ही गुजराती भाषा में अहमदाबाद से अच्छी और सस्ती पुस्तकें बराबर प्रकाशित होकर जनता में प्रसारित होती रहती हैं। अतः प्रकाशकों से मेरा अनुरोध है कि साहित्य के लेखकों, कवियों, कथाकारों आदि की अच्छी-से-अच्छी पुस्तकें चुनकर कम-से-कम लाभ लेकर सस्ते दामों में पाठकों तक पहुँचाने का प्रयास करें। इससे जनता का भी कल्याण होगा और हिन्दी भाषा तथा साहित्य की भी उन्नति होगी। इससे देश में हिन्दी-प्रकाशन प्रथम पंक्ति में आ सकेगा।

श्री कृष्णचन्द्र बेरी ने प्रदर्शनी के शुभारम्भ के पूर्व प्रस्तावना के रूप में कहा कि भारत में प्रथम बार होने वाले इस राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह में विचार-गोष्ठियों और पुस्तक-प्रदर्शनियों का आयोजन इस उद्देश्य से किया गया है कि पुस्तक-प्रकाशन का स्तर ऊँचा करने का उपाय ढूँढ़ निकाला जाए और हिन्दी में इधर सम्पूर्ण विषयों में हुए प्रकाशनों का जनता को परिचय हो जाए।

आपने कहा कि आर्थिक विभीषिका और अस्त-व्यस्तता के इस युग में लोग पुस्तकें खरीदने की ओर से खिचे-से हैं। रेडियो, सिनेमा आदि उपकरणों के कारण मानव-मस्तिष्क पुस्तकों की ओर कम आकृष्ट हो रहा है। स्वतन्त्र भारत में राष्ट्र-निर्माण के लिए अच्छी पुस्तकों के प्रकाशन की जो आवश्यकता है, उसके सन्दर्भ में प्रकाशक अपनी भूमिका समझें और साहित्यकारों के सहयोग से उत्कृष्ट पुस्तकें सस्ते दामों में जनता तक पहुँचाने का प्रयास करें। मैं प्रकाशकों से अनुरोध करूँगा कि वे नये लेखकों को प्रश्रय की दिशा में प्रयास करें अन्यथा हिन्दी के बहुत-से रवीन्द्र और गेटे को हम खो देंगे। आपने कहा कि इस प्रदर्शनी को देखने से यह स्पष्ट हो जाएगा कि हिन्दी में सभी विषयों की पुस्तकें आज आपको मिल जाएँगी तथा उनके प्रकाशन के स्तर का वैज्ञानिक ढंग से विकास हुआ प्रतीत होगा।

श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन का भाषण

राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह के अवसर पर, १७ नवम्बर, '६१ को टाउन हॉल में डॉ० मंगलदेव शास्त्री की अध्यक्षता में आयोजित प्रकाशकीय विचार-गोष्ठी में भारत में पुस्तक-व्यवसाय की समस्याओं तथा पुस्तकों के प्रचार और प्रसार के मार्ग की कठिनाइयों और बाधाओं पर प्रकाश डालते हुए भारतीय ज्ञानपीठ के अध्यक्ष श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन ने कहा कि आज यहाँ हम लोग पुस्तकों के प्रचार और प्रसार के सम्बन्ध में कुछ विचार करने, कुछ प्रश्नों का उत्तर ढूँढ़ने और तद्विषयक समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करने के लिए एकत्र हुए हैं। अतः सर्वप्रथम हमें एक दृष्टि इस तथ्य की ओर डालनी चाहिए कि भारत में ज्ञान के उन्नयन, प्रचार और प्रसार के सम्बन्ध में हमारी क्या दृष्टि होनी चाहिए, क्या लक्ष्य होना चाहिए, क्या मार्ग और उपाय अथवा ढंग होना चाहिए।

आपने कहा कि हमारे यहाँ विद्या के लिए प्राचीनतम वेदशास्त्र कोश है। उनके संरक्षण, प्रचार और प्रसार के लिए हमारे देशवासियों ने क्या किया। क्या कारण है कि वेद आज के पंजाब में अवतरित हुआ, किन्तु उसका प्रचार सारे देश में हुआ। प्रचार, प्रसार और मुद्रण आदि किसी भी साधन के उपलब्ध न रहते हुए भी वेद-शास्त्रों का प्रचार सारे देश में कैसे हुआ? इस सम्बन्ध में हमारे उन पूर्वजों की बुद्धि का चमत्कार देखिए, जिन्होंने वैदिक ज्ञान का, मन्त्रों का, संरक्षण करने के लिए उन्हें कण्ठाग्र करने की ऐसी अभिनव और वैज्ञानिक पद्धति निकाली जिसके द्वारा पदपाठ, धनपाठ, वृत्ति, अनुवृत्ति, वृत्यावृत्ति शब्द-क्रम आदि के द्वारा वेद को समूचे देश में प्रचारित और प्रसारित करने में सफलता मिली।

हमें उनकी स्मृति, स्मरणशीलता, अध्ययन और अध्यवसाय पर आश्चर्यचकित होना पड़ता है। वेदों का संरक्षण अनेक शाखाओं और उपशाखाओं में उपयुक्त पद्धति द्वारा हुआ और समूचे देश में उनका प्रचार-प्रसार भी हुआ।

वेदों के उपरान्त सम्पूर्ण वेद-शास्त्रों के ज्ञान का सार मस्तिष्क में सुरक्षित रखने, परम्परानुसार उसका संरक्षण करने तथा उसका प्रचार-प्रसार करने की दृष्टि से ब्राह्मण ग्रन्थों के समय सूत्र-शैली का चमत्कार सामने आया। एक-एक शब्द और मात्रा के सम्बन्ध में सावधानी बरती जाने लगी। कालान्तर में जब इन सूत्र-ग्रन्थों के पाठों के सम्बन्ध में भेद उत्पन्न होने लगा, तब उस समय सभाएँ होतीं और

उन सभाओं में देश-भर के विद्वान् पाठों के सम्बन्ध में विचार और निर्णय करते। खासकर जिन वचनों पर धर्म की मान्यता है उनके सम्बन्ध में विचार होता था। अतः आश्चर्य होता है कि इतना विपुल और विविध ज्ञान का संरक्षण उन्होंने लेखन-कला शुरू होने के पूर्व तक कैसे किया।

आपने कहा कि कालान्तर में जब लेखन-कला प्रारम्भ हुई तब संग्रहालयों का सूत्रपात हुआ। तक्षशिला और नालन्दा आदि के संग्रहालयों में लाखों की संख्या में ग्रन्थों का संग्रह हुआ। जैनशास्त्र-भण्डारों तथा अन्य ग्रन्थागारों में मैंने बेठनों में सुरक्षित शास्त्रों को देखा है। इन ग्रन्थागारों के लिए ग्रन्थों से प्रतिलिपि करने वाला लिपिक दृष्टि स्थिर कर गरदन झुकाये सुन्दर अक्षरों में शास्त्रों को सुरक्षित करने के बाद मानो अन्य लोगों से कहता था कि इन्हें सुरक्षित रखो और मननपूर्वक पढ़ो। ग्रन्थों के प्रचार-प्रसार और संरक्षण की हमारी यही परम्परा रही है।

आपने आगे कहा कि हमारी ग्रन्थ-संरक्षण की उपयुक्त पद्धति और परम्परा में हमारे उस ऐतिहासिक क्रम से ऐसा समय आया जब सम्पूर्ण शास्त्र और कलाकृतियाँ नष्ट हो गईं। मानव-सभ्यता के विकास-क्रम में ऐसे समय बहुत आते हैं। इस विनाश-लीला के बाद कुछ स्थिरता आने पर पुनः शास्त्र-ग्रन्थों की प्रतियों की खोज होने लगी। जहाँ कहीं भी एक प्रति उपलब्ध हो जाती, तो उसकी कई प्रतियाँ की जातीं। फिर व्रत-समारोहों और उत्सवों में गृहस्थ यह प्रतिज्ञा करता कि हम अमुक शास्त्र की पचास प्रतियाँ या सौ प्रतियाँ अथवा हजार प्रतियाँ कराएँगे और देश के संग्रहालयों को उन्हें समर्पित कर देंगे। जब हमारे पूर्वज यह भली-भाँति जानते रहे हों कि साधनों के अभाव में शास्त्रों, पुस्तकों तथा सद्ग्रन्थों का संरक्षण और प्रचार कैसे हो सकता है, तब हमें नई परिस्थितियों और नये परिवेश में ग्रन्थों के प्रचार-प्रसार के सम्बन्ध में कुछ सोचना आवश्यक है।

अतः अब प्रश्न यह है कि जिसका प्रचार-प्रसार करने की विधि के सम्बन्ध में विचार करने के लिए हम यहाँ एकत्र हुए हैं, उसके बारे में प्रत्येक लेखक, प्रकाशक और पुस्तक-व्यवसायी पहले यह सोचे कि हम किसका प्रचार कर रहे हैं, किसका उन्नयन कर रहे हैं। प्राचीन समय में जनसंख्या कम थी, विज्ञान के सब प्रकार के साधन कम थे, पर उस समय के लोगों में इतनी लगन थी कि पढ़ने-सुनने वालों को ग्रन्थ मिल जाते थे। प्राचीन समय में गुरु को बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। गुरु और शास्त्र को पहले जमाने में बराबर रखते थे। देव, गुरु और शास्त्र की हम पूजा करते थे। विद्या कण्ठ में और पैसा गाँठ में हमारा सिद्धान्त-वाक्य था। ज्ञान केवल वही नहीं था जो संग्रहालयों में हो। संग्रहालयों के ज्ञान को तो हम संदर्भमय ज्ञान कहते और समझते हैं। अतः अब विज्ञान के सभी साधनों से सम्पन्न इस युग में हमें जिन पुस्तकों का प्रचार करना है उनके गुण-तत्त्व पर हमें ध्यान देना है। जनसंख्या जिस अनुपात से बढ़ रही है, हमें उसी अनुपात से ग्रन्थों का सर्जन करना है। आज चार लाख दस हजार संस्थाओं में बयालीस करोड़ विद्यार्थी पढ़ते हैं। उनके लिए पाठ्य ग्रन्थ चाहिएँ। आज पाठ्य-ग्रन्थों का सबसे अधिक प्रचार हो रहा है, पर पाठ्य-पुस्तकों में जो धाँधली चल रही है वह सर्वविदित है। लिखने वाले को यह पता नहीं कि वह क्या लिख रहा है। छापने वाले को यह पता नहीं कि वह क्या छाप रहा है। अशुद्ध गलत और बिना परिश्रम लिखी पुस्तकें चल रही हैं। हम जो पुस्तकें प्रकाशित करते हैं उनके सम्बन्ध में हमें यह पता नहीं कि जिनका हम प्रचार-प्रसार कर रहे हैं वे कैसी हैं। हमें यह देखना है कि वे हमें जीवन दृष्टि क्या दे रही हैं। पुस्तक-प्रकाशन से ज्ञान का प्रश्न भले ही हल हो जाए, पर जब तक जीवन-दृष्टि नहीं मिलती हम अपने उद्देश्य में सफल नहीं हो सकते। प्रचार-प्रसार के पहले हमें वह जीवन दृष्टि चाहिए जो हमें हमारी मूढ़ता, परम्परा की मूढ़ता आदि बताए। दलगत राजनीति से उत्पन्न मानसिक दासता फैलाने वाले साहित्य से हमें सावधान रहना है। यह लेखकों और प्रकाशकों का सबसे बड़ा दायित्व है।

आपने वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति पर प्रकाश डालते हुए कहा कि आज राष्ट्रसंघ बना, यूनेस्को बना, फिर भी सारे विश्व के मानव भयग्रस्त हैं। पहले महामारी और दुर्घटना आदि सीमित थी, पर आज हिन्देशिया को यदि रेडियो सक्रिय किरणें प्रभावित करती हैं तो हमारे

हृदय पर पड़ते हैं।

अतः हमें यह देखना है कि संसार को आज जिस भय ने ग्रस लिया है उसके लिए साहित्य क्या कर सकता है। जब हम यह मान लेते हैं कि अमुक पुस्तक अच्छा साहित्य है, तब हमें यह सोचना चाहिए कि इसका प्रचार-प्रसार कैसे हो। आज देश में अशिक्षा बहुत है। और विज्ञान के साधन इतने हैं कि कुशिक्षा का खतरा बहुत है। आवश्यकता इस बात की है कि ज्ञान, भावना और प्रेरणा की दृष्टि से सही साहित्य का सृजन और प्रचार हो। बच्चों के लिए विपुल मात्रा में साहित्य का सृजन हो रहा है। उसकी उत्कृष्टता, चित्रमयता और मनोरंजकता का भी हमें ध्यान रखना चाहिए। साथ ही हमें सस्ते मूल्य वाली पुस्तकमाला का अधिकाधिक प्रकाशन करना चाहिए, जिससे अल्प-वित्त वाले भी पुस्तकें खरीद सकें।

आपने कहा कि पुस्तक मात्र व्यवसाय नहीं वरन् मिशन भी है। अतः हमें ग्राहकों के साथ अच्छा सम्पर्क करना चाहिए और सचाई तथा निष्ठा के साथ उसकी ज्ञान-सम्बन्धी जरूरतें पूरी करनी चाहिएँ।

श्री देवनारायण द्विवेदी का भाषण

ज्ञानमण्डल लिमिटेड के प्रकाशन-विभाग के व्यवस्थापक श्री देवनारायण द्विवेदी ने कहा कि बंगाल, गुजरात तथा अन्य प्रदेशों में पुस्तकों का प्रचार-प्रसार अधिक है। पर हिन्दी-भाषियों की संख्या अधिक होते हुए भी राष्ट्र-भाषा की पुस्तकों का प्रचार-प्रसार अपेक्षाकृत कम है। इस सन्दर्भ में अक्सर यह कहा जाता है कि हिन्दी-भाषियों में पढ़ने की रुचि बहुत कम है। इसमें पाठकों का ही दोष नहीं है, लेखक और प्रकाशक भी इस कमी के लिए उत्तर-दायी हैं। प्रकाशक की क्या रुचि है? किस प्रकार की पुस्तकें वे पढ़ना चाहते हैं। रामचरितमानस की लाखों प्रतियाँ आज भी प्रतिवर्ष बिक जाती हैं। शरत्-साहित्य के पचासों अनुवाद निकले हैं और काफी संख्या में उनकी बिक्री हुई है। जिस प्रकार की पुस्तक जनता के लिए उपादेय और उसकी रुचि के अनुकूल हो, उसका ही प्रकाशन होना चाहिए।

आज लेखक न तो जन-रुचि को परखकर साहित्य का सृजन करते हैं और न प्रकाशक वैसी कृतियों के छापने का प्रयास करते हैं। आज तो पाण्डुलिपियाँ आते ही बिना निरीक्षण-परीक्षण के ही प्रकाशक छपाई में लगा देते हैं। हमारे पूर्वज वैदिक वाङ्मय के बाद जनरुचि और उसके ज्ञान-गाम्भीर्य के अनुसार उपनिषदों, ब्राह्मण-ग्रन्थों और स्मृति-ग्रन्थों के रूप में पुस्तक-सृजन का क्रम बदलते रहे। वैदिक कहानियाँ सुन्दर, उद्‌बोधक, रसमय और नीति-परक हैं। यदि हम कहानी का ही प्रकाशन करें तो नैतिक दृष्टि न छूटने पाए। केवल घटना-वैचित्र्य को लेकर हमारे पाठक अपने को तल्लीन नहीं कर पाते।

पुस्तकों के प्रचार-प्रसार के उपायों की चर्चा करते हुए आपने कहा कि प्रचार एक कला है। जो इसमें विज्ञ हैं वे अच्छा प्रचार कर लेते हैं। कोई एक साधन सब पुस्तकों के लिए उपयोगी नहीं हो सकता। पुस्तक-प्रचार के लिए अच्छी पत्र-पत्रिकाओं में आलोचनाएँ प्रकाशित होनी चाहिएँ। अच्छे प्लेकार्ड, पोस्ट-नोटिस आदि के द्वारा भी पुस्तक का प्रचार-प्रसार हो सकता है।

अध्यक्ष का भाषण

डॉ० मंगलदेव शास्त्री ने अध्यक्ष-पद से भाषण करते हुए कहा कि हमारे हिन्दी-जगत में हम अभी उत्कृष्ट और उपयोगी पुस्तक के प्रकाशन की दृष्टि से काफी पिछड़े हैं। पाठ्य-पुस्तकों का अवश्य अधिक प्रकाशन और प्रचार-प्रसार होता है, किन्तु उसमें कितनी कमियाँ हैं, कितनी अनीति उसमें बरती जाती है। अतः पाठ्य-पुस्तकों के निरीक्षण-परीक्षक अधिकारी, प्रकाशक और लेखक मिल-जुलकर उत्कृष्ट पुस्तकों का प्रकाशन आरम्भ करें तो धीरे-धीरे हिन्दी-प्रकाशनों का स्तर ऊँचा हो सकता है।

आपने कहा कि पुस्तकों के प्रचार-प्रसार के लिए हर ग्राम और नगर में पुस्तकालय होना चाहिए। हर सम्पन्न व्यक्ति के घर में अच्छा पुस्तकालय होना चाहिए। आध्यात्मिक साहित्य के प्रकाशन के क्षेत्र में अभी बहुत कम काम हुआ है। वेदों का ऐसा अनुवाद प्रकाशित होना चाहिए जिसमें मूल का भी आनन्द मिले। उपनिषदां और दर्शन के प्रामाणिक अनुवादों की सस्ती पुस्तक-मालाएँ प्रकाशित होनी चाहिएँ। जर्मनी आदि में पुस्तकों के सस्ते-से-सस्ते

संस्करण उपलब्ध हैं। नागरिकता, कर्तव्य-पालन, शील और सदाचार का प्रचार करने वाले ग्रन्थों की अतीव आवश्यकता है।

श्री करुणापति त्रिपाठी का भाषण

राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह के अन्तर्गत १८ नवम्बर, ६१ को आयोजित गोष्ठी में 'राष्ट्रीय एकता में पुस्तकों की भूमिका' विषय पर भाषण करते हुए श्री करुणापति त्रिपाठी ने कहा कि राष्ट्रीय एकता की भूमिका का तात्पर्य यह है कि राष्ट्रीय एकता हेतु क्या आधार प्रस्तुत किये जा रहे हैं। छल-कपट-विहीन सरल बालकों के संस्कारों को प्रारम्भ से ही राष्ट्रीय एकता हेतु जाग्रत करें। पुस्तकें शिक्षा का प्रमुख साधन होने के कारण इस दृष्टि से उनकी रचना करनी होगी कि वे देश में भावात्मक एकता के लिए भूमि प्रस्तुत कर सकें।

आज आर्य और अनार्य के संघर्ष के कारण ही एकता की समस्या है। पाँच सौ वर्ष पूर्व आर्य और अनार्य की कोई चर्चा नहीं थी। किन्तु इतिहास प्रस्तुत करने के दृष्टिकोण ने इसे बढ़ाया और अंग्रेजों ने इसे प्रज्वलित किया। अतः आवश्यकता इस बात की है कि पुस्तकों की रचना, ऐसी दृष्टि से की जाए, जो इस प्रकार के भेदों को मिटाकर एकत्व स्थापित कर सकें।

शिक्षा के पाठ्य-ग्रन्थों का ऐसा निर्माण हो, जिनसे हम उन्हें सुसंस्कृत कह सकें तथा भेद-बुद्धि मिटा सकें। पाठ्य-ग्रन्थों के अतिरिक्त अन्य प्रकार के साहित्य द्वारा भी एकत्व की भावना उत्पन्न करें। आज राष्ट्रीय एकता को उत्पन्न करने में पुस्तकों को अपना महत्वपूर्ण अभिनय प्रस्तुत करना है। लेखक इस महायज्ञ में अपनी आहुति दें।

डॉ० जगन्नाथप्रसाद शर्मा का भाषण

अध्यक्ष-पद से भाषण करते हुए डॉ० जगन्नाथप्रसाद शर्मा ने कहा कि 'राष्ट्रीय एकता की स्थापना में पुस्तकों की भूमिका' शब्द से अभिप्राय यह है कि साहित्य तथा पुस्तक-प्रणयन के माध्यम से इस विशाल देश को कैसे एक सूत्र में बाँध सकते हैं।

आज एकता के नाम पर अनेकता को प्रश्रय मिल

रहा है। इस विशाल प्रखण्ड पर एकता स्थापित करना ही कठिन हो रहा है।

अपनी सीमा के भीतर हम किस प्रकार संघर्षमयी स्थिति और विरोधी तत्त्वों के अतिक्रमण को रोक सकते हैं।

पुस्तक दो ही क्षेत्रों में निर्मित एवं प्रसारित होती है। वह है साहित्य-सर्जना और शिक्षा का क्षेत्र। इस क्षेत्र में यदि योजनापूर्वक कार्य करें तो बहुत-कुछ सफलता मिल सकती है।

रहन-सहन, वेशभूषा, आचार-विचार तथा स्थान की विभिन्नता इस देश में यद्यपि अनेक हैं, किन्तु सबके हृदय, सबके संस्कार तथा सबके जीवन का दर्शन एक-सा है। इस आन्तरिक एकत्व को उभारकर साहित्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में अपना सकें, तभी हमारा कल्याण होगा। भेद-बुद्धि करने वाले तत्त्वों को आज हमें रोकना होगा। इस विशाल देश की अपनी संस्कृति है। पार्थक्य होते हुए भी एकत्व है। देश के सभी भू-भाग के निवासियों को हम अपने उपन्यास, नाटक तथा कहानी के पात्र बनाएँ। उनके जीवन तथा परिस्थितियों पर साहित्य की रचना करें। इस साहित्यिक तथा सांस्कृतिक निधि को हम रचनात्मक साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत करें।

गत सौ वर्ष के भारतीय साहित्य के इतिहास का तुलनात्मक अध्ययन करें तो एक प्रकार की चेतना, एक ही प्रकार का जागरण व एक ही अभिरुचि मिलेगी। मलयालम, उड़िया तथा हिन्दी, सभी के साहित्य में, उनके उपन्यासों में एक ही जीवन बोलता है। युगधर्म की सुरक्षा एवं चेतना सभी साहित्यों में दीखती है। नगर व ग्राम की तुलना तथा उनकी परिस्थितियाँ प्रेमचन्द के समान मलयालम साहित्य में भी मिलती हैं।

दूर-दूर फैले हुए भू-भाग के लोगों के अन्तर और बाहर दोनों की चेतना-शक्ति को अभिव्यक्त करना है। सब साहित्यों के मूल स्रोत संस्कृत की चेतना को हम ग्रहण करें। संस्कृत हमारे देश की भावात्मक एकता की एकमात्र प्रतीक है। कालिदास के प्रकृति-वर्णन को पढ़कर विभिन्न प्रान्तों के भिन्न-भिन्न भाषा-भाषियों के हृदय में एक-सी भावना उत्पन्न होती है।

राजनीतिक कुचक्र व धार्मिक विरोध की भावनाओं के

रहते हुए भी हम उत्कृष्ट पुस्तकों द्वारा राष्ट्रीय एकता स्थापित कर सकते हैं।

आपके अतिरिक्त सर्वश्री विश्वनाथ राय, रामतिलक शास्त्री, गोविन्दसिंह और पृथ्वीनाथ भार्गव ने भी उक्त विषय पर अपने-अपने दृष्टिकोण से विचार प्रस्तुत किये।

श्री वासुदेवशरण अग्रवाल का भाषण

१६ नवम्बर को टाउन हॉल में श्री राजाराम शास्त्री की अध्यक्षता में 'जीवन में कला का स्थान' विषय पर एक विचार-गोष्ठी का आयोजन किया गया था। गोष्ठी के मुख्य वक्ता डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल ने विषय की स्थापना करते हुए कहा कि जीवन में कला का क्या स्थान है, यह विषय हम सबके लिए मूल्यवान है। कला का जीवन के साथ निकटतम सम्बन्ध है। यद्यपि कला की परिभाषाएँ अनेक हैं, किन्तु कला की सामान्य परिभाषा यह है कि सौन्दर्य की रूप में जो अभिव्यक्ति है उसे कला कहते हैं। प्रकृति तथा प्रत्येक वस्तु में रूप प्रधान है। बिना रूप के कोई रचना या सृष्टि नहीं होती। रूपों का समुदाय हमारे चारों ओर स्थित है। मानसी सृष्टि का तात्पर्य इन्हीं रूपों में है। मनुष्य ने सृष्टि के आरम्भ में इन्हीं रूपों की सृष्टि की है, जो उसके जीवन के अंग हैं।

आपने कला के स्वरूप-विधान का विश्लेषण करते हुए कहा कि पहले मनुष्य अपने चित्त में कल्पना करता है कि किस प्रकार रूप बनाए, तब वह विभिन्न माध्यमों से उसको अभिव्यक्त करता है। कलाकार का अन्तःस्पर्श उसकी कला की अभिव्यक्ति द्वारा होता है। सत्यं, शिवं, सुन्दरम् हमारे देव के सर्वसुन्दर रूप की कल्पना है। शिल्पी अपने मन के सौन्दर्य को अपने शिल्प में गढ़ता है। शिल्प हमारे यहाँ एक धार्मिक कर्म है, प्रभु के प्रति मानव की रूपमय अभिव्यक्ति है।

आपने आगे कहा कि गौतम बुद्ध को रूपसत्व कहते हैं, अर्थात् उन्होंने उस युग को रूप प्रदान किया। शिल्प एवं स्थापत्य द्वारा हमारे समस्त देश में गुप्त कला का प्रसार हुआ है। छोटे-छोटे खिलौने, जो राजघाट की खोदाई में मिले हैं, वे उसी रूपसत्व के परिचायक हैं। कालिदास तथा बाणभट्ट की कृतियों में व्यक्त सौन्दर्य उन खिलौनों में

दीखता है। सर्वसुलभ मिट्टी के माध्यम से जन-मानस अपने भावों को रूप प्रदान करता है।

आपने कहा कि जनतन्त्र के इस युग में कला सर्वसुलभ होनी चाहिए। महँगी कला जनता के लिए नहीं होती। हमारे छोटे-छोटे पात्रों के रूप में जो प्रतिदिन के प्रयोग की वस्तुएँ थीं, उनमें भी कितना सौन्दर्य है, कितना रूप है! ये पात्र नेत्रों को सुखकर प्रतीत होते हैं, जिससे मन उत्फुल्ल होता है। प्राचीन समय में भारतीय वस्त्र संसार में प्रसिद्ध थे। गुजरात और काठियावाड़ के छपे वस्त्रों की कलात्मकता सर्व-प्रशंसित थी तथा उनकी सर्वत्र माँग थी। अलंकरण कला की बारहखड़ी है। छापे की बूटियाँ वस्त्र की कलात्मकता का अलंकरण है। काश्मीर के शाल-दुशालों में भी पहले भारतीय अलंकरण की विशेषता थी। इधर सस्ते पश्चिमी अलंकरण का प्रयोग भी यत्र-तत्र दिखलाई पड़ता है।

आपने कहा कि बरतनों, वस्त्रों आदि पर जो कलात्मक चित्र बनाते थे या छपाई होती थी, उसी प्रकार हमारी स्थापत्य-कला भी अति महत्त्वपूर्ण थी। नई इमारतों के बनाने में भारतीय स्थापत्य परम्परा है या नहीं, यह भी हमें देखना है। भारत की परम्परा बड़ी बलवती है, जिसके कारण आज भी हमारा समाज प्राणवान् है। यदि हम उसको पहचानें और समझें, उसके अर्थ को पहचानें और परखें तथा फिर से राष्ट्र के जीवन में उसे उतारें तो कला की वास्तविक साधना होगी तथा देश का कल्याण होगा। आज तो स्थिति यह है कि प्राचीन भारत के स्थापत्य के इंजीनियरिंग-शिक्षाक्रम में न तो कोई प्रश्न-पत्र है और न पढ़ाने की कोई व्यवस्था है। चित्रकला, नृत्यकला, अभिनय-कला, छपाई की कला, मूर्तिकला आदि अनेक ऐसी कलाएँ हैं, जिनमें स्थूल प्रतीकों पर आध्यात्मिकता का आरोपण है। हमारे यहाँ प्राचीन मन्दिरों में कला द्वारा सारे समाज और देश की भावना व्यक्त की गई है। अतः हमें कला की भारतीय परम्परा की रक्षा करते हुए साधना करनी है। इसी साधना द्वारा हम कुरूपता से जीवन को बचा सकते हैं। आज जीवन को चारों ओर से कुरूपता ग्रस रही है। उसे इससे बचाने के लिए भारतीय संस्कृति और कला-साधना को ग्रहण करना चाहिए।

श्रीमती महादेवी वर्मा का भाषण

१४ नवम्बर को काशी में आयोजित प्रथम राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह में अध्यक्ष-पद से किये गए भाषण में हिन्दी की सुप्रसिद्ध कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा ने कहा कि राजनीतिक दृष्टि से तो निश्चित ही हम आज स्वतन्त्र हैं, किन्तु मानसिक दृष्टि से हम स्वतन्त्र तभी हो सकते हैं जब हमारा रागात्मक संस्कार हो, मानव-मानव के बीच रागात्मक तादात्म्य स्थापित हो तथा हम अखण्ड मानवता के अंग बनें। यदि हम मानसिक दृष्टि से स्वतन्त्र न हुए तो राजनीतिक स्वतन्त्रता का कोई मूल्य नहीं।

आपने कहा कि विविध भाषा-भाषी भारत की आत्मा सदा अखण्ड रही है। सांस्कृतिक, नैतिक और दार्शनिक दृष्टि से भारत सदा एक रहा है। आसेतु हिमालय भारत के एक हृदय का संवाद दूसरे हृदय तक पहुँचता रहा। हृदय-हृदय के बीच अज्ञात सेतु बनते रहे, एक ही स्वप्न देश की अनन्त आँखों में बनते और पलते रहे। अतः राजनीतिक दृष्टि से स्वतन्त्र होकर यदि हम सांस्कृतिक दृष्टि से देश को स्वतन्त्र नहीं रख सके तो अहं स्फीत होगा और हम विकास भी कुछ न कर सकेंगे। अतः हमें वही पुस्तकें चाहिएँ जो इस पीढ़ी के मनुष्यों को मनुष्य बना सकें, हमारी भावी पीढ़ी को रागात्मक तादात्म्य की अमूल्य निधि प्रदान कर सकें, उसे नैतिक दृष्टि से पंगु और विकलांग न होने दें। हमें मनुष्य के अन्तरंग को विराट् बनाने वाली पुस्तक चाहिए। एक ही उत्कृष्ट पुस्तक अनन्त युग तक मानव को सच्चा भाव, उदात्त विचार, उत्कृष्ट जीवन-दर्शन तथा सच्चा स्वप्न दे सकती है। अतः हमें यह देखना होगा कि कैसी पुस्तकें हमारे विद्यार्थियों को पढ़ाई जाती हैं। कैसी पुस्तकों का हमारे पुस्तकालय में संग्रह हो रहा है। तभी ऐसे समारोहों की उपयोगिता है। अन्यथा यदि उत्कृष्ट बहिरंग वाली इतनी पुस्तकें आप प्रकाशित कर लें जिससे समुद्र पट जाए, तो भी उसका कोई अर्थ नहीं।

आपने कहा कि यद्यपि भारत बहुभाषा-भाषी देश है, किन्तु भाषा तो केवल माध्यम-मात्र है, भावों और विचारों को वहन करने वाली वाहन मात्र है। वाहन के प्रश्न को लेकर संघर्ष का सूत्रपात होने पर साहित्य की पराजय हो जाएगी। साहित्य तो भाषा को रूप-रेखा प्रदान करता है।

भाषा साहित्य नहीं है। जिस प्रकार कालिदास के साहित्य को पढ़ने से हमारे हृदय का उसके साथ जो तादात्म्य होता है वैसी ही रागात्मक एकता हमें गेटे और शेक्सपियर के साहित्य को पढ़ने पर होती है। विश्व-मानव का हृदय तो एक है।

उत्कृष्ट पुस्तक की पहचान बताते हुए आपने कहा कि महान् पुस्तक वही है जो समष्टि को स्पर्श कर सके, अंतर्राष्ट्रीय हो सके। जिस ग्रन्थ के विचार को प्रत्येक मानव कल्याणकारी समझे तथा जिस पुस्तक की भावना को वह अपनी भावना समझे, वही उत्कृष्ट है। वही पुस्तक महान् है जिससे मनुष्य अपने जीवन का विकास कर सके, जीवन में जिससे बल और संबल पा सके। पुस्तक ऐसा साधन है जो मनुष्य को ऐसे ढाल पर लाकर खड़ा कर सकता है, जहाँ से वह लुढ़कता हुआ अतल गर्त में पहुँच सकता है अथवा ऐसी ऊँचाई की ओर अग्रसर कर सकता है कि वह गौरीशंकर के उच्च शिखर पर पहुँच सके। चल-चित्र ऐसी पुस्तकों के लिए प्रतिद्वन्द्वी हैं। भाषा उसकी सहज ही में बन जाती है और उत्तेजना उससे सहज सम्भव है। अतः उत्कृष्ट पुस्तकों के लिए रुचि का अभाव स्वाभाविक है। परीक्षा के अतिरिक्त पुस्तकें पढ़ने की ओर हमारा झुकाव कम होना सहज है।

आपने कहा कि राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह-जैसे आयोजनों के अवसर पर हमें उन राष्ट्रों की पुस्तकों को भी देखना चाहिए जो राष्ट्र बन रहे हैं, विकसित हो रहे हैं और प्रगति कर रहे हैं। हमें यह देखना चाहिए कि वे देश अपनी वर्तमान और भावी पीढ़ी को कैसे ग्रन्थ और कैसी पुस्तकें प्रदान कर रहे हैं। प्राविधिक और यान्त्रिक शिक्षा की भी आवश्यकता है। पर हमें मनुष्य को यन्त्र नहीं बनाना है। यन्त्र चाहे कितना भी रहस्यमय और महत्त्वपूर्ण हो, पर उसका चालक मनुष्य ही होगा। उसे हमें मनुष्य बनाना होगा और मनुष्य बनाने के लिए हमें इस देश को रागात्मक एकता प्रदान करनी होगी। मनुष्य को सुन्दर और मधुर बनाना होगा। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के हमारे प्राचीन दार्शनिक सिद्धान्त की जो उपलब्धि है उसे हमें विस्मृत नहीं करना है।

प्रकाशकों से हमारा यही निवेदन है कि वे अपने

लेखकों की उपेक्षा न करें। आपको मूल्यवान् विचार, उत्कृष्ट ज्ञान, कोमल भाव और सुन्दर स्वप्न प्रदान करने वाला भाव न तो मुद्रक दे सकता है, न पुस्तक-विक्रेता दे सकता है और न ग्राहक दे सकता है। अतः आप अपने लेखकों की कभी उपेक्षा न करें।

हमारा राष्ट्र अभी शिशु है। उसे हमें चलना सिखाना है, स्वप्न देखना सिखाना है, विराट् बनाने की ओर अग्रसर करना है। किस्सा गुलबकावली और तोता-मैना से मनुष्य की उदात्त भावना जाग्रत नहीं हो सकती है। अतीत के लक्ष्य में एकता स्थापित रखते हुए साहित्य, विज्ञान और संस्कृति के क्षेत्र में हमें अग्रसर होना है। मेरे निकट सब-कुछ मानव-सापेक्ष है। निरपेक्ष ब्रह्म भी हमारे भीतर आकर सापेक्ष हो जाता है। चलचित्र के द्वारा ऐसे किसी भी साहित्य की हम आशा नहीं कर सकते जो उत्कृष्ट साहित्य के साथ रख सकें।

आपने कहा कि पुस्तक-प्रणयन के पाँचों अंगभूत साधनों—(१) लेखक, (२) प्रकाशक, (३) मुद्रक, (४) विक्रेता और (५) क्रेता को सम्मिलित करना है। बिना सत्साहित्य के किसी भी राष्ट्र का उत्थान सम्भव नहीं है क्योंकि सत्साहित्य ही अहं की ग्रन्थि को खोल सकता है, उसे समष्टि में समाहित कर सकता है। पुस्तकों का बहिरंग ही उसके लिए सब-कुछ नहीं है। तुलसीदास हमारे स्पन्दन हैं, सूरदास हमारे जीवन के माधुर्य हैं और मीरा हमारी संवेदना को अपने रसमय गीतों से झकझोर देती हैं। उनकी कृतियों का आधार अच्छा कागज, छपाई या चित्रमयता नहीं है। उनकी कृतियों की संवेदना, राग, तत्त्व और ज्ञानतत्त्व हमारे विचारों को झकझोर देता है और हृदय को छू लेता है।

आज उच्च साहित्य के प्रणयन की समस्या कितनी जटिल हो गई है! इस विषय पर प्रकाश डालते हुए आपने कहा कि आज पुस्तक की स्थिति लेखक, प्रकाशक, मुद्रक, विक्रेता और ग्राहकों के बीच द्रौपदी-जैसी हो गई है। सभी उसका मूल्यांकन अपनी-अपनी दृष्टि से करते हैं। उनकी दृष्टि प्रायः बहिरंग ही रहती है। ऐसी स्थिति में लेखक भी उनकी दृष्टि से ही लिखने को बाध्य होता है। वह अपने मन की बात नहीं कर पाता। पुराने समय में स्थिति दूसरी थी। तब लेखक आत्माभिव्यक्ति के लिए लिखता था। अभिव्यक्ति की प्रेरणा उसे परम्परा से सहज प्राप्त थी। उसके पास ज्ञान, संवेदना और अनुभूति की जो सम्पदा होती थी, वह सहज ही दूसरों को दे देने के लिए बाध्य था। गंगा में जिस प्रकार फूल अर्पित कर दिए जाते हैं, मानो उसी प्रकार वह अपने भाव-सुमनों को महाकाल के प्रवाह में अर्पित कर देता था। फिर उससे युग-युग को जो लेना हो ले ले। हमारे प्राचीन युग के अतुलनीय बहुमूल्य विचार भोजपत्रों पर—तालपत्रों पर अंकित हैं। उनमें कौनसी बाह्य सज्जा है? आज लोग मेकअप, गेटअप और मुद्रण-कला को देखकर पुस्तकें लेते हैं। प्रकाशक इन ऊपरी बातों का ध्यान रखते हैं। कोई पुस्तक की अंतरात्मा में प्रवेश करने की कोशिश नहीं करता। इस तरह हमारा साहित्य अन्तःसम्पदा से रिक्त हुआ जा रहा है। लेखक भी प्रकाशकों और ग्राहकों की निम्न रुचि के अनुकूल लिखने के लिए विवश हुआ जा रहा है, क्योंकि आज उसके लिए लेखन आत्माभिव्यक्ति का नैसर्गिक साधन न रहकर जीविकोपार्जन का साधन बन गया है। ऐसी स्थिति में राष्ट्र का वास्तविक निर्माण नहीं हो सकता। सीपी का महत्त्व तो उसके अन्दर रहने वाले मोती के कारण ही है। पुस्तक का महत्त्व भी उसमें प्रतिष्ठित आत्मा से ही। हमें यह देखना है कि पुस्तक में उस महान् आत्मा की कितनी प्रतिष्ठा हुई है। पुस्तक की आत्मा तो लेखक ही है। पुस्तक को रागत्व, संवेदना और प्राण की सम्पदा प्रकाशक, मुद्रक या विक्रेता कोई नहीं दे सकता। ग्राहक तो ऊँचा ज्ञान प्राप्त करने की प्रतीक्षा में ही है। उसे वह ज्ञान लेखक के बिना और कौन दे सकता है?

शिक्षामन्त्री का भाषण

सम्मेलन का शुभारम्भ करते हुए प्रदेश के शिक्षामन्त्री आचार्य जुगलकिशोर ने कहा कि राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह का उद्देश्य यही है कि हमारी राष्ट्रभाषा में जो पुस्तकें प्रकाशित होती हैं उन्हें हम पाठकों तक कैसे पहुँचाएँ? हिन्दी-भाषी प्रदेश में प्रकाशित होने वाली पुस्तकों का प्रचार-प्रसार जैसा होना चाहिए वैसा नहीं है। इसके लिए आवश्यकता इस बात की है कि पुस्तकालयों की व्यापक

प्रकाशन-क्षेत्र में हलचल

दिसम्बर मास के प्रकाशन

आग, पानी और तूफ़ान
डॉ० यतीन्द्र

मनोविज्ञान और समाज-शास्त्र पर आधारित पहला ऐतिहासिक उपन्यास। मूल्य ४.००

टूटा व्यक्तित्व
मनहर चौहान

नवीन शैली में प्रस्तुत एक मनोवैज्ञानिक उपन्यास। मूल्य २.५०

भाग्यरेखा
गुरुदत्त

सुप्रसिद्ध लेखक का सामाजिक तथा रोचक उपन्यास। मूल्य ३.००

सभी पुस्तकें आकर्षक तीन रंगों के कवरों से युक्त

खूब लड़ी मर्दानी
मनहर चौहान

किशोरों के लिए वीर-रस से परिपूर्ण सचित्र उपन्यास। मूल्य २.००

बाजीराव पेशवा
उमाशंकर

किशोरों के लिए सचित्र उपन्यास जिन्हें वे पढ़कर फड़क उठेंगे। मूल्य २.००

देश देश की परियाँ भारत आईं
मनहर चौहान

विश्व की सुन्दर-सुन्दर लोक-कथाएँ आकर्षक चित्रों सहित प्रस्तुत। मूल्य २.००

संसार की तेरह श्रेष्ठ कहानियाँ

संसार की चुनी हुई श्रेष्ठ कहानियों का संकलन।

मूल्य २.५०

भारत के साहसी वीरों की गाथाएँ
धर्मपाल शास्त्री

भारत के चुने हुए वीरों की (सचित्र) कहानियाँ जिन्हें पढ़कर पाठक प्रेरणा प्राप्त करेंगे। मूल्य २.००

अक्तूबर मास के प्रकाशन
जिनकी भूरि-भूरि प्रशंसा हुई है।

१. तारों से पूछिये — उमाशंकर ५.५०
२. झरोखे — श्रीराम शर्मा 'राम' ५.००
३. सभ्यता की ओर — गुरुदत्त ३.००
४. गढ़मण्डल की रानी — उमा शंकर २.००

उमेश प्रकाशन
५, नाथ मार्केट, नई सड़क, दिल्ली-६
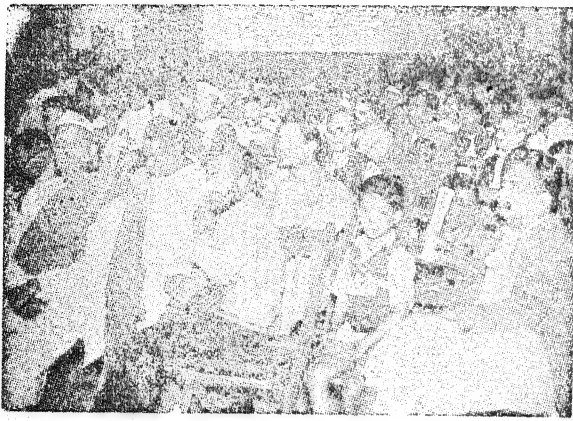
समारोह की एक भीड़

रूप से स्थापना हो। वहाँ जनता के उपयुक्त पुस्तकों की व्यवस्था हो और उनमें पुस्तकों को पढ़ने की रुचि जाग्रत की जाए।

आपने कहा कि आज हमें पाठकों में पुस्तक पढ़ने की रुचि पैदा करनी है और साथ ही यह भी देखना है कि हमारे प्रकाशन में क्या त्रुटियाँ हैं। विदेशों के प्रकाशकगण इस काम के लिए काफ़ी समय देते हैं और योजनाएँ बनाते हैं, जनता और सरकार का इसमें सहयोग प्राप्त करते हैं। विदेशों में पुस्तक पढ़ने वालों की संख्या बहुत अधिक है। यहाँ यद्यपि कम पुस्तकें छपती हैं, फिर भी पढ़ने वालों की संख्या बहुत कम है। अतः हमें यह देखना होगा कि किस प्रकार की पुस्तकें हम प्रकाशित करते हैं और किस प्रकार की पुस्तकों की जनता की माँग है।

आपने कहा कि राष्ट्रभाषा के माध्यम से उच्च शिक्षा के लिए जिस प्रकार की पुस्तकों की विश्वविद्यालयों और कॉलिजों को आवश्यकता है वैसी उच्चकोटि की पुस्तकें अभी तैयार नहीं हुई हैं। प्रकाशकों और सरकार दोनों को चाहिए कि 'क्लासिकल' पुस्तकों का अनुवाद कराकर विद्यार्थियों और अध्यापकों के सामने प्रस्तुत करें। अन्य प्रदेशों की मातृभाषा में भी उच्च शिक्षा के लिए आवश्यक पुस्तकें प्रकाशित की जाएँ। हमने इस बात का प्रयास किया कि बी० ए० तथा एम० ए० में विभिन्न विषयों की शिक्षा हिन्दी के माध्यम से हो। किन्तु बावजूद हमारी कोशिश के पुस्तकें उस पैमाने और स्तर की उपलब्ध न हो सकीं, जिसके द्वारा हिन्दी के माध्यम से शिक्षा दी जा सकती। सरकार के सहयोग से प्रकाशक इस अभाव को दूर करें।

आपने कहा कि प्रकाशकों को यह भी देखना है कि पुस्तकों के दाम कैसे कम हों और किन विषयों की पुस्तकें लिखवाई जाएँ। प्रकाशक ऐसी पुस्तकों की सूची बनाएँ जिनके उपयोगी सस्ते संस्करण घर-घर कम कीमत में पहुँचाये जा सकें।

स्वागताध्यक्ष का भाषण

अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ की राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह समिति की ओर से आगतों और अतिथियों का स्वागत करते हुए स्वागताध्यक्ष श्री सत्येन्द्रकुमार गुप्त ने कहा कि भारत ऐसे देश में, जहाँ से सारे संसार में ज्ञान-आलोक और सभ्यता तथा संस्कृति फैली, पुस्तकों का अपेक्षाकृत कम प्रसार खटकने वाली बात है। आधुनिक समय के अति विशाल और व्यापक ज्ञान-भण्डार को केवल श्रुति के सहारे ग्रहण कर लेना अथवा केवल स्मृति में ही सँजो रखना सम्भव नहीं है। इसको सुलभ और सुरक्षित रखने का साधन पुस्तकें हैं। यह बड़े हर्ष का विषय है कि अब इसकी ओर ध्यान दिया गया है।

श्री कृष्णचन्द्र बेरी
प्रकाशकीय दृष्टिकोण उपस्थित कर रहे हैं।

आपने पुस्तकों का प्रसार बढ़ाने के लिए इस बात की ओर भी ध्यान आकर्षित किया कि अपने देश में अनेक भाषाओं के साथ-साथ अनेक लिपियाँ भी प्रचलित हैं। साधारणतः हम बोलचाल में तो अन्य भाषा-भाषी लोगों की बातें सुनकर बहुत-कुछ समझ लेते हैं, परन्तु लिपि की विभिन्नता के कारण पुस्तकों में संगृहीत ज्ञान तथा विचारों को उस लिपि को न जानने वाले लोग ग्रहण नहीं कर पा रहे हैं।

श्री गुप्त ने कहा कि यह कार्य साहित्यिकों का नहीं, बल्कि प्रकाशकों का है कि एक भाषा की पुस्तकों को अन्य भाषा की लिपियों में भी प्रकाशित करें। इस दिशा में कितनी प्रगति हो सकती है, इसका एक प्रत्यक्ष उदाहरण भारतीय सिनेमा—फिल्मों के प्रचार में देखा जा सकता है। भाषा की बिभिन्नता के बावजूद एक साधारण तथा अच्छी फिल्म का प्रचार देश के कोने-कोने में ही नहीं, बल्कि देश के बाहर भी हो जाता है। मगर एक अच्छी-से-अच्छी पुस्तक का भी उतना व्यापक प्रचार नहीं हो पाता। कारण स्पष्ट है कि फिल्म के साथ लिपि की विभिन्नता की कठिनाई नहीं है, जो पुस्तकों के साथ है। साथ ही यह बात भी है कि फिल्मों की भाषा अपेक्षाकृत सरल और अधिक लोगों की समझ में आ सके, ऐसी रखी जाती है।

प्रारम्भ में श्री गुप्त ने कहा कि भारत का प्रथम राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह देश के चार नगरों—कलकत्ता,

श्री बाँकेबिहारी भटनागर वक्तृता दे रहे हैं।
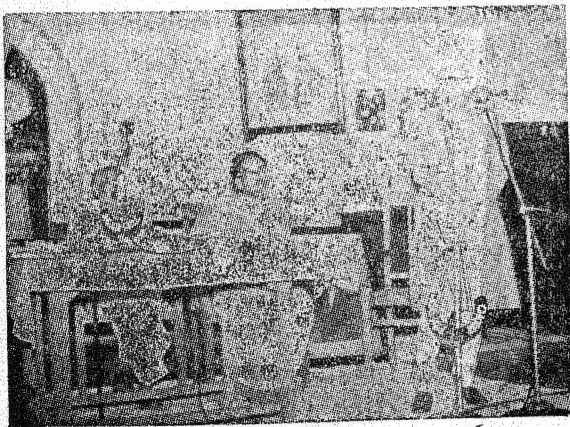
१४ नवम्बर को समारोह की अध्यक्षता श्री महादेवी वर्मा ने की। आचार्य युगलकिशोर (शिक्षामन्त्री उत्तरप्रदेश) ने उद्घाटन किया।

मद्रास, बम्बई और दिल्ली के साथ-साथ वाराणसी में भी आरम्भ होने जा रहा है। इस अवसर पर मैं अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ की स्थानीय राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह समिति की ओर से आप सब लोगों का अभिनन्दन करता हूँ।

यह हर्ष की बात है कि जीवन के इस महत्त्वपूर्ण और बहुत अंशों में उपेक्षित अंग के पोषण के लिए अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ ने यह प्रशंसनीय कदम उठाया है। हमें इससे अधिक इस बात की खुशी है कि सारे देश के प्रकाशकों ने भाषा आदि के भेद-भाव को भुलाकर इस समारोह को एक साथ मनाने का निश्चय किया है। मुझे आपको सूचित करते प्रसन्नता हो रही है कि बंगाल, मद्रास और बम्बई के प्रकाशक संघों का भी इस समारोह में सहयोग है तथा देश के साहित्यकारों, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संस्थाओं, जननायकों तथा सरकारर के

नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

सूर्यकुमारी पुस्तकमाला

१-२. ज्ञानयोग : स्वामी विवेकानन्दजी ६.००
३. करुणा : श्री राखाल बाबू ४.५०
४. शशांक : „ „ ४.५०
५. बुद्ध चरित : अनु० श्री रामचन्द्र शुक्ल ३.७५
६. मुद्राशास्त्र : डॉ० प्राणनाथ विद्यालकार ३.५०
७-९. अकबरी दरबार : अनु० श्री ब्रजरत्नदास १२.००
१०. पाश्चात्य दर्शनों का इतिहास : डॉ० काशीप्रसाद जायसवाल ४.००
११. हिन्दू राज्यतन्त्र, भाग १ : डॉ० काशीप्रसाद जायसवाल ५.००
१२. कर्मवाद जन्मान्तर : लक्ष्मीप्रसाद पांडेय ३.७५
१३. हिन्दी साहित्य का इतिहास : श्री रामचन्द्र शुक्ल १०.००
१४-१६. हिन्दी रस गंगाधर, ३ भागों में : श्री पुरुषोत्तम शर्मा चतुर्वेदी २४.००
१७. हिन्दी गद्य शैली का विकास : जगन्नाथप्रसाद शर्मा ६.००
१८. सोवियत भूमि : श्री राहुल ५.००
१९. गुलेरी ग्रंथ, भाग १ : सं० श्री कृष्णानन्द २.००
२०-२१. भारतेन्दु ग्रंथावली, भाग २, ३ : २२.००
२२. हिन्दी व्याकरण : श्री कामताप्रसाद गुरु ९.००
२३. तुलसी की जीवन-भूमि : श्री चन्द्रबली पाण्डेय ३.७५
२४. असीम : अनु० श्री शम्भुनाथ वाजपेयी ५.००
२५. पाषाण कथा : „ „ ३.००
२६. ध्वनि सम्प्रदाय और उसके सिद्धान्त : डॉ० भोलाशंकर व्यास १०.००
२७. तांत्रिक बौद्ध साधना और साहित्य : श्री नगेन्द्रनाथ उपाध्याय ५.००

देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला

१. फाहियान का यात्रा विवरण : अनु० श्री जगमोहन वर्मा १.५०
२. सुंगयुन का यात्रा विवरण : अनु० श्री जगमोहन वर्मा १.२५
३. सुलेमान सौदागर : अनु० श्री महेश प्रसाद साधु १.५०
४. अशोक की धर्मलिपियाँ : श्री ओझाजी ४.००
५. हुमायूनामा : अनु० श्री ब्रजरत्नदास ३.५०
६. प्राचीन मुद्रा : अनु० श्री रामचन्द्र वर्मा ३.५०
७-८. मुहणोत नैणसी की ख्याति : श्री रामनारायण दूगड़ ९.५०
९. मौर्यकालीन भारत : श्री कमलापति त्रिपाठी २.००
१०-१३. मुगल दरबार : अनु० श्री ब्रजरत्नदास २२.००
१४. बुन्देलखण्ड का इतिहास : गोरेलाल तिवारी ३.७५
१५. अंधकारयुगीन भारत : डॉ० काशीप्रसाद जायसवाल ५.००
१६. मध्य प्रदेश का इतिहास : डॉ० हीरालाल २.००
१७. मोहेंजोदड़ो : श्री सतीशचन्द्र लाला ३.७५
१८. भागवत संप्रदाय : श्री बलदेव उपाध्याय ७.५०
१९. पुरानी राजस्थानी : श्री नामवरसिंह ४.००
२०. खड़ीबोली का आन्दोलन : डॉ० शितिकण्ठ मिश्र ७.००
२१. जहाँगीरनामा : अनु० ब्रजरत्नदास १५.००

विभिन्न अधिकारियों—सबने इस आयोजन में अपना योग दिया है। आज का यह समारोह हमारे राष्ट्रीय जीवन की प्रगति का बहुत ही महत्त्वपूर्ण कदम है।

पुस्तकें मानव-विवेक का प्रतिबिम्ब हैं, साथ ही महान् आत्माओं की सन्देशवाहक भी। आज मानव, जोकि झकझोर देने वाली व्यस्तता से भरे हुए जीवन का अनुभव कर रहा है, उसके लिए यह आवश्यक है कि ऐसी पुस्तकों की रचना हो, जिससे उसके अशान्त जीवन में शान्ति आये। पुस्तकों को मानव-संघर्ष के युग में अपनी भूमिका को आदर्श रूप में उपस्थित करना है। हमारी सांस्कृतिक परम्परा इस बात की गवाह है कि हमने सदैव पुस्तकों का समादर किया है और उन्हें अपने जीवन का अभिन्न अंग समझा है। अतः यह आवश्यक है कि स्वाधीन भारत अपने आर्थिक संक्रमण-काल में भी इस बात को न भूले कि पुस्तकों की भूमिका क्या है और उनके बिना हमारा आर्थिक समृद्ध जीवन व्यर्थ है। दुनिया के इतिहास को देख डालिए, कभी भी मानव-मस्तिष्क को इतना अधिक सोचने का अवसर नहीं पड़ा, जितना कि आज का मानव सोचता है। किसी भी शताब्दी में मानव-मस्तिष्क इतनी व्यापक सूचनाओं और व्यस्त विचारधाराओं से परिपूर्ण नहीं रहा, जितना कि वह आज है। सूचना का आधुनिक संचरण आज इतना व्यापक हो गया है कि दुनिया-भर के संवाद और विचारधाराएँ ज़बरदस्ती हमारे सामने आ खड़ी होती हैं। परिणाम यह हो रहा है कि विश्व के लाखों लोग जाग्रत हो उठे हैं और उनके मन में पढ़ने-लिखने की भावना बढ़ती जा रही है। ऐसी स्थिति में प्रकाशकों का यह कर्तव्य हो जाता है कि वे साहित्यकारों के सहयोग से ऐसा साहित्य प्रकाशित करें, जिससे पढ़ने के लिए उत्सुक जनता को समयोचित और ज्ञानवर्द्धक साहित्य प्राप्त हो। इस कार्य को सम्पन्न करने के लिए हमें सबसे पहले बच्चों और युवकों के लिए ऐसे साहित्य का निर्माण करना है, जिसमें ऐसा आकर्षण हो कि उसमें पठन-रुचि जाग्रत हो। राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह इसी आन्दोलन की भूमिका है। विदेश में यह समारोह प्रतिवर्ष बड़े पैमाने पर मनाया जाता है। जर्मनी का फ्रेंकफर्ट बुक फेयर, हालैंड का बुकवीक और अमेरिका का राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह पुस्तकों के प्रति जनता को आकृष्ट करने का अभिनव आदर्श है। जर्मनी का फ्रेंकफर्ट बुक फेयर और हालैण्ड के बुकवीक का शुभारम्भ वहाँ के राष्ट्रनायक करते हैं। और अभी हाल में जर्मन प्रकाशक संघ ने हमारे उपराष्ट्रपति डॉ० राधाकृष्णन् को शान्ति पुरस्कार इसी समारोह के अवसर पर प्रदान किया है। खुशी की बात है कि भारत में यह समारोह पाँच बड़े शहरों तक ही सीमित न रहकर समूचे दक्षिण भारत में, विशेष रूप से केरल, उत्तर भारत में आगरा, पटना, गाजियाबाद, बलिया आदि में, राजस्थान में जयपुर, जोधपुर व अजमेर में भी अनुष्ठित होने जा रहा है। समारोह का भारतवर्ष में यह पहला वर्ष है। आशा है आगामी वर्ष बहुत बड़े पैमाने पर अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ देश की अन्य प्रकाशन-संस्थाओं के सहयोग से इस कार्यक्रम को सम्पन्न करेगा।

वाराणसी में आज जो समारोह शुरू हो रहा है यह आठ दिन-व्यापी है। इसमें विचार-गोष्ठियों और प्रदर्शनी का विशेष कार्यक्रम रखा गया है। विचार-गोष्ठियों को इस ढंग से आयोजित किया गया है, जिससे प्रकाशकों, पुस्तक-विक्रेताओं, मुद्रकों, साहित्यकारों और कलाकारों के विचार प्रकाशन के सम्बन्ध में जनता को प्राप्त होंगे। साथ ही इस समारोह में यूनेस्को के क्षेत्रीय डायरेक्टर डॉ० अख्तर हुसेन का आना अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशन के क्षेत्र में राष्ट्रसंघ की शिक्षण-संस्था के कार्यक्रमों पर प्रकाश डालेगा। वाराणसी में इस समारोह का आरम्भ होना इस बात का सूचक है कि अपनी परम्परा के अनुरूप वाराणसी ने सांस्कृतिक क्षेत्र में सदैव अपने को आगे रखा है। मुझे आशा है कि वाराणसी की जनता, साहित्यकार, प्रकाशक, मुद्रक और लेखक इस सप्ताह-व्यापी कार्यक्रम में पूर्ण रूप से सहयोग देंगे और सप्ताह को सफल बनायेंगे। इन शब्दों के साथ मैं आपका पुनः स्वागत करता हूँ। जय भारत, जय भारती!

●

श्री रामचन्द्र शर्मा 'किशोर' तथा प्रो० दीनानाथ 'शरण' ने मिलकर 'अधूरे सपनों का देश' शीर्षक से एक नये ढंग का उपन्यास लिखा है। उनके कथनानुसार प्रस्तुत उपन्यास 'ग्यारह सपनों का देश' का प्रत्युत्तर है। जो इच्छुक प्रकाशक छापना चाहें वे कृपया अपनी शर्तों के साथ निम्न लिखे पते पर सम्पर्क स्थापित करें। पुस्तक पॉकेट बुक्स में भी आने लायक है।

दरियापुर गोला, बांकीपुर, पटना-४।

* * *

११३-आर, मॉडल टाउन, रोहतक से श्री सुधीन्द्रकुमार सूचित करते हैं कि वे अपने सामाजिक हास्य-एकांकियों का एक संग्रह प्रकाशित कराना चाहते हैं। पाण्डुलिपि तैयार है। प्रकाशनेच्छु उपर्युक्त पते पर पत्र-व्यवहार कर सकते हैं।

* * *

पाण्डेय रमेश 'कंचन', द्वारा श्री बी० प्रसाद, उप-राशनिंग पदाधिकारी, लालजी टोला, पटना से सूचना देते हैं कि उनके पास दो पाण्डुलिपियाँ—'मिट्टी का आदमी' (नाटक), एवं 'सन्नाटा चीखता रहा' (कहानी-संग्रह) प्रकाशनार्थ तैयार हैं। इच्छुक प्रकाशकगण उपर्युक्त स्थापित करें।

* * *

मेरे पास प्रकाशनार्थ २ पाण्डुलिपि तैयार हैं। उनके लिए मैं किसी अच्छे प्रकाशक की तलाश में हूँ अतः इन पुस्तकों के सम्बन्ध में विज्ञापन आपके पत्र में देना चाहता हूँ कृपया **लेखकीय मंच** के अन्तर्गत स्थान देने का कष्ट करें।

१. **अंग्रेज़ी काव्य की झाँकी**···पृष्ठ संख्या लगभग १५०।

इस पुस्तक में प्रसिद्ध एवं प्रतिनिधि कवियों की कुछ कविताओं का हिन्दी-पद्यानुवाद किया गया है। इसके पढ़ने से मौलिकता का आनन्द ही प्राप्त होता है।

२. **काव्य शिक्षा प्रवेशिका**···पृष्ठ संख्या लगभग २००।

इस पुस्तक में काव्य का अध्ययन, काव्य के अंग, काव्य की समालोचना आदि बड़े रोचक ढंग से दिये गए हैं। रचना सर्वथा मौलिक है।

इच्छुक प्रकाशक निम्नलिखित पते पर पत्र-व्यवहार करें।

पण्डित वासुदेवसहाय
१७, पुरानी विजयनगर, आगरा।

* * *

श्री उदय जैन 'उदयन', ४४ सराफ़ा बाज़ार, मन्दौर से सूचित करते हैं कि उनके पास एक सर्वथा मौलिक, जासूसी उपन्यास प्रकाशनार्थ तैयार है। जो भी प्रकाशक उसे प्रकाशित करना चाहें वे उपरोक्त पते पर पत्र-व्यवहार करें।

* * *

पुस्तकालय का सर्वोदयवादी स्वरूप

श्री परमानन्द दोषी, एम० ए०

पुस्तकालय एक सार्वजनिक संस्था है। इसका संगठन जनतान्त्रिक ग्राधार पर होता है। ग्रतएव इसके संचालन से लेकर उपयोग तक के सारे कार्य इसके संगठन एवं स्वरूप के ग्रनुरूप ही होने चाहिएँ। सभी व्यक्तियों पर इसकी समान दृष्टि रहनी चाहिए ग्रौर सभी व्यक्तियों की भी इस पर समान दृष्टि रहे। सभी व्यक्तियों की समान दृष्टि पुस्तकालय पर रहे, यह लोगों की रुचि, परिस्थिति, प्रवृत्ति ग्रादि की विभिन्नता के कारण यदि संभव न भी हो, तो भी पुस्तकालय ग्रपनी समदर्शिता से क्यों चूके? ग्रपने कार्य के सर्वोदयी पक्ष को क्यों ग्रन्धकारपूर्ण रहने दे? उसे तो सर्वसाधारण की बिना किसी भेदभाव के निःस्वार्थ-भाव से सेवा करनी है। समाज में लोगों का ऊँचा-नीचा स्थान रहा करता है—रहा करे, शैक्षणिक योग्यता में भी लोग ग्रागे-पीछे रहा करते हैं—रहा करें ग्रौर धन-वैभव तथा महिमा-मर्यादा में भी लोगों में पारस्परिक ग्रन्तर हुग्रा करता है—हुग्रा करे, पर पुस्तकालय को तो उस सूर्य के समान ग्रपनी ज्योति विकीर्ण करनी है, जो बिना किसी भेदभाव के पृथ्वी के समस्त ग्रंगों-ग्रंशों पर ग्रपना प्रकाश बिना किसी हिचकिचाहट ग्रौर संकोच के नियमित रूप से फैलाता रहता है। सदानीरा गंगा भी ग्रपना शीतल जल देने में कभी कोई कार्पण्य नहीं करती, जल लेने वाला चाहे जैसा भी हो। सघन वृक्ष भी ग्रपनी छाया ग्रपनी शरण में ग्राने वाले समस्त प्राणियों को समभाव से दिया करते हैं। सूर्य, जलाशय, वृक्ष तथा इसी प्रकार के ग्रन्यान्य प्राकृतिक उपादानों की भाँति पुस्तकालय को भी ग्रपना स्वरूप ऐसा बनाना होगा, जिससे कि किसी व्यक्ति-विशेष को यह शिकायत करने का कुयोग न मिले कि उस पुस्तकालय से उस व्यक्ति को समुचित सहयोग न प्राप्त हो सका, पुस्तकालय के इसी स्वभाव के कारण, उसके इसी स्वरूप की वजह से उसे सार्वजनिक पुस्तकालय कहा जाता है।

पुस्तकालय को भी युगधर्म को समझना-परखना ग्रौर तदनुकूल ग्रपने कार्य-कलापों के प्रवाह को प्रवहमान होने देना होगा। यह युग व्यक्ति-विशेष का युग नहीं, बल्कि व्यक्ति-व्यक्ति ग्रर्थात् सभी का युग है। सर्वत्र सर्वोदय की भावना ज़ोर पकड़ती जा रही है। हम ग्रपने परिवार से लेकर विश्व के समस्त राष्ट्रों तक सर्वत्र यही देखते हैं कि व्यष्टि की प्रभुता बड़ी तेज़ी के साथ नष्ट होती जा रही है ग्रौर समष्टि की प्रभुता जमती जा रही है। ग्राज कोई भी व्यक्ति एक की ग्रपेक्षा ग्रनेक की ज्यादा कदर करना चाहता है। समूह ग्रौर समुदाय को ग्रत्यधिक महत्त्व इन दिनों दिया जाने लगा है। पुस्तकालय को भी इन्हीं प्रवृत्तियों के ग्रनुकूल ग्रपने स्वरूप को बनाना होगा।

ग्रादर्श ग्रौर सिद्धान्त के रूप में तो ये बातें बड़ी ही ग्रच्छी ग्रौर उपयुक्त प्रतीत होती हैं, परन्तु व्यावहारिक रूप में जब इन्हें हम देखने की चेष्टा करते हैं, तो हमें वहाँ सर्वथा दूसरी ही तस्वीर दिखलाई पड़ती है। सर्वत्र पुस्तकालयों के द्वारा सीमित व्यक्तियों को फायदा पहुँचाया जा रहा है। सर्वत्र ही उनके संचालन में कुछ व्यक्ति-विशेष ही प्रवृत्त दीख पड़ते हैं। जहाँ उनके द्वार सबके लिए खुले रहने चाहिए, वहाँ कुछ के ही प्रवेश की वहाँ सुविधा है। ज्यादा लोगों पर निषेधाज्ञा जारी है।

निषेधाज्ञा और प्रतिबन्ध से मेरा तात्पर्य इस बात से नहीं है कि लोगों को पुस्तकालय में जाने नहीं दिया जाता है अथवा वे वहाँ न जाएँ, इसके लिए दुष्चेष्टाएँ की जाती हैं। मेरा आशय यह है कि पुस्तकालयों का संचालन उत्साह-पूर्ण ढंग से न तो किया जाता है और न आकर्षक एवं आमन्त्रणपूर्ण वहाँ का वातावरण रहता है कि लोग स्वतः पुस्तकालय में खिचकर चले जाएं, लोगों की शिक्षा, अर्थ तथा साधन-सम्बन्धी असमर्थता भी उन्हें पुस्तकालयों में नहीं पहुँचने देती। हमारे देश में अधिकांश पुस्तकालय सशुल्क पुस्तकालय हैं, जहाँ सदस्यता-शुल्क, सुरक्षा-शुल्क आदि के नाम पर बिना पैसे दिये हुए उनसे सम्पर्क जोड़ा ही नहीं जा सकता। यह हुई अर्थ-सम्बन्धी असमर्थता। अब शिक्षा-सम्बन्धी असमर्थता को लीजिए। वैसे व्यक्ति जा पढ़े-लिखे नहीं हैं, अथवा बहुत कम पढ़े-लिखे हैं, उनके लिए पुस्तकालय में प्रायः नहीं के बराबर व्यवस्था होती है। इसी प्रकार क्षेत्रीय दलबन्दी, गुटबन्दी, जातीयता, साम्प्रदायिकता, सामाजिक ऊँचाई-निचाई, राजनीतिक मत-भेद आदि से पुस्तकालयों को शायद ही कहीं बचाकर रखा जाता है। दुष्परिणाम होता है कि लोगों का एक बहुत बड़ा दल पुस्तकालय के उपयोग से सर्वथा वंचित रह जाता है।

अशिक्षा, रूढ़ियाँ, गलत-सलत परम्पराएँ, अन्धविश्वास, दकियानूसी आदि बीमारियों से हम इस प्रकार ग्रसित हैं कि पुस्तकालय की उपयोगिता, अनिवार्यता के कायल होना तो दूर की बात रही, उसे सोच भी नहीं सकते।

अन्यान्य संस्थाओं की भाँति पुस्तकालय के संचालन में हम अपना या अपने प्रियपात्रों एवं अपने दल के लोगों के विशिष्ट हाथ रहना भी पसन्द करते हैं। ऐसा इसलिए कि इससे हमें सस्ती लोकप्रियता प्राप्त होती है। हमारी नामवरी की भूख मिटती है और कभी-कभी इसके नाम पर हम अर्थ तथा अन्य प्रकार की सुविधाओं से भी लाभ उठाते हैं।

ये सारी प्रवृत्तियाँ कितनी घृणित, गर्हित, निन्दनीय और त्याज्य हैं—इसकी कल्पना हम तभी कर सकते हैं, जब हम पुस्तकालय के आधारभूत सिद्धान्त तथा उसके सर्वोदयी स्वरूप को अच्छी तरह जान लें।

जीवन और जगत में जिस प्रकार सर्वोदय की भावना प्रबल से प्रबलतर होती जा रही है, उसी प्रकार हमें अपने पुस्तकालय के सारे कार्यों को सर्वोदय के आधार पर नियोजित करना होगा। हमें उसकी सेवाओं को इतना व्यापक, विविध और सुविस्तृत बनाना होगा कि उनसे हमारे समाज का कोई भी व्यक्ति वंचित नहीं रहे। पुस्तकालय से यदि बड़े-बड़े विद्वानों को अपनी विद्वत्ता को संवर्द्धित करने में सहयोग मिले, पुस्तकालय किसी अन्वेषयक अथवा अनुसन्धायक के लिए नये तथ्यों का रहस्योद्घाटन करने में सहायक हो, किसी परीक्षार्थी को परीक्षोत्तीर्ण होने में मदद करे, किसी पुस्तक-प्रेमी को अपनी पाठ्य-सामग्रियों द्वारा मानसिक खुराक प्रदान करे, तो शिक्षा के वरदान से वंचित अनपढ़ों और निरक्षरों को भी वह सहयोग दे, तभी उसका सर्वोदयी पक्ष उजागर हो सकेगा। गाँव के मास्टरजी और निठल्ले बैठे हुए ग्रेजुएट बबुआजी ग्राम-हितैषी पुस्तकालय से पुस्तकें पढ़ते रहें और बीफन मोची तथा हरखू महतो का उससे कोई ताल्लुक न रहे, तो यह पुस्तकालय की आंशिक उपयोगिता का ही परिचायक होगा। शहर के

स्टूडेन्ट्स क्लब लाइब्रेरी के यदि विक्टर सिन्हा, वर्मा, शर्मा, और गाँजे की दूकान वाले चौधरीजी ही पुस्तकें पढ़ें और उसके बगल में ही रहने वाला बालगोविन्द दूध वाला तथा अब्दुल समद बीड़ी बनाने वाला कोई पुस्तक न पढ़े, तो उस लाइब्रेरी से कुछ को ही फायदा पहुँचेगा—सबको नहीं।

पुस्तकालय सर्वोदय के सिद्धान्त को मानकर चले, इसके लिए उसके साथ अधिकाधिक संख्या में लोगों का सम्पर्क स्थापित होना आवश्यक है। पुस्तकालय-सेवा की उत्तरोत्तर विकसित होने वाली विधियाँ तो पुस्तकालय के सर्वोदयी पक्ष को और भी बल प्रदान कर रही हैं। दृश्य-श्रव्य योजना, पुस्तकालय का भ्रमशील रूप, पुस्तक लेन-देन की सुविधापूर्ण व्यवस्था आदि ऐसी उत्तमोत्तम प्रविधियाँ पुस्तकालय-संचालन की दिशा में उद्भूत हो रही हैं, जिनसे अन्धा, बहरा, विकलांग रोगी सबको पुस्तकालय-सेवाओं से लाभान्वित किया जा सकता है।

पुस्तकालय सर्वोदय-सम्बन्धी साहित्य के संग्रह और अपने पाठकों-सदस्यों के बीच उनके उपयोगार्थ वितरण करके अपनी सर्वोदय भावना का सबूत देते हुए सर्वोदय-आन्दोलन के संवर्द्धन में सहयोग दे ही सकता है, सर्वोदय की भावना को उससे और प्रभावशाली एवं अचूक रूप से बल मिलेगा, जब वह अपने स्वरूप को सर्वोदयवादी साँचे में ढालकर अपने प्रांगण में बिना किसी भेदभाव के सबको आमन्त्रित करके उनका सम्यक् कल्याण करे।

रस्किन, महात्मा गांधी और आचार्य विनोबा के सर्वोदय-आन्दोलन की सफलता बहुत अंशों में पुस्तकालयों द्वारा उपर्युक्त विधि से प्रदत्त सहयोग पर ही अवलम्बित है।

इस पुस्तकालय से चाहे जिस रूप में सम्बद्ध हों—संचालक हों, संस्थापक हों, पाठक हों अथवा कोई अन्य हों—हमें पुस्तकालय के सर्वोदयवादी स्वरूप को समझना और समझाना होगा। जब हम ऐसा करेंगे, तो पुस्तकालयों के सिर पर चढ़े हुए सेहरे के सुमन में सौन्दर्य के साथ सुगन्ध का भी समावेश होगा।

हिन्दी-प्रकाशन और उसकी आवश्यकताएँ

श्री कृष्णचन्द्र बेरी

इस वर्ष राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह १४ से २१ नवम्बर तक कलकत्ता, बम्बई, मद्रास तथा वाराणसी एवं दिल्ली में सोत्साह मनाया गया। वाराणसी-समारोह में श्री बेरी का भाषण।

देश का पहला 'राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह' आज़ादी के १४ वर्ष बाद, १९६१ के स्मरणीय वर्ष में होने जा रहा है। इस अवसर पर मेरी स्मृति १९३० की कलकत्ता की हिन्दी-प्रकाशन की धारा को देखने लगी है। उस समय बंगला तथा मराठी के अनुवादों, राजनीतिक साहित्य, पौराणिक, ऐयारी तथा जासूसी उपन्यासों की ओर प्रकाशकों, लेखकों तथा पाठकों का झुकाव था। मुझे याद आता है, आर० एल० वर्मन कम्पनी के 'हिन्दू पंच' अखबार का वह दफ्तर जहाँ से सती सीरीज़ (सती शकुन्तला, सती दमयन्ती), जासूसी सीरीज, ऐयारी के उपन्यास आदि प्रकाशित होते थे। निहालचन्द एण्ड कम्पनी द्वारा प्रकाशित मिस मेयो की 'मदर इण्डिया' का जवाब, रंगा ऐयर लिखित 'फादर इण्डिया' और 'पंजाब का भीषण हत्याकाण्ड' की दसों हजार प्रतियाँ छपते ही पाठकों द्वारा हाथों-हाथ खरीद ली गई थीं। 'मतवाला' पत्र का दफ्तर भी कलकत्ता में था, जहाँ से उग्रजी की रचनाएँ 'दिल्ली का दलाल', 'बुधवा की बेटी' आदि प्रकाशित हुई थीं। वैसे तो देश में और भी अनेकानेक गण्यमान प्रकाशन-संस्थाएँ थीं, परन्तु कलकत्ता से जो प्रकाशन होते थे, हिन्दी के ये ही प्रतिनिधि प्रकाशन समझे जाते थे। कलकत्ता से हटकर काशी में गोपालरामजी गहमरी का जासूसी कार्यालय, 'भारत जीवन' प्रेस, नागरी प्रचारिणी सभा आदि, कानपुर में गणेशशंकर विद्यार्थी का प्रकाश पुस्तकालय, लखनऊ में दुलारेलालजी की गंगा पुस्तकमाला तथा मुन्शी नवलकिशोर प्रेस, बम्बई में नाथूरामजी प्रेमी का हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय तथा सेठ खेमराज श्रीकृष्णदासजी का वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, पुस्तक भण्डार पटना पुराने प्रकाशनों की आज भी हमें याद दिलाते हैं।

स्त्री-पाठकों की बहुलता

उन दिनों हिन्दी में पुरुष-पाठकों की अपेक्षा स्त्री-पाठकों की बहुलता थी। लेखकों की रुचि पौराणिक उपन्यास, जासूसी तथा ऐयारी वृत्तान्तमाला, राजनीतिक, साहित्यिक तथा धार्मिक पुस्तकें लिखने की ओर ही थी। विज्ञान, तकनीक, आलोचना आदि विषयों पर पुस्तकें नहीं के बराबर थीं। हिन्दी प्रकाशन के इस युग में एक और अजीब चीज़ पाई जाती थी। राजे-रजवाड़ों के नाम से भी रचनाएँ लिख डाली जाती थीं। उन दिनों लेखक को पुस्तकों के लिखने से कुछ विशेष आर्थिक लाभ तो नहीं होता था, परन्तु ख्याति की दृष्टि से पुस्तकें लिखना अच्छा समझा जाता था।

१९२१ से ४० तक छपे प्रकाशनों को देखने से मालूम होता है कि इस युग में हिन्दी के प्रकाशन बंगला साहित्य के प्रकाशनों से प्रभावित थे। हिन्दी-पुस्तकें सजधज के साथ प्रकाशित होने लग गई थीं। यह तो नहीं कहा जा सकता कि उस समय की पुस्तकों की रूपसज्जा आज के प्रकाशनों के बराबर थी, परन्तु यह अवश्य कहा जा सकता है कि प्रकाशक तन्मयता के साथ उन दिनों (१९२० के पूर्व वाले प्रकाशन के युग के ढर्रे को त्यागकर) आगे बढ़ना चाहता था। हिन्दी-पुस्तकों में तिरंगे कवर और भीतर आर्ट पेपर पर चित्रों को देने की प्रथा-सी चल पड़ी थी। उपहार-भेंट करने के लिए रेशमी जिल्दों की और सोने के ठप्पे लगी हुई पुस्तकें उस समय उपलब्ध होती थीं जो आजकल नहीं दिखाई देतीं।

आधुनिक मोड़

१९३५ में हिन्दी-प्रकाशनों को आधुनिक मोड़ देने वाले एक महान् साहित्यकार ही थे। वे थे पं० चन्द्रशेखर पाठक, जिन्होंने हिन्दी में १०० से अधिक पुस्तकें लिखीं

और इनकी लेखन-शैली ने पुराने पौराणिक ढंग के उपन्यासों की जगह ऐतिहासिक उपन्यासों को पढ़ने के लिए जनता का ध्यान आकृष्ट किया।

आज का पाठक कविता-पुस्तकों में, पाठ्य-पुस्तकों को छोड़कर शायद ही दिलचस्पी रखता हो। मुझे याद है कि उस समय राष्ट्रीय कवि माधव शुक्ल के कविता-संकलन 'राष्ट्रीय-झंकार' की 'मेरी माता के सर पर ताज रहे' नामक कविता बच्चे-बच्चे की ज़बान पर थी। इस पुस्तक की हज़ारों प्रतियाँ हाथों-हाथ बिक गईं। गांधीजी के असहयोग-आन्दोलन के दिनों में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की 'भारत भारती' ने घर-घर में स्थान पा लिया था। १९३३ में जापान के प्रसिद्ध कवि नोगुची कलकत्ता आये थे। उन दिनों कलकत्ता विश्वविद्यालय के सीनेट हॉल में कविवर श्री रामधारीसिंहजी 'दिनकर' से मेरी पहली मुलाकात हुई थी। वहीं उन्होंने अपनी प्रसिद्ध कविता 'हिमालय' (मेरे नगपति मेरे विशाल) पढ़ी थी। उन दिनों प्रायः कम पूँजी वाले लोग ही प्रकाशन-क्षेत्र में आए थे। गुलाम देश था, हमारी संस्कृति पर गुलामी की छाप पड़ी हुई थी, परन्तु गांधीजी के असहयोग-आन्दोलन ने उस समय प्रकाशकों पर भी अपनी छाप छोड़ रखी थी। देशभक्तिपूर्ण पुस्तकें प्रकाशित करने को प्रकाशकों में ललक-सी थी। ऐसे प्रकाशक भी थे जो स्वयं पुस्तकें भी लिखते थे, प्रूफ़ भी देखते थे, दौड़-धूपकर छपवाते भी थे और शहरों व मेलों में घूम-फिरकर बेचते भी थे।

नयी चेतना

१९४० तक के हिन्दी-प्रकाशन का विश्लेषण मैंने थोड़े शब्दों में ऊपर किया है। उसके बाद हिन्दी-प्रकाशन के क्षेत्र में एक नयी चेतना दीख पड़ी। इस चेतना के कर्णधार थे इण्डियन प्रेस के श्री चिन्तामणि घोष के सपुत्र स्वर्गीय पाटल बाबू। उन्होंने 'सरस्वती सीरीज़' तथा अन्य साहित्यिक कृतियाँ आधुनिकतम ढंग से प्रकाशित कर हिन्दी-प्रकाशन में नये प्रयोग उपस्थित किए। पं० सोहनलालजी द्विवेदी की कविताएँ इण्डियन प्रेस ने सजधज के साथ छापीं और उसे पाठकों ने सराहा भी। इस युग में भारती भण्डार, प्रयाग द्वारा प्रकाशित पुस्तकें भी जनता द्वारा समादृत होने लगी थीं। स्वतन्त्रता का युग आते-आते देश में हिन्दी-प्रकाशन के क्षेत्र में कलकत्ता का महत्त्व कम होने लगा था। आज़ादी के साथ पटना, इलाहाबाद तथा बनारस हिन्दी-प्रकाशन के गढ़ बन रहे थे। हरिऔधजी, महावीरप्रसादजी, बाबू श्यामसुन्दरदासजी, राजा राधिकारमण सिंहजी, कविवर दिनकरजी, प्रसादजी, महादेवीजी, भगवतीचरणजी वर्मा, निरालाजी, नरेन्द्रजी आदि की रचनाएँ इन्हीं केन्द्रों से प्रकाशित होती थीं।

१९५० के बाद, हिन्दी-प्रकाशन में एक नई क्रान्ति का आविर्भाव हुआ। वह था लाहौर से आये हुए प्रकाशकों का हिन्दी में वैज्ञानिक रीति से दिल्ली से धुँआधार प्रकाशन। हिन्दी के राष्ट्रभाषा होने के कारण प्रकाशकों ने अपने प्रकाशन-क्षेत्र को और भी व्यापक बनाया। पुरानी प्रकाशन परम्परा समय के साथ दफनायी-सी गई। अब जासूसी, सती सीरीज, पौराणिक उपाख्यान, राष्ट्रीय पुस्तकें पढ़ने वालों की संख्या नगण्य-सी हो गई। आज़ादी के बाद का पाठक दुनिया में मौजूद वैज्ञानिक संचरण-साधनों के कारण इतनी अधिक व्यापक जानकारी रखने वाला हो गया कि उसे पुस्तकों के नाम पर पुरानी परम्परा की पुस्तकें पढ़ने से सन्तुष्टि नहीं प्राप्त होती। समय की गति को हिन्दी-प्रकाशकों ने पहचाना और उनका हिन्दी में विज्ञान, तकनीक, भूगोल, इतिहास, नवसाक्षर साहित्य, बच्चों के लिए वयक्रम से पुस्तकें आदि प्रकाशित करने का कार्य आरम्भ हो गया। आज़ादी के बाद कथा-साहित्य में प्रेमचन्दजी के बाद अच्छे लेखक भी हिन्दी को मिले। बाल-साहित्य में भी अनेक लेखकों की कृतियाँ आयीं। बाल-साहित्य में अंग्रेज़ी से ग्रिम की कहानियाँ; हेंसएण्डसन की कहानियाँ हिन्दी में अनुदित होकर आयीं। यूनेस्को के तत्वावधान में कई बाल-पुस्तकमालाएँ भी छपीं। बाल-साहित्य के क्षेत्र में, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, राजपाल एण्ड सन्स, आत्माराम एण्ड सन्स, राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०, सस्ता साहित्य मण्डल, आदि संस्थाओं ने काफी अच्छे प्रकाशन किए। इधर एक अजीब-सी चीज़ प्रकाशकों में देखने को आ रही है। वह है प्रकाशकों द्वारा कवियों की कृति को प्रकाशित करने में नाक-भौंह सिकोड़ना। फलतः प्रतिभाशाली कवियों की कृतियों के प्रकाशन में कठिनाई पड़ रही है। हिन्दी प्रकाशक इस

विषय में यदि शीघ्र ही सजग एवं सचेष्ट नहीं हुए तो मुझे भय है कि वे कितने ही रवीन्द्र और गेटे खो बैठेंगे। अच्छा हो कविता-पुस्तकें सजधज के साथ प्रकाशित की जाएँ और प्रकाशक उनका विशेष रूप से प्रचार करें। शिक्षा का प्रसार होने के कारण कॉलेज-स्तर पर प्रत्येक विषय में हिन्दी-पुस्तकों की माँग शुरू हो गई है। लिहाज़ा कृषि, मूर्तिकला, वस्त्रोत्पादन-कला, भूगर्भशास्त्र, रसायनशास्त्र, भौतिकशास्त्र आदि विषयों में हिन्दी में उच्चस्तरीय प्रकाशन हो रहे हैं। हिन्दी में प्रान्तीय भाषा के अनुवाद भी धड़ल्ले से आ रहे हैं। साहित्य अकादमी भी विभिन्न भाषाओं की चुनी हुई पुस्तकों के अनुवाद प्रकाशित करने में प्रयत्नशील हैं। हिन्दी के प्रकाशनों में आज जितने विविध प्रकार के विषय देखे जाते हैं उतने १६२० और ४० के युग में तो थे ही नहीं। उस समय की तुलना में ५० से ६० का युग प्रकाशन की दृष्टि से दो सौ गुना बढ़ा है, परन्तु जिस गति से देश में शिक्षा बढ़ रही है उस गति से हिन्दी के प्रकाशनों की माँग नहीं बढ़ रही है। कहा जा सकता है कि देश की आर्थिक विषमताओं के कारण मानव इतना अशान्त है कि उसका ध्यान पढ़ने की ओर जा ही नहीं पा रहा है। परन्तु 'अन्तरिक्ष यात्रा' के इस युग के पाठकों का ध्यान आकृष्ट करने के लिए ऐसा साहित्य प्रस्तुत करना है जिससे पुस्तकों की ओर पाठक की रुझान बढ़े, घटे नहीं।

आज की आवश्यकताएँ

हिन्दी में विविध विषयों की पुस्तकें लिखने के लिए शब्दों की आवश्यकता है। इसके लिए केन्द्रीय सरकार का हिन्दी निर्देशालय काफ़ी काम कर रहा है। यों तो सभी प्रादेशिक सरकारें हिन्दी-पुस्तकों के प्रकाशन की दिशा में उन्मुख हैं, पर उत्तर प्रदेश सरकार की हिन्दी समिति द्वारा प्रकाशित पुस्तकों का स्वतन्त्रता के बाद के प्रकाशनों में विशेष स्थान है। स्थायी मूल्य के साहित्य का इतना विविधतापूर्ण प्रकाशन कल्पना तथा श्रम का समन्वित प्रतीक है। कोशों के प्रकाशन में काशी के ज्ञानमण्डल लि० का नाम विशेष रूप से लिया जा सकता है। १६४१ के पूर्व के दो दशकों में प्रकाशन-व्यवसाय की जो सामाजिक स्थिति थी, उस समय से अब की स्थिति में बड़ा अन्तर आ गया है। पहले जहाँ हिन्दी-प्रकाशन का कार्य हिन्दी-सेवा तक ही सीमित था वहाँ अब इसे समाज-सेवा कहा जाए, तो अत्युक्ति नहीं होगी। हिन्दी पहले हिन्दी भाषा-भाषियों की भाषा थी, परन्तु आज भारत की राष्ट्रभाषा है। ऐसी परिस्थिति में प्रकाशकों को पाठकों की रुचि, पुस्तक-विक्रय-कला, प्रचार-प्रसार पद्धति, लेखक-प्रकाशक सम्बन्ध और प्रकाशन-स्तर में सुधार पर ध्यान देना आवश्यक है।

पाठकों की रुचि प्रकाशन का मेरुदण्ड है। इसके दो पहलू हैं। एक तो स्थायी साहित्य का प्रकाशन और दूसरा सामयिक साहित्य का। स्थायी साहित्य के प्रकाशन के लिए प्रकाशक को उतना सजग और सचेष्ट रहने की आवश्यकता नहीं है जितना सामयिक साहित्य के लिए। मिसाल के तौर पर मेजर यूरी गागरिन की अंतरिक्ष-यात्रा पर पाठ्य-पुस्तकें पढ़ना चाहते हैं, नेहरूजी की अमेरिका तथा रूस यात्रा पर पुस्तकें पढ़ने का कुतूहल होता है। ऐसी पुस्तकें जब निकलेंगी तो वे सामयिक कही जाएँगी। इन पुस्तकों के प्रकाशन में प्रकाशक को बड़ी सतर्कता से काम लेना होगा।

स्थायी साहित्य के लिए यह बात नहीं है। साहित्य के किसी भी अंग पर छपे ग्रन्थ का प्रकाशन-मूल्य सर्वदा एक सा रहता है। स्थायी-साहित्य के प्रकाशन में भी पाठकों की रुचि के अनुकूल सम्पादन होना आवश्यक है। बालक तथा महिला-पाठकों की रुचि के सम्बन्ध में लेखक को और भी सजग होना है। पाठकों के ये दो वर्ग बड़े ही कोमल होते हैं। यदि किसी लेखक की कृति ने इनके हृदय में निवास कर लिया तो ये उस लेखक की सम्पूर्ण कृतियाँ पढ़कर ही छोड़ते हैं।

महिलाओं और बच्चों के अलावा, हिन्दी के पाठकों में एक वर्ग और आ रहा है, वह है 'इन्टेलीजेंसिया' बनने की चेष्टा करने वाला वर्ग। हिन्दी-प्रकाशनों को ऐसे वर्ग के अनुकूल बनाया जा सके तो काफ़ी विकास होगा।

अखिल भारतीय हिन्दी-प्रकाशक संघ ने हिन्दी प्रकाशनों को आधुनिकतम स्वरूप देने के लिए अनेकानेक विचार गोष्ठियाँ की हैं। लेखक-प्रकाशक-सहयोग के लिए अनेक योजनाएँ बनाई हैं, पाठकों को सभी विषयों पर हिन्दी में पुस्तकें सुलभ हों इसके लिए संघ योजनाएँ बना रहा है। हिन्दी-प्रकाशन के प्रचार-प्रसार हेतु राष्ट्रीय पुस्तक समारोह का संघ द्वारा आयोजन इस बात का द्योतक है कि देश में हिन्दी प्रकाशनों का भविष्य आशापूर्ण है।

राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लि० के डायरेक्टर इंचार्ज तथा 'प्रकाशन समाचार' के सम्पादक श्री ओंप्रकाश एक मास के योरोप-भ्रमण के बाद १२ नवम्बर को स्वदेश लौट आए। विदेश-यात्रा के दौरान में उन्होंने फ्रेंकफर्ट (जर्मनी) में हुए अन्तर्राष्ट्रीय पुस्तक-समारोह में भाग लिया। इसके अलावा फ्रांस, इंगलैंड आदि देशों के प्रकाशकों व पुस्तक-विक्रेताओं आदि से भी प्रकाशन के विविध पहलुओं पर विचार-विनिमय हुआ।

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् का ग्रन्थ-पुरस्कार (सन् १९६१-६२ ई०)

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की ओर से वर्तमान आर्थिक वर्ष (१९६१-६२) में एक हजार रुपये के छः ग्रंथ-पुरस्कार, उसके आगामी वार्षिकोत्सव के अवसर पर निम्नलिखित विषयों के श्रेष्ठ मौलिक हिन्दी-ग्रंथों के लिए दिये जाएँगे।

इन छः पुरस्कारों में एक पुरस्कार अहिन्दी-भाषा भाषी हिन्दी-लेखकों के लिए होगा और शेष पाँच पुरस्कारों में से तीन बिहार के ग्रंथकारों के लिए तथा दो पुरस्कार अखिल-भारतीय स्तर पर हिन्दी-लेखकों को दिये जाएँगे।

(१) अहिन्दी-भाषा-भाषी लेखकों के लिए पुरस्कार-विषय—कथा साहित्य, हिन्दी मौलिक उपन्यास या कहानी-संग्रह।

(२) बिहारी लेखकों के लिए पुरस्कार-विषय—(क) आदिवासी संस्कृति, (ख) शिकार, (ग) नीति-शास्त्र (Ethics)।

(३) अखिल भारतीय स्तर के पुरस्कार-विषय—(क) तंत्र-विज्ञान और (ख) सैन्य-विज्ञान।

उपर्युक्त पुरस्कार-प्रतियोगिता के लिए जनवरी, १९५० ई० से दिसम्बर, १९६१ ई० तक की अवधि में प्रकाशित पुस्तकें ही स्वीकृत होंगी। पुरस्कार के लिए भेजी जानेवाली प्रत्येक पुस्तक की सात-सात प्रतियाँ परिषद्-कार्यालय में ५ जनवरी, १९६२ ई० तक अवश्य ही पहुँच जानी चाहिएँ। पुरस्कार मिलने या न मिलने की दशा में पुस्तकें लौटाई नहीं जाएँगी। **प्रत्येक पुस्तक पर यह लिखा होना चाहिए कि वह किस विषय की प्रतियोगिता में भेजी गई। प्रत्येक पुस्तक के साथ एक स्पष्ट लिखित पत्रक संलग्न रहना चाहिए, जिसमें पूरा विवरण अंकित हो—पुस्तक और प्रकाशक के नाम और पते, प्रकाशन-वर्ष, लेखक का वर्तमान पूरा पता, विषय आदि।**

परिषद्-नियमावली, संख्या ४ के अनुसार बिहार-सरकार की विशेष अनुमति के बिना इस प्रतियोगिता में बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के संचालक-मण्डल तथा सामान्य-समिति के सदस्य भाग नहीं ले सकेंगे।

रेलवे पार्सल से भेजी जाने वाली पुस्तकों के लिए पता—

(१) ईस्टर्न रेलवे : पटना जंक्शन और नॉर्थ ईस्टर्न रेलवे : महेन्द्रू घाट। डाक से भेजी जाने वाली पुस्तकों के लिए पता—

(२) संचालक, बिहार राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना-६।

—संचालक

पुस्तक-परिचय

आलोचना, निबन्ध

भाषा और समाज हिन्दी के प्रख्यात आलोचक और भाषा-विद् डॉक्टर रामविलास शर्मा की नवीनतम कृति है। इस ग्रन्थ में विद्वान् लेखक ने भाषा-विज्ञान-जैसे गुरुतम और दुरूह विषय के सैद्धान्तिक विवेचन के अलावा भाषा-सम्बन्धी अनेक व्यावहारिक समस्याओं का विवेचन भी किया है। पुस्तक के 'भाषा की उत्पत्ति', 'भाषा की ध्वनि-प्रकृति', 'भाषा की भाव-प्रकृति', 'मूल शब्द-भण्डार—'भाषा-परिवारों का सम्बन्ध और स्वतन्त्र सत्ता, 'मूल शब्द भण्डार—संस्कृत और स्लाव', 'भाषा-परिवार और आदि-भाषा', 'संस्कृत-परिवार और प्राकृत अपभ्रंश', 'आधुनिक भारतीय भाषाएँ—उनके उद्भव की कुछ समस्याएँ', 'परि-निष्ठित संस्कृत और आधुनिक भाषाएँ' आदि कुछ अध्यायों के शीर्षक इस बात के साक्षी हैं कि यह पुस्तक भाषा और समाज के प्रत्येक पक्ष पर सर्वाङ्गीण रूप से प्रकाश डालने वाली है। पुस्तक को कुल १५ अध्यायों में विभक्त करके विद्वान् लेखक ने बोलचाल की भाषा, राज्य भाषा और राष्ट्र भाषा-जैसे महत्त्वपूर्ण विषयों पर भी विशद प्रकाश डाला है। **पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली** द्वारा प्रका-शित डिमाई साइज के ५३२ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक १५ रुपये में प्राप्य है।

* * *

साहित्य का स्वरूप नामक पुस्तक में डॉ० ब्रजलाल गोस्वामी द्वारा लिखित 'साहित्यकार की अनुभूति', 'साहित्य का माध्यम', 'साहित्य का प्रयोजन', 'साहित्य और दर्शन', 'साहित्य और विज्ञान', 'साहित्य और मनोविज्ञान', 'साहित्य और समाज' आदि विषयों से सम्बन्धित लेख संकलित किये गए हैं। यह पुस्तक साधारणतः हिन्दी-साहित्य में रुचि रखने वाले प्रत्येक पाठक और विशेषतः उच्च कक्षाओं में पढ़ने वाले विद्यार्थियों के लिए पठनीय है। क्राउन साइज के २५० पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक **साहित्य संगम, लुधियाना** से प्रकाशित हुई है और ६ रुपये २५ न० पै० में प्राप्य है।

* * *

बकलम खुद में हिन्दी के प्रख्यात तरुण आलोचक डॉ० नामवरसिंह द्वारा लिखित उनकी 'लड़ते हैं मगर हाथ में तलवार भी नहीं', 'बापू की विरासत', 'मुनिहिं हरियरह सूझ', 'अब हम स्वतन्त्र हैं', 'कौन बड़ा है', 'कागद का राज', 'आजादी का खिताब', 'मदन महीप जू को बालक बसन्त', अगर मुल्क में अखबार न हो', 'क्या बेवकूफ के भी सींग-पूछ होती है', 'पोथी पढ़ि-पढ़ि जग मुआ', 'गप-शप', 'नई चाल का चेक', 'बकलम खुद' तथा 'जब मेरी पुस्तक ने मुझसे कहा' शीर्षक व्यंग्यात्मक शैली में लिखे गए बिल-कुल हलके-फुलके निबन्ध संकलित हैं। इन निबन्धों में पाठक को कहानी, उपन्यास और नाटक तीनों का अनुभव एक साथ हो सकता है। इन निबन्धों को पढ़ते हुए पाठक पग-पग पर यह अनुभव अवश्य करेगा कि वह जैसे किसी हास्य-गोष्ठी में बैठा आनन्द-लाभ कर रहा हो। इस पुस्तक का प्रकाशन **हिमालय पॉकेट बुक्स, प्रयाग** ने किया है और एक रुपये में प्राप्य है।

* * *

कविता

शायरी के नये दौर नामक पुस्तकमाला का यह पाँचवाँ दौर है। इसमें सर्वश्री जमील मजहरी, रविश सिद्दीनी, अफसर मेरठी और निहाल सेवहारवी आदि उर्दू के वर्तमानयुगीन लब्ध-प्रतिष्ठ चार शायरों का जीवन-परिचय एवं चुना हुआ श्रेष्ठ कलाम संकलित है। इस पुस्तक के लेखक और सम्पादक श्री अयोध्याप्रसाद गोयलीय ने पहले की तरह ही इस पुस्तक में भी अपने ज्ञान, प्रतिभा और परिश्रम का प्रयोग किया है। **भारतीय ज्ञानपीठ, काशी** की ओर से प्रकाशित दूसरी उर्दू पुस्तकों की भाँति इसे भी हिन्दी

के पाठकों का स्नेह प्राप्त होगा, ऐसी आशा है। क्राउन साइज़ के २०८ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक तीन रुपये में सुलभ है।

* * *

चाँद के गीत में तरुण लेखक श्री मोतीलाल जोतवाणी के ५५ गद्यगीत संकलित हैं। इस पुस्तक के सम्बन्ध में अपना अभिमत प्रकट करते हुए श्री विष्णु प्रभाकर ने यह ठीक ही लिखा है कि "मोतीलाल जोतवाणी के इन गद्यगीतों में कविता का रस है।" हिन्दी के पाठक तरुण कवि के इन भावोद्गारों में अपने मन की सहज पीड़ा की अनुगूँज अनुभव करेंगे, ऐसी मुझे आशा ही नहीं प्रत्युत पूर्ण विश्वास है। क्राउन साइज के ५६ पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक एक रुपये में मिल सकती है और इसका प्रकाशन **राष्ट्रभाषा प्रचार मण्डल, दिल्ली** ने किया है।

* * *

उपन्यास

हिमालय पॉकेट बुक्स, इलाहाबाद की ओर से **इश्क पर जोर नहीं** (अज़ीम बेग चग़ताई), **सहेली** (आवारा), **जंजीरें टूटती हैं** (हर्षनाथ), **संजौली निवास** (बलवन्तसिंह), और **बहती गंगा** (केशर) नामक उपन्यास प्रकाशित हुए हैं। श्री चग़ताई के उपन्यास **इश्क पर जोर नहीं** में ऐसा कथानक प्रस्तुत किया गया है जिसे पढ़कर पाठक हँसते-हँसते लोट-पोट हो जाएँगे। श्री प्यारेलाल 'आवारा' द्वारा लिखित **सहेली** नामक इस उपन्यास में पाठक हिन्दू-विवाह की पृष्ठभूमि पर लिखित एक कथानक पाएँगे, जिसमें हमारे समाज की कुरीतियों पर करारा व्यंग्य किया गया है। यह उपन्यास श्री 'आवारा' के बहु-चर्चित उपन्यास 'शायद' का संक्षिप्त संस्करण है। **जंजीरें टूटती हैं** नामक उपन्यास के लेखक श्री हर्षनाथ नई पीढ़ी के उपन्यासकारों में अन्यतम स्थान रखते हैं। इस उपन्यास में गाँवों की टूटती हुई परम्पराओं और मान्यताओं का चित्रण प्रस्तुत किया गया है। श्री बलवन्तसिंह के **संजौली** नामक इस उपन्यास में पंजाब के गाँवों की पृष्ठभूमि पर आधारित ऐसे कथानक को प्रस्तुत किया गया है कि उसे पढ़कर

सांस्कृतिक प्रकाशन

संस्कृति हमारे पूर्वजों की थाय है। उसको हम जानते ही नहीं, उससे हम जीते भी हैं। संस्कृति से हम परम्परागत रहन-सहन, आचार-विचार, धर्म-दर्शन, कला और साहित्य तथा जीवन के क्षेत्रों का ज्ञान प्राप्त करते हैं। उस ज्ञान से अपने मन को स्वच्छ और सुन्दर बनाते हैं। अपने अतीत को जानकर हम वर्तमान का निर्माण करते हैं।

भारतीय ज्ञानपीठ के सांस्कृतिक प्रकाशनों में इतिहास और संस्कृति का वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इन्हें पढ़कर हम अपने पूर्वजों की सांस्कृतिक विरासत पा सकते हैं।

- **वैदिक साहित्य :** पं० रामगोविन्द त्रिवेदी ६.००
- **कालिदास का भारत (१-२) :** भगवतशरण उपाध्याय ८.००
- **इतिहास साक्षी है :** ,, ३.००
- **सांस्कृतिक निबन्ध :** ,, ३.००
- **हिन्दू विवाह में कन्यादान का स्थान :** डॉ० सम्पूर्णानन्द १.००
- **कालिदास के सुभाषित :** भगवतशरण उपाध्याय ५.००
- **भारतीय ज्योतिष :** नेमिचन्द्र ज्योतिषाचार्य ६.००
- **संस्कृत का भाषा शा० अध्ययन :** भोलाशङ्कर व्यास ५.००
- **ध्वनि और संगीत :** ललितकिशोरसिंह ४.००
- **खण्डहरों का वैभव :** मुनि कान्तिसागर ६.००
- **खोज की पगडण्डियाँ :** ,, ४.००
- **भारतीय विचारधारा :** मधुकर एम० ए० २.००
- **संस्कृत साहित्य में आयुर्वेद :** अत्रिदेव विद्यालङ्कार ३.००
- **अध्यात्म-पदावली :** डॉ० राजकुमार जैन ४.५०
- **चौलुक्य कुमार पाल :** लक्ष्मीशङ्कर व्यास ४.००
- **हिन्दी जैन साहित्य का संक्षिप्त इतिहास :** कामताप्रसाद जैन २.८७

ललित-निबन्ध, आलोचनादि

ज्ञानपीठ के निबन्ध नाविक के तीर हैं—सीपी में समुद्र। गागर में सागर की भाँति थोड़े में बहुत अपने-आप में ज्ञान, अनुभव और अनुभूति के संजोए भाषा विषयानुरूप ललित, तरल, सरस, सशक्त और मुहावरेदार। क्या मजाल जो इन्हें उठाकर आप बिना पढ़े छोड़ दें! एक बार मुलाहिज़ा फरमाइए—

- **जिन्दगी मुसकराई :** कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर ४.००
- **बाजे पायलिया के घुँघरू :** ,, ४.००
- **माटी हो गयी सोना :** ,, २.००
- **शरत् के नारी पात्र :** रामस्वरूप चतुर्वेदी ४.५०
- **क्या मैं अन्दर आ सकता हूँ ? :** रावी २.५०
- **गरीब और अमीर पुस्तकें :** रामनारायण उपाध्याय १.००
- **अङ्गद का पाँव :** श्रीलाल शुक्ल २.५०
- **ठूँठा आम :** भगवतशरण उपाध्याय २.००
- **वृन्त और विकास :** शान्तिप्रिय द्विवेदी २.५०
- **मुर्गछाप हीरो :** केशवचन्द्र वर्मा २.००
- **मानव मूल्य और साहित्य :** धर्मवीर भारती २.५०
- **आत्मनेपद :** अज्ञेय ४.००
- **अमीर इरादे गरीब इरादे :** माखनलाल चतुर्वेदी २.००
- **कागज की किश्तियाँ :** लक्ष्मीचन्द्र जैन २.५०

१९६१ के नये प्रकाशन

- **एक बूँद सहसा उछली :** अज्ञेय ७.००
- **रेडियो वार्ता शिल्प :** सिद्धनाथ कुमार २.००
- **नाटक बहुरंगी :** डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल ४.५०
- **वीणापाणि के कम्पाउंड में :** केशवचन्द्र वर्मा ३.००
- **हरी घाटी :** डॉ० रघुवंश ४.५०
- **नगमए-हरम :** अयोध्याप्रसाद गोयलीय ४.००
- **लो कहानी सुनो :** अयोध्याप्रसाद गोयलीय २.००
- **आधुनिक हिन्दी हास्य-व्यंग्य :** सं० केशवचन्द्र वर्मा ४.००
- **पलासी का युद्ध :** तपनमोहन चट्टोपाध्याय ३.५०
- **सन्त विनोद :** नारायणप्रसाद जैन २.००
- **मेरे कथा गुरु का कहना है (२) :** रावी ३.००
- **अपने अपने अजनबी :** अज्ञेय ३.००
- **जिन्दगी और गुलाब के फूल :** उषा प्रियंवदा २.५०
- **नये रंग नये ढंग :** लक्ष्मीचन्द्र जैन २.००
- **शाइरी के नये दौर :** अयोध्याप्रसाद गोयलीय ३.००

भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५

पाठक उसमें डूबे बिना न रहेंगे। **बहती गंगा** के लेखक श्री केशर ने इस उपन्यास में बनारस की तीन पीढ़ियों का वह रंगीन कहानी प्रस्तुत की है जो अपनी विशेषता के कारण पाठकों को बहुत दिन तक याद रहेगी। प्रत्येक पुस्तक एक रुपये में प्राप्य है।

* * *

विश्वामित्र की खोज हिन्दी की तरुण पीढ़ी के प्रख्यात कथाकार श्री यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' की कहानियों का संग्रह है। इसमें उनकी 'चकवे चकवी की बात', 'शुक बोला, सुन राजा', 'वह रात, सारा और सिपाही', 'पर्दा, मन और उड़ानें', 'मन का पाप', 'दुर्वासा का पहला वरदान', 'आदि अन्त', 'कथा परिकथा', 'दार्शनिक' तथा 'विश्वामित्र की खोज' नामक १० कहानियाँ संकलित हैं। शीर्षकों को देखने से पाठक अनुमान लगा सकते हैं कि प्रत्येक कहानी टेकनीक, शैली, भावभूमि आदि सभी दृष्टियों से अपनी सर्वथा विशिष्टता रखती है। जिन पाठकों ने श्री चन्द्र के उपन्यास पढ़े हैं, उन्हें इन कहानियों में एक नई ताजगी और विशिष्ट भावनाओं के दर्शन होंगे। **विद्या प्रकाशन मन्दिर, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज़ के १०० पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक दो रुपये में प्राप्य है।

* * *

मंटो की कहानियाँ नामक इस पुस्तक का प्रकाशन **हिमालय पॉकेट बुक्स** के अन्तर्गत हुआ है। इसमें उर्दू के प्रख्यात कथाकार मण्टो की 'ब्लाउज़', 'खुशियां', 'नंगी आवाजें', 'हतक', 'बू', 'पाँच दिन', 'टोबा टेकसिंह', 'नया कानून' और 'खोल दो' शीर्षक कहानियाँ संकलित हैं। इन कहानियों में मण्टो की चुटीली शैली के दर्शन पाठकों को होंगे। एक रुपये में प्राप्य है।

* * *

नदी बहती थी हिन्दी की नई पीढ़ी के कथाकार श्री राजकमल चौधरी द्वारा लिखित एक छोटा-सा उपन्यास है। यह उपन्यास पहले कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले मासिक पत्र 'विनोद' में धारावाहिक रूप में प्रकाशित हो चुका है। सर्वथा नई शैली और भावभूमि पर लिखा गया यह उपन्यास वास्तव में कथाकार की सूझ-बूझ और प्रतिभा का परिचायक है। कलकत्ता और उसके इर्द-गिर्द फैले तथा बसे हुए बंगाली समाज के जीवन और उनकी मूलभूत संस्कृति से परिचित होने के लिए यह उपन्यास एक दिशा-निर्देशक का काम करेगा। क्राउन साइज में १३६ पृष्ठ का यह सुमुद्रित और सजिल्द उपन्यास **विनोद प्रकाशन, कलकत्ता** ने प्रकाशित किया है और तीन रुपये में मिल सकता है।

* * *

एकांकी

पृथ्वी का तारा नामक इस पुस्तक में श्री यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' द्वारा समय-समय पर लिखित तीन रंगमंचीय एकांकी और दो ध्वनिरूपक संकलित हैं। पाँचों एकांकियों का विषय ऐसा है, जो आज के वातावरण और भावभूमि के अनुकूल है। इनमें से प्रायः सभी एकांकी रेडियो के लिए लिखे गए थे और उसके विविध केन्द्रों से प्रसारित भी हो चुके हैं। इस संकलन से पाठक श्री शर्माजी की नई लेखन-शैली से भी परिचित हो सकेंगे। **चैतन्य प्रकाशन, कानपुर** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज़ के १२८ पृष्ठ का यह सजिल्द पुस्तक दो रुपये पचास न० पै० में मिल सकती है।

* * *

विविध

सन्त विनोद नामक इस पुस्तक में श्री नारायणप्रसाद जैन ने अपने अध्ययन, मनन और गहन चिन्तन के परिणाम-स्वरूप विश्व के प्रख्यात साहित्यकारों, मनीषियों, नेताओं, विचारकों और सुधारकों के जीवन-सागर का मन्थन करके ऐसे प्रसंग समाविष्ट किए हैं, जिन्हें पढ़कर पाठकों को पर्याप्त प्रेरणा प्राप्त होगी। जिन पाठकों ने श्री जैन द्वारा संग्रहीत 'ज्ञान गंगा' नामक पुस्तक के दोनों भागों को देखा है, वे उनके परिश्रम का मूल्य आँक सकते हैं। ज्ञान-संचय और सन्दर्भ के क्षेत्र में 'सन्त विनोद' जैसी पुस्तक का पर्याप्त आदर किया जाएगा, ऐसी आशा है। **भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज़ के १३८ पृष्ठ की इस सजिल्द पुस्तक को पाठक दो रुपये में प्राप्त कर सकते हैं।

* * *

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद द्वारा प्रकाशित राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की **स्वेच्छा से स्वीकार की हुई गरीबी और हड़तालें** नामक दो पुस्तकें हमारे सामने हैं। इनमें गांधीजी द्वारा समय-समय पर लिखे गए उनके लेख और विचार संकलित किये गए हैं। सर्वसाधारण पाठकों को सुलभ करने की दृष्टि से इन पुस्तकों का प्रकाशन किया गया है। दोनों पुस्तकें क्रमशः ३५ तथा ३० न० पै० में प्राप्त की जा सकती हैं।

* * *

समीक्षा

यशोधरा : एक समीक्षा नामक इस पुस्तक में गया कॉलिज के हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ० वासुदेव नंदनप्रसाद ने राष्ट्रकवि श्री मैथिलीशरण गुप्त की विख्यात कृति 'यशोधरा' की विस्तृत समीक्षा और टीका प्रस्तुत की है। इसके 'प्रस्तावना', 'भावोत्कर्ष', 'चरित्र-चित्रण', 'काव्य-कला', 'तुलना' तथा 'परिशिष्ट' शीर्षक ६ अध्याय ही इसकी उपादेयता को प्रमाणित करने के लिए पर्याप्त हैं। यह पुस्तक प्रत्येक विद्यार्थी तथा साहित्यप्रेमी को पढ़नी चाहिए। क्राउन साइज़ के ३७४ पृष्ठ की पुस्तक का यह संशोधित तथा परिवर्धित तीसरा संस्करण **भारती भवन, पटना** ने प्रकाशित किया है और ४ रु० ४५ न० पैसे में प्राप्य है।

* * *

कालिदास : जीवन पथ पर नामक इस छोटी-सी पुस्तक में हिन्दी की नई पीढ़ी के सुबुद्ध लेखक श्री हरिदत्त भट्ट 'शैलेश' ने भारत और बृहत्तर भारत में प्रसिद्ध कालिदास के सम्बन्ध में प्रचलित किंवदन्तियों को रोचक ढंग से आकलित किया है। इस पुस्तक से पाठक जहाँ कालिदास के जीवन-सम्बन्धी तथ्यों से अवगत हो सकेंगे वहाँ वे उनकी प्रमुख कृतियों के महत्त्व और परिचय को भी प्राप्त कर सकेंगे। इसके 'कालिदास राष्ट्रकवि', 'कालिदास बन्दी बनाये गए', 'कालिदास राजा बने', 'कालिदास की अन्तिम यात्रा', 'कालिदास ने संन्यास लिया', 'कालिदास का क्षमादान', 'कालिदास के अन्तिम शब्द', 'कालिदास की कल्पना', 'कालिदास का विवाह', 'कालिदास की हाजिरजवाबी', 'कालिदास के चमत्कार' शीर्षक अध्याय ही इसकी उपयोगिता सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं। क्राउन साइज़ के १०० पृष्ठ की यह सजिल्द पुस्तक **मोहिनी प्रकाशन, देहरादून** ने प्रकाशित की है और यह दो रुपये में प्राप्त की जा सकती है।

* * *

इतिहास

मराठों का नवीन इतिहास मराठी के प्रख्यात लेखक और इतिहासकार श्री गोविन्द सखाराम सर देसाई के ऐतिहासिक ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद है। मूल पुस्तक अंग्रेजी में 'न्यू हिस्ट्री ऑफ़ दी महाराष्ट्र' नाम से तीन खण्डों में उपलब्ध है। प्रस्तुत पुस्तक उनके मूल अंग्रेजी ग्रन्थ में द्वितीय खण्ड के प्रथम संस्करण का हिन्दी अनुवाद है, किन्तु इसमें यत्र-तत्र कुछ संशोधन करके इसे अद्यतन (अप-टू-डेट) बनाने का प्रयत्न किया गया है। इस ग्रन्थ में विद्वान् लेखक ने सन् १७०७ से १७७२ तक के मराठा सत्ता के प्रकरण पर विस्तार से प्रकाश डाला है। इतिहास के प्रेमी पाठकों और अध्येताओं दोनों के लिए ही यह ग्रन्थ सर्वथा उपादेय, पठनीय और संग्रहणीय है। डिमाई साइज़ के ७२४ पृष्ठ का यह सजिल्द ग्रन्थ **शिवलाल एण्ड कम्पनी, आगरा** ने प्रकाशित किया है और १७ रु० ५० न० पै० में प्राप्य है।

* * *

मुगल साम्राज्य का पतन नामक यह ग्रन्थ प्रख्यात इतिहासवेत्ता सर जदुनाथ सरकार की 'फ़ाल ऑफ़ दि मुगल एम्पायर' (भाग १) का हिन्दी अनुवाद है। इसके अनुवादक हैं राजस्थान के प्रख्यात इतिहासविद् और शिक्षाशास्त्री डॉ० मथुरालाल शर्मा। इस ग्रन्थ में लेखक ने सन् १७३९ से १७५४ तक के काल पर विशद प्रकाश डाला है। यह ग्रन्थ पहला खण्ड है। शेष दो खण्ड भी शीघ्र ही हिन्दी-प्रेमी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किये जाएँगे। डिमाई साइज के ३४६ पृष्ठ का यह सजिल्द और सुमुद्रित ग्रन्थ **शिवलाल एण्ड कम्पनी, आगरा** ने प्रकाशित किया है और १२ रुपये ५० न० पै० में उपलब्ध है।

* * *

जीवनी

कस्तूरबा नामक इस पुस्तक में गांधीजी की परम शिष्या

डॉ० सुशीला नैयर ने उनके जीवन और कार्यों से सम्बन्धित अपने संस्मरण दिये हैं। इसकी भूमिका लिखते हुए स्वयं राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने 'कस्तूरबा' के प्रति यह विचार प्रकट किये हैं—"एक सहधर्मिणी के नाते उन्होंने अपना यह परम कर्तव्य समझा कि वे अपने को मुझमें लीन कर दें। जिन्दगी की आखिरी साँस तक वे मेरी देख-भाल करती रहीं।" किसी भी भारतीय महिला के लिए यह गौरव की बात है। ऐसी आदर्श पत्नी के चरित्र की झाँकी पाठक इस पुस्तक में देखेंगे। क्राउन साइज़ के १४० पृष्ठ की यह पुस्तक **शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, आगरा** ने प्रकाशित की है और यह दो रुपये में प्राप्य है।

* * *

बालोपयोगी

आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली द्वारा प्रकाशित 'सचित्र रोचक कथामाला' के अन्तर्गत श्री महेन्द्र मित्र की **'हिरन की चाल'** और **'झुनझुन मटका'** नामक दो पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। दोनों पुस्तकों में बालोपयोगी रोचक कहानियाँ दी गई हैं। प्रत्येक कहानी सचित्र है। ये कहानियाँ बच्चों के लिए ज्ञानवर्धक तो हैं ही, साथ ही इनसे वे अपना मनोरंजन भी कर सकते हैं। इनमें से पहली पुस्तक १ रुपये तथा दूसरी १ रुपये पचास न० पै० में प्राप्तव्य है।

* * *

एक डर : पाँच निडर नामक इस बालोपयोगी उपन्यास के लेखक श्री सत्यप्रकाश अग्रवाल ने पाँच निडर बच्चों की ऐसी कहानी प्रस्तुत की है, जिसे पढ़कर बच्चे अपने अन्दर समाये हुए डर को सरलता से निकाल सकते हैं। यह उपन्यास प्रसिद्ध बालोपयोगी पाक्षिक 'पराग' में धारावाहिक रूप में प्रकाशित भी हो रहा है। **आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली** द्वारा प्रकाशित क्राउन साइज़ के १४४ पृष्ठ का यह उपन्यास दो रुपये पचास न० पै० में प्राप्य है।

* * *

सच्ची मित्रता में श्री व्यथित हृदय ने ६ ऐसी कहानियाँ एकांकी नाटकों के माध्यम से प्रस्तुत की हैं, जिन्हें पढ़कर बच्चे सहज ही अपने अन्दर मित्रता के भावों को सँजो सकते हैं। ये नाटक इतने सरल हैं कि बच्चे इन्हें अपनी कथा में खेल भी सकते हैं। **प्रयाग पब्लिशिंग हाउस, इलाहाबाद** द्वारा प्रकाशित कापी साइज़ के ४२ पृष्ठ की यह पुस्तक १ रुपया १२ न० पै० में प्राप्त की जा सकती है।

आगामी मास के प्रकाशन

अशोक प्रकाशन, दिल्ली
—**कबीर ग्रन्थावली सटीक**, प्रो० पुष्पालसिंह
—**बिहारी सतसई सटीक**, प्रो० विराज
आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली
—**सुख सरोवर के हंस**, श्री शैलेश मटियानी, उपन्यास
—**खाँसी को फांसी**, श्री शैलेश मटियानी, एकांकी संग्रह
—**नई राह**, श्री चेस्टर बोल्स, राजनीति
—**मोटे मियाँ**, श्री विमला लूथरा, बाल-एकांकी-संग्रह
—**भोजन बनाना सीखो**, सुश्री कमला व शैल खन्ना
—**मृगजल**, श्री अनन्त गोपाल शेवड़े, उपन्यास
—**भुलक्कड़ बिन्नी**, श्री मनोहर वर्मा, बाल-कहानी-संग्रह
आनन्द स्टोर, जोधपुर
—**भारत के नये बाटों का सुगम रेडीरेक्नर**, श्री आनन्द प्रकाश अरोड़ा
उमेश प्रकाशन, दिल्ली
—**आग, पानी और तूफान**, डॉ० यतीन्द्र, उपन्यास
—**टूटा व्यक्तित्व**, मनहर चौहान, उपन्यास
—**भाग्यरेखा**, गुरुदत्त, उपन्यास
—**संसार की तेरह श्रेष्ठ कहानियाँ**, कहानी-संग्रह
—**खूब लड़ी मर्दानी**, मनहर चौहान, किशोर-उपन्यास
—**बाजीराव पेशवा**, उमाशंकर, किशोर-उपन्यास
—**देश-देश की परियाँ भारत आईं**, मनहर चौहान, लोक-कथा-संग्रह
—**भारत के साहसी वीरों की गाथाएँ**, धर्मपाल शास्त्री, बाल-कहानियाँ
एन० डी० सहगल एण्ड सन्स, दिल्ली
—**भारतीय प्रदेश और उनके निवासी**, श्री वसन्तकुमार चट्टोपाध्याय
—**सिसकते साज**, श्री गुलशन नन्दा
—**पागल कौन ?** श्री रणबीर
—**एक लड़की : एक समस्या**, श्री आदिल रशीद
—**अपने आपको पहचानिए**, श्री महावीर अधिकारी
किताब महल, दिल्ली
—**दिवोदास**, श्री राहुल सांकृत्यायन, उपन्यास
—**बुद्ध दर्शन**, पु०, मु० श्री राहुल सांकृत्यायन, दर्शन
—**भारतीय निगम वित्त व्यवस्था**, श्री एस० डी० बहुगुणा
—**बुद्धिमान बालक**, श्री अ० अ० अनन्त, मनोविज्ञान
—**लौह कपाट : प्रथम पर्व**, जरासन्ध, अनु० श्री रामेश्वर प्रसाद मेहरोत्रा, उपन्यास
—**लौह कपाट : दूसरा पर्व** जरासन्ध, अनु० श्री रामेश्वर प्रसाद मेहरोत्रा, उपन्यास
—**हिंसक पशु**, पु० मु०, श्री जगपति चतुर्वेदी
—**बन उपवन के पक्षी**, पु० मु०, श्री जगपति चतुर्वेदी
—**शिकारी पक्षी**, पु० मु०, श्री जगपति चतुर्वेदी
—**प्रतिज्ञा**, पु० मु०, श्री ठाकुरदत्त, संस्कृत कथा
—**भोजराज की कहानियाँ**, श्री तेजकुमार निर्मोही
—**सुमित्रानन्दन पंत**, पु० मु० श्री विश्वम्भर 'मानव'
—**निबन्ध प्रबोध**, डॉ० रामरतन भटनागर
—**बड़ों की बड़ाई**, श्री शशि अग्रवाल, बाल-प्रौढ़
—**जंजीर टूटी**, श्री शशि अग्रवाल, बाल-प्रौढ़
—**बच्चों की दुनिया में**, श्री शशि अग्रवाल
ज्ञानपीठ (प्रा०) लि०, पटना
—**शिक्षा दर्शन मंजूषा**, श्री तारकेश्वरप्रसाद सिनहा
—**शिक्षक और उनका प्रशिक्षण**, श्री शत्रुहन प्रसाद सिनहा
—**दशकुमारचरित**, रूपा० श्री हवलदार त्रिपाठी 'सहृदय'
—**नई दिशा : नए चरण**, श्री सिद्धनाथ कुमार
—**वैज्ञानिक समाजवाद**, श्री बी० पी० सिनहा
नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी
—**मतिराम ग्रंथावली**, सम्पा० श्री कृष्ण बिहारी मिश्र
—**जसवंतसिंह ग्रंथावली**, श्री विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली
—**अर्थहीन**, डॉ० रघुवंश, कहानी-संग्रह
—**पुराण पारिजात**, पं० रघुनाथदत्त बन्धु
—**क्या आलोक : नई छाया**, विराज, कहानी-संग्रह
—**हिन्दी उपन्यास**, श्री महेन्द्र चतुर्वेदी
प्रत्यूष प्रकाशन, कानपुर
—**काव्य सम्प्रदाय**, डॉ० जगदीशनारायण त्रिपाठी
—**मूँगे का द्वीप**, सुश्री विनोदिनी पाण्डे, किशोर उपन्यास
राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
—**बड़ी चम्पा छोटी चम्पा**, डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल
—**महाश्वेता**, श्री ताराशंकर वन्द्योपाध्याय
—**चार दरवेश**, अनु० बलवन्तसिंह
—**नाना की नजर में**, श्री ब्रजकिशोर नारायण
—**हाथर्न की श्रेष्ठ कहानियाँ**, अनु० श्री शिवदानसिंह चौहान, श्रीमती विजय चौहान
—**गांधीजी की राह**, श्री रामनाथ सुमन
—**गणित की पहेलियाँ**, श्री गुणाकर मुले
—**पंचतंत्र**, अनु० डॉ० मोतीचन्द्र
—**सामर्थ्य और सीमा**, श्री भगवतीचरण वर्मा
—**अपना घर**, श्रीमती मीरा महादेवन
राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली
—**एक और जिन्दगी**, श्री मोहन राकेश, कहानी-संग्रह
—**राधा**, श्री ताराशंकर वन्द्योपाध्याय
—**पूर्व और पश्चिम**, डॉ० राधाकृष्णन्
राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा
—**काव्य-कला**, छन्द-अलंकारों का परिचय
—**राज्योपनिषद्**, श्री न० वि० गाडगिल, अनु० श्री रतनलाल बाजोरिया
—**भारत-भारती (मलयालम)**, श्री प्रेमचन्द विद्यार्थी व अन्य, भाषा-शिक्षण
—**भारत-भारती (बंगला)**, श्री रेवती रंजन सिन्हा, भाषा-शिक्षण
रूपकमल प्रकाशन, दिल्ली
—**सन्तसाहित्य**, डॉ० सुदर्शन सिंह
—**शरत ग्रंथावली भाग २**, श्री हंसकुमार तिवारी
—**डूबने से पहले**, श्री. योगेश गुप्त, उपन्यास
—**दीप के स्वर**, श्री गोपाल राठौर, कविता-संग्रह
—**छविनाथ**, श्री योगेश गुप्त, उपन्यास
लोक-भारती प्रकाशन, इलाहाबाद
—**भारतीय दर्शन**, श्री वाचस्पति गैरोला
साहित्य सदन, देहरादून
—**खलंगा खुकरी और फिरंगी**, श्री के० बी० क्षत्रिय, उपन्यास
—**और राह न रुकी**, श्री मुनीश्वर पाण्डे, बालोपयोगी
—**मधुर कहानियाँ**, श्री विष्णुदत्त शर्मा 'विकल', बालोपयोगी
—**त्रिवेणी**, पु० मु०, डॉ० कंचनलता सब्बरवाल
—**हिन्दी आलोचना उद्भव और विकास**, पु० मु०, डॉ० भगवतस्वरूप मिश्र
हिन्द पाकेट बुक्स प्रा० लि०, दिल्ली
—**नीना**, श्री अमृता प्रीतम, उपन्यास
—**धरती की आँखें**, डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल, उपन्यास
—**मझली दीदी बड़ी दीदी**, श्री शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय, उपन्यास
—**हरकारा**, श्री ताराशंकर वन्द्योपाध्याय
—**शादी या ढकोसला**, किशार साहू, एकांकी
—**हास परिहास**, श्री आर० के० सिंह
हिन्दी ग्रंथ रत्नाकर (प्रा०) लि०, बम्बई
—**बोलने दो चीड़ को**, श्री नरेश मेहता, कविता-संग्रह
—**तथापि**, श्री नरेश मेहता, कहानी-संग्रह
—**कोशी**, श्री महावीर अधिकारी, कहानी-संग्रह
—**काशी का इतिहास**, डॉ० मोतीचन्द्र
हिन्दी साहित्य भण्डार, लखनऊ
—**संकल्प तथा एकांकी**, पु० मु०, श्री प्रेमनारायण टण्डन
—**साहित्य समालोचना के सिद्धान्त**, श्री योगेन्द्रनाथ शर्मा
—**जनतन्त्र में शिक्षा के उद्देश्य**, डॉ० राघवप्रसाद सिंह
—**दयानन्द लहरी**, श्री अखिलेश त्रिवेदी, खण्ड-काव्य
हेमकुण्ट प्रेस, नई दिल्ली
—**अलीबाबा चालीस चोर**, श्री धर्मपाल शास्त्री, बाल-उपन्यास
—**सजीला**, बाल-उपन्यास
—**इन्द्रधनुष**, श्री भगतसिंह, कहानी-संग्रह

नवम्बर मास के प्रकाशन

आलोचना—साहित्य

कन्हैयालाल सहल, डॉ०, राजस्थानी कहावतें, ३०६, डि०, बंगीय हिन्दी परिषद, कलकत्ता ५.००
कृष्णकिशोर मिश्र, भारतेन्दु काव्यादर्श, २००, क्रा०, प्रत्यूष प्रकाशन, कानपुर ४.००
चाँद मोहम्मद, हिन्दी के प्रमुख कवि और लेखक, १००, क्रा०, आधुनिक साहित्य प्रकाशन, ब्यावर १.५०
दुर्गाशंकर मिश्र, पृथ्वीपुत्र आलोचना, ११२, क्रा०, हिन्दी साहित्य भण्डर, लखनऊ १.२५
दुर्गाशंकर मिश्र, सफल एकांकी आलोचना, १३६, क्रा०, हिन्दी साहित्य भण्डार, लखनऊ १.७५
देशराजसिंह भाटी, दिनकर और उनका कुरुक्षेत्र, २८८, क्रा०, अशोक प्रकाशन, दिल्ली ३.५०
नगेन्द, डॉ०, अ० हि० कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ, पु० मु०, १२८, डि०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ८.००
प्रतापसिंह चौहान, सन्त मत में साधना का स्वरूप, १७१, क्रा०, प्रत्यूष प्रकाशन, कानपुर ३.५०
राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी, डॉ०, हिन्दी साहित्य का इतिहास, २४०, क्रा०, अशोक प्रकाशन, दिल्ली २.५०
शिवनाथ, अर्थतत्व की भूमिका, ३५०, क्रा०, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी ६.००

उपन्यास

अल्बेयर कामू, अनु० शिवदानसिंह चौहान, विजय चौहान, प्लेग, ३३६, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली २.००
आदिल रशीद, बहार आने तक, १५६, क्रा०, रूप कमल प्रकाशन, दिल्ली ३.५०
आदिल रशीद, सपनों का मीत, १३२, क्रा०, रूप कमल प्रकाशन, दिल्ली २.५०
उदयशंकर भट्ट, सागर लहरें और मनुष्य, ३१६, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली २.००
उषादेवी मित्रा, जीवन की मुस्कान, पु० मु०, १९२, क्रा०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ४.००
उषा प्रियंवदा, पचपन खम्भे लाल दीवारें, १३७, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १.००
कमलेश्वर, डाक बंगला, १२०, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १.००
गुरुदत्त, छलना, पु० मु०, ३९२, क्रा०, भारती साहित्य सदन, नई दिल्ली ६.००
गुरुदत्त, जात न पूछे कोय, १२५, क्रा०, भारती साहित्य सदन, नई दिल्ली २.५०
गुरुदत्त, विक्रमादित्य साहसांक, ३६०, क्रा०, भारती साहित्य सदन, नई दिल्ली ६.००
गुरुदत्त, स्नेह का मूल्य, पु० मु०, १४४, क्रा०, भारती साहित्य सदन, नई दिल्ली ६.००

गोविन्द माली, **पंछी बिछुड़ गए**, ११६, डि०, बम्बई प्रकाशन प्रा० लि०, बम्बई — २.००
जेन आस्टन, **मैं हारी**, १८७, डि०, बम्बई प्रकाशन प्रा० लि०, बम्बई — ३.७५
दत्त भारती, **मुक्ति के पथ पर**, १८६, डि०, बम्बई प्रकाशन प्रा० लि०, बम्बई — ३.५०
नानकसिंह, **मृग तृष्णा**, १०३, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली — १.००
नेथेनियल हाथार्न, **कलंक**, १४४, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली — १.००
प्रकाश भारती, **निस्तरण**, २६४, क्रा०, भारती साहित्य सदन, नई दिल्ली — ४.२५
बाल्मीकि त्रिपाठी, **प्रजाप्रिय प्रजेश**, २१८, क्रा०, प्रत्यूष प्रकाशन, कानपुर — ४.००
भगवतीप्रसाद वाजपेयी, **रात और प्रभात**, १२८, पॉकेट, हिन्द पाकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली — १.००
मानिकचन्द्र, **नकटी नानी**, १८४, क्रा०, भारती साहित्य सदन, नई दिल्ली — ३.२५
यज्ञदत्त शर्मा, **सुन्दर और असुन्दर**, १८४, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली — ३.००
रांगेय राघव, **धरती मेरा घर**, १७२, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली — ३.००
लक्ष्मीनारायण टण्डन, डॉ०, **आँधी के बाद**, ३२०, क्रा०, हिन्दी साहित्य भण्डार, लखनऊ — ५.००
वनफूल, **शिकारी**, ११६, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली — १.००
शत्रुघ्नलाल शुक्ल, **नागमणि**, ८०, क्रा०, प्रत्यूष प्रकाशन, कानपुर — २.००

कविता-शायरी

चाँद मोहम्मद, **आधुनिक उर्दू शायरी**, १२८, क्रा०, आधुनिक साहित्य प्रकाशन, ब्यावर — २.२५
देवकीनन्दन श्रीवास्तव, डॉ० **चित्रकूट के पथ पर**, पु० मु०, ८०, क्रा०, हिन्दी साहित्य भण्डार, लखनऊ — १.२५
नगेन्द्र, डॉ० व कैलाश वाजपेयी, **गिरजाकुमार माथुर (आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि)** ११६, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली — २.००
निहालदे सुलतान, तीन खण्ड, ५५०, डि०, मरु भारती, पिलानी — ७.५०
बच्चन, **एकान्त संगीत**, १२६, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली — २.५०
योगेन्द्रकुमार लल्ला : श्री कृष्ण, सम्पादक, **प्रतिनिधि सामूहिक गान**, १२०, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — ४.००

कहानी

राजेन्द्र यादव : मन्नू भण्डारी, **एक पुरुष एक नारी**, १३४, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा-दिल्ली — १.००
रामप्रसाद घिल्डियाल 'पहाड़ी', **पहाड़ी की श्रेष्ठ कहानियाँ**, १२८, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली — १.००
सोमावीरा, **धरती की बेटी**, २८८, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली — ७.५०

नाटक

अज्ञेय, **नए एकांकी**, ६६, क्रा०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली — २.००
शिवप्रसाद मिश्र 'रुद्र', **सत्य हरिश्चन्द्र**, २२५, क्रा०, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी — ३.५०

बाल साहित्य-प्रौढ़ साहित्य

आनन्दप्रकाश सिंह, **जर्मनी की कहानी**, १०४, डि०, बम्बई प्रकाशन प्रा० लि०, बम्बई — २.५०

भाई चाँद, मृत्यु पर विजय, ३०, क्रा०, आधुनिक साहित्य प्रकाशन, ब्यावर ०.४०
भूपेन्द्रनाथ सान्याल, हमारे देश की नदियाँ, १०८, डि०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली २.५०
मार्क ट्वेन, आँख मिचौनी, १०८, डि०, बम्बई प्रकाशन प्रा० लि०, बम्बई २.००
मेव फ्रीमैन, विज्ञान का अद्भुत संसार, ८७, रायल, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १.००
लुई कैरोल, रूपा० शमशेर बहादुरसिंह, आश्चर्यलोक में एलिस, १६०, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १.००

विविध

अलक्जेंडर मारशैक, अनु० नरेश वेदी, पृथ्वी और अन्तरिक्ष, २४७, पॉकेट १.५०
उर्मिल सब्बरवाल, हमारी आजादी की लड़ाई, १३२, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली ३,००
केदारनाथ शास्त्री, भारत की सांस्कृतिक परम्परा, १४०, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली ३.००
चाँद मोहम्मद, परेशान होना छोड़िए, जीना शुरू कीजिए, १००, क्रा०, आधुनिक साहित्य प्रकाशन, ब्यावर १.८८
जगदीशसिंह, हमारे रीतिरिवाज, पु० मु०, २३२, क्रा०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ३.५०
जवाहरलाल नेहरू, बापू मेरी नजर में, १०५, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १.००
जी० एस० टण्डन, नागरिकशास्त्र शिक्षण विधि, १५०, क्रा०, हिन्दी साहित्य भण्डार, लखनऊ २.००
नरेन्द्र धीर, अन्तरिक्ष के यात्री, ६६, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली २.५०
प्रकाश पण्डित, बिन बुलाए मेहमान, ११७, पॉकेट, हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि०, शाहदरा दिल्ली १.००
पाल साइपल, दक्षिण ध्रुव विजय, ४५०, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली १०.००
मिट्ठनलाल सिंघल, उत्तर प्रदेश में बिक्री-कर की दरें, ५६, क्रा०, कैक्को, हाथरस १.५०
रमेशचन्द्र प्रेम, हमारे पड़ोसी देश, १२०, डि० आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली २.५०
राहुल सांकृत्यायन, दर्शन दिग्दर्शन, पु० मु०, ८५०, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद २.००
राहुल सांकृत्यायन, सिंहल के वीर, ८०, क्रा०, किताब महल, इलाहाबाद २.००
रोहिताश्व, विनाश के दो कगार सेण्टो और सीटो, ६४, डि०, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद १.५०
लक्ष्मीनारायण, डॉ०, सामान्य रोगों की रोकथाम, ८६, डि०, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली २.००
वर्मा तथा शर्मा, राजस्थान में प्रशासन व नागरिक जीवन, ६४, क्रा०, आधुनिक साहित्य प्रकाशन, ब्यावर १.००
वाचस्पति गैरोला, भारतीय धर्मव्यवस्था, २०८, क्रा०, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद ४.००
वाल्टर सुलिवान, अज्ञात महाद्वीप की खोज, २२४, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली ६.५०
विश्वमित्र शर्मा, भारत के लोकनृत्य, १२०, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली २.५०
शील, किसान, पु० मु०, १३२, क्रा०, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद ३.००
सन्तराम बी० ए०, सुखी जीवन का रहस्य, ११२, पॉकेट, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १.००
सुभाषिणी, भारत के हस्त-शिल्प, १०४, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली २.५०
हरीश अग्रवाल, भारत के महान् वैज्ञानिक, १०४, डि०, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली २.५०